

# हरियाणा

## 2018 नववर्ष की शुभकामनाएं

ISSN-0970-6518



# खेती



**चौधरी चरण सिंह**  
**हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय**  
**हिसार**



वार्षिक चंदा 150/-

आजीवन सदस्यता 1500/-

जनवरी पौष-माघ							फरवरी माघ-फाल्गुन							मार्च फाल्गुन-चैत्र							अप्रैल चैत्र-वैशाख						
रवि	सोम	मंगल	बुध	वीर	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	वीर	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	वीर	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	वीर	शुक्र	शनि
	1	2	3	4	5	6					1	2	3				1	2	3		1	2	3	4	5	6	7
7	8	9	10	11	12	13	4	5	6	7	8	9	10	4	5	6	7	8	9	10	8	9	10	11	12	13	14
14	15	16	17	18	19	20	11	12	13	14	15	16	17	11	12	13	14	15	16	17	15	16	17	18	19	20	21
21	22	23	24	25	26	27	18	19	20	21	22	23	24	18	19	20	21	22	23	24	22	23	24	25	26	27	28
28	29	30	31				25	26	27	28				25	26	27	28	29	30	31	29	30					

मई वैशाख-ज्येष्ठ							जून ज्येष्ठ-आषाढ़							जुलाई आषाढ़-श्रावण							अगस्त श्रावण-भाद्रपद						
रवि	सोम	मंगल	बुध	वीर	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	वीर	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	वीर	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	वीर	शुक्र	शनि
	1	2	3	4	5						1	2		1	2	3	4	5	6	7				1	2	3	4
6	7	8	9	10	11	12	3	4	5	6	7	8	9	8	9	10	11	12	13	14	5	6	7	8	9	10	11
13	14	15	16	17	18	19	10	11	12	13	14	15	16	15	16	17	18	19	20	21	12	13	14	15	16	17	18
20	21	22	23	24	25	26	17	18	19	20	21	22	23	22	23	24	25	26	27	28	19	20	21	22	23	24	25
27	28	29	30	31			24	25	26	27	28	29	30	29	30	31					26	27	28	29	30	31	

सितम्बर भाद्रपद-आश्विन							अक्टूबर आश्विन-कार्तिक							नवम्बर कार्तिक-मार्गशीर्ष							दिसम्बर मार्गशीर्ष-पौष						
रवि	सोम	मंगल	बुध	वीर	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	वीर	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	वीर	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	वीर	शुक्र	शनि
30						1	1	2	3	4	5	6				1	2	3			30	31				1	
2	3	4	5	6	7	8	7	8	9	10	11	12	13	4	5	6	7	8	9	10	2	3	4	5	6	7	8
9	10	11	12	13	14	15	14	15	16	17	18	19	20	11	12	13	14	15	16	17	9	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22	21	22	23	24	25	26	27	18	19	20	21	22	23	24	16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29	28	29	30	31				25	26	27	28	29	30		23	24	25	26	27	28	29

### अवकाश

जनवरी	18 भगवान परशुराम जयन्ती
05 गुरु गोबिन्द सिंह जन्म दिवस	जून
22 बसंत पंचमी व सर छोटू राम जयन्ती	16 ईद-उल-फ़ितर/महाराणा प्रताप जयन्ती
26 गणतन्त्र दिवस	28 संत कबीर दास जयन्ती
31 गुरु रविदास जन्म दिवस	जुलाई
फरवरी	31 शहीद उधम सिंह शहीदी दिवस
14 महा शिवरात्रि	अगस्त
मार्च	15 स्वतन्त्रता दिवस
02 होली	22 ईद-उल-जुहा (बकरीद)
23 शहीदी दिवस	26 रक्षा बंधन
25 राम नवमी	सितम्बर
29 महावीर जयन्ती	03 जन्माष्टमी
अप्रैल	23 हरियाणा वीर शहीदी दिवस
14 डॉ. बी. आर. अम्बेदकर जयन्ती	

अक्टूबर	02 महात्मा गांधी जयन्ती
	10 महाराजा अग्रसेन जयन्ती
	18 दशहरा
	24 महर्षि वाल्मीकि जयन्ती
नवम्बर	01 हरियाणा दिवस
	07 दिवाली
	09 विश्वकर्मा दिवस
	23 गुरु नानक जयन्ती
दिसम्बर	25 बड़ा दिन
	सभी रविवार व हर महीने के द्वितीय शनिवार को छुट्टी रहेगी।

### सीमित अवकाश

10 फरवरी	: महर्षि दयानन्द सरस्वती जयन्ती
30 मार्च	: गुड फ्राईडे
30 अप्रैल	: बुध पूर्णिमा
16 जून	: गुरु अर्जुन देव शहीदी दिवस
13 अगस्त	: हरियाली तीज
21 सितम्बर	: मोहरम
27 अक्टूबर	: करवा चौथ
08 नवम्बर	: गोवर्धन पूजा
13 नवम्बर	: छठ पूजा
21 नवम्बर	: मिलाद-उल-नबी/ईद-ए-मिलाद
24 नवम्बर	: गुरु तेग बहादुर शहीदी दिवस
26 दिसम्बर	: शहीद उधम सिंह जन्म दिवस
उपरोक्त में से वर्ष में से कोई भी तीन (3) छुट्टियां ली जा सकती हैं।	

# हरियाणा खेती

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. ( 2 ) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित  
© कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 51

जनवरी 2018

अंक 1

इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
उच्च गुणवत्ता की कम्पोस्ट बनाने की विधि	☞ सुनीता श्योराण, देवराज एवं दीपिका राठी	1
मृदा में कार्बनिक पदार्थ की निरन्तर बढ़ती कमी-चिन्ता का विषय	☞ यशपाल सिंह एवं बलराज सिंह दूहन	2
सरसों व राया के उत्पादन में गंधक का महत्व	☞ धीरज पंघाल, चेतन कुमार जांगिड एवं आर एस मलिक	3
गेहूँ की मोल्टा बीमारी : किसान-वैज्ञानिक संवाद	☞ आर. एस. कंवर	4
समन्वित सूत्रकृमि प्रबंध	☞ विनोद कुमार, बबिता कुमारी एवं अनिल कुमार	5
टमाटर के प्रमुख कीटों का प्रबन्धन	☞ पूर्ति, रिकू एवं कृष्णा रोलानियां	6
गोभी-वर्गीय सब्जियों के कीट व उनका प्रबंधन	☞ पूर्ति, अरविन्द मलिक एवं अनुराधा	7
कृषि आधारित व्यवसाय : ग्रामीण युवकों के लिए रोजगार	☞ जोगेन्द्र सिंह, कुलदीप सिंह एवं अनिल राठी	8
यान्त्रिक कृषि का महत्व	☞ कुलदीप सिंह, जोगेन्द्र सिंह एवं अनिल राठी	9
कृषकों के लिए जानना जरूरी : बीज एक्ट 1966 द्वारा बीज	☞ सुमित देसवाल एवं बी. एस. मोर	10
निरीक्षक की शक्तियां एवं अनुसरण करने की प्रक्रिया		
पॉलीहाऊस की खेती को बढ़ावा देने के लिए-विस्तार शिक्षा रणनीति	☞ भरत सिंह घणघस, प्रदीप कुमार चहल एवं कृष्ण यादव	12
भारतीय कृषि क्षेत्र में सूचना तकनीक : महत्व	☞ अनिल कुमार मलिक, कृष्ण यादव एवं प्रदीप कुमार चहल	20
कृषि में वस्तु एवं सेवा कर का प्रभाव	☞ परवीन कुमार, वेद प्रकाश मेहता एवं जितेंद्र कुमार भाटिया	21
आय बढ़ाने के लिए एकीकृत कृषि प्रणाली अपनाएं	☞ जे. एन. यादव, राजेन्द्र कुमार एवं आर. बी. गुप्ता	22
भारतीय कृषि : चुनौतियां	☞ रिद्धम कक्कड एवं हरदीप सिंह श्योराण	23
कृषि रसायन : भूख और खाद्य सुरक्षा का सेतु	☞ रिद्धम कक्कड एवं हरदीप सिंह श्योराण	24
परम्परागत कृषि विकास योजना	☞ रूपेन्द्र कुमार, राजेश कुमार एवं कृष्ण यादव	25
Suitability of Fertilizers for Different Crops and Soil Conditions	☞ Dev Raj, Sunita Sheoran and M.S.Grewal	27
Agriculture Education Reforms in Indian Universities	☞ Anil Kumar Malik, Krishan Yadav and Sunil Kumar	29
26 जनवरी पर विशेष-चार चतुष्पदियां	☞ सुषमा आनन्द	32

स्थाई स्तम्भ : फरवरी मास के कृषि कार्य

13

तकनीकी सलाहकार :

डॉ. आर. एस. हुड्डा  
निदेशक, विस्तार शिक्षा

संकलन :

डॉ. एम. एस. ग्रेवाल  
परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)  
विस्तार शिक्षा निदेशालय

सह-निदेशक (प्रकाशन)

डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी

संपादक :

डॉ. सुषमा आनंद  
सह-निदेशक (हिन्दी)

सुनीता सांगवान  
सम्पादक अंग्रेजी  
प्रकाशन अनुभाग

आवरण एवं सज्जा:

राजेश कुमार एवं कुलदीप कुमार

**लेखकों से अनुरोध :** हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। टाईपिंग के लिए कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं [haryanakhethihau@gmail.com](mailto:haryanakhethihau@gmail.com)



# उच्च गुणवत्ता की कम्पोस्ट बनाने की विधि

सुनीता श्योराण, देवराज एवं दीपिका राठी

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

अधिक उपज देने वाली फसलों की प्रजातियों व सघन खेती के चलन के फलस्वरूप मृदा की भौतिक व रासायनिक दशा, स्वास्थ्य एवं प्राप्य पोषक तत्वों में भारी गिरावट आ रही है। उर्वरकों के भरसक प्रयोग के बावजूद फसल उत्पादन में कमी मृदा स्वास्थ्य में गिरावट का सूचक है। भूमि की वर्तमान उत्पादन क्षमता को बनाए रखने अथवा बढ़ाने के लिए उर्वरकों के साथ-साथ प्राकृतिक खादों का प्रयोग करना अत्यन्त आवश्यक है। प्राकृतिक खादों में मुख्य रूप से गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, हरी खाद, गोबर गैस स्लरी, पोल्ट्री खाद आदि आती हैं। जैविक पदार्थों को सीधे खेत में डालने से हानि हो सकती है तथा उपलब्ध पोषक तत्व पौधों को प्राप्त नहीं हो पाते हैं। इन पदार्थों के गलने से कुछ हानिकारक रसायन निकलते हैं जो बीज के जमाव को हानि पहुंचा सकते हैं। पौधों के अवशेष, पशुओं का बचा चारा, घासफूस, गाँव व शहरी कूड़ा-कचरा द्वारा सड़ा कर बनाया गया खाद कम्पोस्ट कहलाता है। यह रूप, रंग व गुणों में गोबर की खाद के समान होता है लेकिन इसमें ह्यूमस की मात्रा अधिक होती है। कूड़े-कचरे में नम्रजन व नमी की कमी होने के कारण कूड़े की खाद बनाने में लगभग एक वर्ष से भी अधिक समय लग जाता है। शहरों व उद्योगों से निकले कचरे को फसलों के अवशेषों के साथ मिलाकर कम समय में अच्छी गुणवत्ता की खाद बना सकते हैं।

## कम्पोस्ट बनाने की विधि तथा ध्यान देने योग्य बातें

**व्यर्थ कार्बनिक पदार्थों का चुनाव :** सभी प्रकार के जैविक पदार्थ जैसे कि फसलों के अवशेष, शहरों का कचरा, सिवर की मिट्टी, शूगर मिल की मैली, मुर्गी फार्म की खाद, सब्जी मण्डी का कचरा, गोबर की खाद से कम्पोस्ट बनाया जा सकता है। इन पदार्थों में से प्लास्टिक, कांच, लोहा व ईट पत्थर आदि को निकाल देना चाहिए।

**कूड़े-कचरे का आकार :** यदि कूड़े-कचरे का आकार लम्बा हो तो उसे काट कर 4-6 सेंटीमीटर के टुकड़े कर लेने चाहिए।

**गड्ढे की जगह:** खाद का गड्ढा खुली, ऊंची, जानवरों के बंधने अथवा कूड़ा-कचरे मिलने की जगह व पानी के स्रोत के पास होने चाहिए।

**गड्ढे का आकार :** गड्ढे का आकार जैविक पदार्थों की उपलब्धता पर निर्भर करता है। सामान्यतः गड्ढा 90 सें.मी. गहरा, 1.8 से 2.4 मीटर चौड़ा एवम् उपयुक्त ऊंचाई का होना चाहिए।

**नमी की मात्रा :** कूड़े-कचरे में नमी की मात्रा 60-70% रखने पर कम्पोस्ट शीघ्र बनती है। पानी कम्पोस्ट बनने के समय तापमान एवम् हवा को नियंत्रित करता है।

**जैविक पदार्थों का अनुपात:** जैविक पदार्थों के शीघ्र गलने-सड़ने के लिए कार्बन : नाइट्रोजन का अनुपात 25 से 30 होना चाहिए। इसलिए 100 ग्राम यूरिया प्रति 5 कि.ग्रा. कूड़ा-कचरे मिला देना चाहिए।

**गुणवत्ता को बढ़ाना :** कम्पोस्ट की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए निम्न श्रेणी का रॉक फास्फेट 4:1 अनुपात में मिला देना चाहिए।

## जीवाणुओं के कल्चर का प्रयोग

कूड़ा-कचरे को अच्छी तरह गलाने के लिए जीवाणुओं की उचित संख्या बहुत जरूरी है। इसके लिए 5% गोबर, 5% गली हुई कम्पोस्ट तथा 5% अच्छी उपजाऊ मिट्टी का घोल बनाकर 10 किलो कूड़े-कचरे में 1 लीटर की दर से मिला देना चाहिए।

**गड्ढों का भराव :** सभी प्रकार के कूड़े-कचरे को मिलाकर गड्ढे में 25-30 सेंटीमीटर तक भर देना चाहिए। कूड़े-कचरे को उसकी 60-70 प्रतिशत मात्रा के बराबर पानी से गीला कर देना चाहिए। एक टब में उपजाऊ खेत की मिट्टी, ताजा गोबर, पुरानी कम्पोस्ट (प्रत्येक 5-10 प्रतिशत), कूड़े-कचरे के वजन का 1% यूरिया तथा 2 लीटर शीरा या गुड़ मिलाकर 50 लीटर पानी में घोल बनाते हैं। गड्ढे के एक सिरे से 2 इंच कूड़े-कचरे को बाहर निकालकर, ऊपर बनाए घोल को छिड़कते हुए जेली से दूसरे सिरे तक मिलाते जाते हैं। गड्ढे को भरते समय जैविक पदार्थों को किसी भी प्रकार से दबाना नहीं चाहिए। अन्त में गड्ढे में कूड़े-कचरे को गुम्बद का आकार देकर पॉलीथीन या टाट से ढक कर 2-3'' मिट्टी की पतली परत से ढक देते हैं।

गड्ढे की पहली पलटाई 5-8 दिन, दूसरी 15-20 दिन तथा तीसरी 30-35 दिन के अन्तर से करते हैं। तीसरी बार पलटने के बाद एजोटोबैक्टर तथा फास्फोरस बैक्टीरिया को कूड़े-कचरे के साथ मिला लेना चाहिए।

**कम्पोस्ट तैयार होने का समय :** इस विधि से 3-4 महीने में ही कम्पोस्ट खाद तैयार हो जाती है।

**मुख्य अवयव तथा पोषक तत्वों की मात्रा :** कम्पोस्ट खाद में पाए जाने वाले अवयव एवम् पोषक तत्वों की मात्रा कार्बनिक पदार्थों के प्रकार व उनके सड़न-गलन पर निर्भर करती है।

जैविक पदार्थों की भार/घनत्व हानि = 45-50%

कम्पोस्ट का कार्बन : नाइट्रोजन अनुपात = <15

इस प्रकार बनाए गए कम्पोस्ट में 1.8 से 2.2% नाइट्रोजन, 4-5% फास्फोरस, 3-4% पोटेशियम तथा अन्य सूक्ष्म तत्व होते हैं।

**मात्रा एवं उपयोग :** साधारण कूड़े-कचरे से बनी कम्पोस्ट की मात्रा व उपयोग गोबर की खाद के समान ही है। यदि उच्च कोटि की कम्पोस्ट यूरिया एवं मसूरी फास को मिलाकर बनाई गई है तो 5-6 टन प्रति हैक्टेयर ही काफी है। लगातार 3-4 वर्ष तक इसका प्रयोग करने से 25% तक नाइट्रोजन तथा समस्त फास्फोरस, पोटेशियम व अन्य सूक्ष्म तत्वों की बचत की जा सकती है।

कम्पोस्ट को आमतौर पर फसलों की बुवाई के 20-25 दिन पहले छिड़क कर जुताई कर देनी चाहिए। अगर हल्का पानी लगा दिया जाए तो खाद अच्छी तरह सड़कर मिट्टी में मिल जाती है। यदि वर्ष में केवल एक बार ही खाद डालनी हो तो उसे रबी की फसल के पहले डालने से अधिक लाभ होता है।

(शेष पृष्ठ 03 पर)

# मृदा में कार्बनिक पदार्थ की निरन्तर बढ़ती कमी- चिन्ता का विषय

यशपाल सिंह एवं बलराज सिंह दूहन

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कार्बनिक पदार्थ मृदा की उर्वरता का एक प्रत्यक्ष परिचायक है लेकिन मृदा में लगातार फसलोत्पादन, मृदा अपरदन व कार्बनिक खादों के अभाव व अन्य कुछ कारणों से मृदा में कार्बनिक पदार्थ का स्तर विगत पांच दशकों से निरन्तर गिरता जा रहा है जो कि एक चिन्ता का विषय है, क्योंकि कार्बनिक पदार्थ की मात्रा से हमारी मृदा की क्षमता का प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध है, एक उर्वर मृदा में सदैव कार्बनिक पदार्थ की अधिकता पाई जाती है जबकि अनुर्वर मृदा के अन्दर कार्बनिक पदार्थ की निश्चित रूप से कमी पाई जाती है।

उत्तर भारत के परिपेक्ष्य में बात करें तो हम लगातार सघन फसलोत्पादन ले रहे हैं व फसल अवशेषों को भी या तो चारे के रूप में इस्तेमाल कर रहे हैं अन्यथा खेत के अन्दर ही अवशेषों को जलाने का प्रचलन जोरों पर है बावजूद उसके कि सरकार की तरफ से भी फसल अवशेषों को जलाने पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाया गया है तथा ऐसा करते हुए पाये जाने पर दण्ड व जुर्माने का भी प्रावधान किया गया है लेकिन हम इसके दूसरे पहलू पर ध्यान देना चाहेंगे कि फसल अवशेषों को जमीन में मिलाने से कार्बनिक पदार्थ की मात्रा जमीन के अन्दर बढ़ेगी, जिससे किसान को क्या-क्या लाभ होगा।

## मृदा में कार्बनिक पदार्थ की जरूरत क्यों?

जमीन में कार्बनिक पदार्थ की महत्ता का पता इसी बात से लगाया जा सकता है कि जंगलों व वनों में कभी भी कोई खाद या पानी पौधों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए, नहीं दिया जाता है लेकिन फिर भी वानस्पतिक वृद्धि में किसी प्रकार की कमी नहीं आती है उसका सिर्फ और सिर्फ एकमात्र कारण कार्बनिक पदार्थ की भरपूर मात्रा ही है क्योंकि जंगलों में पौधे अवशेष ही गलते व सड़ते रहते हैं तथा पौधे को भोजन की अधिकाधिक पूर्ति करते रहते हैं, फलस्वरूप वहाँ किसी प्रकार की खाद व सिंचाई का अलग से प्रबन्ध नहीं करना पड़ता है।

## कार्बनिक पदार्थ का मृदा में लाभ

- कार्बनिक पदार्थ के उपयोग से मृदा का उर्वरता स्तर बढ़ जाता है।
- कार्बनिक पदार्थ से मृदा के कण आपस में जुड़कर मृदा को संरचना प्रदान करते हैं।
- मृदा की जल धरण क्षमता में वृद्धि होती है।

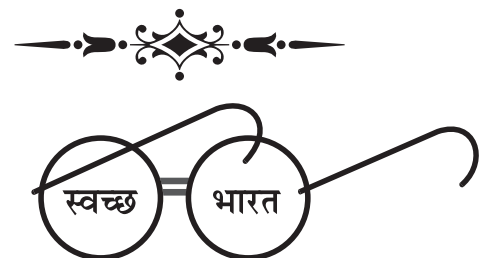
- मृदा को अधिक क्षारीय होने से बचाता है।
- रासायनिक उर्वरकों के प्रतिकूल प्रभाव को कम करता है।
- रासायनिक उर्वरकों की उपलब्धता पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।
- मृदा के तापमान को नियन्त्रित करता है।

उपरोक्त लाभों को ध्यान में रखते हुए हमारे किसानों को जागरूक होने की आवश्यकता है क्योंकि हम एक कृषि प्रधान देश के निवासी हैं और हमारा मुख्य व्यवसाय कृषि है, इस नाते यह बात तो समझ में आती है कि पशुओं के चारे के रूप में हम फसल अवशेषों को प्रयोग में लायें लेकिन जहाँ तक सवाल उठता है अवशेषों को खेतों के अन्दर जलाने का चाहे वह धान, गन्ना या अन्य कोई भी फसल हो, तो यह गलत कदम है और हमें ऐसा कभी भी नहीं करना चाहिए, और फसल अवशेषों को खेत के अन्दर ही जुताई कर कार्बनिक पदार्थों के रूप में खेत में वापस पहुँचाना ही होगा क्योंकि इससे मृदा की गिरती उर्वरता में सुधार होगा व साथ ही साथ वायुमण्डल भी फसल अवशेषों को जलाने के समय निकली हानिकारक गैसों के प्रदूषण से बचेगा।

## कार्बनिक पदार्थ की मात्रा को मृदा में बनाये रखने के लिए क्या करें?

- फसल अवशेषों की खेत के अन्दर ही जुताई करना।
- फसल अवशेषों को जलाना नहीं चाहिए।
- फसल अवशेषों को अगली फसल में मल्टच के रूप में उपयोग करें ताकि उनके गलाव-सड़ाव के साथ-साथ फसल के खरपतवारों की रोकथाम भी होगी।
- फसल चक्र में दलहनी फसलों को अवश्य सम्मिलित करें।
- उपलब्धता अनुसार कार्बनिक खादों जैसे गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, केंचुए की खाद या हरी खाद का इस्तेमाल खेत में अवश्य करें।

उपरोक्त लेख में चर्चित जमीन में कार्बनिक पदार्थ के लाभों व कमी से होने वाले नुकसानों को ध्यान में रखते हुए किसानों को समझ आ चुका होगा कि मृदा में कार्बनिक पदार्थ का एक अद्वितीय योगदान है इसलिए अपनी जमीन की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के लिए कार्बनिक पदार्थों का स्तर उपरोक्त उपायों के माध्यम से बनाये रखना होगा व आने वाली पीढ़ियों के हाथ में भी उर्वर जमीन ही सौंपनी होगी।



# सरसों व राया के उत्पादन में गंधक का महत्व

धीरज पंधाल, चेतन कुमार जांगिड एवं आर एस मलिक

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सरसों व राया हरियाणा प्रांत की मुख्य रबी तिलहनी फसल है। तिलहनी फसलें मुख्यतः बारानी या कम उपजाऊ जमीन में ही उगाई जाती हैं जो कि मुख्य तत्वों के साथ-साथ गौण व सूक्ष्म तत्वों में भी कमजोर पाई जाती हैं। तिलहनी फसलों में गंधक का अपना महत्व है। जो इन फसलों की पैदावार बढ़ने के साथ-साथ तेल की मात्रा व गुणवत्ता को भी बढ़ाता है। हरियाणा में लगभग 36% भूमि में गंधक तत्व की कमी पाई गई है।

सरसों व राया की फसल के लिए और फसलों के मुकाबले गंधक की आवश्यकता अधिक पड़ती है। अनाज वाली फसलों के मुकाबले सरसों व राया की फसल गंधक की कमी से अधिक प्रभावित होती है। गंधक की कमी वाली जमीन पर सरसों व राया की फसल उगाने से इनकी पैदावार में तो कमी होती ही है, साथ-साथ बीज में तेल की मात्रा भी काफी कम हो जाती है।

**मिट्टी में गंधक की कमी के कुछ मुख्य कारण इस प्रकार हैं :**

1. रेतीली मिट्टी
2. जैविक पदार्थों की कमी
3. फसल अवशेष व जैविक पदार्थों को समय-समय पर मिट्टी में न मिलाना
4. गंधक रहित खाद का प्रयोग
5. अधिक लंबा नमीयुक्त व ठंडा मौसम।

**पौधों में गंधक की कमी के लक्षण हैं :**

1. गंधक की कमी से सबसे पहले पौधों की नयी पत्तियां प्रभावित होती हैं।
2. पत्तियां साधारण पौधों की पत्तियों के मुकाबले सीधी खड़ी होती हैं व अन्दर की ओर मुड़ जाती हैं।
3. शुरू में पत्तों के नीचे की सतह लाल रंग की हो जाती है जो कि बाद में ऊपर की सतह पर भी आ जाती है।
4. फसल देर से पकती है।
5. पौधे छोटे रहते हैं व बढ़वार नहीं होती है।

सरसों व राया की फसल की अच्छी पैदावार के लिए नाइट्रोजन, फास्फोरस, जस्ता (जिंक) डालने के साथ-साथ गंधकयुक्त खाद सिंगल सुपर फॉस्फेट या जिप्सम को इन फसलों की बिजाई से पहले खेत में अवश्य डालना चाहिए। तिलहनी फसलों के लिए गंधक का महत्व फॉस्फोरस से भी अधिक है। सरसों के दानों में गंधक की औसत मात्रा 1% होती है, दालों में यह मात्रा केवल 0.35% व अनाज में केवल 0.2% होती है।

हरियाणा में गंधक की कमी वाली भूमि में उन्नत तकनीक के द्वारा राया व सरसों की पैदावार में बढ़ोत्तरी के बहुत ही प्रभावकारी परिणाम मिले हैं। केवल नाइट्रोजन व फॉस्फोरस डालने के मुकाबले नाइट्रोजन व फॉस्फोरस की उचित मात्रा के साथ-साथ बिजाई से पहले 100 किलोग्राम जिप्सम डालने से राया की पैदावार में वांछित वृद्धि पाई गई। आर्थिक लाभ के रूप में देखें तो पता चलता है कि एक रुपया गंधक पर खर्च करने से लगभग 26 रुपये का लाभ मिलता है। इस प्रकार गंधक की कमी पूरी करने पर पैदावार में अत्यधिक वृद्धि के साथ-साथ आमदनी भी ज्यादा होती है।

**गंधक तत्व के स्रोत**

अमोनियम सल्फेट, सिंगल सुपरफॉस्फेट, पोटाशियम सल्फेट, जिप्सम, पाइराइट्स व एलीमेंटल सल्फर आदि गंधक के मुख्य स्रोत हैं। पाइराइट्स व एलीमेंटल सल्फर के अलावा शेष सभी स्रोतों में गंधक-प्राप्य गंधक के रूप में पाया जाता है। सिंगल सुपरफॉस्फेट, जिप्सम या अमोनियम सल्फेट आदि का उपयोग गंधक के स्रोतों के रूप में सरसों व राया की फसल में बिजाई से पहले करना चाहिए। अच्छे गंधक स्रोत का चुनाव उसकी कीमत, उपलब्धता, कुल विद्यमान पोषक तत्वों की मात्रा व फसल के आधार पर करना चाहिए।



(पृष्ठ 01 का शेष)

**कम्पोस्ट प्रयोग के लाभ**

- कार्बनिक खादों से प्राप्त ह्यूमस मृदा कणों को चिपका कर जमीन की भौतिक दशा जैसे भुरभुरापन, वायु, तापमान, नमी धारण, जल रिसाव व निकास तथा जड़ों के फैलाव की क्षमता को बढ़ाता है।
- कम्पोस्ट पौधों में समुचित रूप से पोषक तत्वों की पूर्ति करती है।
- कम्पोस्ट के विच्छेदन से कार्बन डाइऑक्साइड बनती है जो पानी में घुलकर कार्बोनिक अम्ल बनाती है। यह कार्बोनिक अम्ल क्षारीय मृदा के पी.एच. को कम करता है।
- कम्पोस्ट में असंख्य फंफूदी व बैक्टीरिया होने के कारण खेत में इन सूक्ष्मजीवियों की संख्या एवं सक्रियता में उल्लेखनीय वृद्धि होती है, अतः मृदा में होने वाली जैविक क्रियाएं अनुकूल रूप से प्रभावित होती हैं।
- कम्पोस्ट से खेतों में दीमक व खरपतवार का प्रकोप नहीं होता है।
- कम्पोस्टिंग में अधिक तापमान (70-80°C) पहुंचने से खरपतवारों के बीज व सभी प्रकार की बीमारियों के जीवाणु नष्ट हो जाते हैं।
- कम्पोस्ट भूमि की अवरोधक शक्ति को बढ़ाता है।
- कम्पोस्ट बनाने से कृषि व पशुओं के फालतू अवयव एवं शहरी व ग्रामीण कूड़ा-कचरा का सर्वश्रेष्ठ उपयोग हो जाता है।



# गेहूँ की मोल्या बीमारी : किसान-वैज्ञानिक संवाद

आर.एस.कंवर

सूत्रकृमि विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

गेहूँ में लगने वाली मोल्या बीमारी एक सूत्रकृमि द्वारा होती है। शुरू में यह खेत में कहीं-कहीं पर होती है लेकिन कुछ वर्षों में पूरे खेत में फैल जाती है। किसानों को इसका पता एक-डेढ़ महीने की फसल होने पर ही चलता है। उस समय इसकी रोकथाम नहीं की जा सकती। इस लेख में किसान-वैज्ञानिक संवाद के माध्यम से इस बीमारी की जानकारी दी गई है।

**किसान :** गेहूँ की मोल्या बीमारी क्या होती है ?

**वैज्ञानिक :** यह बीमारी जमीन में रहने वाले सूत्रकृमि अथवा निमाटोड से होती है जो फसल की जड़ों को प्रभावित करता है।

**किसान :** इसका पता कब और कैसे चलता है ?

**वैज्ञानिक :** इस रोग के लक्षण पौधों में पोषक तत्वों की कमी के समान होते हैं। अतः स्पष्ट तौर से इसका पता नहीं चलता। आरम्भ में खेत में कहीं-कहीं पर फसल कमजोर तथा पीलापन लिए दिखाई देती है। इसका एहसास किसान को फसल के 30-35 दिन की होने पर ही होता है।

**किसान :** इस बीमारी के मुख्य लक्षण क्या हैं ?

**वैज्ञानिक :** मोल्या रोग से प्रभावित फसल छोटी तथा कमजोर रह जाती है। इसमें फुटाव नहीं होता। जड़ें झाड़ीनुमा बन जाती हैं और बालें छोटी-छोटी, कम दानों वाली बनती हैं जिससे पैदावार काफी कम होती है। ढाई-तीन महीने की फसल होने पर पौधों की जड़ों को निकाल कर ध्यानपूर्वक देखने से उन पर छोटी-छोटी सफेद मादा सूत्रकृमि देखी जा सकती है।

**किसान :** फसल में लक्षणों का पता लगने पर हमें खेत में कौन-सी दवाई डालनी चाहिए ?

**वैज्ञानिक :** क्योंकि फसल में बीमारी के लक्षणों का पता एक महीने के बाद ही चलता है। उसके बाद खेत में दवाई डालने से भरपूर फायदा नहीं मिलता। अतः फ्यूराडान 3, जी नामक दवाई 13 किलोग्राम प्रति एकड़ की दर से बिजाई के समय ही डालनी चाहिए।

**किसान :** मेरे खेत में पिछले साल यह समस्या थी। क्या मैं उस खेत में कपास व ग्वार की फसल ले सकता हूँ ?

**वैज्ञानिक :** यह सूत्रकृमि गेहूँ व जौ के अलावा किसी भी अन्य फसल को प्रभावित नहीं करता। अतः आप ये दो फसल छोड़कर कोई भी फसल ले सकते हैं।

**किसान :** क्या फसल बोने से पहले खेत में सूत्रकृमि का पता लग सकता है ?

**वैज्ञानिक :** हाँ, मिट्टी की जांच करवाने से सूत्रकृमि की उपस्थिति का पता लग जाता है। यह सुविधा चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय में सूत्रकृमि विभाग द्वारा निःशुल्क दी जाती है।

**किसान :** मैं अपने खेत में जैविक गेहूँ (बिना रासायनिक खादों व दवाइयों के) पैदा करना चाहता हूँ। ऐसे में सूत्रकृमि नियंत्रण के क्या उपाय हैं ?

**वैज्ञानिक :** यह सूत्रकृमि दूसरी फसलों पर नहीं लगता। इसलिए फसल चक्र द्वारा इसे बड़ी आसानी से काबू किया जा सकता है। गेहूँ की राज मोल्या रोधक-1 तथा जौ की बी एच 75 व बी एच 393 सूत्रकृमि अवरोधी किस्में हैं जिन्हें उगाकर अच्छी पैदावार मिलने के साथ-साथ खेत में सूत्रकृमि की संख्या भी कम हो जाती है। गेहूँ की फसल कटने के बाद गहरी जुताइयां करने तथा एच टी 54 टीके से बीज उपचार करके बोने से भी मोल्या बीमारी में कमी आती है। उपर्युक्त तरीकों से गेहूँ की जैविक खेती में सूत्रकृमि नियंत्रण किया जा सकता है।

**किसान :** मेरे खेत में मोल्या सूत्रकृमि की समस्या से गेहूँ की उपज काफी कम हो गई। क्या इसकी ऊपर वाली 5-6 इंच मिट्टी हटाने से फायदा मिल सकता है ?

**वैज्ञानिक :** हाँ, ऐसा करने से एक बार तो सूत्रकृमियों की संख्या कम हो जाएगी परन्तु एक-दो साल में फिर बढ़ जाएगी। इस प्रक्रिया से मिट्टी के पोषक तत्व भी कम हो जाएंगे जिससे फसल कुप्रभावित होगी। अतः यह तरीका सही नहीं है।

**किसान :** मेरे कुछ खेतों में मोल्या बीमारी आती है, दूसरों में नहीं। ऐसे कौन से उपाय करने चाहिए जिससे यह आगे न फैले ?

**वैज्ञानिक :** यह सूत्रकृमि पुट्टी अर्थात् सिस्ट (मृत मादा जिसके अण्डे व लार्वे हों) की अवस्था में जमीन में सुप्त पड़ा रहता है जो कि गेहूँ की फसल के मौसम में सक्रिय रहता है। मिट्टी में विद्यमान सिस्ट हवा, सिंचाई के पानी, कृषि उपकरणों व पशुओं के खुरों में फंसी मिट्टी के साथ एक खेत से दूसरे खेत में पहुंच जाती हैं। वहाँ लगातार गेहूँ की फसल लेते रहने से धीरे-धीरे इनकी संख्या बढ़ती रहती है और आर्थिक कगार पर पहुंच कर फसल को हानि करती है। यद्यपि इसके फैलाव को रोकना अति कठिन है परन्तु फिर भी बीमारी वाले खेत की मिट्टी को दूसरे खेतों में जाने से रोकना चाहिए।





# समन्वित सूत्रकृमि प्रबंध

विनोद कुमार, बबिता कुमारी एवं अनिल कुमार

सूत्रकृमि विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सूत्रकृमि (निमेटोड) सूत्रकृमि के समान जीव है जो पतले धागे के समान होते हैं, जिन्हें सूक्ष्मदर्शी से आसानी से देखा जा सकता है। इनका शरीर लंबा, बेलनाकार व पूरा शरीर बिना खंडों का होता है। मादा सूत्रकृमि गोलाकार व नर सर्पिलाकार आकृति के होते हैं। इनका आकार 0.2-10 मि.मी. तक हो सकता है। सूत्रकृमियों में प्रमुख रूप से फसल परजीवी सूत्रकृमि हैं जो कि मृदा में या पौधे की ऊतकों में रहते हैं। इनमें मुख्य रूप से जड़ गांठ सूत्रकृमियों का विभिन्न फसलों पर प्रकोप ज्यादातर देखा गया है, जो पौधे की जड़ों पर आक्रमण करते हैं। जिससे जड़ों की गांठें फूल जाती हैं व जड़ों द्वारा जल व पोषक तत्व ग्रहण करने की क्षमता कम हो जाती है या रुक जाती है, जिससे पौधा आकार में बौना, पौधों की पत्तियां पीली, पौधा मुरझाने लगता है एवं फसल की ओज व उपज क्षमता कम हो जाती है। इन सूत्रकृमियों के मुख्य भाग में सुई के समान एक संरचना होती है जिसे स्टाइलेट कहते हैं, जिसके द्वारा ये जड़ों में संक्रमण करके उसकी कोशिकाओं व उत्तकों से पोषण लेते हैं, जिससे जड़ों का बढ़ना रुक जाता है, जड़ें फूल जाती हैं व आपस में विभक्त होकर गुच्छ बना लेती हैं। सूत्रकृमि विभिन्न प्रकार की सब्जियों में रोग उत्पन्न करता है, जिसकी पहचान आम किसान नहीं कर पाते एवं अन्य रोगनाशक रसायनों का छिड़काव कर रोकथाम करने का प्रयास करते हैं, जिससे उनका श्रम, पैसा व समय बर्बाद होता है एवं सफलता भी नहीं मिलती। अतः इन सूत्रकृमियों की पहचान करना जरूरी है एवं इनसे होने वाले रोगों की पहचान कर इन्हें विभिन्न विधियों द्वारा नियंत्रित किया जाना चाहिये।

सूत्रकृमियों के कारगर नियंत्रण के लिये सबसे पहले सूत्रकृमि की पहचान, रोगजनक, रोग के लक्षण आदि की पहचान होना अति आवश्यक है जिससे इसकी रोकथाम करने के विभिन्न उपाय अपनाने में आसानी हो सके तथा वर्तमान में बढ़ते हुये रासायनिक तत्वों के प्रयोगों के कारण भूमि, जल, पर्यावरण, खाद्य पदार्थ के खराब होने एवं मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले विपरीत असर को देखते हुये सूत्रकृमि नियंत्रण के लिये समन्वित रोग प्रबंधन का तरीका अपनाना चाहिये।

समन्वित सूत्रकृमि प्रबंधन की विभिन्न विधियों में से किसी एक विधि द्वारा सूत्रकृमियों का पूरी तरह रोकथाम नहीं किया जा सकता अतः दो या दो से अधिक विधियों का समावेश करके समन्वित रोग प्रबंधन द्वारा सूत्रकृमियों की रोकथाम की जा सकती है। समन्वित प्रबंध एक ऐसा मार्ग है जो किसी फसल के पौधे का एक सूत्रकृमि जनित रोग या उसके समस्त रोगों एवं नाशकजीवों के नियंत्रण की सभी विधियों को, सर्वोत्तम नियंत्रण परिणामों के लिये केवल बहुत कम कीमत पर तथा पर्यावरण को कम से कम हानि पहुंचाकर प्रयोग करने का प्रयास करता है। समन्वित विज्ञान में

एक सबसे अधिक नवीन धारणा का प्रवेश समन्वित या एकीकृत सूत्रकृमि प्रबंध के रूप में हुआ है, जिसमें दो या दो से अधिक नियंत्रण विधियों अर्थात् प्रतिरोधी किस्मों, कर्षण, जैविक एवं रासायनिक विधियों के उपयोग द्वारा एक या एक से अधिक सूत्रकृमि जातियों का प्रबंध किया जाता है। समन्वित या एकीकृत सूत्रकृमि प्रबंध नाशकजीव प्रबंध का उद्देश्य फसलों के विभिन्न नाशकजीवों की संख्या को कीटनाशकों की केवल आवश्यकता पड़ने पर ही न्यूनतम प्रभावी मात्राओं के उचित प्रयोग द्वारा निम्न स्तरों पर रखना होता है।

1. **ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई :** मई-जून के महीने में खेतों की मिट्टी पलट हल से 15-30 सें.मी. गहरी जुताई करके छोड़ दें, जिससे सूत्रकृमियों के अण्डे व डिंबक ऊपरी सतह पर आ जाते हैं जो सूर्य ताप व चिड़िया आदि द्वारा नष्ट हो जाते हैं, जिससे सूत्रकृमि के प्रकोप को काफी हद तक कम किया जा सकता है।
2. **मृदा सौर निर्जमीकरण द्वारा :** यह एक आसान, सुरक्षित व प्रभावशाली विधि है, जिसके द्वारा सूत्रकृमियों के साथ-साथ विभिन्न कीटों, रोगजनक एवं खरपतवारों की रोकथाम भी हो जाती है। इस विधि में गर्मियों में (मई-जून) मृदा में सिंचाई करके 15-30 सें.मी. गहराई तक गहरी जुताई करके उसे 4-5 सप्ताह तक पॉलीथीन शीट से ढक दिया जाता है, जिससे मृदा में उच्च तापक्रम द्वारा सूत्रकृमि नष्ट हो जाते हैं।
3. **फसल चक्र :** सूत्रकृमियों की कई प्रजातियां जैसे - ग्लोबोडेरा, मेलाइडोगायनी, हेटरोडेरा आदि मृदा में लंबे समय तक सक्रिय नहीं रहते अतः फसल चक्र अपनाकर इनकी रोकथाम की जा सकती है। जिन खेतों में जड़ गांठ रोग का प्रकोप हो रहा है वहां ऐसी सब्जियों या अन्य फसलों का चुनाव करें जिनमें यह रोग नहीं लगता जैसे- सरसों, ग्वार, चना आदि।
4. **रोग रहित पौध का चुनाव :** स्वस्थ, साफ एवं रोगरहित पौध का चुनाव करना चाहिये।
5. **कार्बनिक खाद का प्रयोग :** कार्बनिक खादें (नीम, सरसों, मूंगफली) सूत्रकृमियों के प्रति प्रतिरोध उत्पन्न करने वाले कुछ ऐसे कवक व बैक्टीरिया को बढ़ावा देती हैं, जिससे इनका संक्रमण कम हो जाता है। खादों को भूमि की जुताई करते समय या बीज बोने या पौध लगाने के 20-25 दिन पहले डालना चाहिये।
6. **शत्रु फसलें व रक्षक फसलें :** कुछ फसलें जैसे शतावर, क्रिस्टेयी क्रोटोलेरिया आदि जड़ गांठ सूत्रकृमि की संख्या को कम करते हैं। सफेद सरसों आलू के सिस्ट सूत्रकृमि को रोकता है। ये फसलें शत्रु फसलें कहलाती हैं। इनके अलावा कुछ ऐसी फसलें हैं जिनकी जड़ों से ऐसे रासायनिक द्रव्य निकलते हैं जो सूत्रकृमि के लिये विष का काम करते हैं जैसे गेंदा, सेवन्ती आदि। इन्हें अंतरवर्तीय फसलों के रूप में मुख्य फसलों के बीच में या मुख्य फसल के चारों तरफ 2-3 कतारों में लगाना चाहिये।

7. **रोग ग्रस्त पौधों को नष्ट करके :** यदि आरंभ में सूत्रकृमि का प्रकोप बहुत कम है तो रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिये। इससे रोग का प्रकोप कम हो जायेगा।
8. **खरपतवार नियंत्रण :** खेतों में उगने वाले कई प्रकार के खरपतवारों पर सूत्रकृमि पनाह लेकर पोषण प्राप्त करके अपना जीवन चक्र पूरा कर लेते हैं तथा आने वाली फसल पर आक्रमण करके हानि पहुंचाते हैं अतः समय-समय पर खरपतवारों का नियंत्रण करते रहें।
9. **रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन करके :** सूत्रकृमियों के प्रबंधन का यह सबसे सरल, सस्ता व प्रभावकारी उपाय है। इस सारणी की सहायता से कुछ फसलों के सूत्रकृमियों के प्रतिरोधक क्षमता रखने वाली सब्जियों की किस्मों के उदाहरण दिये जा रहे हैं, जिन्हें किसान चयन करके सूत्रकृमियों का नियंत्रण कर सकते हैं।
10. अंत में यदि इन सबसे रोकथाम नहीं हो तब रसायनों का प्रयोग करें।
  - ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करनी चाहिये।
  - नर्सरी लगाने के पूर्व बीज शय्या को कार्बोफ्यूथ्रान, फोरेट आदि से उपचारित करना चाहिये।
  - फसल लगाने के 20-25 दिन पहले कार्बनिक खाद को मृदा में मिलाना चाहिये।
  - फसल चक्र अपनाने।
  - अंतरवर्ती फसल के रूप में शतावर, गेंदा की 2-3 कतार मुख्य फसल के बीच में लगायें।
  - रोग प्रतिरोधी जातियों का चयन करें।
  - अंत में यदि इन सबसे रोकथाम नहीं हो तब रसायनों का प्रयोग करें।

#### रूट-गाँठ निमेटोड प्रबंधन के लिए समेकित दृष्टिकोण

निमेटोड नियंत्रण की व्यक्तिगत पद्धति या तो रूट गठरी निमेटोड के खिलाफ अप्रभावी या अपर्याप्त पद्धति को साबित करती है। इसलिए फसलों में निमेटोड समस्याओं के प्रबंधन के लिए विभिन्न उपयुक्त युक्तियों का एकीकरण एक ईकोफ्रेन्डली, आर्थिक रूप से व्यवहार्य और व्यावहारिक रूप से व्यावहारिक दृष्टिकोण हो सकता है। गर्मियों की अवधि के दौरान गहरे-गर्मियों की खेती के दौरान पाक्षिक अंतराल पर कार्बनिक पदार्थ के आवेदन के साथ जुताई और निमेटोड मुक्त पौधों के साथ रोपण के बाद निमेटोड संख्या को कम करने के लिए एक व्यावहारिक दृष्टिकोण है। इसी प्रकार, उनके उपलब्ध संसाधनों वाले किसान प्रत्येक फसल की खेती प्रणाली के लिए उपयुक्त संयोजन में सांस्कृतिक, जैविक, रासायनिक विधियों और प्रतिरोधी किस्मों का एकीकरण कर अनुसरण कर सकते हैं। मृदा सौरलाइजेशन/गर्मी में अकेले कटाई के साथ-साथ कार्बोफ्यूथ्रान 3 जी पर 1 किलोग्राम एआई/हैक्टेयर के साथ संयोजन में बैंगन, भिंडी और टमाटर पर पड़ने वाले निमेटोड के खिलाफ प्रभावी पाया गया है।



## टमाटर के प्रमुख कीटों का प्रबंधन

पूर्ति, रिकू एवं कृष्णा रोलानियां

कीट विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा में सभी सब्जियों का उत्पादन होता है। मौसम के अनुरूप यहाँ अलग-अलग प्रकार की सब्जियों का उत्पादन किया जाता है। वर्षा ऋतु में भी अनेक सब्जियां उगाई जाती हैं जिनमें से टमाटर प्रमुख है। टमाटर हमारे भोजन का एक अहम् हिस्सा है। विटामिन ए, बी, सी, के अतिरिक्त इसमें पोटैश, सोडियम चूना व तांबा भी पाए जाते हैं। टमाटर में अनेक प्रकार के कीटों द्वारा काफी नुकसान होता है जिससे पैदावार में 20-40% का नुकसान होता है। इस लेख में टमाटर में लगने वाले मुख्य कीटों व उनकी रोकथाम के बारे में जानकारी दी गयी है जो निम्नलिखित है :

**फल छेदक कीट (हेलिकोवरपा आर्मीजेरा) :** इस कीट की सूंडियां टमाटर के फूलों और फलों को क्षति पहुँचाती हैं। इस कीट का आक्रमण अप्रैल-जून में अधिक होता है। वयस्क मध्यम आकार के, पीले भूरे रंग व सलेटी भूरे रंग के होते हैं। मादा पतंगा पत्तियों व फूलों पर अंडे देती है। अण्डों से सूंडियां निकलकर फलों में प्रवेश कर फल के गूदे को खाती हैं। सूंडियां हरे तथा भूरे रंग की होती हैं, उनके शरीर के ऊपर वाले भाग पर तीन लम्बी सलेटी रंग की और दोनों ओर सफेद धारियां होती हैं जो शरीर का आधा भाग फल के अंदर व आधा बाहर रखकर फलों को नुकसान पहुँचाती हैं, जिससे फल सड़ जाते हैं व बाजार में भेजने लायक नहीं रहते हैं।

**नियंत्रण :** इस कीट की रोकथाम के लिए 75 मि.ली. फेनवलरेट 20 ई. सी. या 200 मि.ली. डेल्टामेथरिन 2.8 ई.सी. या 60 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 500 ग्रा. कार्बेरिल 50 घु.पा. को 200-250 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ में छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर दोहराएं। मध्य मार्च के आस-पास पत्तों पर जैसे ही फल छेदक के अंडे दिखाई दें तो 20,000 ट्राइकोग्रामा किलोनिस परजीवी छोड़ें व इसके चार दिन बाद पुनः 20,000 परजीवी प्रति एकड़ फसल पर छोड़ें। इसके बाद 10-10 दिन के अंतर पर 1.0 लीटर निम्बीसीडिन, 400 ग्रा. बेसिलस थुरिंजिएन्सीस (बी.टी.), 400 ग्रा. कार्बेरिल 50 घु.पा. को 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

**चेपा (एफिस गोसीपी) :** यह कीट हरे रंग का होता है तथा पत्तों, शाखाओं व फूलों से जूँ की तरह चिपका रहता है। यह कीट समूह में रहकर पौधों से रस चूसता है व एक चिपचिपा तरल पदार्थ पत्तों पर छोड़ता है जिस पर नमी होने पर काली फफूंद लग जाती है। इससे पौधों की प्रकाश संश्लेषण की क्रिया पर बुरा प्रभाव पड़ता है। कीट का अधिक प्रकोप होने पर पत्ते मुड़ जाते हैं और पौधों का विकास रुक जाता है। यह कीट पौधों में विषाणु रोग भी फैलाता है।

**नियंत्रण :** इस कीट के नियंत्रण के लिए 300 मि.ली. डाईमैथोएट (रोगेर) 30 ई.सी. या ऑक्सीडेमेटन मिथाइल (मेटासिसटॉक्स) 25 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ में छिड़काव करें। यदि आवश्यकता हो तो अगला छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर करें।

**सफेद मक्खी :** इस कीट के शिशु पतली झिल्ली की तरह होते हैं जो पत्तों की निचली सतह पर चिपके रहते हैं। वयस्क कीट सफेद रंग की छोटी-सी मक्खी के आकार के होते हैं, जो पत्तों की निचली सतह पर ही रहते हैं। शिशु व वयस्क दोनों ही पत्तों से रस चूसते हैं, जिसके कारण पत्ते पीले पड़ जाते हैं। यह कीट चिपचिपा पदार्थ भी छोड़ते हैं जिस पर काली फफूंद लगने से पौधों की प्रकाश संश्लेषण की क्रिया कम हो जाती है। इस कीट के प्रकोप से पौधों की बढ़ोत्तरी रुक जाती है तथा उपज में कमी आ जाती है। यह कीट विषाणु रोग भी फैलाते हैं, जिससे फसल को काफी नुकसान होता है।

**नियंत्रण :** इस कीट के नियंत्रण के लिए 400 मि. ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ में छिड़काव करें। प्रकोप रहने पर 15 दिन के अंतराल पर पुनः छिड़काव करें।

**नोट :** छिड़काव से पहले सभी पके हुए फल तोड़ लें।

- कीट ग्रसित व सड़े-गले फलों को मिट्टी में गहरा दबा दें।



## आवश्यक सूचना

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार स्थित किसान सेवा केन्द्र में किसानों हेतु सप्ताह में तीन दिन सोमवार, बुधवार एवं शुक्रवार को 10 से 12 बजे तक निःशुल्क फोन सुविधा (हैल्प लाइन) फोन नं. 1800-180-3001 पर उपलब्ध है जिसमें वैज्ञानिकों से कृषि-संबंधी परामर्श किया जा सकता है। यदि किसी जगह से यह फोन सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो किसान भाई 01662-232768 पर सशुल्क फोन करके उपर्युक्त दिनों में इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल में भी सोमवार, बुधवार, शुक्रवार 10 से 12 बजे तक फोन नं. 1800-180-4002 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, ऊचानी (करनाल) में भी मंगलवार व बृहस्पतिवार 10 से 11 बजे तक फोन नं. 1800-180-3111 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

## गोभी - वर्गीय सब्जियों के कीट व उनका प्रबंधन

पूर्ति<sup>1</sup>, अरविन्द मलिक एवं अनुगधा

बागवानी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में उगायी जाने वाली सब्जियों में गोभी वर्गीय सब्जियां व्यावसायिक दृष्टि से महत्वपूर्ण सब्जी फसल हैं। राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड द्वारा प्राप्त आंकड़ों के अनुसार बंदगोभी की खेती 0.36 मिलियन हैक्टेयर में की जाती है, जिसमें कुल 7.94 मिलियन टन उत्पादन होता है तथा इसकी औसत उत्पादकता मीट्रिक टन प्रति हैक्टेयर है। इसी प्रकार फूल गोभी की खेती भी मिलियन हैक्टेयर में की जाती है, जिसका कुल उत्पादन मिलियन टन तथा औसत उत्पादकता मीट्रिक टन प्रति हैक्टेयर है। भारत में कुल सब्जी उत्पादन में बंदगोभी का 5.40 प्रतिशत जबकि फूल गोभी का 4.60 प्रतिशत योगदान है। गोभी वर्गीय सब्जियों के क्षेत्रफल, उत्पादन, उत्पादकता और उपलब्धता में वृद्धि के साथ-साथ कीटों और बीमारियों के प्रकोप में भी बढ़ोत्तरी हुई है। इस लेख में गोभी में लगने वाले मुख्य कीटों व उनकी रोकथाम के बारे में जानकारी दी गयी है जो निम्नलिखित है।

**डायमंड बैक मॉथ :** यह हरे रंग का छोटा सा कीट है जो ज़रा-सा छूने पर एकदम से उछल पड़ता है। डायमंड बैक मॉथ कोल फसलों की सफल खेती में होने वाले पतझड़ के लिए जिम्मेदार एक सर्वदेशीय प्रमुख सूंडी है। ये कीट अपने अंडे पत्तियों पर एक-एक करके अलग-अलग अथवा पांच से छः के समूह में देते हैं। अंडे शुरू में हल्के पीले रंग के होते हैं तथा बाद में ये भूरे रंग के हो जाते हैं। युवा सूंडी देखने में क्रीमी-हरे रंग की तथा इसके हरे ऊतकों को खाने के बाद पत्तों पर सफेद धब्बे दिखाई देने लगते हैं। बाद में बड़े होकर सूंडी पत्तियों में छेद बना देती है और परिणामस्वरूप फसल में पतझड़ का कारण बनती है जिससे विशाल नुकसान होता है।

**प्रबंधन :** सरसों को 20 : 1 के अनुपात में अंतःफसल के रूप में उगायें। जिससे डायमंड बैक मॉथ सरसों के पत्तों पर अण्डे दे सके।

- सूंडी को मारने के लिए सरसों की पंक्ति पर कर्टेप हाइड्रोक्लोराइड 1 ग्राम प्रति लीटर का छिड़काव करें।
- रोपाई के बाद 10 दिनों के अंतराल पर 4 प्रतिशत नीम के बीजों के पाऊंडर का छिड़काव करें।
- 400 ग्राम बेसिलस थूरिनजिएंसिस (बायोआस्प) घु.पा., 300 मि. ली. डायजिनोन (बासुडीन) 20 ई.सी. या 60 मि.ली. डाइक्लोरोवास (नुवान) 76 ई.सी. या 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ में छिड़काव करें। अगला छिड़काव 7-10 दिन के अंतर पर करें।

<sup>1</sup>कीट विज्ञान विभाग, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार।



**बंदगोभी की तितली :** यह नर्सरी के साथ-साथ मुख्य कोल फसलों में भी सबसे गंभीर पतझड़ का कारक है। इसका वयस्क कीट सफेद रंग की तितली होती है, जिसके अगले पंख पीलापन लिए हुए सफेद रंग के होते हैं, जिनके ऊपर दो काले धब्बे पाए जाते हैं। सफेद तितली दिन के समय पीले रंग के अंडे समूह में पत्तियों की निचली और ऊपरी सतह पर देती है। इन अंडों से एक सप्ताह के अंदर सूण्डियां निकलती हैं। शुरू में सूण्डियां हल्के पीले रंग की होती हैं, जो बाद में पीले व भूरे रंग की हो जाती हैं। शुरू की अवस्था में सूण्डियां समूह में होकर पत्तियों को खाती हैं लेकिन बाद में फूल में भी चली जाती हैं। बड़ी सूण्डियां फैल जाती हैं और पत्तों को छलनी कर देती हैं। इसका प्रकोप सितम्बर से अप्रैल तक रहता है।

**प्रबंधन :** नर्सरी के साथ ही मुख्य फसल में से बंदगोभी की तितली के अंडे और सूंडियों को हाथों से इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए जिससे इसके द्वारा होने वाले विनाश को कई गुणा कम किया जा सकता है। 1 मि.ली. डाइक्लोरोवास को 1 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

**चेपा :** इसका प्रकोप बंदगोभी और फूलगोभी के अतिरिक्त मूली, सरसों आदि में होता है। साधारणतः ये कीट पत्तियों की निचली सतह पर क्षति पहुंचाते हैं। शरद ऋतु के अंत में और बसंत ऋतु में इस कीट का प्रकोप अधिक होता है। इसके हरे रंग के शिशु व वयस्क दोनों ही पत्तियों से रस चूसकर क्षति पहुंचाते हैं, जिससे पौधे की बढ़वार रुक जाती है और पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं। वयस्क कीट पंखदार तथा पंखहीन दोनों प्रकार के होते हैं।

**प्रबंधन :** रोपाई के बाद 10 दिनों के अंतराल पर 4 प्रतिशत नीम के बीजों के पाऊंडर तथा नीम सोप (1%) का बारी-बारी से छिड़काव करें। अगर संख्या ज्यादा बढ़ जाये तो इमेडाक्लोप्रिड 200 एस. एल. का 0.5 मिली./लीटर या रोगोर 1.7 मि.ली की दर से छिड़काव करें।

**तंबाकू की सूंडी :** वयस्क कीट भूरे रंग के पतंगे होते हैं जिन पर काली सफेद मखमली धारियां होती हैं। यह कीट पत्तों की निचली सतह पर समूह में अंडे देते हैं जिनमें गहरे रंग की सूंडियां निकलती हैं जो शुरू की अवस्था में इकट्ठी रहती हैं तथा बाद में पौधों के विभिन्न भागों पर अलग-अलग दिखाई देती हैं। बड़े होने पर पत्तों को पूरी तरह नष्ट कर देती हैं। फल आने पर ये सूंडियां फलों को भी नष्ट कर देती हैं। इस कीट के कारण फसलों में पतझड़ के होने से काफी नुकसान होता है।

**प्रबंधन :** गर्मियों के महीने में गहरी जुताई से कीट की अपरिपक्व चरणों का पर्दाफाश किया जा सकता है।

- खेत में अधिक पानी भरने से सुप्तावस्था लार्वा बाहर किये जा सकते हैं।
- पुरुष पतंगों को आकर्षित करने के लिए फीरोमोन जाल /15/हैक्टेयर की दर से प्रयोग किये जा सकते हैं।

(शेष पृष्ठ 10 पर)

## कृषि आधारित व्यवसाय : ग्रामीण युवकों के लिए रोज़गार

जोगेन्द्र सिंह, कुलदीप सिंह एवं अनिल राठी

कृषि विज्ञान केन्द्र, सोनीपत

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत देश की जनसंख्या बढ़ती जा रही है तथा जोतों का आकार घटता जा रहा है। इसके साथ-साथ ग्रामीण युवकों का रूझान भी खेती से हटता जा रहा है तथा आज के दौर में आर्थिक उदारीकरण के कारण सरकारी एवं अर्धसरकारी क्षेत्रों में रोजगार के अवसर कम होते जा रहे हैं, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोज़गारी व गरीबी कम होने की जगह विकराल रूप धारण कर चुकी है। अतः इस समस्या से छुटकारा पाने का एक ही उपाय दिखाई देता है, वह है- कृषि आधारित व्यवसाय, जिसको अपनाकर ग्रामीण युवक व युवतियां स्वावलम्बी जीवन व्यतीत कर सकते हैं तथा उन्हें रोज़गार तलाशने हेतु दर-दर की ठोकर भी नहीं खानी पड़ेगी।

किसी भी व्यवसाय को शुरू करने से पहले चार बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए-लागत, तकनीकी ज्ञान, कच्चा माल व बाज़ार। अतः उपरोक्त चार तथ्यों का विश्लेषण करने के पश्चात ही कोई व्यवसाय आरम्भ करना चाहिए।

वैसे तो कृषि में व्यवसाय की अपार संभावनाएं हैं, अतः इस लेख में कुछ चुनिंदा व्यवसायों का उल्लेख करेंगे, जो हैं :

1. जिन क्षेत्रों में दलहनी फसलें बहुतायत में उगाई जाती हैं, उन क्षेत्रों के युवक समूह बनाकर या अकेले लघु दाल मिल लगाकर सीधे दलहनी फसलें बेचने की जगह दाल बनाकर तथा उसे अच्छी तरह साफ कर पैकेट बनाकर लाभ कमा सकते हैं।
2. ग्रामीण परिवेश में शायद ही कोई किसान परिवार होगा जिसके पास पशुधन न हो। अतः युवा साथी दूध व दुग्ध पदार्थ बनाकर उनको बाज़ार में बेच सकते हैं।
3. बहुत से किसान ऐसे हैं जिनके पास जमीन कम होती है या बिल्कुल नहीं होती है। वे भी हताश व निराश न हों, वे किसान खुम्ब उत्पादन, मधुमक्खी पालन, केंचुए की खाद, मत्स्य पालन आदि व्यवसाय अपनाकर लाभ कमा सकते हैं।
4. अचार, मुरब्बा, जैम, जैली, सॉस, चटनी आदि पर आधारित कुटीर उद्योग या गृह उद्योग लगाना। सर्दी के मौसम में गाजर, मूली, शलजम, गोभी आदि सब्जियां बहुतायत में उपलब्ध रहती हैं, इसलिए ग्रामीण युवक व युवतियां इस मौसम में इन सब्जियों का अचार डालकर उसे बाज़ार में बेच सकते हैं। इसके साथ-साथ सब्जियों व फलों का मुरब्बा, जैम, जैली, सॉस, चटनी बनाकर मुनाफा व आजीविका कमा सकते हैं तथा अपना लघु/कुटीर उद्योग स्थापित कर सकते हैं।

(शेष पृष्ठ 19 पर)



# यांत्रिक कृषि का महत्व

कुलदीप सिंह, जोगेन्द्र सिंह एवं अनिल राठी

कृषि विज्ञान केन्द्र, सोनीपत

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

यांत्रिक कृषि से अभिप्राय आधुनिक यन्त्रों एवं मशीनों की सहायता से कृषि कार्य करना है। हमारे देश की लगातार बढ़ती जनसंख्या के कारण खेती की इकाइयां दिनों दिन छोटी होती जा रही हैं। ऐसी अवस्था में इस बात पर अधिक ध्यान देना होगा कि इन इकाइयों से अच्छी पैदावार मिले। इसके लिए कृषि आदानों के सही प्रयोग के लिए यांत्रिक कृषि का बड़ा योगदान हो सकता है। यांत्रिक कृषि द्वारा खाद्यान्नों की उपज में समुचित वृद्धि की जा सकती है। इस ध्येय की पूर्ति की दृष्टि से केन्द्रीय सरकार यांत्रिक कृषि की प्रगति के लिए राज्य की सरकारों के लिए पर्याप्त आर्थिक सहायता की व्यवस्था कर रही है। कृषकों को उन्नत कृषि यंत्र खरीदने में सुविधा देने की दृष्टि से राज्य सरकार अनुदान प्रदान करती है। इसके अलावा अनेक कृषि यन्त्रों एवं मशीनों का निर्माण करने वाली कम्पनियां भी नये व उन्नत किस्म के यंत्र बनाकर यांत्रिक कृषि को बढ़ाने में अपना योगदान दे रही हैं।

**यांत्रिक कृषि के लाभ :** यांत्रिक कृषि द्वारा भारतीय कृषि की दशा लगातार सुधर रही है। परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से भारतीय कृषक की आर्थिक दशा तथा खेतों के आकार की सीमा आदि को ध्यान में रखते हुए यह कार्य सरल नहीं है। इस ओर अगर समुचित ध्यान दिया जाये तो भारतीय कृषक भी यांत्रिक कृषि का पूरा लाभ उठाकर अपनी फसलों की पैदावार बढ़ा सकते हैं।

**1. उत्पादन पर कम खर्च :** यन्त्रों और मशीनों की सहायता से कृषि कार्य करने के फलस्वरूप भूमि के प्रत्येक भाग का समुचित उपयोग होता है। मानव तथा पशुओं की कार्यक्षमता की अपेक्षा मशीनों की कार्यक्षमता कहीं अधिक होती है। मशीनों के द्वारा कार्य कम समय में पूर्ण हो जाता है। मशीनों के प्रयोग के कारण श्रम की भी बचत होती है। इन सबके परिणामस्वरूप उत्पादन व्यय कम हो जाता है।

**2. समय की बचत :** मशीनों की कार्यक्षमता अत्यधिक होने के कारण कृषि कार्य में इनका प्रयोग होने के फलस्वरूप समय की भी बचत होती है। समय प्रत्येक व्यवसाय में अत्यधिक महत्व रखता है। मांग व पूर्ति के सिद्धान्त के आधार पर ही वस्तुओं के मूल्य निर्भर करते हैं। उपयुक्त समय पर कृषक अपने उत्पादों को अगर मण्डी में लाने में समर्थ होगा तो अच्छे भाव पर अपने उत्पाद बेचकर अच्छा लाभ प्राप्त कर सकता है। शीघ्र उपज प्राप्त करना मशीनों के प्रयोग से ही सम्भव है।

**3. फसलोत्पादन में वृद्धि :** बिना यन्त्रों की मदद के कृषि कार्य करने की अपेक्षा यन्त्रों के प्रयोग द्वारा कृषि कार्य करने से उपज अधिक होती

है क्योंकि नई भूमि को ट्रैक्टरों द्वारा जुताई करके कृषि योग्य बनाया जा सकता है। कृषि यन्त्रों एवं मशीनों के प्रयोग से फसल की बुवाई समय पर होने के कारण अधिक उपज देने वाली प्रजातियों को पकने की पूर्ण अवधि मिल जाती है जिससे पैदावार में बढ़ोत्तरी स्वाभाविक है।

**4. अनावश्यक व्यय की बचत :** खेत पर कार्य न करने की दशा में भी कृषक को बैलों आदि के चारे व देखभाल की व्यवस्था पर निरन्तर व्यय करना पड़ता है। जबकि मशीनों पर केवल कार्य के प्रयोग आने की दशा में ही व्यय करना पड़ता है। इस प्रकार कार्य न होने पर अकारण के व्यय से कृषक बचा रहता है। अनावश्यक व्यय की बचत होने से उत्पादन लागत भी कम हो जाती है जो एक प्रकार से कृषक के लिए लाभ के ही समान है।

**5. उत्पाद की गुणवत्ता में बढ़ोत्तरी :** कृषि यन्त्रों एवं मशीनों के प्रयोग से कृषि आदानों का सही प्रयोग किया जाता है। उन्नत किस्म के बुवाई यन्त्रों द्वारा सही गहराई एवं निर्धारित दूरी पर बीज बोया जा सकता है। निराई-गुड़ाई के यन्त्रों का प्रयोग करके खरपतवारनाशकों के प्रयोग में काफी कमी की जा सकती है। उन्नत भूमि समतलन यन्त्रों के प्रयोग से न केवल पानी की बचत होती है बल्कि सम्पूर्ण खेत में समान रूप से पानी दिया जाता है। इन सबके फलस्वरूप कृषि उत्पाद की गुणवत्ता में अवश्य सुधार होता है तथा कृषक को अपनी उपज के भाव भी अधिक मिलते हैं।

## यांत्रिक कृषि में बाधाएं

यांत्रिक कृषि में ऊपर दिए गए लाभों के फलस्वरूप भी बहुत-सी कठिनाइयां हैं जिनका कृषकों को सामना करना पड़ता है। इनकी ओर उचित ध्यान दिया जाना आवश्यक है :

**1. जोतों का आकार छोटा होना :** मशीनों द्वारा कृषि कार्य करना उसी दशा में सम्भव है जबकि जोतों का आकार बड़ा हो परन्तु भारतीय कृषक के पास बड़ी जोतों का अभाव है जिसके परिणामस्वरूप उसके लिए आधुनिक यन्त्रों और मशीनों की सहायता से कृषि करना आर्थिक दृष्टि से असुविधाजनक तथा हानिप्रद है। बड़े प्रक्षेत्रों पर ही मशीनों द्वारा कृषि कार्य करना सम्भव एवं लाभप्रद है।

**2. आर्थिक कठिनाइयां :** कृषि के प्रयोग में आने वाली अधिकतर मशीनें महंगी हैं तथा आज भी हमारे कृषक आर्थिक दृष्टि से इतने सुदृढ़ नहीं हैं जो इन महंगी मशीनों को आसानी से खरीद सकें। आज कृषि के प्रत्येक कार्य में (जुताई से लेकर फसल मढ़ाई तक) महंगी से महंगी मशीनों का प्रयोग किया जा रहा है तथा किसान की आमदनी उस अनुपात में नहीं बढ़ रही जितनी बढ़नी चाहिए। इसलिए कृषि यांत्रिकी को अपनाने में आर्थिक पहलू एक बहुत बड़ी बाधा है।

**3. तकनीकी शिक्षा की कमी :** यन्त्रों एवं मशीनों की सहायता से कृषि कार्य करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रयोगकर्ता को इसकी रचना

आदि के बारे में आवश्यक जानकारी हो। साथ ही प्रयोग में आने पर इसमें होने वाली खराबी अथवा टूट-फूट को ठीक करने के लिए कुशल मैकेनिकों का होना भी आवश्यक है। अतः कृषि यन्त्रों और मशीनों के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए यह आवश्यक है कि तकनीकी शिक्षा केन्द्र खोले जाएं। जब तक तकनीकी शिक्षा का हमारे देश में अभाव रहेगा तब तक मशीनों का कृषि में पूर्ण प्रयोग नहीं हो सकता।

**4. कृषकों तक पूर्ण जानकारी का अभाव :** आज एक से एक बढ़िया एवं उन्नत किस्म के कृषि यन्त्र एवं मशीनें बाजार में उपलब्ध हैं लेकिन इनके प्रचार-प्रसार में कमी के कारण बहुत से किसानों को इनके बारे में जानकारी नहीं मिल पाती इसलिए जरूरी है कि सम्बन्धित सरकारी विभागों में कृषि यन्त्रों एवं मशीनों से सम्बन्धित तकनीकी अधिकारियों व कर्मचारियों को बढ़ाया जाये ताकि वे इन मशीनों के बारे में सही एवं पूर्ण जानकारी किसानों तक पहुँचा सकें तथा किसान इनका भरपूर फायदा उठा सकें। अतः उपरोक्त दर्शायी गई कठिनाइयों के समाधान के लिए कृषि वैज्ञानिकों, कृषि अभियन्ताओं, यन्त्र निर्माताओं, बैंकों एवं अन्य सम्बन्धित अधिकारियों को मिलकर समग्र रूप से कार्य करना होगा ताकि यांत्रिक कृषि को बढ़ाया जा सके एवं किसान की दशा को सुधारा जा सके।



(पृष्ठ 08 का शेष)

- खेत से सूंडी के अंडों तथा लार्वा को हाथ से इकट्ठा कर विनाश करके कीट की वृद्धि को कम किया जा सकता है।
- फसल पर कार्बेन्थ्रिन (4%) या मेलथियान (0.05%) का छिड़काव प्रभावी है।

**कुबड़ा कीट :** हरे रंग की यह सूंडी लूप बनाकर चलती है तथा बंदगोभी की सूंडी की तरह नुकसान करती है। यह पत्तों में खाकर छेद बना देती है।

**प्रबंधन :** 400 मि.ली. मेलथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ में छिड़काव करें। अगला छिड़काव 7-10 दिन के अंतर पर करें।

**नोट :** क्रमांक 2 से 5 तक बताये कीड़ों की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मेलथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ में छिड़काव करें। अगला छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर करें। इंजन वाले स्प्रे पंप से छिड़काव करते समय दवाई की मात्रा वही रखें लेकिन पानी की मात्रा नैप सैक से 1/10 भाग रखें।



## कृषकों के लिए जानना जरूरी: बीज एक्ट 1966 द्वारा बीज निरीक्षक की शक्तियाँ एवं अनुसरण करने की प्रक्रिया

सुमित देसवाल एवं वी. एस. मोर

कृषि किसान कल्याण विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

अच्छे बीजों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए भारत सरकार ने बीज एक्ट 1966 लागू किया है। बीज एक्ट का उद्देश्य विभिन्न नोटिफाईड किस्मों के बीजों के गुणों के निर्धारण उसके क्रय-विक्रय व उससे जुड़े अन्य पहलुओं से है। भारतीय संसद में बीज एक्ट 1966 में पास किया गया ताकि बीज उत्पादक को प्रभावशाली ढंग से कार्य करने का अच्छा माहौल और किसानों को अच्छे गुणों वाले बीज मिल सकें। इस एक्ट के तहत बीज नियम सितम्बर 1968 में नोटिफाईड किए गए और इसे अक्टूबर 1969 में पूरी तरह से लागू किया गया। यह एक्ट पूरे भारत में लागू है और इसके 25 भाग हैं। बीज गुणवत्ता बनाए रखने हेतु इस एक्ट में बीज निरीक्षक तथा शक्तियों के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं :

**बीज निरीक्षक की शैक्षणिक योग्यता :** बीज अधिनियम 1966 की धारा 13(1) में राज्य सरकार को बीज निरीक्षक की नियुक्ति का अधिकार दिया है और बीज नियम 1968 की धारा 22 में बीज निरीक्षक की योग्यता निर्धारित की है।

**बीज निरीक्षक : धारा 13: (1)** शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा राज्य सरकार विहित अर्हताएं रखने वाले ऐसे व्यक्तियों को जिन्हें वह ठीक समझे बीज निरीक्षक के रूप में नियुक्त कर सकेगी और वे क्षेत्र परिभाषित कर सकेगी, जिसमें वे अधिकारिता का प्रयोग करेंगे। (2) हर बीज निरीक्षक भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 21 के अर्थ के अन्दर लोकसेवक समझा जाएगा और शासकीय रूप में ऐसे प्रधिकारी के अधीनस्थ होगा जिसे राज्य सरकार इस निमित्त विनिर्दिष्ट करें।

**धारा 14 : बीज निरीक्षक की शक्तियाँ :**

**बीज निरीक्षक :** (क) निम्नलिखित से किसी अधिसूचित किस्म या उपकिस्म के बीज के नमूने ले सकेगा :

1. ऐसे बीज को बेचने वाला कोई व्यक्ति।
2. कोई व्यक्ति जो किसी क्रेता या प्रेषिति को ऐसा बीज प्रवाहित करने परित्त करने या परित्त करने की तैयारी करने अनुक्रम में हैं।
3. कोई क्रेता या प्रेषिति जिसे ऐसे बीज का परिदान हो चुका है।

(ख) ऐसा नमूना उस क्षेत्र के बीज विश्लेषक को जिसमें वह नमूना लिया गया हो, विश्लेषणार्थ भेज सकेगा।

(ग) किसी ऐसे स्थान में जिसके बारे में उसके पास यह विश्वास करने का कारण हो कि इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किया गया है या किया जा रहा है, ऐसी सहायता के साथ कोई है। जैसा वह आवश्यक समझे

तब युक्तियुक्त समय पर प्रवेश कर सकेगा और उसकी तलाशी ले सकेगा तथा किसी ऐसे बीज को जिसके बारे में अपराध किया गया है या किया जा रहा है कब्जे में रखने वाले व्यक्ति को लिखित आदेश दे सकेगा कि वह तीस दिन से अनाधिक की विनिर्दिष्ट कालावधि पर्यन्त ऐसे अधिसूचित बीज के किसी स्टोक का व्यय न करे अथवा तब के सिवाय जबकि अभिकथित अपराध ऐसा हो कि त्रुटि बीज के कब्जाधारी द्वारा दूर की जा सकती है। ऐसे बीज के स्टोक का अभिग्रहण कर सकेगा।

(घ) खण्ड (ग) में वर्णित किसी स्थान में पाये गए किसी अभिलेख, रजिस्टर, दस्तावेज या अन्य भौतिक पदार्थ की परीक्षा कर सकेगा और यदि उसके पास यह विश्वास करने का कारण हो कि वह इस अधिनियम के अधीन दंडनीय किसी अपराध के लिए जाने का साक्ष्य हो सकेगा तो उसका अभिग्रहण हो सकेगा।

(ङ) अन्य ऐसी शक्तियों का जो इस अधिनियम के तहत बनाए गए किसी नियम के प्रयोजनों के कार्यान्वयन के लिए आवश्यक हो प्रयोग कर सकेगा।

(2) जहाँ कि किसी अधिसूचित किस्म या उपकिस्म के बीज का नमूना उपधारा (1) के खण्ड (क) के अधीन लिया जाए वहाँ उसकी उस दर से संगणित कीमत जिस पर ऐसा बीज प्रायः जनता को बेचा जाता है, माँगे जाने पर उस व्यक्ति को दी जाएगी जिससे वह नमूना लिया गया है।

(3) इस धारा द्वारा प्रदत्त शक्ति के अन्तर्गत ऐसा कोई आधान जिसमें किसी अधिसूचित किस्म या उपकिस्म का बीज हो, तोड़ कर खोलने की शक्ति या ऐसे किसी परिसर के द्वार को, जिसमें ऐसा बीज विक्रयार्थ रखा हो, तोड़कर खोलने की शक्ति आती है परन्तु द्वार तोड़कर खोलने की शक्ति का प्रयोग तभी किया जाएगा जब स्वामी या उस परिसर का अधिभोगी अन्य व्यक्ति यदि वह उसमें उपस्थित हो तो ऐसा करने की अपेक्षा किये जाने पर भी द्वार खोलने से इनकार करे।

(4) जहाँ कि बीज निरीक्षक उपधारा (1) के खण्ड (क) के अधीन कोई कार्यवाही करे वह यथा सम्भव दो से अन्य व्यक्तियों को उस समय पर उपस्थित होने के लिए बुलाएगा जब ऐसी कार्यवाही की जाए और वह उसके हस्ताक्षर एक ज्ञापन पर कराएगा जो कि विहित प्रारूप में और विहित रीति से तैयार किया जाएगा।

(5) दण्ड प्रक्रिया संहिता 1898 (1898 का 5) के उपलब्ध इस धारा के अधीन की किसी तलाशी या अभिग्रहण को उसी प्रकार लागू होंगे जैसे वे उक्त संहिता की धारा 98 के अधीन निकाले गए वारंट के प्राधिकरण से ली गई तलाशी या किए गए अभिग्रहण को लागू होते हैं।

#### धारा 15: बीज निरीक्षकों द्वारा अनुसरण की जाने की प्रक्रिया

(1) जब कभी किसी बीज निरीक्षक का आशय किसी अधिसूचित किस्म या उपकिस्म के बीज का विश्लेषणार्थ नमूना लेने का हो तब वह:

(क) उस व्यक्ति को जिससे नमूना लेने का उसका आशय हो अपने इस आशय की लिखित सूचना तुरन्त वहीं देगा।

(ख) उन विशेष मामलों के सिवाय जिनका इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा उपबन्ध किया जाए, तीन प्रतिनिधि नमूने विहीत

रीति से लेगा और हर एक नमूने को ऐसी रीति से जो उसकी प्रकृति के अनुसार अपनाई जा सके, चिन्हित करेगा और मुद्राबन्द करेगा या बाँधेगा।

(2) जबकि किसी अधिसूचित किस्म या उपकिस्म के बीज के नमूने उपधारा (1) के अधीन लिए जाएं, तो बीज निरीक्षक:

(क) एक नमूना उस व्यक्ति को परिदत्त करेगा जिससे वह लिया गया हो:

(ख) दूसरा नमूना उस क्षेत्र के बीज विश्लेषक को जिसमें वह नमूना लिया गया हो विश्लेषणार्थ विहित रीति से भेजेगा, तथा

(ग) शेष नमूने को विहित रीति से प्रतिधारित करेगा जिससे यथास्थित विधिक कार्यवाही की जाने की दशा में वह पेश किया जाए या केन्द्रीय बीज प्रयोगशाला द्वारा 16 की उपधारा (2) के अधीन उसका विश्लेषण किया जाए।

(3) यदि वह व्यक्ति जिससे नमूने लिए गए हों उन नमूनों में से एक का प्रतिग्रहण करने से इनकार करे तो बीज निरीक्षक ऐसे इनकार की प्रज्ञापना बीज विश्लेषक को भेज देगा और तब वह बीज विश्लेषक जिसे विश्लेषणार्थ नमूना प्राप्त हुआ हो उसे दो भागों में विभाजित करेगा और उनमें से एक भाग को मुद्राबन्द करेगा या बाँधेगा और या तो नमूने की प्राप्ति पर या जब वह अपनी रिपोर्ट का परिदान करे तब उसे बीज निरीक्षक को परिदत्त कराएगा जो विधिक कार्यवाही किये जाने की दशा में पेश करने के लिए उसे प्रतिधारित करेगा।

(4) जहाँ कि बीज निरीक्षक धारा 14 की उपधारा (1) के खण्ड (ग) के अधीन कोई कार्यवाही करे वहाँ:

(क) वह इस बात का अभिनिश्चय करने के लिए पूरी शीघ्रता करेगा कि वह बीज धारा 7 के उपबन्धों में से किसी का उल्लंघन करता है या नहीं और यदि यह अभिनिश्चय हो जाए कि वह बीज ऐसा उल्लंघन नहीं करता है तो वह यथास्थिति उक्त खण्ड के अधीन पारित आदेश तुरन्त प्रतिसंहत कर लेगा या ऐसी कार्यवाही करेगा जो अभिगृहीत बीज के स्टोक को वापस करने के लिए आवश्यक हो।

(ख) यदि वह बीज के स्टोक का अभिग्रहण करे तो वह मजिस्ट्रेट को यथाशक्ति शीघ्र सूचना देगा और स्टोक की अभिरक्षा के बारे में उसके आदेश लेगा।

(ग) किसी अभियोजन के संस्थित किए जाने पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, यदि अभिकथित अपराध ऐसा हो कि त्रुटि बीज का कब्जा रखने वाले द्वारा दूर की जा सके तो वह अपना इस बात का समाधान हो जाने पर कि त्रुटि इस प्रकार दूर कर दी गई है, उक्त खण्ड के अधीन पारित आदेश तुरन्त प्रतिसंहत कर लेगा।

(5) जहाँ की बीज निरीक्षक धारा 14 की उपधारा (1) के खण्ड (घ) के अधीन कोई अभिलेख, रजिस्टर, दस्तावेज या अन्य भौतिक पदार्थ अभिगृहीत करे वहाँ वह मजिस्ट्रेट को यथाशक्य शीघ्र सूचना देगा और उसकी अभिरक्षा के बारे में उसके आदेश लेगा।

इसके उपरान्त अधिक जानकारी हेतु कृषक बीज एक्ट 1966 अवश्य देखें।





# पॉलीहाऊस की खेती को बढ़ावा देने के लिए-विस्तार शिक्षा रणनीति

भरत सिंह घणघस, प्रदीप कुमार चहल एवं कृष्ण यादव

विस्तार शिक्षा निदेशालय

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बढ़ती आबादी के कारण सब्जियों की जरूरत व मांग में तेजी से बढ़ोत्तरी हुई है। भारत में व्यापक एवम् विभिन्न कृषि जलवायु परिस्थितियां उपलब्ध हैं, लेकिन हमारे देश में सब्जियों की खेती की प्रक्रिया आम तौर पर पारंपरिक तकनीक और प्रथाओं के साथ क्षेत्रीय और मौसमी जरूरतों तक सीमित होती है, जिसके परिणामस्वरूप बाजार आपूर्ति अनुरूप कम पैदावार और असंगत गुणवत्ता और मात्रा का उत्पादन होता है। प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियां, सब्जियों, फलों और फूलों की उच्च उत्पादन क्षमता, कृषि आदान की उपलब्धता, छोटी और खंडित भूमि जोत और गुणवत्ता वाली सब्जियों की बढ़ती मांग जैसे कारकों को देखते हुए संरक्षित खेती को अपनाने की आवश्यकता है। गुणवत्ता वाली सब्जियों की बढ़ती मांग संरक्षित खेती अपनाने को मजबूर करती है। प्लास्टिक की नीची सुरंगें, चहलकदमी सुरंगें, कम लागत वाला ग्रीन हाऊस, जैसी कम लागत वाली संरक्षित संरचनाएं मुख्य सीजन व स्थिति विशिष्ट अनुरूप सब्जियों, फलों और फूलों के लिए सुरक्षित परिस्थितियां बनाना व सब्जियों के बढ़ते क्षेत्रों में ऑफ सीजन सब्जियों और नर्सरी के लिए उपयुक्त हैं। कीट अभेद्य नेट हाऊस रोग मुक्त पौधों के लिए बेहद उपयुक्त हैं, उनमें सबसे आम और व्यापक रूप से इस्तेमाल होने वाला पॉलीहाऊस है। इसे जलवायु की स्थिति को संशोधित करने के लिए डिजाइन किया गया है जैसे तापमान, आर्द्रता, वायु वेग आदि के साथ-साथ मिट्टी, पानी, उर्वरक और अन्य कृषि आदान की उच्च दक्षता के साथ बागवानी फसलें उगाने के लिए इसका उपयोग किया जाता है।

संरक्षित सब्जियों की खेती की विशेषता बाजार मांग पूरी करने के साथ-साथ इसकी अत्यधिक उत्पादक क्षमता, पानी, उर्वरक और भूमि जैसे संसाधनों का संरक्षण तथा पर्यावरण अनुकूलित होना है। यह केवल लोकप्रिय ही नहीं, बल्कि अनिवार्य आवश्यकता से बाहर होनी चाहिए। हर भारतीय नागरिक को सतत भोजन और पोषण संबंधी सुरक्षा सुनिश्चित करने और किसानों की आय में वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए संरक्षित खेती को बढ़ावा देने हेतु सरकार द्वारा निपुण प्रयास किए गए हैं। लेकिन कई बाधाएं और समस्याएं हैं जो सब्जियों की संरक्षित खेती को सीमित/सीमाबद्ध करती हैं किसानों की जानकारी के लिए पॉलीहाऊस खेती में रोजगार व आमदन बढ़ाने की अपार संभावनाएं हैं जिनमें मुख्य संभावनाएं इस प्रकार हैं :

- जमीन, पानी, ऊर्जा और श्रम की प्रति इकाई उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि
- उच्च गुणवत्ता और साफ उत्पाद
- किसानों को सालभर रोजगार प्रदान करें
- इस उच्च लागत के बुनियादी ढांचे की स्थापना के लिए सरकार द्वारा सब्सिडी का प्रावधान

- सब्जियों के उत्पादन के लिए प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों को दूर करने में मदद करना
- खुले खेतों में रोपाई के लिए स्वस्थ एवम् अगेती पौध तैयार करना
- बेहतर रिटर्न पाने के लिए ऑफ सीजन सब्जियां उगाना
- उत्पाद का निर्यात के लिए उपयुक्त होना
- साल भर सब्जियों का उत्पादन दौर
- ऊर्ध्वाधर (वर्टिकल) खेती के माध्यम से जमीन के एक ही टुकड़े पर कई फसल संभव इत्यादि शामिल हैं

लेकिन कई बाधाएं और समस्याएं हैं जो सब्जियों की संरक्षित खेती के सुचारूपन को प्रतिबंधित करती हैं जैसे :

- सूक्ष्म कीटों और सफेद मक्खी जैसे कीड़ों की आबादी विस्फोट, विशेष रूप से सफेद मक्खी खतरे
- बार-बार आने वाले तूफान, ओले गिरने से आवरण का फटना
- आवरण सामग्री की खराब गुणवत्ता
- हाइब्रिड बीज की उच्च लागत
- सूत्रकृमि संक्रमण
- गांवों में शीत भंडारण सुविधाओं की कमी
- किसानों का मूल्यसंवर्धन प्रक्रियाओं बारे ज्ञान अभाव के साथ-साथ बाजार सम्बन्धी समझ का अभाव आदि मुख्य दिक्कतों का सामना किसानों को करना पड़ता है।

**संरक्षित खेती के तहत उगाई जाने योग्य उपयुक्त फसलें :** खीरा, टमाटर, शिमला मिर्च, मिर्च, बैंगन, जरबेरा, लिलियम, गुलाब का फूल, गेंदे का फूल इत्यादि प्रमुख फसलें हैं।

## विस्तार शिक्षा रणनीति

पॉलीहाऊस खेती एक पूंजी प्रधान व गहन ध्यान आधारित तकनीकी व्यवसाय है इसलिए इसके प्रोत्साहन के लिए एक व्यावहारिक व व्यापक विस्तार शिक्षा रणनीति अपनाने की आवश्यकता है जो निम्नप्रकार है :

- सब्सिडी का लाभ उठाने वाले अनुपस्थित किसानों की बजाय उत्तरदायी किसानों का निष्पक्ष चयन करना चाहिए।
- इस तरह की उच्च तकनीक खेती के लिए लंबे अवधि के व्यावसायिक प्रशिक्षण कम से कम 3 महीने या 6 महीने सब्जी उत्कृष्टता केंद्र और अन्य शोध संस्थानों में आयोजित किये जाने चाहिए ताकि किसान व्यावहारिक ज्ञान और कौशल निपुण हों।
- पूंजी के साथ-साथ देखभाल-गहन प्रौद्योगिकी होने के नाते कृषि व बागवानी विस्तार कार्यकर्ताओं द्वारा किसानों को लगातार तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान कराना चाहिए।
- किसानों को उचित विपणन बुद्धिमत्ता और मूल्य संवर्धन व प्रसंस्करण अभ्यास पर प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- सफेद मक्खी और निमेटोड उपद्रवों के नियंत्रण के लिए प्रभावी उपचार हेतु ज्ञान व सामग्री उपलब्ध करानी चाहिए।
- फर्टिगेशन और फोगर ऑपरेशन पर उचित प्रशिक्षण, प्रदान कर उन्हें विभिन्न फसलों के लिए अनुकूलन में माहिर बनाना चाहिए।





# फरवरी मास के कृषि कार्य



## फसलों में

### गेहूँ और जौ

यह महीना समय पर बीजी गई गेहूँ की बौनी किस्मों में तीसरा पानी और पछेती किस्मों में दूसरा पानी लगाने का है। यदि नाइट्रोजन वाली खाद की कोई मात्रा शेष रह गई हो तो इसी पानी के साथ डाल दें व खाद डालने के बाद गोड़ी अवश्य करें। हल्की जमीन में खाद सिंचाई के बाद डालें। इसी प्रकार जौ की फसल में भी दूसरा पानी तथा नाइट्रोजन की बची आधी मात्रा भी डालें।

तापमान में गिरावट आने, आसमान में लगातार बादल या धुंध छाप रहने के कारण प्रायः गेहूँ की पछेती फसल में जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई दे सकते हैं। 25-30 दिन की फसल पर नीचे की दो पत्तियों को छोड़कर अन्य पत्तियों का हरा रंग उड़कर हल्का होना शुरू हो जाता है। फिर पत्तों के मध्य में सफेद या हल्के-पीले रंग के छोटे-छोटे धब्बे बन जाते हैं। जस्ते की लगातार कमी बने रहने पर धब्बे आकार में बड़े हो जाते हैं। अत्यधिक कमी में नई आने वाली पत्तियाँ तथा मुख्य तनों पर भी, जहाँ पत्तियाँ मिलती हैं, वहाँ पर भूरे-पीले धब्बे बन जाते हैं। कई बार पत्ती के बीच का भाग मुख्य सिरे को छोड़कर पूरा सूख जाता है परंतु पत्ती की नोक की ओर का हिस्सा हरा बना रहता है। पत्ती बीच में से मुड़कर नीचे की ओर लटक जाती है। कई बार नई पत्तियाँ अत्यंत पतली एवं नुकीली दिखाई देती हैं। पौधे की गांठों के बीच की दूरी घट जाती है, बढ़वार कम हो जाती है,

लेखक :

- आर. एस. हुड्डा, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- आर. के. गोदारा, सह-निदेशक (बागवानी)
- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (पादप रोग विज्ञान)
- श्रीमती नीलम खेत्रपाल, परामर्शदात्री (गृह विज्ञान)
- एम. एस. ग्रेवाल, परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)
- आर. के. ग्रोवर, सह-निदेशक (फार्म प्रबंध)
- अशोक कुमार यादव, परामर्शदाता (सब्जी विभाग)
- देवेन्द्र सिंह, सह-निदेशक (पशु पालन - लुवास)
- वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फसल में बालें देर से आती हैं तथा बाल में दानों की संख्या कम बनती है। यदि कमी को समय से दूर न किया जाए तो उपज में बहुत गिरावट आ जाती है।

खड़ी फसल में जस्ते की कमी तुरंत दूर करने के लिए फसल की पत्तियों पर 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट का छिड़काव करें। एक एकड़ फसल पर छिड़कने के लिए मानवचालित पंप से 200 लीटर घोल की आवश्यकता होगी जिसके लिए 1.0 किलोग्राम जिंक सल्फेट लगेगा। क्योंकि जिंक सल्फेट की तासीर तेजाबी होती है, अतः इसे उदासीन करने के लिए 0.25 प्रतिशत चूने का घोल या 2.5 प्रतिशत यूरिया का घोल (यदि फसल में नाइट्रोजन की भी कमी हो) प्रयोग करना चाहिए। इकट्ठा घोल बनाने से पहले जिंक सल्फेट तथा चूना या यूरिया का घोल 9-10 लीटर पानी में अलग-2 बना लेना चाहिए। फिर मलमल के बारीक कपड़े से छानकर दोनों घोलों को मिलाकर घोल की पूरी मात्रा (200 लीटर) बना लें। 15-15 दिन के अंतर पर 2-3 छिड़काव करें। ओस से भीगी फसल पर, तेज हवा चलते समय या शाम के समय छिड़काव न करें। यदि किसी कारणवश छिड़काव से फसल गल जाए तो फसल को पानी लगा दें। यदि जमीन में पर्याप्त नमी है तो पानी लगाने की कोई आवश्यकता नहीं। एक सप्ताह में फसल स्वयं ठीक हो जाएगी।

जिन किसान भाइयों के ट्यूबवैल या बोर के पानी में बाइकार्बोनेट है और जमीन में कैल्शियम कार्बोनेट भी है, वहाँ पानी लगाने के बाद फसल में पीलापन भी आ सकता है। ध्यान से देखें कि यदि नीचे की पत्तियाँ हरी हों तथा नई निकलने वाली पत्तियाँ पीली धारीदार या पूर्णतया पीली दिखाई दें तो समझें कि यह लोहे की कमी के कारण है। यह समस्या कुछ खेतों या कुछ विशेष किस्मों में अधिक स्पष्ट दिखाई देगी। जमीन में पहुँचाये गए पानी में बाइकार्बोनेट की अधिकता के कारण यह समस्या प्रकट हुई है। अतः समस्या के तुरंत समाधान के लिए पहले तो फसल पर 0.5 प्रतिशत फ़ैरस सल्फेट घोल के 8-10 दिन के अंतर पर लगातार 2-3 छिड़काव करें तथा बाइकार्बोनेट को उदासीन करने के लिए पानी की जांच के अनुसार जिप्सम डालें। फ़ैरस सल्फेट बाजार में हरा-कसीस के नाम से पंसारी के यहां से मिल जाएगा। खरीदते समय ध्यान दें कि इसका रंग हरा हो। यदि लाल रंग है तो उसे छिड़कने से लाभ नहीं होगा।

यदि चेपा (माहू) का आक्रमण हो जाए तो 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़कें।

गेहूँ की फसल में पीले रतुए के लक्षण दिखाई देते ही बचाव के लिए फसल पर 800 ग्राम जाइनेब (डाईथेन या इंडोफिल जेड-78) या

मैन्कोजेब (डाइथेन या इंडोफिल एम-45) या प्रोपीकोनाजोल 200 मि.ली. को 250 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें और आवश्यकता पड़ने पर 10 या 15 दिन के अंतर पर दोहराएं।

### गन्ना

बीज/नौलख बोई जाने वाली फसल के खेतों की मिट्टी का नमूना लेकर तुरंत मिट्टी की जांच करवाएं। प्रथम पखवाड़े में ही 15-20 गाड़ी गोबर की गली-सड़ी खाद पूरे खेत में बिखेरकर भूमि की ऊपरी सतह में जोतकर मिला दें। यदि खाद कम गला-सड़ा हो तो प्रति एकड़ खाद के साथ 20-25 किलोग्राम यूरिया भी बिखेरकर मिला दें। ध्यान रखें कि खेत में गलन-सड़न प्रक्रिया को ठीक तरह से चलाने के लिए पर्याप्त नमी होनी अति आवश्यक है। यदि खेत सूखा हो तो हल्का पानी लगा दें।

गन्ना बीजते समय रासायनिक खादों का प्रयोग मिट्टी की जांच रिपोर्ट के अनुसार करें। यदि जांच करना संभव न हो तो बिजाई के समय प्रति एकड़ 20 किलोग्राम शुद्ध नाइट्रोजन (44 किलोग्राम यूरिया), 20 किलोग्राम शुद्ध फास्फोरस (125 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट या 44 किलोग्राम टी.एस.पी. या डी.ए.पी.) गंडीरियों (पोरियों) के नीचे डालें। यदि जमीन में पोटाश तथा जस्ता भी कम हो तो 20 किलोग्राम शुद्ध पोटाश (32 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश) तथा 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट भी बिजाई के समय अन्य उर्वरकों के साथ डाल दें। लवणीय तथा क्षारीय जमीन में जिंक सल्फेट अवश्य डालें।

मोढ़ी फसल में यदि अच्छी फूट आ गई हो तो फरवरी माह में पहली जुताई-गुड़ाई के समय 30 किलोग्राम शुद्ध नाइट्रोजन (66 किलोग्राम यूरिया) प्रति एकड़ डालें। यदि जमीन में प्राप्य फास्फोरस कम है और बीजी फसल में फास्फोरस की कमी दिखाई दे तो नाइट्रोजन उर्वरक के साथ 20 किलोग्राम शुद्ध फास्फोरस (125 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट या 44 किलोग्राम डी.ए.पी. या टी.एस.पी.) भी अवश्य डालें।

गन्ने की बिजाई के समय दीमक तथा कनसुआ की रोकथाम के लिए प्रति एकड़ 2.5 लीटर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. या 600 मि.ली. फिप्रोनिल 5 एस.सी. को 600 से 1000 लीटर पानी में फव्वारे द्वारा खूडों में पोरियों के ऊपर डालें तथा खूडों को उपचार के बाद तुरंत सुहागा लगाकर बंद कर दें। इसके अलावा 150 मि.ली. इमिडाक्लोप्रिड (कान्फिडोर 200 एस.एल. या इमिडागोल्ड 200 एस.एल.) को 250-300 लीटर पानी में मिलाकर नैपसैक पंप से खूडों में पोरियों पर छिड़काव भी किया जा सकता है। स्केल कीट (शल्क) लगी फसल को काट लें व खेत में बची पत्तियां आदि तुरंत जला दें। इस कीट से ग्रसित क्षेत्र में केवल एक ही मोढ़ी की फसल लें। बीज केवल स्वस्थ फसल से ही लें। बिजाई से पूर्व पोरियों को 0.25 प्रतिशत एमिसान या मैन्कोजेब (डाइथेन या इण्डोफिल एम-45) 250 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी के घोल में 4-5 मिनट डुबोकर उपचारित कर लें।

### सूरजमुखी

सूरजमुखी की बिजाई 15 फरवरी तक पूरी कर लें। समय पर बिजाई

के लिए हरियाणा सूरजमुखी नं. 1 व संकर किस्में के बी एस एच-1, एम एस एफ एच-8, पी ए सी-36, के बी एस एच-44, एच एस एफ एच-848 तथा पी सी एस एच-234, पछेती बिजाई के लिए संकर किस्में एम एस एफ एच-17, पी ए सी-1091, सनजीन-85, प्रोसन-09 तथा एच एस एफ एच-848 किस्मों का बीज प्रयोग करें। उन्नत किस्म का 4 तथा संकर किस्मों का 1.5 से 2 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ प्रयोग करें। बिजाई से पहले बीज को 4-6 घंटे तक पानी में भिगोकर छाया में सुखा लें। बीजजनित रोगों से बचाव के लिए फफूंदनाशक से बीज का उपचार करना जरूरी है। जड़गलन तथा तनागलन रोगों से बचाव के लिए प्रति किलोग्राम बीज को 3 ग्राम थाईरम से बिजाई से पहले उपचारित करें। बीजोपचार के लिए बाविस्टीन 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के लिए भी प्रयोग की जा सकती है। उन्नत किस्म में कतारों के बीच की दूरी 45 सें.मी. तथा पौधों के बीच की दूरी 30 सें.मी. और संकर किस्मों के लिए कतारों में 60 सें.मी. एवं पौधों में दूरी 30 सें.मी. रखें। बीज की गहराई 3-5 सें.मी. रखें। सूरजमुखी की बिजाई 15 फरवरी तक पूरी कर लें।

उन्नत किस्म एवं सामान्य उपजाऊ अवस्थाओं में संकर किस्मों में 24 किलोग्राम शुद्ध नाइट्रोजन तथा 16 किलोग्राम शुद्ध फास्फोरस प्रति एकड़ के हिसाब से डालें। संकर किस्म (हाइब्रिड) के लिए 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (90 कि.ग्रा. यूरिया) तथा 20 कि.ग्रा. फास्फोरस (125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ डालें। हल्की भूमि वाले प्रांतों (दक्षिणी क्षेत्रों) में नाइट्रोजन की मात्रा 32 कि.ग्रा. एवं फास्फोरस की 24 कि.ग्रा. प्रति एकड़ प्रयोग करें। पूरी फास्फोरस व आधी नाइट्रोजन बिजाई के समय डालें।

जनवरी में बीजी गई फसल में पहली सिंचाई, बिजाई के लगभग 30-35 दिन बाद करें। नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा (प्रति एकड़ 12 कि.ग्रा. सामान्य उपजाऊ एवं 16 कि.ग्रा. हल्की भूमि में) प्रथम सिंचाई के समय डालें। जनवरी में बीजी गई फसल में पहली निराई-गुड़ाई भी करें।

### कपास

अगर कपास की फसल के बाद खेत खाली रह गया हो तो फरवरी के अंत में हल से गहरी जुताई कर दें। इससे मिट्टी में पड़ी सूण्डियों को पक्षी खा जाएंगे। अगली फसल में गुलाबी व चितकबरी सूण्डियों तथा मीलीबग का आक्रमण कम हो, इसके लिए जरूरी है छंटियों के साथ लगे टिंडों को झाड़कर नष्ट कर दें तथा ऐसी छंटियों को जलाने के लिए प्रयोग करें। यदि छंटियां खेत में खड़ी हों तो उनकी गहरी कटाई करें। ध्यान रहे कि मोढ़ी की फसल कभी न लें।

### चना

चने पर फली छेदक सूण्डी का आक्रमण कुछ क्षेत्र में हो सकता है। इससे बचने के लिए 200 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. या 400 मि.ली. क्विनलफॉस 25 ई.सी. या 400 ग्राम कार्बेनिल 50 घु. पा. को 100 लीटर पानी के साथ प्रति एकड़ छिड़कें। इसके अतिरिक्त 80 मि.ली. फेनवालेरेट 20 ई.सी. या 50 मि.ली. साईपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 150 मि.

ली. डेकामेथ्रिन 2.8 ई.सी. इतने ही पानी में मिलाकर प्रति एकड़ भी कारगर हैं। इनके स्थान पर 10 किलोग्राम क्विनलफॉस 1.5 डी या कार्बेरिल 5 डी धूड़ा प्रति एकड़ भी धूड़ा जा सकता है। जरूरत पड़ने पर 15 दिन पर कीटनाशक दवा बदल कर फिर छिड़कें।

अंगमारी या झुलसा के आक्रमण से सचेत रहें, विशेषकर यदि मौसम नम व ठंडा रहे और वर्षा के आसार दिखाई दें तो प्रभावित पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें।

### सरसों व राया

यदि मौसम अनुकूल हो तो चेपे (अल/माहू) का आक्रमण जरूर मिलेगा। फसल को इस कीट से बचाने के लिए 250-400 मि.ली. मैटसिस्टॉक्स 25 ई.सी. या रोगोर 30 ई.सी. को 250-400 लीटर पानी के साथ प्रति एकड़ फसल पर दोपहर बाद छिड़कें तथा जरूरत हो तो 15 दिन बाद फिर दोहराएं। सरसों के पत्तों पर सुरंग बनाने वाला कीट भी इन्हीं कीटनाशकों से मर जाएगा। मधुमक्खियों को बचाने के लिए दोपहर तीन बजे के बाद ही कीटनाशक छिड़कें।

यदि सफेद रतुआ व डारूनी मिल्ड्यू के लक्षण फसल पर दिखाई दें तो बचाव के लिए 600 ग्राम मैन्कोजेब (डाईथेन या इण्डोफिल-एम-45) का 200 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। फफूंदनाशकों की नियंत्रण क्षमता बढ़ाने के लिए प्रति 100 लीटर घोल में 10 ग्राम सेल्वेट-99 या 50 मि.ली. ट्राईटान अवश्य मिला लें।

### नेपियर (हाथी) घास

नई बीजने वाली फसलों में, खेत की तैयारी करके उसमें प्रति एकड़ लगभग 20 गाड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट मिलाकर डालें।

### बरसीम, रिजका एवं जई

इन फसलों में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा सही अवस्था पर चारे की कटाई करते रहें। चारे की कटाई ओस सूखने के बाद करें। फालतू बरसीम एवं रिजका की 'हे' तथा जई की 'साइलेज' बना लें।

नोट : अपने ट्यूबवैल के पानी की जांच करवाएं और भूमि खराब होने से बचाएं।



## सब्जियों में

### टमाटर

इस मास बसंतकालीन फसल के लिए तैयार खेत में पौधरोपण करें। खेत तैयार करने के लिए, जैसा कि जनवरी माह में बताया गया है, एक एकड़ में 10 टन गोबर की सड़ी खाद, 40 किलोग्राम नाइट्रोजन (88 किलोग्राम यूरिया खाद), 25 किलोग्राम फास्फोरस (150 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 20 किलोग्राम पोटाश (32 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश) डालें। गोबर की खाद को आमतौर पर पौधरोपण से लगभग 3 सप्ताह पहले खेत में भली प्रकार बिखराकर मिला लें। पौधरोपण के समय 1/3 नाइट्रोजन तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा दें। पौधरोपण

में कतारों में 60 सें.मी. की दूरी तथा पौधों में 45 से 60 सें.मी. की दूरी रखें। पौधरोपण के बाद एक हल्की सिंचाई अवश्य करें। पाला की आशंका होने पर रात के समय खेत के आसपास खरपतवार व फूस जलाकर धुआं करें। सफेद मक्खी को मारने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में प्रति एकड़ 15 दिन के अंतर पर छिड़कते रहें ताकि मरोडिया रोग न लगे। पौधों को पाला या कोहरे के प्रति प्रतिरोधी बनाने के लिए साईकोसिल दवा का पौधशाला में छिड़काव करें।

### बैंगन

बसंतकालीन फसल के लिए खेत की तैयारी करें। तैयारी लगभग टमाटर की ही तरह करें। परंतु खाद की मात्रा में फास्फोरस 20 किलोग्राम (120 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट) व पोटाश 10 किलोग्राम (16 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रति एकड़ की दर से दें। पौधरोपण कतारों में 60 सें.मी. की दूरी पर करें तथा पौधों से पौधों की दूरी 45 सें.मी. रखें। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए सिफारिशशुदा किस्में, जैसे कि हिसार प्रगति, हिसार श्यामल या बी आर-112 या एच एल बी-25 या हिसार बहार किस्मों को प्रयोग में लाएं। पौधरोपण के बाद खेत में हल्की सिंचाई देना आवश्यक है।

शरदकालीन फसल की काट-छांट करके भी फसल ली जा सकती है। ऐसा करने के लिए सभी पालाग्रस्त टहनियों को काट दें तथा खेत में उचित खाद, पानी दें। इससे आप अगेली फसल प्राप्त कर सकते हैं जिससे कि मुख्य फसल की अपेक्षा लाभ अधिक होता है।

### मिर्च

बसंतकालीन फसल के लिए मिर्च की पौध की खेत में रोपाई करें। कतारों की दूरी 45 से 60 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 30 से 45 सें.मी. रखें। लंबी किस्मों में एन पी 46ए या पूसा ज्वाला, पंत सी-1, हिसार शक्ति या हिसार विजय को प्रयोग में लाएं तथा शिमला मिर्च में कैलिफोर्निया वण्डर नामक किस्म को प्रयोग में लाएं। खेत तैयार करते समय प्रति एकड़ की दर से खाद व उर्वरक का प्रयोग करें-10 टन गोबर की सड़ी खाद, 25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (55 कि.ग्रा. यूरिया खाद), 12 कि.ग्रा. फास्फोरस (72 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 12 कि.ग्रा. पोटाश (20 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश)। पौधरोपण के समय 1/2 नाइट्रोजन व पूरी फास्फोरस व पोटाश दें। गोबर की खाद को जुताई करते समय, पौधरोपण के लगभग 3 सप्ताह पहले खेत में भली प्रकार बिखराकर जुताई करें।

### मटर

फलीछेदक सूण्डी का प्रकोप होने पर 60 मि.ली. सायपरमेथ्रीन 25 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। पत्तियों में सुरंग बनाने वाले कीट व माहू से फसल को बचाने के लिए 400 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या 500 मि.ली. मैटसिस्टॉक्स 25 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। जरूरत हो तो यही छिड़काव 15 दिन बाद दोहराएं। कीटनाशक के छिड़काव के बाद 3 सप्ताह तक फसल को खाने के काम में न लें। सफेद चूर्णी रोग से बचाव के लिए 500



ग्राम सल्फेक्स या 80 मि.ली. कैराथेन प्रति एकड़ की दर से 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

### फूलगोभी, पत्तागोभी व गांठगोभी

तैयार फसल के फूलों व गांठों को उचित समय पर काट कर बाज़ार भेजें। इस समय अल (माहू/चेपा) व सूण्डियों का आक्रमण होता है। इससे फसल को बचाने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ 10 दिन के अंतर पर छिड़कें। डायमण्ड बैकमॉथ सूण्डी के लिए 400 ग्रा. बैसिलस थूरिन्जिएन्सिस (बायोआस्प) घु.पा. या 300 मि.ली. डायजिनान 20 ई.सी. या 60 मि.ली. डाईक्लोरवास 76 ई.सी. का छिड़काव भी कर सकते हैं। कटाई से एक सप्ताह पहले कीटनाशक का छिड़काव बंद कर दें।

### प्याज व लहसुन

इन फसलों की आवश्यकतानुसार सिंचाई, निराई-गुड़ाई करें। नाइट्रोजन उर्वरक की एक तिहाई मात्रा दें। खेत में नमी की कमी न होने दें क्योंकि इससे गांठों की बढ़वार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। चूरड़ा (थ्रिप्स) हल्के भूरे अथवा पीले रंग का बारीक-सा कीट पत्तियों का रस चूस कर पौधों को कमजोर कर देता है जिससे पत्तों का ऊपरी भाग सूख जाता है। अधिक आक्रमण होने पर पत्ते सफेद, भूरे पड़ने लगते हैं। इसकी रोकथाम के लिए 300 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 60 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 75 मि.ली. फेनवेलेरेट 20 ई.सी. या 175 मि.ली. डेल्टामेथ्रिन 2.8 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

बैंगनी धब्बे वाले रोग से बचाने हेतु, विशेषकर प्याज की बीज वाली फसल में इस माह के दूसरे पखवाड़े में 400 ग्राम मैन्कोजेब (डाईथेन या इण्डोफिल एम-45) को 200 लीटर पानी में घोल कर प्रति एकड़ छिड़काव करें। इसी घोल में 20 ग्राम सेल्वेट भी मिला लें।

### मूली व गाजर

इन फसलों की तैयार जड़ों की खुदाई करें तथा उन्हें साफ करके बाजार भेजें। जड़ों को जमीन में कड़ी न होने दें व आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। यदि माहू (अल/चेपा) का आक्रमण सिंगरों के लिए उगाई गई फसल पर हो जाए तो 250-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250-400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। कीटनाशक के छिड़काव के बाद एक सप्ताह तक फसल को खाने के काम में न लें।

### आलू

अगेती फसल की खुदाई पूरी हो चुकी होगी। उसे सुखा लें तथा कटे हुए व रोगी आलुओं को अलग कर लें। इन्हें बाजार बेचने के लिए भेजें या शीतालय में रखें। यदि फसल बीज के लिए है तो खुदाई करके बड़े, रोगी व दूसरी जाति के आलुओं को छंट कर अलग कर लें।

### पालक

पालक की फसल की आवश्यकतानुसार कटाई करें तथा पत्तों को बंडलों में बांधकर बाजार भेजें। नियमित रूप से सिंचाई करें। खेत तैयार

करके गर्मी की पालक के लिए बिजाई की जा सकती है। इसके लिए प्रति एकड़ 8 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होगी। जौबनेर ग्रीन, आल ग्रीन या एच एस 23 किस्मों को प्रयोग में लाएं। बीज को कतारों में 15-20 सें.मी. की दूरी पर बीजें।

### भिण्डी

गर्मी की फसल के लिए खेत की तैयारी करें। एक एकड़ के लिए 10 टन गोबर की खाद, 40 किलोग्राम नाइट्रोजन (90 किलोग्राम यूरिया खाद) व 24 किलोग्राम फास्फोरस (150 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट) की आवश्यकता होगी। एक एकड़ खेत के लिए 16-18 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होगी। उन्नत किस्मों, पूसा सावनी, वर्षा उपहार या हिसार उन्नत को प्रयोग में लाएं। अच्छे अंकुरण के लिए बिजाई से पहले बीजों को रात भर पानी में भिगो लें। बाविस्टीन नामक दवा 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें।

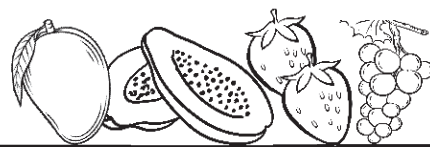
### कद्दू जाति की अन्य सब्जियां

प्लास्टिक प्रोटेस विधि द्वारा कद्दू जाति की अन्य सब्जियों की अगेती पौध तैयार करने से फरवरी के शुरू में रोपाई की जा सकती है जिसके फलस्वरूप एक से दो महीने पहले फसल ली जा सकती है।

कद्दू जाति की अन्य सब्जियों की बिजाई का समय फरवरी-मार्च है। इन सब्जियों की मात्रा, उन्नत किस्में तथा उगाने की दूरी तालिका में दी गई है। केवल पोटाश के सिवाय, खाद व उर्वरक की मात्रा खरबूजा व तरबूज के बराबर दें।

### अन्य सब्जियां

गर्मी की अन्य सब्जियां, जैसे ग्वार, शकरकंदी (तनों के लिए) तथा लोबिया की बिजाई अभी भी की जा सकती है। अरबी की बिजाई भी इसी समय हो सकती है। एक एकड़ खेत हेतु बिजाई के लिए 320-400 कि.ग्रा. गांठों की आवश्यकता होगी। खेत में उचित नमी का ध्यान रखें।



## फलों में

### संतरा, माल्टा, नींबू आदि

750 ग्राम यूरिया प्रति पौधा इस महीने के मध्य तक अवश्य डाल दें। नए पौधों पर लगाए गए छप्पर आदि दूसरे सप्ताह के बाद हटा सकते हैं क्योंकि मौसम कुछ गर्म होना शुरू हो जाएगा।

नींबू का सिल्ला व सफेद मक्खी रस चूसकर बहुत हानि पहुंचाते हैं। सुरंगी कीट नए पत्तों पर टेढ़ी-मेढ़ी, चमकीली लाइन बना देता है जिससे पत्ते पूरी तरह मुड़ जाते हैं। नए फल कमजोर हो जाते हैं तथा कम भी लगते हैं। इन कीटों की रोकथाम के लिए फूल खिलने से पहले नया फुटाव आने पर 750 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या 625 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या 500 मि.ली. न्यूवाक्रान/मोनोसिल 36 डब्ल्यू.एस.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। इसे नींबू जाति के सभी पौधों तथा



बाड़ की झाड़ियों पर भी छिड़कें तो अधिक लाभ होगा।

छाल खाने वाली सूण्डी अपने मल व लक्कड़ के बुरादे से एक मोटी झिल्ली-सी बनाकर इसके नीचे तनों व टहनियों की छाल खाती है। वह तनों में सुराख भी बनाती है। इसकी रोकथाम के लिए रूई के फोहों को दवाई के घोल में डुबोकर किसी धातु की तार की सहायता से कीड़ों के प्रत्येक सुराख के अंदर डाल दें और सुराख को गीली मिट्टी से ढक दें। 10 लीटर पानी में घोल बनाने के लिए दवाइयों की मात्रा इस तरह रखें-40 ग्राम कार्बेरिल (सेविन) 50 चु.पा. या 10 मि.ली. फैनिट्रोथियान (फोलिथियान/सुमिथियान) 50 ई.सी.। इसके अलावा मिट्टी के तेल, साबुन व पानी का 10% घोल (1 लीटर मिट्टी का तेल + 100 ग्राम साबुन + 9 लीटर पानी) भी काफी प्रभावकारी व अच्छा सिद्ध हुआ है।

**मोटल लीफ (जस्ते की कमी) :** पत्ते की नसों के दोनों ओर की जगह सफेद हो जाती है इसके लिए 500 मि.ग्रा. प्लान्टमाइसिन और 2 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड को प्रति लीटर पानी में घोल कर जुलाई, अक्टूबर, दिसम्बर व फरवरी में छिड़काव करें।

**टहनीमार रोग :** पौध गलन या गूंद निकलने वाले भागों को कुरेद कर साफ करें। बोर्डोपेस्ट लगाएं और फिर एक सप्ताह बाद दोबारा लगाएं। काट-छांट के बाद 0.3% कॉपर- ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें।

सूत्रकृमि भी पौधों को भारी हानि पहुंचाते हैं व इनकी रोकथाम के लिए कार्बोफ्यूथ्रान (फ्यूराडान 3 जी.) 13 ग्राम प्रति वर्ग मीटर या नीम की खली 1 कि.ग्रा. प्रति पौधा व 7 ग्राम कार्बोफ्यूथ्रान 3जी. के दाने प्रति वर्ग मी. की दर से तने के आस-पास के 9 वर्गमीटर क्षेत्र में मिट्टी में मिलाएं। दवा डालने के तुरंत बाद प्रचुर मात्रा में पानी दें। इसका प्रयोग फूल आने से पहले और फल तोड़ने के बाद ही करें। दवाई डालने से पहले जमीन को भुरभुरा कर लें। ये बहुत जहरीली दवाएं हैं। अतः इन्हें बड़ी सावधानी से काम में लाएं।

संतरा व माल्टा में कोढ़ से पत्तों, टहनियों और फलों पर गहरे-भूरे रंग के खुरदरे धब्बे पड़ जाते हैं। टहनीमार रोग से टहनियां ऊपर से सूखनी शुरू हो जाती हैं, कभी-कभी बड़ी टहनियां भी सूख जाती हैं। पत्तों पर दाग पड़

जाते हैं और फल व तने भी गल जाते हैं। इन बीमारियों के नियंत्रण के लिए रोगी टहनियों की काट-छांट करें और इसके बाद 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का पहला छिड़काव अक्टूबर में, दूसरा छिड़काव दिसम्बर में व तीसरा फरवरी में करें।

### तरबूज व खरबूजा

तरबूज व खरबूजा की अगेती फसल लेने के लिए इन फलदार सब्जियों की प्लास्टिक प्रोटेस विधि द्वारा पौधे तैयार करके फरवरी के शुरू में रोपाई कर दें।

इन फसलों की बिजाई फरवरी के शुरू से ही करें। तरबूज की किस्में चार्लेस्टन ग्रे या शूगर बेबी तथा खरबूजे की किस्में हरा मधु या पंजाब सुनहरी प्रयोग में लाएं। यदि बिजाई से पहले बीजोपचार कर लें तो उचित होगा। (2.0 ग्राम बाविस्टीन प्रति किलोग्राम बीज की दर से)। तरबूज के लिए बीज की मात्रा लगभग 1.5 से 2.00 किलोग्राम प्रति एकड़ तथा खरबूजे की एक किलोग्राम प्रति एकड़ है। खेत तैयार करते समय 4-6 टन गोबर की खाद, 6 किलोग्राम नाइट्रोजन (15 किलोग्राम यूरिया खाद), 10 किलोग्राम फास्फोरस (60 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 10 किलोग्राम पोटाश (16 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश, जहां पर पोटाश की कमी हो) दें तथा खड़ी फसल में 14 किलोग्राम नाइट्रोजन (30 किलोग्राम यूरिया खाद) उर्वरकों द्वारा दो बार में टॉप ड्रेसिंग करें। खरबूजे की बिजाई 2.5 मीटर चौड़ी डोल में किनारों पर 60 सें.मी. के फासले पर करें। खरबूजे की बिजाई हेतु शूगर बेबी किस्म के लिए 3 मीटर और चार्लेस्टन ग्रे के लिए 4 मीटर चौड़ी क्यारियां बनाएं तथा क्यारियों के दोनों ओर 60 सें. मी. की दूरी पर बीज बोएं। खेत में नमी का ध्यान रखें।

### अंगूर

पुरानी बेलों में यूरिया 337 ग्राम व 2 कि.ग्रा. सुपरफास्फेट इस महीने के पहले सप्ताह तक अवश्य डाल कर पहली सिंचाई करें। इसके साथ-साथ नए पौधे भी 10 फरवरी तक जरूर लगा लें। अगर काट-छांट का कार्य बाकी है तो इस महीने के पहले सप्ताह तक अवश्य पूरा कर लें। काट-छांट के बाद बाविस्टीन नामक दवा 0.2% का छिड़काव करें। नई

सब्जी का नाम	बीज की मात्रा (प्रति एकड़)	बोने की दूरी		किस्में
		कतारों की	पौधों की	
1	2	3	4	5
लौकी	2 कि.ग्रा.	2 मी.	60 सें.मी.	पूसा समर प्रोलिफिक (लंबी व गोल),
चप्पन कद्दू	2 कि.ग्रा.	60-90 सें.मी.	45-60 सें.मी.	पूसा अलंकार, बीकानेरी ग्रीन, हिसार सिलेक्शन-1, हिसार टिण्डा-10
टिण्डा	2 कि.ग्रा.	125-150 सें.मी.	45-60 सें.मी.	हिसार टिण्डा-10
करेला	2 कि.ग्रा.	125-150 सें.मी.	20-45 सें.मी.	कोयम्बटूर लॉग, पूसा दो मौसमी
तोरी	2 कि.ग्रा.	180-240 सें.मी.	45-60 सें.मी.	पूसा चिकनी, पूसा नसदार
खीरा	1 कि.ग्रा.	150 सें.मी.	45-60 सें.मी.	जापानी लॉग ग्रीन
ककड़ी	1 कि.ग्रा.	150 सें.मी.	60-75 सें.मी.	लखनऊ अर्ली व करनाल सलेक्शन

बढ़वार आने से पहले छिड़काव अवश्य करें। अंगूर में सूत्रकृमि रोग के नियंत्रण के लिए नींबू जाति के पौधे की भांति उपचार करें।

### आम

पोटाश खाद पोटाशियम सल्फेट के रूप में अवश्य दें। इस तरह से प्रति पौधा आधा किलोग्राम यूरिया और एक किलोग्राम पोटाशियम सल्फेट पौधे की छतरी के नीचे तने से 2-3 फुट की दूरी पर अवश्य बिखेर दें और अच्छी तरह से गोड़ाई करें और सिंचाई भी जरूर करें।

पेड़ों के तनों पर जो अल्काथीन शीट लगा रखी है उसके नीचे एकत्रित मीली बग के नियंत्रण के लिए 100 मि.ली. मैटासिड 50 ई.सी. या 300 मि.ली. एकालक्स 25 ई.सी. को 50 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ बाग के पेड़ों पर छिड़काव करें। पत्तों, टहनियों, फूलों आदि पर चढ़े कीटों को मारने के लिए 500 मि.ली. मैटासिड 50 ई.सी. या 1.5 लीटर एकालक्स 25 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोल कर प्रति एकड़ छिड़कें।

आम का तेल इस महीने प्रायः आक्रमण करता है। इसकी रोकथाम के लिए इस महीने के अंत में 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 1.5 कि.ग्रा. कार्बेरिल (सेविन) 50 डब्ल्यू.पी. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़कें। गुच्छा-मुच्छा ग्रस्त टहनियों को काटकर जला दें व 0.2 प्रतिशत कैप्टान व मैलाथियान 0.1 प्रतिशत नामक दवा के मिश्रण का छिड़काव करें। यह क्रिया 10-12 दिन के अंतराल पर दोहराएं।

### आड़ू, अलूचा और नाशपाती

आधी यूरिया फूल आने से पहले आड़ू (450 ग्राम), अलूचा (180 ग्राम) व नाशपाती में (500 ग्राम) जरूर डाल दें और हल्की सिंचाई कर लें। फूल आते समय सिंचाई न करें।

### बेर

बेर की मक्खी की लट (मैगट) फलों को अंदर से काना कर देती हैं। इनकी रोकथाम के लिए 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी.+5 कि.ग्रा. गुड़ को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ बाग में छिड़काव करें। अगर जरूरी हो तो 10 दिन के बाद यही कीटनाशक दोबारा छिड़कें। दोबारा कीटनाशक दवा का छिड़काव करने के कम से कम दो दिन बाद ही खाने के लिए फल तोड़ें व अच्छी तरह पानी से धोकर प्रयोग करें। प्रतिदिन गिरे फलों को एकत्रित करके जमीन में दो फुट की गहराई पर दबा दें।

बेर के नए पौधे लगाने का कार्य 15 फरवरी तक पूरा करें तथा पौधे लगाने के पश्चात् पौधों की सिंचाई करते रहें।

### अमरूद

जुलाई-अगस्त में अमरूद की फसल लेने के लिए खाद आदि इस महीने के पहले सप्ताह में (गोबर की खाद 75 किलोग्राम, सुपर फास्फेट 625 ग्राम, 250 ग्राम सल्फेट ऑफ पोटाश तथा 750 ग्राम यूरिया) अवश्य डाल दें और हल्की सिंचाई करें। पहले सप्ताह तक वैज ग्राफ्टिंग विधि से कलमी पौधे तैयार कर सकते हैं।

### लीची व चीकू

लीची में 875 ग्राम और चीकू के पौधों में 400 ग्राम यूरिया प्रति पेड़ डालकर निराई-गोड़ाई करें और हल्की सिंचाई भी करें।

### आंवला

नए पौधे लगाने का कार्य 15 फरवरी तक पूरा करें तथा पौधे लगाने के पश्चात् गर्मियों में पौधों की सिंचाई 4-5 दिन पर तथा सर्दियों में 7-10 दिन पर करते रहें। ढाई किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट और 500 ग्राम यूरिया प्रति पौधा डालकर निराई-गोड़ाई करें और हल्की सिंचाई करें।

### पपीता

नये पौधों को सर्दी से बचाने के लिए बनाए गए छप्परों को दूसरे सप्ताह में हटा दें। पौधों में प्रति पेड़ आधा किलोग्राम मिश्रित खाद जिसमें अमोनियम सल्फेट, सिंगल सुपर फास्फेट व पोटाशियम सल्फेट 2 : 4 : 1 के अनुपात में डालें और सिंचाई 8-10 दिन के अंतर पर करते रहें। इसके अतिरिक्त 20 कि.ग्रा. गोबर की खाद प्रति पौधा अवश्य डालें। खाद को तने से 35-40 सें.मी. की दूरी पर चारों ओर डालें।

### नर्सरी में क्रियाएं

नर्सरी में छोटे पौधों को सर्दी से बचाने के लिए जो छप्पर बनाए गए थे उनको दूसरे सप्ताह के बाद हटा दें। प्यौंदी पौधों से अगर फालतू टहनियां प्यौंदी बिंदु के नीचे आ रही हों तो उनको काट दें। प्यौंदी पौधों को डंडी से सहारा दें, ताकि वे अपनी बढ़वार सीधी कर सकें। जट्टी-खट्टी में रोगी पौधों को निकाल दें। आम, लोकाट, अमरूद के देसी पौधों को अनाचिंग के लिए गमलों में बदलें। अमरूद, आड़ू, जट्टी-खट्टी के बीजों को नर्सरी में बीजें। अंगूर, नाशपाती, अनार, अंजीर, शहतूत, मीठा नींबू और बारहमासी लेमन की कलम, तैयार की गई क्यारियों में लगा दें।

**पौधे लगाना :** पतझड़ी फलदार पौधों व बेर तथा आंवला को दूसरे सप्ताह तक नंगी जड़ों से लगाया जा सकता है लेकिन इसके बाद पौधों को गाची समेत ही लगाएं तथा सदाबहार फलदार पौधों को दूसरे सप्ताह में लगाना शुरू कर दें।

**पौधे की सिंचाई :** फलदार पौधे जो पिछले साल लगाए गए थे उनकी बढ़वार काफी जल्दी होगी इसलिए हर पौधे का जमीन की सतह से 60-70 सें.मी. तक एक ही तना रखें और बराबर की जो बढ़वार आती है तो एक माह के अंतराल पर एक-एक टहनी काटते रहें और पौधों पर 4-6 टहनियां रखते रहें। इसके बाद जमीन की सतह से 3 और 5 फुट की ऊंचाई तक 4-5 द्वितीय टहनियां लें। पौधों को बांस की डंडी से सहारा भी अवश्य दें।



## पशुओं में

### गाय-भैंस

गायों व भैंसों को साफ रखना चाहिए। छोटे बच्चों के आवास में बिछावन का प्रयोग करें, इसे गीला न होने दें और 7-10 दिन में बदल देना

चाहिए। इन दिनों भैंसों गर्मी में आती हैं। गर्मी में आने के 8-10 घंटे पश्चात् उनकी मिलाई करानी चाहिए। अच्छी नस्ल के कट्टे व कट्टियां तथा अच्छी बच्छियां लेने के लिए अपने नजदीकी कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों से गाय-भैंसों को नए दूध कराएं। गाय-भैंसों नियमित रूप से गर्मी में आती रहें, इसके लिए उन्हें संतुलित आहार दें और उनके आहार में 50-60 ग्राम खनिज मिश्रण अवश्य मिलाएं। भैंसों अधिकतर रात को या सुबह के समय गर्मी के लक्षण दिखाती हैं। इसलिए सुबह-सुबह पशु की जांच करके गर्मी में आए पशुओं की पहचान करें। सर्दी से बचाव के लिए पशुओं को रात को सूखा चारा या तूड़ी डालें।

गाय-भैंस को मुंह व खुर के रोग से बचाने के लिए टीके समय पर लगवाएं। इस रोग का पहला टीका बछड़े-बछड़ियों को 6 सप्ताह की आयु या इससे पहले, दूसरा टीका पहले टीके के 6 सप्ताह बाद, तीसरा टीका दूसरे टीके के 3 मास उपरांत और तत्पश्चात् यह टीका हर 6 मास बाद लगवाना चाहिए।

थन सूजन रोग से पशुओं को सुरक्षित रखने के लिए पशुओं को गीले में न रहने दें और पूरे हाथ से मुट्ठी बांध कर दूध निकालें। दूध निकालने से पहले थनों को साफ पानी से धोकर साफ कपड़े से पोंछना चाहिए। यदि थनों को अंगूठे और उंगलियों के बीच में रखकर दूध निकाला जाएगा तो पशुओं के थन गंटीले हो जाते हैं और उनमें थन सूजन का रोग लग जाता है।

आप अपने पशु चिकित्सक की सलाह से पशुओं को कृमि नाशक दवाइयां दें ताकि उन्हें पेट के कीड़ों से बचाया जा सके।

बरसीम अधिक खिलाने से पशुओं के पेट में अफारा आ जाता है। पशुओं को बरसीम के अफारे से बचाने के लिए बरसीम के हरे चारे में सूखा चारा जैसे कि तूड़ी, कड़वी तथा कूटी इत्यादि मिलाकर खिलाएं। यदि बरसीम पहले दिन की हो तो उसे दूसरे दिन खिलाने से पहले धूप लगाएं। अफारा आने पर 500 ग्राम सरसों या अलसी के तेल में 60 ग्राम तारपीन का तेल व 10 ग्राम हींग मिलाकर पिलाएं तथा तुरंत पशु चिकित्सक से संपर्क करें।

### भेड़-बकरी

भेड़-बकरियों को अपने क्षेत्र के पशु चिकित्सक की सलाह अनुसार दवाई पिलाकर कृमिरहित करें। भेड़-बकरियों को साफ-सुथरे तथा सूखे स्थान पर रखें। भेड़ों से अच्छी और अधिक ऊन प्राप्त करने के लिए उनमें नस्ल का सुधार करें। इसके लिए उन्हें अच्छी नस्ल के मेढ़ों से मिलाएं। इस प्रकार जो नई भेड़ें पैदा होंगी, वे अच्छी नस्ल की होंगी तथा अधिक ऊन व आय आपको मिलेगी।

### कुक्कुटों में

जिन चूजों की आयु 6 से 8 सप्ताह की हो गई हो उन्हें रानीखेत की बीमारी से बचाव का दूसरा टीका लगवाएं। यदि मुर्गियों के शरीर पर जूएं व चिचडियां हों तो इसके लिए आप मैलाथियान और सेविन नामक दवाओं का पशु चिकित्सक की सलाह से मुर्गीघरों व मुर्गियों पर स्प्रे कराएं। चिचडियों के कारण मुर्गियों में चीचड़ी ज्वर आ सकता है। इस रोग से

मुर्गियों में 43 डिग्री से 44 डिग्री तक बुखार चढ़ जाता है, प्यास खूब लगती है, पीले और हरे रंग के दस्त लग जाते हैं और मुर्गियां काफी संख्या में मर जाती हैं। इस रोग के उपचार के लिए पशु चिकित्सक की सलाह लें। मांस के लिए रखे गए ब्रायलर चूजों को 6 से 8 सप्ताह की आयु में बेच देना चाहिए। यदि इन चूजों की आयु 8 सप्ताह से अधिक हो गई हो तो उन्हें रखना लाभदायक नहीं।

मुर्गीघरों में दिन और रात की रोशनी मिलाकर 16 घंटे होनी चाहिए। यदि रोशनी कम रहे तो मुर्गियां कम अंडे देंगी।

### घर-आंगन में

हरियाणा एक शाकाहारी राज्य है। शाकाहारी व्यक्तियों के लिए खुम्ब एक अत्यन्त लाभकारी आहार है। पौष्टिकता के आधार पर खुम्ब की तुलना अन्य दालों, सब्जियों से की जाए तो सोयाबीन की अपेक्षा खुम्ब की पौष्टिकता अधिक है। इसमें उच्च कोटि के प्रोटीन, विटामिन, खनिज लवण तथा रेशे पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। इसमें कार्बोहाइड्रेट और वसा की मात्रा कम होने से यह हृदय एवं मधुमेह से पीड़ित रोगियों के लिए एक पौष्टिक आहार है। इसमें पाई जाने वाली प्रोटीन अधिक पाचनशील है। उत्तम कोटि की प्रोटीन होने के कारण कैल्शियम और फास्फोरस का भी उचित शोषण होता है। अतः खुम्ब का प्रयोग प्रतिदिन के भोजन में विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन बनाकर कर सकते हैं।

- लोहे के बर्तन में भोजन पकाएं जिससे उसमें पोषक तत्व लोहा बढ़ जाता है जो एनीमिया से पीड़ित महिलाओं एवं किशोरियों के लिए अति आवश्यक है।
- भोजन पकाने में खाने के सोड़े का प्रयोग न करें।
- हरी सब्जियों को काटने से पहले धोएं।
- सब्जियों का पतले से पतला छिलका उतारें।
- सब्जियों को बड़े-बड़े टुकड़ों में काटें।
- सब्जियों को कम से कम पानी में पकाएं, इससे उसमें विद्यमान विटामिन, खनिज लवण सुरक्षित रहते हैं।
- चावलों को उबालने के बाद उसमें से फालतू पानी को न निकालें।



(पृष्ठ 08 का शेष)

5. गेहूँ को बाजार में सीधे न बेचकर उसके आटे के पैकेट बनाकर तथा दलिया, सूजी व मैदा बनाकर बेच सकते हैं।

ग्रामीण स्तर पर कुछ बैंक हैं जो बेरोजगार युवकों को व्यवसाय शुरू करने के लिए ऋण उपलब्ध करवाते हैं। अतः उनकी सहायता से अपना व्यवसाय शुरू कर सकते हैं तथा अपने साथ-साथ दूसरों को भी रोजगार दे सकते हैं।





# भारतीय कृषि क्षेत्र में सूचना तकनीक : महत्व

अनिल कुमार मलिक<sup>1</sup>, कृष्ण यादव एवं प्रदीप कुमार चहल

विस्तार शिक्षा विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

“रोहिनी बरसै मृग तपै, कुछ कुछ अद्रा जाय  
कहै घाघ सुने घाघिनी, स्वान भात नहीं खाय।”

शुक्रवार की बादरी रहे शनिचर छाय,

कहा घाघ सुन घाघिनी बिन बरसे ना जाय..॥

ये लोकोक्तियां उत्तर भारत के सर्वाधिक लोकप्रिय जन कवि घाघ की हैं। न जाने ऐसी कितनी लोकोक्तियां ग्रामीण जनजीवन में सदियों से प्रचलित हैं। हमारे किसान भाई इन्हीं के सहारे खेती-किसानी की व्यवस्था को समझते रहे हैं। मौसम के आगमन, खेती से जुड़ी जरूरतों, फसल चक्र, उत्पादन आदि की जानकारी प्राप्त करते रहे हैं। इनका अपना महत्व है। लेकिन जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ी है, खेती पर दबाव बढ़ा है। ऐसे में हमारे किसानों को खेती के साधनों मसलन उन्नत बीज, खाद, कीटनाशक और हर खेत को पानी दिये जाने के साथ ही सही सूचना, समय पर मिले इसकी सबसे ज्यादा जरूरत है। बात चाहे मौसम पूर्वानुमानों की हो या कृषि संबंधी उचित सलाह की या फिर कृषि मंडी और कृषि बाजार की जानकारी का हमारे किसान भाई केवल कही-सुनी बातों पर न निर्भर रहें इसके लिए सरकार ने पूरा सूचना तंत्र विकसित किया है। वे इसका उपयोग करते हुए अपने घर बैठे खेती-किसानी के कार्य को बेहतर तरीके से कर सकते हैं। इसका कृषि में अधिक से अधिक उपयोग करके हम कृषि को नई दिशा दे सकते हैं जिससे देश में अन्न और दूसरे कृषि व पशुधन से प्राप्त उत्पादों का उत्पादन बढ़ेगा और किसानों की वित्तीय स्थिति और मजबूत होगी।

रेडियो और दूरदर्शन की सूचना और संचार प्रौद्योगिकी में अहम भागीदारी रही है। इसके जरिए किसानों को सूचना प्रदान करने का काम दशकों से चल रहा है। इन आयामों को बेहतर बनाने के साथ ही सरकार ने इसे और विस्तार दिया है और माननीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के निर्देशों के अनुरूप दूरदर्शन का एक नया चैनल (किसान चैनल) शुरू किया है, जिसके जरिए हमारे किसान भाई खेती-किसानी से जुड़ी बहुविध सूचनाएं प्राप्त कर रहे हैं।

भारत डिजिटल क्रांति और मोबाइल क्रांति के दौर से गुजर रहा है। मोबाइल की पहुंच गांव-गांव तक है। और मोबाइल के जरिए इंटरनेट का उपयोग करने वालों की संख्या में लगातार इजाफा हो रहा है। सरकार और किसान के बीच दोतरफा संवाद कायम करने में मोबाइल और इंटरनेट की अहम भूमिका है। किसानों को सही समय पर सूचना देने के लिए सरकार की कई वेबसाइट, पोर्टल फोन सेवाओं के साथ कृषि एसएमएस की व्यवस्था के साथ ही कई तरह के ऐप शुरू किए हैं। कृषि एवं किसान मंत्रालय के कई पोर्टल हैं, जिसके जरिए हमारे किसान भाई सूचना प्राप्त कर सकते हैं। भारत सरकार का किसान पोर्टल <http://farmer.gov.in>, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की वेबसाइट <http://www.icar.org.in> पर तो किसानों को उनसे जुड़ी जरूरी जानकारी मिलती ही है, इसके साथ ही हाल ही में केवीके पोर्टल लांच किया गया है। इसके जरिए कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा किसानों के हित में किए जाने वाले प्रदर्शन, बीज, बाजार आदि की तकनीकी जानकारी

जिले स्तर से लेकर देश भर में दी जाती है। केवीके की विभिन्न गतिविधियों की जानकारी प्रदान करने एवं उसकी उच्च स्तर पर निगरानी एवं प्रबंधन हेतु बनाए गए पोर्टल <http://kvk.icar.gov.in/> पर उपलब्ध है। विभिन्न तरह के मोबाइल ऐप के जरिए भी हमारे किसान भाई सुविधा प्राप्त कर सकते हैं। इनमें से प्रमुख हैं, किसान सुविधा ऐप, पूसा कृषि ऐप, भुवन ओलावृष्टि ऐप, फसल बीमा ऐप, एग्री मार्केट ऐप, पशु पोषण ऐप। इन सब ऐप्स को [www.mkisan.gov.in](http://www.mkisan.gov.in) के अलावा गूगल प्ले स्टोर से डाउनलोड किया जा सकता है। इन सब ऐप की अलग-अलग विशेषताएं हैं। किसानों की खेती संबंधी जरूरतों को ध्यान में रखकर इसे तैयार कराया गया है। जैसे कि किसान सुविधा ऐप पर किसानों को घर बैठे कृषि संबंधित सूचनाएं जैसे मौसम, बाजार भाव, फसलों की बीमारियों व कीट की पहचान व उपचार के साथ ही कृषि संबंधित विशेषज्ञ से सलाह की सुविधा है। इतना ही नहीं इस ऐप पर मौसम में आने वाले बदलाव को लेकर समय-समय पर अलर्ट भेजे जाते हैं। इसी तरह पूसा कृषि ऐप के जरिए कृषि एवं बागवानी की उन्नत किस्में तथा नवीनतम तकनीकियों की जानकारी दी जाती है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा तैयार किए गए नयी फसल किस्मों के बारे में जानकारी उपलब्ध है। हम इसके जरिए कृषि के व्यवसायीकरण से जुड़ी सूचनाएं भी प्राप्त कर सकते हैं। हमारे फसल बीमा ऐप पर किसानों के लिए फसल बीमा से जुड़ी सारी जानकारी उपलब्ध कराई गई है। इसके जरिए किसान बीमा प्रीमियम, बीमा की राशि, सब्सिडी आदि की जानकारी प्राप्त कर सकता है।

हमारा किसान आपदाओं से काफी प्रभावित होता है। फसल बर्बादी के आकलन को लेकर उहापोह की स्थिति होती है। इसके लिए हमने भुवन ओला वृष्टि ऐप विकसित किया है। इसके जरिए ओलों से हुई फसल बर्बादी का अनुमान लगाया जा सकता है। यह बहुत ही सहज है। राज्य सरकारों के हमारे कृषि अधिकारी अपने मोबाइल/टैबलेट में ये ऐप डालकर खेत में जाएगा, बर्बाद हुई फसल का फोटो खींचकर भुवन ऐप पर डाल सकेगा। इससे किसानों को मुआवजा देने की प्रक्रिया आसान हो जाएगी, सही आकलन हो सकेगा और जल्द मुआवजा मिल जाएगा। एग्री मार्केट ऐप के जरिए किसान 50 किलोमीटर के दायरे में मंडियों के बाजार भाव की जानकारी प्राप्त कर सकता है। इसके अलावा इस ऐप से सारे देश, राज्य में अधिकतम कीमत कहाँ पर है, उसकी जानकारी भी ले सकता है। राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड ने पशु पोषण ऐप विकसित किया है। इस ऐप के जरिए किसानों को पशुओं की नस्ल, दूध की मात्रा के अनुरूप चारे के विषय में सुझाव दिया जाता है।

किसान अपने घर बैठे किसान कॉल सेंटर में 18001801551 पर निःशुल्क फोन करके अपनी कृषि समस्या का समाधान पा सकता है। साथ ही समस्या का जो जवाब दिया जाता है उसको संक्षिप्त में उनकी भाषा में एसएमएस द्वारा संदेश भेजा जा रहा है। अभी तक कुल 1150 करोड़ से ज्यादा मोबाइल संदेश भेजे गये हैं।

यदि किसान निरक्षर या कम पढ़े लिखे हैं तो उन्हें रिकार्ड किया हुआ संदेश भेजा जाता है। इसके साथ ही हमारे 650 कृषि विकास केंद्रों से लगातार किसानों को उनके क्षेत्र के अनुरूप जरूरी सूचनाएं उपलब्ध करावाई जाती हैं। हमारा किसान जितना सूचना से समृद्ध होगा खेती-बाड़ी उतना ही बेहतर होगी। किसानों से ये अपेक्षा है कि इन सूचना तंत्रों से जुड़कर वे इनका लाभ लें।

<sup>1</sup>शोध छात्र, चौ.च.सि.ह.कृ.वि., हिसार





# कृषि में वस्तु एवं सेवा कर का प्रभाव

परवीन कुमार, वेद प्रकाश मेहता एवं जितेंद्र कुमार भाटिया

कृषि अर्थशास्त्र विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत ने अपने इतिहास में सबसे बड़ा कर सुधार देखा है जो वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) है। वस्तु एवं सेवा कर स्वतंत्रता के बाद से एक लंबे समय से अप्रत्यक्ष कर सुधार था, जिसे लोकसभा और राज्यसभा सहित संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित किया गया है और पूरे भारत में 1 जुलाई 2017 से प्रभावी हुआ है। यह एक अप्रत्यक्ष कर है, जो कि भारत में केंद्रीय और राज्य सरकारों द्वारा लागू किया गया है। यह कर कई व्यापक करों की जगह पूरे भारत में लागू किया गया है। भारत में अप्रत्यक्ष कराधान ढांचे के सुधार में वस्तु एवं सेवा कर की शुरूआत एक महत्वपूर्ण कदम है। यह राष्ट्रीय स्तर पर सेवाओं के अच्छे, साथ ही सेवाओं के निर्माण, बिक्री और उपभोग पर एक व्यापक अप्रत्यक्ष कर का प्रस्ताव है। निवेश कर समंजन विधि (इनपुट टैक्स क्रेडिट विधि) के आधार पर वस्तु या सेवाओं की बिक्री या खरीद के प्रत्येक चरण पर वस्तु एवं सेवा कर लगाया और एकत्र किया जाएगा। भारतीय शासन ने राज्यों की स्वतंत्रता से समझौता किए बिना कुशल आर्थिक विकास सुनिश्चित करने के लिए चुनौती के साथ केंद्रीय स्तर पर एक अनूठा प्रयोग किया है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर वस्तु एवं सेवा कर की लोकप्रियता मूल्य-योजित कर (वैट) के रूप में जानी जाती है। वर्ष 1954 में, अप्रत्यक्ष कराधान संरचना के रूप में वस्तु एवं सेवा कर को अपनाया जाने वाला पहला देश फ्रांस था। अब वस्तु एवं सेवा कर शुरू करने के 62 साल बाद, दुनिया भर में 164 देशों ने वस्तु एवं सेवा कर को अपनाया है। इस कराधान प्रणाली में सबसे पारदर्शी और निष्पक्ष तरीके से राजस्व बढ़ाने की क्षमता है। अधिकांश देशों में वस्तु एवं सेवा कर एकजुट है, अर्थात् पूरे देश में एक ही दर लागू होता है। हालांकि, ब्राजील और कनाडा जैसे कुछ देशों में दोहरी वस्तु एवं सेवा कर प्रणाली अपनाई गई है। दोहरी प्रणाली के अंतर्गत, वस्तु एवं सेवा कर को राष्ट्रीय और राज्य सरकार दोनों द्वारा लगाया जाता है। भारत ने दोहरी वस्तु एवं सेवा कर ढांचा अपनाया है।

अब वस्तु एवं सेवा कर परिषद की नजर कृषि पर है, क्योंकि यह प्रस्तावित किया गया है कि विभिन्न कृषि वस्तुएं जो पहले कराधान चक्र से बाहर थीं वो अब विचाराधीन की जाएंगी क्योंकि कृषिवादी का अर्थ संशोधित किया गया है। वस्तु एवं सेवा कर परिषद ने कृषि उत्पादों पर 5 प्रतिशत वस्तु एवं सेवा कर दरों की घोषणा की है। इससे पहले, वस्तु एवं सेवा कर परिषद ने कृषि उत्पादों पर 12 प्रतिशत कर दर की घोषणा की थी और बाद में इसे 5 प्रतिशत तक घटा दिया गया है। अब, 5 प्रतिशत वस्तु एवं सेवा कर दरें सभी कृषि उत्पादों पर लागू होंगी। कृषि उत्पादों पर 5 प्रतिशत वस्तु एवं सेवा कर दरों के कारण कृषि उद्योग और किसानों को रूपांतरित किये गए नए अप्रत्यक्ष कर व्यवस्था प्रभावित कर रही है। यह उम्मीद है कि दीर्घकालिक उद्योग सकारात्मक होने का अनुमान है। वस्तु एवं सेवा कर की शुरूआत के बाद समाज के सभी वर्गों में रहने वाले आम

लोग इससे प्रभावित हुये हैं। हम पहले ही आम आदमी, तेल और गैस क्षेत्र में इसका प्रभाव देख चुके हैं।

कृषि क्षेत्र में इस्तेमाल किए गए निवेश (इनपुट) जैसे कि कीटनाशक, ट्रैक्टर आदि पर लगाए गए इनपुट कर कृषि उत्पादन की लागत में वृद्धि करते हैं। दूसरी ओर, कृषि उत्पादन की कीमतें बाजार की शक्तियों द्वारा नियंत्रित होती हैं, जिन पर किसान का नियंत्रण बहुत कम होता है। जैसा कि निवेश मूल्य बढ़ जाता है और उत्पाद (आउटपुट) का मूल्य स्थिर रहता है, किसान को लागत को अवशोषित करने के लिए कोई विकल्प नहीं होगा, इस प्रकार उसका बोझ बढ़ रहा है और करों के बढ़े हुए बोझ से उनकी आय में कमी हो जाएगी। इस संदर्भ में हम कुछ प्रमुख निवेशों पर कर की घटनाओं को देखते हैं।

**बीज :** बीज पर पिछले और नए वस्तु एवं सेवा कर संरचना के तहत छूट दी गई हैं। इससे किसानों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

तालिका 1: पिछले और नए कर व्यवस्था के तुलनात्मक विश्लेषण

कृषि निवेश	पिछले कर व्यवस्था के तहत कर का बोझ (प्रतिशत में)	वस्तु एवं सेवा कर व्यवस्था के तहत कर का बोझ (प्रतिशत में)	प्रभाव
बीज	0	0	कोई प्रभाव नहीं
उर्वरक	6	5	लाभ
कीटनाशक	14-15	18	घाटा
ट्रैक्टर	12-13	12	लाभ
ट्रैक्टर आदानों (इनपुट)	17.5	18	घाटा
कृषि औजार	12.5	0 व 12	लाभ

**उर्वरक :** उर्वरक कृषि का एक महत्वपूर्ण तत्व है जिस पर पहले 6 प्रतिशत (1 प्रतिशत उत्पाद शुल्क, 5 प्रतिशत वैट) कर लगाया गया था। वस्तु एवं सेवा कर में, उर्वरकों पर वस्तु कर कम कर दिया गया जो 5 प्रतिशत है। जिससे किसानों के लिए कृषि पर आने वाली लागत कम होगी।

**कीटनाशक :** पुरानी कर व्यवस्था में कीटनाशक 14-15 प्रतिशत के उत्पाद शुल्क पर मिलते थे। लेकिन वस्तु एवं सेवा कर व्यवस्था के तहत, कीटनाशकों जैसे फसल संरक्षण उत्पादों पर 18 प्रतिशत कर है। इसलिए इससे यह किसानों पर कृषि लागत का बोझ बढ़ा सकता है।

**ट्रैक्टर :** अंतिम उत्पाद पर वैट के साथ ट्रैक्टर के निवेश पर कर 12-13 प्रतिशत था जो नए वस्तु एवं सेवा कर के तहत 12 प्रतिशत हो गया है। ट्रैक्टर आदानों पर वस्तु एवं सेवा कर की दर बढ़ाकर 18 प्रतिशत निर्धारित की गयी है, जिसमें ट्रैक्टर का पिछला रिम व पहिया, सेंटर आवास, हाउसिंग ट्रांसमिशन और ट्रैक्टर का समर्थन फ्रंट एक्सल है। ट्रैक्टर आदानों पर बढ़े कर से किसानों पर बोझ बढ़ सकता है।

(शेष पृष्ठ 24 पर)

# आय बढ़ाने के लिए एकीकृत कृषि प्रणाली अपनाएं

जे. एन. यादव<sup>1</sup>, राजेन्द्र कुमार एवं आर. बी. गुप्ता  
कृषि विज्ञान केन्द्र, फरीदाबाद  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आज की मांग को देखते हुए किसानों को एकीकृत कृषि प्रणाली पर ध्यान देने की आवश्यकता है। 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने के लक्ष्य को पूरा करना है तो एकीकृत कृषि प्रणाली के बिना सम्भव नहीं होगा। वर्तमान में अधिक उत्पादन बढ़ाने के लिए किसानों द्वारा अधिक मात्रा में विभिन्न कीटनाशकों व रासायनिक खादों का प्रयोग किया जा रहा है। इनके अधिक प्रयोग से भूमि की उर्वराशक्ति में क्रमशः कमी होने लगी तथा भूमि की भौतिक दशा बिगड़ती गयी। भूमि की उपजाऊ शक्ति को बरकरार रखने के लिए एकीकृत कृषि प्रणाली अपनाना आवश्यक है। कृषि को अधिक लाभकारी बनाने के लिए फसल उत्पादन के साथ-साथ अन्य व्यवसाय जैसे-सब्जी, फूल व फल उत्पादन डेयरी, भेड़, बकरी, मछली, मुर्गी व मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, वर्मी कम्पोस्ट एवं कृषि वानिकी आदि को एक साथ समायोजन किया जाय कि वह एक दूसरे पर निर्भर हों जिससे उत्पादन क्षमता एवं भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाये रखा जा सके। इस प्रकार इन कृषि प्रणाली को आपस में सम्मिलित करने से उत्पादन लागत में कमी आयेगी। इसके द्वारा प्राकृतिक एवं समस्त पर्यावरण को संरक्षित रखने में सहायता मिलती है जिससे कृषि उत्पादन की निरंतरता को बनाए रखा जा सकता है। इस प्रणाली से किसान के परिवार को वर्ष भर रोजगार प्राप्त होता रहता है जिससे उनकी आय बढ़ती है और उनका सामाजिक एवं आर्थिक विकास होता है जिससे उनके जीवन-स्तर में सुधार होता है।

फसल उत्पादन के साथ पशुपालन पुराने समय से किसानों का एक मुख्य उद्यम रहा है। फसल उत्पादन एवं पशुपालन वास्तव में एक दूसरे के पूरक हैं। पशुपालन के बिना टिकाऊ खेती संभव नहीं है। किसान द्वारा कृषि के साथ पशुपालन की समेकित कृषि प्रणाली को अपनाने से महिलाओं के लिए रोजगार की उपलब्धता बढ़ेगी साथ में भूमि की उत्पादन क्षमता को बरकरार रखने में सहायता मिलेगी। पोषण और खाद्य सुरक्षा में दुग्ध उत्पादों की बहुत बड़ी भूमिका है। यह सब किसान की आय बढ़ाने में सहायक सिद्ध होगा। पशुओं द्वारा विसर्जित पदार्थ गोबर व मल-मूत्र ईंधन के रूप में, कम्पोस्ट खाद के रूप में उपयोग किया जा रहा है जिसे मिट्टी की उर्वरकता को सुधारने में उपयोग किया जाता है। दूसरी तरफ खेतों से प्राप्त चारा एवं उप-उत्पादों को पशुओं के भोजन के लिए उपयोग किया जाता है। पशुओं के गोबर को बायो गैस के रूप में प्रयोग करके बायो गैस खाद तैयार किया जा सकता है जो प्रमुख पोषक तत्वों के साथ सूक्ष्म पोषक तत्व उपलब्ध कराता है। इस प्रकार यह जहां भूमि की संरचना में सुधार करता है

वहीं दूसरी तरफ फसल के उत्पादन में वृद्धि होती है। इसके उपयोग से रासायनिक उर्वरकों की निर्भरता में कमी आयेगी जिससे लागत बढ़ती है और वातावरण को प्रदूषित करती है। किसान वर्मी कम्पोस्ट व्यवसाय अपना कर अपनी आय बढ़ा सकता है। वर्मी कम्पोस्ट के उपयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति, जलधारण क्षमता एवं भूमि की संरचना में सुधार होता है तथा पौधों में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है जिससे कीट व बीमारियों का प्रकोप कम होता है।

इस समय अकेला कृषि व्यवसाय सीमांत एवं छोटे किसानों के लिए उनके सामाजिक एवं आर्थिक विकास हेतु पर्याप्त नहीं है। एकीकृत कृषि प्रणाली सीमांत एवं लघु किसानों के लिए लाभप्रद है इसमें फसल उत्पादन के साथ-साथ अन्य व्यवसाय अपना कर अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं। इस प्रकार किसान कम क्षेत्र में भी अधिक लाभ प्राप्त कर सकता है और अपनी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में सुधार ला सकता है। मुर्गी पालन से एक उद्यम का बेकार पदार्थ दूसरे उद्यम के लिए आगत का कार्य करता है। मुर्गी की खाद में सभी पोषक तत्व अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। मुर्गियों द्वारा विसर्जित पदार्थ तथा गोबर मछलियों के भोजन के रूप में प्रयोग करके, मछलियों के दाने पर होने वाले खर्च को कम किया जा सकता है और अपनी आय को किसान बढ़ा सकता है। इस प्रकार एकीकृत कृषि प्रणाली अपना कर किसान अपने प्राकृतिक संसाधन का उचित प्रयोग कर सकता है। किसान निम्नलिखित कृषि प्रणाली को अपनी स्थिति के अनुसार अपनाकर अपनी आय बढ़ा सकते हैं :

1. फसल + डेयरी
2. फसल+डेयरी+मुर्गीपालन
3. फसल+डेयरी+बागवानी (फल, फूल एवं सब्जी)
4. फसल+डेयरी+बकरी पालन
5. फसल+डेयरी+मुर्गीपालन+मछली पालन
6. फसल+डेयरी+बागवानी+मछली पालन+मुर्गीपालन+वर्मी कम्पोस्ट
7. फसल+डेयरी+बागवानी+मधुमक्खी पालन+मछली पालन+मशरूम उत्पादन।



## आवश्यक सूचना

“हरियाणा खेती” मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

— सह-निदेशक (प्रकाशन)

<sup>1</sup> प्रशिक्षण सहायक

# भारतीय कृषि : चुनौतियाँ

रिद्धम कक्कड एवं हरदीप सिंह श्योराण

हरियाणा स्पेस एप्लीकेशन्स सेंटर

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

वर्तमान में भारतीय कृषि कम होते जल संसाधन और बढ़ते पर्यावरणीय तनाव की स्थितियों के तहत मानव एवं पशुओं की बढ़ती आबादी की जरूरतों को पूरा करने के लिए कम से अधिक उत्पादन करने की चुनौतियों का सामना कर रही है। इसे हासिल करने के लिए, अधिकतर ऐसे किसान जिनके पास दो एकड़ तक जमीन है, उन्हें उत्पादन बढ़ाने, आय बढ़ाने और प्राकृतिक संसाधनों तथा पर्यावरण का प्रबंधन करने के लिए उपलब्ध सर्वोत्तम टेक्नोलॉजी तथा वैज्ञानिक खेती की विधियों को उपलब्ध कराना होगा। दुनिया की आबादी प्रतिदिन 2,50,000 बढ़ने का अनुमान है और यह 2050 तक 900 करोड़ तक पहुंच जायेगी तथा इस आबादी का पेट भरने के लिए हमें 45 करोड़ टन खाद्यान्न की ज़रूरत पड़ेगी। विकासशील देशों में भूखे और कुपोषण लोगों में ग्रामीण लोगों का प्रतिशत अधिक है, कृषि और ग्रामीण क्षेत्र में विकास को बढ़ावा देने के लिए होने वाले प्रयत्न समावेशी विकास को बढ़ावा देने की रणनीति के महत्वपूर्ण घटक हो सकते हैं। अभी भी बड़े पैमाने पर एक आम सहमति है कि अर्थव्यवस्था की शेष घटकों की अपेक्षा कृषि पीछे है और यह भारत के सकल उच्च आर्थिक विकास एवं गतिशीलता को मदद करने के लिए और बेहतर कर सकता है और करना चाहिए।

**फसल क्षति :** खाद्यान्न की सर्वाधिक क्षति खरपतवार के कारण 28 प्रतिशत, रोग के कारण 23 प्रतिशत, भंडारण के दौरान 10 प्रतिशत, चूहों के कारण 8 प्रतिशत और अन्य कारणों से 6 प्रतिशत होती है। औसत उपज का 20 से 30 प्रतिशत कीटों के कारण नुकसान हो जाता है। भारत में खरपतवारों, कीटों, रोगों, चूहों आदि के कारण साल भर के दौरान होने वाली कुल क्षति, हमारे खाद्यान्न उत्पादन का लगभग 28 प्रतिशत है, जिसका मूल्य रु. 90000 करोड़ है और यह कुछ लाख बढ़ भी सकती है। दूसरे शब्दों में 2002-03 में खाद्यान्न का उत्पादन 17.48 करोड़ टन था और रु. 90000 करोड़ मूल्य का नुकसान था, मौजूदा एमएसपी के साथ यह नुकसान और अधिक लगभग रु. 250000 से रु. 300000 करोड़ प्रतिवर्ष हो सकता है। अतः संसद में प्रश्नोत्तर के दौरान, स्थायी समिति ने खरपतवारनाशकों, कीटनाशकों एवं फफूंदनाशकों के अधिक इस्तेमाल की सिफारिश की है।

**कृषि योग्य भूमि में कमी :** भारत में प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि की मात्रा लगातार गिर कर 1950 के दशक में 0.52 हैक्टेयर से 2002 में 0.25 हैक्टेयर तक कम हुई है। बढ़ती आबादी के कारण, आगे इसमें 2025 तक 0.19 हैक्टेयर और 2050 तक 0.16 हैक्टेयर तक की कमी होने की उम्मीद है। वर्ष 2000-01 से 2010-11 की अवधि के दौरान 10 वर्षों में, भारत

की 16,000 वर्ग किलोमीटर भूमि या सकल कृषि योग्य भूमि के 0.8 प्रतिशत भूमि की क्षति हुई है। वास्तव में, खेती के अंतर्गत आने वाली भूमि तो स्थिर रही और उसी अवधि के दौरान शहरी क्षेत्र के तहत इस्तेमाल होने वाली भूमि 24,000 वर्ग किलोमीटर तक पहुंच गयी। इनमें से अधिकांश काम ग्रामीण भूमि की कीमत पर होता रहा। जैसे-जैसे शहरों का विकास होता है वैसे-वैसे उसके आसपास की कृषि योग्य भूमि में कमी होने लगती है। इसकी वजह से, आबादी की खाद्यान्न एवं पोषण संबंधी जरूरतों के लिए उपलब्ध मौजूदा कृषि योग्य भूमि पर अत्यधिक दबाव होता है।

**पानी की कमी :** खेती के लिए अधिक पानी की निकासी के कारण भूजल की आपूर्ति में कमी एक बड़ी समस्या है। ऐसा इसलिए है क्योंकि भूजल एक खुला-सुगम संसाधन है और कोई भी व्यक्ति अपने खेत के अंदर से पानी निकाल सकता है यह देखते हुए कि कैसे भारत में भूस्वामित्व टुकड़ों-टुकड़ों में है, लाखों किसान और उसके पास औसतन दो हैक्टेयर से भी कम खेती की जमीन है। आम जनों की यह त्रासदी निवारण योग्य नहीं है। भारत ने वर्ष 2010 में 251 बीसीएम भूजल की निकासी की जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका ने मात्र 112 बीसीएम ही निकाला। इसके आगे, भारत का निकासी दर 1980 में 90 बीसीएम से तेजी से लगातार बढ़ा है जबकि यह दर संयुक्त राज्य अमेरिका में, 1980 के स्तर से थोड़ा अधिक या कम बना रहा है।

**कीटनाशकों की कम खपत :** भारत में कीटनाशकों की प्रति हैक्टेयर खपत दुनिया में सबसे कम है और यह फिलहाल यूके में 5.7 किग्रा/हैक्टेयर और चीन में 20 गुना अधिक 13 किग्रा/हैक्टेयर के मुकाबले 0.6 किग्रा/हैक्टेयर है। उपज बढ़ाने एवं अपनी भारी आबादी के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए भारत में कृषि रसायनों के प्रवेश को बढ़ाना होगा। कीटनाशकों की मांग प्रकृति चक्र के अधीन होती है। और यह समय से होने वाली वर्षा तथा उसके वितरण से प्रभावित होती है। आंध्र प्रदेश (तेलंगाना और सीमांश सहित), महाराष्ट्र और पंजाब सबसे अधिक 45 प्रतिशत कीटनाशक खपत करने वाले राज्य हैं। कीटनाशकों के व्यापक इस्तेमाल के कारण यहां सुनिश्चित (बीमित) फसल की भूमि में विस्तार होता रहा है। भारत में शीर्ष सात राज्य मिल कर कुल 70 प्रतिशत फसल सुरक्षा के लिए रासायनिक पदार्थों का उपयोग करते हैं।

**कीटनाशकों के बारे में मिथक :** कृषि रसायन खरपतवार, कीड़ों, कीटों से हमारी फसल की सुरक्षा करते हैं और हमारी आय बढ़ाते हैं। इसके बावजूद कुछ गैर सरकारी संगठन, भद्र पुरुष, पर्यावरणविद् और मीडिया अपने गुप्त उद्देश्यों के कारण तथा स्वयं ज्ञात कारणों की वजह से पर्यावरण तथा मानव चिंता एवं सुरक्षा की आड़ में फसल उगाने में कीटनाशकों के इस्तेमाल के विरुद्ध कड़े स्वर में आवाज उठाते रहे हैं। हाल ही में एक एनजीओ की रिपोर्ट आई जिसमें उन्होंने कहा कि सब्जियों एवं ताजे फलों में एल्टिडिन, डीएल्टिडिन, हेप्टाक्लो और क्लोरडेन जैसे प्रतिबंधित कीटनाशकों के अवशेष हैं। इन कीटनाशकों को भारत में लगभग 30 वर्ष पहले ही प्रतिबंधित किया जा चुका है अब ताजे फलों और



सब्जियों में इन कीटनाशकों के अवशेष मिलने की कोई संभावना नहीं है। दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा गठित समिति ने नमूनों को इकट्ठा किया और विश्लेषण के लिए 4 एनबीएल मान्यता प्राप्त प्रयोगशालाओं में दे दिया। किसी भी नमूने में एमआरएल से अधिक एवं एल्ड्रिन, डीएल्ड्रिन, हेप्टाक्लोर और क्लोरडेन जैसे इन कीटनाशकों के अवशेष नहीं मिले। इससे साबित होता है कि एनजीओ की रिपोर्ट पूर्वाग्रह से ग्रसित एवं पूरी तरह से गलत थी।

पर्यावरण संबंधी एनजीओ के मीडिया रिपोर्टर के अलावा, ग्रीनपीस ने हाल ही में कुछ निराधार खतरनाक अवशेषों के आंकड़ों को प्रकाशित कर भारतीय चाय उद्योग को बदनाम किया था। उनको चुनौती दी गयी लेकिन वे अपने आंकड़ों की पुष्टि नहीं कर सके। ये एनजीओ जैविक उत्पादों की बिक्री पर जोर देते आ रहे हैं जो तथाकथित जैविक भोजन होते हैं और जिन्हें कीटनाशकों से पूर्णतः मुक्त होना चाहिए उनमें कीटनाशकों के इस्तेमाल से होने वाली आधुनिक खेती के तहत उगने वाली फसलों के मुकाबले अधिक कीटनाशक होता है। सरकारी प्रयोगशालाओं (एआईएनपीपीआर, आईसीएआर) के 166 नमूनों के विश्लेषण में दर्शाया गया कि 27 प्रतिशत नमूनों में कीटनाशक के अवशेष पाये गये इनमें से 4.8 प्रतिशत जैविक सब्जियों के नमूनों में कीटनाशक के अवशेष एमआरएल से अधिक थे।



(पृष्ठ 21 का शेष)

**कृषि औजार :** कृषि औजारों पर पिछले कर व्यवस्था में कर 12.5 प्रतिशत था लेकिन वस्तु एवं सेवा कर में अब यह 12 प्रतिशत है। मिट्टी की तैयारी, फसल काटने वाली मशीन, रोटोवेटर, हैरो, डिस्क हल, सीडर्स, प्लांटर्स, लॉन या स्पोर्ट्स ग्राउंड रोलर्स इत्यादि पर वस्तु एवं सेवा कर 12 प्रतिशत है। कृषि औजारों में हाथ से संचालित या जानवरों से संचालित उपकरण जैसे फावड़ियों, कुल्हाड़ियों, कांटे आदि पर वस्तु एवं सेवा कर 0 प्रतिशत है। यह विशेषतया छोटे किसानों के लिए लाभकारी होगा।

कृषि क्षेत्र में वस्तु एवं सेवा कर पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि नये कर व्यवस्था में उपभोक्ताओं पर कुल कर का बोझ कम होगा। उर्वरक, ट्रैक्टर और कृषि औजारों पर वस्तु एवं सेवा कर कम हुआ है जिससे किसानों की लागत आय कम होगी, लेकिन दूसरी तरफ देखा जाये तो कीटनाशक और ट्रैक्टर आदानों पर नए कर व्यवस्था में अधिक कर देना पड़ता है, जिससे उनकी लागत आय बढ़ जाएगी।



## कृषि रसायन: भूख और खाद्य सुरक्षा का सेतु

रिद्धम कक्कड एवं हरदीप सिंह श्योराण

हरियाणा स्पेस एप्लीकेशन्स सेंटर

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हर सिकके के दो पहलू होते हैं, यह कहावत भारतीय कृषि के बारे में बिल्कुल सटीक बैठती है। भारतीय कृषि के एक तरफ विकास है जबकि दूसरी ओर भूख और कुपोषण है।

एक तरफ हम सभी के लिए यह गर्व का विषय है कि हमारा देश जीडीपी में रु. 23.99 लाख करोड़ के योगदान के कारण विश्व में दूसरा सबसे बड़ा योगदान करने वाला देश बन गया है और कृषि सामग्री के रु. 3.16 लाख करोड़ मूल्य के वार्षिक निर्यात के कारण विश्व में पांचवां सबसे बड़ा निर्यातक देश बन गया है। जबकि दूसरी ओर विश्व में एक कृषि प्रधान देश होने के बावजूद, भारत सर्वाधिक 1946 लाख कुपोषित लोगों का घर है। इसका मतलब है कि 15 प्रतिशत से भी अधिक भारतीय आबादी, जो कुल संख्या और देश की आबादी में कुपोषित लोगों के अनुपात के मामले में चीन से भी अधिक है, कुपोषित है। वर्ष 2015-16 में भारत के सकल घरेलू उत्पाद (ग्रॉस डोमेस्टिक प्रोडक्ट-जीडीपी) में 7.6 की वृद्धि हुई लेकिन इस उच्च आर्थिक विकास की तब्दीली उच्च खाद्य खपत में नहीं हुई है, अकेले समग्र बेहतर भोजन के मामले में सलाह है कि गरीब और भूखे लोगों को इस समग्र विकास से बहुत लाभ नहीं मिल पाया है। आजादी के शुरुआती सालों में कृषि कार्य जीवन यापन के स्तर पर तकनीकी ज्ञान के अभाव एवं कम कृषि संसाधनों के साथ किया जाता था। हमारे पास केवल 18.1 प्रतिशत कृषि योग्य क्षेत्र में ही सिंचाई की व्यवस्था थी और हम 1950-51 में 2 किग्रा/है. से भी कम एन.पी.के. का इस्तेमाल करते थे। लगभग 36.11 करोड़ भारतीय आबादी का पेट भरने के लिए हमारा खाद्यान्न उत्पादन मात्र 5.08 करोड़ टन था। 1960 के दशक में हम 'जहाज-से-मुँह तक' (अधीनस्था) के अस्तित्व में रहते थे, गेहूं से लदे अमरीकी जहाज हमारे बंदरगाहों पर खड़े होते थे, और खाद्यान्न सीधे राशन की दुकानों में भेजा जाता था। भारत में हरित क्रांति वह अवधि थी जब भारतीय कृषि ने उन्नत कृषि वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी के कारण अपनी उपज बढ़ायी। इसने भारत जैसे विकासशील देश को पुरानी खाद्यान्न संबंधी कमी को दूर करने में मदद की। भारत में इसकी शुरुआत 1960 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में हुई और शुरुआती चरण के दौरान, खाद्यान्न उत्पादन में विशेष रूप से पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में वृद्धि हुई। अधिक उपज वाले बीज की किस्मों (हाइब्रिड) की शुरुआत और रासायनिक उर्वरकों का अधिक इस्तेमाल तथा सिंचाई ने अधिक उत्पादन में मदद की जो देश को खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भर बनाने के लिए ज़रूरी था। आज के परिदृश्य में भारतीय कृषि आगे बढ़ रही है साथ ही इसकी चुनौतियां भी अपना आकार ले रही हैं। जैविक सब्जियों के नमूनों में कीटनाशक के अवशेष एमआरएल से अधिक थे।



**खाद्य सुरक्षा में कृषि रसायनों की भूमिका :** वर्ष 2022 तक विश्व में सर्वाधिक आबादी वाला देश बनने में भारत चीन को पीछे छोड़ देगा। वर्तमान में 134 करोड़ की आबादी के साथ भारत फिलहाल 2.4 प्रतिशत भूसाधन, 4 प्रतिशत जल संसाधन एवं कीटों, खरपतवारों तथा रोगों के कारण फसल उत्पादन में होने वाले 20 से 30 प्रतिशत संभावित नुकसान के साथ, विश्व जनसंख्या का लगभग 17.84 प्रतिशत आबादी का निर्वाहन करता है। ये वास्तव में चुनौतीपूर्ण समय है। इन संख्याओं के साथ तालमेल रखते हुए, देश को न केवल अपना कृषि उत्पादन बढ़ाना होगा बल्कि देश की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए उत्पादकता को बढ़ाना होगा। फसल सुरक्षा एवं फसल वृद्धि समाधान, सर्वोत्तम वैश्विक पद्धतियों पर आधारित और उपलब्ध नवीनतम प्रौद्योगिकी इस प्रश्न के उत्तर हैं कि भविष्य के लिए किस तरह से खाद्य सुरक्षा की जाये। सटीक फसल सुरक्षा के लिए कुछ अच्छी आने वाली प्रवृत्तियाँ और समाधान हैं जिनमें कृषि रसायन, सस्य विज्ञान, उर्वरता, बीज उपचार, जैव प्रौद्योगिकी विकास आदि शामिल हैं। देश में अगली पीढ़ी की कृषि को एक प्रदूषित परिदृश्य के अंतर्गत ऐसे सभी संभावित समाधानों का बेहतर ढंग से इस्तेमाल करते हुए उन्हें अपनाया होगा। जैसा कि बताया गया है कि यह क्षेत्र अनेक चुनौतियों का सामना कर रहा है और उनका समाधान भारत को गुणवत्तापूर्ण फसल सुरक्षा रसायन का एक वैश्विक उत्पादन केंद्र बनने में मदद करेगा। यूएस, जापान और चीन के बाद भारत कृषि रसायनों का चौथा सबसे बड़ा वैश्विक उत्पादक है। इस क्षेत्र ने वित्तीय वर्ष 2015 में रु. 292.79 करोड़ दौरा किये और प्रतिवर्ष 7.5 प्रतिशत की दर से वित्तीय वर्ष 2020 तक इसके रु. 419.23 करोड़ तक पहुंचने की उम्मीद है। लगभग 50 प्रतिशत मांग घरेलू उपभोक्ताओं से आती है शेष निर्यातकों से। उसी अवधि के दौरान, मांग प्रतिवर्ष 6.5 प्रतिशत की दर से बढ़ने तथा निर्यात प्रतिवर्ष 9 प्रतिशत की दर से बढ़ने की उम्मीद है।

कृषि रसायन रोगों, कीटों और खरपतवारों से फसलों की सुरक्षा करते हैं, इस प्रकार वे एक अच्छी फसल कटाई एवं भरपूर खाद्य पदार्थ को सुनिश्चित करते हैं। उपभोक्ता जिन खाद्य पदार्थों को खरीदते हैं वे चाहते हैं कि वे ताजे, उच्च गुणवत्ता वाले और रोग, फफूंद एवं कीट क्षति से रहित हों। यह आसान काम नहीं है, क्योंकि पूरे विश्व में फसलों को 80,000 तरह के फफूंद, 30,000 तरह के खरपतवारों, 300 सूत्रकृमियों और 10,000 शाकाहारी कीटों का सामना करना होता है। नये कृषि रसायनों के विषय में होने वाले व्यापक अनुसंधान अत्यंत महत्व के विषय हैं, यदि हम फसलों की सुरक्षा करना चाहते हैं और खास तरह के कृषि रसायनों के प्रति पौधों के प्रतिरोध से बचना चाहते हैं। यदि हम फसल क्षति की सुरक्षा करना और कृषि रसायनों के उपयुक्त तथा उचित इस्तेमाल के द्वारा उत्पादन बढ़ाते हैं तो हम खाद्य सुरक्षा के अपने लक्ष्य पर पहुंच सकते हैं। अर्थात् कृषि रसायन भूख एवं खाद्य सुरक्षा के बीच की खाई को पाटने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दूसरे शब्दों में कृषि रसायनों के इस्तेमाल के बिना अगली पीढ़ी को पर्याप्त, सुरक्षित खाद्य आपूर्ति की गारंटी नहीं दी जा सकती है।



## परम्परागत कृषि विकास योजना

रूपेन्द्र कुमार<sup>1</sup>, राजेश कुमार<sup>2</sup> एवं कृष्ण यादव

विस्तार शिक्षा निदेशालय

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में जैविक खेती की परंपरा और महत्व आरम्भ से ही रही है। पूर्ण रूप से जैविक खादों पर आधारित फसल पैदा करना जैविक खेती कहलाता है। यह दुनिया के लिए भले ही नई तकनीक हो, लेकिन देश में परंपरागत रूप से जैविक खाद पर आधारित खेती होती आई है। जैविक खाद का इस्तेमाल करना देश में परंपरागत रूप से होता रहा है।

इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ ऑर्गेनिक एग्रीकल्चर मूवमेंट (आई एफ ओ ए एम) द्वारा किए गए 2013 के अध्ययन के अनुसार, पूरे विश्व में लगभग दो लाख किसान जो जैविक खेती के तरीकों का अभ्यास करते हैं उन फार्मों का लगभग 80% भारत में है। यह मानना गलत नहीं होगा कि हमारे देश में एक जैविक क्रांति का केंद्र बिंदु है जो पूरे विश्व को अपनी क्रांति लहर में समेट लेगा। भारत में जैविक खेती की बहुतायत निश्चित रूप से आश्चर्य की बात नहीं है, क्योंकि यह सदियों पुराने हमारे पूर्वजों द्वारा की जाने वाली खेती प्रथाओं की एक निरंतरता है।

हालांकि पिछले कुछ वर्षों में रासायनिक खादों पर निर्भरता बढ़ने के बाद से जैविक खाद का इस्तेमाल नगण्य हो गया है। आज के समय में बढ़ते हुए रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के प्रयोग को देखते हुए जैविक खेती भारत में और भी महत्वपूर्ण बन गई है। दुनिया भर में जैविक खाद्य के लिए मांग में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। इन जैविक खेती की तकनीक को बढ़ावा मिलने से भारत इन खाद्य पदार्थों के विशाल निर्यात की संभावनाओं को साकार कर सकता है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए, भारत सरकार ने परम्परागत कृषि विकास योजना को शुरू किया है।

**परम्परागत कृषि विकास योजना:** राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन के अंतर्गत मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन का एक सविस्तारित घटक है। परम्परागत कृषि विकास योजना (पीकेवीवाई) के तहत जैविक खेती को क्लस्टर पद्धति और पीजीएस प्रमाणीकरण द्वारा प्रोत्साहित किया जाता है। भारत सरकार कृषि एवं सहकारिता विभाग द्वारा वर्ष 2015-16 से एक नई परम्परागत कृषि विकास योजना का शुभारम्भ किया गया है। इस योजना का उद्देश्य जैविक उत्पादों के प्रमाणीकरण और विपणन को प्रोत्साहन करना है। योजनान्तर्गत सम्मिलित घटक एक सविस्तारित घटक है। योजनान्तर्गत सम्मिलित घटक सहभागिता जैविक प्रतिभूति प्रणाली या पार्टीसिपेटरी गारन्टी सिस्टम (पी जी एस) को सुदृढ़ता

<sup>1</sup>सहायक प्राध्यापक, डी.ए.वी. महाविद्यालय, जालंधर, पंजाब।

<sup>2</sup>डी.टी.पी. ऑपरेटर, चौ.च.सिंह.कृ.वि. हिसार।

प्रदान करने के तारतम्य में है। इसी दिशा में भारत सरकार कृषि एवं सहकारिता विभाग द्वारा क्षेत्रीय परिषद (रीजनल काउन्सिल) के रूप में राष्ट्रीय जैविक खेती केन्द्र गाजियाबाद से पंजीयन करवाकर पीजीएस लागू करने संबंधी कार्यवाही के लिए जिला आत्मा समितियों को अधिकृत किया गया है।

योजना के अंतर्गत एनजीओ के जरिए प्रत्येक क्लस्टर को विभिन्न सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएंगी। एक क्लस्टर पर कुल 14.35 लाख रुपये खर्च किए जाएंगे। एक वर्ष में 6.80 लाख रुपये, दूसरे वर्ष में 4.81 लाख रुपये व तीसरे वर्ष में 2.72 लाख रुपये की मदद प्रत्येक क्लस्टर को दी जाएगी। इन रुपयों का इस्तेमाल किसानों को जैविक खेती के बारे में बताने के लिए होने वाली बैठक, एक्सपोजर विज़िट, ट्रेनिंग सत्र, ऑनलाइन रजिस्ट्रेशन, मृदा परीक्षण, आर्गेनिक खेती व नर्सरी की जानकारी, लिक्विड बायोफर्टीलाइजर, लिक्विड बायोपेस्टीसाइड उपलब्ध कराने, नीम तेल, कंपोस्ट और कृषि यंत्र आदि उपलब्ध कराने पर किया जाएगा। वर्मी कम्पोस्ट का उत्पादन एवं उपयोग, बायोफर्टीलाइजर और बायोपेस्टीसाइड के बारे में प्रशिक्षण पंचगव्य के उपयोग और उत्पादन पर प्रशिक्षण आदि इसके साथ ही जैविक खेती से पैदा होने वाले उत्पादन की पैकिंग व ट्रांसपोर्टेशन के लिए भी अनुदान दिया जाएगा।

**अपेक्षित परिणाम :** इस योजना की परिकल्पना नीचे दिए गए उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए की गई है, जो इस प्रकार से हैं:

1. प्रमाणित जैविक खेती के माध्यम से वाणिज्यिक जैविक उत्पादन को बढ़ावा देना।
2. उपज कीटनाशक मुक्त होगा जो उपभोक्ता के अच्छे स्वास्थ्य को बढ़ावा देने में योगदान देगा।
3. यह किसानों की आय में बढ़ोत्तरी करेगा और व्यापारियों के लिए संभावित बाजार देगा।
4. यह उत्पादन आगत के लिए प्राकृतिक संसाधन जुटाने के लिए किसानों को प्रेरित करेगा।

#### कार्यक्रम का कार्यान्वयन

- ◆ किसानों के समूहों को परम्परागत कृषि विकास योजना के तहत जैविक खेती शुरू करने के लिए प्रेरित किया जाएगा। इस योजना के तहत जैविक खेती का काम शुरू करने के लिए 50 या उससे ज्यादा ऐसे किसान एक क्लस्टर बनाएंगे जिनके पास 50 एकड़ भूमि होगी। इस तरह तीन वर्षों के दौरान जैविक खेती के तहत 10,000 क्लस्टर बनाये जायेंगे, जो 5 लाख एकड़ के क्षेत्र को कवर करेंगे।
- ◆ प्रमाणीकरण पर व्यय के लिये किसानों पर कोई भार/दायित्व नहीं होगा।

- ◆ फसलों की पैदावार के लिए, बीज खरीदने और उपज को बाजार में पहुँचाने के लिए हर किसान को तीन वर्षों में प्रति एकड़ 20,000 रुपये दिए जायेंगे।
- ◆ परंपरागत संसाधनों का उपयोग करके जैविक खेती को प्रोत्साहित किया जाएगा और जैविक उत्पादों को बाजार के साथ जोड़ा जाएगा।
- ◆ यह किसानों को शामिल करके घरेलू उत्पादन और जैविक उत्पादों के प्रमाणीकरण को बढ़ाएगा।

#### घटक और सहायता का पैटर्न:

- ◆ क्लस्टर के द्वारा पार्टिसिपेटरी गारंटी सिस्टम (पीजीएस) को अपनाना।
- ◆ पीजीएस प्रमाणीकरण के लिए 50 एकड़ भूमि के साथ किसानों/स्थानीय लोगों को क्लस्टर बनाने के लिए प्रोत्साहित करना।
- ◆ लक्षित क्षेत्रों में जैविक खेती क्लस्टर निर्माण हेतु किसानों के बैठकों और विचार विमर्श के आयोजन के लिए / रु. 200/किसान
- ◆ क्लस्टर के सदस्य को जैविक खेती क्षेत्रों का एक्सपोजर विजित कराना / रु. 200/- किसान
- ◆ पीजीएस व्यवस्था के लिए क्लस्टर से संसाधन व्यक्ति की पहचान (एलआरपी) करना
- ◆ क्लस्टर के सदस्यों को जैविक खेती पर प्रशिक्षण (3 प्रशिक्षण / रु. 20000 प्रति प्रशिक्षण)

#### पीजीएस प्रमाणीकरण और गुणवत्ता नियंत्रण

1. पीजीएस प्रमाणीकरण पर 2 दिवसीय प्रशिक्षण / रु. 200 प्रति एलआरपी
2. प्रशिक्षकों (20) का प्रशिक्षण लीड संसाधन व्यक्ति /
3. किसानों का ऑनलाइन पंजीकरण / रु. 100 प्रति क्लस्टर सदस्य × 50
4. मृदा नमूना संग्रह और परीक्षण (21 नमूने/वर्ष 1 क्लस्टर)/रु. 90 प्रति नमूना तीन साल के लिए
5. पीजीएस प्रमाणीकरण के लिए जैविक विधियों, इस्तेमाल किए गए आगंतों, अनुगमन किये गए क्रॉपिंग पैटर्न, प्रयोग में लाये गए जैविक खाद और उर्वरक आदि के रूपांतर की प्रक्रिया प्रलेखन / रु. 100 प्रति क्लस्टर सदस्य × 50
6. क्षेत्र के क्लस्टर सदस्यों का निरीक्षण / रु. 400 प्रति निरीक्षण × 3 (3 निरीक्षण प्रति वर्ष प्रति क्लस्टर किया जाएगा।)
7. एन एवी एल में नमूने का विश्लेषण (प्रति वर्ष प्रति क्लस्टर 8 नमूने होंगे) / रु. 10000/नमूना
8. प्रमाणीकरण शुल्क
9. प्रमाणीकरण के लिए प्रशासनिक व्यय

क्लस्टर पद्धति के माध्यम से खाद प्रबंधन और जैविक नाइट्रोजन कटाई के लिए जैविक गांव को अपनाना।

#### एक क्लस्टर में जैविक खेती के लिए कार्य योजना बनाना:-

1. भूमि का रूपांतरण जैविक की ओर / रु. 1000/एकड़ × 50
2. फसल प्रणाली की शुरुआत (जैविक बीज खरीद या जैविक नर्सरी स्थापना / रु. 500/एकड़/वर्ष × 50 एकड़ जमीन)
3. परंपरागत जैविक आगत उत्पादन ईकाई जैसे पंचागत्य, बीजामृत और जीवामृत आदि / रु. 1500/यूनिट/एकड़ × 50 एकड़
4. जैविक नाइट्रोजन फसल रोपण (ग्लिरिसीडिया, सेरबनिया आदि) / रु. 2000/यूनिट/एकड़ × 50 एकड़
5. वानस्पतिक अर्क उत्पादन इकाइयां (नीम केक, नीम का तेल) / रु. 1000/यूनिट/एकड़ × 50 एकड़

#### एकीकृत खाद प्रबंधन

1. लिक्विड बायोफर्टिलाइजर कांसोर्टिया (नाइट्रोजन फिक्सिंग/फास्फेट सोलुबीलाईजिंग/पोटेशियम मोबिलाईजिंग बायो-फर्टिलाइजर) / रु. 500/ एकड़ × 50
2. लिक्विड बायोपेस्टीसाइड (ट्राइकोडर्मा विरीडे, सुडोमोनास फ्लोरीसेस, मेटारहिजियम, बेविऔरिए बसिसअना, पेसलोम्यसेस, वेर्तिसिल्लिरु एम) / रु. 500/ एकड़ × 50
3. नीम केक/नीम तेल / रु. 500/ एकड़ × 50
4. फास्फेट रिच आर्गेनिक बैनमोर...../रु. 1000/ एकड़ × 50
5. वर्मी कम्पोस्ट (साइज 7×3×1) / रु. 5000/यूनिट × 50

#### कस्टम हायरिंग चार्ज (सीएचसी)

1. कृषि औजार (एसएमएम दिशा-निर्देशों के अनुसार) पावर टिलर (कोलो वीडर, पैटी श्रेशर, फर्रो ओपनर, स्प्रेयर, गुलाब कैन, ऑप पैन बैलेंस)।
2. बागवानी के लिए वॉक इन टनल्स (एम. आई. डी. एच. के दिशा-निर्देशों के अनुसार)
3. पशु खाद के लिए मवेशी, बछड़ाघर/पोल्ट्री/फिशरी (गोकुल स्कीम के दिशा-निर्देशों के अनुसार)

#### क्लस्टर के जैविक उत्पादों की पैकिंग, लेबलिंग और ब्रांडिंग

1. पीजीएस लोगों के साथ पैकिंग सामग्री व होलोग्राम मुद्रण / रु. 2500/ एकड़ 50
2. जैविक उत्पाद दुलाई (चार व्हीलर, 1.5 टन भार क्षमता)/रु. अधिकतम 120000 क्लस्टर के लिए।
3. जैविक मेला (अधिकतम सहायता / रु. 36330 प्रति क्लस्टर दी जाएगी।)



## Suitability of Fertilizers for Different Crops and Soil Conditions

Dev Raj, Sunita Sheoran and M.S.Grewal  
Department of Soil Science  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Fertilizers are defined as materials having definite chemical composition with a high analytical value that supply plant nutrients in available form. They are usually manufactured by industries and sold with a trade name. The fertilizer use efficiency is generally low in India, which not only affect the crop yield and farmers' profitability but also poses serious threat to environmental quality, including soil and ground water. The fertilizer use efficiency can be increased by selecting a suitable fertilizer for different crops and soil conditions.

### A. Suitability of Nitrogenous fertilizers for different soil conditions and crops

1. For paddy, sugarcane and potato, ammonical and ammonia forming fertilizers, namely, ammonium sulphate, ammonium chloride and urea should be used.
2. Ammonium chloride should not be used in chloride sensitive crops (tobacco, potato and grapes, etc.).
3. For wheat, nitrate and ammonium forming fertilizers, namely, CAN, and ammonium sulphate is either superior to or at par with amide sources, namely, urea.
4. Ammonium sulphate, urea, ammonium sulphate nitrate and CAN are equally effective for maize. However under high rainfall region ammonium sulphate is better than urea and CAN because nitrate and urea are highly prone to leaching under such conditions.
5. Oilseeds and pulses prefer ammonium sulphate over other N- carriers due to the special role of sulphur in their nutrition.
6. For cotton, generally different sources of N have been found to be equally effective. In jute,  $\text{NH}_4^+$  sources proved superior to  $\text{NO}_3^-$  source.
7. Ammonium sulphate is especially suitable for soils deficient in available sulphur and for salt affected soils.
8. On dry soils, nitrate fertilizers are superior to other form of nitrogenous fertilizers.
9. Amide fertilizers are best suited for foliar spray.

## B. Suitability of phosphorus fertilizers for different soil conditions and crops

The phosphatic fertilizers are classified into three categories:

1. Mono calcium phosphate [ $\text{Ca}(\text{H}_2\text{PO}_4)$ ]- mono calcium phosphate readily soluble in water and most important compound in super phosphate and triple super phosphate.
2. Dicalcium phosphate [ $\text{Ca}_2\text{H}_2(\text{PO}_4)^2$ ]- Dicalcium phosphate is not soluble in water, but dissolve readily in weak dilute acids i.e. citric acid. Fertilizers of this group are dicalcium phosphate, basic slag and rhenania phosphate.
3. Tricalcium phosphate [ $\text{Ca}_3(\text{PO}_4)^2$ ]- Tricalcium phosphate neither soluble in water nor in weak acids, but soluble in strong mineral acids. Fertilizers of this group are rock phosphate, raw bone meal and steamed bone meal.

### Conditions favouring use of fertilizers containing water soluble phosphate

1. When soil is neutral or alkaline. Not suitable for acidic conditions, because water soluble phosphoric acid gets converted into unavailable iron and aluminium phosphates.
2. When a crop requires a quick start.
3. For short duration crops like paddy, wheat, jowar, ragi, maize, sorbean and vegetable crops.

### Conditions favouring use of fertilizers containing citric acid soluble phosphate

1. When soil is moderately acidic. Under low pH citric acid soluble phosphate gets converted into monocalcium phosphate or water soluble phosphate and there are less chances of phosphate getting fixed as iron and aluminium phosphates.
2. Where immediate results in terms of quick start to crops are not so important and fertilizer can be applied well before growth starts.
3. For long duration crops like sugarcane, tapioca, tea and coffee, etc.

### Conditions favouring use of fertilizers containing insoluble phosphate

1. Where the soil is strongly to extremely acidic and large quantity of phosphatic fertilizers are required to raise soil fertility. In these soils, the tricalcium

phosphate first converted to dicalcium phosphate and then monocalcium phosphate.

2. Where immediate effects are not so important.
3. For long duration fruit and plantation crops like tea, coffee, rubber, cocoa, oranges, coconut, etc., grown in acidic soils.

## C. Suitability of potassic fertilizers for different soil conditions and crops

**Murate of Potash (Potassium Chloride):** MoP is well suited for all soils and crops except chloride sensitive crops like tobacco, potato, tomato and grapes. Use of potassium chloride is discouraged in saline soils as it increases salt concentration in rhizosphere soil.

**Sulphate of Potash (Potassium Sulphate):** SoP is used in all soils and crops. It is also suitable for chloride sensitive crops and preferable in salt affected soils. It should not be used in flooded rice where sulphate reduction and hydrogen sulfide toxicity is a problem.

### General recommendations for fertilizers application

1. Nitrogenous fertilizers applied on soil surface reach the plant roots easily and rapidly. So these fertilizers should broadcast on the soil surface just before sowing.
2. Application of nitrogenous fertilizers on the soil surface followed by irrigation is good enough to meet the nitrogen requirement at critical stage of plant growth.
3. In light soils, nitrogen should be applied after irrigation, however in medium and heavy textured soils; it should be applied with irrigation water.
4. Since P moves slowly from the point of placement and get fixed in soil colloids. Therefore, to reduce the fixation, P fertilizers should be placed in such a way that these come in minimum contact with the soil particles and are readily accessible to plant roots.
5. Since potassic fertilizers move slowly in the soil, they should also be placed near root zone.
6. Apply Ca, S, Zn and Cu fertilizers as soil application i.e. broadcasting followed by incorporation.
7. Apply Mg and B either as soil application or foliar application.

In case of Fe and Mn, foliar spray is usually preferred.





# Agriculture Education Reforms in Indian Universities

Anil Kumar Malik<sup>1</sup>, Krishan Yadav and Sunil Kumar  
Directorate of Extension Education  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Agriculture sector has been given the priority status in the Indian economy because directly or indirectly more than 50% of the total work force is employed in this sector. Agriculture contributes about 14% in national GDP and is responsible for about 12% export. Agricultural education provides couple of educational activities with the primary aim of achieving human resource development for the rural economies of Nation. India's first green revolution was achieved by increasing about 5 times grain production, 9 times horticultural production, about 9.5 times milk production and 12 times fish production. This was perhaps due to the deep rooted agriculture education in this country. Education should lead to development of skilled human resource, basic research for knowledge generation, applied research for development of technology, system and package of practices and SMART livelihood by integration of science, management, agriculture, research and technology tools.



Today we need high quality agricultural graduates equipped with problem solving and creative skills with the ability to think and improve productivity of agricultural sector. Apart from the technical and generic skills, our graduates need leadership and entre-preneurial skills to build leading teams and put innovations into practice and respond to competitive

environments. There is need to articulate four T's i.e. Tradition, Technology, Talent and Trade to make agriculture an alternative field for livelihood and sustainable development. Traditional means what is our status as far as agriculture is concerned in our country, technology means what is present state of art of devices, system, process and package of practices available indigenously and internationally. The concept of talent is how to use innovation and creativity among all stakeholders of agriculture to make this profession remunerative and finally there is need to introduce concept of trading in agriculture field i.e. how to federate farmers into business group.

It is observed that education must include knowledge (basics, fundamental, theory and practices) to know what to do, skill to know how to do, ability to make work simple & convenient, experience for increasing efficiency and finally attitude & resources for doing work in actual. Thus we need updated syllabus with proper articulation of quality and reform. Quality assurance in higher agricultural education in the Country has been achieved through policy support, accreditation, framing of minimum standards for higher agricultural education, academic regulation, personnel policies, review of course curricula and delivery systems, development support for creating/strengthening infrastructure and facilities, improvement of faculty competence and admission of students through all India competitions. As first and most important step for quality improvement of education, the Indian Council of Agricultural Research has been periodically appointing Deans' Committees for revision of course curriculum. In the series, recommendation of 5<sup>th</sup> Deans' Committee had been made considering contemporary challenges for employability of passing out graduates and to adopt a holistic approach for quality assurance in agricultural education and declaring Agriculture as professional degree. The committee has recommended that in first year Agriculture courses related to traditional, in second year courses related to technology, in third year courses related to increase in talent of students and in final year courses related to trade or federating

<sup>1</sup>Ph.D. Scholar, CCSHAU, Hisar



students into business group should be planned. Further, the Committee has also recommended to introduce ICAR funded Student READY programme (Rural Entre-preneurship Awareness Development Yojna) in each UG course for one complete year period to promote skill development in the graduating students for specialized jobs in view of market needs and demands.

Student READY programme was conceptualized to re-orient graduates of Agriculture and allied subjects for ensuring and assuring employability and developing entre-preneurs for emerging knowledge intensive agriculture. The proposal envisages the introduction of the programme in all the Agricultural Universities as an essential pre-requisite for the award of degree to ensure hands on experience and practical training by adopting the following components depending on the requirements of respective discipline and local demands. Since Agriculture & its allied disciplines have been declared as Professional degree, therefore there is need to put more practical orientation, and efforts should be made to make our students job providers rather than job seekers. Component of this programme meant for entre-preneurship development is summarized as follows:

- ✓ Experiential Learning with Business Mode
- ✓ Rural Agriculture Work Experience
- ✓ In Plant Training/ Industrial Attachment
- ✓ Hands-on Training (HOT)/Skill Development Training
- ✓ Students' Projects

All the above mentioned components are interactive and are conceptualized for building skills in project development and execution, decision-making, individual and team coordination, approach to problem solving, accounting, quality control, marketing and resolving conflicts, etc. with end to end approach.

Experiential Learning (EL) helps the student to develop competence, capability, capacity building, acquiring skills, expertise, and confidence to start their own enterprise and turn job creators instead of job seekers. This is a step forward for “Earn while Learn” concept. The experiential learning provides the students an excellent opportunity to develop analytical and entre-preneurial skills, and knowledge through meaningful hands on experience, confidence in their ability to design and execute project work.

Hands-on Training (HOT)/Skill Development Training aim to make conditions as realistic as possible. The biggest benefit of hands-on training is the opportunity for repeated practice. Training programmes are more beneficial when they provide many opportunities for practicing a skill. The students will be provided such opportunities to become skilled in the identified practices/ methods and gain confidence. The ultimate aim is to make students ready to pursue the learned skills as their career.

The Rural Agricultural Work Experience (RAWE) helps the students primarily to understand the rural situations, status of agricultural technologies adopted by farmers, prioritize the farmers' problems and to develop skills & attitude of working with farm families for overall development in rural area. In Plant Training (IPT)/ Industrial Attachment Training, students will have to study a problem in industrial perspective and submit the reports to the University. Such in-plant trainings will provide an industrial exposure to the students as well as to develop their career in the high tech industrial requirements.

Students' projects work provide opportunities to students to learn several aspects that cannot be taught in a class room or laboratory. It may be adopted based

on the interest of students and expertise and facilities available with the College.


Number of innovative steps have been taken by ICAR in order to attract talented students and creating visibility of Agriculture Education in India. These are as follows:

- ✓ Declaring agriculture education as professional degree. All degrees in the disciplines of Agricultural Sciences are declared as professional courses.
- ✓ Launching of new agriculture under-graduate courses and syllabus based on 5<sup>th</sup> Dean's Committee. Courses of Agricultural Sciences are designed through integration of knowledge, skill, ability and experience.
- ✓ Articulation of tradition, technology, talent and trading components in 11 different major group of agriculture education.
- ✓ Started new programmes at under-graduate level i.e. bio-technology, sericulture, home science revised as community science and food nutrition and dietetics.
- ✓ Starting a new one year programme for entrepreneurship leading to 'Student READY (Rural Entre-preneurship Awareness Development Yojna). Components of this programme meant for entre-preneurship development are experiential learning with business mode, hands-on training/skill development training, rural agriculture work experience, in plant training/industrial attachment and students' projects.
- ✓ Enhanced from the present Rs. 1000 to 3000 per month/student for six months in student READY scheme.
- ✓ Implementation of model act in AU's for Good Governance.
- ✓ Celebrating December 23 as Agriculture Education Day in every agriculture institute.
- ✓ Quality assurance in Aus through National Agriculture Accreditation Board.

- ✓ Setting norms and standard for quality education, rigor in accreditation process and granted accreditation to 60 SAU's.
- ✓ Linking strengthening and development grant with accreditation of University.
- ✓ Evaluation & monitoring for quality education for last plan.
- ✓ Started unstructured education for farmers, growers, milk men and entre-preneurs for organic farming, natural farming and cow based economics under Unnat Bharat Abhiyan.
- ✓ Initiated Pt. Deen Dayal Upadhyay Unnat Krishi Shiksha Yojna through 100 training centres.
- ✓ Established 426 experiential learning centers for students' READY scheme.
- ✓ Formulation of World Bank sponsored National Agriculture Education Project for enhancing faculty competency, attracting talented students, creating visibility of Universities among different stakeholders and for infrastructure development as per present needs.
- ✓ Started Emeritus Professor Scheme on the line of Emeritus Scientists to attract retired professor to continue in teaching work.
- ✓ Processed nine more CAFT training centres.
- ✓ Initiated Extramural Research Projects addressing acute and felt needs to enhance the quality of agricultural education in identified thrust areas.

It is expected that Agriculture education in India will produce competent human resource for research and for evergreen revolution in society, for adequate employment and entre-preneurship, for inducting World class IT capability in different practices and ultimately for increasing efficiency in inputs & thus higher productivity, enhanced income and environmental protection. Quality education for global competitiveness and creating models to play a key role in 'Digital India', 'Skill India' and 'Make in India' initiatives of Government of India will be the motto of ICAR.





## 26 जनवरी पर विशेष चार चतुष्पदियां

कितना करे यत्न कोई, तूफान कभी रुकता नहीं।

इन्सां के झुकाने से, आकाश कभी झुकता नहीं।।

देश की रक्षा के लिए, जब बढ़ता है हिन्दी जवां।

वह प्राण दे देता है पर, बाधाओं में रुकता नहीं।।

खून शहीदों का एक दिन अवश्य रंग लाता है।

हर एक बलिदान देश की तकदीर को बनाता है।।

मिटा सकती नहीं कोई भी ताकत देश मेरे को।

कि जिसका बच्चा बच्चा खून से दीपक जलाता है।।

कहती है दुनियां जो कुछ, जी भर के उसे कहने दो।

अब तक है सहा हमने, अब उन को भी सहने दो।।

फिर कभी कर लेंगे, हम शान्ति की बातें भी।

अभी तो न्याय की, शक्ति की विजय होने दो।।

चली आन्धी या कि कोई चला तूफान आता है।

यह धरती कांपती है और अम्बर डगमगाता है।।

वह देखो, सिर हथेली पर लिए और झूमता-सा।

चला हिन्दोस्ताँ का एक वीर जवान आता है।।

डॉ. सुषमा आनन्द

प्रोफेसर (हिन्दी)

प्रकाशन अनुभाग

चौ.च.सिं.ह.कृ.वि.वि., हिसार



# हरियाणा

ISSN-0970-6518

# स्वर्ण

वर्ष 51

अंक 02



वार्षिक चंदा 150/-

फरवरी 2018

आजीवन सदस्यता 1500/-



**प्रकाशन अनुभाग**  
**विस्तार शिक्षा निदेशालय**  
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

# हरियाणा खेती

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. ( 2 ) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित  
© कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 51

फरवरी 2018

अंक 02

इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी तथा उनका प्रबंधन	धीरज पंघाल, चेतन कुमार जांगिड एवं आर. एस. मलिक	1
बेबी कॉर्न : फसलोपरांत प्रबंधन और मूल्य संवर्धन	कनिका पवार, एम. सी. कम्बोज एवं किरण खोखर	2
मुलहठी की खेती कैसे करें	राजेश कुमार आर्य, वंदना एवं वी. के. मदान	3
चने की फसल के प्रमुख रोग व उनकी रोकथाम	प्रोमिल कपूर, कृष्ण कुमार एवं अशोक छाबड़ा	4
गेहूँ में पोषक तत्व संवर्धन के माध्यम से कुपोषण से निपटने की रणनीतियाँ	दिव्या फौगाट, एस. के. सेठी एवं आई. एस. पवार	6
पोपलर : कृषि वानिकी की सफलता का मुख्य घटक	विरेन्द्र लाल, सुनील कुमार ढांडा एवं एस. एस. कुण्डू	7
कृषि क्षेत्र में सुदूर संवेदन तकनीक का प्रयोग	दर्शना दुहन, धर्मेद सिंह एवं डी. के. शर्मा	9
प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन अपनार्य-पैदावार बढ़ायें	नरेन्द्र कुमार गोयल, बलदेव कम्बोज एवं संदीप रावल	11
मशीनों द्वारा होने वाली दुर्घटना से बचाव	कुलदीप सिंह, जोगेन्द्र सिंह एवं संदीप कुमार	20
सोयाबीन खाइए-स्वस्थ रहिये	सविता रानी एवं सुशील	21
मरूस्थली भूमि का कल्प वृक्ष : खेजड़ी	बिमलेन्द्र कुमारी, तरूण कुमार एवं प्रीति सिंह	23
उर्वरकों में मिलावट की पहचान के तरीके	सुनीता श्योराण, देवराज एवं सोनिया रानी	24
मौनवंशों का कीटनाशकों से बचाव	सुनीता यादव, योगेश कुमार एवं शालिनी पाण्डेय	25
Use of Plastic Mulching for Vegetable Production	Sumit Deswal and Sri Kanth Mekala	27
Integrated Nutrient Management for Sustainable Soil Health	N. K. Goyal, R. S. Malik and M. S. Grewal	29
Suitability of Fertilizers for Different Crops and Soil Conditions	Dev Raj, Sunita Sheoran and M. S. Grewal	31
<b>स्थाई स्तम्भ : मार्च मास के कृषि कार्य</b>		<b>13</b>

तकनीकी सलाहकार :

डॉ. आर. एस. हुड्डा  
निदेशक, विस्तार शिक्षा

संकलन :

डॉ. एम. एस. ग्रेवाल  
परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)  
विस्तार शिक्षा निदेशालय

सह-निदेशक (प्रकाशन)

डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी

संपादक :

डॉ. सुषमा आनंद  
सह-निदेशक (हिन्दी)

सुनीता सांगवान

सम्पादक अंग्रेजी

प्रकाशन अनुभाग

आवरण एवं सज्जा:

राजेश कुमार एवं कुलदीप कुमार

**लेखकों से अनुरोध :** हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। टाईपिंग के लिए कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं [haryanakhethihau@gmail.com](mailto:haryanakhethihau@gmail.com)

**भूल सुधार :** हरियाणा खेती दिसम्बर अंक में पृष्ठ संख्या 01 पर अन्तिम तालिका में टोटल दवा की मात्रा 160 की जगह 16 ग्राम/मिली. पढ़ी जाए। धन्यवाद  
- सम्पादक



# मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी तथा उनका प्रबंधन

धीरज पंधाल, चेतन कुमार जांगिड एवं आर एस मलिक

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा कृषि के क्षेत्र में देश के अग्रणी प्रांतों में शामिल है। राष्ट्रीय खाद्य अनाज उत्पादन में हरियाणा का योगदान लगभग 7 प्रतिशत है। सघन खेती, नत्रजन खादों के प्रयोग व सिंचाई की आधुनिक तकनीकों के माध्यम से यहां फसल उत्पादन में निरंतर वृद्धि हुई है। आधुनिक खेती के कारण मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा है। पैदावार में वृद्धि के लिए किसान मूलतः यूरिया एवम् डी.ए.पी. का ही प्रयोग करते आ रहे हैं। जिसके कारण मृदा में आवश्यक पोषण के संतुलन बिगड़ने के साथ-साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी हो गई है। धान-गेहूं जैसे फसल चक्र में पोषक तत्वों के अत्यधिक दोहन से सूक्ष्म तत्वों की कमी पाई जाती है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी से पैदावार में कमी के साथ-साथ उत्पाद की गुणवत्ता में भी कमी आई है। पौधों के हिस्सों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी से पशुओं और इंसानों में स्वास्थ्य समस्या पैदा हो जाती है। हरियाणा राज्य से एकत्रित मिट्टी के नमूनों का विश्लेषण करने से मिट्टी में व्यापक सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी पाई गई। हरियाणा राज्य में वर्तमान स्थिति में जस्ता, लोहा, मैंगनीज़, तांबा और बोरोन की औसत कमी क्रमशः 15.3%, 21.6%, 6.1%, 5.2% और 3.3% पाई गयी। उत्पादन के स्तर व फसलों की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए सूक्ष्म पोषक तत्वों का समुचित प्रबंधन आवश्यक है।

## सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के लक्षण व फसलों की अधिक पैदावार व गुणवत्ता के लिए उनका प्रबंधन

सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के लिए रासायनिक उर्वरकों व कार्बनिक खादों का उपयोग कारगर साबित हुआ है। प्रमुख सूक्ष्म तत्वों का प्रबंधन के उपाय निम्न प्रकार से हैं -

**जस्ता :** जस्ता पौधों के विकास और हार्मोन उत्पादन के लिए विशेष रूप से आवश्यक तत्व है। जस्ते की कमी पत्तियों के मध्य में दिखाई देती है। क्लोरोटिक क्षेत्रों में पत्तियां पीली हो जाती हैं और समय से पहले मर जाती हैं। जस्ते की कमी से बीज भराव भी उचित प्रकार से नहीं हो पाता है।

जस्ते की कमी को दूर करने के लिए जिंक सल्फेट (21% जस्ता) का सबसे अधिक प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग

मिट्टी में (25 किलो प्रति हैक्टेयर) व पौधों पर छिड़काव (0.5%) के रूप में किया जाता है। कार्बनिक पदार्थों के उपयोग से भी मृदा में जस्ते की कमी को दूर किया जाता है। इनमें प्रमुख हैं- जिंक चिलेट्स जैसे- ई.डी.टी.ए.। मिट्टी में जस्ते का प्रयोग बुवाई से पहले करना चाहिए। खड़ी फसल में कमी के लक्षण दिखाई देने पर 0.5% जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव 10 दिनों के अंतर पर 2-3 बार करना चाहिए।

**लोहा :** लोहा पौधे में श्वसन और प्रकाश संश्लेषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। लोहे की कमी क्लोरोफिल, अनाज उत्पादन और पौधे की वृद्धि को कम कर देती है। युवा पत्तियों के क्षेत्रों पर पीलापन व अनियमित आकार के पीले धब्बे पत्तियों में आयरन की कमी से विकसित होते हैं।

फैरस सल्फेट (19% लोहा) लोहे की कमी को दूर करने के लिए सबसे अधिक उपयोग किया जाने वाला लौह उर्वरक है। इसे मिट्टी में डालने से फेरिक सल्फेट बन जाता है, जोकि पौधों को आसानी से उपलब्ध नहीं होता है। इसलिए लोहे की कमी दूर करने के लिए इसका प्रयोग पत्तियों पर छिड़काव के रूप में किया जाता है। आयरन चीलेट (12% लोहा) का प्रयोग मिट्टी तथा पौधों पर किया जा सकता है। आयरन फ्रिट्स (22% लोहा) का उपयोग अम्लीय मृदा के लिए किया जाता है। धान की नर्सरी में 1-2% फैरस सल्फेट का 7 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करने से लोहे के कारण होने वाला पीलापन नहीं होता है।

**तांबा :** क्लोरोफिल उत्पादन, श्वसन और प्रोटीन संश्लेषण के लिए तांबे की आवश्यकता होती है। तांबे की कमी से नई पत्तियों में पीलापन, रुका हुआ विकास, विलंबित परिपक्वता, बीज भरने में कमी और भूरे रंग का मलिनिकरण हो जाता है।

तांबे के उर्वरकों का मिट्टी के साथ-साथ पौधों पर छिड़काव के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है। दोनों स्थानों में कॉपर सल्फेट (24%) का प्रयोग किया जाता है। कॉपर अमोनियम फास्फेट तथा कॉपर चिलेट ताम्बे की कमी को दूर करने में उपयोग किये जा सकते हैं। मृदा में कॉपर सल्फेट का प्रयोग पर्णाय छिड़काव की अपेक्षा अधिक लाभदायक साबित हुआ है।

**मैंगनीज़ :** मैंगनीज़ की कमी का एक सामान्य लक्षण युवा पत्तियों में शिराओं के मध्य पीलापन है। मैंगनीज़ की कमी से गेहूं में सफेद लकीर और जौ में ब्राउन स्पॉट है। मैंगनीज़ सल्फेट सबसे अधिक प्रयोग किया जाने वाला लोकप्रिय मैंगनीज़ उर्वरक है। इसमें मैंगनीज़ की मात्रा 25 प्रतिशत होती है। मैंगनीज़ चिलेट (12% मैंगनीज़) तथा मैंगनीज़ फ्रिट्स (10-25% मैंगनीज़) इसके अन्य प्रमुख स्रोत हैं।

(शेष पृष्ठ 5 पर)

# बेबी कॉर्न : फसलोपरांत प्रबंधन और मूल्य संवर्धन

कनिका पवार, एम.सी.कम्बोज एवं किरण खोखर  
क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, उचानी (करनाल)

बेबी कॉर्न (मक्की) एक अनफर्टिलाइज्ड मक्का है जिसे पौष्टिक सब्जियों के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। यह स्वादिष्ट सजावटी व विटामिन और खनिजों में समृद्ध तथा आसानी से पचाने योग्य रेशेदार प्रोटीन का एक अच्छा स्रोत है। यह एक जैविक खाद्य है जो हस्क से सुरक्षित है और कीटनाशकों के रासायनिक अवशेषों से मुक्त है। बेबी कॉर्न को मूल्य वर्धित उत्पादों को बनाने के लिए उपयोग किया जाता है।

यह ग्रामीण युवाओं व महिलाओं के लिए आय और रोजगार पैदा करने वाली एक संभावित फसल है साथ ही साथ मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए भी उपयुक्त है। बेबी कॉर्न की कम उत्पादन की लागत होने के कारण भारत बेबी कॉर्न के क्षेत्र में एक संभावित निर्यातक हो सकता है। पोस्ट फसल प्रबंधन (पोस्ट हार्वेस्ट मैनेजमेंट) बेबी कॉर्न की उपज की गुणवत्ता, सुरक्षा तथा बाजार में प्रतिस्पर्धात्मकता के आलावा उत्पादकों द्वारा अर्जित मुनाफे को निर्धारित करता है। पोस्ट फसल प्रौद्योगिकी में कटाई डी-हस्किंग, ग्रेडिंग, पैकेजिंग, परिवहन, प्रसंस्करण, भंडारण, गुणवत्ता मानकों का विश्लेषण और लेबलिंग जैसे निम्नलिखित कार्य शामिल हैं।

**बेबी कॉर्न (मक्की) की कटाई :** कटाई के बाद बेबी कॉर्न को अच्छे वेंटिलेशन वाले छायादार स्थानों में रखना चाहिए। इसके अलावा इसे ढेर कर के नहीं रखना चाहिए तथा बेबी कॉर्न को कुछ दिनों के लिए छोड़ देना चाहिए। यदि संभव हो तो फसल की कटाई के तुरंत बाद इसे डीहस्क करना चाहिए।

**बेबी कॉर्न (मक्की) की डी-हस्किंग :** बेबी कॉर्न से भूसी निकालने के लिए पतली चाकू का प्रयोग कर मक्की को लम्बाई में थोड़ा खोलें। फिर बेबी मकई के बड़े छोर के आसपास चाकू का उपयोग करें और कानों पर स्लिट के साथ इसका हस्क निकाल लें। लेकिन साथ ही साथ ध्यान दें कि आंतरिक स्पाइक्स को नुकसान नहीं पहुंचे। सभी रेशम को ठीक से हटाना चाहिए और फिर कटेनरों जैसे की दफ्ती बक्से शुद्ध प्लास्टिक की टोकरियों में साफ बेबी कॉर्न को रखें ताकि वेंटिलेशन को सुविधाजनक बना सकें। बक्से को छायादार क्षेत्रों में रखा जाना चाहिए और उस पर पानी नहीं छिड़कना चाहिए अन्यथा इस में कालापन आ जायेगा तथा यह सड़ जाएगा।

ग्रासिम इंडस्ट्रीज़ लिमिटेड-यूनिट इण्डोगल्फ फर्टिलाइज़र्स

**बेबी कॉर्न (मक्की) की ग्रेडिंग :** बेबी मक्की की छंटाई व वर्गीकरण मशीन व मैनुअल रूप से किया जा सकता है। बेबी मक्की के ग्रेड जैसे कि (बड़े आकार) 11-13 सेंमी. लंबा और 1.4-1.5 सेंटीमीटर का व्यास (मध्यम आकार) 7-11 सेंमी. लंबा 1.2-1.4 सेंमी. व्यास) और (छोटे आकार) 4- 7 सेंमी लंबा 1.0-1.2 सेंमी. व्यास है।

**बेबी कॉर्न की पैकेजिंग :** अधिक समय तक संरक्षण के लिए बेबी कॉर्न को कांच के बर्तन में पैक करना चाहिए जिसमें 52 प्रतिशत बेबी कॉर्न के साथ 48 प्रतिशत नमकीन घोल हो।

**बेबी कॉर्न की उतराई :** बेबी मक्की के उत्पादों को आमतौर पर हवाई जहाज से निर्यात किया जाता है क्योंकि वे बहुत जल्दी खराब होते हैं। कॉर्न के पैकेज को पैकिंग क्षेत्र से हवाई अड्डे तक शीत ट्रकों में पहुंचाया जाता है। मात्रा व दूरी की आवश्यकता के अनुसार परिवहन का तरीका चुना जाता है।

**बेबी कॉर्न का प्रसंस्करण :** बेबी कॉर्न की शैल्फ लाइफ को बेहतर बनाने के लिए प्रसंस्करण किया जा सकता है। मुख्य प्रसंस्करण विधियों का उपयोग शैल्फ जीवन को सुधारने के लिए किया जाता है इनमें कैंनिंग, निर्जलीकरण और शीतलन प्रक्रिया शामिल हैं। कैंनिंग बेबी कॉर्न प्रसंस्करण के लिए सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला तरीका है क्योंकि इसे महीनों तक संग्रहीत किया जा सकता है तथा दूर स्थानों तक परिवहन द्वारा भी पहुंचाया जा सकता है। सूखी हुई बेबी कॉर्न को पॉलिथीन बैक्यूम एवं टेट्रा पैक में पैक व लंबे समय तक अच्छी तरह से संग्रहीत किया जा सकता है। इसके अलावा अन्य सब्जियों की तरह शीतलन द्वारा भी इसे लंबे समय तक संग्रह कर सकते हैं।

**बेबी कॉर्न का भण्डारण :** बेबी कॉर्न की मिटास को बनाये रखने के लिए इसे तुरंत ही रेफ्रिजरेट करें। कम तापमान पर शूगर के स्टार्च के रूपांतरण की दर कम हो जाती है। डी-हस्क बेबी कॉर्न को अपनी गुणवत्ता बिना खोये एक हफ्ते के लिए रेफ्रिजरेट भी किया जा सकता है।

**बेबी कॉर्न के गुणवत्ता मानक :** इसका रंग क्रीम या हल्का पीला होना चाहिए। बेबी कॉर्न की उपज को सामान्य स्वरूप में रखने के लिए यह पूर्ण ताजा सड़ांध से मुक्त स्वच्छ पैकिंग के बाद असामान्य बाहरी नमी से मुक्त शीत भंडारण से हटाने के बाद कंडेनसेशन को छोड़कर किसी भी विदेशी गंध या स्वाद से मुक्त कीटों से मुक्त होना चाहिए। बेबी कॉर्न को सही तरीके से काटा जाना चाहिए! बेबी कॉर्न को गुणवत्ता पूर्ण स्थिति में किसी स्थान पर पहुंचने के लिए इसकी सही तरीके से कटाई फसलोपरांत प्रबंधन, भण्डारण व परिवहन किया जाना चाहिए।

(शेष पृष्ठ 5 पर)



# मुलहठी की खेती कैसे करें

राजेश कुमार आर्य, वंदना एवं वी.के. मदान

औषधीय, संगंध एवं क्षमतावान फसल संभाग, पौध प्रजनन विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मुलहठी एक बहुवर्षीय, झाड़ीदार पौधा है। जिसकी उँचाई 1.5 से 2.0 मीटर होती है। इसकी पत्तियाँ संयुक्त, अण्डाकार, चपटी व दबी हुई होती हैं, जिसके अग्रभाग नुकीले होते हैं। इसके फूलों का रंग बैंगनी तथा फलियाँ चपटी होती हैं। जिसमें 2-4 बीज गुदों की आकृति जैसे होते हैं। इसकी जड़ें लम्बी व मूसलादार होती हैं, जिससे अन्य शाखायें निकलती हैं। इसकी जड़ें बाहर से लाल तथा ऊपर से हल्की पीली होती हैं।

मुलहठी मुख्य रूप से खांसी, सर्दी तथा जुकाम की दवाइयाँ बनाने में उपयोग की जाती है। इससे अतिरिक्त यह पैप्टिक अल्सर व इससे होने वाली रक्त की उल्टी में अत्यन्त उपयोगी है। यकृत के रोगों में भी लाभप्रद है। शिरा रोगों में पीड़ा निवारण में भी उपयोगी है। बुद्धि-वर्धन में सहायक, एनीमिया, दमा, टी.बी. तथा खांसी आदि रोगों में प्रयोग की जाती है।

उद्योग जगत में, इसका अल्कोहल बनाने में, यीस्ट कल्चर तैयार करने तथा कीटाणुनाशक औषधियों में प्रयोग किया जाता है। यह मधुरस्वाद बनाने के लिए अच्छी रहती है इसलिए इसका उपयोग कम ऊर्जा वाले भोजन, चॉकलेट, चुईगम, बीयर व कैंडी आदि बनाने में भी किया जाता है। मुलहठी में ग्लाइसीराइड लगभग 7% होता है जो साधारण शूगर से 50-55 गुणा अधिक मीठा होता है।

**भूमि एवं जलवायु :** उष्ण तथा समशीतोष्ण क्षेत्रों में अच्छी जल निकास वाली दोमट मिट्टी जिसका पी.एच. मान 7-8 हो अच्छी रहती है।

**खेत की तैयारी एवं खाद :** एक एकड़ में 10-12 टन गली-सड़ी गोबर की खाद डालकर 2-3 बार जुताई करें तथा सुहागा लगाकर समतल बना लें।

**उन्नत किस्म :** हरियाणा मुलहठी नं-1, भारत की प्रथम किस्म है।

**बीज की मात्रा :** एक एकड़ की बिजाई करने के लिए लगभग 100-120 कि.ग्रा. ताजा जड़ें (लगभग 12000-15000 कलमें) प्रति एकड़ आवश्यक हैं।

**बिजाई का समय :** इसकी बिजाई वर्ष में दो बार सम्भव है। यदि सिंचाई का उचित प्रबन्ध हो तो 15 जनवरी से 15 फरवरी तक लगाना अच्छा रहता है तथा वर्षा ऋतु में जुलाई-अगस्त में भी लगाया जा सकता है।

**बिजाई का तरीका :** बिजाई के लिए मुलहठी की जड़ों को लगभग 9 इंच लम्बी कलमों में काटकर कतारों में लगाएं। कतारों की आपसी दूरी 2.5 से 3.0 फुट तथा कतार में कलमों की आपसी दूरी 1.0 फुट रखें। जड़ों को 2-3 इंच मिट्टी में दबा दें और सुहागा लगाकर हल्की सिंचाई कर दें।

**सिंचाई प्रबंध :** अच्छे जमाव के लिए खेत में नमी बनी रहनी चाहिए। यदि मुलहठी जनवरी-फरवरी में लगाई है तो बारिश आने तक ज़रूरत अनुसार 3-4 सिंचाई अवश्य लगाएं। इसमें अधिक सिंचाई ज़रूरी नहीं है, परन्तु ज़रूरत अनुसार सिंचाई करने से पैदावार बढ़ती है।

**निराई-गुड़ाई :** पहले साल मुलहठी में 2-3 निराई-गुड़ाई करके खरपतवार ज़रूर निकालें। सर्दी में मुलहठी के पत्ते झड़ जाते हैं इसलिए जनवरी-फरवरी में अच्छी तरह निराई-गुड़ाई करके खरपतवारों को निकाल दें। फरवरी अन्त में, जड़ों से नए फुटाव शुरू होंगे तथा मार्च में खेत हरा-भरा हो जायेगा।

**खुदाई :** जड़ों की खुदाई से 8-10 दिन पहले खेत में हल्का पानी लगा दें तथा जब खेत खुदाई करने योग्य हो जाये तब 2.5 से 3.0 वर्ष बाद 1.5-2.0 फुट गहरा खोदकर जड़ों को निकालें। इसके लिए हैरो के बाद कल्टीवेटर का प्रयोग करें तथा जड़ों को इकट्ठा करें। इस प्रकार 2-3 बार में, ज्यादातर जड़ें निकल आती हैं। जड़ों को फर्श पर फैलाकर छाया में सुखाएं। जब जड़ों में नमी 10% से अधिक न हो तब बोरियों में डालकर सुरक्षित स्टोर में रखें जहाँ नमी न हो।

**जड़ों की पैदावार :** मुलहठी की फसल से, 2.5-3.0 साल बाद 25-30 क्विंटल सूखी जड़ें एक एकड़ से प्राप्त की जा सकती हैं जो कि 100 रुपये प्रति कि.ग्रा. के भाव बेच सकते हैं। इसके प्रमुख खरीददार डाबर, झंडू, वैद्यनाथ, हमदर्द, पतंजलि तथा फार्मेसिया हैं।



## आवश्यक सूचना

“हरियाणा खेती” मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

- सह-निदेशक (प्रकाशन)

# चने की फसल के प्रमुख रोग व उनकी रोकथाम

प्रोमिल कपूर, कृष्ण कुमार एवं अशोक छाबड़ा  
दलहन अनुभाग, पौध प्रजनन एवं आनुवांशिकी विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

चना भारत की सबसे महत्वपूर्ण दलहनी फसल है तथा यह हरियाणा की भी मुख्य रबी दलहनी फसल है। यह मानव उपभोग के लिए और साथ ही पशुओं के लिए चारे के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। ताजा हरी पत्तियों का उपयोग वनस्पति (शिशिल) के रूप में किया जाता है। शाकाहारी भोजन में भी चने का औषधीय प्रभाव माना जाता है और इसका उपयोग रक्त शुद्धि के लिए भी किया जाता है। इसमें 21.1% प्रोटीन, 61.5% कार्बोहाईड्रेट, 4.5% वसा शामिल हैं तथा यह कैल्शियम, लोहा और नियासिन में समृद्ध है। इस लेख का मुख्य उद्देश्य किसानों को चने की बीमारियों और उसके प्रबंधन के बारे में आवश्यक जानकारी प्रदान करना है। चने की महत्वपूर्ण बीमारियां उखेड़ा रोग, तना गलन, जड़ गलन रोग, ऐसकोकाइटा अंगमारी, आल्टरनेरिया अंगमारी, ग्रे मोल्ड, और विषाणु रोग हैं। इन बीमारियों के लक्षण और नियंत्रण के उपयुक्त उपाय नीचे दिए गए हैं :

**उखेड़ा :** उखेड़ा रोग की समस्या पश्चिमी क्षेत्रों में अधिक होती है। आमतौर पर यह बीमारी बिजाई के 3-6 सप्ताह बाद दिखाई पड़ती है। पत्तियां मुरझा कर लटक जाती हैं तथा उनमें हरापन बना रहता है। चने के पौधों की पत्तियां भूमि में कम नमी, लवणता, तथा दीमक के प्रकोप द्वारा भी मुरझा सकती हैं, इसलिए उखेड़ा रोग की असली पहचान के लिए तने को चाकू से लम्बाई में काटने पर अन्दर से रस वाहिकी भूरी काली भद्दी-सी दिखाई पड़ती है।

## रोकथाम :

1. उखेड़ा रोग से बचाव के लिए भूमि में नमी बनाए रखें तथा अगेती बिजाई 10 अक्टूबर से पूर्व न करें।
2. उखेड़ा रोगरोधी/सहनशील किस्में हरियाणा चना नं. 1, चना नं. 3, चना नं. 5, हरियाणा काबली नं. 1 व हरियाणा काबली नं. 2 बोयें।
3. बाविस्टीन 2.5 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीज को उपचारित करें।
4. रोगग्राही किस्मों के बीजोपचार के लिए जैविक फफूँदीनाशक ट्राईकोडरमा विरिडी (बायोडरमा) 4 ग्राम प्रति किलोग्राम

बीज + विटैवैक्स 1 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बिजाई से पूर्व करें। इसके लिए 4 ग्राम बायोडरमा और 1 ग्राम विटैवैक्स का उतनी मात्रा के बराबर पानी (5 मि.ली.) में लेप बनाकर प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचार करें।

**तना गलन :** इस रोग से हरे पत्ते बदरंग हुए बिना ही गिर जाते हैं। भूमि की सतह पर सफेद फफूँद तने को चारों ओर से घेर लेता है। बाद में सफेद पिंड से दिखाई पड़ते हैं परन्तु रसवाहिकी में कोई भद्दापन नज़र नहीं आता। अधिक वर्षा होने के कारण इस रोग के आने की संभावना अधिक रहती है।

**जड़ गलन रोग :** यह दो प्रकार का होता है-

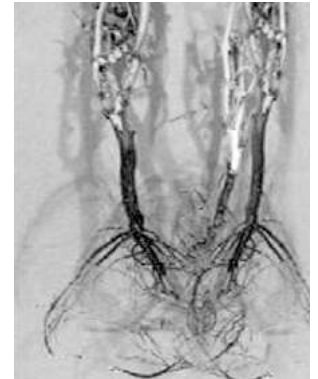
1. **गीला जड़ गलन :** अधिक नमी वाली जमीन में यह रोग पाया जाता है।

2. **शुष्क जड़ गलन :** यह रोग चने में फूल व फलियां बनते समय आता है। फसल की अंकुरण अवस्था में या फिर सिंचित क्षेत्रों में जब फसल बड़ी हो जाती है, तब इस रोग का प्रकोप होता है।

भूमि की सतह के पास पौधे के तने पर गहरे भूरे धब्बे दिखाई पड़ते हैं। रोगी पौधे के तने व पत्ते हल्के पीले रंग के होते हैं।

**फफूँद अंगमारियां :** इस रोग का प्रकोप अधिक वर्षा अर्थात् नमी व 18-20 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान में अधिक होता है।

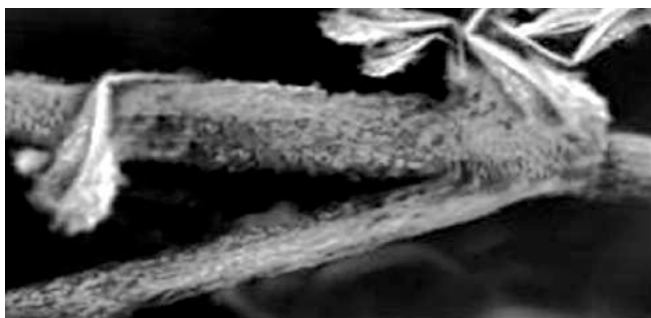
1. **ऐसकोकाइटा अंगमारी (झुलसा रोग):** इस बीमारी के आरम्भ में हल्के भूरे रंग के धब्बे पत्तों, तनों व फलियों पर दिखाई देते हैं। हरी फलियों पर ये काले धब्बे छोटी-छोटी गोलाकार आकृतियों में बदल जाते हैं। इन धब्बों के चारों ओर हरे-भूरे रंग के दायरे दिखाई देने लगते हैं। तने और पत्तों के डंठल पर भूरे लम्बे-लम्बे धब्बे (3-4 सें.मी.) बन जाते हैं व जिन पर फफूँद की बीजाणु-धारियां चूड़ीदार रेखाओं में काले बिन्दु के समान दिखाई



देती हैं, रोगग्रस्त भाग जकड़ जाता है। यह बीमारी फैलने पर खेत का कुछ हिस्सा या सम्पूर्ण खेत ही रोगग्रस्त हो जाता है।

**2. आल्टरनेरिया अंगमारी :** इस रोग से पत्तों पर बहुत छोटे, गोल भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। ये धब्बे बाद में बीमारी बढ़ने पर हल्के पीले रंग के बन जाते हैं, परिणामस्वरूप पौधे गिर कर सूख जाते हैं। जड़ों पर इसके आक्रमण से पौधा कमजोर हो जाता है और फलियों पर इसका दुष्प्रभाव पड़ता है।

**ग्रे मोल्ड :** इस रोग के आरम्भ में पत्तियां भूरे रंग में बदलना शुरू हो जाती हैं। प्रारंभ में रंग पत्तियों के किनारों तथा चोटी से बदलता है। ऊपर की शाखा थोड़ी झुक जाती है। इन शाखाओं की चोटी को ध्यान से देखने पर यह फफूंदी दिखाई पड़ती है। टहनियां तथा तने बाद में सड़ना शुरू हो जाते हैं।



**रोकथाम:** बचाव के लिए निम्नलिखित उपाय अपनायें:

1. जिस खेत में अंगमारी का आक्रमण रहा हो उस खेत में चने की बिजाई न करें।
2. चने की हरियाणा चना नं. 3 व सी-235 किस्में, जो झुलसा रोग के लिए सहनशील/प्रतिरोधी हैं, उगानी चाहिए।
3. रोगमुक्त एवं स्वस्थ बीज ही बोयें। बीजगत संक्रमण से बचाव हेतु बाविस्टिन से बीजोपचार (2.5 ग्राम/किलोग्राम बीज) करें। यह उपचार रोगग्राही किस्मों के लिए अत्यन्त आवश्यक है।
4. रोगग्रस्त पौधों तथा उनके अवशेषों को जलाकर नष्ट कर दें।

**विषाणु रोग :** इस रोग में पौधे बौने रह जाते हैं तथा सन्तरी या भूरे रंग के हो जाते हैं। यह रोग देसी चने में अधिक होता है। जोड़ वाले स्थान पर थोड़ा चाकू से तिरछा काटने पर अन्दर से भूरा-सा दिखाई देता है।

**रोकथाम:**

1. भूमि की नमी का ठीक ढंग से संरक्षण करें।
2. 10 अक्टूबर के बाद चने की बिजाई करने से इस रोग से बचाव हो जाता है।

(पृष्ठ 1 का शेष)

मैंगनीज सल्फेट का मृदा में प्रयोग सबसे अधिक लाभदायक है। मैंगनीज सल्फेट के 0.05 से 0.1% घोल का 3-4 बार पर्णीय छिड़काव मृदा में प्रयोग के समान लाभकारी सिद्ध हुआ है।

**बोरोन :** पौधों में अंतिम कली और युवा पत्तियों में पीलापन बोरोन की कमी से होता है। पीलेपन के अलावा पत्ते गहरे भूरे, सफेद-पीले धब्बे और गलन हो जाती है। बोरोन की कमी से प्रजनन ऊतक, परागण, बीज व्यवहार्यता और फूल की कलियां विफल हो सकती हैं। बोरोन की कमी दूर करने के लिए बोरेक्स सबसे अधिक उपयोग किया जाने वाला बोरोन उर्वरक है। इसमें बोरोन की मात्रा 11% होती है। यह जल में अत्यधिक घुलनशील है जिसके कारण लीचिंग से इसकी हानि होती है। रेतीली मिट्टी में बोरेक्स के मुकाबले बोरोसिलिकेट अधिक लाभकारी है। बोरिक एसिड और सोलुबार पर्णीय छिड़काव के लिए उपयुक्त हैं। खड़ी फसल में बोरोन की कमी के लक्षण पाए जाने पर बोरिक एसिड के 0.2% घोल का छिड़काव करना चाहिए।

**मोलिब्डेनम :** मोलिब्डेनम एक ऐसा सूक्ष्म पोषक तत्व है जो पौधों में नाइट्रोजन की गतिविधि के लिए आवश्यक है। मोलिब्डेनम की कमी से पौधों के विकास में बाधा, पत्तियां मोटी या भंगुर और पीलापन आदि लक्षण पाए जाते हैं। अमोनियम मोलिब्डेट तथा सोडियम मोलिब्डेट ट्राइऑक्साइड, मोलिब्डेनम की कमी दूर करने के लिए उपयोग किये जाने वाले प्रमुख उर्वरक हैं। इनका प्रयोग नत्रजन, फॉस्फोरस व पोटाश खादों के साथ मिलाकर किया जा सकता है। इनका उपयोग पर्णीय छिड़काव में भी किया जा सकता है। खादानों की अपेक्षा सब्जियों, दलहनों तथा तिलहनों में मोलिब्डेनम की कमी अधिक पाई जाती है। इस प्रकार हम सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी का निवारण कर अधिक पैदावार के साथ-साथ उच्च गुणवत्ता युक्त फसल उत्पादन ले सकते हैं।



(पृष्ठ 2 का शेष)

भारत में बेबी कॉर्न का फसलोपरांत प्रबंधन सामान्य से भी कम है। क्षेत्र में अक्षम हैंडलिंग और परिवहन के स्तर पर कमी इसकी बड़ी बाधाएं हैं। इसके अलावा, अन्य प्रमुख बाधाओं में भंडारण प्रसंस्करण पैकेजिंग ग्रेडिंग और बुनियादी ढांचे की खराब प्रौद्योगिकियों का होना शामिल है। भारत में फसल के नुकसान के स्तर को कम करने व सिस्टम को अपग्रेड करने के लिए बेबी कॉर्न के क्षेत्र में तत्काल कार्रवाई करने की आवश्यकता है।





# गेहूँ में पोषक तत्व संवर्धन के माध्यम से कुपोषण से निपटने की रणनीतियाँ

दिव्या फौगाट, एस. के. सेठी एवं आई. एस. पवार  
गेहूँ एवं जौ अनुभाग, आनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

दुनिया भर में 3 अरब से अधिक लोगों को विशेष रूप से महिलाओं और विकासशील देशों में बच्चों को पोषक तत्वों की कमी और दैनिक पोषक तत्वों की आवश्यक पूर्ति की कमी अत्यधिक प्रभावित करती है। आमतौर से अल्प आयु वाले ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या समूहों के लिए सूक्ष्म पोषक तत्वों का स्रोत मुख्यतः बीज एवं अनाज हैं। इनसे व्यापक रूप से खाद्य पदार्थ तैयार किए जाते हैं परन्तु बीज या अनाज के खाद्य भागों में सूक्ष्म पोषक तत्व आमतौर पर निम्न स्तर के होते हैं। गरीब, विशेष रूप से ग्रामीण गरीब इस तरह के मुख्य फसलों के आहार पर निर्वाह करते हैं जैसे चावल, गेहूँ और मक्का जिनमें सूक्ष्म पोषक तत्वों का स्तर कम पाया जाता है। इन सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी से अन्धापन, एक कमजोर प्रतिरक्षा प्रणाली, मानसिकता एवं शारीरिक रूप से विकलांग, रक्त की कमी, कार्य क्षमता का ह्रास, संकुचित प्रजनन आदि जैसे अत्यधिक बुरे परिणामों का सामना करना पड़ता है। लोहा (Fe), आयोडीन (I), जस्ता (Zn), और विटामिन A, तांबा (Cu) और मैंगनीज़ (Mn) पोषक तत्वों की कमी लोगों को अत्यधिक प्रभावित करती है। विकासशील देशों में बच्चों एवं वयस्क में मृत्यु दर Zn, Fe, & Vit. A की कमी क्रमशः 5वें, 6वें व 7वें स्थान पर पाई गई है, जो कि शीर्ष दस जोखिम कारकों में शामिल है। जिनकी कमी 37% 5 वर्ष से कम आयु के बच्चे एवं 41% गर्भवती महिलाएं प्रभावित पाए गए हैं। एफएओ खाद्य बैलेंस शीट के अनुसार विकासशील देशों में 57% उर्जा एवं 49% प्रोटीन की भरपाई 6 मुख्य फसलों जैसे कि सेम, कसावा, मक्का, चावल, शकरकंद एवं गेहूँ के माध्यम से होती है।

कृषि एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में, खाद्य फसलों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को, जैव उपलब्धता में सुधार द्वारा बढ़ाया जा सकता है। साधारण शब्दों में पोषक तत्व संवर्धन मुख्य फसलों में पोषक तत्वों को उत्तम पारंपरिक प्रजनन विधिओं एवं आधुनिक जैव प्रौद्योगिकी का उपयोग करके बढ़ाना है-बिना कृषि प्रदर्शन और महत्वपूर्ण उपभोक्ता-वरीय लक्षण त्यागे। इसके अलावा खनिज पोषक तत्वों Biofortification के अनाज सांद्रता में वृद्धि,

agronomically और/या आनुवांशिक रूप से, सबसे होनहर और लागत प्रभावी दृष्टिकोण कुपोषण और संबंधित स्वास्थ्य समस्याओं को दूर करने के लिए माना जाता है। विकासशील देशों में, व्यापक रूप से खेती खाद्य फसलों में गेहूँ की दैनिक ऊर्जा खपत में एक विशेष रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कई मध्य एशियाई और मध्य पूर्वी देशों में गेहूँ दैनिक ऊर्जा खपत का 50% प्रदान करता है जबकि यह अनुपात ग्रामीण क्षेत्रों में 70% से अधिक है।

आमतौर पर, आज के वाणिज्यिक गेहूँ किस्मों में जस्ता और लोहे की मात्रा 20-35 मिलीग्राम/कि.ग्रा. है जोकि मानव पोषण के लिए आवश्यक खनिज के मुख्य स्रोत का गठन करने के लिए पर्याप्त नहीं है। ऐसे में गेहूँ आधारित आहार सूक्ष्म पोषक कुपोषण को परिणाम दे सकते हैं और इस तरह से एनीमिया, संक्रामक रोगों के लिए उच्च संवेदनशीलता, अवरुद्ध मानसिक विकास और समृद्ध शारीरिक विकास के उत्पन्न में बाधा आदि स्वास्थ्य जटिलताओं से रूबरू होना पड़ सकता है। इस समस्या का उपाय पोषक तत्व संवर्धित गेहूँ की फसलों के विकास द्वारा किया जा सकता है। CIMMYT के नेतृत्व में, भारत और पाकिस्तान में उच्च जस्ता एवं लोहे की गेहूँ की फसलों के विकास पर कार्य कर रहे हैं। पूरे गेहूँ के लिए प्रारंभिक प्रजनन लक्ष्य 33 पीपीएम जस्ता आधारभूत जस्ता एकाग्रता से ऊपर 8 पीपीएम की एक वेतन वृद्धि पर स्थापित किया गया है।

**पारंपरिक विधि :** इस बायोफर्टिफाइड गेहूँ किस्मों को विकसित करने का पारंपरिक तरीका भी शामिल है। प्रजनन चरणों में शामिल :

1. एक उपयोगी आनुवांशिक विभिन्नता और अत्यधिक उपज देने में सक्षम नर-मादा।
2. लंबी अवधि और वापस क्रॉसिंग जीन के समावेश के लिए गतिविधियां।
3. स्थिरता और लक्ष्य लक्षण (उदाहरण के लिए, उच्च अनाज जस्ता और लोहा सांद्रता) अलग वातावरण भर की अभिव्यक्ति।
4. लक्ष्य क्षेत्रों या देशों में लागू फसल और मिट्टी प्रबंधन के तरीकों की एक सीमा से अधिक नव विकसित बायोफर्टिफाइड जीनोटाइप के अनुकूलन।

इस विधि में, उर्वरकों के माध्यम से लौह एवं जस्ता जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों में वृद्धि शामिल है जिससे अनाज के पोषण मूल्यों में वृद्धि की उपलब्धता होती है। NSZ *et al* 2015 गेहूँ में Biofortification अध्ययन के अनुसार, सूक्ष्म पोषक तत्वों की



बहिजीत आवेदन के द्वारा सूक्ष्म पोषक तत्व 4 mg/kg लौह एवं जस्तासंयंत्र उपलब्ध जैसे गेहूं के अनाज में पोषक तत्वों की एकाग्रता पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। लेकिन लौह एवं जस्ता युक्त उर्वरक एक अल्पकालिक समाधान है और प्रजनन के लिए केवल एक पूरक दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है।

**जर्मप्लाज्म, स्क्रीनिंग, जंगली रिश्तेदारों या प्रजातियों की उत्पत्ति का केन्द्र :** गेहूं और उसके जंगली रिश्तेदारों को जर्मप्लाज्म स्क्रीनिंग अनाज लौह एवं जस्तासांद्रता के लिए पर्याप्त आनुवांशिक परिवर्तन दर्शाती है। उच्चतम लौह एवं जस्ता सांद्रता Einkorn गेहूं और जंगली emmer गेहूं के पूर्वजों व landraces में है (तालिका 1)। दुर्भाग्य से थोड़ा बदलाव ही गेहूं की वर्तमान किस्मों में मौजूद है। इसलिए शोधकर्ता गेहूं Landraces और माध्यमिक जीन पूल अर्थात् hexaploid गेहूं की टेट्राप्लोइड और द्विगुणित Progenitors पर ध्यान केंद्रित कर सूक्ष्म पोषक एकाग्रता के लिए मूल्यांकन करते हैं। ट्रिटिकम dicoccoides, Aegilops tauschii, ट्रिटिकम monococcum, और ट्रिटिकम boeoticum ज्यादा लौह एवं जस्ता अनाज एकाग्रता के सबसे होनहार स्रोतों में से है।

**पूर्व प्रजनन :** पूर्व प्रजनन में वो सभी गतिविधियां शामिल हैं जो वांछनीय विशेषताओं की पहचान कराती हैं। पूर्व प्रजनन Unadapted सामग्री है जिसे सीधे प्रजनन आबादी में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। इसे किसानों के लिए नई किस्मों के उत्पादन में आगे उपयोग कर सकते हैं। यह जंगली रिश्तेदारों और अन्य unimproved सामग्री से उत्पन्न होने वाली विविधता के उपयोग में एक आवश्यक पहला कदम है।

**तालिका 1 : पीपीएम में सूक्ष्म पोषक तत्वों की रेंज**

Fe	Zn	Cu	Mn
27-44	31-52	3-6	21-40

**तालिका 2 : Fe और Zn के लिए सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन CCSHAU जीनोटाइप**

क्रम. सं.	Fe > 40 भाग प्रति दस लाख	Zn > 45 भाग प्रति दस लाख
1	WH1136	WH1136
2	WH1164	WH1164
3	WH1179	WH1189
4	WH1183	WH1193
5	WH1193	WH1195

(शेष पृष्ठ 8 पर)

## पोपलर : कृषि वानिकी की सफलता का मुख्य घटक

विरेन्द्र लाल, सुनील कुमार ढांडा<sup>1</sup> एवं एस. एस. कुण्डू<sup>2</sup>

जिला विस्तार विशेषज्ञ (कृषि वानिकी)

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा में जो किसान भाई पोपलर की खेती करना चाहते हैं, उनके लिए आने वाले जनवरी-फरवरी के महीने काफी उपयोगी हैं, खासतौर पर हरियाणा के उत्तरी जिले : यमुनानगर, कुरुक्षेत्र, अम्बाला, पंचकुला व करनाल, क्योंकि ये जिले पोपलर लगाने के लिए सबसे उपयुक्त हैं। या फिर जहां लवणीय समस्या न हो, नहरी पानी की कमी न हो और खेत की भूमि दोमट से बलुई दोमट हो, वहां पर भी पोपलर लगा सकते हैं।

किसान भाई हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार के वानिकी विभाग से सिफारिश किए गए पोपलर के क्लोन जैसे जी-3, जी-48, एस-7 व सी-15 की बुकिंग करा सकते हैं, ताकि समय पर पौधारोपण हो सके।

**पौधशाला:** पोपलर की नर्सरी के लिए बलुई दोमट मिट्टी जिसमें जैविक कार्बन की मात्रा अधिक हो, अच्छी रहती है। क्यारियां सिंचाई नाली के दोनों तरफ व नाली से नीची रखें। एक साल के पौधे की कलमें नर्सरी के लिए अच्छी होती हैं। कलमों की लम्बाई 20 से 25 सें.मी. तथा गोलाई 3 से 4 सें.मी. होनी चाहिए और प्रत्येक कलम पर 3 से 4 स्वस्थ आंखें जरूर होनी चाहिए। कलम बनाते समय, कलम का ऊपरी भाग आँख के थोड़ा ऊपर से तिरछा काट लें व निचले भाग को गोल काटें। कटी हुई कलमों को लगाने के समय गीली बोरी में लपेट कर छाया में रखें, ताकि ये सूख न जाएं। यदि नर्सरी में दीमक की समस्या है तो कलमें लगाते समय कीटनाशक दवाई का घोल बनाकर प्रयोग में लाएं। कलम को जमीन में इस प्रकार लगाएं कि उसका 2/3 हिस्सा जमीन में तथा 1/3 तिरछे सिरे वाला भाग जमीन से बाहर रहे (कलम की कम-से-कम एक आँख जमीन से ऊपर अवश्य रखें)।

क्यारियों में कलमें पंक्ति-से-पंक्ति और कलम-से-कलम 60 सें.मी. की दूरी पर लगाएं। कलम लगाने के तुरन्त बाद क्यारियों में सिंचाई जरूरी है, ताकि कलमों को निर्जलीकरण से बचाया जा सके और कलमों में फुटाव अच्छे से हो सके। कलम पौधे के रूप में अच्छी तरह से बढ़े, इसके लिए जरूरी है कि कलम

<sup>1</sup> मुख्य विस्तार विशेषज्ञ, कृ.वि.के. सदलपुर, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार।

<sup>2</sup> प्रशिक्षण सहायक, कृ.वि.के. सदलपुर, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार।

पर ही शाखा रहे व अन्य शाखाओं को काट दें। वर्षा आरम्भ होने पर 25 ग्राम यूरिया प्रति पौधा दें। एक वर्ष के बाद जब पौधे 5 से 6 मीटर के हो जाएं तो वे पौधारोपण के लिए उपयुक्त हैं।

**खेतों में पौधा रोपण :** पोपलर के पौधे का पौधारोपण फरवरी माह तक उचित रहता है। इसके बाद तापमान बढ़ने लगता है और पौधा ठीक से पनप नहीं पाता। पौधा रोपण करने से एक महीने पहले औगार की सहायता से तीन फुट गहरे गड्ढे खोद कर मिट्टी बाहर निकाल दें।

**पौधारोपण करने से पहले कुछ जानने योग्य बातें :** पौधारोपण करने से पहले किसान पौधारोपण अंतराल निश्चित करें। मेढ़ों पर कतारों में लगाते समय पौधे-से-पौधे की दूरी 3 मीटर रखें, सिंचाई नाली के दोनों तरफ कतारों में लगाते समय पौधे-से-पौधे की दूरी 2 मीटर रखें, खेत में अकेले पोपलर लगाना है तो पौधे-से-पौधे और कतार-से-कतार की दूरी 4 मीटर रखें और यदि शिवानिकी के तरीके को अपनाते हैं तो कतार-से-कतार व पौधे-से-पौधे की दूरी 5×4 मीटर रखें, क्योंकि पोपलर की अच्छी बढ़ोत्तरी के लिए 20-25 वर्गमीटर जमीन प्रति वृक्ष होनी चाहिए तथा कतारें उत्तर-दक्षिण करने से साथ लगने वाली फसलों को धूप ज्यादा मिलती है। छोटे किसान जो फसलों की पैदावार पर ज्यादा निर्भर रहते हैं वे शिवानिकी में कतार-से-कतार 10-15 मीटर व पौधे से पौधा दूरी 2.5 मीटर रखें।

ऊपर सतह की 1.5 फुट मिट्टी में 5 किलो ग्राम गोबर की खाद अच्छी तरह मिलाकर तैयार रखें। पौधारोपण के लिए पौधा पौधशाला से जड़ सहित उखाड़ कर लगाएं। अगर पौधशाला ज्यादा दूरी पर है तो पौधों के ऊपरी भाग व जड़ों को गीली बोरियों से लपेटकर लाना चाहिए ताकि पौधों की नमी बनी रहे।

पौधारोपण के लिए पहले से खोदे गए गड्ढों में 3 फुट की गहराई तक सीधा रखें और मिट्टी व खाद के मिश्रण को धीरे-धीरे गड्ढे में भर दें व पैरों से अच्छी तरह दबा दें ताकि मिट्टी में हवायुक्त स्थान न रहे। पौधे को गड्ढे में लगाने के बाद पानी अवश्य दें ताकि मिट्टी नीचे तक नम हो जाए।

**पौधों की देखभाल :** बरसात के मौसम से पहले 7-10 दिनों के अंतराल पर पानी देना चाहिए। पोपलर की बढ़ोत्तरी मुख्य तौर पर अप्रैल से सितम्बर के महीनों में होती है। जुलाई और सितम्बर के महीनों में सिंचाई के साथ 100 ग्राम यूरिया की मात्रा प्रतिपौधा के हिसाब से हर वर्ष डालें। जहां पोपलर के साथ फसलें लगाई हैं वहां फसलों में डाली गई यूरिया पोपलर के लिए भी काफी रहती है।

अप्रैल से अगस्त के महीनों में दो वर्ष तक की आयु के पौधों के एक-तिहाई निचले भाग पर निकल रही कलियों को बोरी के टुकड़ों द्वारा कोमलता से रगड़ कर साफ कर देना चाहिए। तीसरे से छठे साल तक के पौधे के निचले एक-तिहाई से आधे हिस्से तक शाखाएं काट देनी चाहिए। कटाई तने के बिल्कुल पास से हो तथा उसमें बोर्ड एक्स पेस्ट या चिकनी मिट्टी एवं गोबर का लेप लगाएं।

समय-समय पर किसान अपने पौधों का निरीक्षण करते रहें। यदि उन्हें तने पर बारीक बुरादा-सा नज़र आए तो समझें कि तना छेदक कीड़े का प्रकोप हो गया है। इस स्थिति में मिट्टी का तेल डालकर ऊपर से चिकनी मिट्टी से छेद बंद कर दें। जड़-गलन बीमारी भी पोपलर वृक्ष को नष्ट कर देती है। इस बीमारी में पौधा सूख जाता है। इसके नियन्त्रण के लिए पौधों की जड़ों व तनों को किसी भी प्रकार के कटाव से बचाएं व रोगग्रस्त पौधों को जड़ों समेत निकालकर नष्ट कर दें।

**उत्पादन व बिक्री :** पोपलर 6-8 वर्षों में 90 से 100 सें.मी. गोलाई का हो जाता है, जिसमें 3-6 किवन्टल लकड़ी होती है। हरियाणा में यमुनानगर, अम्बाला, करनाल व पानीपत में कुछ महत्वपूर्ण पोपलर कास्ट बाजार और डिपो हैं। किसान अपने उत्पाद का विवरण स्थानीय अखबार में देकर खुली बोली द्वारा बेच सकता है। किसान नजदीकी लकड़ी के आरों व टालों पर जाकर अपने उत्पाद के बारे में बताएं तथा कीमतों का जायज़ा लें और उचित कीमत पर अपने उत्पाद को बेचें। अगर लकड़ी के बाजार में कुछ समय के लिए कमी हो तो घबराहट में अपने वृक्षों को न बेचें और अच्छी कीमत का इंतज़ार करें।



(पृष्ठ 7 का शेष)

**निष्कर्ष :** यह जगव्यापक है कि आनुवांशिक और कृषि पोषक तत्व संवर्धनप्रचलित सूक्ष्म पोषक संबंधी कुपोषण की समस्याओं को स्थायी समाधान प्रदान करते हैं। जेनेटिक और कृषि पोषक तत्व संवर्धन दृष्टिकोण एक दूसरे के पूरक और Synergistic हैं। जंगली और आदिम गेहूँ, में उच्च अनाज लौह एवं जस्ता की एकाग्रता पाई गई है एवं पर्याप्त आनुवांशिक विविधता है। इस आनुवांशिक परिवर्तन से अधिकतर गेहूँ प्रजनन कार्यक्रम का विस्तार हो रहा है। जिससे सूक्ष्म पोषक तत्वों की एकाग्रता और आधुनिक गेहूँ की किस्मों में जस्ता एवं लौह की जैव उपलब्धता में सुधार होगा।



# कृषि क्षेत्र में सुदूर संवेदन तकनीक का प्रयोग

दर्शना दुहन, धर्मेद सिंह एवं डी.के. शर्मा<sup>1</sup>

हरियाणा स्पेस एप्लीकेशन सेंटर (हरसैक)

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

**परिचय :** सुदूर संवेदन (रिमोट सेंसिंग) का सामान्य अर्थ किसी वस्तु के सीधे संपर्क में आये बिना उसके बारे में जानकारी संग्रह करना होता है। लेकिन वर्तमान वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में सुदूर संवेदन का तात्पर्य आकाश में स्थित किसी प्लेटफार्म (जैसे हवाईजहाज, उपग्रह या गुब्बारे) से पृथ्वी के किसी भूभाग का चित्र लेना है। इस तकनीक में वैज्ञानिक विधि से ऊँचाई पर जाए बिना पृथ्वी के धरातलीय रूपों और संसाधनों का अध्ययन, बिना किसी भौतिक सम्पर्क से किया जाता है।

सुदूर संवेदन की तकनीक को संवेदक (सेंसर) की प्रकृति के आधार पर मुख्यतः दो प्रकारों में बाँटा गया है- सक्रिय (एक्टिव) और निष्क्रिय (पैसिव)। निष्क्रिय संवेदक वे हैं जो स्रोत को रोशन करने के लिए सूर्य के प्रकाश का उपयोग करते हैं। एक्टिव संवेदक वे हैं जो खुद ही विद्युत चुंबकीय विकिरण उत्पन्न करके उसे पृथ्वी की ओर भेजते हैं और परावर्तित किरणों को संवेदित (रिकॉर्ड) करते हैं। हवाई छायाचित्र (एरियल फोटोग्राफ्स) और उपग्रह चित्र (सेटेलाइट इमेजिज़) सुदूर संवेदन के दो प्रमुख उत्पाद हैं जिनका उपयोग वैज्ञानिक अध्ययनों से लेकर अन्य बहुत से कार्यों में हो रहा है। सुदूर संवेदन से प्राप्त आँकड़ों का प्रसंस्करण (प्रोसेसिंग) करना पड़ता है। यह प्रसंस्करण सांख्यिकी, पादप विज्ञान, भौतिकी आदि विज्ञानों की गणनाओं पर आधारित होता है। उपग्रह चित्रों के प्रसंस्करण के लिए कुछ प्रमुख प्रचलित सॉफ्टवेयर में से इरदास इमेजिन और आर्क जीआईएस प्रमुख हैं।

सुदूर संवेदन की तकनीक मानव के ज्ञान के विकास के क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी जाती है। इस तकनीक के माध्यम से भूमि, जल और आकाश के विविध पहलुओं का अध्ययन कर पाना संभव हुआ है। पिछले चार दशकों में यह सूचना संग्रहण का प्रमुख साधन बन गया है। इस तकनीक के प्रयोग से प्राकृतिक संसाधनों के अध्ययन, खोज, विकास, निगरानी एवं मानचित्रण का कार्य सरल हो गया है। इसके प्रयोग के द्वारा पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबंधन में भी मदद मिली है। सुदूर संवेदन से प्राप्त कृषि-मौसम और भूमि आधारित सूचना का उपयोग करके कृषि उत्पाद का पूर्वानुमान लगाया जाता है, भू-जल पर्वेक्षण एवं मानचित्रण, वन आच्छादन प्रकार मानचित्रण, घासस्थल मानचित्रण, जैव-विविधता

विशिष्टीकरण, हिम और हिमनद अध्ययन, भूमि उपयोग, आवरण मानचित्रण, तटवर्ती अध्ययन, प्रवाल और कच्छ वनस्पति अध्ययन, बंजरभूमि मानचित्रण, विकास योजना तथा संरक्षण आदि के क्षेत्रों में सुदूर संवेदन तकनीक का प्रयोग किया जा रहा है। चूंकि हर कार्य के लिए अलग-अलग आँकड़ों की आवश्यकता होती है।

**तालिका 1. सुदूर संवेदन तकनीक में प्रयोग की जाने वाली तरंग दैर्घ्य तथा उपयोग**

क्र.सं.	तरंग दैर्घ्य (वेवलेंथ) (μm)	प्रमुख उपयोग
1	0.45-0.52 (नीला)	नीले बैंड का प्रयोग शुद्ध पानी में गहराई तक प्रवेश, तटीय जल के मानचित्रण, हरित लवक अवशोषण तथा पर्णपाती और शंकुधारी वनस्पति के बीच विभेद करने में किया जाता है।
2	0.52-0.60 (हरा)	हरे बैंड का इस्तेमाल वनस्पतियों के स्वास्थ्य तथा उनमें उपस्थित हरित लवक का अनुमान लगाने में किया जाता है।
3	0.63-0.69 (लाल)	यह बैंड हरित लवक अवशोषण क्षेत्र कहलाता है और हरित लवक को मापने में इस्तेमाल किया जाता है। सड़कों, बंजर मिट्टी आदि का पता लगाने का यह सर्वोत्तम बैंड है।
4	0.75-0.90 (निकट अवरक्त विकिरण)	यह बैंड हरित लवक परावर्तन क्षेत्र कहलाता है इसका उपयोग बायो मास का अनुमान लगाने, मिट्टी की नमी मापने में तथा जल निकायों को वनस्पति से अलग करने में किया जाता है।
5	1.55 1.75 (मध्य अवरक्त विकिरण-1)	यह बैंड समग्र रूप से सबसे अच्छा एकल बैंड माना जाता है। इसके प्रयोग से सड़कों, बंजर मिट्टी, और पानी को अलग किया जा सकता है। यह विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों के बीच अंतर भी प्रदान करता है और इसमें वायुमंडलीय धुंध में प्रवेश करने की क्षमता होती है।
6	2.09 2.35 (मध्य अवरक्त विकिरण-2)	यह बैंड खनिज और रक्षक के प्रकारों को विभेदित करने और वनस्पति कवर तथा नमी की व्याख्या करने में उपयोगी है। फसलों में जल का निर्धारण करने में भी यह सहायक होता है।

<sup>1</sup>कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चरल इंजीनियरिंग एंड टेक्नोलॉजी, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार।

सुदूर संवेदकों में इन आंकड़ों को एकत्रित करने के लिए अलग-अलग तरंग दैर्घ्य (वेवलेंथ) वाली किरणों को प्रयोग में लाया जाता है। सुदूर संवेदन में प्रयोग की जाने वाली महत्वपूर्ण तरंग दैर्घ्य और सम्बंधी उपयोगों को तालिका 1 में दिखाया गया है।

वर्तमान समय में भारत के पास भारतीय सुदूर संवेदन उपग्रह (आईआरएस) शृंखला रिसोर्ससैट, कार्टोसैट, ओशनसैट आदि के उपग्रह हैं, जो विभिन्न परियोजनाओं के कार्यान्वयन के लिए अपेक्षित आंकड़े उपलब्ध कराते हैं। भारत में सुदूर संवेदन के सारे कार्यों का आयोजन एवं निरीक्षण राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केन्द्र (NRSC), हैदराबाद द्वारा किया जाता है जो भारत सरकार के विज्ञान मंत्रालय के अंतरिक्ष विभाग के अंतर्गत काम करने वाली एजेंसी है। हरियाणा में रिमोट सेंसिंग और जीआईएस एप्लीकेशन के लिए, हरियाणा स्पेस एप्लीकेशन सेंटर (हरसैक) एक नोडल एजेंसी है जो प्राकृतिक संसाधनों दूषित, वन, जल, भूमि आदि) के सर्वेक्षण, मान चित्रण एवं प्रबंधन कार्य, वाटरशेड अवलोकन, राज्य एवं नेशनल अर्बन सूचना प्रणाली के तहत शहरों के मानचित्रों का आधुनिकीकरण आदि कार्यों में इस तकनीक के प्रयोग का एक मुख्य केंद्र है।

**2. सुदूर संवेदन तकनीक का कृषि में प्रयोग :** सुदूर संवेदन तकनीक का प्रयोग कृषि में निम्न कार्यों के लिए किया जाता है।

- ❖ फसल की पहचान, क्षेत्र तथा आकलन : फसल की पहचान कृषि क्षेत्र में अति महत्वपूर्ण कार्य है जिससे हर फसल के उत्पादन का अलग-अलग अनुमान लगाया जाता है। इसरो के रिसोर्ससैट, लैंडसैट तथा रिसैट जैसे उपग्रहों से प्राप्त आंकड़े इस प्रयोग में लाये जाते हैं। इसरो की 'फसल' तथा 'चमन' जैसे महत्वपूर्ण परियोजनाएं इसी क्षेत्र से संबंधित हैं। फसल क्षेत्र के आकलन से उनके उत्पादन का अनुमान लगाया जाता है जिससे उनकी कटाई से पहले आयात तथा निर्यात से सम्बंधित निर्यण लिए जा सकें। इसके लिए रिसैट आदि से प्राप्त आंकड़े का इस्तेमाल किया जाता है।
- ❖ फसल की स्थिति निर्धारण और तनाव आकलन : सुदूर संवेदी यंत्रों से प्राप्त आंकड़ों के द्वारा फसल की स्थिति का निर्धारण किया जाता है साथ ही साथ पानी तथा बीमारी के कारण उत्पन्न हुये तनाव को भी मापा जा सकता है। इसके लिए अग्रिम तकनीकी जैसे हाइपर-स्पेक्ट्रल आंकड़े इस्तेमाल किये जाते हैं। कीट और बीमारी के लक्षणों की पहचान के लिए सुदूर संवेदन की अग्रिम तकनीकों जैसे हाइपरस्पेक्ट्रल सुदूरसंवेदन का उपयोग किया जाता है।
- ❖ रोपण और कटाई की तारीखों का अनुमान : सुदूर संवेदन से प्राप्त वर्षा आधारित आंकड़े, फसल रोपण की तथा फसल के

“सामान्य वनस्पति सूचकांक” (एनडीवीआई) से कटाई की तारीखों का आंकलन किया जाता है।

- ❖ फसल उत्पादन मॉडलिंग और आकलन : फसलों के उत्पादन से सम्बंधित मॉडल में उपयोग होने वाले विभिन्न आंकड़ों को सुदूर संवेदी उपग्रहों जैसे इन्सैट, रिसैट, रिसोर्ससैट, मोडीस आदि सुदूर संवेदी तंत्रों से प्राप्त किया जा सकता है।
- ❖ मृदा मैपिंग और नमी का आकलन : मृदा मैपिंग के लिए विभिन्न बैंड तथा सूचकांक इस्तेमाल किये जाते हैं तथा नमी के आकलन के लिए मुख्यतः माइक्रोवेव सुदूर संवेदन का उपयोग किया जाता है। मॉडल तथा उपग्रहों से प्राप्त चिन्हों के सम्मिलित उपयोग से भूमिक्षरण का मानचित्रण किया जाता है। यदि मृदा में लवण की मात्रा अधिक है तो वह कृषि उपयोग के लिए ठीक नहीं होती है। एक बड़े परी क्षेत्र में इस समस्या को ऑप्टिकल उपग्रह आंकड़ों जैसे लैंडसैट, आईआरएस, आदि से पहचाना जा सकता है।
- ❖ सिंचाई तथा सूखा की निगरानी और प्रबंधन : सिंचाई की निगरानी और प्रबंधन के लिए अग्रिम तकनीकियाँ जैसे यू.ए.वी. आधारित वाष्पन-उत्सर्जन, वनस्पति सूचकांक आदि का उपयोग किया जाता है। उपग्रहों से प्राप्त आंकड़ों जैसे वर्षा, एनडीवीआई, ई.वी.आई., नदी तालाबों में पानी का स्तर आदि से कृषि सूखा का निर्धारण किया जाता है। फसल में वाष्पीकरण का अनुमान जल संसाधन प्रबंधन के लिए आवश्यक है। पानी और ऊर्जा की संतुलित गणना, सिंचाई समयबद्धन, जलाशयों के पानी की कमी, पानी के बहाव की भविष्यवाणी, मौसम विज्ञान और जलवायु शास्त्र इत्यादि में सुदूर संवेदन का उपयोग किया जाता है।
- ❖ सटीक खेती : खेती की लागत कम करना, बेहतर नियंत्रण और बेहतर संसाधन का उपयोग, उपग्रह में लगे सटीक खेती के प्रमुख लक्ष्य होते हैं। सेंसर द्वारा प्राप्त जानकारी के माध्यम से इन लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायता मिलती है। पोषक तत्व और जल तनाव प्रबंधन एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है जहां सुदूर संवेदन तथा भौगोलिक सूचना तंत्र का प्रयोग किया जाता है। पोषक तत्व का पता लगाने में सुदूर संवेदन का इस्तेमाल होता है और भौगोलिक सूचना तंत्र साइट विशिष्ट पोषक प्रबंधन में मदद कर सकता है, जिससे खेती की लागत को कम करने के साथ-साथ ही उर्वरक उपयोग की दक्षता को बढ़ाया जा सकता है।
- ❖ खरपतवारों की पहचान और प्रबंधन : वर्णक्रमीय प्रतिबिंब में भिन्नता के आधार पर खरपतवार और फसलों की विशेषताओं का पता लगाया जाता है। (शेष पृष्ठ 12 पर)



# प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन अपनाये- पैदावार बढ़ाये

नरेन्द्र कुमार गोयल, बलदेव कम्बोज एवं संदीप रावल

कृषि विज्ञान केन्द्र दामला, यमुनानगर

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हमारा देश विकासशील है। जनसंख्या की दृष्टि से यह विश्व में दूसरे स्थान पर है। देश में जनसंख्या की वृद्धि एक गंभीर समस्या है जिसके कारण भुखमरी, कुपोषण, प्रदूषण जैसी समस्याएं गंभीर स्थिति पैदा कर रही हैं। निरंतर बढ़ती हुई जनसंख्या की मांग को पूरा करने के लिए उत्पादन बढ़ाना बहुत जरूरी है लेकिन खेती योग्य भूमि में कमी होती जा रही है। सन् 2025 में हमें 201 मिलियन टन खाद्यान्नों की जरूरत होगी। क्योंकि कृषि क्षेत्र में अधिक से अधिक भूमि का उपयोग कर लिया गया है तथा आगे कृषि क्षेत्र में को बहुत अधिक बढ़ाना संभव नहीं है इसलिए हमें प्राकृतिक संसाधनों के कुशल प्रबन्धन से ही उत्पादन की मांग को पूरा करना होगा। स्थायी कृषि अपनाने के मुख्य लक्ष्य में हमें ऐसी कृषि तकनीकों का विकास करना होगा जो लाभप्रद हो, जिनसे प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण हो सके, पर्यावरण सुरक्षित रहे, उत्पादन में गुणवत्ता तथा स्वास्थ्य व सुरक्षा की दृष्टि से लाभप्रद हों। इन्हें प्राप्त करने का उपाय है-कम लागत वाली ऐसी विधियों और कुशल प्रबन्धन की व्यवस्था करना जिनसे प्रबन्धन में दक्षता आये और उत्पादन में काम आने वाले संसाधनों का उपयोग हो सके।

## संसाधन प्रबन्धन तकनीकें :

1. **जीरो टिलेज** : इस तकनीक द्वारा खेतों की बिना जुताई किये एक विशेष प्रकार की ड्रिल द्वारा फसलों की बिजाई की जाती है जिसमें दो कतारों के बीच की जगह बिना जुती ही रहती है जिससे जीवांश नष्ट नहीं होता व खरपतवार का जमाव भी कम होता है। इस तकनीक से गेहूँ, चना, सरसों जैसी फसलें बोई जा सकती हैं। इस तकनीक से खेत को तैयार करने में होने वाले खर्च को भी बचाया जा सकता है व फसल कटाई के बाद बचे फसल अवशेष भूमि में गल कर भूमि की उपजाऊ शक्ति में बढ़ोत्तरी कर सकते हैं।

2. **बैड प्लांटिंग** : इस तकनीक में फसल की बुवाई मेड़ों पर की जाती है व नाली में दूसरी फसल ली जा सकती है। इस तकनीक से गन्ना-गेहूँ, गन्ना-चना, गन्ना-मसर, गन्ना-सरसों, गन्ना-प्याज, लहसुन की खेती की जा सकती है। इस तकनीक से सिंचाई जल की बचत के साथ-साथ दो फसलों के लिए अलग खेत तैयार करने

में होने वाले खर्च को बचाया जा सकता है। यह तकनीक उत्पादन खर्च तो कम करती ही है। साथ ही साथ उत्पादन में बढ़ोत्तरी भी अधिक मिलती है। मेड़ों पर फसल में होने वाले खरपतवार भी भली-भांति नियंत्रण कर सकते हैं। इस तकनीक से 20-25 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत की जा सकती है। अधिकतर मुनाफा गन्ना-प्याज व गन्ना-लहसुन फसलों से बैड प्लांटिंग से लिया जा सकता है।

3. **धान की सीधी बिजाई** - धान की सीधी बिजाई ड्रिल के माध्यम से करने से पौधे तैयार करने व खेत को कद्दू करने में होने वाले खर्च को कम किया जा सकता है लेकिन इस विधि में खेत का लेवल (समतलीकरण) होना बहुत आवश्यक है क्योंकि इससे बीज के अंकुरण पर असर पड़ता है। धान की सीधी बिजाई से 25-30 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत की जा सकती है। यह तकनीक किसानों में ज्यादा लोकप्रिय नहीं हुई क्योंकि इस विधि से किसानों द्वारा खरपतवारों की समस्या महसूस की गई। लेकिन इस विधि से पूरा लाभ उठाने के लिए जरूरी है कि खेत में बिजाई/खरपतवार दवा के छिड़काव के समय पर्याप्त नमी हो। खेत समतल हो, ड्रिल से बीज की गहराई एक सतह पर हो व खरपतवारों का नियंत्रण सही समय पर हो। खेतों में लेबर की समस्या को देखते हुए व बिगडते प्राकृतिक संसाधन संतुलन को ध्यान में रखते हुए इस विधि को अपनाना अधिक लाभप्रद होगा।

4. **लेजर लैवलिंग** : लेजर लैवलिंग एक नई वैज्ञानिक तकनीक है जिसमें एक विशेष उपकरण द्वारा खेत की मिट्टी को पूरी तरह समतल किया जाता है। इस विधि से पूरी तरह खेत समतलीकरण होने के कारण सिंचाई की बचत हो जाती है। फसलों की उत्पादकता भी बढ़ती है और कम समय में खेत में सिंचाई की जा सकती है। हरियाणा व पंजाब के किसानों में यह तकनीक बहुत लोकप्रिय है और कई किसानों द्वारा किराये पर प्रति घंटा 600-700 रुपये लेकर यह सुविधा प्रदान की जा रही है। इस विधि से एक एकड़ में औसतन 1800 से 2100 रुपये समतलीकरण पर खर्च करके काफी लाभ उठाया जा सकता है। सिंचाई जल संरक्षण में यह तकनीक किसानों के लिए वरदान सिद्ध हुई है।

## 5. अन्य कृषि तकनीक सुझाव :

अ) फसलों की सिंचाई के लिए नई सिंचाई प्रणालियों के प्रयोग को बढ़ावा देना होगा। बूंद-बूंद सिंचाई (ड्रिप विधि) द्वारा 30-50 प्रतिशत पानी की बचत की जा सकती है। फव्वारा सिंचाई (स्प्रिंकलर विधि) से 13-43 प्रतिशत पानी की बचत के साथ-साथ फसलों के उत्पादन में भी बढ़ोत्तरी की जा सकती है।

इन प्रणालियों द्वारा फसलों में सुरक्षात्मक दवाई/खाद के प्रयोग के साथ-साथ फसल की माँग के अनुसार एक सार पानी मिलने से पानी का दुरुपयोग भी कम होता है। इन सिंचाई विधियों पर सरकार द्वारा उद्यान व कृषि विभाग द्वारा 25-50 प्रतिशत अनुदान किसानों को देने की व्यवस्था है। इसके अलावा भूमिगत पाईप लाईन सिंचाई व्यवस्था अपनाने पर सिंचाई जल व समय की बचत भी की जा सकती है। इसके लिए किसान भाई सहायक भूमि संरक्षण अधिकारी से संपर्क स्थापित कर इस योजना का लाभ उठा कर सिंचाई जल की बचत में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं।

**ब) वर्षा जल का संरक्षण** - वर्षा के जल का समुचित दोहन व बचाव के लिये जहां तक संभव हो भूमि को समतल करना चाहिये व वर्षा शुरू होने से पहले खेत के चारों ओर मेडबंदी कर देनी चाहिए ताकि वर्षा का जल भूमि में जाये व बहकर बेकार न जाये। मिट्टी पलटने वाले हल द्वारा भूमि की गहरी जुताई करके नमी को खेत में संरक्षित रखा जा सकता है। नमी की मात्रा बढ़ाने के लिए भूमि में जीवांश मात्रा को बढ़ाना बहुत आवश्यक है जिसके लिए गोबर की खाद, कंपोस्ट, केंचुआ खाद, मिल की मैली, हरी खाद (मूंग, ढैंचा, लोबिया, बरसीम, मेथी), फसल अवशेषों को जमीन में मिलाना बहुत जरूरी है। जैविक खादों से भूमि व जल संरक्षण को बढ़ावा मिलता है व भूमि की भौतिक, रासायनिक व जैविक दशा में सुधार हो जाता है।

**स) उन्नत कृषिगत विधियाँ** : जल व भूमि संरक्षण के लिए उन्नत कृषि विधियाँ जैसे उचित समय पर उचित कृषि मशीनरी से बुवाई, उपयुक्त फसल चक्र, समय पर खरपतवार नियंत्रण, संतुलित उर्वरक प्रयोग, अन्तरवर्तिय फसलें, सहफसली फसलें, अपनाकर जल-संरक्षण के साथ-साथ भूमि संरक्षण को भी बढ़ाया जा सकता है। नई तकनीकों में धान-कटाई के बाद फसल अवशेषों को बिना जलाये हैप्पी सीडर मशीन से गेहूँ की बिजाई कृषि मशीनरी में एक सराहनीय कदम है जिससे भूमि, जल संरक्षण के साथ-साथ पर्यावरण सुरक्षा भी की जा सकती है।

कृषि क्षेत्र में इस समय सबसे ज्यादा पानी का इस्तेमाल किया जा रहा है। बढ़ती जल मांग को पूरा करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति की नैतिक जिम्मेदारी व भागीदारी बन जाती है कि हम हर एक बूंद को सहेजें ताकि आने वाली पीढ़ी को भीषण जल संकट से न जूझना पड़े। इस दिशा में किसान भाई, ऊपर बताई कृषि सिंचाई तकनीकों को अपनाकर महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं।

(पृष्ठ 10 का शेष)

सुदूर संवेदन तकनीक, फसलों में खरपतवार पर्याक्रमण की पहचान और खरपतवार के स्थान का पता लगाकर जरूरत के अनुसार खरपतवार नाशकों के उपयोग में सहायता करती है।

**3. निष्कर्ष** : सुदूर संवेदन का कृषि के क्षेत्र में उपयोग यह दर्शाता है कि यह एक महत्वपूर्ण तकनीक है जिससे कृषि से सम्बंधित जानकारीयों को सरलता पूर्वक इकट्ठा किया जा सकता है। पारम्परिक तकनीकों से इन आंकड़ों को एकत्रित करने में ज्यादा मेहनत, पैसा तथा लोग लगते हैं और इनसे एक सीमित क्षेत्र के आंकड़े प्राप्त होते हैं। सुदूर संवेदन तकनीकी से ये आंकड़े एक बड़े क्षेत्र के लिए और काफी कम समय में एकत्रित किये जा सकते हैं साथ ही पैसे भी कम खर्च होते हैं। सुदूर संवेदन से प्राप्त आंकड़ों का उपयोग कृषि क्षेत्र के अवलोकन, नियोजन तथा प्रबंधन में किया जाता है जो कि किसी भी देश के लिए महत्वपूर्ण कार्य होते हैं। सुदूर संवेदन के क्षेत्र में नित नयी तथा अग्रिम तकनीकों का विकास, कृषि क्षेत्र में शोध तथा अध्ययन के नये आयाम खोलेंगे।



## आवश्यक सूचना

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार स्थित किसान सेवा केन्द्र में किसानों हेतु सप्ताह में तीन दिन सोमवार, बुधवार एवं शुक्रवार को 10 से 12 बजे तक निःशुल्क फोन सुविधा (हैल्प लाइन) फोन नं. 1800-180-3001 पर उपलब्ध है जिसमें वैज्ञानिकों से कृषि-संबंधी परामर्श किया जा सकता है। यदि किसी जगह से यह फोन सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो किसान भाई 01662-232768 पर सशुल्क फोन करके उपर्युक्त दिनों में इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल में भी सोमवार, बुधवार, शुक्रवार 10 से 12 बजे तक फोन नं. 1800-180-4002 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, ऊचानी (करनाल) में भी मंगलवार व बृहस्पतिवार 10 से 11 बजे तक फोन नं. 1800-180-3111 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।



# मार्च मास के कृषि कार्य



## फसलों में

### गन्ना

गन्ने की पछेती किस्मों की कटाई इसी महीने समाप्त करें व नई फसल की बिजाई इस माह पूरी कर लें। उन्नत किस्में, सी ओ जे 64, सी ओ एच 56 व सी ओ एच 92 (अगेती), सी ओ 7717, सी ओ एस 8436, सी ओ एच 99 व सी ओ एच 119 (दर्मियानी), सी ओ एच 128, सी ओ 1148, सी ओ एस 767 व सी ओ एच 110 (पछेती) आदि ही बोंएं। खेत की तैयारी के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा इसके बाद 6-8 जुताइयां देसी हल से करके सुहागा लगाएं। जमीन के नीचे सख्त सतह को तोड़ने के लिए बिजाई से पहले 1.5 × 1.5 मीटर की दूरी पर चिजलर को 1.5 फुट गहराई पर 4 साल में एक बार जरूर चलाएं। इससे भूमि की भौतिक स्थिति में बहुत सुधार आता है। चिजलर चलाने के बाद खेत की तैयारी के लिए 2 बार हैरो, 2 बार कल्टीवेटर चलाकर सुहागा लगाएं। एक एकड़ गन्ने की बिजाई के लिए 35-40 क्विंटल गन्ने, यानि लगभग 35,000 दो आंखों वाले टुकड़ों या 23000 तीन आंख वाले टुकड़ों की जरूरत होती है। अच्छे जमाव तथा कंडुआ के बीजगत संक्रमण के निवारण हेतु 0.25 प्रतिशत

#### लेखक :

- आर. एस. हुड्डा, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- आर. के. गोदारा, सह-निदेशक (बागवानी)
- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (पादप रोग विज्ञान)
- एम. एस. ग्रेवाल, परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)
- वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह, सहायक वैज्ञानिक (पशु पालन - लुवास)
- अशोक चन्द्र यादव, परामर्शदाता (सब्जी विभाग)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

एमिसान या मेन्कोजेब (250 ग्राम/100 लीटर पानी) से बीज को 4-5 मिनट डुबोकर उपचार करके ही बोंएं। बिजाई दो खूडों में फासला लगभग 60 से 75 सें.मी. व गहराई 7.5 सें.मी. रखकर करें। पोरी के 1/4 भाग को दूसरी पोरी पर चढ़ाकर बोंएं व बिजाई करने के बाद सारे खेत में सुहागा लगाएं। गन्ने के जमाव को बढ़ाने के लिए आधा सूखा खूड सिंचाई विधि या गड्ढा (पिट) विधि द्वारा भी गन्ने की बिजाई की जा सकती है। दोपहर के समय बिजाई न करें। अच्छे जमाव के लिए बीज गन्ने के 2/3 ऊपरी भाग से ही लेना चाहिए। खरपतवारों की रोकथाम के लिए अट्राजीन 50 घुलनशील पाऊंडर 1.6 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की दर से बिजाई के 2-3 दिन बाद 250-300 लीटर पानी में घोलकर छिड़कें। एकीकृत खरपतवार नियंत्रण हेतु बिजाई के 35-40 दिन बाद एक गुड़ाई करके दूसरी सिंचाई के बाद नमी में 1.6 किलोग्राम प्रति एकड़ अट्राजीन का छिड़काव करें। अन्तः फसलीकरण में इस शाकनाशक का प्रयोग न करें। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का नियंत्रण करने के लिए 1.0 कि.ग्रा. 2,4-डी (80% सोडियम नमक) 250 लीटर पानी में बिजाई के 7-8 सप्ताह बाद प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें। यदि फसल में मोथा (डीला) घास की समस्या हो तो घास उगने पर 2,4-डी (इस्टर) का 400 मि.ली. प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें। 2,4-डी मोथा घास को ऊपर से ही नष्ट करती है इसलिए घास के दोबारा उगने पर छिड़काव को दोहराएं। मोथा (डीला) घास के नियंत्रण के लिए सैम्प्रा (75% हैलोसल्फ्यूरोन) का 36 ग्रा. प्रति एकड़ की दर से 200 लीटर पानी में घोलकर बिजाई के 35-45 दिन बाद (पहली सिंचाई के 2-3 दिन बाद) जब मोथा घास 3-5 पत्ती की हो तब फ्लैट फैन नोज़ल से छिड़काव करें। अन्तः फसलीकरण में इस शाकनाशक का प्रयोग करें।

कम लागत से अधिक पैदावार प्राप्त करने तथा पूरा लाभ लेने के लिए गन्ना बोने से पहले मिट्टी का परीक्षण कराएं। सामान्यतः 15-20 गाड़ी गोबर की अच्छी प्रकार गली-सड़ी खाद बिजाई से 20-25 दिन पहले डालें। खाद को पूरे खेत में समान रूप से बिखेर कर मिट्टी की ऊपरी तह में मिला दें। यदि खाद कच्ची हो तो 20-25 किलोग्राम यूरिया/एकड़ भी बिखेर दें और हल्की सिंचाई

कर दें। बिजाई के समय पोरियों के नीचे 20 किलोग्राम नाइट्रोजन (45 किलोग्राम यूरिया खाद) व 20 किलोग्राम फास्फोरस (125 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट या 45 किलोग्राम डी ए पी)/एकड़ डालें। रेतीली तथा कल्लर भूमि में 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट भी प्रति एकड़ बिजाई के समय अवश्य प्रयोग करें। यदि जमीन में प्राप्य पोटाश कम हो तो 35 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश/एकड़ भी डालें। गन्ने की मोढ़ी में 65 कि.ग्रा. यूरिया/एकड़ छिट्टा करके पानी दें।

बिजाई के लिए कीटग्रस्त पोरियां न लें। फसल उगते समय दीमक पोरी की आंखों को नष्ट कर देती है। कनसुए के आक्रमण से पौधों की गोभ सूख जाती है। अतः इन दोनों कीटों से फसल को बचाने के लिए बिजाई के समय 2.5 लीटर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. या या 600 मि.ली. फिप्रोलिन (रीजेन्ट) 5 एस.सी. को 600 से 1000 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ खूड़ों में बीज के ऊपर फव्वारे से डालें। 150 मि.ली. इमिडाक्लोप्रिड (कान्फीडोर) 200 एस. एल. को 250-300 लीटर पानी में मिलाकर भी नैपसैक पंप द्वारा इस्तेमाल किया जा सकता है।

### गेहूँ और जौ

इस समय फसलें दूधिया अवस्था में होती हैं। अतः इनकी सिंचाई करनी आवश्यक है। अगर खेत में कुछ पौधे मूल किस्म के पौधों से भिन्न दिखाई दें तो उनको बीज की शुद्धता के लिए निकाल दें। खुली कांगियारी से ग्रसित गेहूँ की बालियों को देखते ही खेत से सावधानीपूर्वक लिफाफे से ढककर निकाल दें तथा इसे खेत से बाहर ले जाकर मिट्टी में गहरे दबाकर नष्ट करें या जला दें। बालियाँ निकालते समय पौधे अधिक नहीं हिलाने चाहिए क्योंकि इससे फफूंदीकण बिखर जाते हैं।

इस महीने गेहूँ की पत्तियों के पीलेपन के कई कारण हो सकते हैं। जमीन में देर तक पानी खड़ा रहने, अधिक सर्दी या जमीन में कंकर होने या फास्फोरस या जिंक की कमी के कारण भी पीलापन हो सकता है। अगली फसल में प्रति एकड़ 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट और फसल की आवश्यकतानुसार फास्फोरस की खाद डालें।

जिन स्थानों में पत्तों की कांगियारी (फ्लैग स्मट) देखें उन पौधों को काटकर, जलाकर नष्ट कर दें।

किसी-किसी वर्ष जौ व गेहूँ में अल (चेपा या माहू) का आक्रमण हो जाता है। इस कीट से फसल को बचाने के लिए 400

मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

### सूरजमुखी

बिजाई के 3 सप्ताह बाद निराई-गुड़ाई अवश्य करें। सूरजमुखी में 24 किलोग्राम नाइट्रोजन व 16 किलोग्राम फास्फोरस उन्नत किस्मों में एवं 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (90 कि.ग्रा. यूरिया) तथा 20 (125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) किलोग्राम फास्फोरस संकर किस्म के लिए प्रति एकड़ प्रयोग करें। नाइट्रोजन बिजाई व पहली सिंचाई पर बराबर मात्रा में डालें। फास्फोरस बिजाई के समय पोरा करें।

कटुआ सूण्डी या हरे रंग की सूण्डी का आक्रमण हो तो 10 कि.ग्रा. फैनवालेरेट 0.4 प्रतिशत प्रति एकड़ धूड़ें या 80 मि.ली. फैनवालेरेट 20 ई.सी. या 50 मि.ली. सायपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 150 मि.ली. डैकामेथ्रिन 2.8 ई.सी. को 100-150 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

### सरसों व राया

बिना पकी फसल में औसत 10 प्रतिशत या इससे अधिक पौधों पर (चेपा या माहू) का आक्रमण हो तो 400 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या रोगोर 30 ई.सी. को 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

सफेद रतुआ तथा मृदुरोमिल रोगग्रस्त टहनियों को काटकर जला दें। पछेती बीजी गई फसलों पर आल्टरनेरिया ब्लाइट, डाऊनी मिल्ड्यू और सफेद रतुआ के उपचार के लिए 600-800 ग्राम डाइथेन या इण्डोफिल एम-45 को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें। जरूरत अनुसार छिड़काव 2-3 बार 15 दिनों के अंतर पर दोहराएं।

### चना

वर्षा के अभाव में चने में फल आने के बाद सिंचाई करें। चने में टाट वाली सूण्डी लगने पर 400 मि.ली. क्विनलफॉस 25 ई.सी. या 400 ग्राम कार्बेथिल 50 घु. पा. या 200 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस. एल. या 80 मि.ली. फैनवालेरेट 20 ई.सी. या 125 मि.ली. साइपरमैथ्रिन 10 ई.सी. या 50 मि.ली. साइपरमैथ्रिन 25 ई.सी. या 150 मि.ली. डैकामैथ्रिन 28 ई.सी. को 100 लीटर पानी में घोल बनाकर या 150 मि.ली. नोवालूरान 10 ई.सी. (रिमोन) 150 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। अथवा 10 कि. ग्रा. कार्बेथिल 5 प्रतिशत या क्विनलफॉस 1.5 प्रतिशत धूड़ा प्रति



एकड़ धूँड़ें। एक मीटर लंबे खूड में औसतन एक सूण्डी मिले तब ही कीटनाशक छिड़कें। जरूरत पड़ने पर 15 दिन बाद इन्हीं में से किसी एक कीटनाशक का छिड़काव/भुरकाव पुनः करें। झुलसा रोग के लक्षण आते ही फसल पर 500 ग्राम डाइथेन या इण्डोफिल एम-45 का 250 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

### कपास

पिछली कपास फसल के टूटों से हुए फुटाव को नष्ट करें क्योंकि इन पर विभिन्न प्रकार के कीड़े पनपते हैं। गर्मी के मौसम में मीलीबग भी इन पर शरण लेता है व संख्या-वृद्धि करता है।

कपास की फसल काटने से लेकर अगली फसल लेने तक, जहां भी सूण्डियां हों, उन्हें मारें ताकि आने वाली फसल में इनका कम प्रकोप हो। गुलाबी सूण्डी नवम्बर से मार्च तक कपास के बीजों में, छंटियों के साथ लगे टिण्डों या फिर घरों व मिलों में पड़े बीज में सुषुप्तावस्था में पड़ी रहती है व मार्च के बाद प्यूपा बनते हैं जिनसे पतंगे बन कर उड़ जाते हैं।

जो भी छंटियां मार्च के बाद जलाने के लिए रखनी हों उनको हर हालत में मार्च में ही झाड़ लें व जो भी टिण्डे, कचरा आदि झड़ जाएं उनको जला दें। यह काम अभियान के रूप में करें।

मार्च तक मिलों में प्रायः कपास में से बिनौले व रूई अलग कर लिए जाते हैं। इसलिए विस्तार कार्यकर्ताओं को मिलों में जाना चाहिए और जो भी कचरा बाकी बचा पड़ा हो उसे जलवा कर नष्ट करवाना चाहिए।

### बरसीम व लूसर्न

चारे के लिए समय-समय पर इन फसलों की कटाई करते रहें। प्रत्येक कटाई के बाद फसल को पानी अवश्य दें। बरसीम की फसल से बीज लेने के लिए शुष्क क्षेत्रों में इसकी कटाई मार्च के पहले सप्ताह तथा नम क्षेत्रों में मार्च के तीसरे सप्ताह के बाद न करें। काशनी, बथुआ आदि खरपतवारों के पौधे हों तो उन्हें खेत से निकाल देना चाहिए। इससे बीज की शुद्धता बनी रहती है।

### बैसाखी मूंग

खड़ी फसल की कटाई के तुरंत बाद एक सिंचाई करें। आवश्यकतानुसार दो बार खेत की जुताई करके बैसाखी मूंग की बिजाई मार्च तक पूरी कर लें। मूंग की उन्नत किस्म एम.एच. 421, एम एच 318, सत्या, बसन्ती व मुस्कान की बिजाई की सिफारिश की जाती है। इस समय एक एकड़ की बिजाई के लिए 10-12 कि.ग्रा. बीज आवश्यक है। सिंचित क्षेत्रों में बिजाई पंक्तियों में

लगभग 20-25 सें.मी. का फासला रखकर करें। बीज की बिजाई से पहले मूंग को राइजोबियम टीके से उपचारित करें। बिजाई के समय 100 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट तथा 12 किलोग्राम यूरिया एक एकड़ में ड्रिल करें। यदि उपर्युक्त उर्वरक उपलब्ध न हों तो 35 किलोग्राम डी. ए. पी. का प्रयोग बिजाई के समय बीज के नीचे पोरा करें। सल्फर की आवश्यकता पूरी करने के लिए 200 किलोग्राम यानि 4 कट्टे जिप्सम/एकड़ भी प्रयोग करें।

### नेपियर (हाथी घास)

नेपियर घास की रोपाई मार्च में पूरी कर लें। खेत की तैयारी करके उसमें प्रति एकड़ लगभग 20 गाड़ी गोबर या कम्पोस्ट खाद मिला दें। नेपियर घास की बिजाई के लिए नेपियर बाजरा संकर नं. 21 ही लगाएं। एक एकड़ के लिए 11,000 तने के टुकड़े (50 सें. मी. लंबे, दो-तीन आंखों वाले) काफी होंगे। इन जड़ों या तनों के टुकड़ों को कतारों में ढाई फुट तथा टुकड़ों की आपस की दूरी दो फुट रखकर लगाएं। पहले से चली आ रही नेपियर (हाथी) घास की अच्छी तरह निराई-गुड़ाई करके लगभग आधा कट्टा यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से डालें और समय पर सिंचाई करते रहें।

### अरहर

मार्च से अरहर की बिजाई की जा सकती है। जहाँ पर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है वहाँ अरहर की किस्म मानक, यू पी ए एस-120 व पारस लें। शुद्ध फसल में पंक्ति से पंक्ति (कतार) का फासला 40 सें.मी. व मिश्रित फसल में 50 सें.मी. रखकर बिजाई करें। बीच में एक पंक्ति मूंग की भी लेना लाभदायक रहता है। एक एकड़ के लिए अरहर का 5-6 किलोग्राम बीज डालें। बिजाई के समय बीज को राइजोबियम के टीके से उपचारित करें। बिजाई के समय 100 किलोग्राम सुपर फास्फेट एवं 12-17.5 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ बीज के नीचे ड्रिल करें। यदि सिंगल सुपर फास्फेट न मिले तो 35 किलोग्राम डी. ए. पी. प्रति एकड़ बीज के नीचे ड्रिल करें। इससे नाइट्रोजन तथा फास्फोरस दोनों की आवश्यकता पूरी हो जाएगी। दो कट्टे जिप्सम (100 किलोग्राम) प्रति एकड़ भी प्रयोग करें इससे सल्फर की आवश्यकता पूरी होगी।

### गर्मी के चारे

इस माह में अगेते चारे के लिए बाजरा की कोई भी संकर किस्म (दूसरी पीढ़ी), ज्वार की किस्में हरियाणा चरी 136 (एच सी 136), हरियाणा चरी 171 (एच सी 171), स्वीट सूडान घास 59-3 (एस एस जी 59-3), हरियाणा चरी 308 (एच सी 308)

व हरियाणा ज्वार 513 (एच जे 513), लोबिया की सी एस 88 व ग्वार की एच एफ जी 156 की बिजाई शुरू करके अप्रैल तक पूरी कर लें। खेत की अच्छी तरह तैयारी करके बाजरे के लिए 3-4 किलोग्राम, ग्वार के लिए लगभग 16 किलोग्राम, सूडान घास के लिए 10-14 किलोग्राम ज्वार के लिए 20 से 24 कि.ग्रा. व लोबिया के हरे चारे के लिए 16-20 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ के हिसाब से तथा कतारों का फासला ज्वार हेतु 25 सें.मी., बाजरा, ग्वार व लोबिया में 30 सें.मी. रखकर पोरे से बिजाई करें। बाजरा, ज्वार व सूडान घास की बिजाई के समय 44 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से डालें। लोबिया के लिए लगभग 100 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट व 12 कि.ग्रा. यूरिया खाद बिजाई के समय बीज के नीचे प्रति एकड़ पोरे दें। चारे के लिए बाजरे की किस्म का ध्यान अवश्य रखें। डाऊनी मिल्ड्यू अवरोधी किस्म ही चुनें।



## सब्जियों में

### टमाटर

फरवरी में बसंतकालीन फसल की रोपाई के बाद अब फसल को निराई-गुड़ाई तथा सिंचाई की आवश्यकता पड़ेगी। सिंचाई लगभग आठ-दस दिनों के अंतर पर करें। रोपाई करने के लगभग तीन सप्ताह बाद 14 किलोग्राम नाइट्रोजन (30 किलोग्राम यूरिया खाद) प्रति एकड़ की दर से खड़ी फसल में टॉप ड्रेसिंग द्वारा दें। इस उर्वरक को देने के बाद सिंचाई अवश्य करें। फफूंद रोग से रक्षा के लिए रोगों से बचाव हेतु नियमित रूप से 600-800 ग्राम इण्डोफिल एम-45 को 250 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ खेत में 10-15 दिन के अंतर पर छिड़काव करें। विषाणु रोग वाले पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। हड्डा बीटल, हरा तेला व सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ 15 दिन के अंतर पर छिड़काव करें। इससे विषाणु रोग भी नियंत्रण में किया जा सकता है।

### बैंगन

रोपाई की गई बैंगन की फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा निराई-गुड़ाई करें। मरी व सूखी हुई पौध के स्थान पर दोबारा पौध की रोपाई करें। पौधरोपण के लगभग तीन सप्ताह बाद

खड़ी फसल में 14 किलोग्राम नाइट्रोजन (30 किलोग्राम यूरिया खाद) प्रति एकड़ की दर से दें। यूरिया खाद देने के बाद सिंचाई अवश्य करें। नई फसल में रस चूसने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए 300-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर 15 दिन के अंतर पर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। टहनियों के कीट ग्रसित भाग को तोड़कर नष्ट कर दें। फूल/फल लगने पर शाखा व फल छेदक तथा अन्य कीड़ों की रोकथाम के लिए नीचे लिखी (क) व (ख) भाग में से बारी-2 किसी एक कीटनाशक दवा को 200-250 लीटर पानी में मिला कर 15-20 दिन के अंतर पर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें।

- (क) (i) फेनवालेरेट 20 ई.सी.-80 मि.ली.
- (ii) साईपरमेथ्रिन 25 ई.सी.-70 मि.ली.
- (iii) डैल्टामेथ्रिन 2.8 ई.सी.-200 मि.ली.

- (ख) (i) कार्बेरिल 50 डब्ल्यू. पी.-500 ग्रा.
- (ii) स्पाइनोसेड 45 एस.सी.-75 ग्राम/80 लीटर पानी

### मिर्च

ग्रीष्म ऋतु की फसल की रोपाई यदि फरवरी माह में की है तो उसके लगभग तीन सप्ताह बाद, 8 किलोग्राम नाइट्रोजन (18 किलोग्राम यूरिया खाद) प्रति एकड़ की दर से दें। किसान खाद देने के बाद सिंचाई करें। फसल की निराई-गुड़ाई करें तथा उचित समय से सिंचाई करें। मिर्च की फसल को विषाणु रोग व कीड़ों से बचाने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर 10-15 दिन के अंतर पर एक एकड़ में लगी फसल पर छिड़काव करें।

### मटर

मटर की पत्तियों में सुरंग बनाने वाले कीड़ों का प्रकोप होने पर 400 मि.ली. डाईमेटोएट 30 ई.सी. या 500 मि.ली. मिथाइल डेमेटान 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़कें। सफेद चूर्णी रोग के लक्षण दिखते ही 500 ग्राम सल्फैक्स या केराथेन 40 ई.सी. 80 मि.ली. प्रति एकड़ के हिसाब से 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। तैयार फलियों को तोड़कर बाजार में भेजें।

### पत्तागोभी व गांठगोभी

फसल की आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा इस माह के अंत तक लगभग सभी फूलों/गांठों की कटाई कर लें।

## प्याज व लहसुन

प्याज की फसल में थ्रिप्स (चूरड़ा) का आक्रमण हो तो 300 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 75 मि.ली. फैनवैलरेट 20 ई.सी. या 175 मि.ली. डैल्टामैथ्रिन 2.8 ई.सी. या 60 मि.ली. साईपरमैथ्रिन 25 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़कें। इसके साथ कोई चिपचिपाहट लाने वाला पदार्थ भी मिला लें जिससे कि घोल भली प्रकार पौधों पर चिपक सके।

## मूली

गर्मी में मूली की बिजाई की जा सकती है। इस समय केवल 'पूसा चेतकी' किस्म को ही प्रयोग में लाएं। उचित होगा कि दोमट मिट्टी में छोटी-छोटी डोलियों पर ही इसकी बिजाई करें। डोलियों में 30 से 45 सें.मी. की दूरी रखें।

## पालक

गर्मी की फसल की बिजाई, यदि न की हो तो, अभी भी की जा सकती है। एक एकड़ के लिए लगभग 8 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होगी। जोबनेर ग्रीन, आल ग्रीन या एच एस 23 किस्मों को प्रयोग में लाएं। तैयार खेत में बिजाई 15-20 सें.मी. की दूरी पर कतारों में करें।

## भिण्डी

भिण्डी की बिजाई इस माह में भी की जा सकती है। पूसा सावनी, हिसार उन्नत, हिसार नवीन, एच बी एच 142 व वर्षा उपहार किस्मों का बीज प्रयोग में लें। एक एकड़ के लिए 16-18 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होगी। जड़ गलन से बचाव के लिए बोने से पहले बीज को कारबेंडाजिम (दो ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) नामक फफूंद नाशक दवा से उपचारित करें।

यदि भिण्डी की बिजाई फरवरी माह में की है तो फसल की उचित सिंचाई व निराई-गुड़ाई करें तथा लगभग 30 कि.ग्रा. यूरिया खाद (14 कि.ग्रा. नाइट्रोजन) प्रति एकड़ की दर से बिजाई के लगभग एक महीने के बाद दें। किसान खाद देने के बाद सिंचाई करना आवश्यक है। तापमान के बढ़ने के साथ ही चित्तीदार तना व फलबेधक सूण्डी की रोकथाम के लिए 400-500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 400-500 ग्राम कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. को 250-300 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

## तरबूज व खरबूजा

फसल की निराई-गुड़ाई करें तथा उचित सिंचाई का प्रबंध करें। बिजाई के लगभग एक माह के बाद 15 कि.ग्रा. यूरिया खाद

(7 किलोग्राम नाइट्रोजन) प्रति एकड़ की दर से खड़ी फसल में दें तथा सिंचाई करें। कद्दू जाति की सब्जियों में लाल भूण्डी (लालड़ी) का प्रकोप इस महीने में बहुत अधिक होता है। इसके नियंत्रण के लिए 5 कि.ग्रा. कार्बेरिल 5 डी. को 5 कि.ग्रा. राख में मिला कर प्रति एकड़ धूड़ा करें। इसके अतिरिक्त 25 मि.ली. साईपरमैथ्रिन 25 ई.सी. या 30 मि.ली. फैनवैलरेट 20 ई.सी. या 100 ग्रा. कार्बेरिल 50 घु. पा. को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल में छिड़काव भी किया जा सकता है।

इस कीट की लटों (ग्रब्स), जो जड़ों को खाकर नुकसान पहुंचाती हैं, की रोकथाम के लिए 1.6 लीटर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. को सिंचाई के साथ लगाएं। तरबूज की फसल में 2 व 4 सच्ची पत्ती की अवस्था में जबैरैलिक एसिड 25 पी.पी.एम. के घोल का छिड़काव करने से प्रति एकड़ कुल उपज में बढ़ोत्तरी होती है। खरबूजे की फसल में भी 2 व 4 सच्ची पत्ती की अवस्थाओं में एथरिल 100 पी.पी.एम. घोल के छिड़काव द्वारा कुल उपज में बढ़ोत्तरी पाई गई है।

## कद्दू जाति की अन्य सब्जियां

कद्दू जाति की अन्य सब्जियों की बिजाई इस माह में की जा सकती है।

## अरबी

अरबी की बिजाई इस माह में भी की जा सकती है। एक एकड़ के लिए लगभग 320-400 किलोग्राम गांठों की आवश्यकता होती है। यदि बिजाई फरवरी माह में कर दी है तो फसल की निराई-गुड़ाई करें। खरपतवार निकालें तथा सिंचाई करें।

## अन्य सब्जियां

ग्वार और लोबिया की बिजाई इस माह में भी की जा सकती है। शकरकंदी की यदि खेती करनी हो तो इसकी बेलों (काट) का प्रबंध करें। शकरकंदी की काट रोपण का मुख्य समय अप्रैल से जुलाई होता है। बेलें उगाने के लिए इनके कन्दों को फरवरी से अप्रैल के महीनों में बीजना चाहिए।



## फलों में

### संतरा, माल्टा, नींबू आदि

अगर अब तक सदाबहार एवं पतझड़ के फलदार नए पौधे नहीं लगाए हों तो दूसरे सप्ताह तक मिट्टी के साथ लगा सकते हैं। लगाए गए पौधों में हल्की सिंचाई अवश्य करें। अगर हो सके तो



हर सिंचाई के बाद निराई-गुड़ाई करें ताकि घास-फूस न होने पाए। बड़े पौधों में भी सिंचाई 10 दिन के अंतराल पर अवश्य करें ताकि पानी की कमी से फूल-फल न झड़ें। जट्टी-खट्टी के पौधों की टी (T) तरीके से नर्सरी में प्योद तैयार करें। अगर नए पौधे में जस्ते, व (कॉपर) की कमी दिखाई देती हो तो 500 ग्राम जिंक सल्फेट, 2 किलोग्राम कॉपर सल्फेट और 1-2 किलोग्राम यूरिया 100 लीटर पानी में मिलाकर पौधों पर छिड़काव करें।

यदि तेला, सिल्ला, पत्ती सुरंगी कीड़ा या सफेद मक्खी का आक्रमण हो तो 750 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या 625 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

### आम

आम के पौधों में सिंचाई 8-10 दिन के अंतर पर अवश्य करें। इस तरह से नए बने फल कम झड़ेंगे। अगर पिछले महीने उर्वरक न डाले हों तो इस महीने के पहले सप्ताह तक अवश्य डालकर सिंचाई कर दें। अगर पत्तों में नाइट्रोजन की कमी दिखाई देती हो तो इस माह के आखिरी सप्ताह में 2 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव करें। ऐसा करने से छोटे बचे फल नहीं झड़ पाएंगे।

छाल खाने वाली सूण्डियां तनों में सुराख करती हैं। इनके नियंत्रण के लिए रूई के फोहों को दवा के घोल में डुबोकर किसी धातु के तार की सहायता से कीटों के प्रत्येक सुराख के अंदर डाल दें। इसके लिए एक लीटर पानी में 40 मि.ली. मैटासिड 50 ई.सी. दवा मिलाकर घोल बनाएं।

तेले की रोकथाम के लिए 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 1.5 कि.ग्रा. कार्बेरिल 50 घु.पा. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। गोभ छेदक कीट पेड़ की नई कोंपलों में छेद करता है जिससे वे सूख जाती हैं। इसलिए सूखी टहनियों को तोड़कर जला दें तथा नई कोंपलों पर 250 मि.ली. मिथाईल पैराथियान (मैटासिड) 50 ई.सी. या 125 मि.ली. डाईक्लोरवास (नूवान) या 400 मि.ली. रोगोर या 1.0 कि.ग्रा. कार्बेरिल 50 घु. पा. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ बाग में छिड़कें। आम में ब्लैक टिप (काला सिरा) रोग की रोकथाम के लिए बोरेक्स (0.6%) के 2 छिड़काव फूल आने से पहले करें। तीसरा छिड़काव फल बनने के बाद 0.3 प्रतिशत कॉपरऑक्साईड का करें। बाग में पानी की निकासी ठीक रखें ताकि ज्यादा नमी न रहे।

### अंगूर

पिछले साल लगाई गई नई बेलों की सिंचाई अच्छी तरह से करें। बेलों में थोड़ी-2 खाद 25-30 ग्राम यूरिया खाद प्रति पेड़ डालते रहें और सिंचाई भी महीने में कम से कम तीन बार करें और पुरानी बेलों में सिंचाई दो बार अवश्य करें। इस माह के आखिरी सप्ताह में सिंचाई आवश्यक है। बेलों की जाल पर सिंधाई ठीक ढंग से करें।

अंगूर का थ्रिप्स (चूरड़ा) भूरे रंग के पतले लंबे कीट होते हैं जो पत्तों से रस चूसते हैं तथा नए निकल रहे पत्तों को कमजोर बना देते हैं। इसके भारी आक्रमण से पत्ते लाल पड़ जाते हैं तथा सूख जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 150 मि.ली. फेनवलरेट 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़कें।

बालों वाली सूण्डियां बड़ी तेजी से पत्तों को खाती हैं। इनकी रोकथाम के लिए छोटी सूण्डियों को यांत्रिक विधि से नष्ट करें। इसके बाद यदि आवश्यकता हो तो 500 लीटर पानी में 400 मि.ली. डाईक्लोरवास 76 ई.सी. घोल कर एक एकड़ में छिड़काव करें।

### आड़ू व अलूचा

नए लगाए गए पौधों की सिंचाई अच्छी तरह से करें। 8-10 दिन के अंतर पर सिंचाई करें और आधी नाइट्रोजन खाद की बची मात्रा इस माह के अंत तक अवश्य डाल दें। इन फलों पर अल या चेपा लगने पर पत्ते मुड़ जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए 500 मि.ली. डाईमेथोएट (रोगोर) 30 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ पेड़ों पर नए फुटाव से पहले छिड़कें। जब फल मटर के दाने के बराबर हो जाएं तब दूसरा छिड़काव करें। रेतीली मिट्टी में गर्मी में प्रायः अलूचा में जस्ते की कमी देखी गई है। जिसे 3 किलोग्राम जिंक सल्फेट व 1.5 किलोग्राम चूना 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने पर ठीक किया जा सकता है।

### अमरूद

वर्षा ऋतु की फसल लेने के लिए पौधों में पानी एक सप्ताह के अंतराल पर लगाएं। थ्रिप्स (चूरड़ा) अमरूद के पत्तों पर भी काफी लगता है। जैसा अंगूर में बताया गया है उसी प्रकार इसका नियंत्रण करें।

### बेर

पछेती किस्मों की इस माह के पहले सप्ताह में सिंचाई की जा सकती है। फल तोड़ने से पहले सिंचाई बंद कर दें। पके फलों को

तोड़कर मण्डी में भेजने का प्रबंध करें। पौधों को दीमक से बचाने के लिए 1 लीटर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. प्रति एकड़ सिंचाई करते समय डालें।

### अन्य फल

सिंचाई हर 8-10 दिन के बाद अवश्य करें। जुलाई-अगस्त में लगाए जाने वाले पौधों के लिए जमीन की उपयुक्तता जानने के लिए मिट्टी के नमूने लेकर मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला में भेजें। खाली जमीन को निशानदेही के लिए तैयार करवा लें। पपीते के पौधों को तैयार करने के लिए नर्सरी की बिजाई इसी माह में पूरी करें। 120 ग्राम बीज को केप्टान से उपचारित करके नर्सरी में लगाएं। यह नर्सरी एक एकड़ के लिए पर्याप्त है।

नोट : पानी की कमी को देखते हुए सिंचाई ठीक ढंग से करें। हर सिंचाई के बाद निराई-गुड़ाई करें। जमीन से नमी न उड़ने दें। गोड़ाई करने के बाद सरसों का तूड़ा या घास-फूस (मल्लिचग मैटीरियल) जमीन पर बखेर दें। इससे जमीन से पानी नहीं उड़ेगा।



## पशुओं में

### गाय-भैंस

- ❖ ग्रीष्म काल की शुरुआत होनी वाली है, अतः पशु आवास में उचित प्रबंधन करें।
- ❖ दिन के गर्मी के तापमान और रात के तापमान से पशुओं को ज्यादा नुकसान होता है, अतः मार्च मास में भी रात्रि में पशु-आवास में उचित प्रबंध रखें।
- ❖ यदि सुखी तूड़ी नई हो तो, यह पशु चारे में पुरानी तूड़ी के साथ मिश्रित करके इस्तेमाल करें। एकदम नई तूड़ी या सूखा चारा बदलाव से पशुओं में बंधा पड़ सकता है।
- ❖ मौसम बदलाव के साथ-साथ बीमारियों का प्रकोप बढ़ सकता है। विशेषकर परजीवी जनित व सांस की बीमारियां (गलघोंटू इत्यादि)। अतः पशु-चिकित्सक से सम्पर्क कर गलघोंटू, मुँह-खुर इत्यादि के टीकाकरण जरूर करें। नए खरीदे पशुओं का पशु-चिकित्सक से विशेष रूप से टीकाकरण करवाएं।
- ❖ इस माह में परजीवी (चीचड़, मक्खी, मच्छर आदि) का प्रकोप बढ़ सकता है, अतः पशुशाला में इनके बचाव के प्रावधान करें जैसे कि पशुशाला में पानी, कीचड़ का जमाव न होने देना, मच्छरदानी का प्रयोग करना, पशुओं पर खरहरा

मारना, नियमित रूप से साफ-सफाई करवाना इत्यादि।

- ❖ पशुपालक मक्खी-मच्छर से बचाव के लिए कीटनाशक दवाओं के साथ-साथ नीम का तेल का प्रयोग पशु-शरीर पर कर सकते हैं। पशुपालक कीटनाशक दवाओं का प्रयोग करते समय सावधानी बरतें, छिड़काव करते समय शरीर (आँख-नाक, हाथ-पैर आदि) ढक कर रखें। छिड़काव से पहले सदैव पशुओं को पानी पिला लें अन्यथा पशु दवा चाट सकता है, पशु-शरीर के साथ-साथ पशुशाला के फर्श व दीवारों (कम से कम 4 फीट तक) जरूर छिड़काव करें ताकि परजीवी के अण्डे भी समाप्त हों। कीटनाशक दवा कभी-भी तूड़ी-घर में न रखें।
- ❖ पशुओं को हर साल ब्याने योग्य रहने के लिए अच्छे प्रजनन की आवश्यकता होती है जिसमें खनिज मिश्रण का महत्वपूर्ण योगदान है, अतः यह सुनिश्चित करें कि हर पशु को हर दिन खनिज-मिश्रण की उपलब्धता रहे।
- ❖ भेड़-बकरियों को रात्रि समय में छत के नीचे जरूर रखें व इनमें फड़कीया और पी.पी.आर. आदि रोगों का टीकाकरण करवाएं।
- ❖ हरे चारे (जई इत्यादि) का परिरक्षण साईलेज के रूप में करें।
- ❖ यदि फरवरी में मक्का की बिजाई न की हो तो मार्च में करें।

### गृह विज्ञान

- ❖ गर्म कपड़ों की मुरम्मत करके, धोकर या ड्राईक्लीन करवाकर उचित स्थान या संदूक में रखें।
- ❖ गर्म कपड़ों को रखते समय उनमें फिनाइल की अच्छी किस्म की गोलियां रख दें या नीम की सूखी पत्तियां भी डाली जा सकती हैं।
- ❖ फिनाइल की गोलियां संदूक में इधर-उधर नहीं बिखेरनी चाहिए। 3-4 गोलियां छोटे से कपड़े में लपेट कर बराबर दूरी पर डाल देनी चाहिए।
- ❖ फल व सब्जियों को खाने से पहले अच्छी तरह धो लेना चाहिए।
- ❖ प्रतिदिन स्नान करना चाहिए और नाखून, बाल व शरीर को साफ रखना चाहिए।
- ❖ होली पर कांजी, नमकीन और मिठाइयां घर पर ही बनानी चाहिए। क्योंकि घर पर बना सामान शुद्ध होने के कारण सर्वोत्तम माना जाता है।
- ❖ मौसम के अनुसार अचार व चटनी भी घर पर ही बनानी चाहिए।



# मशीनों द्वारा होने वाली दुर्घटना से बचाव

कुलदीप सिंह, जोगेन्द्र सिंह एवं संदीप कुमार

कृषि विज्ञान केन्द्र, सोनीपत

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कृषि में प्रयोग होने वाले साधन जैसे ट्रैक्टर, इंजन व कृषि यन्त्रों की संख्या लगातार बढ़ रही है। इन यन्त्रों के निर्माण में कोई न कोई कमी रहने के कारण कृषक दुर्घटनाओं का शिकार भी लगातार हो रहे हैं। कृषि यन्त्रों के प्रयोग के समय कृषक द्वारा बरती गई असावधानी दुर्घटना का कारण बन रही है। कृषि यन्त्रों द्वारा होने वाली दुर्घटनाएं मुख्यतया उचित जानकारी के अभाव में तथा उनके असुरक्षित प्रयोग द्वारा होती हैं। कई बार ये दुर्घटनाएं इतनी बड़ी होती हैं, जिसमें कृषक की जान भी चली जाती है। सबसे ज्यादा दुर्घटनाएं थ्रेशर, गन्ना पिराई मशीन, चारा काटने वाली मशीन, ट्रैक्टर एवं छिड़काव यन्त्रों के प्रयोग के समय होती हैं। अतः इन दुर्घटनाओं को रोकने के लिए मुख्य रूप से लोगों को जागरूक करने व मशीनों को सुरक्षित बनाने की आवश्यकता है।

**दुर्घटनाओं के मुख्य कारण :** कृषि मशीनरी दुर्घटनाओं के मूल कारणों में निर्माण में कमी, बचाव उपकरणों को सही तरह न लगाना, बचाव उपकरणों का सही कार्य न करना, जैसे (ब्रेक), यन्त्र निर्माण के बाद निर्माता द्वारा यन्त्रों का सही निरीक्षण न करना, निर्माण के दौरान सही सामग्री का प्रयोग न करना, निर्माण के समय सही तरीका न अपनाना आदि होते हैं। इन सभी कारणों के फलस्वरूप यन्त्रों के भाग सही कार्य नहीं करते, कृषि कार्यों के समय टूट-फूट एवं अवांछित रखरखाव, खर्च में बढ़ोत्तरी होती है तथा अनेक दुर्घटनाएं होने की भी संभावनाएं काफी बढ़ जाती हैं।

## कृषि मशीनरी दुर्घटनाओं के प्रकार :

कृषि यन्त्र दुर्घटनाओं के प्रकार एवं कारण निम्नलिखित हैं :

- ❖ **पलटना :** ऊँचे-नीचे स्थान पर कार्य करना, गति का अधिक होना, शीघ्र मोड़ना एवं एकदम चालू करना।
- ❖ **ऊपर से उतरना :** मशीन व उसके किसी भाग की बिना मशीन बन्द किए निगरानी करना।
- ❖ **लिपटना :** ढीले कपड़े पहनकर मशीन के पास कार्य करना। कपड़ा घूमती बैल्ट, चैन, सॉफ़्ट आदि में लिपट जाता है।
- ❖ **कटना :** शरीर के किसी हिस्से का धारदार भाग व ब्लेड आदि के सम्पर्क में आने के कारण।
- ❖ **कुचलना :** ट्रैक्टर एवं उसके साथ जुड़े यन्त्र के बीच में बैठना या खड़ा होना।

- ❖ **गिरना :** ट्रैक्टर या मशीन के पायदान से फिसलना।
- ❖ **जलना :** चलते या गर्म इंजन के धुआँ निकलने वाले भाग या रेडियेटर को छूना।
- ❖ **आग लगना :** ज्वलनशील पदार्थ, धूम्रपान, धुआँ निकलने वाले भाग एवं कार्बन कणों का असावधानीपूर्वक प्रयोग।
- ❖ **शारीरिक नुकसान :** अधिक शोर, अधिक धड़कन एवं रसायन छिड़काव के समय।

## कृषि मशीनरी के सही प्रयोग के सिद्धान्त :

1. सही वातावरण में कार्य करें, यह थकान और तनाव कम करेगा।
2. मशीन नियन्त्रित करने वाले भागों तक आसानी से पहुँच होनी चाहिए।
3. नियन्त्रित करने वाले भागों की सही पहचान करें।
4. मशीन के खतरनाक भाग, जैसे- कटर, रोलर एवं थ्रैशिंग सिलेण्डर आदि से कार्य करते समय दूरी बनाए रखें।
5. खतरनाक जगहों पर गार्ड का प्रयोग करना चाहिए।
6. गिरने से बचाने के लिए सही गार्डों का प्रयोग होना चाहिए।
7. संचालन की जगह तक जाने का साफ एवं आसान रास्ता होना चाहिए।
8. चालक को संचालन के समय चारों तरफ सही नजर आना चाहिए।
9. ऐसे उपकरण लगाएं ताकि मशीन अचानक दुर्घटना के समय काबू की जा सके। (चारा-कटाई मशीन में)
10. मशीन में असुरक्षित घटना के समय लॉक करने का प्रावधान होना चाहिए।
11. मशीन को आकस्मिक बन्द करने तथा उस तक आसानी से पहुँचने का प्रावधान होना चाहिए।
12. ताकत से अधिक भार नहीं उठाना चाहिए।
13. ट्रैक्टर व मशीन को पलटने से बचाने के लिए उचित सहारों का प्रावधान होना चाहिए।
14. सही क्रियान्वयन नियमों का पालन करना चाहिए।
15. निर्धारित तेल स्तर व रख-रखाव का हमेशा ध्यान रखें ताकि कार्य आसानी से पूरे किए जा सकें।

## थ्रेशर के प्रयोग में सुरक्षा के लिए :

- ❖ एक व्यक्ति को थ्रेशर पर 10 घण्टे से ज्यादा कार्य नहीं करना चाहिए।
- ❖ पट्टे के ऊपर व नजदीक से न गुजरें।
- ❖ थ्रेशर को बिजली की तारों से दूर स्थापित करें।
- ❖ थ्रेशर में सही मानक का पतनाला लगा होना चाहिए।

(शेष पृष्ठ 23 पर)



# सोयाबीन खाइए-स्वस्थ रहिये

सविता रानी एवं सुशील

रसायन एवं जैव-रसायन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत की बढ़ती जनसंख्या आज एक गंभीर पोषण समस्या से जूझ रही है वह है-प्रोटीन की कमी। देश में व्याप्त कुपोषण की समस्या के समाधान हेतु सोयाबीन एक अत्यंत प्रभावी उपयोगी व महत्वपूर्ण खाद्य पदार्थ है आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लिए सोयाबीन निस्संदेह ही पौष्टिकता के खजाने के समान है। इस में प्रचुर मात्रा में प्रोटीन और कोलेस्ट्रॉल रहित वसा पायी जाती है। साथ ही यह औषधीय गुणों में युक्त भी है जो कि मनुष्य के जीवन में होने वाली बीमारियों जैसे कि दिल की बीमारी, मधुमेह, यकृत रोग आदि में भी अत्यंत फायदेमंद है। इस के साथ-साथ महिलाओं की बढ़ती उम्र में होने वाले मैनोपोज के लक्षणों को कम करने का भी विशिष्ट गुण है। सम्पूर्ण पौष्टिक आहार एवं आदर्श खाद्य पदार्थ होने के कारण आधुनिक युग में सोयाबीन एक बहुविकल्पीय फसल के रूप में लोकप्रिय है। इस में मांस और अण्डे की तरह कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं है। इससे खाने योग्य गुणकारी खाद्य पदार्थ बनाए जा सकते हैं। सोयाबीन से बने खाद्य पदार्थों को 50 ग्राम रोज़ाना अपनी खुराक में शामिल करने से कोई भी व्यक्ति स्वस्थ जीवन व्यतीत कर सकता है।

**सोयाबीन के फायदे :** वर्तमान में उपलब्ध प्रोटीन के अन्य स्रोतों की तुलना में सोयाबीन में सर्वाधिक गुणवत्तायुक्त प्रोटीन पाया जाता है जिस में मानव शरीर के लिए आवश्यक सभी अमीनो अम्लों की उपस्थिति है। साथ ही लगभग 20 प्रतिशत तेल पाया जाता है। सोयाबीन बढ़ते बच्चों, हृदय रोगियों, मधुमेह व खून की कमी से ग्रस्त रोगियों हेतु फायदेमंद है। यह ऑस्टियोपोरोसिस स्तन कैंसर व प्रोस्टेट कैंसर से बचाव करता है। सोयाबीन गुणकारी प्रोटीन का सस्ता, सुलभ और अधिकतम मात्रा में प्राप्त होने वाला उपयोगी स्रोत है। सोयाबीन में हृदय रोगियों के लिए विशेषरूप से उपयुक्त ओमेगा-3 एवं ओमेगा-6 नामक वसा अम्लों का सही और उचित अनुपात होता है। पूर्णतः परिपक्व सोयाबीन में विटामिन-बी कॉम्प्लेक्स की श्रेणी के विटामिन पाए जाते हैं। सोयाबीन विटामिन-ई का भी अच्छा स्रोत है जो कि प्राकृतिक एंटी ओक्सिडेंट है। महिलाओं के लिए यह विशेष लाभकारी होता है क्योंकि सोयाबीन में लौह तत्व एवं कैल्शियम प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

**सोयाबीन में पाए जाने वाले पोषक तत्व :** सोयाबीन में अनेक पोषक तत्व जैसे प्रोटीन, खनिज लवण, वसा, रेशे, कार्बोहाइड्रेट कैल्शियम, लौह तत्व आदि पाए जाते हैं जिन का विवरण सारणी-1 में दिया गया है :

## सारणी-1: सोयाबीन में पाए जाने वाले पोषक तत्व:

प्रोटीन	36.5 ग्राम
वसा	19.9 ग्राम
रेशा	9.3 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	9.3 ग्राम
कैल्शियम	277 मि. ग्रा.
लौह तत्व	15.7 मि. ग्रा.
सोडियम	4.9 मि. ग्रा.
जिंक	1.7 मि. ग्रा.
कॉपर	1.7 मि. ग्रा.
मैंगनीज़	2.52 मि. ग्रा.

**स्रोत:** न्यूट्रीशियन वैल्यू ऑफ़ इण्डियन फूड्स, राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद, सोयाबीन अनुसंधान केन्द्र प्रसार बुलेटिन

सोयाबीन व गाय के दूध में उपलब्ध विभिन्न पोषक तत्वों की जानकारी आगे सारणी-2 में देखेंगे। खून में हीमोग्लोबिन की कमी तथा कुपोषण से ग्रस्त बच्चों के लिए सोयाबीन का रोज़ाना प्रयोग बहुत लाभकारी होता है। सोयाबीन में लगभग 20-25 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट तथा इस के छिलके में 10 प्रतिशत उत्तम किस्म के पाचक रेशे भी पाए जाते हैं जोकि भोजन का महत्वपूर्ण अंग होते हैं।

सोयाबीन में स्टार्च की मात्रा नहीं होने के कारण अन्य दलहनों की तरह इसकी दाल नहीं बन पाती है। सोयाबीन से बने खाद्य पदार्थों में कार्बोहाइड्रेट को ग्लूकोज में बदलने की क्षमता कम होती है। यह मधुमेह के रोगियों के लिए अत्यधिक लाभकारी है। इस के अतिरिक्त सोया दूध उन बच्चों एवं वयस्कों के लिए भी उपयुक्त है, जिनमें लैक्टोज एंजाइम की कमी से डेयरी दूध में उपस्थित लेक्टोज शूगर के पाचन में दिक्कत आती है।

**सोयाबीन की उन्नत किस्म (प्रजातियाँ):** विभिन्न कृषि अनुसंधानों द्वारा समय-समय पर किए गए शोध कार्यों के परिणामस्वरूप सोयाबीन की विभिन्न प्रजातियाँ विकसित एवं विमोचित की गई हैं, जिन के बारे में विस्तार से आगे बताया जा रहा है। इन प्रजातियों को उगाकर तथा इनके विभिन्न पौष्टिक व्यंजन बनाकर व उनका उपयोग कर हम कुपोषण की समस्या से निजात पा सकते हैं।

सारणी-2: सोयाबीन एवं अन्य दलहनी फसलों में उपलब्ध विभिन्न पोषक तत्व (प्रति ग्राम)

दलहन	नमी (ग्राम)	प्रोटीन (ग्राम)	खनिज (ग्राम)	वसा (ग्राम)	रेशा (ग्राम)	कैल्शियम (मि.ग्रा.)	फास्फेट (मि.ग्रा.)	लौह तत्व (मि.ग्रा.)
चना	9.8	17.1	3.0	5.1	3.9	202	312	4.6
मूंग	10.4	24.0	3.5	1.3	4.1	124	326	44
मसूर	12.4	25.1	2.1	0.7	0.7	69	293	7.58
मोठ	10.8	23.6	3.5	1.1	4.5	202	230	95
मटर	16.0	19.7	2.2	1.1	4.5	75	298	7.0
राजमा	12.0	22.9	3.2	1.3	4.8	260	410	
सोयाबीन	8.1	43.2	4.6	19.5	3.7	240	690	

स्रोत: न्यूट्रीशियन वैल्यू ऑफ इण्डियन फूड्स, राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद, सोयाबीन अनुसंधान केन्द्र प्रसार बुलेटिन।

**वी. एल. सोया 47:** इस प्रजाति के पौधों की ऊँचाई लगभग 90 से 95 सें.मी., पकने का समय 125 से 130 दिन तथा उपज क्षमता 19 से 23 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। यह प्रजाति भारत के उत्तर-पश्चिम पर्वतीय क्षेत्रों में वर्षाश्रित अवस्था के लिए अनुमोदित की गई है।

**वी. एल. सोया 59 :** इस प्रजाति के पौधों की ऊँचाई लगभग 48 से 92 सें.मी., पकने का समय 120 से 125 दिन तथा उपज क्षमता 25 से 28 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। यह प्रजाति सर्कोस्पोरा पर्ण चित के लिए मध्यम प्रतिरोधी है। हिमाचल प्रदेश व उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में वर्षाश्रित अवस्था में सही समय पर बोने के लिए अनुमोदित की गई है।

**वी. एल. सोया 65 :** इस प्रजाति के पौधों की ऊँचाई लगभग 66 से 82 सें.मी., पकने का समय 115 से 120 दिन तथा उपज क्षमता 11 से 14 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। यह प्रजाति फलीदाह, पर्ण दाह के लिए प्रतिरोधी है। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में जैविक स्थिति में सही समय पर बोने के लिए अनुमोदित की गई है।

**सोयाबीन से बनने वाले स्वादिष्ट व्यंजन:**

**1. सोया पकौड़े :** सोयाबीन पेस्ट के साथ आधा किलो बेसन मिलाकर अच्छी तरह मिला लें और स्वादानुसार अन्य सामग्री जैसे-कटे हुए प्याज, हरी मिर्च, हरा धनिया अन्य सामग्री एवं अदरक, जीरा, सौंफ अजवाइन व नमक डालें। उपर्युक्त सामग्री का पानी के साथ घोल बनाकर गर्म तेल में तलकर अत्यंत स्वादिष्ट पकौड़े बनाए जा सकते हैं।

**2. सोया पनीर :** सोयाबीन के 8 लीटर दूध को फाड़ने के लिए एक गिलास पानी में प्रत्येक 5 ग्राम कैल्शियम क्लोराइड एवं

मैगनीशियम क्लोराइड का घोल बनाकर मिलाएं। जिस से पानी और फटा दूध अलग-अलग हो जाएगा। फटे दूध से अतिरिक्त पानी निकालने के लिए उसे छिद्रयुक्त बर्तन में पतला कपड़ा रखकर दबाने से पानी पूरी तरह से निकल जाएगा। तैयार ठोस पदार्थ को ठण्डे पानी वाले बर्तन में 20 मिनट रखें। अब आप का सोया पनीर तैयार है। यह साधारण तापमान पर 18-20 घंटे तथा फ्रिज में पानी से भरे बर्तन में एक सप्ताह तक रखा जा सकता है।

**3. सोया हलवा, सोया उपमा एवं सोया पराठा :** रवा/सूजी के स्थान पर पौष्टिक हलवा एवं उपमा बनाने के लिए सोया पेस्ट प्रयोग किया जा सकता है। इसी प्रकार पेस्ट को नमक मिर्च आदि सामग्री के साथ मिलाकर पौष्टिक पराठे बनाने हेतु उपयोग किया जा सकता है।

**4. अंकुरित सोया :** सोयाबीन को गुनगुने पानी में 3-4 घंटे भिगोकर छिद्रयुक्त बर्तन में गीले सफेद सूती कपड़े के ऊपर फैलाकर रखें। तीन-चार बार पानी छिड़कते रहें। 3-4 दिन में सोयाबीन अंकुरित हो जाएगी। इसे सलाद के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

**5. सोया आटा :** बाजार में तीन प्रकार का आटा मिलता है जैसे वसा-रहित टोस्टेड, वसा-रहित अनटोस्टेड तथा वसा-रहित सोया आटा। विभिन्न प्रचलित व्यंजनों की पौष्टिकता बढ़ाने हेतु इन में से वसा-रहित अनटोस्टेड आटा तलने वाले व्यंजनों के उपयोग में तथा शेष दो प्रकार का आटा बेकरी/रोटी बनाने के लिए प्रयोग में लिया जा सकता है। वसारहित सोया आटा घरेलू स्तर पर भी बनाया जा सकता है। इस के लिए एक किलोग्राम सोयाबीन को साफ करके 20 मिनट तक उबालें एवं ठंडा होने पर हाथ से मसलकर उसका छिलका उतार लें। तत्पश्चात् धूप में सुखाकर या तो इसे 9 कि.ग्रा.

गेहूँ के साथ मिलाकर पिसवा लें या सोयाबीन के आटे को गेहूँ के आटे के साथ मिलाएं।

**6. सोयाबीन की हरी फलियां :** फसल के मौसम के दौरान 60-80 प्रतिशत सोयाबीन के फलियों में दाने भरने पर उन्हें तोड़कर नमकयुक्त पानी में उबाल लें। उबला हुआ पानी निकालकर इसकी स्वादिष्ट फलियों के दाने खा सकते हैं।

**7. सोया दूध :** एक किलोग्राम सोयाबीन से लगभग 8 लीटर दूध बनाया जा सकता है। आवश्यकतानुसार सोयाबीन की मात्रा लें एवं उसके समान मात्रा में पानी के साथ प्रेशर कुकर में 3 मिनट तक उबालें। तत्पश्चात् सोयाबीन को स्वच्छ पानी से धोकर 3-4 घंटे भिगोएं एवं उसका छिलका उतारकर मिक्सर में पानी के साथ पीस लें तथा पिसी हुई सोयाबीन में 8 गुणा गर्म पानी के साथ घोल बनाएं। पिसे हुए घोल को 10 मिनट तक उबालकर मलमल के कपड़े से छान लें। छने हुए दूध को सोया दूध कहते हैं एवं छानकर बचे हुए शेष पदार्थ को ओकारा कहते हैं। सोया दूध में स्वादानुसार चीनी एवं मनपसंद एसेंस मिलाकर पौष्टिक व स्वास्थ्यवर्धक पेय बनाया जा सकता है। इस के अतिरिक्त सोया दूध में एक चौथाई भाग डेयरी दूध मिलाकर दही, लस्सी, श्रीखण्ड आदि पदार्थ बनाए जा सकते हैं।

**सोयाबीन आधारित खाद्य सामग्री में ध्यान रखने योग्य बातें**

1. प्रसंस्करित साफ सोयाबीन का ही सोया खाद्य बनाने में प्रयोग करना चाहिए।
2. बनाने के स्थान पर धूल, गंदगी नहीं होनी चाहिए।
3. खाद्य पदार्थ बनाने के लिए 2 वर्ष से अधिक पुरानी सोयाबीन नहीं होनी चाहिए।
4. साफ एवं स्वच्छ पानी का प्रयोग करना चाहिए।



(पृष्ठ 19 का शेष)

**चारा काटने वाली मशीन से सुरक्षा के लिए ये प्रबन्ध करें :**

- ❖ बड़े चक्कर की कुंडी का प्रयोग।
- ❖ कवर का प्रयोग।
- ❖ घूमते पुर्जों पर कवर।
- ❖ सुरक्षित पतनाले का प्रयोग।
- ❖ चारा कटाई मशीन मजबूत नींव, छाया व खुले स्थान पर स्थापित करें।



## मरुस्थली भूमि का कल्प वृक्ष : खेजड़ी

बिमलेन्द्र कुमारी, तरूण कुमार एवं प्रीति सिंह

वानिकी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

खेजड़ी (जाँड़ी, जड़) एक मरुस्थली भूमि के लिए बहुत लोकप्रिय वृक्ष है। इस वृक्ष का हर भाग उपयोगिता की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। खेजड़ी का वृक्ष फलीदार पौधों की श्रेणी का वृक्ष होने के कारण वातावरण की नाईट्रोजन को पौधों के लिए उपलब्ध कराने, अर्थात् भूमि की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाने में व भूमि को संचित रखने में भी सहायक सिद्ध होता है। मरुस्थली प्रभागों/इलाकों की जनसंख्या व प्राणियों का जीवन इस वृक्ष के होने व न होने से सीधे रूप से प्रभावित होता है।

**जलवायु :** यह वृक्ष हमारे देश का स्थानीय वृक्ष है व राजस्थान, गुजरात के ऊष्ण भागों में जहाँ तापमान 500° सेल्सियस व वर्षा 150 मि.मी होती है, में भी सफलतापूर्वक पनपने वाला वृक्ष है। परन्तु यह देश के विभिन्न भागों में भी प्रायः पाया जाता है, क्योंकि इसकी जलवायु सहनशीलता की विभिन्नता काफी अधिक है। राजस्थान, व गुजरात में विश्‍नोई समाज के लोग इस वृक्ष के रखवाले के तौर पर प्रसिद्ध हैं व बहुत से समाज के वर्गों में इस वृक्ष की पूजा भी की जाती है। पूर्वजों ने इस वृक्ष को धार्मिक भावनाओं से इसीलिए जोड़ा है ताकि इस बहुउपयोगी व कल्पवृक्ष का संरक्षण हो सके।

**वृक्ष की उपयोगिता :** मरुस्थली क्षेत्रों में यह वृक्ष किसानों की भूमि पर प्रायः पाया जाता है। इसकी संख्या अधिक से अधिक होने पर भी इसका दुष्प्रभाव अन्य फसलों पर देखने को नहीं मिलता, क्योंकि शुष्क क्षेत्रों में वृक्षों के रहने से वायुमण्डल, भूमि पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है व परिस्थितियों में सुधार होता है, जो वहाँ रहने वाले प्राणियों, पेड़-पौधों, फसलों सभी के लिए वरदान साबित होता है। यही कारण है कि किसान इस वृक्ष को कभी भी अपनी भूमि से जुदा नहीं होने देते।

**वृक्ष के सीधे उपयोग**

**लकड़ी का उपयोग :** ईंधन लकड़ी व इमारती लकड़ी के तौर पर किसानों को हर वर्ष लकड़ी प्राप्त होती रहती है।

**वृक्ष की फलियां :** यह एक बहुत ही पौष्टिक व स्वादिष्ट पदार्थ है, इसका उपयोग अचार व सब्जी के रूप में प्रायः किया जाता है। सूखी हुई फलियों को सांगरी कहा जाता है व आजकल हर मैगास्टोर पर यह पैकेट्स में उपलब्ध हैं। इस सूखी सांगरी की देश-विदेश में काफी मांग है।



**वृक्ष से चारा :** वृक्ष की पत्तियां बहुत ही पौष्टिक व प्रोटीन से भरपूर होती हैं, इस लिए यह एक बेहतरीन चारा है। शुष्क भागों के पशु इस पर निर्भर करते हैं।

**वृक्ष से औषधियां :** खेजड़ी का वृक्ष एक महत्वपूर्ण औषधीय वृक्ष के तौर पर भी जाना जाता है, इसके तने की छाल से कोढ़ फुलवहरी, दमा, पेचिश, गठिया, खाँसी, जुकाम इत्यादि का इलाज संभव है।

**वृक्ष की नाइट्रोजन संचय करने की क्षमता :** खेजड़ी की जड़ों में उपस्थित ग्रंथियों में नाइट्रोजन संचित करने वाले सूक्ष्म जीव (Bacteria) पाये जाते हैं, जो वातावरण की अनउपलब्ध नाइट्रोजन को बदल कर पौधों व जमीन के लिए अवशोषित होने योग्य बना देते हैं, जिससे भूमि की उर्वरता बढ़ जाती है।

**खेजड़ी वृक्ष की रोपण विधि :** खेजड़ी वृक्ष प्राकृतिक तौर पर अपने आप सफलता पूर्वक रोपित होने वाला वृक्ष है। इस वृक्ष की फलियां बीज सहित शुष्क क्षेत्रों के पशु (भेड़ व बकरियां, ऊँट इत्यादि) खा लेते हैं, व प्राकृतिक रूप से ही बीज का उपचार (क्योंकि बीज सख्त आवरण सहित होता है) पशुओं के पेट में मौजूद अम्लों से हो जाता है व जैसे ही पशु खेतों में गोबर इत्यादि करते हैं तो उपचारित बीज खेतों में उगने के लिए तैयार पहुँच जाता है व इस प्रकार प्राकृतिक रूप से ही उग जाता है। इस वृक्ष को अप्राकृतिक तौर पर लगाने हेतु नर्सरी तैयार की जाती है। परन्तु नर्सरी तैयार किये जाने से पौधों की सफलता काफी कम होती है (करीब 50 से 60 प्रतिशत) जबकि प्राकृतिक रूप से उगने वाले पौधे 100 प्रतिशत सफलता पूर्वक पनपते हैं।

**खेजड़ी वृक्ष के सफल प्राकृतिक संवर्धन हेतु कुछ आवश्यक सुझाव :** क्योंकि खेजड़ी का वृक्ष बीज से, प्रकृति में उपचारित होने वाला वृक्ष है, इसलिए यह अति आवश्यक है कि उपयुक्त मात्रा में बीज का उत्पादन हो। प्रायः किसान सर्दियों से पहले पेड़ों की अत्यधिक छँगाई कर देते हैं (सभी टहनियाँ काट कर) इस प्रकार की छँगाई करने से पेड़ों पर बसन्त ऋतु में आने वाली नई शाखाओं पर फूल व फलियाँ नहीं लगती व इस प्रकार बीज उत्पादन नहीं होता। इसलिए सलाह दी जाती है कि कम से कम एक दो शाखाएँ छोड़कर ही छँगाई की जाए, ताकि पुरानी छोड़ी हुई शाखाओं पर फूल, फली व बीज उत्पादन हो सके। किसान इस सुझाव को अपनाकर इस महत्वपूर्ण वृक्ष के संरक्षण में सहायक हो सकते हैं, अन्यथा तेजी से हो रहे विकास व बिना सूझबूझ के वातावरण से होने वाले खिलवाड़ की भेंट यह वृक्ष भी चढ़ सकता है।



## उर्वरकों में मिलावट की पहचान के तरीके

सुनीता श्योराण, देवराज एवं सोनिया रानी

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

उर्वरक वे अकार्बनिक या कारखानों में उत्पादित पदार्थ हैं जिनका प्रयोग पौधों को एक या अनेक पोषक तत्व सामान्यतः तुरन्त तथा आसानी से उपलब्ध कराने के लिए किया जाता है। भिन्न-भिन्न पोषक तत्वों की आपूर्ति के लिए भिन्न-भिन्न उर्वरक होते हैं। उर्वरकों में यदि अन्य पदार्थ मिला दिए जाएं तो इससे उर्वरकों के पोषक तत्वों की मात्रा कम हो जाती है तथा बिना जरूरत के पदार्थों की मात्रा बढ़ने से उर्वरकों की गुणवत्ता कम हो जाती है। मिलावट दो प्रकार से हो सकती है

1. उर्वरकों के अलावा अन्य पदार्थ जैसे कि जिप्सम, नमक, चूना, रॉक फास्फेट तथा रेत आदि का मिला देना।
2. निम्न स्तर के उर्वरक जैसे कि सिंगल सुपर फास्फेट तथा म्यूरेट ऑफ पोटाश महंगे उर्वरकों की तरह बेचे जाते हैं।

भिन्न-भिन्न उर्वरकों में मिलावट की पहचान के लिए विभिन्न भौतिक तथा रासायनिक विधियाँ दी गई हैं:-

### यूरिया

- ❖ यूरिया के सफेद, चमकदार तथा लगभग समान आकार के दाने होते हैं।
- ❖ ये पानी में पूर्णतया घुल जाते हैं तथा इस घोल को छूने पर ठंडक की अनुभूति होती है। अगर कुछ मात्रा बगैर घुले नीचे रह जाए तो यूरिया में मिलावट हो सकती है।
- ❖ गर्म तवे पर यूरिया डालने पर यह पिघल जाती है और आंच तेज करने पर पूर्णतया गायब हो जाती है।
- ❖ चुटकी भर यूरिया परखनली में लें और उसको गर्म करें जब तक कि उसमें से बुलबुले निकलने न शुरू हो जाएं। उसके बाद एक मि.ली. पानी डालें तथा कुछ बूंदें सोडियम हाइड्रोक्साइड की डालें। फिर उसमें एक बूंद कॉपर सल्फेट की डालें अगर उसका रंग लाल-बैंगनी हो जाए तो यूरिया में कोई मिलावट नहीं है।

### डी.ए.पी.

- ❖ डी.ए.पी. सख्त, दानेदार, भूरा या बादामी रंग का होता है। नाखूनों से खुरचने अथवा जोर से रगड़ने पर इसके दाने नहीं टूटते।

- ❖ कुछ देर तक डी.ए.पी. के कुछ दानों को हथेली पर रखकर उनमें थोड़ा चूना मिलाकर तम्बाकू की तरह रगड़ें। तीक्ष्ण गंध आयेगी, जिसे सूंघना कठिन हो जाता है।
- ❖ डी.ए.पी. के कुछ दानों को तवे पर डालकर गर्म करने पर लुगदी सी बन जाती है। यदि डी.ए.पी. में सुपर फास्फेट मिला है तो उसके दाने गर्म करने पर लुगदी में नहीं बदलेंगे बल्कि गर्म तवे पर फुदकते रहेंगे। और यदि उसमें निम्न स्तर के एन.पी.के. की मिलावट की गई है तो गर्म करने पर दानों से काला धुंआ निकलेगा तथा तवे पर सफेद राख शेष रह जाएगी।
- ❖ एक चुटकी डी.ए.पी. को परखनली में लें तथा उसको गर्म करें। उसके बाद उसमें 2 मि.ली. 50 प्रतिशत सोडियम हाइड्रोक्साइड की मिलाएं तथा गर्म करें, जिससे अमोनिया गैस बनती है। हाइड्रोक्लोरिक एसिड में डूबी हुई गलास रॉड को परखनली के मुँह के पास लाने पर सफेद धुंआ निकलेगा तो डी.ए.पी. उत्तम क्वालिटी का है।

**सिंगल सुपर फास्फेट :** सिंगल सुपर फास्फेट दानेदार सलेटी रंग का चिकना-चिकना होता है जबकि डी.ए.पी. थोड़ा खुरदरा होता है। एस.एस.पी. में निम्न गुणवत्ता के मोनो कैल्शियम फास्फेट या जिप्सम की मिलावट पाई जाती है। 1-2 चम्मच उर्वरक बीकर में लेकर 100-150 मि.ली. पानी डालकर 5-10 मिनट तक इसे घोलें तथा छान लें। छाने हुए घोल को एक परखनली में लें। कुछ बूंदें मिथाइल ऑरेंज की डालें। इसका रंग लाल होना चाहिए। अगर रंग पीला या हरा हो तो मिलावट का संदेह किया जाता है।

2-3 मि.ली. छाने हुए घोल को एक परखनली में लें। इसमें 1-2 मि.ली. आयरन क्लोराइड डालें। पीले सफेद रंग का पदार्थ जमा हो जाता है तो उर्वरक शुद्ध है।

**एम.ओ.पी. :** यह सफेद कणाकार में अथवा पिसे नमक व लाल मिर्च के मिश्रण के रूप में उपलब्ध है। एम.ओ.पी. के कण गीला करने पर आपस में नहीं चिपकते। पानी में घोलने पर कण तैरने लगते हैं। यदि कण पानी में बैठ जाएं तो मिलावट का संदेह है।

चखने पर एम.ओ.पी. का स्वाद तीक्ष्ण कसैला होता है। यदि इसमें नमक का स्वाद मिले तो निश्चित रूप से इनमें नमक की मिलावट की पुष्टि होती है।

एक चुटकी एम.ओ.पी. परखनली में लें तथा उसको पानी में घोलें और गर्म करने के बाद ठंडा करें तथा कुछ बूंदें सोडियम हाइड्रोक्साइड की डालें। इसके बाद कुछ बूंदें हाइड्रोक्लोरिक एसिड की डालें तथा एक मि.ली. परक्लोरिक एसिड डालें जिससे उसमें सफेद गहरा पदार्थ जमा हो जाएगा। (शेष पृष्ठ 26 पर)

## मौनवंशों का कीटनाशकों से बचाव

सुनीता यादव, योगेश कुमार एवं शालिनी पाण्डेय

कीट विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कीटनाशकों जैसे ज़हरीले रसायनों का प्रयोग फसलों में हानिकारक जीवों को नष्ट करने के लिए किया जाता है। परन्तु कीटनाशकों के बहुतायत व अंधाधुंध प्रयोग के कारण ये ज़हर हानिकारक कीटों को मारने के साथ-2 मौनों और मित्र जीवों को भी नुकसान पहुंचाते हैं। कीटनाशक मधुमक्खियों को कई तरह से प्रभावित करते हैं:

1. मधुमक्खियाँ कीटनाशकों के सीधे सम्पर्क में आने से मर जाती हैं।
2. विषैले मकरंद, पराग या पानी का मौनगृह में संग्रह करने पर प्रौढ़ मौनों के साथ-साथ शिशु भी प्रभावित हो जाते हैं।

कीटनाशकों के बुरे प्रभाव के कारण मौन वंश कमजोर हो जाते हैं, जिससे मधुमक्खी पालक को भारी नुकसान तो उठाना ही पड़ता है इसके साथ-साथ फसलों की परपरागण क्रिया प्रभावित होने से फसलों की उपज व गुणवत्ता पर भी असर पड़ता है।

कई बार मौनपालक कीटनाशक ज़हर से प्रभावित मौनों के लक्षणों से अनजान होने के कारण मौनों को बीमारी से प्रभावित समझ कर अनजाने में बीमारी से संबंधित दवाइयों (रसायन व ऐंटीबायोटिक) का प्रयोग करके आर्थिक नुकसान उठाते हैं। अगर बहुत से वंशों में अचानक एक साथ बहुत सारी मौनें मर जाती हैं तो यह कीटनाशक ज़हर का प्रभाव है क्योंकि बीमारियां धीरे-धीरे एक वंश से दूसरे वंश में फैलती हैं इसके अलावा वंश में एक छत्ते से धीरे-धीरे साथ के और छत्तों में फैलती जाती हैं।

### कीटनाशकों के विषैलेपन के लक्षण:

1. विष से प्रभावित मधुमक्खियों के मौनगृह में प्रवेश करने पर मौनगृह की मधुमक्खियाँ क्रोधित व उत्तेजित हो जाती हैं।
2. कमेरी मधुमक्खियाँ प्रवेश द्वार पर कांपती, रेंगती व दस्त करती हुई पाई जाती हैं।
3. मौनगृह के आसपास अधिक संख्या में मरी हुई मधुमक्खियाँ और बक्सों में मरा हुआ शिशु पाया जाता है।
4. मौनों की संख्या में भारी कमी हो जाती है और मौनवंश कमजोर पड़ जाता है।

### मौनों के कीटनाशक ज़हर से बचाव के उपाय:

1. जहां तक संभव हो सके गैर-रासायनिक नियंत्रण विधियों को

- अपनायें व कीटनाशकों का कम से कम प्रयोग करें।
- आवश्यकता पड़ने पर दुष्प्रभाव रहित या कम दुष्प्रभाव वाले कीटनाशकों जैसे की पौधों से तैयार कीटनाशकों को चुनें। अधिक समय तक प्रभावशाली कीटनाशकों (धूल व तरल कीटनाशकों) की अपेक्षा दानेदार कीटनाशकों का प्रयोग करें।
  - जिस समय फसलों पर फूल खिले हों उस समय पर कीटनाशकों का छिड़काव न करें। छिड़काव शाम या रात के समय करें जब मधुमक्खियाँ मौनगृह में हों।
  - कीटनाशकों के उपयोग वाले दिन मौनों के काम शुरू करने से पहले ही मौनवंशों के प्रवेश द्वार को किसी लोहे आदि की जाली से बंद कर दें और वंशों को अच्छी तरह से ढक दें ताकि उन पर सीधा छिड़काव या धूल न पड़े परन्तु गर्मियों के दिनों में मौनगृह के प्रवेशद्वार को केवल कुछ घंटों के लिए ही बंद करना चाहिए। क्योंकि कीटनाशक ज़हर की अपेक्षा गर्मी मौनों को अधिक नुकसान पहुंचा सकती है।
  - छिड़काव करने से पहले मधुमक्खी पालकों को सूचित करें ताकि वह मौनवंशों को उपयुक्त स्थान पर स्थानान्तरित कर सकें या उन्हें ढक सकें। मौनवंशों को ढकते समय ध्यान रखें कि
    - ❖ मौनवंशों में काफी जगह हो
    - ❖ हवा निकास का सही प्रबंध हो
    - ❖ मौनवंश छाया में रखें हों
    - ❖ मौनवंशों के अन्दर पानी का प्रबंध हो
    - ❖ तापमान बनाये रखने के लिए मौनवंशों को गीले कपड़े या बोरी से ढकें
    - ❖ मौनवंशों को अधिक समय तक ढक कर न रखें
  - कीटनाशकों के छिड़काव करते समय हवा की दिशा मौनवंशों की ओर हो तो हवा का रुख बदल जाने पर ही छिड़काव करें। मौनवंशों के ऊपर किसी भी हालात में सीधा छिड़काव नहीं करना चाहिए।
  - छिड़काव तैयार करते समय मौनालय के नजदीक जल स्रोतों को ज़हरीला ना होने दें। बचा हुआ ज़हरीला पानी खेत में उड़ेलकर, उस पर सूखी मिट्टी डाल दें ताकि मौन दूषित पानी से प्रभावित न हो सकें।
  - यदि किसी इलाके में किसी मौसम में कीटनाशकों का प्रयोग लगातार होता है तो मौन वंशों को वहां से दूर किसी फूलों वाली फसल पर स्थानान्तरित करना चाहिए।

9. अगर किसी फसल पर बहुतायत में कीटनाशकों का प्रयोग हो रहा हो तो मौनवंशों को चीनी के घोल की खुराक दें ताकि मौन फूलों पर कम जाएं।

10. मधुमक्खी पालने वाले क्षेत्रों में किसानों तथा मधुमक्खी पालकों के बीच अच्छा तालमेल होना चाहिए। ताकि कीटनाशक के छिड़काव के पहले ही सभी मधुमक्खी पालकों को छिड़काव के पहले ही सूचना मिल जाए व मधुमक्खी पालक मधुमक्खियों को बचाने के उपाय अपना सकें। मधुमक्खी पालकों को अपना पूरा पता एवं मोबाइल फोन नम्बर जरूर लिखना चाहिए ताकि उसको छिड़काव करने से पहले सूचित किया जा सके।

यदि उपरोक्त बातों का ध्यान रखा जाए तो काफी हद तक कीटनाशकों के ज़हरीले प्रभाव से मधुमक्खियों को बचाया जा सकता है।



(पृष्ठ 26 का शेष)

**जिंक सल्फेट :** एक-एक चम्मच डी.ए.पी. तथा जिंक सल्फेट को अलग-अलग कांच के गिलासों में घोल लें। अब जिंक सल्फेट के घोल को डी.ए.पी. के घोल में मिलाएं। यदि घोल थक्केदार फट जाता है तो जिंक सल्फेट शुद्ध है।

जिंक में मैग्नीशियम सल्फेट की मिलावट की जाती है। भौतिक रूप से दोनों में काफी समानता होती है, जिसे देखकर पहचानना बहुत मुश्किल है। जिंक सल्फेट के घोल में यदि पतला कास्टिक सोडा का घोल मिलाएं तो घोल मांड जैसा सफेद मटमैला हो जाता है और गाढ़ा कास्टिक घोल मिलाने पर मिश्रण पूर्ण रूप से घुल जाता है। जिंक सल्फेट की जगह यदि मैग्नीशियम सल्फेट है तो मिश्रण नहीं घुलेगा।

इस प्रकार हम उत्तम गुणवत्ता के उर्वरकों की पहचान करके निम्न स्तर के उर्वरकों से होने वाले धोखे से बच सकते हैं। इसके अलावा विभिन्न फसलों में सिफारिश की गई पोषक तत्वों की सही मात्रा दी जा सकती है तथा अधिक पैदावार ली जा सकती है।



एक कदम स्वच्छता की ओर



# Use of Plastic Mulching for Vegetable Production

Sumit Deswal<sup>1</sup> and Sri Kanth Mekala

Department of Vegetable Science, CCS HAU, Hisar

Mulching is covering the soil around the plant with plastics film, straw, grass, hay, dry leaves, stones, etc which prevents the loss of moisture and acts as a barrier between the soil and atmosphere. It helps in moderating the soil temperature & micro-climate in the plant root zone, which helps to increase yield and early maturity of crops. Mulching is the process or practice of covering the soil/ground to make more favourable conditions for plant growth, development and efficient crop production. Mulch technical term means 'covering of soil'. When compared to other mulches plastic mulches are completely impermeable to water; it therefore prevents direct evaporation of moisture from the soil and thus limits the water losses and soil erosion over the surface. In this manner it plays a positive role in water conservation.

## Advantages of plastic mulching

1. It is completely impermeable to water.
2. It prevents the direct evaporation of moisture from the soil and thus limits the water losses and conserves moisture.
3. Mulches can also provide a barrier to soil pathogens.
4. Opaque mulches prevents germination of annual weeds from receiving light.
5. Reflective mulches will repel certain insects.
6. Synthetic mulches plays a major role in soil solarisation process.
7. Mulches develops a micro-climatic underside of the sheet, which is higher in carbon-dioxide due to the higher level of microbial activity.
8. Vegetable quality is often improved, primarily due to the plastic being a barrier between the soil and fruit. This results in a cleaner product, and reduces soil-borne diseases that may infect the plant.

9. **Leaching Reduction** - Nutrient leaching is greatly reduced since applied water is better managed with plastic mulch. This can save on fertilizer costs and reduces the risk of groundwater contamination.
10. **Weed and Pest Management** - Weeds compete with vegetable crops for nutrients and water. Plastic mulch greatly reduces weed competition resulting in a healthier crop, decreased labour and lower herbicide use. Some weeds may grow through crop holes in the plastic. Weeds also act as alternate hosts for insect pests, thus fewer weeds can reduce insect pressure. Additionally, silver/reflective plastics have been shown to reduce certain insect pests.

## Limitations

1. **Installation** - Beyond the cost of the plastic itself, additional labour and field operations are required to install plastics.
2. **Removal** - At the end of the growing season, plastic must be removed and disposed off. Removal can be time-consuming and care should be taken to avoid leaving any sections of plastic in the field since most do not decompose. Remnants are persistent, unsightly, and often blow around the farm.
3. They are costly to use in commercial production when compared to organic mulches.
4. Probability of 'burning' or 'scorching' of the young plants due to high temperature of black film.
5. Difficulty in application of top dressed fertilizer.
6. Reptile movement and rodent activities are experienced in some places.
7. Difficult in machinery movement.

## Mulch Selection

1. **Types** : There are two basic types of plastic mulch to choose between: smooth plastic or embossed plastic. Embossed plastics have greater stretch and are less prone to wind fatigue and cracking. They do not expand and contract under fluctuating temperatures as much as smooth plastic, helping maintain better plastic to soil contact throughout the day.

<sup>1</sup>Department of Agriculture and Farmers' Welfare, Haryana

2. **Thickness** : Plastic thickness ranges from 0.6 to 2.0 mils, with cost increasing as thickness increases. Thin plastics typically only last through one crop and are more prone to tearing. A 1 mil plastic is a good choice for most vegetable crops. Thicker plastics can feasibly be reused and are recommended if double-cropping is desired.
3. **Colors** : Three main colors are used today: black, clear, and white. Black plastic is the most widely used mulch color and is typically the least expensive. Clear and white plastics are chosen over black under certain conditions where their unique properties are desired. Beyond these three main colors there are various other plastic colors available such as red, yellow, blue, gray, and orange.

#### Selection of Mulch

Rainy season	Perforated mulch
Soil solarisation	Thin transparent film
Weed control through solarisation	Transparent film
Weed control in cropped land	Black film
Sandy soil	Black film
Insect repellent	Silver colour film

#### Application

The use of plastic mulch requires a unique application process to ensure proper placement of the plastic film. This application process begins with preparing the field the same way one would for a flat seed bed. The bed must be free of large soil clods and organic residue. A machine called a plastic layer or a bed shaper is pulled over the field creating a row of plastic mulch covering a planting bed. These beds can be a flat bed which simply means the surface of the plastic mulch is level with the inter-row soil surface. Machines that form raised beds create a plastic surface higher than the inter-row soil surface. The basic concept of the plastic bed shaper is a shaping box which creates the bed that is then covered by plastic via a roller and two coulters that cover the edges of the plastic film to hold the plastic the soil's surface.

These plastic layers also place the drip irrigation line under the plastic while the machine lays the plastic. It is somewhat important that the plastic is rather tight. This becomes important in the planting process.

**Planting** : Planting also requires specialized planting equipment. The most common planting equipment is a waterwheel type transplanter. The waterwheel transplanter utilizes a rotating drum or drums with spikes at set intervals. The drum or drums have a water supply that continuously fills the drum with water. The transplanter rolls the spiked drum over the bed of plastic. As the drum presses a spike into the plastic a hole is punched and water flows into the punched hole. A rider on the transplanter can then place a plant in the hole. These drums can have multiple rows and varied intervals to create the desired spacing for that particular crop.

#### Mulch Laying Techniques

- (i) Mulch should be laid on a non-windy condition
- (ii) The mulch material should be held tight without any crease and laid on the bed
- (iii) The borders (10 cm) should be anchored inside the soil in about 7-10 cm deep in small furrows at an angle of 45°

**Pre-planting Mulch** : The mulch material should be punctured at the required distances as per crop spacing and laid on the bed. The seeds/seedlings should be sown/transplanted in the holes.

#### Mulching techniques for Vegetables

1. Very thin film is used for short duration crops like vegetables.
2. Round holes are made at the center of the film using a punch or a bigger diameter pipe and a hammer or a heated pipe end could be used.
3. One end of the mulch film (along width) is anchored in the soil and the film is unrolled along the length of the row of planting.
4. Till the soil well and apply the required quantity of FYM and fertilizer before mulching.
5. Mulch film is then inserted (4-6") into the soil on all sides to keep it intact.
6. Seeds are sown directly through the holes made on the mulch film.

(Cont. page 32)

# Integrated Nutrient Management for Sustainable Soil Health

N. K. Goyal<sup>1</sup>, R. S. Malik and M. S. Grewal

Department of Soil Science  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Integrated nutrient management (INM) refers to maintenance of soil fertility and plant nutrient supply to any optimum level for sustaining the desired crop productivity through optimisation of the benefits from all sources of plant nutrients in an integrated manner. It (INM) is not a new concept. It is an age old practice when almost all the nutrients need were met through organic resources to supply secondary and micro-nutrients besides primary nutrients. The basic concept of INM is the maintenance and improvement of soil fertility through integrating various nutrient resources along with fertilisers for sustaining crop productivity on long term basis.

**Why INM :** The need for continued increase in agricultural production and productivity requires growing application of nutrients and the present level of fertiliser production is not enough to meet the entire plant nutrient requirement. At present the gap of 10 million tons is likely to widen further in view of higher prices of DAP, potash and other nutrients. Moreover long term trials on INM revealed that neither fertiliser nor the organic sources alone can achieve sustained production under intensive cropping. The interactive advantage of combined organic and inorganic sources of nutrients in INM have proved better than single source of nutrients.

## Components of INM

Major components of INM are :

1. Integration of soil fertility restoring crops like green manures and legumes.
2. Balanced use of fertiliser nutrients to achieve yield.
3. Use of organic manures like FYM, compost, vermicompost, biogas slurry, pressmud and poultry manures.
4. Use of biofertilisers.

**Fertilisers :** Fertilisers play the most important role in INM. The dependence on fertilisers has been increasing due to poorly managed organic resources and increasing depletion of soil fertility. The fertilisers used are not only inadequate but imbalanced. In Haryana, farmers are using excessive N in the form of urea, whereas other nutrients depletion is increasing (P&K). In India at present, more than nine major and micro-nutrients are deficient. Efficient use of fertiliser nutrients by the crop needs proper attention based on crops to be grown, available nutrient status and fertiliser use on soil test basis. Use of fertilisers in combination with organic sources will increase nutrient use efficiency. Enhancing NUE should therefore, be a priority area for improvement of soil health and to minimise the cost of cultivation.

**Organic Manures :** Organic manures like FYM, crop residues, city waste, press mud, vermicompost and other agricultural wastes have large nutrient potential. There are several other industrial byproducts like nonedible oil cakes and wastes which if properly evaluated can be a good source of nutrients in addition to favourable effects on soil properties. (Table. 1) These organic manures not only supply macro and micro-nutrients but also improve soil physical, chemical and biological properties of the soil.

**Table 1. Nutrient status of some organic materials, FYM, compost, cakes and residues**

Category	Source	Nutrient Content (%)		
		N	P <sub>2</sub> O <sub>5</sub>	K <sub>2</sub> O
Animal Wastes	Cattle Dung	0.3-0.4	0.10-0.15	0.15-0.20
	Cattle Urine	0.80	0.01-0.02	0.5-0.70
FYM Composts	Farm Yard Manures	0.5-1.0	0.15-0.20	0.5-0.6
	Poultry Manure	2.87	1.0	1.5
	City Compost	1.5-2.0	1.0	1.5
Oil Cakes	Castor	5.5-5.8	1.8	1.0
	Neem	5.2	1.0	1.4
	Rapeseed	5.1	1.8	1.0
	Linseed	5.5	1.4	1.2
	Sesame	6.2	2.0	1.2
Animal Meals	Blood	10-12	1.2	1.0
	Meat	10.5	2.5	0.5
	Fish	4-10	3-9	1.8

<sup>1</sup>Ph.D. Scholar, CCSHAU, Hisar



**Green Manures/Legumes :** Green manure/leguminous crops are known for soil fertility restorers due to their ability to fix atmospheric nitrogen in root nodules of legume crops in symbiosis with rhizobium bacteria. Legumes can play a greater role in INM when grown in cropping system. Green manure crops like dhaincha in paddy-wheat cropping sequence can be a boon to the farmers as Haryana Govt. Department of Agriculture is providing 90% subsidy on dhaincha seed to improve soil fertility thus soil health. Introduction of crop rotation/legumes in rotation not only improve soil health but save underground water. Crops like gram, lentil, moong, sunhemp, dhaincha, methi, berseem, lobia are very good restorers of soil fertility besides natural resource conservation.

**Bio-fertilisers :** Bio-fertilisers play an important role in soil fertility and crop productivity due to their capacity to fix atmospheric nitrogen, solubilize/mobilise phosphorus in symbiotic and non symbiotic ways in root nodules. Bio-fertiliser like rhizobium in pulses and azotobacter and azospirillum in non legumes are well known for nitrogen addition in the soil, whereas PSB, phosphotika help in solubilise phosphorus. These bio-fertilisers contribute to soil fertility buildup in the long run. These are easy, economical and cost effective. These can be used as seed treatment, root dipping or soil treatment but seed treatment is the best method. At present, these are available in liquid form which are available in University Dept. of Microbiology, IFFCO, KRIBHCO sale centres at District level. Other biofertilisers like BGA(Blue Green Algae), Azolla, VAM needs to be evaluated for their response in different agroclimatic conditions in different crops. In Haryana, rhizobium, azotobacter, phosphotika is being used but there is urgent need to popularize in all crops to make a dent in INM on long term basis.

**Crop Residues :** Management of crop residues is one of the burning problem in Haryana and Punjab due to their role in environmental pollution as crop residues left in the fields after combine harvesting of wheat and paddy are burnt. A large amount of nutrients are lost resulting in decreased soil fertility due to loss of organic matter and micro-organisms. Recycling of these residues back to fields help to build organic

**Table 2. Potential of farm residues and plant nutrients in them**

Crops	Grain: straw ratio	Nutrient Content (%) (Oven dry basis)		
		N	P <sub>2</sub> O <sub>5</sub>	K <sub>2</sub> O
Rice straw	1:1.5	0.58	0.23	1.66
Wheat straw	1:1.5	0.49	0.25	1.28
Sorghum	1:2.0	0.40	0.23	2.17
Pearl millet	1:2.0	0.65	0.75	2.50
Maize	1:1.5	0.59	0.31	1.31
Pulses	1:1.0	1.60	0.15	2.00
Chickpea	1:1.0	1.19	-	1.25
Sugarcane	1:0.2	0.35	0.04	0.50

matter in the soil to sustain soil health. (Table 2.) Use of new generation technology machine like Happy Seeder for sowing of wheat in standing crop residues left over after combine harvesting of paddy have resulted in excellent wheat crop besides controlling weed population and resource conservation. Burning of crop residue results in loss of biomass and plant nutrients resulting in decreased soil fertility and soil health. Burning must be avoided at any cost to save soil fertility.

Thus integrated nutrient management enables the adoption of plant nutrition and soil fertility management in farming systems, taking advantage of combined use of organic and inorganic sources to meet the food production. All the sources have to be appropriately managed at the optimum level of efficiency. It stipulates the management of the farming system as a whole, involving cattle, poultry, animal and plant resources. The advantage of INM can be restoration and sustaining soil health, prevention of macro and micro-nutrient deficiencies, enhancing fertiliser/ nutrient use efficiency and favourable effect on physical, chemical and biological health of the soil.

INM is ecological, social and economically viable and environment friendly technique which must be practiced by farmers to sustain soil fertility and soil health to meet growing demand of food production.



# Suitability of Fertilizers for Different Crops and Soil Conditions

Dev Raj, Sunita Sheoran and M. S. Grewal  
Department of Soil Science  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Fertilizers are defined as materials having definite chemical composition with a high analytical value that supply plant nutrients in available form. They are usually manufactured by industries and sold with a trade name. The fertilizer use efficiency is generally low in India, which not only affect the crop yield and farmers profitability but also poses serious threat to environmental quality, including soil and ground water. The fertilizer use efficiency can be increased by selecting a suitable fertilizer for different crops and soil conditions.

## A. Suitability of Nitrogenous fertilizers for different soil conditions and crops

1. For paddy, sugarcane and potato, ammonical and ammonia forming fertilizers, namely, ammonium sulphate, ammonium chloride and urea should be used.
2. Ammonium chloride should not be used in chloride sensitive crops (tobacco, potato and grapes, etc.).
3. For wheat, nitrate and ammonium forming fertilizers, namely, CAN, and ammonium sulphate is either superior to or at par with amide sources, namely, urea.
4. Ammonium sulphate, urea, ammonium sulphate nitrate and CAN are equally effective for maize. However under high rainfall region ammonium sulphate is better than urea and CAN because nitrate and urea are highly prone to leaching under such conditions.
5. Oilseeds and pulses prefer ammonium sulphate over other N- carriers due to the special role of sulphur in their nutrition.
6. For cotton, generally different sources of N have been found to be equally effective. In jute,  $\text{NH}_4^+$  sources proved superior to  $\text{NO}_3^-$  source.
7. Ammonium sulphate is especially suitable for soils

deficient in available sulphur and for salt affected soils.

8. On dry soils, nitrate fertilizers are superior to other form of nitrogenous fertilizers.
9. Amide fertilizers are best suited for foliar spray.

## B. Suitability of phosphorus fertilizers for different soil conditions and crops

The phosphatic fertilizers are classified into three categories :

1. Mono calcium phosphate  $[\text{Ca}(\text{H}_2\text{PO}_4)]$ - Mono calcium phosphate readily soluble in water and most important compound in super phosphate and triple super phosphate.
2. Dicalcium phosphate  $[\text{Ca}_2\text{H}_2(\text{PO}_4)_2]$ - Dicalcium phosphate is not soluble in water, but dissolves readily in weak dilute acids i.e. citric acid. Fertilizers of this group are dicalcium phosphate, basic slag and rhenania phosphate.
3. Tricalcium phosphate  $[\text{Ca}_3(\text{PO}_4)_2]$ - Tricalcium phosphate neither soluble in water nor in weak acids, but soluble in strong mineral acids. Fertilizers of this group are rock phosphate, raw bone meal and steamed bone meal.

## Conditions favouring use of fertilizers containing water soluble phosphate

1. When soil is neutral or alkaline. Not suitable for acidic conditions, because water soluble phosphoric acid gets converted in to unavailable iron and aluminium phosphates.
2. When a crop requires a quick start.
3. For short duration crops like paddy, wheat, jowar, ragi, maize, sorbean and vegetable crops.

## Conditions favouring use of fertilizers containing citric acid soluble phosphate

1. When soil is moderately acidic. Under low pH citric acid soluble phosphate gets converted into monocalcium phosphate or water soluble phosphate and there are less chances of phosphate getting fixed as iron and aluminium phosphates.

2. Where immediate results in terms of quick start to crops are not so important and fertilizer can be applied well before growth starts.
3. For long duration crops like sugarcane, tapioca, tea and coffee, etc.

#### **Conditions favouring use of fertilizers containing insoluble phosphate**

1. Where the soil is strongly to extremely acidic and large quantity of phosphatic fertilizers are required to raise soil fertility. In these soils, the tricalcium phosphate first converted to dicalcium phosphate and then monocalcium phosphate.
2. Where immediate effects are not so important.
3. For long duration fruit and plantation crops like tea, coffee, rubber, cocoa, oranges and coconut, etc., grown in acidic soils.

#### **C. Suitability of potassic fertilizers for different soil conditions and crops**

**Murate of potash (potassium chloride):** MoP is well suited for all soils and crops except chloride sensitive crops like tobacco, potato, tomato and grapes. Use of potassium chloride is discouraged in saline soils as it increases salt concentration in rhizosphere soil.

**Sulphate of potash (potassium sulphate):** SoP is used in all soils and crops. It is also suitable for chloride sensitive crops and preferable in salt affected soils. It should not be used in flooded rice where sulphate reduction and hydrogen sulfide toxicity is a problem.

#### **General recommendations for fertilizers application**

1. Nitrogenous fertilizers applied on soil surface reach the plant roots easily and rapidly. So these fertilizers should broadcast on the soil surface just before sowing.
2. Application of nitrogenous fertilizers on the soil surface followed by irrigation is good enough to meet the nitrogen requirement at critical stage of plant growth.
3. In light soils, nitrogen should be applied after irrigation, however in medium and heavy textured soils; it should be applied with irrigation water.
4. Since P moves slowly from the point of placement

and get fixed in soil colloids. Therefore, to reduce the fixation, P fertilizers should be placed in such a way that these come in minimum contact with the soil particles and are readily accessible to plant roots.

5. Since potassic fertilizers move slowly in the soil, they should also be placed near root zone.
6. Apply Ca, S, Zn and Cu fertilizers as soil application i.e. broadcasting followed by incorporation.
7. Apply Mg and B either as soil application or foliar application.
8. In case of Fe and Mn, foliar spray is usually preferred.



(From page 28 )

7. In case of transplanted crops, the seedlings could be planted directly into the hole.
8. For mulching established seedlings, the process of punching the hole is the same.

#### **Precautions for Mulch Laying**

1. Do not stretch the film very tightly. It should be loose enough to overcome the expansion and shrinkage conditions caused by temperature and the impacts of cultural operation.
2. The slackness for black film should be more as the expansion, shrinkage phenomenon is maximum in this color.
3. The film should not be laid on the hottest time of the day, when the film will be in expanded condition.

#### **Irrigation practices under mulching**

1. In drip irrigation the lateral pipelines are laid under the mulch film.
2. In case inter-cultivation need to be carried out, it is better to keep the laterals and drippers on top of the mulch film and regulate the flow of water through a small pipe or through the holes made on the mulch film.
3. In flooding the irrigation water passes through the semi circular holes on the mulch sheet.





हरियाणा

# खेती

वर्ष 51

अंक 03



## कृषि मेला (खरीफ)

दिनांक : 27-28 मार्च, 2018

स्थान : गेट नं. 3, विश्वविद्यालय फार्म, बालसमंद रोड़, हिसार

वार्षिक चंदा 150/-

मार्च 2018

आजीवन सदस्यता 1500/-



प्रकाशन अनुभाग  
विस्तार शिक्षा निदेशालय

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

# हरियाणा खेती

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. ( 2 ) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित © कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 51	मार्च 2018	अंक 03
इस अंक में		
लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
देसी कपास के उत्पादन में समस्याएं व समाधान	☞ सुनयना, सुखदीप सिंह सिंविया एवं आर. एस. सांगवान	1
बहुत जरूरी है : मधुमक्खी वंशों का निरीक्षण	☞ संगीता तिवारी, रिकु एवं नरेन्द्र कुमार	2
घीया की वैज्ञानिक विधि से खेती	☞ मक्खन मजोका, शिवानी कम्बोज एवं धर्मवीर दुहन	3
कपास का संकर बीज-बनाने की विधि	☞ सुनयना, ए. एच. बंकर एवं आर. एस. सांगवान	4
पॉलीहाऊस में सूत्रकृमि नियंत्रण	☞ रामबीर सिंह कंवर एवं गुरप्रीत सिंह	5
कहू वर्गीय सब्जियों की प्रमुख बीमारियां तथा उनका नियंत्रण	☞ किशोर चंद कुम्हार, कुलदीप कुमार एवं हवा सिंह सहारण	6
सब्जी पौध उत्पादन की उन्नत (हाईटेक) तकनीक	☞ कुलदीप कुमार, किशोर चंद कुम्हार एवं मक्खन लाल	7
लहसुन व प्याज में थ्रिप्स की रोकथाम	☞ नरेन्द्र कुमार, हरीश कुमार एवं सुनीता यादव	8
टमाटर की उन्नत खेती	☞ विकास कुमार, टी. पी. मलिक एवं देशराज चौधरी	9
टमाटर-आहार्य महत्व	☞ जयन्ती टोकस, हिमानी एवं सुरीना	10
अंगूर में गुणवत्ता सुधार एवं भंडारण	☞ अनुराधा एवं आर. के. गोदारा	11
नींबू वर्गीय फलों के मुख्य कीट एवं उनकी रोकथाम	☞ रामकरण गौड़, महासिंह जागलान एवं आर. के. गोदारा	12
कम लागत में गेहूँ का शुद्ध बीज-कैसे तैयार करें	☞ यश पाल सिंह सोलंकी, नीरज पंवार एवं राजेश कुमार	19
आम के रोग व नियंत्रण	☞ राजेन्द्र सिंह, ममता एवं हवा सिंह सहारण	19
नींबू वर्गीय पौधों में रोग व निदान	☞ राजेन्द्र सिंह, ममता एवं हवा सिंह सहारण	20
पशु चिकित्सा में प्रयोग की जाने वाली साधारण औषधियां	☞ पुनीत झंडई, देवन अरोड़ा एवं नीरज अरोड़ा	21
पशु रोग निदान एवं बचाव	☞ पुनीत झंडई, देवन अरोड़ा एवं नीरज अरोड़ा	23
बौद्धिक अक्षमता या विकलांगता (मानसिक मंदता)	☞ रीना एवं बिमला ढांडा	25
Bio-Fertilisers - The Beneficial Micro-organisms	☞ N. K. Goyal, Rakesh Kumar and R. S. Malik	27
Agro Meteorological Forecast in Agriculture	☞ Yogesh Kumar, Karan Chhabra and Anil Kumar	28
Dire Need of Adoption of Climate : Smart Agricultural Practices	☞ Anil Kumar Rohila, B. S. Ghanghas and Krishan Yadav	30
Disposal of Pesticide Waste	☞ Savita Rani and Sushil	31
स्टाई स्तम्भ : अप्रैल मास के कृषि कार्य		13

हरियाणा खेती  
सम्बन्धी  
स्वामित्व विवरणी  
फार्म-4 [ देखिये नियम 8 ]

प्रकाशन स्थान	: चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार।
प्रकाशन अवधि	: मासिक
मुद्रक का नाम	: डॉ. आर. एस. हुड्डा
क्या भारत का नागरिक है ?	: हां
(यदि विदेशी है तो मूल देश)	: -
पता	: निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार।
प्रकाशक का नाम	: डॉ. आर. एस. हुड्डा
क्या भारत का नागरिक है ?	: हां
संपादक	: डॉ. सुषमा आनन्द
क्या भारत का नागरिक है ?	: हां
(यदि विदेशी है तो मूल देश)	: -
पता	: संपादक हिन्दी, प्रकाशन अनुभाग, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार।
उन व्यक्तियों के नाम व पते जो	: चौधरी चरण सिंह
समाचार-पत्र के स्वामी हों तथा	हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार।
समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से	
अधिक के सांझेदार या हिस्सेदार	
हों।	

मैं, आर. एस. हुड्डा, एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

हस्ताक्षर  
आर. एस. हुड्डा  
प्रकाशक

तकनीकी सलाहकार :	सह-निदेशक (प्रकाशन)
डॉ. आर. एस. हुड्डा	डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी
निदेशक, विस्तार शिक्षा	संपादक :
	डॉ. सुषमा आनन्द
संकलन :	सह-निदेशक (हिन्दी)
डॉ. एम. एस. ग्रेवाल	सुनीता सांगवान
परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)	सम्पादक अंग्रेजी
विस्तार शिक्षा निदेशालय	प्रकाशन अनुभाग
	आवरण एवं सज्जा:
	राजेश कुमार एवं कुलदीप कुमार

**मूल सुधार :** हरियाणा खेती फरवरी अंक में पृष्ठ संख्या 23 पर तापमान 500° सेल्सियस की जगह 50° सेल्सियस पढ़ा जाए। धन्यवाद  
- सम्पादक

# देसी कपास के उत्पादन में समस्याएं व समाधान

सुनयना, सुखदीप सिंह सिंविया एवं आर. एस. सांगवान

अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन, विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कपास हरियाणा की एक प्रमुख नगदी फसल है। यह लगभग 6 लाख हैक्टेयर में बोई जाती है। कपास को रेतीली व सेम वाली ज़मीन छोड़कर लगभग सभी प्रकार की भूमि में बो सकते हैं। कपास के खेत में पानी खड़ा होने की समस्या नहीं होनी चाहिए। हरियाणा में कपास की दो तरह की प्रजातियां बोई जाती हैं। एक को अमेरिकन कपास तथा दूसरी को देसी कपास कहते हैं। हरियाणा बनने के समय कपास का क्षेत्र लगभग 1,83,000 हैक्टेयर था। जिसमें से 1,02,000 हैक्टेयर क्षेत्र में देसी कपास और 81,000 हैक्टेयर में अमेरिकन कपास थी। लेकिन वर्तमान में देसी कपास का क्षेत्र 10000 हैक्टेयर से 40000 हैक्टेयर के बीच घटता बढ़ता रहता है। केन्द्र सरकार तथा हरियाणा सरकार प्रयास कर रहे हैं कि किसानों की आमदनी सन् 2022 तक दुगुनी हो जाए। इसके तीन तरीके हैं:-

1. प्रति एकड़ पैदावार को बढ़ाया जाए।
2. फसल की लागत को कम किया जाए।
3. फसल के ज्यादा दाम मिलें।

तीसरा तरीका किसान की पहुंच से बाहर है। इसलिए किसान पहला व दूसरा तरीका अपनाकर अपनी फसल से बचत को बढ़ा सकते हैं। यदि किसान वैज्ञानिकों द्वारा बताई गई कपास पैदा करने की उन्नत तकनीक अपनाएं तो पैदावार में अच्छी बढ़ोत्तरी हो सकती है। जैसे हरियाणा की 2016-17 की औसत पैदावार 1821 किलोग्राम कपास प्रति हैक्टेयर रही है। लेकिन उन्नतशील किसान 5000 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर तक देसी कपास में पैदावार ले सकते हैं। दूसरा तरीका फसल की लागत कम करने का है। देसी कपास में रस चूसने वाले कीड़ों का प्रकोप लगभग नहीं होता। पिछले कुछ सालों में देखा गया है कि सफेद मक्खी ने नरमा कपास की फसल को पूरी तरह से नष्ट कर दिया है। इसी तरह से सन् 2017 में चुरड़ा कीड़े का प्रकोप लगभग शुरू से आखिर तक रहा है। कभी-कभी हरे तेलों का प्रकोप भी फसल को काफी नुकसान करता है। देसी कपास की किस्में लगभग इन उपरोक्त समस्याओं से मुक्त हैं। कभी-कभी सफेद मक्खी का प्रकोप हो जाता है लेकिन इसका कपास की पैदावार पर ज्यादा विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता। देसी कपास में रस चूसने वाले कीड़ों से बचाने के लिए छिड़काव की आवश्यकता नहीं होती। इससे वातावरण भी स्वच्छ रहता है और किसान का खर्चा भी कम होता है। आजकल 95 प्रतिशत से ज्यादा क्षेत्र में बी.टी. कपास लगाई जाती है। परन्तु रिफ्यूजिया (बगैर बी. टी.) कोई किसान नहीं लगाता। लेकिन बी. टी. तकनीक को कामयाब बनाए रखने के लिए देसी कपास रिफ्यूजिया का काम भी करेगी।

## देसी कपास की समस्याएं:

1. बिजाई के बाद तापमान बढ़ने से पौधों के जलने की समस्या: हरियाणा में कपास की सरसों या गेहूँ की फसल के बाद बिजाई की जाती है। कई बार नहर के पानी की समय पर उपलब्धता न होने के कारण भी बिजाई में

देर हो जाती है। यदि किसी कारणवश कपास की बिजाई समय से न हो तो 10 मई के आसपास गर्म हवाओं (लू) के कारण कपास के छोटे पौधे जल जाते हैं और कई बार तो पूरे खेत की दोबारा बिजाई करनी पड़ती है या पौधों की संख्या काफी कम रह जाती है। जिसका पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

2. चित्तेदार व अन्य सूण्डियों का प्रकोप : कपास की फसल में प्रायः तीन तरह की सूण्डियों का प्रकोप होता है। चित्तेदार सूण्डी, गुलाबी सूण्डी व अमेरिकन सूण्डी। चित्तेदार सूण्डी का प्रकोप प्रायः कपास में बौकी बननी शुरू होने की अवस्था में शुरू हो जाता है और यदि इनको नियंत्रित न किया जाए तो पूरी फसल को बिल्कुल नष्ट भी कर देती है।

3. गिरने की समस्या : देसी कपास में खिले हुए टिण्डों से कपास के गिरने की समस्या के कारण इसमें लगभग 5 चुनाई करनी पड़ती हैं। लेकिन मजदूर न मिलने के कारण समय पर चुनाई नहीं होती। जिससे कपास नीचे गिर जाती है और इससे पैदावार व गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

4. देसी कपास के टिण्डों का आकार अमेरिकन कपास से छोटा होता है और इसके टिण्डों का वज़न कम होता है। इसलिए मजदूर इसकी चुनाई को पसंद नहीं करते और खेत में खिली हुई कपास में चुनाई न होने पर किसानों को बुरा लगता है और कई बार थोड़ी तेज़ हवा चलने या बारिश के कारण पैदावार का नुकसान होता है।

## कपास के उत्पादन की समस्याओं का समाधान :-

1. कपास की बिजाई हरियाणा में अप्रैल के पहले पखवाड़े से जून के पहले सप्ताह तक की जा सकती है लेकिन देसी कपास की बिजाई 10 अप्रैल से 25 अप्रैल के बीच में हो जाए तो पौधों की जलने की समस्या से काफी हद तक निदान पाया जा सकता है।
2. किसानों को ये सलाह दी जाती है कि सिफारिश की गई बीज की मात्रा का प्रयोग करें। यदि इनमें से कुछ पौधे जल भी जाएं तो फिर भी पौधों की संख्या पर्याप्त बच जाती है। यदि पौधों में जलने की समस्या न हो तो, तापमान में गिरावट आने पर पौधों को विरला कर दें।
3. समय पर बिजाई की हुई कपास में जून के आखिरी सप्ताह या जुलाई के प्रथम सप्ताह में बौकी या फूल आने शुरू हो जाते हैं और उसी समय आमतौर पर देखा गया है कि चित्तेदार सूण्डी का प्रकोप हर साल हो जाता है। किसानों का इस सूण्डी के नियंत्रण के लिए सावधान रहना बहुत ज़रूरी है नहीं तो ये सूण्डी फसल को काफी नुकसान कर सकती है। इस सूण्डी का प्रकोप कई बार बौकी बनने की अवस्था के शुरुआत में ही हो जाता है। ये इनको साथ-साथ खत्म करती रहती हैं तथा कपास के खेत में फूल ही नज़र नहीं आते और किसान फूल आने की अवस्था का इंतज़ार करते रहते हैं और अपनी फसल में कीड़ों के नियंत्रण की तरफ ध्यान नहीं देते। ऐसी अवस्था में इसका प्रकोप बहुत बढ़ जाता है और यह पैदावार को लगभग खत्म कर देती है। इसलिए इनका समय पर नियंत्रण बहुत ज़रूरी है।
4. देसी कपास के टिण्डे आमतौर पर नरमा से छोटे होते हैं व खिलने के बाद गिरने की समस्या भी ज्यादा आ जाती है। चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय की किस्म एच डी 432 में खिली हुई कपास के गिरने की समस्या दूसरी किस्मों से काफी कम है। (शेष पृष्ठ 06 पर)



# बहुत ज़रूरी है : मधुमक्खी वंशों का निरीक्षण

संगीता तिवारी, रिंकु एवं नरेन्द्र कुमार

कीट विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मधुमक्खी पालन मनुष्य के लिए प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में लाभदायक व्यवसाय है। इस व्यवसाय की कृषि विविधिकरण के अन्तर्गत महत्वपूर्ण भूमिका है। मौनवंशों की ज़रूरतों एवं आवश्यकतानुसार प्रबन्ध के लिए मधुमक्खी परिवार का निरीक्षण बेहद ज़रूरी है। मधुमक्खी निरीक्षण मधुमक्खी पालन प्रबन्धन का प्रमुख हिस्सा है। मधुमक्खी वंशों की प्रगति जानने के लिए आमतौर पर इनका 15-21 दिन के अन्तर पर अवलोकन करना चाहिए परन्तु वकछूट के मौसम (जनवरी से अप्रैल) में 4-5 दिन के अन्तराल पर अवलोकन करना आवश्यक है। निरीक्षण विभिन्न ऋतुओं के अनुसार उचित समय पर ही करना चाहिए क्योंकि मधुमक्खियां अपने कार्य में कम से कम व्यवधान पसंद करती हैं।

## क्यों ज़रूरी है निरीक्षण:

- क्या बक्से में कोई गंदगी तो नहीं? यदि गंदगी है तो तलपट्टे की सफाई ज़रूर करें।
- क्या परिवार में कोई बीमारी, अष्टपदी या मोमी पतंगे आदि का प्रकोप है या नहीं। यदि है तो उसके नियंत्रण के लिए उचित प्रबन्ध करना चाहिए।
- क्या रानी मधुमक्खी पर्याप्त अण्डे दे रही है। यदि किसी कारणवश रानी मक्खी मर गई या बक्सा छोड़ गई है तो नई रानी परिवार को उपलब्ध करवाना बेहद ज़रूरी है। कई बार रानी मधुमक्खी दिखाई नहीं देती परन्तु ताजा दिये गये अण्डे मौजूद हैं तो भी रानी मधुमक्खी की मौजूदगी मानी जाएगी।
- क्या रानी मधुमक्खी के लिए अण्डे देने का पर्याप्त स्थान है या नहीं। यदि नहीं तो आवश्यकतानुसार बक्से में नये छत्ते डालें। यदि बक्से में छत्तों की संख्या आवश्यकता से अधिक है तो उन छत्तों को बक्से से निकाल दें।
- क्या परिवार के छत्तों में पर्याप्त भोजन (मकरन्द तथा पराग) उपलब्ध है या नहीं। यदि नहीं है तो परिवार को कृत्रिम भोजन या चीनी की चाशनी देने की आवश्यकता है।
- क्या चौखटों में तैयार शहद निष्कासन के लिए उपयुक्त है या नहीं। अगर पेटिका के सभी फ्रेम भर चुके हैं, रानी अण्डे भी भरपूर दे रही है और पर्याप्त मात्रा में मौनचर उपलब्ध हैं तो इसका अर्थ है कि ऊपर सुपर बक्सा चढ़ाएं या फिर कालोनी का विभाजन करें।
- क्या मधु स्राव का अधिक लाभ लेने के लिए मधुमक्खी परिवार शक्तिशाली है या नहीं? इसके लिए फ्रेमों में पर्याप्त मात्रा में शिशु, अण्डे, मकरन्द तथा पराग होना चाहिए।
- यदि परिवार काफी कमज़ोर है और फ्रेमों की संख्या भी कम है तो दो कालोनियों को आपस में मिला देना चाहिए।
- क्या रानी बनाते समय नर मधुमक्खियों की संख्या रानी मधुमक्खी से मिलन के लिए पर्याप्त है? यदि नरों की संख्या रानी मधुमक्खी संभोग के समय कम होगी तो रानी मिलन से वंचित रह जाएगी तथा अण्डे कम देगी। यदि नर की संख्या आवश्यकता से अधिक है या फिर

प्रजनन मौसम के बाद भी इनकी संख्या अधिक हो तो नर कोष्ठकों को नष्ट कर देना चाहिए।

- अगर बक्से में नई रानी को छोड़ा है तो 24 घंटे के बाद यह जानने के लिए निरीक्षण ज़रूरी है कि परिवार के सदस्यों ने नई रानी को स्वीकार कर लिया है या नहीं।
- क्या परिवार में रानी कोष्ठ बन रहे हैं? अगर रानी बूढ़ी है और बदलनी है तो नई रानी पैदा होने दें।

## मौनवंश निरीक्षण का उचित समय व अंतराल:

- ✓ आमतौर पर मौनवंशों का 15 से 21 दिन के अंतर पर निरीक्षण करना काफी होता है परन्तु वकछूट के दिनों में 4 से 5 दिन में निरीक्षण कर लेना चाहिए।
- ✓ बगैर ज़रूरत के बक्सों को बार-बार खोलना अच्छा नहीं रहता इससे मधुमक्खियों की कार्यप्रणाली प्रभावित होती है परिणामस्वरूप शहद उत्पादन व परिवार बढ़ोत्तरी पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
- ✓ मधुमक्खी वंशों के निरीक्षण का समय अलग-अलग ऋतुओं/मौसमों में अलग-अलग होता है। जैसे सर्दियों के मौसम में जब अधिक ठण्ड पड़ती है तो निरीक्षण तब करें जब खुली धूप निकली हो और ठण्डी हवाएं न चल रही हों यानि की सुबह 11 बजे से सांय 3 बजे के बीच जब वातावरण में गर्मी हो।
- ✓ गर्मियों के मौसम (मई-जून) में जब दिन में तापमान अधिक होता है उस समय मौन वंशों का निरीक्षण सुबह 6 से 9 बजे के बीच और सांयकाल 5 से 7 बजे के बीच करें। बारिश के समय डब्बों को न खोलें।
- ✓ सामान्यतः अधिक गर्मी, अधिक ठण्ड, धुंध, कोहरा, आँधी, बादलवाई एवं धुएं की अवस्था में निरीक्षण नहीं करना चाहिए।
- ✓ बरसात और तेज हवाएं चल रही हों तो बक्सों का अवलोकन नहीं करना चाहिए।

## निरीक्षण के दौरान सावधानियां :

- निरीक्षक के पास मुँह ढकने के लिए जाली या नकाब, हाईव टूल, दस्ताने एवं धुंआकार होना ज़रूरी है तथा कालोनियों का विवरण लिखने के लिए पैन व रजिस्टर भी होना चाहिए। निरीक्षक को आवश्यकतानुसार ही अपने शरीर को हिलाना चाहिए, पर काम में सतर्क व सामान्य रहना चाहिए।
- दो चौखटों के बीच में या मधुकक्ष को शिशु कक्ष के ऊपर रखते समय या अंतरपट रखते समय मधुमक्खी दबकर नहीं मरनी चाहिए।
- निरीक्षक के कपड़ों अथवा शरीर में तेज़ खुशबू वाला तेल, क्रीम या पाऊंडर नहीं होना चाहिए अन्यथा मधुमक्खियां आक्रमण कर सकती हैं। काले रंग के कपड़ों पर भी मधुमक्खियां ज़्यादा गुस्सा करती हैं।
- यदि कमेरी मधुमक्खियां डंक मार दें तो शांत बने रहें। हाईव टूल की सहायता से डंक को खुरच कर बाहर निकाल दें और डंक वाले स्थान पर हरी घास की पत्ती या मिट्टी रगड़ लें अन्यथा दूसरी मधुमक्खियों के डंक मारने का खतरा बना रहता है।
- दूसरी कालोनी का निरीक्षण करने से पूर्व हाथ, दस्ताने, हाईव टूल आदि को पोटेशियम परमैंगनेट के पानी से या साबुन से धो लें ताकि बीमार कालोनी की बीमारी दूसरी कालोनी में न लगे।



# घीया की वैज्ञानिक विधि से खेती

मन्मथन मजोका, शिवानी कम्बोज एवं धर्मवीर दुहन  
सब्जी विज्ञान विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

घीया एक कटूवर्गीय महत्वपूर्ण सब्जी है। इसको लौकी के नाम से भी जाना जाता है। इसके मुलायम फलों में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, खाद्य रेशा, खनिज लवण के अलावा प्रचुर मात्रा में अनेक विटामिन्स भी पाए जाते हैं। लौकी की प्रकृति ठंडी होती है। इसके फल सुपाच्य होने के कारण चिकित्सक रोगियों को लौकी की सब्जी अधिक से अधिक खाने की सलाह देते हैं। लौकी के हरे फलों से सब्जी, रायता, खीर, कोफ्ते, अचार एवं मिठाइयां बनाई जाती हैं।

**उन्नत किस्मों का चुनाव :** घीया के लिये चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा सिफारिश किस्मों की बिजाई करें।

1. **पूसा समर प्रोलीफिक लौंग :** यह किस्म गर्मी व बरसात दोनों मौसम में उगाने के लिए उपयुक्त है। इस किस्म में फल काफी संख्या में लगते हैं और बेलों की बढ़वार भी काफी होती है। कच्चे फलों की लम्बाई 40-50 सें.मी. व फलों का रंग हल्का हरा होता है। इसकी औसत पैदावार 56-60 क्विंटल प्रति एकड़ है।

2. **पूसा समर प्रोलीफिक राऊण्ड :** यह किस्म भी गर्मी व बरसात दोनों मौसम के लिए उपयुक्त है। इसके कच्चे फल 15-18 सें.मी. घेरे के गोल व हरे रंग के होते हैं।

3. **घीया हिसार 22 :** यह किस्म भी ग्रीष्म व बरसात ऋतु में उगाने के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की बेलों की बढ़वार अच्छी होती है, साथ ही साथ उन पर फल भी ज्यादा मात्रा में लगते हैं। इसके कच्चे व खाने योग्य हल्के हरे फलों की औसत लम्बाई लगभग 30 सें.मी. होती है। इसकी औसत पैदावार 100-120 क्विंटल प्रति एकड़ है।

4. **हिसार घीया संकर 35 :** यह घीया की एक संकर किस्म है। इसके फल बेलनाकार व बेल पर ज्यादा मात्रा में लगते हैं तथा बेलों की बढ़वार अच्छी होती है। इस किस्म को ग्रीष्म व वर्षा दोनों ऋतुओं में उगाया जा सकता है। कच्चे व खाने योग्य हरे फलों की औसत लम्बाई लगभग 25-30 सें.मी. होती है। इसकी औसत पैदावार 120-140 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**भूमि की तैयारी :** वैसे तो घीया की फसल हर प्रकार की भूमि में हो सकती है लेकिन उचित जल निकास युक्त प्रचुर जीवांश से युक्त चिकनी बलुई मिट्टी इसकी खेती के लिए सबसे उत्तम मानी गई है। इसके लिए भूमि का पी.एच. मान उदासीन होना चाहिए। उदासीन का मतलब न अम्लीय और न ही क्षारीय अर्थात् 6.0 से 7.0 के बीच में होना चाहिए। बिजाई से 3-4 सप्ताह पहले गोबर की सड़ी-गली खाद खेत में अच्छी तरह मिला दें, फिर 3-4 बार जुताई करें। हर जुताई के बाद सुहागा लगाएं।

**बिजाई का समय :** गर्मी की फसल के लिए फरवरी-मार्च तथा बरसात की फसल के लिए जून-जुलाई का समय बिजाई के लिए उपयुक्त है।

**बीज की मात्रा :** घीया की बिजाई के लिए 1.5 से 2 कि.ग्रा. बीज प्रति

एकड़ काफी रहता है। बिजाई से पहले बीज को रात भर पानी में भिगो लेना चाहिए ताकि बीज का अंकुरण अच्छा हो।

**बिजाई की विधि :** घीया के बीजों को थोड़ी उठी हुई क्यारियों में नालियों के किनारे पर बोयें जिनकी चौड़ाई 2-3 मीटर तथा लम्बाई सुविधानुसार रखें। 2 या 3 बीज एक जगह पर 3-4 सें.मी. की दूरी पर बोयें और पौधे पर जब 2 से 3 सच्ची पत्तियाँ आ जायें, तब केवल एक स्वस्थ पौधा रखकर शेष पौधों को निकाल दें। पौधों के बीच की दूरी 60 सें.मी. रखें।



**खाद व उर्वरकों का प्रयोग :** 6 टन गोबर की सड़ी-गली खाद, 20 कि.ग्रा नाइट्रोजन, 10 कि.ग्रा. फास्फोरस, 10 कि.ग्रा. पोटैश की शुद्ध मात्रा प्रति एकड़ डालें। बिजाई के समय फास्फोरस व पोटैश की सारी मात्रा व नाइट्रोजन की आधी मात्रा बिजाई वाले स्थानों पर बराबर मात्रा में डालें। बची हुई नाइट्रोजन की आधी मात्रा को दो बराबर हिस्सों में बांटकर एक महीने बाद व फूल आने पर नालियों में डालकर मिट्टी चढ़ाएं।

**सिंचाई :** बिजाई बत्तर में करें, अगर बिजाई सूखे में की है, तो तुरंत ही हल्का पानी लगाएं। गर्मी के मौसम में 5-7 दिनों के व बरसात के मौसम में 8-10 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करें। बरसात के मौसम में सिंचाई वर्षा पर निर्भर करती है।

जहाँ सिंचाई के लिए पानी तैलीय (सोडिक) हो वहाँ पानी में एक मि.ली. तुल्यांक प्रति लीटर आर.एस. सी. को निरस्थीकरण करने के लिए जिप्सम 32 किलोग्राम (80 प्रतिशत शुद्धता) प्रति सिंचाई प्रति एकड़ तथा 8 टन गोबर की सड़ी हुई खाद प्रति एकड़ डालें। इससे घीया की फसल पर तैलीय पानी का प्रभाव कम हो जाएगा साथ ही साथ अच्छी पैदावार भी मिलेगी।

**वृद्धि नियामकों का प्रयोग :** दो व चार सच्ची पत्तियाँ आने की अवस्था में पत्तों पर 4 मि.ली. इथरेल (50 प्रतिशत) के घोल को 20 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। इससे मादा फूल ज्यादा संख्या में लगते हैं, अन्ततः पैदावार बढ़ जाती है। कोई चिपचिपा पदार्थ घोल में मिला नाना भूलें।

**अन्तः कृषि क्रियाएं एवं खरपतवार नियन्त्रण :** दोनों ऋतुओं में सिंचाई के बाद खेत में काफी मात्रा में खरपतवार उग जाते हैं। खरपतवार के नियन्त्रण के लिए एक या दो गुड़ाई की आवश्यकता पड़ती है। प्रारम्भिक अवस्था में ट्रैक्टर की टिलर के द्वारा भी खरपतवार को नियंत्रित किया जा सकता है क्योंकि तब पौधे छोटे होते हैं।



**फलों की तुड़ाई व पैदावार :** क्योंकि ज्यादा पके फल खाने के लिए उपयुक्त नहीं होते, इसलिए उनको कच्ची अवस्था में तोड़ें जब उनका रंग हरा हो। फलों का वजन किस्मों पर निर्भर करता है। मुलायम फलों की तुड़ाई डण्ठल लगी अवस्था में किसी तेज़ चाकू से करें।

**औसत पैदावार :** 40-60 क्विंटल/एकड़

**हानिकारक कीड़े व उनकी रोकथाम :** घीया में लालड़ी, तेला, चेपा, माईट, फल मक्खी और जड़ गांठ सूत्रकृमि का प्रकोप होता है। लालड़ी के लिए 25 मि.ली. साईपरमैथरिन 25 ई.सी. या 30 मि.ली. फेनवेलरेट 20 ई.सी. नामक रसायन के घोल को 100 लीटर पानी में घोल कर एक एकड़ में छिड़काव करें। तेला, चेपा और माईट के लिए मैलाथियान 250 मि.ली. 50 ई.सी. और फल मक्खी के लिए मैलाथियान 400 मि.ली. 200-250 लीटर पानी में प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें। घीया में जड़ गांठ सूत्रकृमि की रोकथाम के लिए बिजाई से एक सप्ताह पहले नीम की खल 30 ग्राम प्रति स्थान की दर से मिट्टी में मिलाएं व बीज को बायोटीका से उपचारित करें।

**बेल वाली सब्जियों में बीमारियां :** घीया में चिट्टा रोग, एन्थ्रक्नोज, डारुनी मिल्ड्यू व मोजैक रोग नामक बीमारियों का प्रकोप होता है।

**रोकथाम :**

1. पाऊडरी मिल्ड्यू की रोकथाम के लिए 8-10 किलोग्राम प्रति एकड़ गंधक का धूड़ा का छिड़काव करें।
2. एन्थ्रक्नोज व डारुनी मिल्ड्यू की बीमारियों में रोकथाम के लिए 400 ग्राम इण्डोफिल एम-45 दवा 200 लीटर पानी प्रति एकड़ में छिड़काव करें।

**सावधानियां :**

1. सिफारिश की गई कीटनाशक ही डालें, क्योंकि घीया कुछ अन्य कीटनाशकों से जल सकती है।
2. ओस के समय धूड़ा न करें।
3. खराब व सड़े फल इकट्ठे करके मिट्टी में गहरा दबा दें।
4. कीटनाशक के छिड़काव से पहले फल तोड़ लें।



## कपास का संकर बीज-बनाने की विधि

सुनयना, ए. एच. बंकर एवं आर. एस. सांगवान

अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा में कपास की संकर किस्मों से औसत पैदावार में वृद्धि हुई है। संकर कपास में अधिक पैदावार के साथ-साथ अधिक तापमान और सूखे की स्थिति को सहने की ज्यादा क्षमता होती है। कपास का संकर बीज आमतौर पर आंध्र प्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र में बनाया जाता है। लेकिन सन् 1999 में नर बंध्य प्रणाली विकसित करने के बाद देसी संकर किस्मों का बीज बनाना हरियाणा में भी संभव हो चुका है। देसी संकर किस्म ए ए एच 1 का बीज बनाकर किसान अच्छी कमाई कर सकते हैं। इस संकर किस्म का बीज बनाने की विधि व सावधानियां निम्नलिखित हैं:-

संकर बीज आमतौर पर दो प्रकार से बनाया जाता है

1. मादा भाग से पुंकेसर निकालकर
2. नर बंध्यता (मेल स्ट्राइल) के प्रयोग से

### 1. पुंकेसर निकालकर संकर बीज बनाने की विधि:

इस विधि से नरमा संकर किस्मों का बीज तैयार किया जाता है।

- ☐ नर तथा मादा पंक्तियों को 1:4 के अनुपात में बाँटें।
- ☐ फूल आने पर नर तथा मादा के प्लाट से अवांछित पौधे निकालें।
- ☐ बीज बनाने की क्रिया शुरू करने से पहले मादा पंक्तियों के पौधों से सभी फूल एवं टिण्डे तोड़ दें।
- ☐ मादा पौधों की कलियां जिसे अगली सुबह फूल बनना है से नर भाग को निकालें। यह कार्य सायं 3 से 6 बजे के मध्य करें। इन नर रहित कलियों को रंगदार लिफाफों से ढकें।
- ☐ इन नर रहित कलियों से रंगदार लिफाफे उतारकर अगले दिन सुबह 9 बजे से दोपहर 12:30 बजे तक नर पंक्तियों के फूलों से परागित करें। एक नर फूल से 4-6 नर रहित मादा फूलों को परागित करें।
- ☐ प्रतिदिन मादा फूलों में नर भाग सहित बचे हुए फूलों को तोड़ दें।
- ☐ संकर बीज बनाने का कार्य आमतौर पर 20 जुलाई से 20 सितम्बर तक किया जाता है।
- ☐ परागित फूलों के टिण्डों की चुनाई करके धूप में सुखाकर किसी ऊंचे स्थान पर रखें। जो बीज इस कपास से निकलेगा वह संकर बीज कहलाता है।

### 2. नर बंध्यता (मेल स्ट्राइल) के प्रयोग से कपास का संकर बीज बनाने

**का तरीका:** इस विधि से देसी संकर कपास (ए ए एच 1) और नरमा संकर कपास (एच एच एच 287) का बीज तैयार किया जाता है। ये दोनों संकर किस्में नर बंध्य हैं। इस विधि से संकर बीज बनाने की लागत काफी कम आती है। उत्तरी भारत के किसान नर बंध्य मादा के प्रयोग से कपास का संकर बीज बनाकर पर्याप्त लाभ कमा सकते हैं।

- ☐ नर तथा मादा का अनुपात 1:4 रखें।



- नर पौधों की कतार से कतार की दूरी सवा दो फुट (67.5 सें.मी.) और मादा पौधों की कतारों में दूरी साढ़े चार फुट (135 सें.मी.) रखें। नर कतारों व मादा कतारों के बीच की दूरी भी साढ़े चार फुट रखें।
- फूल आने पर मादा कतारों में 50 प्रतिशत पौधों के फूलों में नर और मादा दोनों भाग होते हैं और बाकी के 50 प्रतिशत पौधों में नर बंध्य (स्ट्राइल) होता है। इसलिए संकर बीज बनाते समय जिन मादा पौधों में नर व मादा दोनों भाग हैं उन्हें निकाल या उखाड़ दिया जाता है। ऐसे पौधों की पहचान (उनके फूलों में परागकण पाए जाते हैं। देसी संकर कपास (ए ए एच 1) के फूलों के गहरे पीले परागकण होते हैं। जिन पौधों के फूलों में ऐसे परागकण हों उन्हें उखाड़ें बाकी बचे हुए 50 प्रतिशत मादा पौधों के फूलों को नर पंक्तियों के फूलों से परागित करें। परागित करने की क्रिया सुबह 9 बजे से दोपहर 12:30 बजे तक करनी चाहिए। नर फूल के परागकण से मादा के ऊपरी हिस्से को परागित करें यह क्रिया प्रायः 20 जुलाई से 20 सितम्बर तक की जाती है। इस प्रकार इस विधि से संकर बीज बनाकर एक एकड़ से लगभग एक लाख रुपये की आमदनी की जा सकती है।

#### सावधानियां:

1. संकर बीज के खेत अवांछित पौधों से रहित होने चाहिए।
2. संकर बीज बनाने के लिए सिंचाई की सुविधा ज़रूरी है।
3. पृथक्करण दूरी 30 मी. देसी से देसी व अमेरिकन से अमेरिकन और देसी से अमेरिकन की 5 मी. दूरी अवश्य रखें।
4. बीज बनाने की प्रक्रिया शुरू करने से पहले दूसरी किस्मों के पौधों को अवश्य निकालें।
5. कीड़ों व बीमारियों का प्रबंधन समय-समय पर करें।
6. खिले हुए टिंडों की चुनाई सप्ताह में एक बार ज़रूर कर लेनी चाहिए।
7. चुनी हुई कपास को तिरपाल या किसी कपड़े पर खेत में चुनाई करके इकट्ठा करें और इसको धूप में अच्छी तरह सुखा लें।
8. इस कपास से जो बीज निकलेगा वह संकर किस्म का बीज होगा।



### आवश्यक सूचना

“हरियाणा खेती” मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

— सह-निदेशक ( प्रकाशन )

## पॉलीहाऊस में सूत्रकृमि नियंत्रण

रामबीर सिंह कंवर एवं गुरप्रीत सिंह

सूत्रकृमि विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार



पॉलीहाऊस में सब्जी तथा फूलदार पौधों की खेती का प्रचलन दिनों-दिन बढ़ रहा है। इनमें मुख्य रूप से खीरा, शिमला मिर्च, टमाटर, स्ट्राबेरी, गुलाब तथा जरबेरा की फसलें उगाई जाती हैं। पॉलीहाऊस में लगातार फसलें लेने तथा अन्य अनुकूल परिस्थितियों के कारण सूत्रकृमि, अष्टपदी (माईट) तथा मिट्टी-जनित फफूंद रोग अधिक पनपते हैं। इन सब में सूत्रकृमि समस्या ज़्यादा भयंकर होती है। वैसे तो हरियाणा में पॉलीहाऊस में कई जाति के सूत्रकृमियों जैसे कि जड़-गांठ सूत्रकृमि, रेनिफार्म अथवा वृक्काकार सूत्रकृमि, जड़ विक्षिप्त सूत्रकृमि तथा कई अन्य बाह्य-परजीवी सूत्रकृमि पाए गए हैं। परन्तु इन सबमें जड़-गांठ सूत्रकृमि अत्यधिक हानि पहुंचाता है। इसकी पहचान भी किसान भाई जड़ों पर बनी गांठों को देखकर आसानी से कर सकते हैं। यदि इनकी तरफ समय रहते ध्यान न दिया जाए तो कुछ समय के बाद समस्या इतनी बढ़ जाती है कि इस पर काबू पाना कठिन हो जाता है। कई बार तो ऐसी स्थिति आ जाती है कि पॉलीहाऊस में फसल उगाना बंद करना पड़ता है तथा किसान को अत्यधिक आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। प्रायः फफूंद तथा जीवाणुओं की उपस्थिति में सूत्रकृमि द्वारा होने वाला नुकसान कई गुणा तक बढ़ जाता है तथा पूरी फसल सूख जाती है। इस लेख में सूत्रकृमियों के पॉलीहाऊस में संक्रमण होने तथा फैलने के कारण, लक्षण तथा इनसे बचाव के तरीकों का वर्णन किया गया है।

#### लक्षण :

- सूत्रकृमि-ग्रस्त पौधों की वृद्धि कम होती है।
- ऐसे पौधे मुरझाए हुए तथा पीले से दिखते हैं।
- पौधों को उखाड़ कर देखने से इनकी जड़ों पर छोटी-छोटी गांठें नज़र आती हैं जो संक्रमण की अवधि तथा पौधे की आयु के साथ-2 आकार में बड़ी हो जाती हैं।
- सूत्रकृमि से प्रभावित पौधों में अन्य रोगाणुओं का प्रकोप ज़्यादा होता है जिससे पौधे सूख जाते हैं।

#### रोकथाम के उपाय

- पॉलीहाऊस लगाने से पहले सूत्रकृमि के लिए मिट्टी की जांच करवाएं।

(शेष पृष्ठ 08 पर)

# कटू वर्गीय सब्जियों की प्रमुख बीमारियां तथा उनका नियंत्रण

किशोर चंद कुम्हार, कुलदीप कुमार एवं हवा सिंह सहारण<sup>1</sup>

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा में कटू वर्गीय (कुकुरबीट्स) सब्जियों का महत्वपूर्ण योगदान है। हमारे राज्य में घीया, करेला, तरककड़ी, कटू-पेठा, तोरी, चप्पनकटू, टिंडा, खीरा, तरबूज, खरबूजा इत्यादि प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं। ये सब्जियां बहुत पौष्टिक होती हैं क्योंकि इनमें अनेक खनिज व विटामिन्स पाए जाते हैं जो मानव स्वास्थ्य के लिए बहुत उपयोगी हैं। साथ ही साथ ये सब्जियां किसानों के लिए आमदनी का साधन भी हैं।

इन सब्जियों के उत्पादन तथा गुणवत्ता को अनेक प्रकार के कारक प्रभावित करते हैं। इन कारकों में से एक प्रमुख कारक इनमें लगने वाली विभिन्न बीमारियां हैं जो मुख्य रूप से फफूंदीजनित हैं। इन बीमारियों की सही समय पर सही पहचान करके उचित रोकथाम करके फसल का अधिकतम उत्पादन लिया जा सकता है। इन फसलों की मुख्य-मुख्य बीमारियों के लक्षण तथा रोकथाम के तरीके इस प्रकार हैं :-

**पाऊंडरी मिल्ड्यू / चूर्ण आसिता / चिट्टा रोग :** यह एक प्रमुख रोग है जो एक प्रकार की फफूंदी से पैदा होता है। इस रोग का प्रकोप खास तौर पर शुष्क मौसम में अधिक होता है। इस रोग से प्रभावित पौधों के तनों, पत्तों तथा अन्य भागों पर सफेद पाऊंडर जैसी परत जम जाती है। शुरुआत में सफेद धब्बे बनते हैं जो बाद में आपस में परत बना लेते हैं। इस परत के बनने से पौधों में होने वाली प्रकाश संश्लेषण की क्रिया कमजोर हो जाती है जिसके प्रभाव से पौधों की बढ़वार पर बुरा प्रभाव पड़ता है और पौधों की बढ़वार रुक जाती है, पत्तियां समय से पहले ही गिरने लगती हैं। आखिरकार फसल की पैदावार तथा गुणवत्ता कम हो जाती है।

## प्रबंधन

- ♦ मिटटी जाँच करवाकर सिफारिश के आधार पर उचित उर्वरकों का प्रयोग।
- ♦ बीमारी के लक्षण दिखने पर गंधक का धूड़ा (सल्फर डस्ट) 8-10 किलोग्राम एक एकड़ की दर से सुबह या शाम छिड़कें, लेकिन खरबूजे की फसल पर इसका प्रयोग बिल्कुल नहीं करना चाहिए।
- ♦ खरबूजे की फसल पर 500 ग्राम घुलनशील गंधक 200 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ में छिड़कना लाभदायक है।

**एन्थ्रेक्नोज :** यह एक फफूंदी जनित बीमारी है। इस बीमारी से प्रभावित फसल के पत्तों और फलों पर धब्बे बनते हैं जो शुरू-शुरू में जलसिक्त (वाटर सोकड) होते हैं। बाद में ये धब्बे पीले तथा भूरे काले रंग के हो जाते हैं।

<sup>1</sup>विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार।

## प्रबंधन:

- ♦ बिजाई के लिए स्वस्थ तथा रोग रहित बीजों का प्रयोग करना चाहिए।
- ♦ बीमारी के लक्षण दिखने पर मेंकोजेब नामक फफूंदनाशक दवा की 400 ग्राम मात्रा 200 लीटर पानी के साथ प्रति एकड़ छिड़कने से बीमारी की रोकथाम होती है।

## डाउनी मिल्ड्यू :

इस रोग से प्रभावित पौधों के पत्तों की ऊपरी सतह पर पीले या नारंगी रंग के धब्बे बनते हैं जो पत्तियों की शिराओं के बीच सीमित रहते हैं। नम मौसम में इन धब्बों की निचली सतह पर सफेद अथवा हल्के बैंगनी रंग का पाऊंडर दिखाई देता है। रोग का अधिक प्रकोप होने पर पत्ते सूख जाते हैं और अंत में पौधे मर जाते हैं।

## प्रबंधन :

- ♦ लौकी प्रजाति के खरपतवारों को नष्ट करना चाहिए।
- ♦ प्रभावित फसल पर मेंकोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना लाभदायक होता है।
- ♦ खरबूजे की फसल पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

**गम्मी कॉलर रॉट (गोंदनुमा तना विगलन) :** यह बीमारी खरबूजे की फसल पर मुख्यतः अप्रैल-मई में लगती है। प्रभावित पौधों के तने भूमि सतह से पीले होने लगते हैं जिनमें से बाद में गोंद जैसा चिपचिपा पदार्थ बाहर निकलने लगता है।

## प्रबंधन :

प्रभावित पौधों के तनों पर भूमि की सतह पर 0.1 प्रतिशत कार्बेन्डाजिम नामक दवा का घोल अच्छी तरह से सींचना चाहिए।

**मोजैक रोग :** यह एक विषाणु जनित रोग है। यह रोग अल/चेपा (एफिड) नामक कीट से फैलता है। प्रभावित पौधों के पत्ते पीले और हरे हो जाते हैं। ऐसे पत्ते कुरूप तथा कम विकसित होते हैं। प्रभावित पौधों की पैदावार कम हो जाती है।

**प्रबंधन :** इस रोग के प्रभावी नियंत्रण के लिए 250 मिली लीटर मैलाथियान 50 ई.सी. नामक दवा को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर 10 दिन के अंतराल पर छिड़कना चाहिए।



(पृष्ठ 01 का शेष)

इस किस्म का तना मज़बूत होता है तथा टिण्डों की संख्या भी काफी ज्यादा होती है। किसान इस किस्म को लगाकर काफी हद तक इस समस्या से निजात पा सकते हैं। इस तरह से किसान इन सावधानियों को ध्यान में रखकर देसी कपास की खेती करें तो वे अपना उत्पादन बढ़ा सकते हैं और अधिक मुनाफा कमा सकते हैं।



# सब्जी पौध उत्पादन की उन्नत (हाईटेक) तकनीक

कुलदीप कुमार, किशोर चंद कुम्हार एवं मकखन लाल

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सब्जी पौधशाला एक ऐसा स्थान है, जहाँ पर सब्जियों की पौध तैयार की जाती है तथा पौधों को तैयार खेत में लगाने तक उनकी एक विशेष देखभाल की जाती है। सब्जी पौध उत्पादन में आधुनिक तकनीक के रूप में प्रयोग में ली गई विधियों को उन्नत अथवा हाईटेक कहते हैं। यह तकनीक मौसम एवं वातावरण पर कम निर्भरता वाली व अधिक लाभ देने वाली है। इस प्रकार पौध उगाने की आधुनिक विधि का प्रयोग करके किसान भाई अच्छी आमदनी ले सकते हैं।

सब्जियों की पौध उत्पादन में सामान्यतः किसानों को दो प्रकार से हानि उठानी पड़ती है। पहला तो बीज का जमाव कम होता है, दूसरा बीज जमने के बाद पौध आर्द्रगलन का शिकार हो जाती है, जिससे 40 से 50 प्रतिशत तैयार पौध में हानि हो जाती है। बीज गलन का प्रकोप मुख्य रूप से वर्षा ऋतु में पाया जाता है, जब तापमान 24-30 डिग्री सेल्सियस एवं आपेक्षिक आर्द्रता 80-90 प्रतिशत तक हो जाती है। सर्दी के मौसम में अगेती कद्दूवर्गीय फसलों को लेने के लिये जो बीज बोये जाते हैं, वे कम तापक्रम के कारण जम नहीं पाते हैं। अगर पौधे उग भी जाते हैं तो उनकी बढ़वार धीरे-धीरे होती है जिससे कि पौध को तैयार करने में काफी समय लगता है और पाला पड़ने पर पौधे मर जाते हैं। उपरोक्त सभी समस्याओं को देखते हुए पॉली हाऊस या पॉली ग्रीन हाऊस, पॉली बैग नर्सरी एवं लो टनल पॉली हाऊस द्वारा सब्जियों की उच्च गुणवत्तायुक्त पौध उगाई जा सकती है तथा पौधों की संख्या भी बढ़ाई जा सकती है।

**पौधशाला में पौध तैयार करने से लाभ :-**

1. पौधशाला के छोटे क्षेत्रफल में छोटे-मुलायम पौधों की देखभाल करना आसान है।
2. पौधे आसानी से कीड़े एवं बीमारियों से बचाये जा सकते हैं।
3. नर्सरी में पौधों की बढ़वार के लिये उचित जलवायु प्रदान की जा सकती है।
4. बेमौसम में नर्सरी तैयार करके अगेती फसल ली जा सकती है, जिससे बाज़ार में अच्छी कीमत मिले।
5. थोड़ी ज़मीन पर पौध तैयार की जा सकती है, जिससे पूरे खेत को तैयार करने के लिए काफी समय मिल जाता है।
6. सब्जियों के बीज काफी महंगे होते हैं, जिसे नर्सरी में उगाकर प्रत्येक बीज से लाभ उठाया जा सकता है।

**पौधशाला की उन्नत तकनीक:-**

**लो टनल पॉली हाऊस :** यह अस्थाई पॉली हाऊस है जो मौसम के हिसाब

से खेत में कहीं भी लगाया जा सकता है। आवश्यकता खत्म होने पर इसे हटा कर दूसरी नर्सरी के लिये प्रयोग कर सकते हैं। स्थाई ढाँचा न होने के कारण यह हर समय खेत में जगह नहीं घेरता है व एक बार बन जाने के बाद इसका प्रयोग कई वर्षों तक कर सकते हैं। क्यारियों में बुवाई के बाद 75 सें.मी. की ऊंचाई पर अर्धचन्द्राकार, सुरंगनुमा ढाँचा बनाया जाता है। इस ढाँचे पर 200 गेज मोटी पारदर्शी पॉलिथीन की चादर डालकर एक सिरे की ज़मीन से दूसरे सिरे को ज़मीन तक ढक देते हैं। इसके किनारों को गीली मिट्टी से दबा देते हैं ताकि तेज़ हवा चलने पर यह हट न पाये तथा कीटों का अंदर प्रवेश न हो पाये। इस विधि द्वारा शीत ऋतु में पौध तैयार करना अत्यधिक उपयोगी होता है।

लो टनल का मुख्य उद्देश्य तापक्रम के उतार-चढ़ाव को संतुलित करना तथा बीज अंकुरण को बढ़ाना है। समय-समय पर आवश्यक सस्य क्रियाएं करके इसे फिर ढक देते हैं। टमाटर, बैंगन, शिमला मिर्च तथा कद्दू वर्गीय सब्जियों (खीरा, ककड़ी, लौकी, तुरई, कद्दू, टिंडा, खरबूजा व तरबूज आदि) की बेमौसम अर्थात् सर्दियों में नर्सरी पौध तैयार करके एक से दो माह अगेती खेती कर विशेष लाभ कमाया जा सकता है।

**पॉलीहाऊस या पॉलीग्रीन हाऊस :** इसको बनाने में पॉलिथीन शीट का उपयोग करते हैं इसलिए इसे पॉलीहाऊस भी कहते हैं। इसका ढाँचा जंगरहित लोहे के पाइप द्वारा तैयार किया जाता है, जिसे 600 गेज की पॉलिथीन से ढक दिया जाता है। इसके अंदर बिजली से चलने वाले कूलर तथा तापमान व आर्द्रता नियंत्रक उपकरण (पंखे व पैड आदि) लगाए जाते हैं। सामान्यतः पॉली ग्रीन हाऊस में पौध उत्पादन प्लास्टिक ट्रे में किया जाता है, इन ट्रे में एक अलग तरह का हल्का व कीटाणु रहित मिश्रण डाला जाता है। पॉली ग्रीन हाऊस में पौध तैयार करने के अतिरिक्त तापमान अधिक होने की अवस्था में सीधे सब्जियां उगाकर अच्छी आमदनी प्राप्त की जा सकती है।

**पॉली बैग नर्सरी :** पॉली बैग में कद्दू वर्गीय सब्जियों की नर्सरी तैयार करके एक से डेढ़ माह पूर्व ही उत्पादन ले सकते हैं। पॉली बैग तैयार करने के लिये पॉलिथीन की थैली के निचले भाग में 3-4 छिद्र करके इसमें एक तिहाई भाग रेत, गोबर की गली-सड़ी खाद व मिट्टी का मिश्रण करके बुवाई करते हैं। इसे टंड से बचाकर रखने के लिए हम नर्सरी को रात में पॉलिथीन की शीट से ढक देते हैं और धूप निकलने पर शीट को हटा देते हैं। बुवाई के 25-30 दिन बाद तैयार पौध की खाली खेत में रोपाई करके उत्पादन लेते हैं।

इस प्रकार से किसान भाई उपरोक्त उन्नत विधियों द्वारा पौध तैयार करने के उपरांत अगेती बुवाई करके सब्जियों की फसल से अच्छा मुनाफा ले सकते हैं। सब्जियों की सफल खेती के लिए स्वस्थ व बीमारी रहित पौध का उत्पादन करने के लिए किसान भाइयों को सदैव प्रामाणिक और उन्नतशील किस्मों के बीजों को ही बोना चाहिए, जिससे अच्छी फसल प्राप्त की जा सके। कुछ छोटे किसान जिनके पास ज़मीन कम है, वे पौधशाला बनाकर विभिन्न सब्जियों की उन्नत पौध तैयार कर स्वतंत्र व्यवसाय कर अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं।





# लहसुन व प्याज में थ्रिप्स की रोकथाम

नरेन्द्र कुमार<sup>1</sup>, हरीश कुमार एवं सुनीता यादव

कीट विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

थ्रिप्स जिसे चूरड़ा नाम से भी जाना जाता है एक छोटा सा पीले-भूरे रंग का बेलनाकार रस चूसक कीट है। यह कीट लहसुन व प्याज का प्रमुख हानिकारक कीट है। इसका आक्रमण लहसुन व प्याज में ज्यादातर फरवरी से मई तक रहता है। पूरे विश्व व समस्त भारत में इस कीट का प्रकोप देखा गया है। लहसुन व प्याज के अलावा यह कीट कपास, फूलगोभी, बंदगोभी, आलू, तम्बाकू एवं टमाटर को भी नुकसान पहुंचाता है। कपास व अन्य चौड़ी पत्ती वाली फसलों के पत्तों की निचली सतह पर यह कीट निर्वाह करता है। बारीकी से देखने पर यह कीट प्याज व लहसुन की पत्तियों व फूलों पर घूमते हुए नजर आते हैं।

## थ्रिप्स का जीवन चक्र :

यह कीट पूरे वर्ष भर सक्रिय रहता है तथा एक साल में कई पीढ़ियां पूरी कर लेता है। अधिक गर्मी व सूखा इस कीड़े की वृद्धि के लिए अनुकूल हैं। यह कीट नवम्बर से मई तक प्याज व लहसुन पर प्रजनन करता रहता है। मई से सितम्बर तक यह कीड़ा कपास व अन्य फसलों पर स्थानांतरित हो जाता है। अक्टूबर में यह फूलगोभी व बंदगोभी पर निर्वाह करता है। वयस्क मादा 2-4 सप्ताह तक जीवित रहती है और पत्ती के अन्दर छेद करके उत्तकों में एक-एक करके किडनी के आकार के लगभग 50-60 छोटे-छोटे अण्डे देती है। अण्डों से 4-9 दिनों में बच्चे निकलकर रस चूसना शुरू कर देते हैं। शिशु 4-6 दिनों के बाद जमीन में 25 मि.मी. नीचे जाकर प्यूपा अवस्था में चले जाते हैं। पूर्व प्यूपा व प्यूपा अवस्था क्रमशः 1-2 और 2-4 दिन की होती है।

## कीट द्वारा नुकसान:

इस कीट के वयस्क व शिशु दोनों अवस्थाओं में पत्तों से रस चूसकर फसल को भारी नुकसान पहुँचाते हैं। ग्रसित पत्ते पर सफेद धब्बे पड़ जाते हैं तथा बाद में पत्ते मुड़ जाते हैं। पत्तियों में झुर्रियां पड़ जाती हैं। अधिक प्रकोप होने पर पत्ते चोटी से चांदीनुमा (सिल्वरी-टॉप) होकर सूख जाते हैं। फूल उगने के समय इस कीट के प्रकोप से बीज की पैदावार पर अधिक असर पड़ता है। कीड़े का आक्रमण ज्यादातर फरवरी से मई तक रहता है।

## थ्रिप्स का कुशल प्रबन्धन:

1. इस कीट की रोकथाम के लिए लहसुन का तेल 150 मि.ली. तथा इतनी ही मात्रा में टी-पोल को 120 से 160 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ 3 से 4 छिड़काव 10 दिन के अंतर पर करें।
2. रासायनिक कीटनाशक द्वारा नियंत्रण हेतु नीचे दी गई क व ख भाग में से बारी-बारी एक कीटनाशक को 200-250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

- क) 75 मि.ली. फैनवैलरेट 20 ई.सी. या 175 मि.ली. डैल्टामेथ्रिन 2.8 ई.सी. या 60 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी.
- ख) 300 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. ज़रूरत पड़ने पर आवश्यकतानुसार 10-15 दिन के अंतराल पर छिड़काव दोहराएं।

## सावधानियां

- दो या दो से ज्यादा कीटनाशकों का प्रयोग एक साथ न करें।
- एक ही कीटनाशक का प्रयोग बार-बार न करें। आवश्यकतानुसार बारी-बारी से “क” और “ख” में दी गई कीटनाशकों को छिड़कें।
- कीटनाशकों का प्रयोग आर्थिक कगार के आधार पर करें। प्रायः छिड़काव की ज़रूरत मार्च-अप्रैल में पड़ती है।
- बेहतर परिणाम के लिए कीटनाशक दवा के साथ चिपकने वाले पदार्थ 10 ग्राम सैलवेट-99 या 50 मि.ली. ट्रिटान प्रति 100 लीटर घोल के हिसाब से मिलाएं ताकि दवा पत्तियों पर चिपक जाए।
- छिड़काव के कम से कम 15 दिन बाद ही लहसुन व प्याज को प्रयोग में लायें।



## (पृष्ठ 05 का शेष)

- पौध सूत्रकृमि रहित मिट्टी में तैयार करनी चाहिए तथा पॉलीहाऊस में स्वस्थ (सूत्रकृमि रहित) पौध प्रयोग करें।
- पॉलीहाऊस में टमाटर की फसल में जड़-गांठ सूत्रकृमि के प्रबन्धन के लिए 20 ग्राम ट्राइकोडरमा को 100 ग्राम नीम की खली, गोबर की खाद या केंचुआ खाद में मिला कर प्रति वर्ग मीटर की दर से मिट्टी में मिलाकर बिजाई से एक सप्ताह पहले डालकर हल्की सिंचाई करें।
- पॉलीहाऊस एवं ग्रीन हाऊस को खरपतवार एवं पिछली फसल के अवशेषों से हमेशा मुक्त रखें।
- मई-जून की गर्मी में 10 से 15 दिनों के अन्तराल पर 2-3 गहरी जुताइयां करें। इसके बाद जून-जुलाई में हल्की सिंचाई करके 25 माइक्रोन मोटी पारदर्शी पॉलीथीन शीट से 30 दिन तक ढक कर रखें। इससे जड़-गांठ सूत्रकृमि की संख्या में कमी की जा सकती है।
- फफूंद का प्रकोप होने पर मोटी नोजल से कारबेंडाजिम (बाविस्टीन) दवा का 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से घोल बनाकर पौधों की जड़ों के पास डालें।

## पॉलीहाऊस में सूत्रकृमि के फैलने के कारण

पॉलीहाऊस में सूत्रकृमि निम्नलिखित स्रोतों से फैलते हैं

- ये पहले से ही पॉलीहाऊस वाले खेत की मिट्टी में विद्यमान हो सकते हैं।
- संक्रमित खेत की मिट्टी औज़ारों, जूतों आदि के साथ आने से ये पॉलीहाऊस में फैल सकते हैं।
- संक्रमित (सूत्रकृमि ग्रस्त) पौध के प्रयोग से पॉलीहाऊस में प्रवेश कर जाते हैं।



<sup>1</sup>शोध छात्र, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार।

# टमाटर की उन्नत खेती

विकास कुमार, टी. पी. मलिक एवं देशराज चौधरी

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

टमाटर का वानस्पतिक नाम लाइकोपर्सिकन एस्कुलेन्टम है। यह सोलेनसी परिवार का पौधा है। भारत में उगाई जाने वाली सब्जियों में टमाटर की खेती का मुख्य स्थान है। सब्जी के अतिरिक्त इसका सूप, चटनी, सलाद, सॉस आदि बनाने में इस्तेमाल किया जाता है। टमाटर के विभिन्न उपयोगों के कारण इसकी मांग वर्षभर बनी रहती है और इसके कारण किसान भाई वर्षभर टमाटर की खेती करके इससे अधिक लाभ कमा सकते हैं।

## टमाटर की उन्नत किस्में :

1. **पंजाब छुहारा** : इस किस्म का पौधा मध्यम 4 फुट लम्बा होता है। इस किस्म के फल नाशपाती के आकार के होते हैं। इस किस्म के फल में बीज की मात्रा कम होती है एवं फल की त्वचा सख्त तथा फल का रंग पूरा लाल होता है। इस किस्म के एक फल का वजन लगभग 60-70 ग्राम होता है व टमाटर के फल की पहली तुड़ाई पौधे लगाने के 90 दिन के बाद आरम्भ हो जाती है। इस किस्म में तापमान को झेलने की शक्ति है तथा यह अधिक पैदावार देती है।

2. **हिसार ललित** : यह एक जड़ गांठ रोग रोधी किस्म है। यह किस्म उन स्थानों के लिए उपयुक्त है जहां पर जड़ गांठ रोग नामक बीमारी आती हो। इस किस्म की यह विशेषता है कि इसे जड़ गांठ रोग ग्रसित खेतों में उगाने पर भी 100 से 120 क्विंटल प्रति एकड़ उपज प्राप्त होती है।

3. **पंजाब केसरी** : यह एक मध्यम आकार की किस्म है। इस किस्म की पैदावार 230 क्विंटल प्रति एकड़ है। इस किस्म के फलों में रस की मात्रा भी अधिक होती है और इस किस्म में अधिक धूप को भी सहन करने की क्षमता है।

4. **हिसार लालिमा** : यह किस्म अगेती किस्मों में से एक है। इस किस्म के पौधों की लम्बाई कम होती है। इस किस्म के फल गोल, लाल, बड़े आकार के व देखने में आकर्षित, गूदेदार होते हैं। इस किस्म की रोपाई के 65 से 70 दिनों के बाद फलों की प्रथम तोड़ाई की जा सकती है। इस किस्म से प्रति एकड़ लगभग 120 क्विंटल फल की पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

**टमाटर की खेती के लिए भूमि की तैयारी** : टमाटर के पौधे के लिए सबसे अच्छी बेहतर जल निकासी वाली बलुई मिट्टी होती है। अच्छी फसल के लिए मिट्टी की गहराई 15 से 20 सें.मी. होनी चाहिए। खेत की तैयारी के लिए 2-3 बार जुताई करके पाटा चलाएं व खेत में 10 टन गोबर की गली व सड़ी खाद या कम्पोस्ट खाद पौध रोपाई के लगभग तीन सप्ताह पहले अच्छी तरह मिला लें। टमाटर की खेती के लिए 5.5 से 6.8 का पीएच सामान्य है।

**बिजाई का समय व विधि** : मैदानी भागों में टमाटर की बिजाई वर्ष में दो बार की जाती है। जून-जुलाई और नवम्बर-दिसम्बर महीने में पौधशाला की भूमि तैयार करके 3×1 मीटर आकार की क्यारियां तैयार कर लें। क्यारियां ज़मीन की सतह से 10-15 सें.मी. उभरी हुई होनी चाहिए। बीज की बुवाई से पहले बीज को थार्डरम या बाविस्टिन या कैप्टान कवकनाशक 2 ग्राम/किलो बीज के हिसाब से उपचारित करें।

**बीज की मात्रा** : सर्दी की फसल के लिए लगभग 400-500 ग्राम बीज व बसन्तकालीन फसल के लिए लगभग 200 ग्राम बीज प्रति एकड़ पर्याप्त होता है।

**रोपाई** : रोपाई से पूर्व 2.5 किलो ट्राईकोडर्मा को 50 किलो अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद के साथ मिलाकर खेत में डालने से फ्युजोरियम बिल्ट से बचाव किया जा सकता है। सर्दी की फसल की रोपाई जुलाई से अगस्त में तथा बसन्त कालीन फसल की रोपाई मध्य जनवरी से मध्य फरवरी में कर सकते हैं। सामान्य तौर पर नर्सरी की पौधे में 5-6 पत्तियां होनी चाहिए। पौधे से पौधे की दूरी लगभग 45 सें.मी. तथा कतार से कतार की दूरी 60 सें.मी. रखनी चाहिए। रोपाई हमेशा सांयकाल के समय ही करनी चाहिए इससे नुकसान कम होता है। एक स्थान पर दो पौधे लगाएं तथा पौधे लगाने के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई करें। इससे टमाटर की उपज में वृद्धि होगी।

**खरपतवार प्रबन्धन** : टमाटर की फसल में खरपतवार नियन्त्रण के लिए निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। प्रत्येक सिंचाई के बाद में हल्की निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। खरपतवार भूमि से पोषक तत्व लेकर टमाटर की उपज में कमी करते हैं तथा कीट एवं बीमारियों को शरण देते हैं। रासायनिक खरपतवार नियन्त्रण के लिए पेन्डीमिथालीन नामक दवा का 400 मि.ली. प्रति एकड़ की दर से खरपतवारों के अंकुरण से पहले 200 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से खरपतवारों पर नियन्त्रण किया जा सकता है।

**सहारा देना** : यह अन्तः सस्य क्रिया पौधों की रोपाई के 2-3 सप्ताह के बाद की जाती है। पौधे को सहारा देने से अधिक उत्पादन व फल फटने की समस्या में कमी आती है। सहारा देने के लिए कतार के सामानान्तर बांस की खूंटी को गाड़कर उसमें दो या तीन तार खींच कर बांध देना चाहिए तथा पौधों को इन तारों से सुतली से बांध देना चाहिए।

**खाद व उर्वरक** : खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करने से पहले निकटतम प्रयोगशाला से मिट्टी की जांच करवा लेनी चाहिए। मिट्टी की जांच के अनुसार ही उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। बिजाई पूर्व 10 टन गोबर की अच्छी सड़ी हुई खाद का प्रयोग करें, कच्ची गोबर की खाद का प्रयोग न करें। रासायनिक खाद का प्रयोग अनुशंसा के अनुसार एन पी के की मात्रा 40:25:20 किलो प्रति एकड़ प्रयोग करें।

**सिंचाई** : प्रथम सिंचाई पौध रोपाई के तुरन्त बाद करनी चाहिए। गर्मी में 5-7 दिन के अन्तराल तथा सर्दी में 10-15 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

**वृद्धि नियामकों का प्रयोग :** टमाटर की फसल में पैदावार को बढ़ाने के लिए प्लानोफिक्स (NAA) 4-5 मि.ली. प्रति एकड़ का छिड़काव करने से फूलों का गिरना कम होता है तथा अधिक फल बनते हैं इसके अलावा सूक्ष्म मात्रिक तत्व जैसे बोरान एवं जिंक की कमी के लक्षण दिखाई देने पर बोरेक्स 0.6 प्रतिशत की दर से खड़ी फसल में छिड़काव करें। साईकोसिल के 500 पी.पी.एम घोल का पौध रोपाई से पहले एक छिड़काव पौधों में ठण्ड को सहने की क्षमता को बढ़ाता है।

**टमाटर की तुड़ाई :** टमाटर के फलों पर जब लाल व पीले रंग की धारियां दिखने लगे उस अवस्था में तोड़ लेना चाहिए व कमरे में रख कर पकाना चाहिए। अधपके टमाटरों को दूर स्थानों तक भेजा जा सकता है।

#### **हानिकारक कीट :-**

**फलछेदक सूण्डी :** यह टमाटर में सर्वाधिक हानि पहुंचाने वाला कीट है तथा मादा कीट पत्ती की निचली सतह पर अण्डे देती है। इल्लीमा टमाटर के फलों में छेद करके फल का गूदा खाती है।

**महु (चेपा) व सफेद मक्खी :** इस तरह के कीट पत्तियों का रस चूसते हैं तथा वायरस जनित रोगों को एक पौधे से दूसरे पौधे में फैलाने में अहम् भूमिका निभाते हैं।

**सूत्रकृमि :** सूत्रकृमि के प्रकोप से टमाटर के पौधे अविकसित रह जाते हैं। जड़ों की गांठों वाले सूत्रकृमि से ग्रस्त पौधे पीले पड़ जाते हैं और पौधों की जड़ों में गांठें बन जाती हैं या वे फूल जाती हैं।

**कीट नियन्त्रण :** फल व फूल छेदक के नियन्त्रण के लिए संक्रमित फलों को नष्ट कर देना चाहिए। फेरोमोन ट्रैप का उपयोग करना चाहिए। रोकथाम के लिए इडोक्सा कार्ब (अवोट 1 कि.ग्रा.) 5 एस सी. 200 मि.ली. प्रति एकड़ का छिड़काव करना चाहिए या 60 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी./150 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 10 ई.सी. रस चूसने वाले कीटों की रोकथाम के लिए साइपरमेथ्रिन 100 ई एल 250 एम.एल तथा इमिडाक्लोप्रिड 8 एस.एल. 40 एम.एल तथा थायो मेथेक्सान 25 डब्ल्यू जी 40 ग्राम प्रति एकड़ 150 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। सूत्रकृमि के नियन्त्रण के लिए गर्मियों में गहरी जुताई करें तथा कार्बोफ्युरान 10 किलो प्रति एकड़ का प्रयोग करना चाहिए।

#### **बीमारियां व इनकी रोकथाम :**

1. **आर्द्रगलन रोग :** यह रोग फंगस के द्वारा होता है तथा पौधशाला में होता है। इस रोग के कारण पौधे अंकुरण से पहले और बाद में भी मर जाते हैं।

**रोकथाम :** बीजों को बुवाई के पूर्व कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम प्रति किलो वज़न के अनुसार उपचारित करना चाहिए। जैविक नियन्त्रण के लिए ट्राइकोडर्मा विरडी 2 ग्राम प्रति किलो की दर से बीज का उपचार करें।

2. **पछेली अंगमारी :** यह रोग पौधे की पत्तियों पर किसी भी अवस्था में होता है। इस रोग के कारण पौधे की पत्तियों पर भूरे व काले बेंगनी रंग के धब्बे दिखाई देते हैं।

(शेष पृष्ठ 11 पर)

## **टमाटर-आहार्य महत्व**

**जयन्ती टोकस, हिमानी एवं सुरीना**

जैव रसायन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

टमाटर विश्व में सबसे ज़्यादा प्रयोग होने वाली सब्जी है। इसका पुराना वानस्पतिक नाम लाइकोपोर्सिकान एसकुलेटम मिल है। वर्तमान समय में इसे सोलेनम लाइकोपोर्सिकान कहते हैं। इसमें भरपूर मात्रा में कैल्शियम, फास्फोरस व विटामिन सी होते हैं। टमाटर में प्रोटीन, विटामिन वसा आदि तत्व विद्यमान होते हैं। टमाटर में साइट्रिक एसिड और भौतिक एसिड होता है जिसके कारण ही इसका स्वाद खट्टा होता है। अपने इसी खट्टापन के कारण ही यह एक प्रत्यमल (एंटासिड) के रूप में काम करता है और यह एसिडिटी की शिकायत को भी दूर करता है। टमाटर को विश्वव्यापी मान्यता प्राप्त है और यह खाने का अहम् हिस्सा है। लाल-लाल टमाटर देखने में सुंदर और खाने में तो स्वादिष्ट लगते ही हैं साथ ही इनमें बहुतायत में पौष्टिक गुण भी पाए जाते हैं। टमाटर में लाइकोपीन काफी मात्रा में होता है और यह कई तरह के कैंसर रोकने में फायदेमंद है। लाइकोपीन के अलावा टमाटर में पोटाशियम, नियासिन, विटामिन बी 6 और फॉलेट भी पाए जाते हैं और यह सब हृदय स्वास्थ्य के लिए बहुत जरूरी हैं। टमाटर में दो एंटी एजिंग कंपाउंड्स, लाइकोपीन और बीटा कैरोटिन भी होते हैं। टमाटर में कैलोरीज़ कम होती हैं व फाइबर ज़्यादा होते हैं। टमाटर में मौजूद बीटा कैरोटीन बॉडी में जाकर विटामिन ए में बदल जाता है जो त्वचा, हड्डियों, बालों व दांतों को स्वस्थ रखने में सहायक है।

हरे टमाटरों की तुलना में लाल टमाटर ज़्यादा फायदेमंद होते हैं क्योंकि लाल टमाटर फ्राई करने पर लाइकोपीन को अच्छे से अवशोषित कर लेता है और तेल में तलने से भी इसके पोषक तत्व खत्म नहीं होते। टमाटर में सेब व संतरा दोनों के गुण विद्यमान होते हैं। टमाटर का सेवन करने से कई रोगों का निदान होता है। इसी कारण यह शरीर के लिए बहुत लाभकारी होता है। टमाटर शरीर से, विशेषकर गुर्दे से रोग के जीवाणुओं को निकालता है। यह मधुमेह के रोगियों के लिए भी बहुत उपयोगी होता है क्योंकि यह पेशाब में चीनी के प्रतिशत पर नियंत्रण रखता है। टमाटर में विटामिन 'ए' काफी मात्रा में पाया जाता है जो आंखों के लिए बहुत लाभकारी होता है। इससे पाचन शक्ति बढ़ती है। टमाटर खाने से गैस की शिकायत भी दूर हो जाती है। टमाटर खाने से अतिसंकुचन भी दूर होता है और खांसी तथा बलगम से भी राहत मिलती है। टमाटर में कार्बोहाइड्रेट की मात्रा कम होती है। इसी कारण इसे एक उत्तम भोजन माना जाता है। टमाटर को लगातार खाने से जिगर बेहतर ढंग से काम करता है। एक मध्यम आकार के टमाटर में केवल 12 कैलोरीज़ होती हैं इसलिए इसे पतला होने के भोजन के लिए उपयुक्त माना जाता है। टमाटर में विद्यमान पौष्टिक तत्वों के कारण सुबह नाश्ते में केवल दो टमाटर खाना सम्पूर्ण भोजन खाने के बराबर होता है। यह



पूरे शरीर के छोटे-मोटे विकारों को भी दूर करता है। टमाटर के नियमित सेवन से श्वास नली का शोधन होता है। अधिक पके लाल टमाटर खाने से कैंसर रोग नहीं होता। इसके सेवन से रोग प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ती है।

- टमाटर खाने से निम्न रोगों का उपचार होता है :
- बच्चों को सूखा रोग होने पर आधा गिलास टमाटर के रस का सेवन कराने से फायदा होता है।
- दो या तीन पके हुए टमाटरों का नियमित सेवन करने से बच्चों का विकास शीघ्र होता है।
- शरीर का भार घटाने के लिए सुबह-शाम एक गिलास टमाटर का रस पीना लाभदायक है।
- गर्भवती महिलाओं के लिए सुबह एक गिलास टमाटर के रस का सेवन फायदेमंद है।
- गठिया रोग में एक गिलास टमाटर के रस की सोंठ तैयार करके उसमें एक चम्मच अजवायन का चूर्ण मिलाकर सुबह-शाम पीने से लाभ होता है।



(पृष्ठ 10 का शेष)

**रोकथाम :** बादल छाये रहने पर इसका प्रकोप बढ़ता है। मेन्कोजेब 25 ग्राम या क्लोरोथेलोनिल 25 ग्राम प्रति 10 लीटर या ब्लाइटॉक्स 5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से खेत में छिड़काव करना चाहिए।

**3. जीवाणु उखटा रोग :** इस रोग से ग्रस्त पौधों की पत्तियां पीले रंग की होकर सूखने लगती हैं एवं कुछ समय बाद पौधा भी सूख जाता है।

**नियन्त्रण :** फसल चक्र अपनाना चाहिए। 5 ग्राम थायोफनेट नियाइल 3 ग्राम रीडोनिल 6 ग्राम स्ट्रेप्टोसाईक्लिन प्रति 15 लीटर पानी के साथ मिलाकर छिड़काव करें।

**4. पत्ती मरोड़ विषाणु रोग :** इस विषाणु रोग के कारण पौधे की वृद्धि रुक जाती है। पत्तियां मोटी, मुड़ी हुई हो जाती हैं। तने पर धारियां पड़ जाती हैं। फल का आकार बहुत ही छोटा रह जाता है।

**रोकथाम :** स्वस्थ एवं रोगरहित बीजों का प्रयोग करें। बीमारी फैलाने वाले कीटों की रोकथाम करें। 10-15 दिन के अन्तराल पर कीटनाशक दवाइयों का छिड़काव करना चाहिए। रोगी पौधे को आरम्भ में ही निकाल कर नष्ट कर दें।

**पैकिंग व भण्डारण :** टमाटर के भण्डारण के लिए 12-15 डिग्री तापमान पर भंडारित किया जाता है। हरे फलों को 10-15 डिग्री तापमान पर 30 दिनों के लिए भण्डारित कर सकते हैं। भण्डारण के समय अपेक्षित आर्द्रता 85-90 प्रतिशत होनी चाहिए।



## अंगूर में गुणवत्ता सुधार एवं भंडारण

अनुराधा एवं आर. के. गोदारा<sup>1</sup>

बागवानी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

अंगूर बहुत ही स्वादिष्ट एवं पौष्टिक फल है। अंगूर का उपयोग हमारे देश में मुख्यतः ताजे फल व फल मदिरा बनाने के रूप में किया जाता है। हमारे देश में अंगूर की बागवानी अधिक आय देने वाली सिद्ध हुई है। इसी कारण हमारे देश में अंगूर की बागवानी के अंतर्गत क्षेत्र में लगातार वृद्धि हो रही है, परंतु फलों की गुणवत्ता उच्च दर्जे की नहीं होती एवं अंगूर में कई क्रियात्मक विकार भी लगते हैं। अंगूर की उत्पादकता में भारत विश्व में प्रथम पायदान पर है, इस उत्पादकता को कई गुणा और बढ़ाया जा सकता है।

### फलों की गुणवत्ता में सुधार के उपाय

ताजा उपयोग के लिए अंगूर के गुच्छे मध्यम आकार, दानों से परिपूर्ण, बीजरहित, अच्छी सुगंध, रंग, स्वाद व बनावट के होने चाहिए।

**1. काट-छांट :** फसल निर्धारण के लिए प्रूनिंग सर्वाधिक सस्ती एवं सरल तकनीक है। काट-छांट से फलों का आकार, भार, रंग एवं रासायनिक संरचना पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। फलों के गुण, फल देने वाली शाखा (केन) तथा इन शाखाओं पर फल देने वाली कलियों पर बहुत कुछ निर्भर करता है। अतः काट-छांट समय पर, साधक प्रणाली के अनुसार एवं किस्म विशेष को ध्यान में रखकर करनी चाहिए।

**2. विरलन :** यदि बेल पर गुच्छे अधिक लदे हों तो फल की गुणवत्ता प्रभावित होती है तथा फल भी देर से पककर आते हैं। अतः यह बेहतर होगा कि बेल से कुछ गुच्छों की छंटाई की जाए। साधारणतः पंडाल विधि द्वारा साधित बेलों पर 80 से 100 गुच्छे एवं शीर्ष विधि द्वारा साधित बेलों पर 12 से 15 गुच्छे ही छोड़े जाने चाहिए। अतः बेल में अधिक फल लगने पर कुछ गुच्छों को काट देना चाहिए।

**3. वलयन (गर्डलिंग) :** इस तकनीक में बेल के किसी भाग (शाखा, तना, लता, उपशाखा आदि) से लगभग 0.5 सें.मी. चौड़ाई की छाल गोलाई में पूरी (छल्ले के रूप में) उतार ली जाती है। ऐसा करने से पत्तियों द्वारा खाद्य पदार्थ फलों को अधिक मात्रा में उपलब्ध होते हैं। जिससे फलों के आकार, भार, रंग व गुणवत्ता में वृद्धि होती है। प्रयोगों में सिद्ध हो चुका है कि जिस भाग से छाल निकाली जाती है वह भाग एक माह के भीतर पुनः भर जाता है। अतः लगातार कई वर्षों तक गर्डलिंग करने से बेल के स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल असर नहीं पड़ता है। छाल कब और किस हिस्से से उतारी जाए, यह सब बागवान के उद्देश्य पर निर्भर करता है। वैसे अधिक फलों को प्राप्त करने के लिए फूल खिलने से एक सप्ताह पहले, फलों के आकार में वृद्धि के लिए, फल लगने के तुरंत बाद एवं फल पकने की अवधि घटाने और फलों को अच्छा विकसित करने के लिए, फलों के पकने के शुरू होने से एक सप्ताह पहले ही छाल उतारनी चाहिए।

(शेष पृष्ठ 21 पर)

<sup>1</sup>विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि. हिसार।

# नींबू वर्गीय फलों के मुख्य कीट एवं उनकी रोकथाम

रामकरण गौड़, महासिंह जागलान<sup>1</sup> एवं आर. के. गोदारा<sup>2</sup>

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत एक कृषि प्रधान देश है। कृषि में बागवानी का विशेष महत्व है और हरियाणा में नींबू वर्गीय फलों का महत्वपूर्ण स्थान है। नींबू वर्गीय फलों में मौसमी, संतरा, नींबू, मीठा नींबू, माल्टा और ग्रेप फ्रूट मुख्य हैं। इन फलों में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जो स्कर्वी बीमारी के निदान के लिए सहायक है। इसके अतिरिक्त इन फलों में विटामिन-ए, बी तथा खनिज तत्व भी पाये जाते हैं। हरियाणा में नींबू वर्गीय फलों का क्षेत्रफल लगभग 17000 हैक्टेयर है। हरियाणा प्रदेश में नींबू वर्गीय फलों में संतरे की किस्म किन्नो व्यावसायिक स्तर पर ली जा रही है। जिसका क्षेत्रफल नींबू वर्गीय फलों का लगभग 70 प्रतिशत है और सिरसा, फतेहाबाद व हिसार आदि जिलों में मुख्य रूप से इसकी काश्त की जाती है। इन सभी फलों पर अनेक कीटों का आक्रमण होता है, परन्तु ज्ञान के अभाव में किसान भाई इनका सही नियंत्रण नहीं कर पाते, जिससे इनका उत्पादन व गुणवत्ता घट जाते हैं। इन फलों में लगने वाले मुख्य कीटों की पहचान व उनके नियंत्रण के उपाय निम्नलिखित हैं ताकि किसान इन्हें जानकर अपने बागों को इन कीटों से होने वाली हानि से बचा सकें।

**1. नींबू का सिल्ला :** नींबू का सिल्ला नींबू जाति के सभी पौधों का एक प्रमुख कीट है। इस कीट के गोल, चपटे व नारंगी पीले रंग के शिशु व भूरे रंग के प्रौढ़ कोंपलों, टहनियों और पत्तों से रस चूसते हैं। इनके रस चूसने से पत्ते व टहनियाँ पीले पड़ कर अंत में सूख जाते हैं। जिससे पैदावार व फलों के गुणों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। यद्यपि यह कीट साल भर सक्रिय रहता है, परन्तु मार्च-अप्रैल व जुलाई से सितम्बर तक अधिक हानि पहुंचाता है। वर्ष भर में इसकी 8-10 पीढ़ियां होती हैं। माल्टा एवं मीठे नींबू पर इसका प्रकोप अधिक होता है। इसके शिशु 10 से 35 दिनों में विकसित होकर प्रौढ़, बन जाते हैं व प्रौढ़ की अपेक्षा अधिक हानिकारक होते हैं।

**2. नींबू का पत्ती सुरंग कीट :** पत्ती सुरंग कीट नींबू वर्गीय फलों के पत्तों को नुकसान पहुंचाने वाला एक प्रमुख कीट है। हल्के पीले रंग की बारीक सूण्डियां पत्तों की दोनों सतह पर टेढ़ी-मेढ़ी व चमकीली सुरंगें बनाती हैं। प्रभावित पत्तियां व टहनियां सूख जाती हैं व पौधों की बढ़वार रुक जाती है। प्रकोपित पत्तियों पर फफूंदी व कोढ़ जैसी बीमारी हो जाती है। इसका प्रकोप फरवरी-मार्च व मई से अक्टूबर तक अधिक होता है। इस कीट की सूण्डियां 5 से 30 दिन तक सुरंगों में रह कर पत्तों को खाती हैं। इसका प्रकोप मुलायम व रसदार पत्तों पर अधिक होता है तथा नर्सरी में छोटे पौधे इसके प्रकोप से नष्ट हो जाते हैं।

<sup>1</sup>क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, करनाल।

<sup>2</sup>विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि. हिसार।

## नींबू का सिल्ला व पत्ती सुरंग कीट के नियंत्रण के उपाय

नींबू का सिल्ला व पत्ती सुरंग कीट के अधिक प्रकोप होने की अवस्था में नियंत्रण के लिए 750 मि.ली. ऑक्सीडेमेटान मिथाइल 25 ई. सी. (मेटासिस्टॉक्स) या 625 मि.ली. डाईमैथोएट 30 ई.सी. (रोगोर) को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

## सावधानियां

- परागण को बाधित होने से रोकने के लिए व मधुमक्खी के बचाव के लिए फूल आने के समय कीटनाशक दवाओं का छिड़काव न करें।
- ध्यान रखें कि छिड़काव नींबू जाति के सभी पौधों पर हो, चाहे वे बाग के रूप में हों या बाड़ के तौर पर लगाए गए हों।

## 3. नींबू की सफेद मक्खी तथा काली मक्खी

इस कीट के शिशु चपटे, हल्के पीले रंग के व इसके शरीर पर बाल होते हैं। प्रौढ़ों के शरीर व पंखों पर सफेद रंग का पाऊंडर होता है। काली मक्खी के शिशु चपटे, अंडाकार, कांटेदार व गहरे भूरे या काले रंग के होते हैं, जबकि प्रौढ़ हल्के नीले रंग के होते हैं। शिशु व प्रौढ़ दोनों ही मुलायम पत्तों से रस चूसते हैं। जिसके कारण पत्ते पीले होकर मुड़ जाते हैं व सूख कर गिर जाते हैं। शिशु 25-70 दिनों तक पत्तियों की निचली सतह से चिपके रहकर प्रौढ़ में बदल जाते हैं परन्तु प्रौढ़ ज्यादा दिन जीवित नहीं रहते। वैसे तो यह कीट मार्च से सितम्बर तक सक्रिय रहते हैं, परन्तु मार्च-अप्रैल व अगस्त-सितम्बर में इनका प्रकोप अधिक होता है। साल में इसकी दो पीढ़ियां होती हैं।

## नियंत्रण के उपाय

- बाग में सिफारिश से ज्यादा पौधे न लगाएं व पानी की निकासी पर विशेष ध्यान दें।
- इस कीट के नियंत्रण के लिए 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस. एल. (मोनोसिल/नुवाक्रान) को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करने से इसका नियंत्रण किया जा सकता है।

## 4. नींबू की तितली

नींबू जाति के पौधों का यह मुख्य कीट है, जिसकी छोटी सूण्डियां भूरे काले रंग की होती हैं जिन पर सफेद धब्बे होते हैं। विकसित होने पर ये हरे रंग की हो जाती हैं तथा आसानी से दिखाई नहीं देती। ये सूण्डियां मुलायम पत्तियों को किनारों से मध्य शिराओं तक खाती हैं। नर्सरी में तथा छोटे पौधों व मुलायम पत्तियों पर इसका नुकसान अधिक होता है। 14 से 30 दिनों में ये सूण्डियां पूरी विकसित हो जाती हैं। माल्टा पर इसका प्रकोप अत्यधिक होता है। इस कीट की केवल सूण्डियां ही हानि पहुंचाती हैं व सितम्बर-अक्टूबर में इसका प्रकोप अधिक होता है। अप्रैल से नवम्बर तक इसकी 4 से 5 पीढ़ियां होती हैं। यह प्यूपा की अवस्था में शीत निष्क्रिय रहती हैं।

## नियंत्रण के उपाय

- जहाँ तक संभव हो, सूण्डियों व प्यूपा को हाथ से पकड़कर नष्ट करें।
- इसके नियंत्रण के लिए वही कीटनाशक प्रयोग में लें जो नींबू की सफेद मक्खी व काली मक्खी के नियंत्रण के अंतर्गत बताए गए हैं।

(शेष पृष्ठ 18 पर)

# अप्रैल मास के कृषि कार्य



## फसलों में

### गेहूँ और जौ

गेहूँ की बालों का रंग जब सुनहरा या ललाई लिए हो तो फसल को पकी समझें। ज्यादा पकने से दाने झड़ने का डर रहता है। खेत में खड़े खरपतवार, सामान्यतः कनकी (मंडूसी), जंगली जई की कटाई पकने से 10-15 दिन पहले सावधानी से करके मुख्य फसल से अलग कर लें। इन फसलों की गहाई अच्छी तरह सूखने पर ही करें।

जिन खेतों में पत्तों पर कागियारी का प्रकोप रहा हो उन खेतों के बीज को अगले वर्ष बिजाई के लिए प्रयोग में बिल्कुल भी न लाएं तथा रोगग्रस्त पौधों को जलाकर नष्ट कर दें।

### श्रेशर मशीन

श्रेशर मशीन को समतल जमीन पर ही स्थापित करें ताकि चलते समय कम से कम कम्पन हो। मशीन को चलाने से पहले हाथ द्वारा एक चक्कर लगा कर देख लें कि कहीं रूकावट तो नहीं है। श्रेशर मशीन के पहियों को जमीन में गाड़ कर खूंटियां लगा दें और आवश्यकता हो तो फ्रेम पर भार/वजन आदि रखें। भूसे की निकासी हवा चलने की दिशा की ओर हो। श्रेशर को सही चक्करों पर ही चलाएं। श्रेशर सिलेंडर उसी दिशा में घूमना चाहिए जैसा कि निशान द्वारा दर्शाया गया हो वरना पट्टे क्रॉस करके इसकी दिशा ठीक करनी चाहिए ताकि श्रेशर सही चक्करों पर ही चले।

घटिया किस्म का श्रेशर कभी भी प्रयोग न करें। थके होने पर श्रेशर पर काम न करें। नशे की हालत में भी श्रेशर न चलाएं। खलिहान में हुक्का व बीड़ी-सिगरेट कदापि न पिएं। काम करते समय ढीले-ढाले कपड़े न पहनें। मंद रोशनी में काम न करें। रात को काम करते समय रोशनी का प्रबन्ध रखें। गीली फसल की गहाई न करें। ट्रैक्टर के धुआं निकलने वाली

लेखक :

- आर. एस. हुड्डा, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- आर. के. गोदारा, सह-निदेशक (बागवानी)
- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (पादप रोग विज्ञान)
- एम. एस. ग्रेवाल, परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)
- अशोक चन्द्र यादव, परामर्शदाता (सब्जी विभाग)
- वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह, सहायक वैज्ञानिक, लुवास (पशु पालन विभाग)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

पाइप के ऊपर चिंगारी अवरोधक अवश्य लगाएं। बिजली के खंबों व तारों के नीचे कभी भी फसल का ढेर न रखें। कुछ पानी और रेत श्रेशर के पास रखें ताकि आग लगने पर काबू पाया जा सके।

### चना

जहां पर अंगमारी देखने में आई हो वहां रोगग्रस्त पौधों को जलाकर अवश्य नष्ट कर दें। टाँट वाली सूंडी से फसल को बचाने हेतु मार्च मास में बताए गए कीटनाशकों में से किसी एक का छिड़काव करें।

### गन्ना

गन्ने की बिजाई के लगभग 40 दिन बाद पहला पानी लगाएं। बत्तर आने पर गुड़ाई करें। यदि बिजाई के समय एट्राजीन नहीं डाल पाये हों तो पहली सिंचाई के बाद गोड़ाई करके 1.6 किग्रा. एट्राजीन-50 छु.पा. प्रति एकड़ की दर से 200-250 लीटर पानी में घोलकर खड़ी फसल में छिड़काव करें। इससे गन्ना फसल पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता। अन्तः फसलीकरण में इस शाकनाशक का प्रयोग न करें। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का नियन्त्रण करने के लिए 1.0 किग्रा. 2, 4-डी (80 प्रतिशत सोडियम नमक) 250 लीटर पानी में बिजाई के 7-8 सप्ताह बाद प्रति एकड़ छिड़काव करें। यदि फसल में मोथा घास (डीला) की समस्या हो तो घास उगने पर 2, 4-डी ईस्टर का 400 मिली. प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें। यदि मोथा घास दोबारा उग जाए तो दवाई की इसी मात्रा का फसल में छिड़काव करें। 2, 4-डी मोथा घास को ऊपर से ही नष्ट करती है। मोथा घास (डीला) की रोकथाम के लिए सैम्प्रा (15 प्रतिशत हैलोसल्फ्युरान) का 36 ग्रा. प्रति एकड़ की दर से 200 लीटर पानी में घोलकर बिजाई के 35-45 दिन बाद (पहली सिंचाई के 2-3 दिन बाद) जब मोथा घास 3-5 दिन की हो तब फ्लैट फैन नोजल से छिड़काव करें। अन्तः फसलीकरण में इस शाकनाशक का प्रयोग न करें।

स्केल कीड़ा सोनीपत तथा फरीदाबाद जिलों के कुछ गांवों में गम्भीर रूप में आ गया है। इसके फैलाव को रोकने के लिए बीज ऐसी फसलों व क्षेत्रों से न लें जहां इस कीड़े का प्रकोप हो। कीड़ाग्रस्त क्षेत्रों से दूसरे क्षेत्र में गन्ना बिजाई के लिए नहीं ले जाना चाहिए। केवल स्वस्थ बीज बोएं एवं अच्छे जमाव के लिए बीज को 5-10 मिनट 250 ग्राम एमिसान या मैन्कोजेब दवा 100 लीटर पानी के घोल से उपचारित करें। काटने के बाद सभी पत्तियों व नए फुटाव को खेतों में नष्ट कर दें। कीटाणुनाशक क्षेत्रों में एक से अधिक मोढ़ी फसलों में काली चोंटी व पाइरिल्ला के नियंत्रण के लिए 400 मि.ली. फेनिट्रोथियान 50 ई.सी. को 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। फरवरी व मार्च में बोई गन्ने की फसल में 45 किलोग्राम यूरिया खाद प्रति एकड़ डालें। गन्ने की मोढ़ी की फसल में अप्रैल के आखिर में 65 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ डालें।



## कपास

अच्छी उपज लेने के लिए कपास की सामान्य बिजाई अगले मास में करें परंतु भिवानी, महेन्द्रगढ़ व सिरसा जिलों के ऐसे क्षेत्रों, जहां रेतीली मिट्टी व रेतीले टिब्बे बनने की संभावना है, में कपास की बिजाई इस माह के पहले पखवाड़े में कर दें। केवल उन्नत किस्में ही बोएं। बीकानेरी नरमा जैसी उन्नत किस्मों एच एस 6, एच 1098, एच 1117, एच 1226, एच 1098, एच 1236, एच 1300 व संकर किस्म एच एच एच 223 व एच एच एच 287 बोने की सिफारिश की जाती है। देसी कपास की बिजाई के लिए एच डी-107, एच डी 123, एच डी 324, एच डी-432 व संकर किस्म ए एच-1 बोएं। इसके अतिरिक्त केवल अनुमोदित की गई बी. टी. संकर किस्में ही लगाएं।

कपास से बढ़िया फुटाव के लिए पूरे खेत की तैयारी सही ढंग से करनी जरूरी है। अतः खेत की तैयारी इस मास के अंत में शुरू करें। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए। इसके बाद आवश्यकतानुसार 3-4 जुताइयां करके खेत को अच्छी तरह तैयार कर लेना चाहिए। कपास की बिजाई के समय खेत में बत्तर का होना जरूरी है। इसके लिए खेत में अच्छा पलेवा करें। गीले बत्तर में दो जुताइयां करके सुहागा लगाएं व खेत को एकसार कर लें। खेत में पौधों की सही संख्या के लिए बीज की सही मात्रा प्रयोग में लाएं। बीज का उपचार करके ही बिजाई करें। एक एकड़ के लिए अमेरिकन कपास (नरमा) के लिए 6-8 किलोग्राम रोएं रहित बीज व 8-10 किग्रा. रोएंदार बीज पर्याप्त होता है। देसी कपास के लिए लगभग 5 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ डालें। ड्रिल द्वारा बीजने के लिए यदि रोएं उतारे बीज न मिलें तो 6 किलोग्राम प्रति एकड़ रोएंदार (साधारण) बीज को बोने से पहले बारीक मिट्टी, गोबर या राख में रगड़ लेना चाहिए जिससे ड्रिल में से बीज एकसार निकलें। बी. टी. संकर का 850 ग्राम बीज प्रति एकड़ प्रयोग करें। इसकी बिजाई कपास बीजने वाली एक खूड़ वाली ड्रिल से कतारों में करें। दो खूड़ों व पौधों का फासला लगभग 67.5-30 सें.मी. रखें। ध्यान रहे कि बिजाई अच्छी नमी (आल) में की जाए व बीज 4-5 सें.मी. की गहराई पर डालें। संकर कपास के लिए 1.2 से 1.5 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ 67.5-60 सें.मी. के फासले पर बीजें। संकर व बी.टी. कपास की बिजाई के लिए कतार से कतार की दूरी 67.5 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 60 सें.मी. रखनी चाहिये या कतार से कतार की दूरी 100 सें.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 45 सें.मी. रखनी चाहिए।

अमेरिकन कपास (नरमा) की उन्नत किस्म, यदि गेहूँ काटने के बाद बोनी है तो बिजाई के समय खेत में 38 किलोग्राम यूरिया व 75 किलोग्राम सुपरफास्फेट प्रति एकड़ बो दें और रेतीली जमीन में 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट बिजाई के समय अवश्य डालें। इतनी ही यूरिया खाद बाद में पौधों को छिड़ा करते समय डालें। पोटाश की कमी वाले खेतों में 20 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश बिजाई के समय अवश्य बिखेर दें। यदि कपास खाली पड़ी जमीन में बोनी है तो बिजाई के समय सुपरफास्फेट तथा पोटाश ही डालें। बाद में पौधे छिड़ा करते समय व फूल आते समय ऊपर बताई यूरिया की मात्रा दें। देसी कपास में 22 किलोग्राम प्रति एकड़ यूरिया खाद 45 दिन बाद डालें। 22 किलोग्राम प्रति एकड़ यूरिया खाद 75 दिन बाद डालें।

हाईब्रिड कपास में बिजाई के समय 50 कि.ग्रा. यूरिया, 150 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट, 40 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट ड्रिल करें। इसके बाद 50 किलोग्राम यूरिया बिजाई के 45 दिन बाद व 50 किलोग्राम यूरिया बिजाई के 75 दिन बाद डालें।

बिजाई के तुरन्त बाद स्टोम्प 30 (पैण्डीमिथालीन) का प्रयोग 2 लीटर प्रति एकड़ के हिसाब से 250-300 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करने से सांठी, सांवक आदि किस्म के खरपतवारों पर अच्छा नियन्त्रण हो जाता है। स्टोम्प का छिड़काव करते समय खेत में अच्छी नमी का होना जरूरी है। बीमारियां प्रायः उन खेतों में अधिक हानि पहुंचाती हैं जिनमें उपचारित बीज न बोया गया हो।

भूमि एवं बीजजनित बीमारियों से बचाव के लिए बोने से पहले बीज का फफूंदनाशकों से उपचार कर लें। उपचार के लिए 10 लीटर पानी में 5 ग्राम एमिसान व 1 ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लिन घोल लें। इस घोल में 5 किलोग्राम साधारण या 7.5 किलोग्राम रोएं उतारे हुए बीजों को लगभग 4 घंटे तक भिगोकर उपचारित करें। जिन खेतों में जड़ गलन का विशेष प्रकोप देखा गया है ऊपर वाले उपचार के साथ 2.5 ग्राम बाविस्टिन बोने से पहले बीज में लगाएं।

जहां दीमक की समस्या हो वहां पर 10 मि.ली. क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी. व 10 मि.ली. पानी को मिलाकर फिर एक किलोग्राम बीज का उपचार करके ही बिजाई करें।

बिना रोएं उतारे बीज को बोने के काम में लें तो बुवाई से पहले अल्युमिनियम फास्फाईड की एक 3 ग्राम की टिकिया से प्रति घनमीटर स्थान के हिसाब से 48-72 घंटे तक धूम्रित करें। उससे बीज में छुपी गुलाबी सूण्डियां मर जाएंगी। कपास की पिछली फसल के टूटों से होने वाले फुटाव को नष्ट करें ताकि उन पर मीलीबग व चित्तीदार सूण्डी न पनप सके।

## सूरजमुखी

सूरजमुखी की बिजाई के 3 से 6 सप्ताह बाद दो निराई-गोडाई करें एवं उगते बीज को पक्षियों से बचाएं। कटुआ सूण्डी रात में फसल को नुकसान करती है। इस कीट के नियंत्रण के लिए 10 कि.ग्रा. फेनवालेरेट 0.4 प्रतिशत धूड़ा प्रति एकड़ खेत में ठीक से मिलाएं या हल्की सिंचाई कर दें। इसके अलावा 80 मि.ली. फेनवालेरेट 20 ई.सी. या 50 मि.ली. सायपरमेथरीन 25 ई.सी. या 150 मि.ली. डैकामैथरीन 2.8 ई.सी. 100 लीटर पानी में प्रति एकड़ भी छिड़क सकते हैं। बीजोपचार 3 ग्राम थाइरम या कैप्टान प्रति किलोग्राम बीज की दर से अवश्य करें।

## बैसाखी मूँग

जड़ गलन रोग से बचाव के लिए प्रति किलोग्राम बीज में 2 ग्राम कार्बेण्डाजिम (बाविस्टिन) मिलाकर बोएं।

## अरहर

अरहर की बिजाई मध्य-मार्च से मध्य जून तक करें, परंतु मानक व पारस को मध्य-जुलाई तक बोया जा सकता है। यद्यपि मध्य-अप्रैल की बिजाई से अधिक उपज मिलती है। अरहर की मुख्य उपयुक्त किस्में, यू पी ए एस 120 (मार्च से जुलाई के प्रथम सप्ताह), मानक व पारस (15 जून से 15

जुलाई) हैं। एक एकड़ के लिए 5 से 6 किलोग्राम बीज काफी होता है। बीजने से पहले अरहर के बीजों को अरहर के राईजोबियम के टीके से उपचारित करें। बिजाई पोरा विधि से दो खूडों का फासला 40 सेंटीमीटर रखकर करें। अरहर की पूरी पैदावार लेने के लिए 100 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट तथा 18 किलोग्राम यूरिया खाद प्रति एकड़ बिजाई के समय ही पोर दें।

#### ज्वार, बाजरा, लोबिया तथा संकर हाथी घास

चारे के लिए ज्वार की 20 मार्च से 10 अप्रैल तथा बाजरे व लोबिया की मार्च के अंत से अप्रैल के शुरू तक बिजाई समाप्त कर लें। ज्वार व बाजरा में 44 कि.ग्रा. यूरिया/एकड़ पोरें। लोबिया में भी इतनी मात्रा में डी. ए.पी. पोरें।

#### बरसीम व लूसर्न

बरसीम का शुद्ध बीज तैयार करने के लिए फसल से कासनी पौधों को निकाल देना चाहिए। दोनों फसलों में आवश्यकतानुसार पानी लगाएं तथा लूसर्न की कटाई करें।

दूसरी फसल कट जाने के बाद कभी-कभी बरसीम में टोका कीड़े का प्रकोप हो जाता है। चारे वाली फसल में 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 300 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

**नोट :** इस माह फसल बोने से पहले अपने खेतों की मिट्टी की जाँच अवश्य करवाएं। हरियाणा के हर जिले में एक-दो मिट्टी परीक्षण प्रयोगशालाएँ हैं। अच्छा हो यदि अपने ट्यूबवैल के पानी का भी परीक्षण करवा लें।



## सब्जियों में

#### टमाटर

टमाटर की फसल की सिंचाई हर सप्ताह करें। खेत में पौध रोपने के बाद 35 कि. ग्रा. नाइट्रोजन प्रति एकड़ आधी-आधी दो बार में दें (यदि न दी हो) प्रथम मात्रा रोपाई के लगभग तीन सप्ताह बाद तथा दूसरी मात्रा फसल में फूल आने के समय। किसान खाद देते समय सिंचाई करना न भूलें। खरपतवार निकालते रहें। विषाणु रोग (पत्तों का चुरड़ा-मुरड़ा, पत्ती लपेट, धारियों वाला मोजैक) लगे पौधों को निकाल कर नष्ट कर दें। सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए 400 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर 10-15 दिन के अंतर पर प्रति एकड़ छिड़कें। यदि फल छेदक सूण्डी का आक्रमण हो तो 500 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. या 75 मि.ली. फैनवालेरेट 20 ई.सी. या 200 मि.ली. डेल्टामेथ्रिन 2.8 ई.सी. या 60 मि.ली. साईपरमेथ्रिन 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। दवा प्रयोग से पहले ग्रसित फलों को तोड़कर नष्ट कर दें। इस माह फसल से फल मिलने शुरू हो जाएंगे। उन्हें तोड़कर बाज़ार बेचने के लिए भेजें।

#### बैंगन

फसल की नियमित रूप से सिंचाई करें। खरपतवार निकालें। खड़ी फसल में दो बार किसान खाद दें-प्रथम बार पौध रोपाई के लगभग 4

सप्ताह बाद, 80 किलोग्राम प्रति एकड़ की दर से (20 किलोग्राम नाइट्रोजन) तथा दूसरी बार पौधों में फूल आने के समय इतने ही उर्वरक और दें। नाइट्रोजन खाद देने के बाद सिंचाई करें। विषाणु रोग से बचाव के लिए रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें और नियमित रूप से छिड़काव करते रहें।

यदि बैंगन की फसल में रस चूसने वाले कीटों का आक्रमण हो तो 300-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। जैसे ही फल लगने शुरू हों तो फल छेदक कीटों का प्रकोप शुरू हो जाता है। इनके नियंत्रण के लिए 75 ग्राम स्पाइनोसेड (ट्रेसर) 45 एस.सी. या 500 ग्राम कार्बेरिल 50 डब्ल्यू. पी. या 80 मि.ली. फेनवालेरेट 20 ई.सी. या 70 मि.ली. साईपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 200 मि.ली. डेल्टामेथ्रिन 2.8 ई.सी. को बदल-बदल कर 200 लीटर पानी में प्रति एकड़ 15 दिन के अंतर पर छिड़कें। दवा प्रयोग से पहले सब्जी बनाने वाले फलों को तोड़ लें तथा दवा प्रयोग के बाद फसल को 8-10 दिनों तक खाने के काम में न लें।

कीटनाशक दवाओं के प्रयोग से पहले टहनियों के ग्रसित भाग व काने फलों को तोड़कर नष्ट कर दें।

#### मिर्च

फसल की सिंचाई करें और खरपतवारों को निकालते रहें। खड़ी फसल में तीन सप्ताह के बाद तथा दूसरी बार फूल आने के समय 12 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति एकड़ की दर से दें तथा सिंचाई करें। फूल आने के समय प्लानोफिक्स के घोल का (1 मिलीलीटर प्लानोफिक्स को 4½ लीटर पानी में मिलाएं) छिड़काव करें तथा इसे तीन सप्ताह बाद दोहराएं। ऐसा करने से फल कम गिरते हैं तथा उपज अच्छी होती है। चुरड़ा, अल और सफेद मक्खी से रक्षा के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। छिड़काव आवश्यकतानुसार 15-20 दिनों के अंतर पर करें। विषाणु रोग, जो सफेद मक्खी द्वारा फैलते हैं, का भी बचाव इस दवा के प्रयोग से हो जाता है। हरी तैयार मिर्चों को तोड़कर बाजार भेजें।

#### प्याज व लहसुन

फसल की सिंचाई करें तथा खुले कंदों पर मिट्टी चढ़ा दें। बीमारी व हानिकारक कीटों से रक्षा के लिए पहले बताई गई दवाओं का प्रयोग करें।

#### मूली

इस फसल में सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें। गर्मी की मूली के लिए केवल पूसा चेतकी किस्म का ही प्रयोग करें। बाहर निकली हुई जड़ों पर मिट्टी चढ़ाएं। जड़ों को सख्त होने से पहले उखाड़ लें। मूली बिजाई के लगभग 40 दिनों के बाद उखाड़ने के योग्य हो जाती है। कीट-पतंगों से रक्षा के लिए 250 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें।

#### भिण्डी

कीटों के नियंत्रण के लिए 400 से 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 400 से 500 ग्राम कार्बेरिल 50 घु. पा. को 250 लीटर पानी में मिलाकर

15 दिन के अंतर पर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें।

### पालक

फसल की नियमित रूप से सिंचाई करें। आवश्यकतानुसार किसान खाद का प्रयोग करें जिससे कि पत्तियों की बढ़वार हो सके। नई फसल की बिजाई भी इस माह की जा सकती है।

### तरबूज व खरबूजा

फसल की निराई-गुड़ाई करें तथा उचित सिंचाई का प्रबंध करें। फसल में फूल आने के समय लगभग 6 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति एकड़ की दर से दें तथा सिंचाई करें। लाल भूण्डी (लालड़ी) नामक कीट का प्रकोप होने पर 5 किलोग्राम कार्बेरिल 5-डी को 5 किलोग्राम राख या बारीक मिट्टी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर धूँड़ें या 100 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. या 25 मि.ली. सायपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 30 मि.ली. फेनवालेरेट 20 ई.सी. को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। जड़ों में लट (ग्रब) लगी हों तो 1.6 लीटर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. को बिजाई के एक माह बाद सिंचाई के साथ प्रति एकड़ लगाएं। चेपा, हरा तेला या माईट का प्रकोप होने पर 250 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ खेत में छिड़काव करें तथा आवश्यकतानुसार दोहराएं। फल मक्खी लगने पर 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 250 मि.ली. फैनीट्रोथियान 50 ई.सी. या 500 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. और 1.25 किलोग्राम गुड़ को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ खेत में छिड़काव करें तथा एक सप्ताह के अंतर पर आवश्यकतानुसार दोहराएं। प्रयोग से पहले ग्रसित फलों को तोड़कर नष्ट कर दें। पाऊंडरी मिल्ड्यू नामक रोग लगने पर 800 ग्राम घुलनशील गंधक (सल्फैक्स) का घोल बनाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। अधिक व भरपूर फसल प्राप्ति के लिए तरबूज में 25 पी.पी.एम. (आधा ग्राम जिबैरैलिक एसिड) तथा खरबूजे में एथरिल 100 पी.पी.एम. (2 मि.ली. प्रति 20 लीटर पानी प्रति एकड़) का घोल बना कर दो व चार सप्ताह पत्तियों पर छिड़काव करें। जिबैरैलिक एसिड अल्कोहल में घुलनशील है।

### कद्दू जाति की अन्य सब्जियां

कद्दू जाति की अन्य सब्जियों की फसलों की सिंचाई करें, खरपतवार निकालें तथा यूरिया (जैसा कि ऊपर तरबूज-खरबूजा में बताया गया है) दें। हानिकारक कीड़ों तथा बीमारियों से रक्षा के लिए ऊपर बताई गई दवाओं का प्रयोग करें। चप्पन कद्दू तथा टिण्डे की फसल के फलों को तोड़कर बाजार भेजें। अन्य सब्जियों में भी इस माह फल उतरने शुरू हो जाएंगे। उन्हें कच्ची ही तोड़कर बाजार भेजें।

### अरबी

आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें। बिजाई के लगभग एक माह बाद यूरिया खाद देकर सिंचाई करें।

### शकरकन्दी

शकरकन्दी की काट को खेत में अप्रैल से जुलाई तक लगाते हैं। खेत तैयार करें। पूसा लाल व पूसा सफेद किस्मों को प्रयोग में लें। एक एकड़ में

बिजाई के लिए 24,000 से 28,000 बेलों की काटों की आवश्यकता पड़ेगी। खेत तैयार करते समय 10 टन गोबर की सड़ी खाद, 16 किलोग्राम नाइट्रोजन, 225 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट (36 कि.ग्रा. फास्फोरस) तथा 55 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश (32 किलोग्राम पोटाश) प्रति एकड़ की दर से काटों को लगाने से पहले दें। खेत को क्यारियों में बांट लें तथा कतारों में 50-60 सें.मी. की दूरी पर काटों को लगाएं। पौधे से पौधे की दूरी 30 सें.मी. रखें। काट लगाते समय ध्यान रखें कि ऊपर तथा नीचे की दोनों गांठें दबी हों।

### अन्य सब्जियां

ग्वार तथा लोबिया की फसलों की सिंचाई करें व खरपतवार निकालते रहें। कीट पतंगों से रक्षा के लिए मैलाथियान 50 ई.सी. या रोगोर 30 ई.सी. आदि दवाओं का प्रयोग करें। यह कीटनाशक 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़कें।



## फलों में

इस महीने मौसम में काफी परिवर्तन होता है। तापक्रम बढ़ेगा और तेज हवाएं भी चलेंगी जोकि छोटे-2 बने हुए फलों को काफी नुकसान पहुंचा सकती हैं। फल उत्पादकों द्वारा समय पर सिंचाई करना, छोटे-छोटे फलों को गिरने से रोकना, छोटे पौधों के बीच में मूंग वगैरह की फसल लेना, घने लगे हुए फलों को छिद्दा करना, पौधों में बची आधी खाद की मात्रा डालना, छोटे पौधों को सहारा देना और फलों को ठीक ढंग से तोड़कर बाजार भेजना आदि बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

### संतरा, माल्टा, नींबू आदि

सात साल से अधिक आयु के पौधों में आधी बची हुई 750 ग्राम यूरिया प्रति पौधा डालें और हल्की गुड़ाई करके सिंचाई करें। 1.5 किलोग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड को 500 लीटर पानी में घोल कर छिड़कें। 15 दिन बाद 1.5 किलोग्राम बुझा हुआ चूना व 3 किलोग्राम जिंक सल्फेट को 500 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। संतरा व माल्टा में फल गिरने की समस्या को कम करने हेतु 6 ग्राम 2,4-डी, 12 ग्राम ओरियोफंजीन व 3 किलोग्राम जस्ता और 1.5 किलोग्राम चूना को 550 लीटर पानी में मिलाकर पौधों पर इस माह के आखिर में छिड़कें।

नींबू जाति के पौधों को नींबू का तेला (सिल्ला), सफेद मक्खी तथा सुरंगी कीड़े, पत्तों, टहनियों तथा फलों में से रस चूसकर तथा टेढ़ी-मेढ़ी सुरंगें बनाकर भारी नुकसान करते हैं। इन कीड़ों के अधिक आक्रमण से पत्ते पीले पड़ जाते हैं। नींबू के तेला व सुरंगी कीट के नियंत्रण हेतु अप्रैल लगते ही 750 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या 625 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ बाग में छिड़कें। यदि सफेद मक्खी का आक्रमण हो तो 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 डब्ल्यू. एस.सी. प्रति एकड़ छिड़कें।



## अंगूर

नए लगाए बाग में 25-30 ग्राम यूरिया प्रति बेल दूसरे सप्ताह डालें और सिंचाई करें। इसके अतिरिक्त मुख्य तने व पत्तियों के बीच से निकलने वाली टहनियों को तोड़ते रहें। बेलों के सीधा बढ़ने के लिए सीडियों या बांस का सहारा दें।

पांच साल से ऊपर के फल दे रहे पौधों में 340 ग्राम यूरिया व 500 ग्राम पोटेशियम सल्फेट डालें और गुड़ाई करके सिंचाई करें। 15 अप्रैल के बाद सिंचाई हर सप्ताह करनी आवश्यक है। बीज रहित अंगूर की किस्मों से अधिक उपज लेने के लिए पूरी तरह फूल आ जाने की हालत में 20 पी. पी. एम. (20 कि.ग्रा./लीटर), जी. ए. व फल लगते समय 40 पी. पी. एम. (40 कि.ग्रा./लीटर) का छिड़काव करें। अंगूर की नई कोंपलों को, अंगूर के चुरड़ा, जो छोट-छोटे पतले शरीर वाले भूरे रंग के कीड़े होते हैं, भारी क्षति पहुंचाते हैं। कीड़े पत्तों की नसों के साथ-साथ चलते हैं व पत्तों की निचली सतह को कुदेद कर रस चूसते हैं। इससे पत्तियां पीली एवं तांबे जैसे रंग की हो जाती हैं। इनकी रोकथाम के लिए 150 मि.ली. फेनवालेरेट 20 ई.सी. या 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ बेलों पर छिड़कें। कई बार बालों वाली सूण्डियां अंगूर की बेलों, पत्तों तथा फलों पर भी आक्रमण करती हैं। जो कीड़े पत्तों को खा जाते हैं, इनमें छेद कर देते हैं तथा फलों को भी खा जाते हैं, इनकी रोकथाम के लिए 400 मि.ली. डाईक्लोरोवास 76 ई.सी. (नुवान) को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। छोटी सूण्डियां, जो कुछ ही पत्तों पर समूह में एकत्र मिलती हैं, वाले पत्तों को तोड़कर नष्ट कर दें। लाल धब्बे वाली बीमारी के नियंत्रण के लिए बाविस्टिन 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें।

## अमरूद

पौधों की सिंचाई 10-15 दिन के अंतराल पर करें। फल मक्खी के नियंत्रण के लिए एक एकड़ बाग में 7-8 फीरोमोनज ट्रेप लगाएं। फीरोमोनज ट्रेप पंजाब कृषि विश्वविद्यालय के कीट विज्ञान विभाग से प्राप्त कर सकते हैं।

## आड़ू व अलूचा

आड़ू (450 ग्राम) व अलूचा (180 ग्राम) में बची हुई यूरिया डालें। आड़ू व अलूचे के बागों की सिंचाई करें। इनमें अल (चेपा) बहुत हानि पहुंचाता है जिसके कारण पत्ते पीले होकर मुड़ जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए 500 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ बाग के पेड़ों पर छिड़कें व आवश्यकता हो तो 15 दिन बाद यही छिड़काव फिर करें।

## बेर

बेर के पौधों में सिंचाई बिल्कुल न करें क्योंकि पौधे इस समय सुप्तावस्था में आने लगते हैं। आखिरी सप्ताह में पौधों की काट-छांट करनी जरूरी है ताकि अगले वर्ष पैदावार अच्छी मिले।

## आम

आम के फल गिरने की समस्या काफी रहती है। इसके नियंत्रण के लिए 2 प्रतिशत यूरिया व 0.5 प्रतिशत जिंक तथा 20 पी. पी. एम. 2, 4-डी

(2 ग्राम 2, 4-डी 100 लीटर पानी में) का पौधों पर छिड़काव अवश्य करें।

यदि अब भी आम पर तेला आक्रमण कर रहा हो तो 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 1.5 किलोग्राम कार्बेनिल 50 डब्ल्यू. पी. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़कें। इस छिड़काव में पत्तियों के काजली रोग का भी बचाव हो जाता है। 1½ से 2 किलोग्राम यूरिया का घोल 100 लीटर पानी में मिलाकर छिड़कने से काफी लाभ संभव है।

काला सिरा (ब्लैक टॉप) का नियंत्रण के लिए 6 ग्राम बोरेक्स प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

## लीची

फल लगने के बाद 875 ग्राम यूरिया प्रति पौधा डालकर गोड़ाई करके सिंचाई करें। फल फटने से रोकने के लिए प्राप्त मात्रा में नमी बनाए रखें।

**नोट :** जैसे ही आषाढ़ी फसलों से खेत खाली होंगे, जिन किसान भाइयों ने नए बाग लगाने हों वे जमीन की तैयारी, निशानदेही आदि शुरू करें व मिट्टी की जांच करवाएं।



- ❑ गेहूँ-कटाई के दौरान व बाद में नई तूड़ी आने के बाद पशुओं में पेट बंधे की समस्या बहुत आम है, अतः कोशिश करें कि पशु-आहार में कभी-भी एकदम से बदलाव न करें और इस समय में पशुओं के हाजमे को स्वस्थ रखने के लिए उचित प्रबंध रखें। पशुओं को सेंधा नमक, हरड़, हींग इत्यादि पशु-चिकित्सक की सलाहनुसार दे सकते हैं।
- ❑ सुनिश्चित करें कि सभी पशुओं को गलघोंटू व मुँहखुर के टीकाकरण हो गए हों, विशेषकर वयस्क व नए खरीदे पशुओं का जरूर ध्यान रखें।
- ❑ दिन में तापमान की बढ़ोत्तरी हो जाती है, अतः पशुओं को दोपहर में सीधे गर्म हवाओं से बचाएं।
- ❑ गर्मीयों में पशुओं का दूध न घटे, इसलिए ध्यान रखें कि पशुओं के शरीर में पानी की कमी न हो जाए। अतः ऐसा प्रबंधन करें कि पशुओं को 24 घंटे ताजा/ठण्डा पीने योग्य पानी उपलब्ध रहे यदि 24 घण्टे पानी उपलब्ध नहीं करवा सकते तो कम से कम 3-4 बार ठण्डा पीने योग्य पानी अवश्य उपलब्ध करवाएं और दिन में कम से कम 2-3 बार अवश्य नहलाएं व बीच-बीच में शरीर पर पानी भी डालें (विशेषकर भैंसों में)।
- ❑ नई तूड़ी को उपयुक्त मात्रा में यूरिया से उपचारित करके उसकी पौष्टिकता बढ़ाएं।
- ❑ हरे चारे में कमी के कारण पशुओं में खनिज तत्वों व लवणों की कमी हो सकती है, अतः हर पशु को खनिज मिश्रण जरूर दें।
- ❑ चारे के लिए बोई गई मक्का, बाजरा, ज्वार आदि की कटाई 45-50 की अवस्था में करें।

- हर ब्यांत में पशुओं के दूध की एक बार ज़रूर नजदीकी पशु-प्रयोगशाला में जांच करवाएं।
- ऐसे मौसम में कई बार पशु गर्मी के लक्षण दिन के बजाय रात को दिखाता है, अतः पशुपालक मादा पशुओं में गर्मी के लक्षण जैसे बार-बार रंभाना, बेचैन होना, बार-बार पेशाब करना इत्यादि का ध्यान रखें व गर्मी के लक्षण के 10-12 घण्टे बाद कृत्रिम गर्भाधारण करवाएं।



## घर-आंगन में

पानी जीवन का आधार है अतः घरेलू स्तर पर पानी का शुद्धिकरण बहुत आवश्यक है। घरेलू स्तर पर पानी का शुद्धिकरण जनता वाटर फिल्टर के द्वारा किया जा सकता है जो कि एक बहुत ही सस्ती एवं स्थानीय तकनीक है।

अप्रैल के महीने में मौसम परिवर्तन के कारण शरीर के लिए पानी की जरूरतें भी बढ़ जाती हैं और थोड़ी देर के बाद ही कुछ ठण्डा पीने का मन करता है। इन दिनों बाजार में पेय पदार्थ बनाने वाले फलों एवं सब्जियों की बहुतायत होती है। अतः आप इनको घर पर बनाकर उपयोग में ला सकते हैं। उपर्युक्त जनता वाटर फिल्टर एवं पेय पदार्थ बनाने के लिए आप अपने जिले में कार्यरत कृषि विज्ञान केन्द्र में जिला विस्तार विशेषज्ञ (गृह विज्ञान) से संपर्क स्थापित करें।



(पृष्ठ 12 का शेष)

**5. छाल खाने वाली सूण्डी :** यह कीट प्रायः दिखाई नहीं देता परन्तु जहां पर टहनियां अलग होती हैं वहां पर इसका मल व लकड़ी का बुरादा जाले के रूप में दिखाई देता है। इस कीट की केवल सूण्डी ही हानिकारक होती है। दिन के समय यह तने के अन्दर सुरंग बनाती है और रात को छेद से बाहर निकल कर जाले के नीचे रहकर छाल को खाती है एवं खुराक नली को खाकर नष्ट कर देती है जिससे पौधों के दूसरे भागों में पोषक तत्व नहीं पहुँच पाते हैं। बहुत तेज़ हवा चलने पर प्रकोपित टहनियां एवं तने टूट कर गिर जाते हैं। जिन बागों की देखभाल नहीं हो तो उनके पुराने वृक्षों पर इसका आक्रमण अधिक होता है। वर्ष में इसकी एक ही पीढ़ी होती है जो जून-जुलाई के महीने से शुरू होती है।

### नियन्त्रण के उपाय :

- बाग को साफ-सुथरा रखें व निर्धारित संख्या से ज़्यादा पेड़ न लगाएं।
- जाले हटाने के बाद ही कीटनाशक का प्रयोग करें।
- कीटनाशकों का प्रयोग आसपास के सभी पेड़ों पर भी करें।

- सितम्बर-अक्तूबर में 10 मि.ली. मिथाइल पैराथियान (मैटासिड) 50 ई.सी. को 10 लीटर पानी में मिलाकर ऐसे घोल को सुराखों के चारों ओर छाल पर लगाएं।
- फरवरी-मार्च के महीनों में 40 ग्राम कार्बेरिल (सेविन) 50 घुलनशील पाऊंडर को 10 लीटर पानी में मिलाएं। रूई के फोहे ऐसे दवाई के घोल में डुबोकर किसी बारीक लंबे तार की सहायता से छेदों के अंदर डालें व सुराखों को गीली मिट्टी से बंद कर दें। 10 प्रतिशत मिट्टी के तेल में 1 प्रतिशत साबुन या सर्फ मिलाकर (एक लीटर मिट्टी का तेल+100 ग्राम साबुन+9 लीटर पानी) भी काम में ले सकते हैं।
- ऊपर दी गई विधि के अतिरिक्त दो मि.ली. डाईक्लोरवास (न्यूवान) 76 ई.सी. या 5 मि.ली. मिथाइल पैराथियान (मैटासिड) 50 ई.सी. को 10 लीटर पानी में घोलकर किसी एक का कीट के छेद में 5 मि.ली. घोल डाल दें तथा इसके बाद सुराखों को मिट्टी से बंद कर दें।

**6. दीमक :** यह एक प्रकार का सामाजिक कीट है जिसका प्रकोप नर्सरी व शुष्क रेतीली ज़मीन में लगाये नए-नए पौधों में अधिक होता है। दीमक ज़मीन में रहकर वृक्षों की जड़ों को खाती है व तने को खोखला कर ऊपर की ओर बढ़ती है। वृक्षों की बाहरी सतह पर मिट्टी की सुरंग बनाकर छाल को खाती है। जीवित पौधों के साथ-साथ यह सूखी लकड़ियों को भी हानि करती है। यह कीट पूरे वर्ष सक्रिय रहता है किन्तु गर्म व शुष्क मौसम में इसका प्रकोप अधिक होता है। दीमक प्रायः सभी फलदार वृक्षों को हानि पहुंचाती है।

### नियन्त्रण के उपाय :

1. खेत को साफ-सुथरा रखें। कोई भी चीज़, जैसे टूट, गली-सड़ी, सूखी लकड़ी इत्यादि न रहने दें, जो दीमक के प्रकोप को बढ़ावा देती है।
2. वृक्षों के आसपास गहरी जुताई करें व पानी दें जिससे दीमक का प्रकोप कम हो जाए।
3. गोबर की हरी व कच्ची खाद प्रयोग में न लायें क्योंकि यह खाद दीमक को बढ़ावा देती है।
4. जहां तक हो सके रानी दीमक को नष्ट करें, परन्तु रानी दीमक को नष्ट करना इतना आसान नहीं है क्योंकि यह बाम्बी के अन्दर कई मीटर नीचे ज़मीन में रहती है।
5. अतः पौधे लगाने से पहले रासायनिक विधि अवश्य अपनाएं। इसके लिए गड्ढे में 50 मि.ली. क्लोरपाईरिफॉस 20 ई.सी. 5 लीटर पानी में मिलाकर प्रति पौधा (गड्ढे) में पौधे लगाते समय डालें। दवाई का घोल डालने से पहले प्रत्येक गड्ढे में 2-3 बाल्टी पानी डाल दें। नये पौधे लगाने के बाद तथा लगे हुए पौधों में प्रकोप होने पर 1 लीटर क्लोरपाईरिफॉस 20 ई.सी. प्रति एकड़ सिंचाई करते समय डालें। इस कीट को मारने की अपेक्षा यह अच्छा रहता है कि ऐसे उपाय किये जायें कि इस कीट का प्रकोप ही न हो।



## कम लागत में गेहूँ का शुद्ध बीज - कैसे तैयार करें

यश पाल सिंह सोलंकी, नीरज पंवार एवं राजेश कुमार  
कृषि विज्ञान केन्द्र, रोहतक

गेहूँ की अधिक पैदावार लेने के लिए शुद्ध बीज का होना अति आवश्यक है। परन्तु किसानों को हर वर्ष शुद्ध बीज प्राप्त करने के लिए बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसलिए सभी किसान उसे नहीं खरीद सकते। उनको या तो शुद्ध बीज प्राप्त नहीं होता या इसके लिए बहुत सा समय व धन खर्च करना पड़ता है। इन परेशानियों से बचने के लिए किसान एक बार किसी प्रमाणित संस्था जैसे कृषि विश्वविद्यालय, राज्य बीज विकास निगम व राष्ट्रीय बीज निगम आदि से शुद्ध बीज लाकर अपने खेत में बीज लें तो उसी से वह शुद्ध बीज तैयार कर सकते हैं।

शुद्ध बीज कम से कम 98 प्रतिशत साफ-सुथरा होना चाहिए अर्थात् इसमें कचरा 2 प्रतिशत, खरपतवार 0.10 प्रतिशत व अन्य फसलों के बीज 0.10 प्रतिशत से अधिक नहीं होने चाहिए। इस बीज की जमाव शक्ति कम से कम 85 प्रतिशत होनी चाहिए तथा बीज में नमी 10-12 प्रतिशत तक होनी चाहिए। गेहूँ का शुद्ध बीज तैयार करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए -

**खेत का चुनाव :** शुद्ध बीज तैयार करने के लिए किसान ऐसा खेत चुनें जिसकी ज़मीन उपजाऊ हो व सिंचाई की सुविधाएं पर्याप्त हों। साथ ही इस खेत में दूसरी फसलों के पौधे व खरपतवार नहीं होने चाहिए।

**बीज उपचार :** बीज यदि पहले से उपचारित नहीं है तो 2 ग्राम बीटावैक्स या बाविस्टिन या 1 ग्राम टैब्युकोनाजोल (रैक्सिल 2 डी. एस.) प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें ताकि खुली कांगियारी व ध्वज पत्ता कांगियारी नामक बीमारी से बचाव हो सके।

**बिजाई का तरीका :** शुद्ध बीज तैयार करने के लिए इसकी बिजाई समय पर व कतारों में करनी चाहिए, जिससे गैर पौधे निकालने का काम करने के लिए चलने में आसानी रहे। यदि सम्भव हो सके तो खेत के बीच-बीच में एक या दो रास्ते भी छोड़ दें तो अच्छा रहेगा। खेत में खाद व पानी किसम के अनुसार दिया जाये। ध्यान रहे कि फसल गिरने न पाए।

**फसल की छंटाई :** शुद्ध बीज तैयार करने के लिए छंटाई का काम अति महत्वपूर्ण है। शुद्ध बीज वाली फसल में अगर कोई अन्य किसम का पौधा या खरपतवार हो तो उसको भी निकाल देना चाहिए। खुली कांगियारी से प्रभावित पौधों को पॉलीथीन के थैले से ढक कर सावधानी पूर्वक निकाल कर खेत से दूर मिट्टी में दबा देना चाहिए ताकि बीमारी के कण खेत में न बिखरें। कुछ खरपतवार जैसे जई, हिरनखुरी आदि अंत तक आते रहते हैं। इनको भी निकालना बहुत आवश्यक है।

**कटाई व मढ़ाई :** जो खेत शुद्ध बीज तैयार करने के लिए चुना गया है अगर उसके आस-पास गेहूँ की अन्य किस्मों की बिजाई नहीं की गई है तो सारे खेत को काट लेना चाहिए। लेकिन यदि खेत के किसी तरफ भी गेहूँ की अन्य किस्म की बिजाई की गई हो तो खेत के उस ओर से 3 मीटर चौड़ी पट्टी फसल काट कर अलग से साफ मशीन द्वारा मढ़ाई कर लेनी चाहिए। (शेष पृष्ठ 20 पर)

## आम के रोग व नियन्त्रण

राजेन्द्र सिंह, ममता एवं हवा सिंह सहारण

उद्यान विज्ञान

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आम फलों का राजा है। आम के पेड़ों पर कई बीमारियां लगती हैं। जिन की समय पर रोकथाम न की जाये तो फलों को नुकसान हो सकता है। आम की प्रमुख बीमारियां और उनकी रोकथाम के उपाय नीचे दे रहे हैं:

**1. विकसित रोग या गुच्छा-मुच्छा (मालफोरमेशन) :** यह रोग अत्यधिक व्यापक व घातक है। इस रोग का प्रकोप पौधों की किस्म, आयु, मौसम एवं स्थान के अनुसार अलग-अलग देखने में आता है। इसके दो प्रकार के लक्षण दिखाई पड़ते हैं।

पहले प्रकार में अधिकतर बड़े पेड़ों पर बौर आते समय फूलों के स्थान पर फूलों का गुच्छा-सा बनता है। इन गुच्छों में छोटी-2 पत्तियाँ भी दिखाई देती हैं। ऐसे रोगी फूल स्वस्थ फूलों से पहले आते हैं और इन गुच्छों में मादा फूलों की अपेक्षा नर फूलों की संख्या अधिक होती है। ऐसे गुच्छों पर फल नहीं लगते हैं और अगर लग भी जायें तो छोटी अवस्था में गिर जाते हैं।

दूसरे प्रकार में छोटे पेड़ों की पहली व दूसरी शाखाओं के सिरों के निकट नई पत्तियों की वृद्धि होती है। और छोटी-2 पत्तियों का एक गुच्छा-सा बन जाता है। जो झाड़ू जैसा दिखाई देता है। रोगग्रस्त पौधों की वृद्धि रूक जाती है। कभी-2 बहुत छोटी अवस्था में पौधे मर भी जाते हैं।

**कारण :** यह बीमारी फ्यूजेरियम मोनीलीफॉर्मि फफूंद द्वारा पुष्पवृत्तों पर आक्रमण के फलस्वरूप होती है। पौधों में हार्मोन्स का असन्तुलन होने से इस रोग की उत्पत्ति होती है। बौर आते समय तापमान, कैल्शियम-नाइट्रोजन का अनुपात, विषाणु पूरा वर्ष अधिक सिंचाई एवं भूमि में विभिन्न तत्वों की कमी होना आदि कारक इस रोग में महत्व भी रखते हैं।

**नियन्त्रण :** रोग नियन्त्रण के लिए अगस्त-सितम्बर में सभी बेढंगे फूलों या रोग ग्रस्त गुच्छों (कॉपलों) को लगभग 6 से 12 इंच पीछे से टहनी को कैंची से काट दें।

फफूंदी व कीड़ों से बचाव के लिए अगस्त-सितम्बर तथा दिसम्बर-जनवरी में कैप्टान 0.1 प्रतिशत (100 ग्राम दवा 100 लीटर पानी) व मैलाथियान 0.1 प्रतिशत के मिश्रण में टॉनिक मिलाकर छिड़काव करें। पुष्प गुच्छे बनने की अवस्था में बाविस्टिन नामक दवा का 0.2 प्रतिशत (200 ग्राम दवा 100 लीटर पानी) के घोल का छिड़काव करें। एक सप्ताह के अन्तराल पर इसके तीन छिड़काव करें। पेड़ों को फरवरी के मध्य में प्रारम्भिक फूलों से रहित करने से भी रोग का नियन्त्रण किया जा सकता है।

सितम्बर के अन्त में या अक्टूबर के प्रारम्भ में 300 पी.पी.एम. नैथलीन एसिटिक एसिड (30 ग्राम एन.ए.ए. 100 लीटर पानी) के घोल का छिड़काव करें।

विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि. हिसार।



**टहनीमार रोग (एन्थेक्नोज):** यह रोग पत्तियों, टहनियों, फूलों तथा फलों को प्रभावित करता है। पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बे बनते हैं, जो बाद में आपस में मिलकर पत्तों के अधिकतर भाग पर फैल जाते हैं। धब्बे के स्थान पर पत्ती सूख जाती है और प्रायः फट जाती है। टहनियों पर रोग ऊपरी भाग से शुरू होता है। जहाँ हल्के भूरे धब्बे पड़ जाते हैं ऐसी टहनियों की पत्तियाँ सूखकर झड़ने लगती हैं और अन्त में टहनी भी सूख जाती है। यदि बौर आने के समय मौसम नम हो जाए तो यह रोग फूलों को भी नष्ट कर देता है। बौर पर बहुत छोटे काले धब्बे पड़ जाते हैं और फूल सूखकर गिर जाते हैं। फलों पर इस रोग का आक्रमण पकने से पहले ही हो जाता है परन्तु लक्षण पकने पर ही धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। धब्बों के बीच का भाग थोड़ा सा धंस जाता है। यह फफूंद रोग ग्रस्त पत्तियों व टहनियों पर जीवित रहकर अनुकूल वातावरण में पुनः सर्वमित करता है। पानी की बौछार तथा कीड़ों आदि से इसका फैलाव होता है।

**बचाव :** रोगग्रस्त टहनियों को काट दें। कटे स्थान पर बोर्डोपेस्ट लगा दें और कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (ब्लाइटॉक्स) 0.3 प्रतिशत घोल का जनवरी फरवरी, अप्रैल व सितम्बर में छिड़काव करें।

**सफेद चूर्णी रोग :** फूलों पर सफेद चूर्ण के रूप में लक्षण दिखाई देते हैं। रोगग्रस्त फूल गिर जाते हैं, फूल लगने के समय रातों का ठंडा तथा बारिश आदि का हो जाना रोग के फैलाव एवं उत्पत्ति में सहायक होता है। जिससे फलों की संख्या में कमी आ जाती है। यह फफूंद आम के पेड़ पर जीवित रहता है और इसका फैलाव हवा द्वारा होता है।

**नियन्त्रण :** यह रोग भट्टों की ज़हरीली गैस के निकट के बागों में विशेषकर दिखाई देता है। इस रोग के प्रकोप से आम के फल नीचे से काले जले हुए हो जाते हैं और बाद में सड़ जाते हैं। कई बार फल सिरे से बेढंगे से लम्बे, पहले से पक जाते हैं और एक सिरा काला हो जाता है। जो आधे फल तक चला जाता है। बोरेक्स 0.6 प्रतिशत (6 ग्राम एक लीटर पानी) के 2 छिड़काव फूल आने से पहले फरवरी से अप्रैल में करें। तीसरा छिड़काव फल बनने के बाद 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का करें। जुलाई से सितम्बर माह में सभी बेढंगे फूलों के गुच्छे काट डालें। पौधों को अच्छी तरह खाद दें।



(पृष्ठ 19 का शेष)

**बीज रखाव :** इस बीज को झारने से छान लें ताकि खरपतवार के बीज व छोटे सिकुड़े हुए दाने नीचे रह जाएं। मोटे दानों में अगर कोई दूसरी तरह का दाना भी दिखाई दे तो उसको भी निकाल देना चाहिए। इस साफ व शुद्ध बीज को अच्छी तरह सुखाकर लोहे की टंकी आदि में भरकर अलग से रख दें। कीड़ों से बचाने के लिए सल्फास का प्रयोग करना चाहिए। यदि उपर्युक्त परामर्शों को ध्यान में रखा जाए तो किसान अपने खेत पर ही कम लागत में गेहूँ का शुद्ध बीज तैयार कर सकते हैं और शुद्ध बीज प्राप्त करने की कठिनाइयों से बच सकते हैं।



## नींबू वर्गीय पौधों में रोग व निदान

राजेन्द्र सिंह, ममता एवं हवा सिंह सहारण<sup>1</sup>

उद्यान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा में नींबू वर्गीय फलों का क्षेत्रफल काफी बढ़ा है। जो प्रदेश की अर्थव्यवस्था के लिए फायदेमंद है। माल्टा, संतरा, नींबू, मिट्टा नींबू व ग्रेपफ्रूट नींबूवर्गीय श्रेणी में आते हैं। इन फलों में विटामिन-सी की मात्रा अधिक होती है। इसके अतिरिक्त इन फलों में विटामिन ए, बी एवं खनिज तत्व भी पाये जाते हैं। इन फलों पर विभिन्न बीमारियों का प्रकोप होता है। जिसकी वजह से फल की पैदावार व गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन बीमारियों की पहचान व निवारण बताया जा रहा है।

1. **संतरा एवं माल्टा का कोढ़ :** पत्तों, टहनियों और फलों पर गहरे भूरे रंग के खुरदरे धब्बे पड़ जाते हैं। धब्बों के चारों ओर पीले वृत्ताकार दिखाई देते हैं।
2. **टहनीमार रोग :** टहनियां ऊपरी सिरे से सूखनी शुरू हो जाती हैं कभी-कभी बड़ी-2 टहनियां भी सूख जाती हैं और फल व तने भी गल सकते हैं।
3. **गूंद निकलने का रोग (पौध गलन) :** ज़मीन के बराबरी सतह के नज़दीक से तने की छाल उखड़कर गल जाती है जिससे अन्दर की लकड़ी मर जाती है और उसमें से गूंद सा निकलने लगता है।

**तने व फल का गलना :** पहले पत्तों, टहनियों और फलों पर बाहर से पीले गहरे रंग के गोल धब्बे पड़ जाते हैं। बाद में ये धब्बे ऊपर को उभरकर खुरदरे और गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं। धब्बों के बाहर वाला पीला रंग खत्म हो जाता है और पत्तों व फल की सतह कागज़ की तरह हो जाती है।

**जस्ते की कमी :** पत्ते के नसों की बीच की जगह सफेद-सी हो जाती है। ऊपर के पत्ते छोटे रह जाते हैं।

**सभी बीमारियों का नियन्त्रण कार्यक्रम :-**

**दिसम्बर-फरवरी :**

1. गोंद निकलने वाले भागों को कुरेद कर साफ करें, बोर्डो पेस्ट लगायें, और फिर एक सप्ताह बाद बोर्डो पेस्ट लगायें।
2. काट-छांट के बाद 0.3 प्रतिशत (3 ग्राम एक ली. पानी) को 500 ली. पानी में बने घोल से तीन छिड़काव करें पहला छिड़काव अक्तूबर, दूसरा दिसम्बर में व तीसरा फरवरी में करें।

अथवा

500 मि.ग्रा. प्लान्टामाइसिन और 2 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का प्रति लीटर पानी की दर से जुलाई, अक्तूबर, दिसम्बर व फरवरी में छिड़काव करें।

**अप्रैल-मई :**

कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत का छिड़काव करें। उसके बाद जस्ते की कमी को रोकने के लिये 3 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट, 1.5 कि.ग्रा.

<sup>1</sup>विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि. हिसार।

जिंक, 1.5 कि.ग्रा. बुझा हुआ चूना, 500 लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें।

#### जुलाई :

बरसात की पहली बौछार के तुरन्त बाद 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें।

#### अगस्त-सितम्बर :

संतरे व माल्टे के कोढ़ की रोकथाम के लिए जिन दिनों बारिश न हो उन दिनों में 0.3 प्रतिशत कॉपर-ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें। सितम्बर माह में व अप्रैल मई में छिड़के गये जिंक सल्फेट व चूने के मिश्रण का छिड़काव भी दोहरायें। केवल स्वस्थ प्रमाणित तनों की कटिंग लगायें।

#### अक्तूबर-नवम्बर :

फरवरी के महीने में बताया गया कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें।



(पृष्ठ 11 का शेष)

**4. अंगूर की गुण वृद्धि :** बीज रहित अंगूर की किस्मों में दानों की भरमार किए बिना अधिक उपज देने के लिए पूरी तरह फूल आ जाने की हालत में, 20 पी.पी.एम.जी.ए. व फल बनने पर 40 मि.ग्रा. जी.ए. प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर प्रयोग करें। इससे फल का आकार लम्बा होता है। इससे गुच्छों में फलों के गलने की आशंका कम हो जाती है। यह सिफारिश केवल बीजरहित अंगूर वाली किस्मों के लिए है।

**5. तोड़ाई उपरान्त रखरखाव :** अंगूर तोड़ने के पश्चात् नहीं पकते। इसलिए इन्हें पूरी पकी हुई अवस्था में तोड़ना चाहिए। गुच्छे के पकने का अंदाज़ा गुच्छे के आखिरी अंगूरों को देखकर लगाया जा सकता है। गुच्छे को बेल से तोड़ने के लिए किसी तेज़ कैंची का प्रयोग करना चाहिए। तोड़ाई हमेशा सुबह या देर शाम के समय करनी चाहिए। डिब्बाबन्दी से पहले गुच्छे में से टूटे, सड़े तथा खराब अंगूर के दानों को निकाल देना चाहिए, तोड़ाई के समय कुल घुलनशील तत्व परलेट, थोम्पसन सीडलैस तथा ब्यूटी सीडलैस में क्रमशः 18-19, 20-22 तथा 17-18 होना चाहिए।

**6. डिब्बाबन्दी और भंडारण :** गुच्छों को अलग-अलग करने के पश्चात् उन्हें गते के डिब्बे में अखबार का कागज़ लगाकर पैक करना चाहिए। बीमारी को रोकने के लिए 5 कि.ग्रा. के डिब्बे में 5 ग्राम ब्लीचिंग पाऊडर अखबार के नीचे रखना चाहिए।



## पशु चिकित्सा में प्रयोग की जाने वाली साधारण औषधियाँ

पुनीत झंडई, देवन अरोड़ा एवं नीरज अरोड़ा

पशु चिकित्सा जन-स्वास्थ्य एवं महामारी विज्ञान विभाग

ला. ला. रा. पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

**1. मैग्नीशियम सल्फेट :** यह एक रंगहीन रवेदार पदार्थ है। इसे मैगसल्फ के रूप में जाना जाता है। यह रोगनुरोधक, साधारण रेचक, आक्षेपहारी, आल्टरेटीव, फ्रबीफ्यूज (बुखार कम करने के लिए) एवं मैग्नीशियम लवण की कमी से होने वाले रोग जैसे ग्रास टीटैनी, लैक्टेसन टीटैनी, आदि में उपयोगी होता है।

**रोगानुरोध :** सान्द्र घोल में पट्टी भिगोकर संक्रमित घाव में भरकर रखने से यह उत्तक से लसिका का बहाव करता है, जिससे घाव का संक्रमण नष्ट हो जाता है।

**साधारण रेचक :** 250 से 300 ग्राम मैगसल्फ, समान मात्रा में नमक मिलाकर पानी में घोलकर पिलाने से यह गाय भैंस में साधारण रेचक के रूप में काम करता है।

**आक्षेपकारी :** जमोघा (टेटनस) में 10 प्रतिशत, 20 मि.ली. मैगसल्फ अधोत्वचीय सूचीवेध से 15 मिनट के अन्तराल पर देते हैं तो थोड़ी देर में आक्षेप खत्म हो जाता है।

**फ्रबीफ्यूज :** 150 से 300 ग्राम मैगसल्फ समान मात्रा में पोटाशियम नाईट्रेट में मिलाकर इसे चार भाग में बाँटकर रख लें। एक हिस्सा सुबह-शाम पीने के पानी के साथ देने से बुखार कम हो जाता है। ग्रास टीटैनी या लैक्टेसन टीटैनी में 10-20 प्रतिशत घोल 200-300 मि.ली. अधोत्वचीय सूचीवेध से दिया जाता है।

**2. रेडी का तेल :** यह एक गाढ़ा लसलसा, रंगहीन तेल है। गाय/भैंस में 500 से 600 मि.ली. तथा बछड़ा/कटड़े में 30-60 मि.ली. रेचक के रूप में कब्ज होने पर दिया जाता है।

**3. खाने वाला सोडा (सोडाबाइकार्ब) :** यह रंगहीन, स्वाद में नमकीन पाऊडर है। इसका 2 प्रतिशत घोल साधारण कटी, फटी, जली त्वचा पर लगाने से आराम होता है। एक प्रतिशत घोल आँख धोने में काम आता है। पेट की अम्लीयता कम करने में आवश्यकता अनुसार 50 ग्राम पानी में घोलकर सुबह-शाम, गठिया में सोडाबाइकार्ब तथा सोडियम सैलीसीलेट 30-30 ग्राम मिलाकर सुबह-शाम मूत्र के अलकलीय होने तक देते हैं।

**4. पोटाशियम परमैंगनेट :** इसका उपयोग कीटाणुनाशक के रूप में होता है। 5 प्रतिशत घोल साधारण सफाई में तथा 0.1 से 1 प्रतिशत का घोल घाव धोने में इस्तेमाल किया जाता है।

**नीला थोथा :** इसका उपयोग पेट के कीड़े मारने में 1 प्रतिशत 100 मि.ली. प्रयुक्त होता है। एक से 3 प्रतिशत घोल वेजीनाइटिस, कन्जंक्टिनाइटिस में उपयोगी है। एक प्रतिशत घोल ओसोफीजीअल ग्रूव बन्द करने में होता है।

**फिनाइल :** यह कीटाणुनाशक के रूप में प्रयुक्त होता है। खुरपका-मुँहपका रोग में खुर धोने के लिए 5 प्रतिशत तथा मुँह के अन्दर लगाने के लिए 10 प्रतिशत घोल का उपयोग किया जाता है।

## पशु रोग का वर्गीकरण

1. कारण के अनुसार
2. रोग आरम्भ होने के अनुसार
3. प्रकोप एवं अवधि के अनुसार
4. रोगग्रस्त भागों में परिवर्तन के अनुसार
5. वितरण के अनुसार
6. प्रभावित रोगग्रस्त भाग के अनुसार
7. लाक्षणिक घटना के अनुसार

### 1. कारण के अनुसार

इसे दो भागों में विभक्त किया गया है -

- क) विशिष्ट रोग                      ख) अतिविशिष्ट रोग

क) **विशिष्ट रोग** : वे रोग जिसका कारण निश्चित हो, विशिष्ट रोग कहलाता है, जैसे खुरपका - मुँहपका, गलघोंटू इत्यादि। ये मुख्यतः दो प्रकार से होते हैं -

❖ **संक्रामक रोग :** वे रोग जो जीवाणु, विषाणु, कवक एवं प्रोटोजोआ के द्वारा प्रसार किया जाता है, संक्रामक रोग कहलाता है। ऐसे रोग अस्वस्थ पशु से स्वस्थ पशु में उनके शारीरिक सम्पर्क से या सम्पर्क में रहने वाले पदार्थ के द्वारा पहुँचता है, जैसे जमोधा, पशु प्लेग आदि।

❖ **छूत रोग :** जैसा कि नाम से विदित है रोग का फैलाव रोगी पशु से स्वस्थ पशु में सीधे सम्पर्क में आने से होता है। इस रोग का प्रसार एक स्थान से दूसरे स्थान, वायु, जल, पशु, पक्षी और मनुष्य द्वारा होता है जैसे पशु प्लेग, गलघोटू आदि। सभी छूत रोग संक्रामक रोग होते हैं लेकिन सभी संक्रामक रोग छूत रोग नहीं होते हैं।

**ख) अतिविशिष्ट रोग :** वे रोग जिनके कारण अनेक और रोग निश्चित होते हैं जैसे वेदना, दस्त, अपफारा आदि ।

## 2. रोग आरम्भ होने के आसार

क) **पैतृक रोग** : वे रोग जो माता-पिता से संतति में आता है जैसे हीमोफीलिया, मिर्गी आदि।

**ख) जन्मजात रोग :** वे रोग जो संतति को गर्भकाल में ही लग जाता है जैसे जन्मजात क्षयरोग, ब्रुसलोसिस।

ग) अर्जित रोग : वे रोग जो पशु पैदा होने के बाद जीवनकाल में ग्रहण करता है। संक्रामक रोग अर्जित रोग की श्रेणी में आते हैं।

### 3. प्रकोप एवं अवधि के अनुसार

**क) अति उग्र रोग :** वैसे रोग जिसकी आक्रामकता इतनी तीव्र एवं भयानक होती है कि पशु बिना लक्षण के एकाएक मर जाता है। मरने का कारण भी पता नहीं चलता है। इस रोग में पशु को चिकित्सा का समय भी नहीं मिलता है।

**ख) उग्र रोग :** वह रोग जो अति तीक्ष्ण रूप से उत्पन्न होता है और तीव्र प्रकोप करके शीघ्र समाप्त हो जाता है।

ग) **स्वल्पकालीन रोग** : जिसका आरम्भ तेजी से होता है एवं इसकी अवधि उग्र रोग से अधिक होती है।

घ) चिरकालीन रोग : वह रोग जो धीरे-धीरे प्रकट होकर, लम्बे समय में समाप्त होते हैं।

4. रोगग्रस्त भागों में परिवर्तन के अनुसार :

क) **क्रियात्मक रोग** : ये रोग जो किसी अंग के कार्य को केवल प्रभावित करता है।

ख) **रचनात्मक रोग** : वे रोग जो अंग के बनावट पर केवल प्रभाव डालता है।

### 5. वितरण के अनुसार

क) **स्थानिकमारी** : ऐसे रोग जो कम क्षेत्रफल में पशुओं में फैलता है स्थानिकमारी कहलाता है।

**ख) पशुमहामारी :** ऐसे रोग जो बहुत बड़े भू-भाग में बहुत सी पशु-जातियों में एक साथ प्रभावित कर फैलता है पशुमहामारी कहलाता है।

ग) **पैनजूटिक** : वैसे रोग जो बड़े भू-भाग में बहुत सी पशु जातियों में एक साथ प्रभावित कर फैलता है पैनजूटिक कहलाता है।

घ) **विदेशी रोग :** ऐसा रोग जो विदेश से लाये गये पशुओं के द्वारा फैलाया जाता है विदेशी रोग कहलाता है, जैसे - दक्षिण अफ्रीकी अश्व रोग ।

इ) **विकर्णी रोग** : जो रोग कभी-कभी छिट पुट होते दिखाई पड़ते हैं विकर्णी रोग कहलाते हैं।

6. प्रभावित रोगग्रस्त भाग के अनुसार

क) सामान्य रोग : वह रोग जो एक ही समय में शरीर के कई तंत्र या सम्पूर्ण शरीर को प्रभावित करता है सामान्य रोग कहलाता है।

**ख) स्थानीय रोग :** वह रोग जो एक समय में शरीर के किसी विशेष तंत्र को प्रभावित करता है स्थानीय रोग कहलाता है।

7. लाक्षणिक घटना के अनुसार

क) **प्राथमिक रोग** : वह रोग जो स्वतंत्र रूप से अपना संक्रमण कर प्रथम लक्षण प्रकट करता है प्राथमिक रोग कहलाता है।

**ख) द्वितीयक रोग :** वह रोग जो प्राथमिक रोग के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होता है द्वितीयक रोग कहलाता है।

8. कारक के अनुसार

क) जीवाणु जनित रोग : वह रोग जो जीवाणुओं के द्वारा फैलाया जाता है जैसे - गिल्टी रोग, जहरवाद आदि।

**ख) विषाणुजनित रोग :** वह रोग जो विषाणुओं के द्वारा फैलते हैं, जैसे चेचक, खुरपका-मुँहपका आदि।

ग) **फफूंद जनित रोग** : वह रोग जो फफूंद के द्वारा फैलते हैं जैसे कवक जनित थनैला, दाद आदि।

घ) **प्रोटोजोआ जनित रोग** : वह रोग जो प्रोटोजोआ के द्वारा फैलाया जाता है, जैसे किलनी ज्वर, सर्प आदि।

**इ) उपापचयी रोग :** वह रोग जो उपापचयिक गड़बड़ी से होता है जैसे दूध ज्वर, ग्रास टेटैनी आदि ।

**च) विषाक्तता रोग :** वह रोग जो सर्प विष, पौधों एवं रासायनिक पदार्थ द्वारा उत्पन्न होते हैं विषाक्तता रोग कहलाते हैं।





# पशु रोग निदान एवं बचाव

पुनीत झंडई, देवन अरोड़ा एवं नीरज अरोड़ा

पशु चिकित्सा जन-स्वास्थ्य एवं महामारी विज्ञान विभाग  
ला. ला. रा. पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

संतुलित आहार और उचित देखभाल के बावजूद पशु कभी-कभी बीमारियों की चपेट में आ जाता है। इनमें कुछ रोग सामान्य होते हैं। इसके अन्तर्गत वे रोग आते हैं जो सामान्य देखभाल, उचित रखरखाव तथा उचित खान-पान पर नियंत्रण रखने से ठीक हो जाते हैं, जैसे खाँसी, जुकाम, अफारा, बदहजमी, कब्ज आदि। कुछ रोग संक्रामक तथा जानलेवा होते हैं। अगर समय रहते इनका उपचार नहीं किया गया तो पशु की मृत्यु भी हो सकती है तथा पशुपालन व्यवसाय में घाटा भी हो सकता है जैसे गलघोंटू, लंगडिया, तिल्ली ज्वर, पोंका आदि। स्वस्थ पशु चुस्त, फुर्तीला, चमकीली आँखें, चुस्त कान, उत्तेजित शरीर और चाल-ढाल में सतर्क दिखाई देता है। शरीर का तापक्रम, हृदय गति तथा श्वसन गति सामान्य रहती है।

पशु	शरीर का तापक्रम (डिग्री फारनहाइट)	हृदय गति (प्रति मिनट)	श्वसन गति (प्रति मिनट)
गौवंश	101.5	50-60	20-25
भैंसवंश	98.3-103	40-50	15-20

**पशुओं में तापक्रम ज्ञात करना :** तापक्रम ज्ञात करने के लिए थर्मामीटर को पशु के गुदा में इस प्रकार लगाते हैं कि थर्मामीटर का पारे वाला भाग गुदा की झिल्ली के सम्पर्क में रहे। इस प्रकार 1 मिनट तक गुदा में रखकर पारा का स्तर पढ़ कर तापक्रम ज्ञात कर लिया जाता है।

## सावधानियां

- थर्मामीटर को गुदा में लगाने से पहले झटक कर पारे का स्तर 94-95 डिग्री फारनहाइट तक ले आना चाहिए। इसके लिए भीषण गर्मी में थर्मामीटर के बल्ब वाले हिस्से को ठंडे पानी में डुबाकर झटकना चाहिए। ऐसा करने से पारा तुरंत नीचे आ जाता है।
- पशु का तापक्रम लेने से पूर्व पशु को विश्रामावस्था में ले जाना चाहिए।
- गोबर निकालकर गुदा में थर्मामीटर लगाना अधिक उपयुक्त रहता है।
- भोजन करने के तुरंत बाद या व्यायाम के तत्काल बाद तापक्रम नहीं लेना चाहिए। इससे पशु का तापक्रम बढ़ जाता है।

## तापक्रम को प्रभावित करने वाले कारक :-

- लिंग :** नर की अपेक्षा मादा का तापक्रम अधिक होता है।
- आहार :** आहार के पश्चात् पशु का तापक्रम बढ़ जाता है।
- आयु :** कम आयु के पशु का तापक्रम अधिक आयु के पशु से अधिक होता है।
- व्यायाम :** तत्काल परिश्रम के बाद तापक्रम ठंडे वातावरण की अपेक्षा अधिक होता है।

इसके अलावा बुखार, दर्द, उत्तेजना आदि की स्थिति में पशु का तापक्रम बढ़ जाता है तथा लम्बी बीमारी के बाद या रक्तस्राव द्वारा खून की कमी होने पर, उपवास, शीतांग, वृक्क के कई रोग और पुरानी बीमारियों में तापक्रम सामान्य से कम हो जाता है।

**पशु में हृदय गति ज्ञात करना :** हृदय गति के लिए पशुओं की पूँछ के अभ्युदर पृष्ठ पर स्थित कोक्सीजीयल धमनी द्वारा हृदय गति ज्ञात किया जाता है। कोक्सीजीयल धमनी 1 मिनट में जितनी बार धड़कती है यही पशुओं की हृदय गति होती है।

## सावधानियां

- नाड़ी की गति ज्ञात करने के लिए पशु को विश्रामावस्था में रखना चाहिए।
- नाड़ी की गति दो-तीन बार लेकर औसत नाड़ी की गणना करनी चाहिए जो अधिक उपयुक्त होता है।

## नाड़ी गति को प्रभावित करने वाले कारक :

**लिंग :** नर की अपेक्षा मादा की नाड़ी गति अधिक होती है।

**आयु :** वृद्धि पशुओं की अपेक्षा नवजात पशुओं की नाड़ी गति अधिक होती है।

**श्रम :** श्रम करने पर नाड़ी की गति बढ़ जाती है।

**वातावरण :** गर्मियों में सर्दियों की अपेक्षा नाड़ी गति तेज हो जाती है। जबकि कमजोरी, दुबलापन, दस्त रक्तस्राव आदि की अधिकता से दुर्बलता आदि में सामान्य से अपेक्षाकृत मन्द और क्षीण चलती है।

**पशुओं की श्वास गति ज्ञात करना :** प्रति मिनट पशु द्वारा साँस लेने और छोड़ने की संख्या कुछ समय के अन्तराल पर लेकर औसत गणना पर श्वास गति ज्ञात कर ली जाती है।

## सावधानी :

- पशु जब शान्त हैं तो श्वास गति की गणना करनी चाहिए।
- श्वास गति के पर्यवेक्षण के लिए स्टॉप वॉच की मदद लेनी चाहिए।

## श्वास गति प्रभावित करने वाले कारक :

- ❖ श्रम करने पर श्वास गति बढ़ जाती है।
- ❖ निद्रा की अवस्था में श्वास गति घट जाती है।
- ❖ सर्दियों की अपेक्षा गर्मियों में श्वास गति बढ़ जाती है।
- ❖ आहार ग्रहण करते समय एवं जुगाली करते समय श्वास गति बढ़ जाती है।
- ❖ गर्भावस्था में श्वास गति बढ़ जाती है।
- ❖ मादा पशु की श्वास गति नर पशु से अधिक होती है।

## अस्वस्थ पशु के निम्न लक्षण हैं :

- ❖ पशु खाना कम या बन्द कर देता है।
- ❖ पशु जुगाली करना बन्द कर देता है।
- ❖ दुधारू पशु दूध कम कर देता है।
- ❖ शरीर का तापक्रम सामान्य से ज्यादा या कम हो जाता है।
- ❖ नाड़ी एवं साँस की गति सामान्य से कम या ज्यादा हो जाती है।

❖ गोबर और पेशाब के रंग रूप में परिवर्तन हो जाता है।

❖ पशु सुस्त या उत्तेजित हो जाता है।

उपर्युक्त में से कोई एक या सभी लक्षण दिखाई देने पर पशु को अस्वस्थ समझें।

**पशु रोग :** पशु के शरीर में किसी प्रकार का परिवर्तन जो शरीर के सामान्य कार्यों में व्यवधान उत्पन्न कर दे, रोग कहलाता है। इलाज से बेहतर बचाव, यह कहावत पशु पर भी लागू होती है। पशु बीमार पड़ने पर दवा से ठीक तो हो जाता है लेकिन उसके इलाज पर काफी रुपया खर्च हो जाता है तथा उत्पादन भी कम हो जाता है। अतः पशु को छूतदार एवं संक्रामक रोग के प्रकोप से समय पर बचाव के साधन अपनाना और बीमारी को नियंत्रित करना, जिससे शीघ्र ही उसका दमन हो, रोकथाम कहलाता है।

इसके अन्तर्गत निम्न आधुनिक उपाय हैं

1. बिलगाव या पृथक्करण।
2. संगरोध
3. टीकाकरण
4. अंतः कृमियों का नियंत्रण।
5. बाह्य कृमियों का नियंत्रण।
6. शवों का अंतिम संस्कार।
7. बीमारी उन्मूलन।
8. चारागाह बदलना।

**1. बिलगाव या पृथक्करण :** संक्रामक या छूत रोग की आशंका होते ही रोगग्रस्त पशु को स्वस्थ पशु से अलग कर उसकी चिकित्सा करवानी चाहिए। उसका खाना-पानी तथा परिचारक अलग होना चाहिए। यदि परिचारक अलग संभव नहीं हो तो परिचारक सर्वप्रथम स्वस्थ पशु की परिचर्या करेगा फिर अस्वस्थ पशु की। अस्वस्थ पशु के परिचर्या उपरान्त रोगाणुरोधक घोल से अपना हाथ-पैर साफ कर लें। जहाँ अस्वस्थ पशु बंधा था उस फर्श तथा उसके दीवार को रोगाणुनाशक जैसे 3 प्रतिशत कॉस्टिक अथवा 5 प्रतिशत फीनॉल से धो डालना चाहिए। रोगग्रस्त पशु का चारा पानी, किसी स्वस्थ पशु के सम्पर्क में नहीं आना चाहिए। रोगी पशु के सम्पर्क में आये हुए बर्तन और जंजीर को गरम पानी में उबालकर निर्जमीकरण कर लेना चाहिए।

**2. संगरोध :** यह एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें दूसरे फार्म, देश या राज्य से आये हुए पशुओं को जिसमें संक्रामक बीमारियों की आशंका हो, फार्म के स्वस्थ पशुओं से कम से कम 15-21 दिन तक अलग रखते हैं।

**3. टीकाकरण :** संक्रामक रोग से बचाव के लिए पशुओं को टीकावधि लगवा लेना एक उत्तम व्यवस्था है। टीकावधि लेने पर 21 दिनों के बाद पशुओं को उस रोग के प्रति कृत्रिम सक्रिय प्रतिरक्षा उत्पन्न हो जाती है जिससे आगे उस पशु में रोग होने की सम्भावना नहीं रहती है। यदि रोग हो भी जाता है तो उसकी तीव्रता काफी कम होती है और उसका इलाज आसानी से हो जाता है या रोग स्वतः ठीक हो जाता है। टीका सदैव रोग प्रकोप करने वाली ऋतुओं के पूर्व लगाना चाहिए। रोगग्रस्त पशु को

टीकावधि नहीं लगाना चाहिए क्योंकि रोगग्रस्त पशु के शरीर में जीवाणुओं के कारण एन्टीजन उपस्थित रहता है तथा टीका लगाने से पुनः एन्टीजन अधिक मात्रा में पशु के शरीर में पहुँचता है जो पशु की प्रतिरक्षा को क्षीण कर देता है तथा रोग उग्र होकर पशु की मौत का कारण होता है।

#### 4. अंतः कृमियों का नियंत्रण :

- ❖ गोबर का परीक्षण कराकर उचित दवा रोगग्रस्त पशु को देनी चाहिए।
- ❖ पशुओं को नम एवं नीचे चारागाह पर नहीं चराना चाहिए।
- ❖ पशुओं के रहने के स्थान को साफ-सुथरा रखें।
- ❖ पानी सदैव स्वच्छ पिलाएं।
- ❖ पशु के गोबर का उचित निस्तारण करें।
- ❖ स्वस्थ पशु को चार माह के अन्तराल पर कृमिनाशक दवा लवण बदल-बदल कर देना चाहिए।
- ❖ पशुओं को वैसे चारागाह में चरने के लिए नहीं भेजना चाहिए जहाँ संक्रमित पशु चर चुके हों।
- ❖ चारागाह बदलकर चरने के लिए भेजना चाहिए।

**5. बाह्य कृमियों का नियंत्रण :** बाह्य कृमियों से बचाव के लिए गौशाला के आस-पास की झाड़ियों को हटाकर साफ सुथरा रखें। यदि गौशाला में छिद्र हो तो उसे भरवा देना चाहिए। पीड़ित जानवर को चिकित्सक से सम्पर्क कर दवा देनी चाहिए। खिलाने वाली दवा जिसमें आइवरमेक्टीन लवण पाया जाता है जैसे - इन्डेक्टीन, इन्डेक्टीनॉल, हाइटेक आदि, रीढ़ पर लगाने वाली दवा-पलुमेथरीन आदि (पानी में घोल कर लगाने वाला-टीक आऊट, ब्यूटोक्स आदि (अधोत्वचीय सुई के द्वारा-टूमेक, हाइटेक आदि दवायें हैं)।

**6. शवों का अंतिम संस्कार :** संक्रामक रोग से मरे पशु के शव को खुले मैदान, चारागाह, नदी, तालाब आदि में नहीं फेंकना चाहिए। पशु का चमड़ा भी शव से अलग नहीं करना चाहिए। शव को मृत पशु के बिछावन, गोबर, मूत्र आदि के साथ गहरे गड्ढे में डालकर, उसके ऊपर 15-30 सें.मी. चूना डालकर मिट्टी से ढक कर ऊपर से काँटा डालकर पाट देना चाहिए ताकि कुत्ता, सियार उसे खोद कर बाहर न ले जायें अन्यथा एक बहुत बड़े क्षेत्र में बीमारी फैल सकती है।

**7. बीमारी उन्मूलन :** विकसित देशों में कुछ संक्रामक रोग (खुरहा, पोकनी, गाय का पागलपन, रैबीज आदि) होने पर पशु का वध कर उसके शव को जला दिया जाता है। लेकिन भारत में धार्मिक भावना को देखते हुए ऐसा सम्भव नहीं है। अतः बीमारी उन्मूलन यहाँ गाय एवं भैंस से संभव नहीं है।

**8. चारागाह बदलना :** संक्रामक गर्भपात, गलघोंटू, लंगड़ी, तिल्ली ज्वर, जमोधा आदि रोग दूषित चारागाह से अधिक फैलते हैं। अतः जिस चारागाह में जाने से पशु आक्रांत होते हों या इस तरह के रोग से युक्त पशु को फेंका गया हो वहाँ स्वस्थ पशु को चरने के लिए नहीं भेजना चाहिए।

उपर्युक्त उपायों के द्वारा पशु को कुछ हद तक संक्रामक रोगों से बचाया जा सकता है। इसके बावजूद यदि पशु रोगग्रस्त हो जाता है तो पशु को दवा देने की आवश्यकता होती है।

पशुओं को दवा देने की निम्न विधि है:-

1. **पिलाना** : तरल औषधि प्लास्टिक या बांस का चोंगा में भरकर चोंगा के मुँह को पशु के मुँह में डालकर मुँह में डाल दिया जाता है।
2. **खिलाना** : चटनी, लोए, गोली तथा कैप्सूल पशु को दवा के रूप में खिलायी जाती है।
3. **एनीमा** : जब पशु खाने में असमर्थ हो तो कुछ दवा एनीमा द्वारा दी जा सकती है। एनीमा का विशेष महत्व कब्ज में है जिसमें जल एनीमा, साबुन एवं जल एनीमा, 5 प्रतिशत सोडाबाईकार्ब एनीमा, ग्लिसरीन आदि मिले पानी का एनीमा दिया जाता है।
4. **दवा का बफरा** : सांस की बीमारियों में दवा जैसे तारपीन तेल, यूकैलिप्टस तेल आदि का बफरा दिया जाता है। इसमें चौड़े पात्र में खौलता जल रखा जाता है जिसमें दवा डाल दी जाती है, जिससे दवा भाप के साथ उठती है। इसे पशु के नाक के पास रखते हैं और दवा साँस के द्वारा फुसफुस तक पहुँच जाती है।
5. **दवा के पानी से गरम या ठंडा सेक** : इसका उपयोग घाव एवं मोच में किया जाता है। घाव में गरम सेक लगाते हैं जबकि मोच में दोनों तरह का सेक लगाते हैं। यदि मोच अंदरूनी है तो ठंडा सेक लगाते हैं जबकि पुरानी चोट को गरम सेक लगाते हैं।
6. **मलहम** : चोट, मोच, घाव आदि में औषधि को मलहम के रूप में बाहरी अंगों पर प्रयोग किया जाता है।
7. **बूंद के रूप में** : आँख एवं कान में तरल दवा बूंद के रूप में दी जाती है।



चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार  
द्वारा आयोजित

# कृषि मेला (खरीफ)

**27-28 मार्च, 2018**

**विषय : किसानों की आय, 2022 तक दोगुना करना**

**स्थान : गेट नं. 3, विश्वविद्यालय फार्म, बालसमन्द रोड़, हिसार**

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :

**निदेशक, विस्तार शिक्षा**

गांधी भवन

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार-125 004

दूरभाष : 01662-255234, 9416482401

**27-28 मार्च, 2018 को आप सादर आमंत्रित है**

## बौद्धिक अक्षमता या विकलांगता (मानसिक मंदता)

रीना एवं बिमला ढांडा

मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

### बौद्धिक विकलांगता क्या है?

जब एक बच्चे को सामान्य बच्चों की तुलना में संवेदी जानकारी का प्रयोग करने में और समझने में कठिनाई होती हो तब हम उसे बौद्धिक विकलांगता कहते हैं। यह बच्चों में जन्म के समय या जन्म के बाद दिमाग के कुछ भागों के नष्ट होने के कारण होती है जिसे बौद्धिक विकलांगता कहते हैं। बौद्धिक अक्षमता मानसिक बीमारी नहीं है, बल्कि ये एक ऐसी स्थिति है जिसमें मानसिक विकास में देरी पाई जाती है और यह हमेशा बचपन से ही मौजूद रहती है। बौद्धिक विकलांगता जिसे कभी मानसिक मंदता कहा जाता था एक ऐसी स्थिति है जिसमें विकास के सभी पहलुओं में देरी पाई जाती है। ये देरी विकास के चार क्षेत्रों में पाई जाती है। खास कर शरीर के संचालन में नियंत्रण, सोचने और स्थितियों से बुद्धिमतापूर्वक निपटने, लोगों से बात करने, उनसे घुलने-मिलने और सामाजिक व्यवहार रखने और भाषाई क्रियाओं में जैसे दूसरों की बात समझना और अपनी बात रख पाना।

### बौद्धिक अक्षमता के चिह्न क्या हैं?

बौद्धिक अक्षमता बचपन में ही शुरू हो जाती है, परन्तु बौद्धिक अक्षमता के शिकार बच्चों की पहचान 6-12 महीनों की उम्र में की जा सकती है। हल्की अक्षमता वाले बच्चों की पहचान दो साल की उम्र तक हो पाती है। बौद्धिक अक्षमता वाले बच्चे बैठना, घुटनों के बल चलना, सीधे चलना या बोलना अन्य बच्चों के मुकाबले काफी देर से सीख पाते हैं। दूसरे बच्चों की तरह जैसे शरीर का अच्छे से विकास न होना, भाषा के विकास में देरी, स्मरण शक्ति में कमी होना, विभिन्न समस्याओं को हल करने में असमर्थ होना और अपना खुद का ध्यान न रख पाना आदि।

### आपको कब सावधान रहना चाहिए

- ❖ अगर बच्चा समय से पहले पैदा हुआ हो, और उसका वजन ढाई किलो से कम हो।
- ❖ 4-5 साल तक की उम्र में भी अपनी देखभाल नहीं कर पाता हो। यानि अपना ध्यान खुद रख पाने में असमर्थ हो। जैसे खाना खाने में, कपड़े पहनने में और टट्टी पेशाब पर नियंत्रण न रख पाने में।
- ❖ अगर बच्चे को उम्र के हिसाब से विकास के पड़ावों को उम्र के हिसाब से करने में असमर्थ होना। तब आपको सावधान रहना चाहिए।
- ❖ जन्म देते समय मानसिक आघात या कटु अनुभव होना।
- ❖ गर्भनाल से जुड़ी समस्या होना, डिलीवरी के समय माँ को हृदय या गुर्दे की समस्या होना।



- ❖ बच्चे का दम घुटना आदि।
- ❖ जन्म के दौरान पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन न मिलना, या डिलीवरी के समय बच्चे को चोट लगना, इन सभी कारणों से भी बच्चों के शरीर और दिमाग पर गहरा असर पड़ता है।

#### जन्म से पहले के कारण:

- ❖ माँ का संक्रामक रोग से पीड़ित होना जैसे: एच आई वी और रूबेला।
- ❖ खाने में पोषक पदार्थों की कमी जैसे आयोडीन और फोलिक एसिड और अति कुपोषित भोजन ग्रहण करना।
- ❖ गर्भावस्था के दौरान शराब जैसे नशीले पदार्थों का सेवन करना।
- ❖ एकल जीन विकार।
- ❖ माँ का वातावरण/पर्यावरण का प्रभाव।
- ❖ गर्भावस्था के समय हानिकारक रसायनों, दवाइयों का सेवन करना जैसे: टेट्रासाइक्लीन दवा से बच्चों के दांत में स्टैन हो सकता है।

#### बचपन के दौरान क्या-क्या सावधानियां बरतनी चाहिए

- ❖ छह मास तक सिर्फ माँ का ही दूध पिलाना चाहिए, क्योंकि माँ के दूध में सभी प्रकार के पोषक तत्व होते हैं जो बच्चे के शरीर को बाहरी संक्रमण व रोगों से बचाता है।
- ❖ बच्चे को कोई भी बीमारी होने पर डॉक्टर से तुरंत इलाज करवाना चाहिए। जैसे-दिमागी बुखार होना, खाँसी होना इत्यादि।
- ❖ भोजन में पोषक तत्वों की कमी नहीं होनी चाहिए। छह मास के बाद बच्चों को दाल का पानी, चावल का पानी पिलाना और बाल आहार देना चाहिए।
- ❖ बचपन में खेल-कूद के दौरान अपने बच्चों को हमेशा निगरानी में रखना चाहिए। ताकि हम अपने बच्चों को एक अच्छा बचपन दे सकें कि वो भी समाज में अपना योगदान दें, और अपने देश का विकास करने में सहयोग करें।

#### समाज में किन-किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है :

बौद्धिक विकलांग बच्चों को सभी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है जैसे- विकास के क्षेत्र में, शिक्षा के क्षेत्र में, खेलों में, व्यवसाय में, दैनिक-कार्यों में, अन्य लोगों से बातचित करने में, उनके साथ काम करने में इत्यादि।

#### बौद्धिक अक्षमता का इलाज :

इसका उपचार नहीं किया जा सकता है। लेकिन सही, सेवाएं और सही देखभाल उपलब्ध होने पर ये सुनिश्चित किया जा सकता है कि बौद्धिक अक्षमता वाला व्यक्ति स्वस्थ और अपेक्षाकृत स्वतंत्र जीवन बिता सकता है। बौद्धिक अक्षमता वाले बच्चों में खराब स्वास्थ्य से जुड़ी समस्याएं, असल में अपर्याप्त और अधूरी देख-रेख का ही नतीजा होता है। उन्हें दूर किया जा सकता है। जैसे- स्वयं की देखभाल करने के लिए उन्हें शिक्षित करना, विशेष कार्यक्रम में भागीदारी करवाना, सामाजिक कौशल प्रशिक्षण देना और उन्हें हर काम पे शाबाशी देना।

#### बौद्धिक अक्षमता की रोकथाम: गर्भावस्था के दौरान क्या करना चाहिए

- ❖ धूम्रपान न करें
- ❖ शराब का प्रयोग न करें और अधिक दवाइयों का भी सेवन नहीं करना चाहिए, कोई भी बीमारी होने पर डॉक्टर की सलाह से ही दवाई लेनी चाहिए। क्योंकि कुछ दवाइयां बच्चे के दिमाग पर सीधा प्रभाव डालती हैं और माँ के भी लिए नुकसानदायक होती हैं।
- ❖ प्रोटीन और विटामिन युक्त भोजन का सेवन करें। एक दिन में कम से कम चार बार खाना खाएं और दोपहर में पूरा आराम करें।
- ❖ और साथ में हर रोज फोलिक एसिड की टेबलेट का भी सेवन करें, दवा डॉक्टर की सलाह से ही लें।
- ❖ समय-समय पर डॉक्टर से मिलते रहें।
- ❖ 21 साल से पहले गर्भ धारण करने से बचें, इससे प्रसव में मुश्किलें आने के जोखिम बढ़ जाते हैं, 35 साल के बाद भी गर्भ धारण से बचें। उस समय क्रोमोसोम से जुड़े विकार जैसे डाऊन सिंड्रोम होने की आशंका बढ़ जाती है।
- ❖ गर्भ धारण करने के बीच में उचित अंतराल जरूरी है, इससे माताओं को अपने लिए पर्याप्त पोषक तत्व पाने का समय मिल जाता है।

#### जन्म के बाद

- ❖ बच्चों का टीकाकरण सही समय पर करवाएं, क्योंकि कुछ टीके सही समय पर काम करते हैं जैसे -खसरे का टीका, बीसीजी (तपेदिक) का टीका और काली खांसी।
- ❖ समय-समय पर बच्चों को उत्साहित करें। बच्चे को कार में सीट बेल्ट का प्रयोग कराएं और साइकिल चलाते समय हेलमेट का प्रयोग करवाएं। बच्चों को घर में ज़हरीली चीजों से दूर रखें। अपने बच्चे की अयोग्यताओं के अलावा उसकी योग्यताओं पर ध्यान दें।
- ❖ विशेष शिक्षकों से मिले प्रशिक्षण की तकनीकों को याद रखें और उन तरीकों का इस्तेमाल करें।
- ❖ अपने बच्चे को लेकर शर्मिंदा न हों और इस बीमारी को लेकर अपने परिवार और दोस्तों की गलतफहमियों या गलत धारणाओं को सही करें।

ये सही है कि बौद्धिक अक्षमता वाले लोगों की सीखने की गति धीमी होती है, लेकिन अगर उन्हें धैर्य और निरंतरता के साथ सिखाया जाए तो उन्हें कई सारे कौशल सिखाए जाते हैं जिनसे वे बहुत हद तक सक्षम बन सकते हैं।



# Bio - Fertilisers - The Beneficial Micro-organisms

N. K. Goyal, Rakesh Kumar and R. S. Malik  
Krishi Vigyan Kendra, Damla (Yamunanagar)  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Bio-fertilizers are one of the best modern tools for agriculture. Bio-fertilizer contains micro-organisms which promote the adequate supply of nutrients to the host plants and ensure their proper development of growth and regulation in their physiology. Living micro-organisms are used in the preparation of bio-fertilizers. Bio-fertilizers play a very significant role in improving soil fertility by fixing atmospheric nitrogen, both, in association with plant roots and without it, solubilise insoluble soil phosphates and produces plant growth substances in the soil. They are in fact being promoted to harvest the naturally available, biological system of nutrient mobilization. The role and importance of bio-fertilizers in sustainable crop production has been reviewed by several authors. But the progress in the field of BF production technology remained always below satisfaction in Asia, particularly India because of various constraints.

Bio-fertilizers being essential component of organic farming are the preparations containing live or latent cells of efficient strains of nitrogen fixing, phosphate solubilizing or cellulolytic micro-organisms used for application to seed, soil or composting areas with the objective of increasing number of such micro-organisms and accelerate those microbial processes which augment the availability of nutrients that can be easily assimilated by plants.

Living micro-organisms are used in the preparation of bio-fertilizers. Only those micro-organisms are used which have specific functions to enhance plant growth and reproduction. There are different types of micro-organisms which are used in the bio-fertilizers.

Bio-fertilizers being essential component of organic farming play vital role in maintaining long term soil fertility and sustainability. Living micro-organisms are used in the preparation of bio-fertilizers. Only those micro-organisms are used which have specific functions to enhance plant growth and reproduction. There are different types of micro-organisms which are used in

bio-fertilizers. Bio-fertilizer being essential components of organic farming play vital role in maintaining long term soil fertility and sustainability.

## Potential Characteristic features of some Bio-Fertilizers

- **Nitrogen Fixers Rhizobium** : These belongs to family *Rhizobiaceae*, symbiotic in nature, fix nitrogen 50-100 kg/ ha in association with legumes only. It is useful for pulse legumes like chickpea, red-gram, pea, lentil, black gram, etc., oil-seed legumes like soybean and groundnut and forage legumes like berseem and lucerne. Rhizobium largely colonizes the roots of specific legumes to form tumor like growths called root nodules, which acts as factories of ammonia production.
- **Azospirillum** : belongs to family *Spirillaceae*, heterotrophic and associative in nature. In addition to their nitrogen fixing ability of about 20-40 kg/ha, they also produce growth regulating substances. The *Azospirillum* form associative symbiosis with many plants, particularly with those having the C<sup>4</sup>-dicarboxylic path way of photosynthesis (Hatch and Slack pathway), because they grow and fix nitrogen on salts of organic acids such as malic, aspartic acid. Thus it is mainly recommended for maize, sugarcane, sorghum and pearl millet, etc.
- **Azotobacter** : belongs to family *Azotobacteriaceae*, aerobic, free living, and heterotrophic in nature. Azotobacters are present in neutral or alkaline soils and *A. chroococcum* is the most commonly occurring species in arable soils. *A. vinelandii*, *A. beijerinckii*, *A. insignis* and *A. macrocytogenes* are other reported species. The number of Azotobacter rarely exceeds of 10<sup>4</sup> to 10<sup>5</sup> g<sup>-1</sup> of soil due to lack of organic matter and presence of antagonistic micro-organisms in soil. The bacterium produces anti-fungal antibiotics which inhibits the growth of several pathogenic fungi in the root region thereby preventing seedling mortality to a certain extent.
- **Blue Green Algae (Cyanobacteria) Azolla** : These belongs to eight different families, phototrophic in nature and produce Auxin, Indole acetic acid and Gibberellic acid, fix 20-30 kg N/ha in submerged rice fields as they are abundant in paddy, so also referred as paddy organisms. BGA forms symbiotic association capable of fixing nitrogen with fungi, liverworts, ferns and flowering plants, but the most

<sup>1</sup>Dept. of Microbiology COBS&H, CCSHAU, Hisar

<sup>2</sup>Head Department of Soil Science, CCSHAU, Hisar

common symbiotic association has been found between a free floating aquatic fern, the Azolla and *Anabaena azollae* (BGA).

- Azolla contains 4-5% N on dry basis source of organic manure and nitrogen in rice production. Azolla can be applied as green manure by incorporating in the fields prior to rice planting. The most common species occurring in India is *A. pinnata* and same can be propagated on commercial scale by vegetative means. It may yield on average about 1.5 kg per square meter in a week.
- **Phosphate Solubilizers** : A considerably higher concentration of phosphate solubilizing bacteria is commonly found in the rhizosphere in comparison with non rhizosphere soil. The soil bacteria belonging to the genera *Pseudomonas* and *Bacillus* and Fungi are more common.
- **Mycorrhiza** : The term Mycorrhiza denotes “fungus roots.” It is a symbiotic association between host plants and certain group of fungi at the root system, which the fungal partner is benefited by obtaining its carbon requirements from the photosynthates of the host and the host in turn is benefited by obtaining the much needed nutrients especially phosphorus, calcium, copper and zinc, etc., which are otherwise inaccessible to it, with the help of the fine absorbing hyphae of the fungus. These fungi are associated with majority of agricultural crops.

#### Advantages of Bio-fertilizers

- (1) They help to get high yield of crops by making the soil rich with nutrients and useful micro-organisms necessary for the growth of the plants.
- (2) Bio-fertilizers have replaced the chemical fertilizers as chemical fertilizers are not beneficial for the plants. They decrease the growth of the plants and make the environment polluted by releasing harmful chemicals.
- (3) Plant growth can be increased if bio-fertilizers are used, because they contain natural components which do not harm the plants but do the vice versa.
- (4) If the soil will be free of chemicals, it will retain its fertility which will be beneficial for the plants as well as the environment, because plants will be protected from getting any diseases and environment will be free of pollutants.

(Cont. page 30)

## Agro Meteorological Forecast in Agriculture

Yogesh Kumar, Karan Chhabra and Anil Kumar  
Department of Agri Meteorology  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Weather and climate are the important factors in determining the success and failure of agriculture because agriculture is mainly dependent on weather. About 43 percent of the land and 75 percent of people are dependent on agricultural activity. Agriculture sector contributes about 17.4 percent in Indian Gross Domestic Productivity (GDP) in 2015-16 and still continues to play a major role in the economy. Agriculture is highly sensitive to weather and its variability. So weather forecast aids for comprehensive farm decision and helps to minimized crop losses to some extent if the weather forecast is accurate in time. Weather forecasts for India are made in advance by the Indian Metrological Department and broadcasted through mass media like Radio, Television, and Newspapers, etc. Forecasting requires knowledge of the average and seasonal weather conditions of the locality, accurate information about the actual weather conditions of the locality with regard to all the weather elements at the time of forecasting.

The weather forecast is to be provided with a reasonable accuracy and enough lead time so that a farmer can take the necessary action to protect his crops and livestock. He must be able to change his management practices to take advantages of favorable weather conditions or mitigate unfavorable conditions.

#### What is Agro Meteorological Forecast

- The advance information regarding coming weather conditions related to farmers and agriculture is called as agro meteorological forecast. Forecasting and predicting future weather change in spatial and temporal dimension by employing different scientific tools.

#### Types of weather forecast

- **Nowcast** : A short-time weather forecast issued generally for the next few hours.
- **Short Range Forecast** : A short-term weather forecast issued for 24 hours with an outlook for another 24 hours.
- **Medium Range Forecast** : A weather forecast issued for a period extending from about three days to seven / ten days in advance.



- **Long Range Forecast** : A weather forecast issued for a period greater than seven days in advance and up to a season of more than three months.

Now cast, short range forecast, and long range forecast were issued by IMD and, seasonal climate forecast and medium range forecast were issued by NCMRWF, Noida (UP).

#### Forecasted Weather elements and Methods used in India

- ❑ **Nowcast** : Thunderstorm, dust storm, hail storm, cold and heat waves by synoptic charts and weather maps
- ❑ **Short Range Forecast** : Cloud spread, rainfall, temperature, cyclone warning by synoptic and weather map, NWP method
- ❑ **Medium Range Forecast** : Rainfall, temperature, RH, wind speed, wind direction and cloud cover by RCM and Satellite imageries
- ❑ **Long Range Forecast** : Seasonal rainfall by Statistical regression like ARIMA model

Medium range forecast uses modes of communication SMS through Mobile, Website, Dailies, Television and they are highly useful for farmer context and making agro met advisories, since there is a lead time of more than three days to take farm decisions and resolution is at the district level.

#### Resolution

- **Nowcast** : State level
- **Short Range Forecast** : State level
- **Medium Range Forecast** : District level
- **Long Range Forecast** : North, South, East and West India

**Integrated Weather Forecast** : Integration means integrating, long, medium and short range, and given to farmers from a single source with agro advisory in temporal dimensions.

#### Forecast Types and Farm Decision to be Taken

Steps to be followed	Single source to be nominated	Agro advisory to be given
1. Long range	IMD	Area to be cultivated, crops and technology to be selected (crop planning), input management including labour
2. Medium range	IMD	land preparation, sowing, fertilizer application, plant protection, etc.
3. Short range	IMD	Harvest, water management, plant protection, etc.

#### Priority of Communication and Farm Decisions under Integrated Weather forecast through Single Window

##### Single Window

- Long range forecast / Seasonal climate forecast → Seasonal crop plan management decisions
- Medium range forecast → Farm operations decisions
- Short range forecast → Retuning/re- modifying earlier decisions taken under medium range

#### Indigenous Traditional Knowledge (ITK) on weather forecast and their validity

- Observations over generations were taken and many have found scientifically valid that can be considered as a tool along with scientific weather forecast for taking farming decision.

#### Short range ITK

- (a) There will be heavy rain pour if the rainbow appears in the eastern sky at the time of raining. If it is in the western sky, there will be no rain
- (b) When crab comes to the bund, it may rain
- (c) Red clouds in the eastern sky, it may rain in the next day
- (d) Frogs croaking in chorus then it is followed by rain
- (e) When dragonflies, fly down (low), it may rain that there will be rainfall within a day or two.
- (f) Increased mosquito bite predicts rain
- (g) Dense fog in the early morning indicates no rain
- (h) If there is an accumulation of clouds in the South East direction in a layered form accompanied by winds blowing from the southern direction then it is claimed
- (i) If there is a swelling on the lower portion of the camel's legs then rainfall is predicted by the farmers. The swellings are probably caused due to higher relative humidity.

### Medium Range ITK

- (a) The closer circle to the moon, the nearer is the shower and vice versa
- (b) If a snail climbs certain trees, there will be no rain

### Long Range ITK

- a. If the Tahari bird (Lapwing) lays eggs on the higher portion of the lake bunds or on the top of any structure, the coming season carries heavy rainfall. If the same bird lays eggs on the lower side of the tank or on the floor of the water body structure, drought is anticipated
- b. Further, it is also believed that if a single egg is laid by the Lapwing bird, then there will be rainfall only for one month out of four months of the rainy season. If two eggs are laid then rainfall will occur for two months and similarly, four eggs indicate there will be rainfall during all the four months of the rainy season.
- c. If the clouds thunder on the first day of mid-April, there shall be no rain for 72 days
- d. If crow cries during night and fox howls during the day, then there would be severe drought
- e. If the "Billboard" (Dragonfly), which appears generally in the rainy season, are observed to swarm in a large group over a water surface (pond) then the dry weather is predicted but if they swarm over open dry lands or fields then early rainfall is predicted by the farmers.
- f. If the "Khejri" tree bears good fruit in a particular year then farmers predict good rainfall during the next rainy season and vice versa less rain is predicted in the event of a poor fruit crop.



(From page 28)

- (5) Bio-fertilizers destroy those harmful components from the soil which cause diseases in the plants. Plants can also be protected against drought and other strict conditions by using bio-fertilizers.
- (6) Bio-fertilizers are not costly and even poor farmers can make use of them.
- (7) They are environment friendly and protect the environment against pollutants.

Bio-fertilizers are one of the best modern tools for agriculture. It is a gift of our modern agricultural science. The long term use of bio-fertilizers is economical, eco-friendly, more efficient, productive and accessible to marginal and small farmers over chemical fertilizers.



## Dire Need of Adoption of Climate Smart Agricultural Practices

Anil Kumar Rohila, B. S. Ghanghas and KrishanYadav

Department of Extension Education  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Agriculture is main stay of Indian economy since 52.00 percent population is directly or indirectly dependent on agriculture and allied activities for their livelihood. With the current population growth rate of 1.58 per cent, India is predicted to have more than 1.53 billion people by the end of 2030. Whereas, natural resources such as land, water, forests, livestock, fisheries is deteriorating and degrading at a very fast rate due to unmindful agricultural intensification, imbalanced use of fertilizers, overuse and inefficient use of irrigation water and deforestation. Increasing fragmentation of holdings, input costs, inadequate marketing channels and infrastructure, long intermediation, lack of accurate and timely market information system and post-harvest losses, etc. are other major challenges. Rather, it is note worthy that about 85 per cent farmers of our country come under small and marginal farmers' category.

Agriculture in developing countries like India must undergo a significant transformation in order to meet the related challenges of achieving food security and responsiveness to climate change. Projections based on population growth and food consumption patterns indicate that agricultural production is required to increase by at least 70 percent to meet demands by 2050. Most of the estimates also indicate that climate change is likely to reduce agricultural productivity, production stability and incomes in some areas that already have high levels of food insecurity. Developing Climate Smart Agriculture is thus crucial to achieve future food security in changing climate perspective.

Climate is considered to be the core for development of agriculture. The present situation of changing climatic conditions is resulting large number of adverse effects on agriculture. Its variability remains to be a major threat in practicing sustainable agriculture among farming community particularly, small and marginal farmers. In prevailing scenario, climate smart agricultural practices (CSAP) could be the only alternative to cope up risks and uncertainties of farming by mitigating the adverse effects of climate change.

The Food and Agricultural Organization (FAO) defined Climate Smart Agriculture (CSA) in 2010. This is an approach that helps to guide actions for transformation and re-orientation of agricultural systems to effectively support development and ensure food security in a changing climate. Further, according to FAO, such approach aims to tackle three main objectives viz., sustainability of agricultural productivity and incomes, adaptation and resilience built up to climate change and reducing and/or removing greenhouse gas (GHG) emissions, wherever, possible.

The Climate Smart Agriculture (CSA) practices are those practices which lead to increased income of farmers' through enhanced agricultural productivity in a sustainable way and build resilience and capacity of agricultural and food systems to adapt or mitigate the adverse effects of the climate change and reduce the greenhouse gases (GHGs) while achieving the target of national food security.

So, it is needless and beyond doubt to mention, overcoming these challenges, the much needed CSA practices for small and marginal farmers are as under :

- Crop diversification
- Agro forestry
- No tillage
- Water harvesting
- Resource conservation technologies
- Watershed management
- Organic farming
- Protected cultivation
- Mulching
- Fisheries and aquaculture
- Integrated crop management practices like INM, IPM, etc.
- Social forestry
- Pasture management
- Kitchen gardening
- Stress tolerant HYVs
- Indigenous animal husbandry, etc.



## Disposal of Pesticide Waste

**Savita Rani and Sushil**

Pesticide Residue Laboratory  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Appropriate setting of pesticide waste disposal is an important part of responsible pesticide use. Improper disposal can lead to contamination of soil, groundwater, and surface water, causing serious liability problems for the pesticide user. Several federal and state laws regulate the safe handling and disposal of pesticide waste. Inappropriate discarding can result in fines for the pesticide applicator.

### Hazardous Waste

A waste is hazardous if it has such types of characteristics:

- **Ignitable** : wastes that is flammable or spontaneously combustible. If they have a flashpoint of less than 140°F or an alcohol content of 24% or more, they are hazardous wastes.
- **Corrosive** : wastes that can burn the skin or corrode metal. Liquids with a pH of 2 or lower or 12.5 or higher are corrosive.
- **Reactive** : wastes that are unstable and may explode or react violently with water or other materials.
- **Toxic** : wastes that contain certain heavy metals above specific concentrations, such as chromium, lead, cadmium or toxic organic chemicals.

For remaining pesticide and their safe dispose to protect people, pets and the environment, here are some guidelines from part of the FAO Pesticide Disposal Series (1999) for the safe handling and disposal of pesticides.

### Containers

Maintain containers in good condition. Prevent leaks, ruptures, and accumulation of rainwater on tops of drums.

- Keep containers closed. Use self-closing funnels when adding waste. Do not allow wastes to evaporate; this is a serious offense.
- If a container leaks, transfer waste to a new container.
- Wastes must be compatible with the container. For example, high-density plastics should be used with corrosive materials.
- Never place wastes which are reactive in the same



container, such as acids and bases.

- Empty bags should be shaken clean. They may be buried in a sanitary landfill if the operator allows.
- ◆ Empty drums, bottles, or cans must be triple or pressure-rinsed. To triple-rinse, empty the pesticide concentrate into your spray tank and drain the container in a vertical position for 30 seconds. Containers can be cleaned using pressure rinsing. This is done using a special pressure-rinsing device, which is inserted into the container. Water under pressure is used to rinse the inside of the container. The rinse water is added to the application equipment tank.

### Excess Product

Excess product is unused pesticide that you no longer need or that is no longer legal.

- Follow all disposal instructions on the pesticide label.
- You must store unwanted concentrates and ready-to-use formulation in your chemical store to make sure they are secure and that any spills will be contained.
- You will need to use a registered carrier (registered with the Environment Agency) and a licensed waste-disposal contractor.
- You (or the carrier if you use one), must fill in a 'consignment note' and pay a fee to the Environment Agency if you are moving or disposing of 'hazardous waste'.



### Pesticide-Contaminated Clothing

- Clothing contaminated by pesticides regulated as solid waste (most pesticides) can be disposed of as solid waste (trash). Clothing contaminated by pesticides regulated as hazardous waste must be disposed of as hazardous waste, if it is contaminated as a result of a spill or leak.

- If the clothing is contaminated as a result of a normal, legal application of the pesticide, then the clothing can be handled as normal solid waste.

### Spill Clean-up Material

- Material used to collect and clean up spills and leaks of pesticides must be properly managed to prevent environmental contamination.
- This material can usually be used as a pesticide, if the spill or leak is from a currently registered pesticide and the clean-up is immediate.
- Materials such as cat litter, soil, sawdust, or other absorbent material should be used to absorb liquid pesticides and water/detergent mixtures used to clean pesticide stained surfaces.
- These materials and soil contaminated in a spill, can be collected and placed in a suitable container (such as a plastic or metal bucket) and then applied as a pesticide to a site upon which that pesticide can be applied as directed on the pesticide label.

### Prospect towards regulation of pesticide waste

- ◆ Try to reduce the amount of waste you produce

If you reduce your use of pesticides, you will also reduce the amount of waste pesticide and empty containers you produce, and you will save money. You should consider the following questions:

- Do you need to use the pesticide and, if you do, can you reduce its use?
- Do you have suitable pesticides currently in stock and can you order less new stock?
- Have you chosen the most suitable pack sizes?
- Can you manage and control the use of pesticides any better?
- ◆ Think before disposing of extra pesticides and containers:
  - Never reuse empty pesticide containers. Pesticide residues can contaminate the new contents and cause serious harm.
  - Never pour pesticides down the sink, toilet, sewer, or street drain. Many municipal drinking water and wastewater treatment systems are not equipped to remove all pesticides. If pesticides reach waterways, they can harm fish, plants, and other living things.





हरियाणा

# खेती

वर्ष 51

अंक 04



वार्षिक चंदा 150/-

अप्रैल 2018

आजीवन सदस्यता 1500/-



प्रकाशन अनुभाग  
विस्तार शिक्षा निदेशालय

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार



निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. ( 2 ) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित  
© कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 51

अप्रैल 2018

अंक 04

इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
अनाज का सुरक्षित भण्डारण	जयलाल यादव एवं रमेश कुमार	1
ग्रीष्मकालीन मूंग की काश्त	राजेश कथवाल, सुलेमान मोहम्मद एवं अमित कुमार	2
आधुनिक कृषि में जैविक खेती का महत्व	हरेन्द्र, परवीन कुमार एवं कविन्द्र	4
ग्रीष्मकालीन मूंग की फसल में एकीकृत कीट प्रबन्धन	नरेन्द्र कुमार, सुरेन्द्र कुमार यादव एवं भूपेन्द्र सिंह	5
फसलों में फास्फोरस का महत्व व प्रबन्धन	दीपिका, देवराज एवं सुनीता श्योराण	6
ग्रीष्म कालीन जुताई का सूत्रकृमि प्रबंधन में महत्व	बबीता कुमारी, विनोद कुमार एवं अनिल कुमार	6
मशरूम (खुम्बी) एक स्वास्थ्यवर्धक आहार	संतोष रानी, विनिता जैन एवं मन्खन लाल मजोका	7
सब्जी उत्पादन: एक व्यावसायिक दृष्टिकोण	कुलदीप कुमार, किशोर चंद कुम्हार एवं मन्खन लाल मजोका	8
फसल रोगों का माइक्रोबियल कीट प्रबंधन	पूजा, दीपिका राठी एवं आर.एस.बेनीवाल	9
फर्टिगेशन के लाभ और आवश्यकता	नरेन्द्र कुमार, अमनदीप सिंह एवं संजय कुमार	11
खेत का पानी खेत में	नरेंद्र कुमार एवं निकिता यादव	12
अचार खराब होने के कारण एवं निवारण	संतोष रानी, विनिता जैन एवं मन्खन मजोका	18
गुड़मार की खेती	राजेश कुमार आर्य, वंदना एवं वी. के. मदान	18
बचे हुए कपड़े का सदुपयोग	पारुल गिल, पंकज गिल एवं पूनम मलिक	19
दोगुनी आय के लिए कृषक-समन्वित कृषि प्रणाली अपनाएं	नीरज पंवार, धर्मपाल मलिक एवं अशोक ढिल्लों	20
सूरजमुखी को कीटों से बचाएं	नरेन्द्र कुमार, भुपेन्द्र सिंह एवं संगीता तिवारी	20
बढ़ती उम्र की महिलाओं के स्वास्थ्य पर खानपान का प्रभाव	मीनू सिरौही एवं वीनू सांगवान	21
किशोरावस्था में शारीरिक परिवर्तन: समस्याएँ और चुनौतियाँ	रीना एवं बिमला ढांडा	23
हरी पत्तेदार सब्जियों का दैनिक भोजन में महत्व	सुमित्रा यादव एवं जितेन्द्र कुमार	24
सूत्रकृमि प्रबंधन में फसल चक्र की उपयोगिता	विनोद कुमार, बबीता कुमारी एवं के. के. वर्मा	25
Sunflower diseases and their Management	Mamta, Rajender Singh and H. S. Saharan	26
Diversification through Horticulture-Need of the Hour	Vijay, R. P. S. Dalal and Sourabh	27
Herbonanoceuticals : Traditional Medicine towards Herbal Therapeutics	Himani and Jayanti Tokas	29
Integrated Pest Management (IPM) in Okra for Quality Fruit Production	Bajrang Lal Sharma, B. R. Kamboj and Sandeep Rawal	31

स्थाई स्तम्भ : मई मास के कृषि कार्य

13

तकनीकी सलाहकार :

डॉ. आर. एस. हुड्डा  
निदेशक, विस्तार शिक्षा

सह-निदेशक ( प्रकाशन )

डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी

संपादक :

डॉ. सुषमा आनंद  
सह-निदेशक ( हिन्दी )

संकलन :

डॉ. एम. एस. ग्रेवाल  
परामर्शदाता ( मृदा विज्ञान )  
विस्तार शिक्षा निदेशालय

सुनीता सांगवान

सम्पादक अंग्रेजी

प्रकाशन अनुभाग

आवरण एवं सज्जा:

राजेश कुमार एवं कुलदीप कुमार

**लेखकों से अनुरोध :** हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। टाईपिंग के लिए कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं [haryanakhethihau@gmail.com](mailto:haryanakhethihau@gmail.com)



# अनाज का सुरक्षित भण्डारण

जयलाल यादव एवं रमेश कुमार

कृषि विज्ञान केन्द्र (महेन्द्रगढ़)

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फसल की कटाई उपरान्त अनाज को या तो मण्डियों में बेचने हेतु ले जाया जाता है या गोदामों में भण्डारण के लिए भेज दिया जाता है। इसके अतिरिक्त बहुत-सा अनाज घरों में ही परिवार के प्रयोग या अगले वर्ष बीज के रूप में प्रयोग के लिए भण्डारण कर लिया जाता है। कभी-कभी बहुत-सा अनाज किसान इसलिए भी भण्डारित कर लेते हैं ताकि कुछ समय पश्चात बाज़ार में अच्छे भाव पर बेच कर अधिक लाभ कमा पाएं। इन सभी परिस्थितियों में अनाज के विभिन्न कारणों से नष्ट होने की सम्भावना बनी रहती है। भण्डारित अनाज (घरों में या गोदामों में) को सबसे अधिक हानि विभिन्न प्रकार के कीटों द्वारा ही पहुँचाई जाती है जिनमें से चावल का घुन, खपरा, छोटी सुरसरी, अनाज का पतंगा या मोथ, चने का ढोरा आदि मुख्य हैं। ये कीट अनाज के दानों को खाकर खोखला कर देते हैं जिससे अनाज की पौष्टिकता में भारी कमी आती है और भ्रूण नष्ट हो जाने से इसे बीज के लिए भी प्रयोग में नहीं लाया जा सकता। चूहे भी कई स्थानों पर बहुत अधिक मात्रा में हानि पहुँचाते हैं। कीट ग्रसित अनाज में कीड़ों के मलमूत्र, अण्डों, मरे हुए कीट और अधिक नमी के कारण फफूंद भी पैदा हो जाती है, परिणामस्वरूप अनाज खाने व पशुओं को खिलाने योग्य भी नहीं रहता है। इसलिए अनाज को भण्डारण से पहले/भण्डारण के दौरान कीटों के आक्रमण से बचाने के लिए आरम्भ से ही कदम उठाने चाहिए जिन्हें विस्तार से यहाँ दिया जा रहा है।

## 1. भण्डारण से पहले कीट आक्रमण से बचाव के उपाय

यदि गोदाम कच्चा (कोठी/कुठला) या मिट्टी का बना हो तो इसे खाली कर भली-भाँति साफ करें व हर प्रकार के सुराख/छेद/झिर्रियों आदि को गीली चिकनी मिट्टी से अच्छी प्रकार बन्द कर दें ताकि कीटों को छिपने का स्थान उनलब्ध न हो पाए। जहाँ तक सम्भव हो पुराने भण्डारित अनाज के साथ नया अनाज न रखें। यदि कोठियों/गोदामों/टंकी में पहले ही अनाज पड़ा हो तो अनाज को निकाल कर ऐसे स्थान को भली-भाँति साफ कर लें। गोदाम व कोठी की दीवारों, फर्श, छत, देहली, कोनों आदि को ठीक से साफ कर लें और जहाँ कोई दरार, सुराख झिर्री आदि हो तो उसे सीमेन्ट से बन्द कर दें। ऐसे स्थानों से व आसपास से निकले कूड़ा-करकट आदि को दूर मिट्टी में दबा दें क्योंकि इसमें पुराने अनाज में लगे कीटों के विभिन्न प्रकार के अवशेष होने की सम्भावना होती है जो नये भण्डारण पर भी आक्रमण कर सकते हैं। यदि टंकी में पुराना अनाज बचा हो तो उसे खाली कर तेज़ धूप में रखें ताकि इसमें जोड़ आदि जैसे छिपने के स्थान से कीड़े निकल जाएँ या मारे जाएँ।

प्रायः ऐसा भी होता है कि जब नया अनाज भण्डारित करना होता है तो पुराने अनाज को मण्डी आदि में बेचने हेतु भेज दिया जाता है जिसमें कुछ न कुछ मात्रा में कीटों का आक्रमण भी हुआ होता है। इस काम के लिए

आमतौर पर बैलगाड़ियाँ, ट्रैक्टर ट्राली, ट्रक, रेल बोगियाँ या कोई अन्य चौपहिया वाहन प्रयोग में लाया जाता है। ऐसी स्थिति में कुछ कीट वाहनों में ही पड़े रह जाते हैं। बाद में जब नये अनाज को भी इन्हीं वाहनों में भर कर गोदामों में ले जाया जाता है तो ये कीट उसमें शरण ले लेते हैं और आक्रमण का स्रोत बन जाते हैं। इसलिए जब भी नए अनाज को जिस भी वाहन में भरें, उस वाहन को पहले अच्छी प्रकार साफ कर लें।

- यदि अनाज का भण्डारण बोरियों में करना हो तो यथा सम्भव नई बोरियाँ ही प्रयोग में लाएं। यदी पुरानी बोरियों को ही प्रयोग में लाना हो तो उन्हें पहले 0.01 प्रतिशत फेनवलरेट 20 ई.सी. (एक भाग कीटनाशक व 2000 भाग पानी) या साईप्रमेथ्रिन 25 ई.सी. (एक भाग कीटनाशक व 2500 भाग पानी) या 0.1 प्रतिशत मैलाथियान 50 ई.सी. (एक भाग कीटनाशक व 500 भाग पानी) के घोल में 10-15 मिनट तक भिगोएं व इन्हें छाया में भली-भाँति सुखाने के पश्चात् ही इनमें नया अनाज भरें।
- अनाज भण्डारण करने से पहले गोदाम, कोठियाँ आदि को कीट रहित कर लेना चाहिए। इसके लिए 0.5 प्रतिशत मैलाथियान 50 ई.सी. (एक भाग कीटनाशक व 100 भाग पानी) का छिड़काव भण्डार के फर्श, दीवारों व छत पर अच्छी प्रकार से करें। इस काम के लिए एल्यूमिनियम फास्फाईड की 7 से 10 गोलियाँ (तीन ग्राम प्रति गोली) का प्रति 1000 घन फुट (28 घन मीटर) की दर से प्रधुमन भी किया जा सकता है।
- यूँ तो सरकार की ओर से किसी भी खाद्य पदार्थ में किसी भी प्रकार का कीटनाशक मिलाने पर निरोध है परन्तु बीज हेतु भण्डारित अनाज को कीट ग्रसित होने से बचाने के लिए कीटनाशक का प्रयोग किया जा सकता है। इसके लिए 250 ग्राम मैलाथियान 5 प्रतिशत धूड़ा प्रति क्विंटल अनाज की दर से मिलाकर बीज हेतु भण्डारण करें व ऐसे अनाज को किसी भी अवस्था में खाने या पशुओं को चारे के रूप में खिलाने के काम में न लें।
- दालों वाले अनाज जैसे मूँग, चना आदि पर प्रायः ढोरा नामक कीट का आक्रमण हो जाता है। ऐसे अनाज को घरों में भी छोटी मात्रा में भण्डारित किया जाता है। इन्हें कीटों से सुरक्षित रखने के लिए अनाज के ऊपर व नीचे कोठियों में या भण्डारित स्थानों पर 7 सें.मी. (3 इंच) मोटी रेत की तह बनाएं।

भण्डारित अनाज पर कीटों का आक्रमण अधिकतम तभी होता है जब वातावरण में नमी अधिक हो जाती है। ऐसी स्थिति प्रायः मौनसून के दौरान पैदा होता है। इसलिए जुलाई माह से अक्टूबर माह तक 15 दिनों के अन्तराल पर समय-समय पर देखते रहना चाहिए ताकि कीड़ों के आक्रमण का समय पर पता चल जाए और समय पर नियन्त्रण के कदम उठा लिए जाएँ।

## 2. अनाज में कीट आक्रमण होने पर उपचार की विधियाँ

जैसा पहले बताया गया है कि भण्डारित अनाज में वर्षा का मौसम आरम्भ होने के 3-4 सप्ताह पश्चात् कीड़ों का आक्रमण होने की सम्भावना

होती है। ऐसे मौसम में अनाज में नमी की मात्रा 10 प्रतिशत से अधिक हो जाती है जो कीटों के आक्रमण के लिए उपयुक्त हो जाती है। ऐसी स्थिति में निम्नलिखित किसी एक प्रधुमन करने वाली कीटनाशक से कीटों को नष्ट किया जा सकता है।

- एल्यूमिनियम फास्फाइड की एक गोली (3 ग्राम) को एक टन (10 क्विंटल) अनाज में या 7 से 10 गोलियाँ प्रति 1000 घन फुट (28 घन मीटर) की दर से अनाज की कोठियाँ, बिन या गोदामों में प्रयोग करें। ऐसी गोलियाँ डालने के बाद भण्डार को 7 दिन तक पूर्ण रूप से हवा बन्द रखें।
- आजकल गोलियों के अतिरिक्त यह कीटनाशक पाऊंडर के रूप (पाऊच/सैशे) में भी विभिन्न मात्राओं (1.5, 5, 10 व 34 ग्राम) में उपलब्ध है। चूँकि गोलियों व पाऊंडर दोनों में ही एल्यूमिनियम फास्फाइड की मात्रा 56 प्रतिशत ही होती है, इसलिए पाऊंडर वाली कीटनाशक भी इसी दर से प्रयोग में लाई जा सकती है। भण्डार के माप के अनुसार कीटनाशक को इसी अनुपात में कम या अधिक किया जाना चाहिए।
- इसके अतिरिक्त एक लीटर ई.डी.सी.टी. मिश्रण (किलोपेट्रा) 10 क्विंटल अनाज के लिए या 35 लीटर मिश्रण 100 घन मीटर स्थान में प्रयोग करने से भी गोदामों में कीड़ों को नष्ट किया जा सकता है। इस मिश्रण को प्रयोग करने के उपरान्त भण्डार को कम से कम 4 दिन तक हवा बन्द रखें।

#### महत्वपूर्ण सावधानियाँ

- भण्डारण से पहले अनाज को भली-भांति सुखा लें ताकि नमी की मात्रा 10 प्रतिशत से कम रह जाए। ऐसा सुनिश्चित करने के लिए अनाज के दाने को दाँतों के बीच में रखकर दबाएं यदि 'कड़क' की आवाज के साथ दाना टूटे तो समझना चाहिए कि नमी 10 प्रतिशत से कम है।
- प्रधुमन करने वाली कीटनाशक का प्रयोग किसी विशेषज्ञ की देखरेख में ही करें।
- प्रधुमन करने वाली कीटनाशक केवल उन्हीं स्थानों पर ही प्रयोग करें जिन्हें भली-भांति हवा बन्द किया जा सके।
- ऐसा करने के लिए गोदाम/कोठी/टंकी आदि को वायुरोधी बनाना अत्यन्त आवश्यक है। सभी प्रकार की खिड़कियों, दरवाजों, रोशनदान व अन्य दरारों/झिर्रियों आदि को गीली चिकनी मिट्टी के लेप से बन्द कर दें।
- बोरियों में भण्डारित अनाज को गोदाम की दीवारों से कुछ दूरी पर ही रखें। इसके अतिरिक्त बोरियों को सीधे फर्श पर न रख लकड़ी के बालों आदि पर रखें। इससे अनाज में अधिक नमी विशेषकर मौनसून के मौसम में जमा नहीं हो पाएगी।



## ग्रीष्मकालीन मूंग की काशत

राजेश कथवाल<sup>1</sup>, सुलेमान मोहम्मद<sup>2</sup> एवं अमित कुमार

सस्य विज्ञान

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा प्रदेश में दलहनी फसलों का उत्पादन कम होने का मुख्य कारण इन्हें कम उपजाऊ भूमि पर बोना है। फिर भी वर्तमान किस्मों के साथ यदि खेती की जाए तो उपज को बढ़ाया जा सकता है। एक वयस्क पुरुष के लिए 60 ग्राम और एक वयस्क महिला के लिए 55 ग्राम दाल प्रति दिन की आवश्यकता होती है किंतु भारत में प्रति व्यक्ति दाल की उपलब्धता 42 ग्राम प्रति दिन है। दालें वनस्पति प्रोटीन का स्रोत होती हैं। प्रोटीन की कमी से प्रोटीन-ऊर्जा कुपोषण हो जाता है। इसके अलावा दालें 72 से 350 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष के हिसाब से वायुमण्डल की नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करती हैं, जिससे भूमि की उपजाऊ क्षमता बढ़ती है।

ग्रीष्मकालीन मूंग की काशत केवल सिंचित क्षेत्रों में ही की गई है। यह एक महत्वपूर्ण दलहनी फसल है। इसके दानों का इस्तेमाल दाल के रूप में या आटे के रूप में किया जाता है और इसके तूड़ी और भूसे को चारे के रूप में पशुओं को खिलाया जाता है। दानों को अंकुरित करके पूरा ही खाया जाता है। इस दाल का उत्पादन मुख्य रूप से मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, पंजाब, आंध्रप्रदेश, राजस्थान, कर्नाटक व तमिलनाडू में किया जाता है। हरियाणा प्रदेश में ग्रीष्मकालीन मूंग का क्षेत्र वर्ष 2012-13 में 123 हजार हेक्टेयर आंका गया था व औसत पैदावार 800 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर कुल उत्पादन 98.4 हजार टन था।

#### किस्में

**एम एच-421** : इस किस्म को भी राज्य के सभी क्षेत्रों में खरीफ व ग्रीष्मकालीन मौसम में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है क्योंकि यह किस्म बहुत कम समय यानि 60 दिन में ही पक कर तैयार हो जाती है। इसकी फलियां झड़ती नहीं हैं। यह पीले पत्ते वाले मोजैक वायरस रोग, पत्तों के धब्बों का रोग व जलयुक्त झुलसा रोग (वेब ब्लाइट) रोग के लिए अवरोधी है। इसका दाना आकर्षक, चमकीला व हरा तथा मध्यम आकार का होता है जिसकी औसत पैदावार 4-4.8 क्विंटल प्रति एकड़ ग्रीष्मकाल में व 5.0-6.4 क्विंटल प्रति एकड़ खरीफ में आंकी गई है।

**भूमि व खेत की तैयारी** : इस फसल के लिए अच्छे जल-निकास वाली दोमट से हल्की-दोमट मिट्टी अधिक उपयुक्त है। दो जुताइयां करें व हर जुताई के बाद सुहागा लगाकर खेत को अच्छी तरह तैयार करें। खेत समतल हो व ढेले तथा घास-फूस नहीं होने चाहिए।

**बिजाई का समय**: ग्रीष्मकालीन मूंग की बिजाई का उत्तम समय पूरा मार्च है। इसके बाद इसकी बिजाई न करें वरना मानसून के आने से पहले फसल की कटाई नहीं हो सकेगी और मानसून की वर्षा से इसके नष्ट हो जाने का डर रहेगा। बिजाई के लिए 10 से 12 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ डालें तथा कतारों में 20-25 सें.मी. का फासला रखें।

**राईजोबियम टीके से उपचार** : एक टीका (50 मि.ली.) प्रति एकड़ बीज के लिए पर्याप्त है। एक खाली बाल्टी में 2 कप (200 मि.ली.) पानी

<sup>1,2</sup> क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र (बागवानी), बूडिया, यमुनानगर

में 60 ग्राम गुड़ घोलिए। एक एकड़ के इस बीज पर गुड़ का घोल डालें और ऊपर से राईजोबियम का टीका छिड़कें। बीजों को हाथ से अच्छी तरह मिला लें तथा बिजाई से पहले बीज को छाया से सुखा लें।

**बीज की मात्रा व बिजाई का तरीका :** 6-8 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ पर्याप्त रहता है। फासले का ध्यान रखना अनिवार्य है। इस फसल की पंक्तियों में 30 व 45 सेंमी. (क्रमशः सिंचित व असिंचित क्षेत्र के लिए) दूरी रखकर पोरा अथवा केरा विधि से बिजाई करें। अरहर के साथ कतारों के बीच में मूंग की फसल सफलतापूर्वक ली जा सकती है।

**बिरला करना :** यदि खेत में पौधे ज्यादा हों तो पौधे से पौधे का अन्तर 10 सें.मी. रखकर छंटाई करें।

**तालिका 1 : ग्रीष्मकालीन मूंग में खाद का नाम, डालने की मात्रा व समय**

खाद का नाम	मात्रा	देने का समय
नाइट्रोजन	शुद्ध नाइट्रोजन 6-8 किग्रा. या 13-17.5 किग्रा यूरिया	बिजाई के समय
फास्फोरस	शुद्ध फास्फोरस 16 कि.ग्रा. या 100 कि.ग्रा सिंगल सुपर फास्फोरस	आरंभिक मात्रा के रूप में प्रति एकड़ के हिसाब से खेत में पोरे।

**निराई तथा गोड़ाई :** खरपतवार को रोकने के लिए दो बार निराई व गोड़ाई करें। पहली निराई 20-25 दिनों बाद तथा दूसरी निराई 30-35 दिनों के बाद करें।

**तालिका 3 : ग्रीष्मकालीन मूंग में बीमारियां व रोकथाम**

बीमारी का नाम	नुकसान	रोकथाम
पत्तों के धब्बों का रोग	कोनदार व भूरे लाल रंग के धब्बे, जो बीच में धूसर या भूरे रंग के और सिरों पर लाल-जामुनी रंग के होते हैं, पत्तों, तनों व फलियों पर दिखाई देते हैं।	ब्लाइटॉक्स - 50 या इंडोफिल एम-45 की 600-800 ग्राम मात्रा से 200 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।
पत्तों का जीवाणु रोग	पत्तों की सतह के नीचे छोटे-छोटे जलसिक्त बिंदु नज़र आते हैं जिनके आसपास के तन्तु गल जाते हैं।	रोकथाम हेतु फसल पर कॉपर आक्सीक्लोराइड की 600-800 ग्राम मात्रा को 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।
जड़ गलन	रोगी पौधे पीले व सिकुड़े दिखाई देते हैं। जड़ें गलने लगती हैं। रोग की अधिकता होने पर सारा पौधा नष्ट हो जाता है।	रोकथाम के लिए बिजाई से पहले 4 ग्राम थाइरम प्रति किलो बीज की दर से सूखा बीजोपचार करें। तीन साल का फसल-चक्र अपनाएं।
पीला मोजैक	रोग से प्रभावित पौधों के पत्ते पीले व कहीं-कहीं से हरे नज़र आते हैं। रोग की अधिकता हो जाने पर सारे पत्ते पीले पड़ जाते हैं। पैदावार बहुत कम मिलती है। अम्बाला और करनाल के लिए रोगरोधी किस्में ही उगाएं। सफेद मक्खी इस रोग को फैलाती है।	सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए खेत में बिजाई के 20-25 दिनों के बाद 10-15 दिनों के अन्तर से 250 मि.ली. डाइमैथोएट 30 ई. सी. (रोगोर) या 250 मि.ली. आक्सीडैमेटान मिथाईल 25 ई.सी. (मैटासिस्टॉक्स) या 250 मि.ली. फार्मेथियान 25 ई.सी. (एंथियो) या 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। रोगी पौधों को जड़ से उखाड़ कर नष्ट कर दें। फसल में खरपतवारों को समय पर निकाल दें।

**फसल चक्र :** यदि ग्रीष्मकालीन मूंग को फसल चक्र में अपनाया जाये तो अन्न की पैदावार बढ़ाने में यह महत्वपूर्ण हो सकती है। चूंकि मूंग कम अवधि की फसल है। इसके उगाने में खर्च कम आता है व साथ ही जमीन की उपजाऊ शक्ति भी बढ़ती है। इसलिए फसल-चक्र में इनका महत्वपूर्ण

**सिंचाई :** पलेवा के बाद पहली सिंचाई बिजाई के 20 से 22 दिन के बाद करें तथा इसके बाद की सिंचाइयां 10-15 दिन बाद आवश्यकतानुसार करें।

**तालिका 2 : हानिकारक कीड़े**

कीट का नाम	नुकसान	समाधान
बालों वाली	इस कीट की सूण्डियां छोटी अवस्था में होती हैं तो ये इकट्ठी रहकर पत्तों की निचली सतह पर नुकसान करती हैं तथा पत्तों को छलनी कर देती हैं। ये इधर-उधर अकेली घूमती रहती हैं तथा पत्तों को खाती रहती हैं।	लाईट ट्रैप का इस्तेमाल करें बड़ी सूंडियों की रोकथाम के लिए 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस (मोनोसिल/ न्यूवाक्रान) 36 एस. एल. या 200 मि.ली. डाईक्लोरेवास (न्यूवान) 76 ई.सी. या 500 मि.ली. क्विनलफास (एकालक्स) 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।
पत्ता छेदक (फली बीटल)	-	उपरोक्त समाधान
हरा तेला	-	400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई. सी. या 250 मि.ली. डाइमैथोएट (रोगोर) 30 ई.सी. या 250 मि.ली. आक्सीडैमेटान मिथाईल (मैटासिस्टॉक्स) 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर 2-3 हफ्ते के अन्तर पर प्रति एकड़ छिड़काव करें।
सफेद मक्खी	-	उपरोक्त समाधान

स्थान है। साथ ही जहां फलों के नए बाग लगाए गए हों वहां एक अन्तःफसल के रूप में यह किसान को आर्थिक लाभ भी पहुंचाती है।





# आधुनिक कृषि में जैविक खेती का महत्व

हरेन्द्र, परवीन कुमार<sup>1</sup> एवं कविन्द्र

सस्य विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

## जैविक खेती क्या है?

जैविक खेती कृषि का वह तरीका है, जिसमें पर्यावरण के प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखते हुए भूमि, जल एवं वायु को प्रदूषित किए बिना लंबे समय तक उत्पादन किया जा सके, इस प्रकार खेती में रसायनों का प्रयोग कम से कम एवं आवश्यकतानुसार किया जाता है।

**जैविक खेती का परिचय :** पिछले समय में हमने अधिक से अधिक कृषि उत्पादन प्राप्त करने के लिए ज्यादा रासायनिक खादों व कीटनाशकों का प्रयोग किया, इन रसायनों से हमें कृषि उत्पादन के क्षेत्र में सफलता मिली, परंतु अब इन रसायनों का दुष्प्रभाव मनुष्य के जीवन व मिट्टी पर दिखने लगा है। एक तरफ इन रसायनों से मनुष्य के जीवन में अनेक प्रकार की बीमारियां फैल रही हैं और दूसरी तरफ मिट्टी की उर्वरक शक्ति प्रभावित हो रही है इसके साथ-साथ वातावरण भी प्रदूषित हो रहा है।

हम भारत की बात करें तो आज़ादी से पहले जो खेती की जाती थी वह जैविक खेती ही थी, जिसमें रसायनों के बिना फसल उगाते थे, खाद के रूप में गोबर का उपयोग किया जाता था लेकिन भारत को कृषि उत्पादन के मामले में आत्मनिर्भर बनाने के लिए बहुत ज्यादा रसायनों, उर्वरक और कीटनाशकों का प्रयोग करने लगे। जिसके कारण जैविक व अजैविक पदार्थों में संतुलन बिगड़ता जा रहा है।

इस समय मिट्टी की उर्वरक शक्ति तथा वातावरण को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यकता महसूस होने लगी है कि रासायनिक खादों व कीटनाशकों का प्रयोग कम से कम करें, जैविक खाद व जैविक दवाओं का अधिक से अधिक प्रयोग किया जाए। जिसके कारण मिट्टी की उर्वरकता व मनुष्य का स्वास्थ्य और वातावरण अच्छा रहे। इसलिए जैविक खेती की जाए।

## जैविक खेती के उद्देश्य:

1. रासायनिक उर्वरकों का उपयोग न हो या कम से कम हो और इसके स्थान पर जैविक खादों का उपयोग अधिक से अधिक किया जाए।
2. पर्यावरण संरक्षण एवं पर्यावरण संतुलन को बनाए रखना।
3. जैविक खादों को लाभकारी बनाना एवं किसानों के आर्थिक स्तर में सुधार लाना।
4. मानव स्वास्थ्य को बढ़ावा देने के लिए सुरक्षित कृषि उत्पादों का उत्पादन करना।
5. कार्बनिक खादों एवं जीवाणु खादों का प्रयोग।
6. मृदा एवं जल का संरक्षण करते हुए कृषि उत्पादन में वृद्धि करना।

## जैविक खेती का महत्व

1. जैविक खेती से भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है तथा उर्वरक शक्ति ज्यादा समय तक खेतों में बनी रहती है।
2. प्रदूषण रहित खेती/जैविक खेती में रसायनों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
3. खेतों में पशुओं का बहुत ज्यादा महत्व है क्योंकि हम पशुओं का गोबर खाद में प्रयोग करते हैं।
4. कीटनाशकों का प्रयोग न होने से कृषक मित्र कीट सुरक्षित रहते हैं और सूक्ष्म जीवों की वृद्धि होती है।
5. जैविक खेती करने में कम लागत आती है और अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

**जैविक खेती का आर्थिक आधार :** अगर हम जैविक कृषि को आर्थिक आधार से देखते हैं तो शुरूआत के 3-4 साल में उत्पादन कम होता है और किसान को नुकसान उठाना पड़ता है। इसका कारण यह है कि रासायनिक खेती में रसायन की फसल की आपूर्ति को जल्दी पूरा कर देते हैं और वह फसलों को आसानी से मिल भी जाते हैं, परन्तु जैविक खेती में गोबर और अन्य जैव खाद को पोषक तत्व धीरे-धीरे उपलब्ध होते हैं, जैविक खेती में 3-4 वर्ष के बाद उत्पादन रसायन खेती से अधिक हो जाता है। जैविक खेती से किसान ज्यादा आमदनी कमा सकता है। आधुनिक भारत में बढ़ती जैविक उत्पादन की मांग जैविक खेती को बढ़ावा दे रही है। इससे कृषि योग्य भूमि में भी सुधार होता है, और मनुष्य की सेहत पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

**जैविक खेती के मूलभूत सिद्धांत :** पहले की जैविक खेती और आज की जैविक खेती में बहुत अंतर है। आज के सिद्धांत के अनुसार खेत की बुवाई, जल प्रबंधन, खाद के प्रबंध से लेकर कृषि की उपज अंतिम स्तर तक पहुंचाना और उसके साथ-साथ जलवायु व मृदा और उसमें उपस्थित लाभकारी जीवों में सामंजस्य भी स्थापित करना है।

## जैविक खेती करते समय मुख्य बातों को ध्यान में रखते हुए :-

1. जैविक खेती में मिट्टी को एक जीवित स्रोत माना जाता है, इसलिए मिट्टी में उपस्थित सूक्ष्म जीवाणु और वायुमंडल में उपस्थित जीवों में सामंजस्य तथा उनके स्वास्थ्य का ध्यान रखना बहुत ज़रूरी है।
2. जैविक खेती में रसायनों पर प्रतिबंध लगाना बहुत ज़रूरी है, रसायनों की जगह हम जैविक खादों का प्रयोग करते हैं जिसके कारण पर्यावरण प्रदूषित नहीं होता। इसके साथ-साथ जैविक तथा अजैविक पदार्थों का संतुलन बना रहता है।
3. हम जानते हैं कि मिट्टी में बहुत लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु पाए जाते हैं, जो किसानों के मित्र होते हैं। जैविक खेती के द्वारा हम उन सूक्ष्म जीवाणुओं को बिना नुकसान किए उसके द्वारा अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।
4. जैविक खेती करते समय हमें उन सब बातों का ध्यान रखना चाहिए, कि पूरी प्रक्रिया लाभकारी हो और पर्यावरण व स्वास्थ्य के लिए हानिकारक न हो।

(शेष पृष्ठ 05 पर)

<sup>1</sup>कृषि अर्थशास्त्र विभाग, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार।

# ग्रीष्मकालीन मूँग की फसल में एकीकृत कीट प्रबन्धन

नरेन्द्र कुमार<sup>1</sup>, सुरेन्द्र कुमार यादव एवं भूपेन्द्र सिंह

कीट विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

दालें हमारे भोजन का मुख्य हिस्सा होने के साथ-साथ हमारे शरीर को उपयुक्त प्रोटीन मुहैया करवाने का मुख्य स्रोत हैं। दलहनी फसलों में मूँग हमारे प्रदेश की सबसे महत्वपूर्ण फसल है, जिसकी काशत खरीफ मौसम के अलावा ग्रीष्म ऋतु के मार्च माह में सिंचित क्षेत्रों में की जाती है। जिससे किसी दूसरी फसल को प्रभावित किए बिना खाली पड़े खेतों का सदुपयोग होने के साथ दलहनी फसलों के अंतर्गत क्षेत्रफल में भी वृद्धि होती है। इसकी पैदावार उपजाऊ क्षमता से बहुत कम होने के पीछे विभिन्न कारण जिम्मेदार हैं, उनमें से प्रमुख कारण फसल पर कीटों का प्रकोप है। इसके अलावा अन्य फसल न होने की वजह से दूसरी फसलों के कीट भी कई बार नुकसान पहुँचाते हैं। हानिकारक कीटों की रोकथाम करके ग्रीष्मकालीन ऋतु में भी मूँग की ज्यादा पैदावार ली जा सकती है।

**1. चुरड़ा/श्रिप्स :** इस कीट के प्रौढ़ व बच्चे बहुत छोटे लगभग एक मि.मी. लम्बे चमकीले शरीर वाले गहरे भूरे रंग के होते हैं। श्रिप्स फूल में पाये जाते हैं, फूल को कुरेदकर निकलने वाले रस को पीते हैं, जिससे फूल खिलने से पहले ही गिर जाते हैं। यदि ऐसा कोई फूल खिल भी जाता है तो फली कुरूप व दाने सिकुड़े हुए व छोटे बनते हैं। बढ़वार रुकने से पौधा झाड़ीनुमा व गहरे हरे रंग का नज़र आता है। ग्रीष्मकालीन मूँग में सबसे ज्यादा नुकसान इसी कीट से होता है। अत्यधिक प्रकोप की अवस्था में शत-प्रतिशत पैदावार का नुकसान भी हो सकता है।

**2. हरा तेला :** इस कीट के शिशु व प्रौढ़ छोटे-2 पीलापन लिए हरे रंग के होते हैं। ये बड़े चंचल व फुर्तीले होते हैं। थोड़ा छेड़ने पर बच्चे तिरछे चलते हैं तथा प्रौढ़ उड़ जाते हैं। यह कीट पत्तियों की निचली सतह से रस चूसते हैं व मुँह से ज़हरीला पदार्थ छोड़कर भी नुकसान पहुँचाते हैं। परिणामस्वरूप पत्ती के किनारे नीचे की ओर मुड़ जाते हैं। अत्यधिक प्रकोप होने पर पत्ते पीले व जंगनुमा लाल हो जाते हैं व सूखकर गिर जाते हैं।

**3. सफेद मक्खी :** इस कीट के प्रौढ़ मच्छर के आकार के तथा सफेद पंख वाले होते हैं। यह तीन प्रकार से पौधों को नुकसान पहुँचाती है। पहले इसके शिशु व प्रौढ़ पत्तों का रस चूसकर फसल को कमज़ोर कर देते हैं, जिससे बढ़वार रुक जाती है। दूसरे इसके द्वारा छोड़े गए चिपचिपे पदार्थ से पत्तों की ऊपरी सतह पर काली फफूँद लग जाती है, जिससे पौधों की भोजन बनाने की क्षमता पर प्रभाव पड़ता है और परिणामस्वरूप उत्पादन घट जाता है। तीसरा यह मक्खी एक पौधे से दूसरे पौधे तक विषाणु रोग (पीला मोजैक) फैलाती है। फलस्वरूप पौधे को फलियां बहुत कम, टेढ़ी-मेढ़ी और पीले रंग की लगती हैं।

**4. पत्ता छेदक (फली बीटल) :** यह कीट अप्रैल से सितम्बर तक मूँग व उड़द को नुकसान पहुँचाता है। इसका प्रकोप छोटे पौधों पर ज्यादा होता है। यह पत्तों को काटकर छोटे-छोटे सुराख कर देता है। जिससे पौधे की भोजन बनाने की क्षमता कम हो जाती है। अधिक प्रकोप से पत्तों को छलनी-2 कर देता है। यह कीट सुबह व सांयकाल अधिक सक्रिय रहता है। दोपहर के समय तापमान बढ़ने पर यह भूमि में छिप जाता है।

## एकीकृत कीट प्रबन्धन

- संतुलित खाद प्रयोग व समय पर सिंचाई करें तथा कीटों को आश्रय देने वाले खरपतवारों को नष्ट कर दें।
- सूण्डियों के प्राकृतिक शत्रु पक्षियों जैसे मैना, कौवा, बगुले आदि को आश्रय देने के लिए खेत में बांस या लकड़ी की 'T' आकार की डण्डियां 8 से 10 प्रति एकड़ लगाने से कीट प्रकोप कम करने में सहायता मिलती है।
- चुरड़ा, सफेद मक्खी व हरा तेला की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 250 मि.ली. डायमेटोएट (रोगोर) 30 ई.सी. या 250 मि.ली. आक्सीडेमेटान मिथाइल (मैटासिस्टॉक्स) 25 ई.सी. प्रति एकड़ 250 लीटर पानी मिलाकर हस्तचालित यंत्र से 2-3 सप्ताह के अंतर पर छिड़काव करें।
- फली बीटल व अन्य सूण्डियों की रोकथाम के लिए 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफास (मोनोसिल/न्यूवाक्रान) 36 एस.एल. या 200 मि.ली. डाईक्लोरवास (न्यूवान) 76 ई.सी. या 500 मि.ली. क्विनलफास (एकालक्स) 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।
- पीला मोजैक बीमारी की प्रतिरोधक किस्म एम एच 421 की बिजाई करें। रोगी पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें तथा सफेद मक्खी के लिए कीटनाशक दवा का छिड़काव करें।
- कटाई के बाद खेत की गहरी जुताई करें ताकि सूण्डी के प्यूपे बाहर आ जाएं और पक्षियों द्वारा व अन्य कारणों से नष्ट हो जाएं।



(पृष्ठ 04 का शेष)

## जैविक खेती के मार्ग में बाधाएं :

जब मृदा को हम जैविक खेती से रासायनिक खेती में बदलते हैं तो उस बदलाव में बहुत ज्यादा समय नहीं लगता, लेकिन रासायनिक को जैविक खेती में बदलने में बहुत समय लग जाता है, जैविक खेती शुरू करते समय उपज में कुछ कमी नज़र आती है, जो कि किसानों के लिए लाभकारी नहीं होती। हमें ऐसी स्थिति में किसानों को इसके लिए प्रोत्साहन देना ज़रूरी है। खेती में रसायनों का ज्यादा प्रयोग करने से मृदा में उपस्थित सूक्ष्म जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। उनके निर्माण में हमें 3-4 वर्ष लग जाते हैं।



<sup>1</sup>जिला विस्तार विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, सदलपुर

# फसलों में फास्फोरस का महत्व व प्रबन्धन

दीपिका, देवराज एवं सुनीता श्योराण

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फास्फोरस एक महत्वपूर्ण पोषक तत्व है जो फसलों की अधिक उपज के लिए बहुत ज़रूरी है। यह पौधों की बहुत सी जैव प्रक्रियाओं में एक महत्वपूर्ण घटक है। यह कोशिकाओं का एक अनिवार्य तत्व है जो किसी अन्य तत्व से प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता। फास्फोरस विशेष रूप से पौधों में ऊर्जा के एक स्थान से दूसरे स्थान पर हस्तांतरण में भूमिका निभाता है व पौधों में प्रकाश संश्लेषण के लिए आवश्यक है। यह डी.एन.ए. व आर.एन.ए. का प्रमुख घटक है। फास्फोरस पौधों की जड़ विकास व अच्छे फुटाव के लिए अति आवश्यक है। इसके अतिरिक्त यह तने की मजबूती, बेहतर फूल बनने व बीज के विकास के लिए भी ज़रूरी है। फास्फोरस पौधों में रोग प्रतिरोध क्षमता को भी बढ़ाता है। इसकी कमी से पौधे कमजोर हो जाते हैं तथा कम फुटाव होता है। सामान्यतः फास्फोरस की कमी प्रारंभिक वृद्धि के दौरान (40-50 दिन) में दिखाई देने लगती है। पौधों की वृद्धि रुक जाती है। इसकी कमी के लक्षण पुरानी पत्तियों पर पहले दिखाई देते हैं। पौधे गहरे हरे रंग के दिखाई देते हैं, पत्तियों का रंग गहरे हरे रंग के अतिरिक्त बैंगनी रंग के भी दिखाई देने लगते हैं। बैंगनी रंग के धब्बे तने पर भी दिखाई देने लगते हैं। इसकी कमी से फूल व फल भी कम बनता है। फास्फोरस की कमी को देसी खाद व फास्फोरस के रासायनिक उर्वरकों द्वारा पूरा किया जा सकता है। फास्फोरस के प्रमुख उर्वरक डी.ए.पी. व सिंगल सुपर फास्फेट हैं। इन उर्वरकों की सिफारिश की गई मात्रा बिजाई के वक्त डालनी चाहिए। इन उर्वरकों की दक्षता बहुत कम है (20-25 प्रतिशत), इसलिए इनकी दक्षता पर विशेष ध्यान देना चाहिए। फास्फोरस की दक्षता को निम्नलिखित तरीके से बढ़ाया जा सकता है :-

1. फास्फेट निर्धारण को रोकने के लिए फास्फेट उर्वरक का मिट्टी के साथ संपर्क कम करना होगा।
2. पानी में घुलनशील फास्फेटिक उर्वरकों को बीज के बिल्कुल नीचे रखने से भी दक्षता में सुधार होगा।
3. अमोनियम व फास्फेट उर्वरकों का मिलाकर संयोजन करके बेंड करने से भी फास्फोरस की दक्षता बढ़ाई जा सकती है।
4. अम्लीय मिट्टी में चूने के आवेदन से पीएच ऊपर करने से भी सुधार होगा।
5. कार्बनिक खाद, हरी खाद व अवशेषों को शामिल करके मिट्टी की अपरिष्कृत पदार्थ की सामग्री को सुधार के भी दक्षता बढ़ाई जा सकती है।
6. पौधों की जड़ों के क्षेत्र में सूक्ष्म जीवों के कार्यों में सुधार करके भी इसकी दक्षता में सुधार होगा। फास्फोरस को घोलने वाले जैव उर्वरक डालकर भी इसकी दक्षता को बढ़ाया जा सकता है।
7. संतुलित पौष्टिकता का प्रयोग, कुशल फसल प्रजातियों का प्रयोग, खरपतवार नियंत्रण, पर्याप्त नमी की आपूर्ति, उचित समय व उचित दर बढ़ाने के उपयोग से भी फास्फोरस का उपयोग प्रभावकारी हो सकता है।



# ग्रीष्म कालीन जुताई का सूत्रकृमि प्रबंधन में महत्व

बबीता कुमारी, विनोद कुमार एवं अनिल कुमार

सूत्रकृमि विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में पिछले दिनों कृषि क्रांति के फलस्वरूप कृषि उत्पादन में बहुत अधिक वृद्धि हुई है। उत्पादन बढ़ने के मुख्य कारण: उन्नतशील बीज, उर्वरक, सिंचाई एवं कृषि वैज्ञानिक पद्धति को अपना रहे हैं, परन्तु कृषि में वैज्ञानिक पद्धति को अपनाने के साथ ही नई समस्याएं भी उत्पन्न हुई हैं। इन्हीं नई समस्याओं में से सूत्रकृमि एक गंभीर समस्या बनती जा रही है। सूत्रकृमि प्रायः सभी फसलों जैसे सब्जी, फल, फूल, दलहन, अनाज आदि फसलों को नुकसान पहुंचाते हैं।

## सूत्रकृमि क्या है ?

सूत्रकृमि, जो कि गोलकृमि या अंग्रेजी में निमेटोड भी कहलाते हैं। पौधों के सूत्रकृमि छोटे, पतले, खंड रहित धागे की तरह के दिवलिङ्गी जंतु हैं। ये नंगी आंखों से दिखाई नहीं देते इसलिए इन की ओर किसानों का ध्यान कम ही जाता है। इनमें से अनेक पौधों की जड़ों से अपना भोजन ग्रहण करते हैं तथा कुछ पौधों के ऊपरी भागों पर निर्भर करते हैं।

अधिकांश पादप परजीवी सूत्रकृमियों की वृद्धि एवं परिवर्धन के लिए 15 से 30 डिग्री सेल्सियस का ताप परिसर अनुकूल होता है, जबकि यह 5 से 15 डिग्री सेल्सियस के निम्न ताप और 30 से 40 डिग्री सेल्सियस के उच्च ताप परिसर पर निष्क्रिय हो जाते हैं। इन तापमानों से बाहर की चरम सीमाएं सूत्रकृमियों के लिए घातक हो जाती हैं। खेतों को सूत्रकृमियों से पूर्णतः मुक्त करना व्यावहारिक रूप से असंभव है, परन्तु इनका नियंत्रण किया जा सकता है। सूत्रकृमियों की संख्या का स्तर उनकी मिट्टी में जीवित बने रहने पर निर्भर करता है। सूत्रकृमि प्रबंधन/नियंत्रण का प्रमुख उद्देश्य यह होना चाहिये की खेत में सूत्रकृमियों की कुल संख्या एक सह्य स्तर तक हो तथा किसी एक प्रकार के सूत्रकृमि की संख्या को इस मात्रा तक बढ़ने से रोकना चाहिये की फसल को अधिक हानि न पहुंचा सके। सूत्रकृमि प्रबंधन के उपाय तभी अच्छे हो सकते हैं, जब इनमें खर्च हुआ मूल्य सूत्रकृमि द्वारा होने वाली हानि से बहुत ही कम हो क्योंकि सूत्रकृमि प्रबंधन/नियंत्रण का अर्थ फसल की उपज को बढ़ाना होता है। अतः किसी फसल के सूत्रकृमि प्रबंधन/नियंत्रण का कार्यक्रम सूत्रकृमि की प्रकृति, उसकी वर्गिकी, उसका परपोषी परिसर, उसका आवास एवं जीवन चक्र आदि बातों का ध्यान में रखकर ही बनाना चाहिये।

रासायनिक नियंत्रण की अपेक्षा कृषि क्रियाओं (ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई) द्वारा सूत्रकृमियों का प्रबंधन करना बहुत सस्ता एवम सरल होता है। ग्रीष्म कालीन जुताई कृषि कार्यों का एक महत्वपूर्ण अंग है।



जबकि फसल के अच्छे उत्पादन के लिए रबी फसल की कटाई के तुरंत बाद मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई कर ग्रीष्म ऋतु में खेत को खाली रखना बहुत ही ज्यादा लाभप्रद हो सकता है। यह क्रिया सूत्रकृमियों के साथ - साथ खरपतवारों और मिट्टी में उपस्थित रोगजनक कवकों एवं जीवाणुओं को भी खत्म करता है और इसे खेत में दो मुख्य फसलों के बीच के समय में करना भी संभव होता है।

**जुताई कब करें :** कृषि कार्यों में विभिन्न क्रियाओं का अपना अलग ही महत्व है। खेतों की ग्रीष्म कालीन जुताई से भी किसानों को बहुत फायदे होते हैं। तेज गर्मी के महीनों (मई-जून) में खेत की मिट्टी पलटने वाले हल/ट्रैक्टर से 10-15 दिन के अंतराल पर 2 या 3 गहरी जुताई करके खुला छोड़ देने पर मिट्टी में उपस्थित सूत्रकृमि कड़ी धूप एवं निर्जलीकरण के कारण नष्ट हो जाते हैं। क्योंकि फसलों में लगने वाले सूत्रकृमि, कीट तथा व्याधियों की रोकथाम की दृष्टि से गर्मियों में गहरी जुताई करके खेत खाली छोड़ने से भूमि का तापमान बढ़ जाता है जिससे भूमि में मौजूद सूत्रकृमि खत्म हो जाते हैं। जिसके परिणामस्वरूप रबी एवं खरीफ में बोई जाने वाली तिलहनी, दलहनी, खाद्यान्न फसलों और सब्जियों में लगने वाले सूत्रकृमियों का प्रकोप कम हो जाता है। अतः इस क्रिया द्वारा मिट्टी में उपस्थित अधिकांश सूत्रकृमियों के संख्या घनत्वों को प्रत्यक्ष रूप से कम किया जा सकता है।

**ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई कैसे करें :** गर्मी की जुताई 15 सें.मी. गहराई तक किसी भी मिट्टी पलटने वाले हल से ढलान के विपरीत करनी चाहिए। लेकिन बारानी क्षेत्रों में किसान ज्यादातर ढलान के साथ- साथ ही जुताई करते हैं जिससे वर्षाजल के साथ मृदा कणों के बहने की क्रिया बढ़ जाती है। अतः खेतों में हल चलाते समय इस बात का खयाल रखना चाहिये कि यदि खेत का ढलान पूर्व से पश्चिम दिशा की तरफ हो तो जुताई उत्तर से दक्षिण की ओर यानी ढलान के विपरीत ढलान को काटते हुए करनी चाहिये। ऐसा करने से बहुत सारा वर्षा का जल मृदा सोख लेती है और पानी जमीन की निचली सतह तक पहुंच जाता है जिससे न केवल मृदा कटाव रुकता है बल्कि पोषक तत्व भी बहकर नहीं जा पाएंगे।

#### ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई के लाभ

- गर्मी की जुताई से सूर्य की तेज किरणें भूमि के अंदर प्रवेश कर जाती हैं, जिससे भूमिगत सूत्रकृमि नष्ट हो जाते हैं।
- फसलों में लगने वाले भूमिगत रोग जैसे उखटा, जड़गलन के रोगाणु व सब्जियों की जड़ों में गांठ बनाने वाले सूत्रकृमि भी नष्ट हो जाते हैं।
- गहरी जुताई से खरपतवारों से भी मुक्ति मिलती है।
- गर्मी की गहरी जुताई से गोबर की खाद व खेत में उपलब्ध अन्य कार्बनिक पदार्थ भूमि में भली-भांति मिल जाते हैं, जिससे अगली फसल को पोषक तत्व आसानी से शीघ्र उपलब्ध हो जाते हैं।



## मशरूम (खुम्बी) एक स्वास्थ्यवर्धक आहार

संतोष रानी<sup>1</sup>, विनिता जैन<sup>2</sup> एवं मन्मथ लाल मजोका

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मशरूम स्वास्थ्यवर्धक और औषधीय गुणों से युक्त एक उत्तम आहार है जिसमें मौजूद प्रोटीन, विटामिन, खनिज लवण व कार्बोहाइड्रेट बाल्यकाल अवस्था से युवावस्था तक कुपोषण से बचाते हैं। खुम्बी में वसा की मात्रा कम होने के कारण यह हृदय रोग तथा कार्बोहाइड्रेट की अल्प मात्रा होने के कारण मधुमेह रोगियों के लिए उत्तम आहार है। चाहे कोई शाकाहारी हो या मांसाहारी मशरूम की सब्जी हर किसी की पसंद होती है। डॉक्टर का कहना है कि इसका सेवन मानव सेहत के लिए रामबाण है। विश्वभर में लगभग एक दर्जन से भी अधिक खुम्बी की प्रजातियों का उत्पादन व्यापारिक स्तर पर किया जाता है। परन्तु हमारे हरियाणा में तीन ही प्रजातियां प्रचलित हैं जिनकी खेती व्यापारिक स्तर पर की जाती है।

1. सफेद बटन (यूरोपीय मशरूम)
2. आयस्टर मशरूम (ढिंगरी)
3. दूधिया खुम्ब (मिल्की मशरूम)

#### मशरूम के फायदे :-

1. **प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाये :** मशरूम प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाता है। मशरूम में मौजूदा एंटी ऑक्सीडेंट हमें हानिकारक फ्री रेडिकल्स से बचाते हैं। मशरूम का सेवन करने से शरीर में प्रोटीन की मात्रा बढ़ती है जो कि शरीर की कोशिकाओं की मरम्मत करता है। ये एक प्राकृतिक एंटीबायोटिक है, जो सूक्ष्मजीविय और अन्य फंगल के संक्रमण को भी ठीक करता है।
2. **हृदय रोगों से बचाव :** मशरूम हृदय रोगों से बचाव करता है। मशरूम में उच्च कोटि के न्यूट्रियेंट्स पाये जाते हैं, इसलिए ये दिल के लिए भी अच्छे होते हैं। साथ ही इसमें कुछ एन्जाइम्स ऐसे पाये जाते हैं जो कि कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करते हैं।
3. **रक्त निर्माण में सहायक :** मशरूम खाने से हिमोग्लोबिन का स्तर भी बढ़ता है। इसके अलावा इसमें बहुमूल्य फॉलिक एसिड भी प्रचुर मात्रा में होते हैं जो केवल मांसाहारी खाद्य पदार्थों में होता है। अतः लोहा तत्व और फॉलिक एसिड के कारण रक्त की कमी की शिकायत महिलाओं और बच्चों के लिए मशरूम सर्वोत्तम आहार है।
4. **मधुमेह से बचाव :** मधुमेह रोगियों के लिए मशरूम सर्वश्रेष्ठ आहार माना जाता है। मशरूम में शर्करा (0.5 प्रतिशत) और स्टार्च की मात्रा बहुत कम होती है। इसमें वो सब कुछ होता है जो मधुमेह रोगियों को चाहिए। इसमें विटामिन, खनिज और फाइबर होते हैं। मशरूम इन्सुलिन के निर्माण में भी मदद करता है।

(शेष पृष्ठ 10 पर)

<sup>1</sup>जिला विस्तार विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, कैथल

<sup>2</sup>जिला विस्तार विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, सदलपुर

# सब्जी उत्पादन: एक व्यावसायिक दृष्टिकोण

कुलदीप कुमार<sup>1</sup>, किशोर चंद कुम्हार एवं मकखन लाल मजोका  
सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में 65-70 प्रतिशत आबादी गावों में रहती है। जिनका मुख्य व्यवसाय कृषि है। भारत में दिन-प्रतिदिन कृषि योग्य जोत कम होती जा रही है। जिसका मुख्य कारण है शहरीकरण, फैक्ट्रियां व औद्योगिक क्षेत्रों का तेजी से बढ़ना। इसलिए सब्जियों की वैज्ञानिक विधि से खेती करके इसे एक व्यवसाय के तौर पर अपनाया जा सकता है।

साग-सब्जियों का हमारे दैनिक जीवन में कितना महत्व है यह किसी से छुपा नहीं है। दरअसल साग-सब्जी भोजन के ऐसे स्रोत हैं जो न केवल हमारे भोजन का पोषक मूल्य बढ़ाते हैं बल्कि भोजन को स्वादिष्ट भी बनाते हैं। भारत एक शाकाहारी देश है जिसके नागरिक अपनी पोषण आहार की पूर्ति के लिए ज्यादातर शाक सब्जियों पर निर्भर रहते हैं। भारत ने इन शाक सब्जियों के उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है। परन्तु उत्पादकता एवं गुणवत्ता में अन्य देशों से काफी पीछे हैं। भारत पूरी दुनिया में सब्जी उत्पादन में चीन के बाद दूसरे नंबर पर है। आहार विशेषज्ञों के अनुसार 300 ग्राम सब्जी प्रतिदिन प्रति व्यक्ति मिलनी चाहिए। परन्तु हमारी सब्जी उत्पादन में जागरूकता की कमी के कारण प्रतिदिन प्रति व्यक्ति 185 ग्राम ही सब्जी मिल पा रही है, यानि सब्जी उत्पादन व्यवसाय में अभी बहुत अवसर हैं। बहुत से किसान मुख्य रूप से सब्जी उत्पादन कर रहे हैं। कुछ किसान बेमौसमी सब्जी उत्पादन तथा कुछ किसान सब्जियों के उत्तम किस्म का उत्पादन कर रहे हैं। किसान भाई-बहनों को चाहिए कि वे अधिक आय प्राप्त करने हेतु वैज्ञानिक ढंग से सब्जी उत्पादन करके अपने परिवार, की आर्थिक दशा को सुदृढ़ बनायें।

**क्यों अपनायें एक व्यावसायिक रूप में :-**

**जीवन रक्षक आहार का स्रोत :** सब्जियों का उत्पादन सम्पूर्ण अनाजों एवं फलों की तुलना में अधिक होता है। आजकल हर मनुष्य दैनिक आहार में सब्जियों की महत्ता को जानता है। सब्जियों में कुछ ऐसे आवश्यक तत्व मौजूद होते हैं जिनकी मनुष्य के शरीर को बढोत्तरी के लिये सही रख-रखाव एवं संचालन के लिये आवश्यकता होती है।

**1. बेमौसमी सब्जियों का उत्पादन :** किसानों को सब्जी का उत्पादन ऐसे समय में करना चाहिए जिस समय इनकी उपलब्धता कम हो या न के बराबर हो। इन सब्जियों को हम बेमौसमी सब्जियाँ कहते हैं। इस समय इन सब्जियों की मांग तथा मूल्य दोनों ही अधिक होते हैं तथा किसान ऐसे में अधिक आय अर्जित कर सकते हैं।

**2. अधिक उत्पादन क्षमता :** सब्जी उत्पादन से अनाज वाली फसलों के उत्पादन की अपेक्षा प्रति इकाई अधिक उत्पादन, उच्च गुणवत्ता तथा अधिक मूल्य मिलने के कारण भी किसान सब्जी उत्पादन को एक व्यवसाय के रूप में अपना सकते हैं।

**3. एक से अधिक फसलें :** सब्जियाँ कम समय में तैयार हो जाती हैं इसलिए इनका उत्पादन करके एक ही वर्ष में एक ही क्षेत्र से कम से कम तीन-चार फसलें ली जा सकती हैं जबकि अनाज वाली फसलों की वर्ष में

एक या दो फसलें ही ले सकते हैं। इससे अनाजों की अपेक्षा प्रति इकाई आमदनी अधिक होने के कारण किसान को काफी लाभ मिलता है।

**4. परिवारजनों का पूर्ण सहयोग :** सब्जी उत्पादन के क्षेत्र में परिवार के सभी सदस्यों का सहयोग खासतौर पर महिलाओं का सहयोग व योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण है। महिलाओं का अपने घर-परिवार के काम काज के साथ-साथ खेती कार्य में भी पूर्ण योगदान होता है।

**5. रोजगार के साधन :** सब्जी उत्पादन के क्षेत्र में अधिक मजदूरी की आवश्यकता होती है। सब्जी उत्पादन के समय अधिकतर कार्य मशीनों की अपेक्षा हाथों द्वारा ही किये जाते हैं। इसलिए इन सभी कार्यों को करने के लिये मजदूरों की अधिक आवश्यकता होगी। अतः इससे अन्य युवा बेरोजगारों को भी रोजगार मिलेगा। खेत में काम करने के अतिरिक्त ग्रेडिंग, पैकिंग, यातायात तथा विपणन इत्यादि के लिये भी युवाओं को रोजगार के अवसर मिलेंगे।

**6. बगीचों में जमीन का सही उपयोग :** बगीचों में पौधे जब तक छोटे होते हैं यानि कि वो फल देना आरम्भ नहीं करते तब तक किसान भाई उनमें खाली पड़ी भूमि में सब्जियाँ उगाकर उपयोग कर सकते हैं। इससे एक तो बगीचों में पनपने वाले कई तरह के घासों/खरपतवारों का नियन्त्रण होता है दूसरी तरफ इससे आमदनी के साथ-साथ खाली पड़ी जमीन का भी सही उपयोग होगा। छोटे बगीचों में जब पौधे छोटे होते हैं जैसे कि आड़ू, सन्तरा, माल्टा, नींबू, आंवला आदि के बीच में मूली, शलगम, बन्दगोभी तथा हरी पत्तेदार सब्जियाँ उगा सकते हैं। इस प्रकार कुछ ऐसी सब्जियाँ जिन्हें छाया की ज़रूरत होती है जैसे कि आलू, अदरक, हल्दी इत्यादि को भी बगीचों में उगाया जा सकता है।

**7. पौध उत्पादन :** हम सभी भली-भाँति जानते हैं कि सब्जियों के दो समूह हैं एक जिनकी खेत में सीधे तौर पर बिजाई करके उत्पादन किया जाता है जैसे कि मूली, शलगम, पालक, मेथी, भिण्डी, मटर, बीन्स इत्यादि, दूसरा वह समूह जिनकी पौध तैयार करने उपरान्त पौध रोपण करके सब्जी उत्पादन किया जाता है। पौध तैयार करने में लगभग एक महीने का समय लग जाता है यदि इसे एक व्यवसाय के रूप में किया जाये तो एक महीने में काफी पैसा कमाया जा सकता है।

**8. बीज उत्पादन :** किसी भी सब्जी का अच्छा व अधिक उत्पादन लेना है तो वह उस सब्जी के बीज की शुद्धता पर निर्भर करता है। सब्जियों के बीजों की मांग पूरे वर्ष रहती है तथा यह मांग मौसम तथा क्षेत्र के हिसाब से भिन्न-भिन्न होती है। इन बीजों की मांग अधिक है इसलिये किसान भाई बीज उत्पादन से अधिक बीज तैयार करके अधिक आमदनी अर्जित कर सकते हैं।

**9. कृषि संसाधन/परिरक्षण :** सब्जी उत्पादन के मुख्य मौसम में सब्जियाँ बहुतायत में उपलब्ध होती हैं और इनका विपणन होने पर बाज़ार में इनकी कीमतें बहुत ही कम हो जाती हैं या फिर ये सब्जियाँ गल-सड़ जाती हैं। ऐसे समय में यदि कम कीमत पर इन सब्जियों को खरीदकर इनका संसाधन/परिरक्षण पदार्थ जैसे कि अचार, चटनी, जैम, मुरब्बा, साँस, प्यूरी, कैंडी, टॉफी इत्यादि बनाकर इन्हें बाज़ार में बेचकर अच्छी आमदनी अर्जित की जा सकती है।

इस तरह किसान भाई-बहनों के लिये सब्जी उत्पादन न केवल उनकी आर्थिक दशा को सुदृढ़ बनाने में सहायक होगा बल्कि इससे काफी हद तक खाद्य समस्या का भी समाधान होगा।

<sup>1</sup>शोध छात्र, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार।



# फसल रोगों का माइक्रोबियल कीट प्रबंधन

पूजा, दीपिका राठी एवं आर.एस.बेनीवाल

अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

अत्यधिक रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग के दुष्परिणाम अब सामने आने लगे हैं। किसानों को यह अनुभव होने लगा है कि रासायनिक कीटनाशक अब उन्हीं शत्रु कीटों पर बेअसर हो रहे हैं, जिन पर वो रसायन प्रयोग कर पहले छुटकारा पा जाते थे। इसीलिए अब किसान फसल सुरक्षा के अन्य विकल्प तलाशने लगे हैं। अतः यह बात अब समझ में आने लगी है कि प्रकृति के जितने समीप रहकर खेती की जाए, उतनी ही समस्या कम आएगी।

सूक्ष्म जैविक कीट प्रबंधन एक प्राकृतिक पारिस्थितिक घटना चक्र है, जिसको नाशकजीवों के प्रबंधन में सफलतापूर्वक प्रयोग में लाया जा सकता है और यह एक संतुलित, स्थाई और किफायती कीट प्रबंधन का साधन हो सकता है। सूक्ष्मजीवों का नाशकजीवों के लिए उपयोग सूक्ष्म-जैविक प्रबंधन कहलाता है। यह जैविक प्रबंधन का नया पहलू है, जिसमें नाशकजीवों के रोगाणुओं का उपयोग उनके नियंत्रण के लिए किया जाता है। इसके लिए उपयोग में लाये जाने वाले सूक्ष्म जीवों को जैविक कीटनाशक कहते हैं, जो वस्तुतः कम संख्या में प्रकृति में उपलब्ध रहते हैं। व्यावहारिक रूप से सूक्ष्म-जैविक प्रबंधन के लिए कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं को ढूँढकर, पाल-पोसकर और उनकी संख्या में वृद्धि करके उन्हें नाशकजीवों के प्रबंधन हेतु उपयोग में लाया जाता है। प्रकृति में बहुत से ऐसे सूक्ष्मजीव हैं जैसे विषाणु, जीवाणु एवं फफूँद आदि जो शत्रु कीटों में रोग उत्पन्न कर उन्हें नष्ट कर देते हैं, इन्हें विषाणु, जीवाणु एवं फफूँद आदि को वैज्ञानिकों ने पहचान कर प्रयोगशाला में इनका बहुगुणन किया तथा प्रयोग हेतु उपलब्ध करा रहे हैं, जिनका प्रयोग कर किसान लाभ पाने में सक्षम हैं। **माइक्रोबियल कीटनाशक:** फसलों में लगने वाली बीमारियों को लाभदायक जीवाणुओं के द्वारा भी रोका जा सकता है। भारत में नाशकजीवों के प्रबंधन के लिए कुछ जैविक कीटनाशकों का विवरण नीचे दिया गया है:-

**जीवाणु (बैक्टीरिया) :** मित्र जीवाणु प्रकृति में स्वतंत्र रूप से भी पाए जाते हैं, परन्तु उनके उपयोग को सरल बनाने के लिए इन्हें प्रयोगशाला में कृत्रिम रूप से तैयार करके बाजार में पहुँचाया जाता है, जिससे कि इनके उपयोग से फसल को नुकसान पहुँचाने वाले कीड़ों से बचा जा सकता है।

1. **बेसिलस थुरिंजिनेसिस:** यह एक बैक्टीरिया आधारित जैविक कीटनाशक है। इसके प्रोटीन निर्मित क्रिस्टल में कीटनाशक गुण पाए जाते हैं, जो कि सूँड़ियों की 90 से ज्यादा प्रजातियों पर प्रभावी हैं। इसके प्रभाव से सूँड़ियों के मुखांग में लकवा हो जाता है, जिससे की सूँड़ियाँ खाना छोड़ देती हैं तथा सुस्त हो जाती हैं और 4-5 दिन में मर जाती हैं। यह जैविक सूँडी की प्रथम एवं द्वितीय अवस्था पर अधिक प्रभावशाली है। इनकी चार अन्य प्रजातियाँ बेसिलस पोपुली, बेसिलस स्फेरिक्स, बेसिलस मोरिटी, बेसिलस लेंटीमोर्बस भी कीट प्रबंधन हेतु पाई गई हैं।

**प्रयोग:** यह एक विकल्पी जीवाणु है, जो विभिन्न फसलों में नुकसान पहुँचाने वाले शत्रु कीटों जैसे चने की सूँडी, तम्बाकू की सूँडी, लाल बालदार सूँडी, सैनिक कीट एवं डायमंड बैक मॉथ आदि में 1 किग्रा प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करने पर अच्छा परिणाम मिलता है।

**विशेषता :** बी.टी. के छिड़काव हेतु समय का चयन इस प्रकार करना चाहिए कि जब सूँडी अण्डों से निकल रही हो, जैविक कीटनाशकों को घोल में स्टीकर एवं स्प्रेडर मिलाकर प्रयोग करने से अच्छे परिणाम मिलते हैं। इस जैविक कीटनाशक को 35 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान पर भंडारित नहीं करना चाहिए। इस जैविक कीटनाशक को पहले थोड़े पानी में घोलकर फिर आवश्यक मात्रा में पाऊंडर मिलाकर घोल बनायें तथा इसका छिड़काव शाम के समय करना चाहिए।

2. **सूडोमोनास फ्लूरोसेन्स :** यह रोग कारकों के लिए बैक्टीरिया आधारित जैविक उत्पाद है जो कि सब्जियों के उकठा जड़ गलन रोग, धान के ब्लास्ट तथा पौध ब्लाइट आदि रोगों के सफलतापूर्वक नियंत्रण हेतु प्रयोग किया जा सकता है। यह जीवाणु पत्तियों पर मौजूद पानी की बूंदों से एमिनो एसिड को हटा देता है तथा फफूँदी के कोनिडिया की वृद्धि को दबा देता है।

**वायरस : न्यूक्लीअर पाली हेड्रोसोस वायरस (एन.पी.वी.)**—यह एक प्राकृतिक रूप से मौजूद वायरस पर आधारित सूक्ष्म जैविक है। वे सूक्ष्म जीव जो केवल न्यूक्लिक एसिड एवं प्रोटीन के बने होते हैं, वायरस कहलाते हैं। एन.पी.वी. वायरस का आकार बहुकोणीय होता है। विषाणु का मुख्य लक्षण है कि यह परपोषी के अन्दर ही सक्रिय होता है अन्यथा निष्क्रिय पड़ा रहता है। यह कीट की प्रजाति विशेष के लिए कारगर होता है। चने की सूँडी के लिए एन.पी.वी. (एस.एल) का प्रयोग किया जाता है।

**प्रयोग :** कीट प्रबंधन के लिए प्रयुक्त इन वायरसों से प्रभावित पत्ती को खाने से सूँडी 4-7 दिन के अन्तराल में मर जाती है। सर्वप्रथम सर्वमित सूँडी सुस्त हो जाती है, खाना छोड़ देती है। सूँडी पहले सफेद रंग में परिवर्तित हो जाती है, और फिर काले रंग में बदल जाती है। इस जैविक उत्पाद को 250 एल.ई. प्रति हैक्टेयर की मात्रा से आवश्यक पानी में मिलाकर फसल में प्रायः शाम के समय छिड़काव उस वक्त करें, जब नुकसान पहुँचाने वाले कीटों के अंडों से सूँड़िया निकलने का समय हो। इस घोल में 2 किलो गुड़ भी मिला लिया जाये तो अच्छे परिणाम मिलते हैं।

**फफूँदी :** कीट प्रबंधन में फफूँदियों का प्रमुख स्थान है। आजकल मित्र फफूँदी बाजार में आसानी से उपलब्ध है। जिनको किसान खरीद कर आसानी से अपनी फसलों में प्रयोग कर सकते हैं। प्रमुख फफूँदियों का विवरण इस प्रकार है :-

1. **व्युवेरिया बेसियाना :** यह प्रकृति में मौजूद सफेद रंग की फफूँदी है जो विभिन्न फसलों एवं सब्जियों की लेपिडोप्टेरा वर्ग की सूँड़ियों जैसे- चने की सूँडी, बालदार सूँडी, रस चूसने वाले कीट, वूली एफिड, फुदको, सफेद मक्खी एवं स्पाईडर माईट आदि कीटों के प्रबंधन के लिए प्रयुक्त की जाती है। यह प्यूपा अवस्था को संक्रमित करता है। कीट के सम्पर्क में आते ही इस फफूँदी के स्पोर त्वचा के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर अपनी



संख्या में वृद्धि करते हैं, जिसके प्रभाव से कीट कुछ दिनों बाद ही लकवा ग्रस्त हो जाता है और अंत में मर जाता है। इस मित्र फफूंद की उचित वृद्धि के लिए अधिक आर्द्रता की आवश्यकता होती है।

**2. मेटारिरियम एनीसोपली :** यह बहुत ही उपयोगी जैविक फफूंदी है, जो कि दीमक, ग्रासहॉपर, प्लांट हॉपर, वुली एफिड, बग एवं बीटल आदि के करीब 300 कीट प्रजातियों के विरुद्ध उपयोग में लाया जाता है। इस फफूंदी के स्पोर पर्याप्त नमी में कीट के शरीर पर अंकुरित हो जाते हैं जो त्वचा के माध्यम से शरीर में प्रवेश करके वृद्धि करते हैं। यह फफूंदी परपोषी कीट के शरीर को खा जाती है तथा जब कीट मरता है तो पहले कीट के शरीर के जोड़ों पर सफेद रंग की फफूंद होती है जो कि बाद में गहरे हरे रंग में बदल जाती है।

**3. मित्र फफूंदियों को प्रयोग करने की विधि :** मित्र फफूंदियों की 750 ग्राम मात्रा को स्टिकर एजेंट के साथ 200 लीटर पानी में मिलाकर 1 एकड़ क्षेत्रफल में सुबह अथवा शाम के समय छिड़काव करने से आशा अनुकूल असर दिखाई पड़ता है।

**4. मित्र सूत्रकृमि :** कीटहारी सूत्रकृमियों की कुछ प्रजातियां कीटों के ऊपर परजीवी रहकर उन्हें नष्ट कर देती हैं। कुछ सूत्रकृमि जीवाणुओं के साथ सह-जीवन व्यतीत करते हैं जो सामूहिक रूप से कीट नियंत्रण में उपयोगी हैं। सूत्रकृमि डी.डी.136 को धान, गन्ना तथा फलदार वृक्षों के विभिन्न नुक्सान पहुंचाने वाले कीटों के नियंत्रण हेतु सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है।

**5. सूक्ष्म जैविक रोगनाशक ट्राईकोडर्मा :** यह एक प्रकार की मित्र फफूंदी है जो खेती को नुक्सान पहुंचाने वाली हानिकारक फफूंदी को नष्ट करती है। ट्राईकोडर्मा के प्रयोग से विभिन्न प्रकार की दलहनी, तिलहनी, कपास, सब्जियां एवं विभिन्न फसलों में पाए जाने वाली मृदाजनित रोग जैसे- उकठा, जड़ गलन, कालर सड़न आर्द्रपतन, कन्द सड़न आदि बीमारियों को सफलतापूर्वक रोकती हैं। यह रोग मिट्टी में पायी जाने वाली फफूंद जैसे-फ्यूजेरियम, स्केलेरोशिया, फाईटोफ्टेरा, मैकोफोमिना, सर्कोस्पोरा तथा आल्टरनेरिया आदि की कुछ प्रजातियों से पैदा होती हैं, जो बीजों के अंकुरण एवं पौधों की अन्य अवस्थाओं को प्रभावित करती है। ट्राईकोडर्मा की लगभग 6 प्रजातियां ज्ञात हैं। लेकिन केवल दो प्रजातियां ही जैसे- ट्राईकोडर्मा विरडी एवं ट्राईकोडर्मा हर्जियानम मिट्टी में बहुतायत मात्रा में पाई जाती हैं।

**6. प्रयोग : बीज शोधन :** बीज उपचार के लिए 5 से 10 ग्राम पाऊंडर प्रति किलो बीज में मिलाया जाता है। परन्तु सब्जियों के बीज की यह मात्रा 5 ग्राम प्रति 100 ग्राम बीज के हिसाब से उपयोग में लाई जाती है।

**7. भूमि शोधन :** 1 किलोग्राम पाऊंडर को 25 किलोग्राम कम्पोस्ट खाद में मिलाकर 1 सप्ताह तक छायादार स्थान पर रखकर उसे गीली बोरी से ढका जाता है ताकि स्पोर अंकुरित हो जायें। फिर इस कम्पोस्ट को 1 एकड़ खेत में मिलाकर फसल की बुवाई की जाती है।

**विशेषताएं :** ट्राईकोडर्मा फफूंद नमी एवं उचित ताप में तेजी से वृद्धि करता है। इसका छिड़काव हमेशा संध्या काल में ही करना चाहिए। ट्राईकोडर्मा

फफूंद क्षारीय मृदा में कम उपयोगी होता है। इसका भण्डारण ठंडे, सूखे एवं हवादार स्थान पर पॉलिथीन बैग में पैक करके करना चाहिए।

#### सूक्ष्मजीवियों के प्रयोग से लाभ :

- सूक्ष्मजीवी वातावरण एवं फसल पर कोई भी विषाक्त प्रभाव नहीं छोड़ता है।
- इनमें लक्षित कीट के विनाश की विशिष्टता होती है।
- इनके प्रयोग से कीटों में प्रतिरोधक क्षमता का विकास कम पाया गया है।
- इनके प्रयोग से उन कीटों को भी नियंत्रित किया जा सकता है, जो सामान्य कीटनाशकों से नष्ट नहीं होते हैं।
- ये खेत में पाये जाने वाले मित्र कीट के लिए सुरक्षित हैं।
- कम मात्रा में प्रयोग किये जाने के कारण उत्पादन लागत में कमी होती है।
- कृषि पारिस्थितिकी तंत्र में अधिक छेड़छाड़ न की जाए तो लाभकारी कीटों की संख्या में अपेक्षित वृद्धि होती है।

#### सूक्ष्मजीवियों के प्रयोग में सावधानियां :-

- सूक्ष्म जीवियों पर सूर्य की पैरा-बैंगनी (अल्ट्रा-वायलेट) किरणों का विपरीत प्रभाव पड़ता है, अतः इनका प्रयोग संध्या काल में करना उचित होता है।
- सूक्ष्म-जैविकों विशेष रूप से कीटनाशक फफूंदी के उचित विकास हेतु पर्याप्त नमी एवं आर्द्रता की आवश्यकता होती है।
- सूक्ष्म-जैविक नियंत्रण में आवश्यक कीड़ों की संख्या एक सीमा से ऊपर होनी चाहिए।
- इनकी सेल्फ लाइफ कम होती है। अतः इनके प्रयोग से पूर्व उत्पादन तिथि पर अवश्य ध्यान देना चाहिए।



(पृष्ठ 07 का शेष)

- 5. कैंसर रोग से बचाव में गुणकारी :** मशरूम का सेवन करने से प्रोस्टेट और ब्रेस्ट कैंसर से बचाव होता है। क्योंकि इसमें बीटा ग्लाइसीन और लिनॉलिक एसिड होते हैं। कई शोध भी इस बात का समर्थन करते हैं कि मशरूम में मौजूदा तत्व कैंसर के प्रभाव को कम करते हैं।
- 6. मोटापे से बचाव :** मशरूम प्रोटीन से भरपूर होता है जो कि वजन घटाने में मददगार होता है। मोटापा कम करने वालों को प्रोटीन की डाइट लेने की सलाह दी जाती है।
- 7. पेट के विकार दूर करना :** ताजे मशरूम में कार्बोहाईड्रेट, प्रोटीन व रेशे होते हैं। इसका सेवन कब्ज, अपच सहित कई विकारों को दूर करता है।



# फर्टिगेशन के लाभ और आवश्यकता

नरेन्द्र कुमार, अमनदीप सिंह एवं संजय कुमार  
कृषि अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

उर्वरक रासायनिक यौगिक होते हैं जो पौधों को आवश्यकतानुसार पोषक तत्व प्रदान करते हैं। वे या तो मिट्टी के माध्यम से या सिंचाई के पानी के माध्यम से लागू होते हैं। सिंचाई व उर्वरक के बढ़ते उपयोग से भूमिगत जल और जल के स्रोत में प्रदूषण का स्तर बढ़ता जा रहा है। हमें पौधों के पोषक तत्वों की समझदारी से प्रबंधन की आवश्यकता है। दबाव सिंचाई को मुख्यतः पौधे की जड़ों में रखा जाता है। इसलिए पानी और उर्वरक इसमें मिलाकर सीधा जड़ों में डाला जाता है। उर्वरक सीधे जड़ों में डालने से पोषक तत्व पौधे के लिए जल्दी उपलब्ध हो जाते हैं। उर्वरक वह तकनीक है जिसमें हम घुलनशील उर्वरक सीधे पौधों को सिंचाई के जल के साथ देते हैं। उर्वरक की थोड़ी-थोड़ी मात्रा कम समय अंतराल में देते हैं। इस से पौधे पोषक तत्वों को अच्छे से उपभोग कर लेते हैं।

## फर्टिगेशन की आवश्यकता :

- मिट्टी से पोषक तत्वों के हो रहे लगातार खनन के कारण पोषक तत्व खतरनाक दर से कम होते जा रहे हैं। मिट्टी की उर्वरता में कमी आ रही है। इसे पूरा करने के लिए फर्टिगेशन बहुत आवश्यक है।
- फसलों की उर्वरकों के प्रति प्रतिक्रिया घटती जा रही है। फर्टिगेशन इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।
- उर्वरकों के आयात कम करके, इसमें देश की आत्मनिर्भरता को बढ़ाना।
- फसलों के उत्पादन को बढ़ा कर, बढ़ती हुए जनसंख्या के लिए अनाज उपलब्ध करना।
- उर्वरकों के हो रहे अंधाधुंध इस्तेमाल से वातावरण व जमीन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। फर्टिगेशन इसे रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

## फर्टिगेशन के फायदे :

- उपज में 25-30 प्रतिशत की वृद्धि करता है।
- उर्वरकों में 25-30 प्रतिशत की बचत करता है।
- उर्वरकों का एक समान वितरण करता है।
- पौधों की आवश्यकताओं के अनुसार पोषक तत्व को लागू किया जा सकता है।
- यह ड्रिप सिस्टम को साफ करता है।
- पोषक तत्वों के नुकसान को कम करता है।
- प्रमुख और सूक्ष्म पोषक तत्वों, सिंचाई के साथ एक घोल में मिलाकर लागू किया जा सकता है।
- फर्टिगेशन मेहनत और समय दोनों बचाता है।

फर्टिगेशन के लिए उपयुक्त है उर्वरक (प्रतिशत में) :

उर्वरक	नाइट्रोजन	फॉस्फोरस	पोटैशियम
यूरिया	46	0	0
अमोनियम नाइट्रेट	34	0	0
अमोनियम सल्फेट	21	0	0
कैल्शियम नाइट्रेट	16	0	0
मैग्नीशियम नाइट्रेट	11	0	0
यूरिया अमोनियम नाइट्रेट	32	0	0
पोटाशियम नाइट्रेट	13	0	0
एम ए पी	12	61	0
पोटाशियम क्लोराइड	0	0	60
पोटाशियम नाइट्रेट	13	0	46
पोटाशियम सल्फेट	0	0	50
पोटाशियम थियोसुल्फेट	0	0	25
एम के पी	0	52	34
फॉस्फोरिक एसिड	0	52	0
एनपीके	19	20	19
	20	19	20

## फर्टिगेशन के लिए उपयुक्त उर्वरकों के गुणधर्म :

- पोषक तत्वों की मात्रा अधिक होनी चाहिए।
- जल के अंदर पूर्णतः घुलनशील होने चाहिए।
- फिल्टर और ड्रिप्पर को बंद (क्लोज) न करें।
- अघुलनशील पदार्थ उर्वरकों में 0.02 प्रतिशत से कम होने चाहिए।
- फर्टिलाइजर दूसरे फर्टिलाइजर के साथ संगत होना चाहिए।
- फर्टिलाइजर जल के पी एच में बदलाव न करें।



## आवश्यक सूचना

“हरियाणा खेती” मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

– सह-निदेशक (प्रकाशन)

# खेत का पानी खेत में

नरेंद्र कुमार एवं निकिता यादव

कृषि अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा में दो बड़े भू-क्षेत्र हैं। राज्य का एक बड़ा हिस्सा समतल जलोढ़ मैदानों से युक्त है और पूर्वोत्तर में तीखे ढाल वाली शिवालिक पहाड़ियां तथा संकरा पहाड़ी क्षेत्र है। हरियाणा में नहर सिंचाई प्रणाली और बड़े पैमाने पर नलकूप होने के बावजूद कुछ अत्यधिक सूखाग्रस्त क्षेत्र भी हैं। इसका मुख्य कारण बरसात के पानी को संग्रहित न कर पाना है। हरियाणा में बरसात दक्षिण से पूर्व की तरफ बढ़ती है। हरियाणा में बरसात बड़ी ही अनिश्चित है, यहाँ बरसात कम समय में अधिक हो जाती है। जिस से ये बरसात का पानी बह जाता है। प्रदेश में लगभग 29 प्रतिशत बारिश जुलाई से सितंबर तक के महीनों में होती है और दिसंबर से फरवरी की अवधि के दौरान शेष बरसात होती है। हरियाणा में अधिकतम 216 सेंटीमीटर (शिवालिक की तलहटी में) और न्यूनतम 25-38 सेंटीमीटर (दक्षिणी हरियाणा में) होती है। हरियाणा में बरसात बहुत ही औसत होती है। बरसात कम समय में अधिक होती है। इसलिए ये बह जाती है। इसके साथ-साथ मृदा की ऊपरी उपजाऊ परत को भी नुकसान पहुंचता है। बहुत बड़े-बड़े जल संरक्षण के तरीकों को अपनाने की बजाय हमें बरसाती जल को खेत में ही संरक्षित करने की आवश्यकता है।

## बरसाती जल को खेत में संरक्षित करने के कुछ उपाय

1. **दो खेतों के बीच में नाली बनाकर** : दो खेतों के बीच में नाली बनाकर बरसात के जल को खेतों में संरक्षित किया जाता है। बरसात का पानी नाली में एकत्रित हो जाता है। नालियां 60 सें.मी. से 75 सें.मी. तक गहरी होनी चाहिए ताकि बरसात का पानी रिसाव से खेत की मृदा की निचली सतह में चला जाये। बरसात प्रारंभ होने से पहले इन नालियों को अच्छे से साफ कर देना चाहिए। ऐसा करने से पानी तेजी से खेतों में रिस जायेगा।

2. **गड्ढे बनाकर जल को रोकना** : बरसात शुरू होने से पहले यदि खेत खाली हो तो उस पर जगह-जगह छोटे-छोटे गड्ढे बना देने चाहिए। ये गड्ढे पानी को एकत्रित करके उसे खेतों में रिसने का समय बढ़ा देंगे जिससे ज्यादा से ज्यादा पानी जमीन में जायेगा। ये मृदा संरक्षण का भी अच्छा उपाय है।

3. **मेड़बंदी को मजबूत करके** : बरसात शुरू होने से पहले खेतों के चारों तरफ की मेड़ को मजबूत कर देना चाहिए। इस से जो भी बरसात का पानी खेत में बरसेगा वो खेत में ही रहेगा। मेड़बंदी दूसरे खेतों से आने वाले पानी को भी रोकती है। ये जलभराव को रोकने का अच्छा उपाय है। दूसरी जगह बरसा हुआ पानी खेतों में नहीं घुस पाता। बहते हुए पानी के साथ आने वाले अनेक खरपतवार का भी बचाव हो जाता है।

4. **खेत की सतह को बरसात के बाद ढक कर** : बरसात के बाद जल मुख्यतः वाष्पीकरण के कारण जमीन से उड़ जाता है। बरसात के बाद हमारा मुख्य उद्देश्य बरसात के पानी को बचाना होता है। इसके लिए, हम जमीन को किसी चीज से ढक देते हैं। इस से सूरज की किरणें सीधी जमीन पर नहीं पड़ती और वाष्पीकरण कम हो जाता है। कुछ रासायनिक पदार्थ भी इसके लिए इस्तेमाल किये जा सकते हैं।

5. **गोबर की खाद मिला कर** : गोबर की खाद मिलाने से मृदा की जल धारण करने की क्षमता बढ़ जाती है। जिस से पानी मृदा में लम्बे समय तक सुरक्षित रहता है। गोबर की खाद डालने से मृदा का स्वास्थ्य भी सुधरता है। जीवांश खादों के प्रयोग से पौधों की जड़ों का उचित विस्तार होता है जो मिट्टी के कणों को बांधकर रखती है जिससे भूमि कटाव कम होता है। भूमि में जीवांश की मात्रा बढ़ने से भूमि के भौतिक गुणों में सुधार आता है। इससे मिट्टी की जल धारण शक्ति बढ़ती है और भूमि क्षरण कम होता है।

6. **ढाल को काट कर** : यदि किसी खेत का ढाल अधिक हो तो बरसात का पानी तेज गति से बह कर आगे जायेगा। इस से मृदा कटाव की संभावना बढ़ जाती है। इसे रोकने के लिए हम ढाल को काटकर पानी की गति को कम करते हैं। ढाल को हम जुताई या किसी हैरो से काट सकते हैं। ऐसा करने से पानी को मिट्टी में जाने के लिए समय अधिक मिल जाता है। मृदा कटाव में भी कमी आती है।

7. **खेतों की जुताई करके** : खेतों की जुताई खेतों में बरसात को रोकने का सबसे कारगर तरीका है। ऐसा करके हम मृदा के कोशिका छिद्रों को तोड़ देते हैं। जिस से वाष्पीकरण कम हो जाता है। जुताई से हम खेतों की सतह को ऊबड़-खाबड़ कर देते हैं, जिस पर बरसात पड़ती है। बरसात और खेतों की सतह का संपर्क क्षेत्र बढ़ जाता है। जिस से बरसाती पानी अधिक से अधिक खेतों में संरक्षित रहता है।



## आवश्यक सूचना

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार स्थित किसान सेवा केन्द्र में किसानों हेतु सप्ताह में तीन दिन सोमवार, बुधवार एवं शुक्रवार को 10 से 12 बजे तक निःशुल्क फोन सुविधा (हैल्प लाइन) फोन नं. 1800-180-3001 पर उपलब्ध है जिसमें वैज्ञानिकों से कृषि-संबंधी परामर्श किया जा सकता है। यदि किसी जगह से यह फोन सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो किसान भाई 01662-232768 पर सशुल्क फोन करके उपर्युक्त दिनों में इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल में भी सोमवार, बुधवार, शुक्रवार 10 से 12 बजे तक फोन नं. 1800-180-4002 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, ऊचानी (करनाल) में भी मंगलवार व बुधवार 10 से 11 बजे तक फोन नं. 1800-180-3111 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।



# मई मास के कृषि कार्य



## फसलों में

### धान

भारी व स्वस्थ बीज के चुनाव के लिए 10 किलोग्राम बीज को 10 लीटर नमक के घोल (10 लीटर पानी में एक किलोग्राम नमक) में डुबोएं और हाथ से धीरे-धीरे चलाएं। हल्के रोगग्रस्त बीज तथा आभासी कंडुआ के पिण्ड ऊपर तैरने लगते हैं जिन्हें निकाल कर नष्ट कर दें और नीचे बैठे हुए भारी बीज को स्वच्छ पानी से 3-4 बार अच्छी तरह धो लें तथा तदुपरांत फफूंदनाशक दवा के घोल से उपचारित करें। बीजजनित रोगों से बचाव के लिए 10 लीटर फफूंदनाशक घोल (10 ग्राम एमीसान या कार्बेन्डाजिम, एक ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन व 10 लीटर पानी) में 10 किलोग्राम धान को 24 घंटे भिगोकर उपचारित करके ही बिजाई करें। धान की नर्सरी उगाने के लिए 10-12 गाड़ी गोबर की खाद, 22 कि.ग्रा. यूरिया, 65 कि.ग्रा. एस. एस. पी. तथा 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ डालें। फिर 2 सप्ताह बाद 22 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ नर्सरी में डालें।

धान की नर्सरी में खरपतवार नियन्त्रण के लिए बिजाई के 1-3 दिन बाद 600 ग्राम सोफिट (प्रेटिलाक्लोर 30 ई.सी.+सेफनर) प्रति एकड़ को 60 कि.ग्रा. सूखी रेत में मिलाकर प्रयोग करें या 1.2 लीटर ब्यूटाक्लोर ई.सी. (मचैटी/डेलक्लोर/हिल्टाक्लोर) या थायोबेनकार्ब (सैटर्न ई.सी.) या पोन्डीमैथलीन (स्टॉम्प 30 ई.सी.) को 60 कि.ग्रा. सूखी रेत में मिलाकर अंकुरित धान के बोने के 6 दिन बाद एक एकड़ नर्सरी में डालें। अथवा नर्सरी में मिले-जुले खरपतवारों के नियन्त्रण के लिए 100 मि.ली. बिस्पाइरी बैक सोडियम (नोमिनी गोल्ड) 10 एस.एल. को 200 लीटर पानी में मिलाकर बिजाई के 15 दिन बाद प्रति एकड़ छिड़काव करें।

### लेखक :

- आर. एस. हुड्डा, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- आर. के. गोदारा, सह-निदेशक (बागवानी)
- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (पादप रोग विज्ञान)
- एम. एस. ग्रेवाल, परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)
- अशोक चन्द्र यादव, परामर्शदाता (सब्जी विज्ञान)
- वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह, सहायक वैज्ञानिक, लुवास (पशु पालन विभाग)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

**कम अवधि वाली बौनी किस्में :** आई आर 64, एच के आर 46, एच के आर 47 व गोबिन्द की नर्सरी 15 मई से 30 जून तक लगाएं।

**मध्यम अवधि वाली किस्में :** जया, पी आर 106, एच के आर 120, एच के आर 126, एच के आर 127 एवं हरियाणा संकर धान-1 की नर्सरी 15 मई से 30 मई तक लगाएं।

### गेहूँ

खुली कांगियारी के निवारण के लिए गेहूँ के बीज को सौर ताप से उपचारित करें। मई-जून के महीने में जिस दिन मौसम साफ व खुला हो उस दिन 8 बजे प्रातः बीज को पानी में भिगो दें; ऊपर तैरते हुए पदार्थों को निकाल कर नष्ट कर दें और 4 घण्टे तक भीगने के बाद नीचे बैठे गेहूँ के बीज को दोपहर 12 बजे निकाल लें और किसी पक्के फर्श या तिरपाल आदि पर फैलाकर शाम तक सुखाएं।

### कपास

बिजाई इस माह के अंत तक पूरी कर लें। नरमा की उन्नत किस्में तथा देसी कपास की सिफारिशशुदा किस्में ही बोएं।

कपास से बढ़िया फुटाव के लिए पूरे खेत की तैयारी सही ढंग से करनी जरूरी है। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए। इसके बाद आवश्यकतानुसार 3-4 जुताइयां करें। बिजाई के समय खेत में तर बत्तर (गीली आल) का होना जरूरी है। इसके लिए खेत में अच्छा पलेवा करें। गीले बत्तर में दो जुताइयां करके सुहागा लगाएं व खेत को एकसार कर लें। खेत में पौधों की सही संख्या के लिए बीज की सही मात्रा प्रयोग में लाएं व बीज का उपचार करके ही बिजाई करें। नरमे को रोयें रहित 6-8 किलोग्राम व रोएं-युक्त 8-10 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ प्रयोग करें। देसी कपास में 5 कि.ग्रा. बीज काफी रहता है। संकर किस्मों का रोएं उतारा बीज 1.2 से 1.5 कि.ग्रा. प्रति एकड़ प्रयोग करें। बी.टी. संकर किस्मों का 850 ग्राम बीज प्रति एकड़ प्रयोग करें। बीज को 4 से 5 सें.मी. गहरा बोएं। नरमा की मुख्य किस्में एच एस 6, एच 1117 व एच 1226, एच 1098 संशोधित, एच 1236, एच 1300; नरमा की संकर किस्में एच एच एच 223, एच एच एच 287; देसी कपास की एच डी 107, एच डी 123, एच डी 324 व एच डी 432 तथा संकर नरमा में देसी की ए ए एच 1 प्रमुख हैं। बी.टी व संकर किस्मों को 67.5-60 सें.मी. के फासले पर बीजों या कतार से कतार की दूरी 100 सें.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 45 सें.मी. रखें व अन्य किस्मों में कतार से कतार की दूरी 67.5 सें.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 30 सें.मी. रखें।

बीजने के लिए यदि रोएं उतारे हुए बीज न मिलें तो रोएंदार (साधारण) बीज को बोने से पहले बारीक मिट्टी, गोबर या राख से रगड़

लेना चाहिए ताकि ड्रिल में से बीज एकसार निकलें। बिजाई कपास बीजने वाली एक खूड वाली ड्रिल से कतारों में करें।

अमेरिकन कपास की बिजाई करते समय हिसार तथा सिरसा जिलों में, जहां जमीन काफी रेतीली है, 37 किलोग्राम यूरिया तथा 75 किलोग्राम सुपरफास्फेट और 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ बिजाई के समय ड्रिल करें। यूरिया की शेष आधी मात्रा (37 कि.ग्रा.) बौकी आने पर डालें। यदि जमीन भारी है और कपास गेहूँ के बाद ले रहे हैं तो भी खाद बिजाई के समय डालें। यदि कपास बोने से पहले जमीन खाली थी और जमीन भारी किस्म की है तो सिर्फ फास्फोरस और जिंक की मात्रा ही बिजाई से पहले डालें। सुपर फास्फेट हमेशा ड्रिल द्वारा डालनी चाहिए।

कपास की देसी किस्मों के लिए फास्फोरस की मात्रा की सिफारिश तभी की जाती है जब मिट्टी परीक्षण में फास्फोरस की कमी हो। यदि देसी कपास रेतीली व कमजोर भूमि में बो रहे हैं तो बिजाई के समय 45 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ अवश्य डालें। जस्ता कपास में तभी डालें यदि इससे पहले फसल में जस्ता नहीं डाला गया।

संकर कपास में नत्रजन और फास्फोरस की दुगुनी मात्रा डालें तथा पोटाश भी 40 किलोग्राम प्रति एकड़ बिजाई के समय डालें।

मृदाजनित एवं बीजजनित रोगों से बचाव के लिए बीज का उपचार करके ही बिजाई करें। इसके लिए 10 लीटर फफूंदनाशक दवा के घोल (10 लीटर पानी में एक ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन, 1 ग्राम सक्सीनिक तेजाब व 5 ग्राम एमीसान) में 5 किलोग्राम रोएंदा बीज या 7½ कि.ग्रा. रोएं उतारे हुए (डिलिटेड) बीज को भिगोएं। रोएं वाले बीज को 6-8 घंटे तक तथा रोएं उतारे गए बीज को केवल 2 घंटे तक ही भिगोएं। जिन क्षेत्रों में पिछले वर्षों में जड़ गलन की गंभीर समस्या देखी गई हो उन खेतों में कपास की बिजाई न करके ज्वार या बाजरे की खेती करें या 2.5 ग्राम बाविस्टिन प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचार अवश्य करें। नरमा कपास का पत्ती मरोड़ रोग जहां पर पिछले साल देखा गया हो वहाँ देसी कपास या नरमा की प्रतिरोधी किस्म एच 1117, एच एच 223 की ही काशत करें।

जिन खेतों में पिछले वर्षों में दीमक का प्रकोप देखा गया हो वहाँ बिजाई से पहले प्रति किलोग्राम बीज को 10 मि.ली. क्लोरपायरीफास 20 ई.सी. व 10 मि.ली. पानी के घोल से उपचारित करें। बीज को भिगोने के बाद ही इसे कीटनाशक के घोल से उपचारित करें। खरपतवार नियंत्रण हेतु ट्रेफ्लोन (ट्राईफ्लूरालिन) की 0.8 लीटर मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से या बासालीन की 0.8 लीटर मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से 200-250 लीटर पानी में मिलाकर बिजाई से पहले स्प्रे करें व मृदा में मिलाएं अथवा कपास की बिजाई के तुरन्त बाद पेन्डीमैथलीन (स्टोम्प 30 ई.सी.) की 2 लीटर मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से 200-250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। इन खरपतवारनाशकों के प्रयोग के समय मृदा में उचित नमी का होना ज़रूरी है। मीलीबग के नियंत्रण के लिए बंजर भूमि पर व खेतों के आस-पास, मेढ़ों, खालों व रास्तों आदि पर उगने वाले खरपतवारों जैसे गाजर (कांग्रेस) घास, कांगी बूटी तथा कपास की पिछली फसल के टूटों से उगने वाले पौधों को नष्ट करें। कपास की छंटियों के ढेरों के नीचे गिरे टिण्डों, पत्तों आदि को जला दें।

## गन्ना

गर्मियों में 10 दिन के अंतर पर सिंचाई करें। मोढ़ी में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। खरपतवार नियंत्रण के लिए ऐट्राजीन 50% घु. पा. 1-6 कि.ग्रा. प्रति एकड़ का छिड़काव 250-300 लीटर पानी में घोलकर करें। इसके बाद 2,4-डी (सोडियम साल्ट) 1.0 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की दर से 250 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। पहला छिड़काव बिजाई के 3 सप्ताह बाद करें। गन्ने की बीजू या नौलफ फसल में इस माह के अंत तक नाइट्रोजन वाली खाद की दूसरी मात्रा (45 किलोग्राम यूरिया) प्रति एकड़ खेत से घास-फूस निकालकर छिट्टे द्वारा डालें व ऊपर से हल्की सिंचाई करें। मोढ़ी फसल में उपर्युक्त खादों की डेढ़ गुनी मात्रा का प्रयोग करें।

मोढ़ी फसल में दीमक और कनसुआ की रोकथाम के लिए 2.5 लीटर क्लोरपायरीफास 20 ई.सी. प्रति एकड़ सिंचाई के साथ लगाएं।

अगर गन्ने में पाइरिल्ला (अल) का आक्रमण हो व इसे मारने वाले परजीवी न हों तो 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

कभी-कभी काली बग (काली कीड़ी) के आक्रमण के कारण भी फसल पीली पड़ जाती है। अतः इस कीट के नियंत्रण के लिए 160 मि.ली. डाइक्लोरेवास 76 ई.सी. या 400 मि.ली. फेनिट्रोथियान 50 ई.सी. को 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। छिड़काव गोभ पर करें ताकि दिन के समय बच्चे तथा प्रौढ़ नष्ट हो जाएं। कभी-कभी अष्टपदी (माईट) का आक्रमण होने से पत्तों पर लाल रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। इसके लिए 600 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या 500 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।



## सब्जियों में

### टमाटर

नाइट्रोजन वाली खाद खड़ी फसल में दो बार दें-पहली पौधरोपण के लगभग 3 सप्ताह बाद व दोबारा पहली मात्रा के एक महीने बाद। हर बार 12.5 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (27 कि.ग्रा. यूरिया) प्रति एकड़ की दर से दें। खाद देने के बाद सिंचाई करना न भूलें। सामान्यतः गर्मी के दिनों में 6 से 7 दिनों के अंतर पर सिंचाई करने की आवश्यकता होती है। रस चूसने वाले कीटों को मारने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। इस छिड़काव से टमाटर के वायरस रोगों की रोकथाम भी हो जाएगी। फल छेदक के लिए 500 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

### बैंगन

गर्मी के महीनों में सिंचाई का ध्यान रखें तथा खरपतवार निकालें। फलों को कच्ची व नरम अवस्था में तोड़ें तथा तोड़ते समय यह उचित होगा कि किसी तेज चाकू या ऐसे अन्य औज़ार को प्रयोग में लाएं जिससे कि

टहनियां न टूटें। खड़ी फसल में 2 बार में 28 किलोग्राम नाइट्रोजन (14+14) प्रति एकड़ की दर से दें। पहली मात्रा रोपाई के 30 दिन बाद और दूसरी मात्रा 60 दिन बाद लगाएं।

### मिर्च

प्लानोफिक्स या पौध वर्धक रसायन 40 मि.ली. दवा को 150 लीटर पानी में मिलाकर फूल आने के समय छिड़काव करें। इस दवा के प्रयोग से फल-फूल गिरने की समस्या काफी हद तक रुक जाती है। थ्रिप्स, अल और सफेद मक्खी से रक्षा करने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़कें। छिड़काव 15-20 दिन के बाद दोहराएं। इस छिड़काव से मिर्च के वायरस रोगों की भी रोकथाम हो जाएगी।

### मूली

मूली की गर्मी की फसल के लिए सिर्फ पूसा चेतकी किस्म को ही प्रयोग में लाएं।

### भिण्डी

कीटों (हरा तेला और चित्तीदार सूण्डी) से बचाव के लिए 300-500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-300 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। दवाई छिड़कने के बाद 8-10 दिन तक फल खाने के प्रयोग में न लें।

### तरबूज व खरबूजा

चेपा, हरा तेला, माईट का प्रकोप होने पर 250 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। आवश्यकता पड़ने पर फिर दोहराएं। यदि फलों में मक्खी का आक्रमण हो गया हो तो खराब फलों को तोड़कर नष्ट कर दें तथा 250 मि.ली. फेनिट्रोथियान 50 ई.सी. या 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 500 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. को 1.25 किलोग्राम गुड़ और 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। सफेद चूर्णी नामक रोग होने पर 500 ग्राम घुलनशील गंधक (सल्फैक्स) को 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

### कद्दू जाति की अन्य सब्जियां

सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें। यदि खाद की दूसरी मात्रा न दी हो तो प्रति एकड़ 6 कि.ग्रा. नाइट्रोजन दें तथा सिंचाई करें।

### वृद्धि नियामकों का प्रयोग

घीया (लौकी) की फसल में इथ्रैल नामक दवा के प्रयोग से अधिक उपज प्राप्त होती है। इस दवा से उपचार के लिए फसल का दो सच्ची पत्ती और चार सच्ची पत्ती की अवस्था पर उपचार करने की आवश्यकता होती है। इथ्रैल नामक दवा के प्रयोग के लिए 100 पी. पी. एम. का घोल बनाएं (4 मि.ली. इथ्रैल 50 प्रतिशत को 20 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ फसल पर प्रयोग करें) तथा ऊपर बताई 2 और 4 पत्ती की अवस्थाओं पर

छिड़काव करें। इन दवाओं के प्रयोग से मादा फूल अधिक संख्या में आते हैं जिससे उपज में वृद्धि हो जाती है। ध्यान रखें कि घोल में चिपचिपाहट लाने वाला पदार्थ (जैसे कि सेल्वेट-99, टिट्रान या अन्य) भी मिला लें।

### अरबी

नाइट्रोजन की खाद खड़ी फसल में दो बार दें - पहली बिजाई के लगभग 3-4 सप्ताह बाद और इतनी ही मात्रा लगभग इतने ही दिनों के बाद।

### शकरकन्दी

अप्रैल से जुलाई माह तक शकरकन्दी की काट खेत में लगाते हैं। शकरकन्दी की किस्में पूसा लाल व पूसा सफेद प्रयोग में लें। बिजाई के लिए 24,000 से 28,000 बेलों की कटिंग की एक एकड़ में आवश्यकता होती है। 60 सें.मी. के फासले पर बनी डोलों में काट लगाएं। एक पौधे से दूसरे पौधे की दूरी 30 सें.मी. रखें। खेत तैयार करते समय 10 टन गोबर की गली-सड़ी खाद, 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 200 कि.ग्रा. सिंगल सुपरफास्फेट तथा 55 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति एकड़ की दर से काटें लगाने से पहले दें।

### अगेती फूलगोभी

फूलगोभी की किस्म पूसा कातकी लगाएं। इसकी अगेती खेती के लिए नर्सरी में बिजाई की जा सकती है। एक एकड़ खेत के लिए लगभग 300-500 ग्राम बीज की आवश्यकता होगी। इसके बीज का उपचार कैप्टान नामक दवाई से (ढाई ग्राम दवा प्रति किलो बीज की दर से) करें। बिजाई पंक्तियों में करें तथा नर्सरी उठी हुई बनाएं।



## फलों में

### अंगूर

अंगूर की नई बेलों की ट्रिमिंग करें। पोटाशियम सल्फेट या म्यूरेट ऑफ पोटाश और यूरिया खाद की जो मात्रा बची हुई है, इस महीने के शुरू में पुरानी बेलों को दें और हल्की गुड़ाई करके सिंचाई करें। इस महीने के अंतिम सप्ताह में ब्यूटी सीडलैस व परलेट किस्में पकनी शुरू हो जाएंगी। इन किस्मों में हर दसवें दिन हल्की-हल्की सिंचाई करें लेकिन फल तुड़ाई से 5-7 दिन पूर्व सिंचाई अवश्य करें और फिर बंद कर दें।

एन्थ्रेक्नोज रोग से बचाव हेतु मई के प्रथम सप्ताह में बेनलेट या बाविस्टीन 0.2% घोल का छिड़काव करें।

यदि बालों वाली सूण्डी का प्रकोप हो तो 400 मि.ली. डाईक्लोरोवास 76 ई.सी. (नूवान) को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। यदि थ्रिप्स कीड़े का आक्रमण हो तो आधा लीटर मैलाथियान 50 ई.सी. या 150 मि.ली. फेनवेलरेट 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।



## नींबू वर्गीय फल

नए पौधों की हर सप्ताह सिंचाई करें। फलों को गिरने से बचाने के लिए महीने के शुरू में ही 6 ग्राम 2,4-डी, 12 ग्राम आरियोफन्जिन व 1500 ग्राम जिंक सल्फेट को 550 लीटर पानी में घोल बनाकर पौधों पर छिड़कें। फल देने वाले पौधों की सिंचाई 10-15 दिन के अंतराल पर करते रहें। कीड़ों व बीमारियों के नियंत्रण के लिए अप्रैल माह के लिए दी गई विधि अपनाएं। जब नींबूवर्गीय पौधों में कपास या सूरजमुखी की फसल खड़ी हो तो 2,4-डी की जगह 20 मि.ग्रा. प्रति लीटर एन.ए.ए. दवाई का प्रयोग करें।

## आम

आम के फलों को गिरने से बचाने के लिए 1½ से 2% यूरिया का घोल छिड़कें।

## आड़ू व अलूचा

बागों की सिंचाई नियमित रूप से करते रहें। फ्लोरेडासन व सनरेड किस्में पकने लगेंगी। यदि चेपा (माहू) का आक्रमण हो तो 200 मि.ली. डाइमिथोएट 30 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

## बेर

एक साल पुरानी टहनियों को 6 सेकडरी तक काटें। बेर के पौधों की इस माह में कटाई-छंटाई पूरी करें। पूर्ण विकसित पौधों में 100 किलोग्राम प्रति पौधा गोबर की खाद डालकर गहरी जुताई करें व सिंचाई करें।

**नोट :** सदाबहार फलदार पौधों को गर्मी से बचाने का प्रबंध करें। पौधों के मुख्य तनों पर ब्लॉइंटॉक्स या बोर्डो मिश्रण का लेप लगाना चाहिए। छोटे पौधों को गर्मी से बचाने के लिए पौधे से 2 इंच की दूरी पर ढ़ँचा की बिजाई चारों तरफ करें।



## पशुओं में

### गाय-भैंस

मई मास में अधिक तापमान की संभावना रहती है या कहीं-कहीं आँधी-तूफान भी आ सकते हैं। अतः पशुओं का इस प्रकार से प्रबंधन करना चाहिए कि गर्मी के मौसम में होने वाले रोग, हीट स्ट्रोक (तापघात), पानी व नमक की कमी, भूख या पाचन कम होना या उत्पादन कम होने जैसी समस्याओं का सामना पशुपालकों को न करना पड़े। इन बातों को ध्यान में रखते हुए ही कुछ महत्वपूर्ण प्रबंधन संबंधी सुझाव इस प्रकार हैं :-

- मई मास (या अप्रैल में) गलघोटू व मुँह-खुर के टीकाकरण हो जाने चाहिए। ध्यान रहे ये रोग पशुओं के लिए प्राणघातक साबित हो सकते हैं, अतः किसी भी भ्रम में न पड़कर (विशेषकर दूध-उत्पादन संबंधी) इन रोगों के टीकाकरण अपने पशु-चिकित्सक की सलाहानुसार करें।

- मई मास में लू एवं सीधी गर्म हवाओं से पशुओं का बचाव करें। पशुओं के लिए ऐसी व्यवस्था रखें कि जिससे पशुओं को छाया भी मिले व सीधी लू भी न लगे। आमतौर पर पशुपालक अच्छी छाया के बाद इस तथ्य को नजरअंदाज कर देता है व पशु तापघात का शिकार हो जाते हैं।
- तापघात के लक्षण व पहचान-पशु का मुँह खोलकर तेज सांस लेना, बढ़ी हुई हृदय गति अत्यधिक शारीरिक तापमान (106-108 डिग्री फार्नहाइट) इत्यादि।
- तापघात (हीट स्ट्रोक) से बचाने हेतु प्रबंधन : पशुओं को (विशेषकर भैंसों को) तापघात से बचाने हेतु पशुपालक कई प्रबंधन उपाय कर सकता है, जैसे कि 24 घण्टे ताजा पानी की व्यवस्था, पानी के साथ-साथ नमक भी उपलब्ध कराना (पोटाशियम की कमी रोकने हेतु) दोपहर की बजाय, सांय/रात्रि काल में भोजन की व्यवस्था, कम रेशे, उच्च ऊर्जा व सुपाच्य भोजन की उपलब्धता, पशु-आहार में बाई-पास प्रोटीन (मछली-चूरा इत्यादि) का इस्तेमाल, फार्म या पशु आवास में ताजा हवा के आवगमन की व्यवस्था, पंखे/कूलर आदि का प्रबंध, भीगी बोरी इत्यादि से तापमान नियंत्रण करना, फव्वारों का इस्तेमाल व दिन में 2-3 बार नहलाने की व्यवस्था आदि करके पशुपालक बिना किसी उत्पादन के नुकसान के इस मौसम में पशुओं को स्वस्थ रख सकता है। कई बार पशुपालक गर्मियों में दूध कम होने की समस्या रखता है। ध्यान रहे कि यदि पशु के शरीर में पानी की कमी होगी तो दूध भी कम होगा। अतः प्रयास करें कि हर पशु को 24 घण्टे ताजा पानी की उपलब्धता रहे और यदि किसी कारणवश ऐसा नहीं कर सकते तो कम से कम पशुओं को दिन में 4-5 बार नमक या लवणों-युक्त पानी जरूर पिलाएं व दिन में दो बार जरूर नहलाएं या उन पर पानी डालें। केवल मात्र इस प्रबंधन से ही किसान गर्मी में कम दूध के होने के नुकसान से बच सकता है व इस मौसम में अच्छे भाव से अपनी आय नियमित रख सकता है।
- हर मौसम में व हर पशु को खनिज मिश्रण (मिनरल मिक्चर) अवश्य दें, पशुपालक इसे हल्के में न लें। यह पाऊंडर पशुओं के लिए 'रामबाण' साबित हो सकता है।
- पशु-आहार में गेहूँ का चोकर और जौ की मात्रा बढ़ाएं।
- चारे के लिए बोई गई चरी, मक्का आदि की कटाई करें।
- भेड़ों में ऊन कतरने का कार्य करें।

यदि आप अपने पशुओं को मई मास में गलघोटू रोग से बचाव का टीका लगवा लें तो बरसात में यह रोग नहीं होगा। गाय व भैंसों में फड़ सूजने या पुट्टे सूजने का रोग बरसात के मौसम में हो जाता है। पुट्टे सूजन रोग के बचाव का टीका पशुओं को लगाने से यह रोग नहीं होता। यह टीका पशु चिकित्सालय में मुफ्त लगता है। चार मास से 3 वर्ष तक की आयु के सभी गो-जाति के पशुओं को यह टीका अवश्य लगवा लेना चाहिए।

पशुओं में मुँह व खुरपका रोग से बचाव का टीका अपने नजदीकी पशु चिकित्सालय से लगवा लें। यदि रोग हो जाए तो रोगी पशु को दूसरे

पशुओं से अलग कर दें। ध्यान रहे कि एक रोग का टीका लगवाने के बाद दूसरे रोग का टीका 15 दिन बाद ही लगवाएं।

इस माह पशुओं को लू लगाने से दूध की क्षमता घट जाती है और वे बीमार हो सकते हैं। उन्हें छायादार पेड़ों के नीचे रखें और पीने के साफ पानी की कमी न आने दें। भैंसों को पानी के छिड़काव व नहलाने से उनकी दूध देने की क्षमता बनी रहती है। पशुओं की खुराक में खनिज मिश्रण (मिनरल मिक्सचर) का लगातार प्रयोग करें। प्रत्येक पशु को 50 ग्राम खनिज मिश्रण रोजाना देना चाहिए। पशुओं के राशन में बिनौले की बजाय, बिनौले की खल तथा ग्वार की बजाय ग्वार की चूरी देनी चाहिए तथा पशुओं को संतुलित आहार देने से उनकी उत्पादन क्षमता बनी रहती है तथा इन्हें अन्य रोगों से बचाया जा सकता है तथा भैंसों इस मौसम में गर्मी में भी आती रहती हैं।

### भेड़ें

इस मास भेड़ों की ऊन काटी जाती है। ऊन काटने से पहले भेड़ों में पुट्टे सूजने के रोग से बचाव का टीका नजदीकी पशु चिकित्सालय से अवश्य लगवाएं। भेड़ के पेट में कीड़े होने के कारण उनकी वृद्धि कम होती है और उनसे ऊन की प्राप्ति कम होती है। अपने पशु चिकित्सक की सलाह से भेड़ों को कृमिनाशक दवाई दें।

अब भेड़ों का प्रजनन काल आरंभ होने वाला है। अपनी भेड़ों में आप प्रजनन के लिए अच्छी नस्ल के मेढ़े का प्रयोग करें। अच्छी नस्ल के मेढ़े आप अपने क्षेत्र के भेड़ व ऊन केन्द्र, पशुधन फार्म हिसार एवं केन्द्रीय भेड़ प्रजनन फार्म, हिसार से ले सकते हैं।

### कुक्कुटों में

मुर्गियों को रानीखेत एवं चेचक का टीका लगवाएं। छत पर सफेदी करें। मुर्गीघर पूर्व-पश्चिम दिशा में हो। मुर्गी आहार में लगभग 2 प्रतिशत प्रोटीन अधिक दें। दोपहर में जब खूब गर्मी पड़ती है तो खिड़कियों को गीली बोरी आदि से ढक कर रखें। मुर्गियों को ठण्डे पानी में इलैक्ट्रोलाइट पाऊंडर डालकर पिलाएं। बिछावन को दिन में चार बार पलटें और आहार को भी फीडर में दिन में पांच-छः बार डालें। मुर्गीघर के बाहर शहतूत के पेड़ लगाएं। छत पर भी फूस डालें। पिलाने के लिए पानी घड़े में रखें और पानी की पाइप को चारों तरफ से टाट लपेट कर रखें। प्रत्येक 15 दिन बाद मुर्गी आहार बनाएं।



## घर-आंगन में

अप्रैल के महीने में मौसम परिवर्तन के कारण शरीर के लिए पानी की जरूरतें भी बढ़ जाती हैं और थोड़ी देर के बाद ही कुछ ठण्डा पीने का मन करता है। इन दिनों बाजार में पेय बनाने वाले फल एवं सब्जियाँ प्रचुर मात्रा

में उपलब्ध होती हैं। अतः आप इनसे प्रचुर मात्रा में घर पर ही पेय पदार्थ बनाकर उपयोग में ला सकते हैं एवं इन्हें आय उपार्जन के रूप में भी अपना सकती हैं। पेय पदार्थों को घर पर बनाने के लिए आप अपने जिले में स्थित जिला विस्तार विशेषज्ञ (गृह विज्ञान) या जिला विस्तार विशेषज्ञ (बागवानी) से संपर्क कर सकते हैं।

### फार्म प्रबन्ध

इस माह किसानों के फसल उत्पाद बिक्री के लिए तैयार होते हैं। किसानों को सलाह दी जाती है कि अपने अन्न उत्पाद गाँव के व्यापारी या घुमन्तु व्यापारियों को न बेचकर केवल नियमित मण्डी में ले जाकर बेचें। मण्डी में बिक्री के लिए ले जाने से पहले निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें :

1. मण्डी में ले जाने से पहले अनाज की भली प्रकार सफाई कर लें तथा अनाज को अच्छी तरह सुखा लें।
2. अलग प्रकार के अनाज को अलग-अलग बेचें। बढ़िया किसम के अनाज की कीमत हमेशा ज्यादा मिलती है।
3. फसल उत्पाद को ग्रेड करा लेने के बाद उसकी उचित कीमत लगती है। कृषि विभाग द्वारा प्रमुख मण्डियों में कपास व खाद्यान्नों की ग्रेडिंग के लिए केन्द्र स्थापित किए गए हैं। इन केन्द्रों पर किसानों की उपज की निःशुल्क ग्रेडिंग की सहूलियत उपलब्ध है।
4. कटाई के बाद किसान अपनी उपज को एक साथ ही मण्डियों में न लाकर उसे धीरे-धीरे लाएं जिससे कठिनाई न उठानी पड़े तथा उनकी उपज का सही मूल्य उन्हें मिल सके।
5. किसानों को चाहिए कि वह अपनी फसल मण्डी में तोल कर ले जाएं और बाद में पड़ताल के लिए तोल कराएं।
6. फसल उत्पाद को जहाँ तक संभव हो सहकारी संस्था अथवा सहकारी सोसाइटी द्वारा बेचें तथा यह ध्यान रखें कि उपज का समर्थन मूल्य प्राप्त हो। फसल बेचने में यदि कोई कठिनाई आए तो स्थानीय मार्केट कमेटी के सचिव से संपर्क करें।
7. अपनी फसल खुली बोली पर ही बेचें व अपनी उपस्थिति में तोल करवाएं।
8. किसान से मण्डी में उतराई/अराई/सफाई के खर्च काटे/वसूल किए जाते हैं।
9. किसान अपनी फसल उत्पाद बिक्री का हिसाब करके अपने आढ़ती से 'जे' फार्म अवश्य प्राप्त करें। आढ़तियों से अपनी बेची गई कृषि उपज का हिसाब करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखा जाए कि उपर्युक्त खर्च के अलावा कोई और कटौती न की गई हो और यदि ऐसा होता है, तो उसकी सूचना तुरंत कार्यकारी अधिकारी एवं सचिव मार्केट कमेटी को लिखित रूप में अथवा मौखिक रूप से दें।



## अचार खराब होने के कारण एवं निवारण

संतोष रानी<sup>1</sup>, विनिता जैन<sup>2</sup> एवं मन्मथन मजोका

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

अचार एक अत्यंत ही लोकप्रिय खाद्य पदार्थ है जो कि भारत के सभी वर्गों के मनुष्यों द्वारा निरन्तर उपयोग किया जाता है। अचार हमारे दैनिक भोजन का विशेष अंग सा बन चुका है। इसके प्रयोग से अच्छी भूख लगती है और पाचन शक्ति तीव्र होती है। भारतीय आहार अचार के बिना पूरा नहीं हो सकता। अचार एक ऐसा व्यंजन है जो बनता तो एक बार है पर चलता साल भर है। इसलिए यह साल भर सुरक्षित रहे यह हर कुशल गृहिणी की जिम्मेदारी है। गृहणियों की अक्सर यह शिकायत रहती है कि अचार खराब हो जाते हैं अचार खराब होने का पता कई तरीकों से चलता है। यदि अचार की सुगंध में परिवर्तन के साथ सड़ांध आए तो अचार को खराब समझना चाहिए। अचार पर फफूंद, कालापन, रंग बदलना, स्वाद का खराब होना, चिकनापन होना खराब होने के संकेत हैं

### अचार खराब होने के मुख्य कारण :-

1. अचार डालते समय अच्छे किस्म के फल-सब्जी का न होना या उनमें कुछ फल सब्जी गले-सड़े या चोट लगे होना।
2. अचार डालने में सफाई न बरती गई हो जैसे फल-सब्जी अच्छी तरह से धोए न गये हों। गंदे हाथ या गंदे बर्तन इस्तेमाल किये गये हों।
3. फल-सब्जी को धोने के बाद अच्छी तरह पोंछ न गया हो।
4. घटिया किस्म के तेल, नमक, सिरका और मिलावटी मसालों का प्रयोग किया गया हो।
5. सिफारिश की गई सामग्री और परिरक्षी प्रयोग न किये गये हों।
6. अचार बिना ढके रखे हों या उनमें गन्दे हाथ या झूठे चम्मच, कड़खी आदि डाल दिए जायें।
7. एक बार निकाला गया अचार दोबारा उसी बर्तन में डाल दिया जाये।
8. मसाले ज्यादा भून देने से या (अधिक सिरका डाल देने से अचार का रंग काला पड़ जाता है।)
9. अचार में तेज सिरका या ज्यादा पकाए गये मसाले डालने से अचार का स्वाद कड़वा हो जाता है।
10. अचार को बीच-बीच में न हिलाने से और धूप में न रखने से भी अचार खराब हो जाता है।

### अचार खराब होने से बचाने के उपाय :

1. फल व सब्जी को साफ पानी से धोकर साफ कपड़े से पोंछ लेना चाहिए। इसमें जरा भी नमी नहीं होनी चाहिए वरना अचार खराब हो जाएगा।
2. अचार को हमेशा दिन में डालिए। एक बार अचार डालना शुरू किया तो काम पूरा करके ही उठिये। किसी हालत में आधा-अधूरा अचार डालकर किसी और काम में नहीं उलझना चाहिए। (शेष पृष्ठ 19 पर)

<sup>1</sup>जिला विस्तार विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, कैथल

<sup>2</sup>जिला विस्तार विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, सदलपुर

## गुड़मार की खेती

राजेश कुमार आर्य, वंदना एवं वी. के. मदान<sup>1</sup>

औषधीय, संगंध एवं क्षमतावान फसलें संभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

गुड़मार एक बेलनुमा पौधा है जो कि मधुमेह के दुश्मन के रूप में जाना जाता है। प्राकृतिक रूप से, यह हमारे देश के विभिन्न भागों के जंगलों में पाया जाता है। यह एक काष्ठयुक्त रोयेंदार लता है जिस पर पीले भड़कीले फूलों के गुच्छे लगते हैं। इसकी फलियां 5-7 सें.मी. लम्बी होती हैं। इसकी खास विशेषता यह है कि इसके पत्तों को चबाने से मुंह का स्वाद थोड़ी के लिए समाप्त हो जाता है। इसलिए इसे गुड़मार कहा जाता है। इसके शर्करा विरोधी तत्त्वों जिमनेमिक एसिड ए.बी.सी. की वजह से इसकी निर्यात के लिए मांग बढ़ रही है।

औषधि के रूप में गुड़मार के पत्ते लीवर-टॉनिक के रूप में, मधुमेह रोग में, उदरशूल, उदर रोग, अतिसार तथा पेचिश में उपयोग किए जाते हैं। इसकी जड़ों का उपयोग वात रोग, पुराने बुखार तथा उदरशूल में किया जाता है।

**भूमि एवं जलवायु :** इसे हर प्रकार की मिट्टी में, पूरे भारत वर्ष में उगाया जा सकता है। परन्तु हल्की दोमट मिट्टी जिसकी जल निकासी अच्छी हो अधिक उपयुक्त है। वहां पाला नहीं पड़ना चाहिए। अभी तक इसकी कोई किस्म विकसित नहीं की गई है। इसकी खेती जंगलों में से एकत्रित किए गए पौधों से ही की जाती है।

**लगाने की विधि एवं समय :** इसे बीज तथा कलम दोनों से लगाना सम्भव है। इसके ताजा बीज जनवरी में इकट्ठे किए जाते हैं और उनको नर्सरी में 10×10 सें.मी. की दूरी पर बीजते हैं। लगभग सप्ताह भर में उनका अंकुरण आरम्भ हो जाता है। अंकुरण लगभग 50-60 प्रतिशत ही रहता है। जब नर्सरी में पौधों की ऊंचाई 15 सें.मी. हो जाए तो उन्हें पॉलीथीन में लगा देना चाहिए और नियमित रूप से सिंचाई करें। इसकी कलम लगाने के लिए फरवरी-मार्च तथा सितम्बर-अक्टूबर का समय उचित होता है। बेलनुमा पौधा होने से इसे सहारे की जरूरत पड़ती है इसलिए किसी पेड़ या बांस आदि का सहारा दिया जाता है।

**खाद एवं सिंचाई प्रबंधन :** इसकी खेती के लिए लगभग 4-5 टन प्रति एकड़ गोबर की गली-सड़ी खाद पर्याप्त रहती है। आमतौर पर, इसे अधिक पानी की जरूरत नहीं पड़ती परन्तु ग्रीष्म ऋतु में 15 दिन में, सर्दी में 25 दिन में सिंचाई करनी चाहिए।

**निराई-गुड़ाई :** पौधे लगाने के 20-25 दिन बाद पहली गुड़ाई तथा दूसरी गुड़ाई 30 दिन बाद करनी चाहिए।

**उत्पादन एवं भण्डारण :** इसके पत्तों की औसत उपज 10-12 क्विंटल प्रति एकड़ आंकी गई है। इसके पत्ते वर्ष बाद तोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं। पत्तों को अक्टूबर से फरवरी तक तोड़कर साफ करने के बाद छाया में सुखायें। जड़ों को अप्रैल-मई में उखाड़ना चाहिए। जड़ों को धोकर साफ करके छोटे-छोटे भागों में बांटकर सुखाना चाहिए। अच्छे से सुखाने के बाद पत्तों को प्लास्टिक के थैलों में डाल कर भण्डारण कर सकते हैं।

<sup>1</sup>आनुवांशिकी पौध प्रजनन विभाग





## बचे हुए कपड़े का सदुपयोग

पारुल गिल, पंकज गिल एवं पूनम मलिक

मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

जो ग्रामीण महिलाएं सिलाई का हुनर जानती हैं वे अक्सर अपने कपड़े स्वयं सिलती हैं। ऐसे में अक्सर कपड़े के कुछ टुकड़े बाकी बच जाते हैं जो इतने छोटे नहीं होते कि उन्हें फेंक दिया जाए। इन टुकड़ों का सदुपयोग निम्न प्रकार से किया जा सकता है:-

- कुछ बच्चों व बड़ों को ऊनी टोपी से सिर में खुजली होती है। ऐसे में बचे हुए कपड़े से बहुत ही नर्म व मुलायम टोपी सिली जा सकती है जिसे पहनने से सिर में खुजली नहीं होती।
- अगर बचा हुआ कपड़ा थोड़ा बड़ा है तो उससे तकिए का गिलाफ सिला जा सकता है। इस गिलाफ को बचे हुए कपड़े की खूबसूरत झालर से सजाया जा सकता है।
- अगर बचा हुआ कपड़ा थोड़ा मोटा है तो उससे मेज का कवर, टी.वी. का कवर, फ्रिज का कवर या मशीन का कवर सिला जा सकता है।
- बचे हुए रंगीन टुकड़ों से बेहद आकर्षक कुशन बनाए जा सकते हैं। ये कुशन बचे हुए कपड़े के अनुसार गोल या चौकोर बनाए जा सकते हैं।
- बचे हुए कपड़े में से छोटे बच्चों के फ्रॉक, शर्ट बनियान आदि बना सकते हैं।
- अगर बचा हुआ टुकड़ा बहुत छोटा है तो उससे बच्चों का ब्लूजर, जांघिया, बिब, नैपकिन, मोजे, जूते, आदि छोटे वस्त्र तैयार किए जा सकते हैं।
- सफेद सूती कपड़े के बचे हुए टुकड़े से रोटी रखने का कपड़ा व रूमाल बनाए जा सकते हैं।
- छोटे टुकड़ों से मोबाईल कवर व साइड स्लिंग बैग सिले जा सकते हैं जो आजकल युवा लड़कियों में काफी लोकप्रिय हैं।
- बाज़ार से सब्जी व अन्य सामान लाने के लिए थैले बनाने में भी बचे हुए टुकड़ों का इस्तेमाल किया जा सकता है।
- रसोई में काम आने वाली टीकोजी, मिटन, टिफिन कवर व बोतल कवर सिलने के लिए बचे हुए टुकड़े बहुत ही उपयुक्त रहते हैं। इनमें कई टुकड़ों से मिलाकर कई डिजाइन बनाई जा सकती हैं।
- इसके अलावा कपड़ों के टुकड़ों से ज्योमेट्री किट, पर्स व ज्वेलरी किट भी बनाई जा सकती है।
- बचे हुए टुकड़ों से जैकेट, रजाइयां, पैच वर्क वाली चादरें बनाई जा सकती हैं।
- इन टुकड़ों से बच्चों के लिए खिलौने व गेंद आदि बनाई जा सकती हैं।
- विभिन्न प्रकार के टुकड़ों से पायदान व दरी आदि बनाए जा सकते हैं।

- सजावट के लिए चकला व तोरण आदि भी बनाए जा सकते हैं।
- यदि घर में कोई पालतू जानवर है तो बचे हुए टुकड़ों से उसके लिए कोट, जैकेट या बिछौना तैयार किया जा सकता है जो उसे ठण्ड से बचाने में काम करेंगे।
- बचे हुए मुलायम सूती कपड़े से छोटे बच्चे का तौलिया बनाया जा सकता है क्योंकि नवजात की त्वचा बहुत ही नाजुक होती है। मुलायम व सूती कपड़े की सोखने की क्षमता अधिक होगी और ये शिशु की नाजुक त्वचा को नुकसान भी नहीं पहुंचाएगा।
- बचे हुए टुकड़ों को काटकर उनसे रस्सी बांट कर पायदान व दरी बनाई जा सकती है।
- भिन्न-भिन्न रंग व डिजाइन वाले टुकड़ों को सुरुचिपूर्ण ढंग से जोड़कर डिजाइनर रजाइयां, परदे व चादरें बनाई जा सकती हैं।
- बचे हुए छोटे-छोटे टुकड़े जो कुछ भी बनाने के काम न आ सकें, उन्हें रसोई में कोई छोटी-मोटी चीजें गिरने पर पोंछने के काम में लाया जा सकता है।



(पृष्ठ 18 का शेष)

3. कोई भी सामग्री अंदाजे से न लें सही नाप तोल कर ही सामग्री लेनी चाहिए।
  4. अचार को भरने से पहले जार को गर्म पानी से अच्छी तरह धोकर साफ करें व पूरी तरह सूखने के बाद ही उसमें अचार डालें।
  5. अचार के उपयोग के समय अचार निकालने में सावधानी और सफाई की ज़रूरत है।
  6. मर्तबान काँच या चीनी मिट्टी का होना चाहिए। धातु के बर्तन जैसे स्टील व पीतल के बर्तन में अचार खराब हो जाते हैं।
  7. अचार को खराब होने से बचाने के लिए इसे नमी से दूर रखें।
  8. अचार में हाथ कभी न डालें। साफ और सूखी चम्मच से ही अचार निकालें।
  9. अचार तेल में डूबा रहना चाहिए।
  10. यदि अचार में ऊपर फफूंद दिखाई दे तो उसे हटाकर जरा सा नमक फैला दें और तेल डालें।
  11. कभी-कभी अचार को धूप में रख देना चाहिए और हिला देना चाहिए।
  12. बरसात के मौसम में अचार का खासतौर पर ध्यान रखें।
- इन सब बातों का ध्यान रखकर अचार को खराब होने से बचाया जा सकता है।



# दोगुनी आय के लिए कृषक-समन्वित कृषि प्रणाली अपनाएं

नीरज पंवार, धर्मपाल मलिक<sup>1</sup> एवं अशोक ढिल्लों<sup>2</sup>

कृषि विज्ञान केन्द्र, रोहतक

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कृषि एवं किसान देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं। देश की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या की आजीविका कृषि पर आधारित है, श्रमशक्ति का लगभग 52 प्रतिशत भाग कृषि एवं इससे सम्बन्धित उद्योग धन्धों से अपनी आजीविका कमाता है और निजी क्षेत्र का यह सबसे बड़ा अकेला व्यवसाय है। जबकि देश के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। वर्ष 1950-51 में यह 51 प्रतिशत था जो कि वर्ष 2015-16 में घटकर 15.3 प्रतिशत रह गया। कृषि के घटते हुए प्रतिशत योगदान का यह अर्थ नहीं है कि कृषि उत्पादन में कमी आई है। कृषि का यह कम होता हिस्सा एक अच्छा संकेत हो सकता था यदि लोगों की कृषि पर निर्भरता भी उसी अनुपात से कम होती लेकिन ऐसा नहीं हुआ। इसका तात्पर्य यह है कि गैर-कृषि उत्पादन क्षेत्र (औद्योगिक एवं सेवाओं) का सापेक्षिक रूप से अधिक विकास हुआ है। कृषि जनगणना (2010-11) के अनुसार औसत कृषि जोत लगभग 1.15 हैक्टेयर है जो कि 1970 में 2.30 हैक्टेयर थी। देश में लगभग 85 प्रतिशत और हरियाणा में 65 प्रतिशत किसान लघु और सीमांत वर्ग के हैं। जिनके पास कृषि जोत 2 हैक्टेयर से कम है। एक सर्वेक्षण के अनुसार जो किसान 1 हैक्टेयर या उससे कम जमीन पर मोटी खेती जैसे धान-गेहूँ करते हैं वो फायदेमंद नहीं हैं।

देश की बढ़ती जनसंख्या के तहत भोजन की माँग में भी पर्याप्त वृद्धि हुई है, परन्तु उपभोग में काफी विविधता आ रही है। एक औसत भारतीय परिवार अपनी आमदनी का 50 प्रतिशत हिस्सा खाद्य पदार्थों पर खर्च करता है और उसका 15 प्रतिशत खाद्यान्नों पर खर्च होता है। यद्यपि अभी खाद्यान्नों की प्रधानता बनी हुई है परन्तु अब इसमें कुछ अन्य भोज्य पदार्थों ने सेंध लगानी शुरू कर दी है। फलों, सब्जियों, दूध, मीट, अंडे और मछलियों पर कुल मिलाकर होने वाले व्यय में पर्याप्त वृद्धि हुई है।

समन्वित कृषि प्रणाली एक ऐसा विषय है जो किसानों की आर्थिक दशा सुधार सकता है। जाने-अनजाने कृषि कार्य करते समय सदुपयोग करने योग्य अनेकों संसाधन व्यर्थ चले जाते हैं। कृषि एवं सहायक व्यवसायों को आमतौर पर भिन्न-भिन्न करके देखा जाता है, परन्तु वास्तव में ये सभी (फल, फूल, सब्जी, मौन पालन, केंचुआ पालन, पशु-पालन, मछली पालन, मुर्गीपालन शूकर पालन आदि) व्यवसाय एक दूसरे के पूरक हैं। कृषि के साथ-साथ इन सहायक व्यवसायों को अपनाकर कृषि लागत को कम व आमदनी बढ़ा सकते हैं। खेती में लगातार एक ही प्रकार की फसलें उगाने व एक ही तरह के आदानों का प्रयोग करने से न केवल फसलों की पैदावार में कमी आई बल्कि उनकी गुणवत्ता में भी गिरावट आती है। एक फसल प्रणाली न तो आर्थिक दृष्टि से लाभदायक है और न ही पारिस्थितिकी दृष्टि से अधिक उपयोगी है। (शेष पृष्ठ 22 पर)

<sup>1</sup>विभागाध्यक्ष, कृषि अर्थशास्त्र, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार।

<sup>2</sup>कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़।

# सूरजमुखी को कीटों से बचाएं

नरेन्द्र कुमार<sup>1</sup>, भुपेन्द्र सिंह एवं संगीता तिवारी<sup>2</sup>

कीट विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सूरजमुखी प्रकाश असंवेदनशील फसल होने की वजह से वर्ष भर किसी भी समय उगाई जा सकती है, लेकिन हमारे प्रांत हरियाणा में जनवरी-फरवरी माह में बोई गई फसल अधिक पैदावार देती है। पिछले कुछ वर्षों से अपनी उत्पादन क्षमता व अधिक पारिश्रामिक मूल्य के कारण यह किसानों में दिन प्रतिदिन लोकप्रिय होती जा रही है। परन्तु कीटों, बीमारियों व पक्षियों द्वारा होने वाले नुकसान की वजह से इसकी औसत पैदावार में कमी आई है। अकेले कीट इस फसल का तकरीबन चौथा हिस्सा कम कर देते हैं और इसके अलावा बीज स्वादिष्ट होने की वजह से पक्षियों द्वारा होने वाला नुकसान सबसे बड़ी समस्या है। उचित रख-रखाव व नियंत्रण से इन कीटों पर काबू पाकर अच्छी पैदावार ली जा सकती है। इन कीटों की पहचान व रोकथाम के उपाय इस प्रकार हैं -

## क) कटुआ सूण्डी :

इस कीट को चोर सूण्डी भी कहते हैं क्योंकि ये सूण्डियां शाम या रात को नुकसान पहुंचाती हैं व दिन के समय मिट्टी में छिप जाती हैं। यह कीट मार्च के महीने में सबसे अधिक नुकसान पहुंचाता है। ये सूण्डियां अंकुरण के एक महीने तक छोटे पौधों को भूमि के पास से काट देती हैं जिससे पौधा मर जाता है।

## रोकथाम -

1. खेत की सिंचाई करें ताकि सूण्डियां पानी में डूब कर मर जाएं।
2. 10 कि.ग्रा. फैनवालेट 0.4 प्रतिशत प्रति एकड़ धुड़ा करें या 80 मि.ली. फैनवालेट 20 ई.सी. या 50 मि.ली. सायपरमैथ्रिन 25 ई.सी. या 150 मि.ली. डैकामेथ्रिन 2.8 ई.सी. को 100 से 150 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

## ख) बालों वाली सूण्डी :

इस कीट की छोटी-2 सूण्डियां झुण्ड बनाकर 5-6 दिन तक पत्तियों को खाती हैं, बाद में ये सूण्डियां पूरे खेत में फैल जाती हैं। अधिक प्रकोप की अवस्था में ये तने व झुम्पे को भी हज़म कर जाती हैं। इनका प्रकोप अप्रैल-मई के महीने में ज्यादा होता है।

## रोकथाम -

1. सूण्डियों के झुण्ड को पत्ती सहित नष्ट कर दें।
2. खेत के चारों तरफ फैनवालेट 0.4 प्रतिशत या मिथाईल पैराथियान 2 प्रतिशत धूड़े की 15 सेंटीमीटर चौड़ी पट्टी बना दें ताकि सूण्डियां दूसरे खेत में न फैल सकें।
3. 500 मि.ली. क्विनालफॉस 25 ई.सी. या 200 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 26 एस.एल. या 200 मि.ली. डाइक्लोरोवास 76 ई.

<sup>1</sup>जिला विस्तार विशेषज्ञ, कीट विज्ञान, कृषि विज्ञान केन्द्र, सदलपुर।

<sup>2</sup>शोध छात्रा, कीट विज्ञान विभाग, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार

सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

#### ग) फूल छेदक सूण्डी :

इस कीट का प्रकोप अप्रैल अंत या मई के शुरू में देखा गया है। इन कीड़ों की सूण्डियां कोमल पत्तों को काटकर व फूलों में छेद करके फसल को हानि पहुँचाती हैं।

#### रोकथाम -

600 मि.ली क्विनलफॉस 25 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर तब छिड़काव करें जब कीड़े की संख्या एक सूण्डी प्रति पौधा हो जाए।

**पक्षियों से हानि :** इस फसल को बिजाई के समय कबूतर व कौवे, बोये हुए बीज को निकालकर खाकर भारी हानि पहुँचाते हैं तथा सबसे ज्यादा हानि तोते पहुँचाते हैं जो कि पके हुए फूलों के बीज निकाल कर खा जाते हैं। तोते द्वारा कच्चे फूल को कुतर-कुतर कर खाने से फूल नीचे गिर जाते हैं।

#### रोकथाम -

1. फसल के उगने तक सुबह तथा शाम के समय तथा फिर फूल आने से कटाई तक पक्षियों से बचाव अति आवश्यक है। इसलिए स्वयं रखवाली करके पक्षी उड़ायें।
2. पक्षियों को डरा कर भगाने के लिए पटास व पटाखों के धमाकों का प्रयोग करें।
3. यदि ज्यादा से ज्यादा किसान मिलकर इस फसल को बड़े क्षेत्र में उगाएं तो पक्षियों द्वारा होने वाली हानि बड़े क्षेत्र में वितरित हो जाने से प्रति किसान हानि बहुत कम हो जाती है।
4. आसपास के वृक्षों से पक्षियों के घोंसले नष्ट कर दें।
5. आजकल इसे रोकने के लिए नायलोन की जालियां मिलने लग गई हैं जो कि सावधानीपूर्वक 3-4 वर्ष तक उपयोग में लाई जा सकती हैं।
6. सूरजमुखी की संकर किस्म एवं एच.एस.एफ.एच. 848 में पक्षियों द्वारा नुकसान कम होता है क्योंकि इसके फूल पकने से पहले नीचे की ओर झुक जाते हैं।

#### सावधानियां -

कीटनाशकों का छिड़काव शाम को करें ताकि मधुमक्खी व मधुमक्खी पालकों को कोई नुकसान न हो।



एक कदम स्वच्छता की ओर

## बढ़ती उम्र की महिलाओं के स्वास्थ्य पर खानपान का प्रभाव

मीनू सिरौही एवं वीनू सांगवान

खाद्य एवं पोषण विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

महिलायें समाज का एक महत्वपूर्ण अंग हैं। घर, परिवार व समाज के विभिन्न कार्यों व सामाजिक, आर्थिक उत्थान में महिलायें महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। महिलायें अपने जीवनकाल में विभिन्न प्रकार के शारीरिक परिवर्तनों से गुजरती हैं। किशोरावस्था आने पर स्त्रियों में मासिक धर्म प्रारम्भ हो जाता है जो उनमें पोषक तत्वों की आवश्यकताओं को बढ़ा देता है। इसके अतिरिक्त गर्भावस्था व स्तनपान या धात्रिवस्था में महिलाओं की पोषक तत्वों की आवश्यकता सामान्य महिलाओं की अपेक्षा कई गुना बढ़ जाती है। शिशु अपनी सभी शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए माँ पर निर्भर रहता है। वह अपनी पोषक तत्वों की पूर्ति माँ के शरीर में व्याप्त पोषक तत्वों से ही करता है। यदि गर्भवती व स्तनपान कराने वाली मातायें अपने भोजन में विभिन्न पोषक तत्वों को भलीभाँति नहीं शामिल करती हैं तो इनकी कमी से न केवल उनका अपना स्वास्थ्य बल्कि शिशु का भी स्वास्थ्य प्रभावित होता है। इसके अतिरिक्त अधिक संतानें उत्पन्न करने से भी महिलाओं का स्वास्थ्य प्रभावित होता है। दूसरी ओर भारत जैसे विकासशील देशों में शिक्षा के अभाव व अन्य विभिन्न प्रकार की कुरीतियों के कारण बचपन से ही पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं के स्वास्थ्य पर कम ध्यान दिया जाता है। कुछ परिवारों में तो महिलायें पुरुषों के बाद ही खाना खाती हैं। कभी-कभी तो उन्हें पुरुषों का बचा-खुचा खाना ही खाना पड़ता है। विभिन्न कुरीतियों के कारण संतुलित आहार तो दूर की बात है महिलाओं को भर पेट खाना नहीं मिलता है जिसके परिणाम आने वाले समय में न केवल वे स्वयं बल्कि उनकी आने वाली पीढ़ियाँ भी भुगतती हैं। दूसरी ओर जैसे-जैसे महिलाओं की आयु बढ़ती है उनके शरीर में कुछ पोषक तत्वों का अवशोषण कम होने लगता है जैसे कैल्शियम व विटामिन डी। अतः अब उन्हें इन पोषक तत्वों से सम्बन्धित खाद्य पदार्थों को अधिक से अधिक शामिल करने की आवश्यकता बढ़ जाती है। वहीं दूसरी ओर बढ़ती उम्र की महिलायें मोटापे का अधिक शिकार होने लगती हैं जिसके कारण उनमें घातक बीमारियों जैसे हृदय रोग, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, छाती का कैंसर, हड्डियों का कमजोर हो जाना व हल्के से आघात से ही टूट जाना इत्यादि का खतरा बढ़ जाता है। अतः ऐसे में उन्हें सुकरोज, ग्लूकोस, जैसी सरल कार्बोज व जन्तु वसा को अपने भोजन में कम ही शामिल करना चाहिये। उन्हें अपने भोजन में जटिल कार्बोज जैसे रेशा व वनस्पतीय वसा जैसे विभिन्न प्रकार के बीजों जैसे सोयाबीन, तिल, सूरजमुखी, सरसों, चावल की भूसी इत्यादि का तेल, ओमेगा वसीय अम्ल, वसा रहित दूध इत्यादि शामिल करना चाहिए। जब महिलायें पैंतालीस वर्ष की आयु पार कर लेती हैं तो उनमें मासिक धर्म पूर्णतः रुक जाता है। जिसकी वजह से स्त्री हारमोन एस्ट्रोजन का स्त्राव या तो कम हो जाता है या



पूर्णतः समाप्त हो जाता है। यह हारमोन ही महिलाओं में कैल्शियम व विटामिन-डी के अवशोषण को बढ़ाता है, तथा साथ ही महिलाओं को विभिन्न घातक बीमारियों के खतरे से बचाता है। अतः जैसे-जैसे महिलाओं की आयु बढ़ती जाती है उनका खानपान भी प्रभावित होने लगता है। भारत जैसे देशों में मासिक धर्म 35-40 वर्ष की आयु में ही रुक जाता है जबकि जापान, अमेरिका जैसे देशों में 48 वर्ष की आयु के बाद ही महिलाओं में रजोनिवृत्ति आती है। यदि बचपन से ही लड़कियों के खानपान पर ध्यान दिया जाये तो वे लम्बे समय तक स्वस्थ जीवन जी सकती हैं। रजोनिवृत्ति कोई बीमारी नहीं है बल्कि यह स्त्रियों के शरीर में एक प्राकृतिक परिवर्तन है जिसमें महिलाओं के शरीर में हारमोन्स परिवर्तन होते हैं। प्रकृति में भी कुछ वानस्पतिक भोज्य पदार्थों में स्त्री हारमोन जैसे ही गैर पोषक तत्व पाये जाते हैं जिन्हें फाइटोएस्ट्रोजन्स कहा जाता है। यदि बढ़ती उम्र की महिलायें इन तत्वों को अपने खानपान में शामिल करती हैं तो वे रजोनिवृत्ति के बाद होने वाली विभिन्न प्रकार की शारीरिक व मानसिक समस्याओं से कुछ सीमा तक बच सकती हैं। बढ़ती उम्र की महिलाओं को अपने भोजन में पोषक व गैर पोषक तत्वों से परिपूर्ण निम्नलिखित खाद्य पदार्थों को शामिल करना चाहिये।

- हरी पत्तेदार सब्जियाँ जैसे- पालक, सरसों, बथुआ, मेथी, सहजन, ब्रोकली या हरी गोभी, प्याज़ व लहसुन की पत्तियाँ, हरा धनिया, पुदीना, फूलगोभी, पत्तागोभी, तिपतिया घास इत्यादि।
- जड़ व कन्दमूल जैसे- लहसुन, प्याज़, अदरक, मूली, शलगम, चुकन्दर, गाजर, कमल ककड़ी, मुलैठी इत्यादि।
- अन्य सब्जियाँ जैसे- करेला, लौकी, कद्दू, तोरी, ककड़ी, खीरा, हरी मिर्च, शिमला मिर्च, मटर, सोयाबीन इत्यादि।
- फल जैसे- संतरा, अमरूद, मौसमी, जामुन, सेब, अनार, आँवला, आलुबुखारा, नाशपाती, लोकाट, आडू, करोंदा इत्यादि।
- दालें व फलियाँ जैसे- मूँग, मसूर, चना, सोयाबीन, राजमा, उड़द, अरहर, ग्वार की फलियाँ इत्यादि।
- तेल व बीज जैसे- सोयाबीन, सूरजमुखी, सरसों, मुंगफली, तिल, चावल की भूसी का तेल व अलसी, राई, सोयाबीन, तिल के बीज इत्यादि।
- दूध, मछली, अण्डे की सफेदी इत्यादि।
- अनाज- बाजरा, जौ, जई, मक्का, चावल, गेहूँ, रागी इत्यादि।

उपर्युक्त खाद्य पदार्थ विभिन्न प्रकार के पोषक व गैर पोषक तत्वों के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। हरी सब्जियों व अन्य सब्जियों को अधिक से अधिक सलाद के रूप में शामिल करना चाहिये।

मूँग, चने को अंकुरित करके खाने से कुछ पोषक तत्वों की मात्रा उनमें अधिक बढ़ जाती है जैसे जल में घुलनशील विटामिन्स व जटिल कार्बोज सरल कार्बोज में टूट जाती हैं। भोजन में व्याप्त पोषक तत्वों के अवरोधी तत्व जैसे फाइटेट, टैनिन इत्यादि भी कम हो जाता है। सोयाबीन, अलसी, फल व सब्जियों में पोषक तत्वों जैसे खनिज लवण, जल व वसा में घुलनशील विटामिन्स के अतिरिक्त कुछ गैर पोषक तत्व भी शामिल

रहते हैं। अतः प्रकृति में व्याप्त विभिन्न वानस्पतिक भोज्य पदार्थों को महिलाओं को अपने खान-पान में अधिक से अधिक शामिल करना चाहिये। जिससे वे खतरनाक बीमारियों के अतिरिक्त शीघ्र वृद्धावस्था से बच सकें व देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिक निभा सकें। अतः इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बढ़ती उम्र की महिलाओं में उनका खानपान ही सर्वाधिक उनके मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है। खानपान के अतिरिक्त महिलाओं को हल्का-फुल्का व्यायाम भी करना चाहिये। व्यायाम व संतुलित आहार दोनों ही बढ़ती उम्र की महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए वरदान हैं।



(पृष्ठ 20 का शेष)

समन्वित कृषि प्रणाली से अभिप्राय है कि किसान अपनी कृषि जोत, पूँजी, समय, श्रम एवं अन्य संसाधनों का बुद्धिमता पूर्वक उपयोग करते हुए विभिन्न व्यवसायों को अपनी सामाजिक, आर्थिक पृष्ठभूमि एवं बाज़ार की माँग तथा परिवार की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए शामिल करके अधिकतम कृषि उत्पाद प्राप्त कर सकता है तथा साथ ही फसल उत्पाद अवशेषों के पुनः चक्रण द्वारा टिकाऊ फसलोत्पादन ले सकता है।

#### किसानों के लिए कुछ उपयोगी सुझाव

1. किसान अपनी स्थिति विशेष जैसे कि सामाजिक, आर्थिक पृष्ठभूमि, संसाधनों, परिवार की आवश्यकता व बाज़ार की माँग को ध्यान में रखकर ही व्यवसायों का चुनाव करें। जिससे कि लागत कम व लगातार आमदनी हो सके।
2. कोई भी उत्पाद एवं अवशेष व्यर्थ न जाने दें। एक व्यवसाय का अवशेष दूसरे व्यवसाय का पूरक बन सकता है जिससे लागत में कमी आती है, भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है एवं पर्यावरण में भी सुधार होता है। जैसे कि धान की पराल को खुम्ब उत्पादन में प्रयोग कर सकते हैं।
3. फार्म रिकार्ड और लेखा-जोखा रखें व आर्थिक विश्लेषण करके कमज़ोर पहलुओं को खत्म करके मज़बूत पहलुओं को बढ़ावा दें। यह व्यवसायों की प्रगति तथा भावी योजना बनाने के लिए एक अच्छा उपाय है।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में रोज़गार की काफी कमी महसूस की जा रही है। हमारी ज्यादातर ग्रामीण आबादी का हिस्सा बेरोज़गार है। समन्वित कृषि प्रणाली में विविधिकरण एवं सघनीकरण के कारण प्रति इकाई समय प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक कृषि क्रियाओं के जुड़ने से अधिक कृषि मजदूरों की आवश्यकता पड़ने से ग्रामीण युवाओं की बेरोज़गारी को काफी कम किया जा सकता है और स्वरोज़गार के अवसर पैदा किये जा सकते हैं। कहा जाता है कि किसी राष्ट्र को इस कारण याद नहीं किया जाता कि उसने कितनी उन्नति की थी बल्कि इस कारण याद किया जाता है कि उसने आने वाली पीढ़ियों के लिए क्या छोड़ा है।



# किशोरावस्था में शारीरिक परिवर्तनः समस्याएँ और चुनौतियाँ

रीना एवं बिमला ढांडा

मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

## किशोरावस्था क्या है?

किशोरावस्था का अर्थ है बढ़ना या विकसित होना । 10 वर्ष की आयु से 19 वर्ष की आयु तक के समय शरीर में बहुत से परिवर्तन आते हैं । जैसे- शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक एवं समाजीकरण इन परिवर्तनों को ही किशोरावस्था कहते हैं । यह परिवर्तन शरीर में उत्पन्न होने वाले कुछ हार्मोन्स के कारण आते हैं क्योंकि इस अवधि में गौण यौन लक्षणों के साथ-साथ बहुत महत्वपूर्ण शारीरिक परिवर्तन होते हैं । जिनके परिणाम स्वरूप कुछ ग्रंथियाँ एकाएक सक्रिय हो जाती हैं । ये सब परिवर्तन यौन विकास के साथ सीधे जुड़े हुए हैं । इस अवस्था में वे अपने माँ - बाप से दूरियाँ बनाने लगते हैं । और अपने सम-आयु समूह में ही अधिकतर समय व्यतीत करने लगते हैं । शारीरिक परिवर्तन के कारण वे विपरीत लिंग की ओर आकर्षित होते हैं । इस प्रकार किशोरावस्था का मानव जीवन में एक विशिष्ट स्थान है । कुछ मनोवैज्ञानिक इसे 13 से 18 वर्ष के बीच की अवधि मानते हैं, जबकि कुछ की यह धारणा है कि यह अवस्था 24 वर्ष तक रहती है ।

## किशोरावस्था के दौरान शरीर में क्या-क्या परिवर्तन आते हैं :

मानव विकास की चार अवस्थाएँ मानी गयी हैं बचपन, किशोरावस्था, युवावस्था और प्रौढ़ावस्था (बुढ़ापा) । इन चारों अवस्थाओं में शारीरिक और मानसिक परिवर्तन होते हैं । परंतु किशोर अवस्था सबसे अधिक परिवर्तनशील अवधि होती है । जिसमें शारीरिक परिवर्तन बहुत तीव्र गति से होता है ।

**लड़कियों में शारीरिक परिवर्तन :** लड़कियों में शारीरिक परिवर्तन और मानसिक परिवर्तन बहुत तीव्रता से होता है । परिवर्तन की प्रक्रिया के कारण प्रजनन अंगों में भी विकास होने लगता है । जो व्यक्तिगत प्रजनन परिपक्वता को प्राप्त करते हैं । इनका सीधा सम्बन्ध यौन विकास से है जैसे: शरीर की ऊँचाई, वजन और कूल्हों में वृद्धि होने लगती है । मासिक धर्म की शुरुआत होने लग जाती है । बगल और जननांगों पर बाल उगते हैं । आवाज़ पतली होने लगती है, चेहरे पर कील मुँहासे होने लगते हैं और स्तनों में वृद्धि होने लगती है ।

**लड़कों में शारीरिक परिवर्तन :** लड़कों के शरीर में तेज़ी से हार्मोन का बदलाव होता है । इसके कारण ही उसके मनोभाव बदलते हैं । लड़कों की लंबाई में अचानक बदलाव दिखते हैं और उनकी लंबाई तेज़ी से बढ़ने लगती है । यौवन के दौरान लड़कों के जननांगों पर बाल निकलने लगते हैं । इस दौरान लड़के के जननांगों के साथ-साथ सीने पर, हाथों में, दाढ़ी में, भुजाओं पर और पैरों में भी बाल उगने लगते हैं । यह भी हार्मोन के कारण

होता है । बोलते वक्त आवाज़ में भारीपन भी आ जाता है और मुँह पे मुँहासे या पिम्पल भी निकलना बहुत आम है ।

**मानसिक परिवर्तन :** विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण होना, दोस्तों की बातों से अधिक प्रभावित होना, माँ-बाप से दूरी बना लेते हैं, उन्हें रोकना-टोकना अच्छा न लगना, बात-बात पे गुस्सा होना, अपने अन्य सगे-संबंधी के साथ व्यवहार में बदलाव होना, जोखिम भरे काम को करने के लिए उतावला होना आदि । इस प्रकार हम कह सकते हैं कि किशोरावस्था का मानव-जीवन में एक विशिष्ट स्थान है ।

## किशोरावस्था के दौरान क्या-क्या समस्याएँ आती हैं :

किशोरावस्था एक संवेदनशील अवधि है । इस अवस्था में शारीरिक परिवर्तन बहुत तेज़ी से होता है । इसलिए इस बदलाव को समझने में असमर्थ होते हैं । तब अपने हम उम्र वालों से सलाह लेते हैं । कई बार गलत सलाह से उनके जीवन पर बहुत गहरा असर पड़ता है । और कुछ किशोरों को इसलिए भी समस्या आती है क्योंकि वे विपरीत लिंग के प्रति संबंध को ठीक से समझ नहीं पाते । और माँ-बाप से दूरियाँ बना लेते हैं और हम-उम्र समूह के साथ गहन मेल-मिलाप भी उनके मन में संशय और चिंता पैदा करता है और तब हम-उम्र समूह के दबाव के सामने विवश हो जाते हैं और उन में से कुछ तो परिणामों को बिना सोचे-समझे अनुचित कार्य करने पर मजबूर हो जाते हैं । कुछ सिगरेट, शराब, मादक द्रव्यों का सेवन करने लगते हैं और कुछ यौनाचार की ओर भी आकर्षित हो जाते हैं और इस सब के पीछे सम-आयु समूह का दबाव होता है ।

## जीवन में छह बातों को हमेशा ध्यान में रखें जिससे हम अपने बच्चों को इन समस्याओं से बचा सकें ।

- ❖ **उनके अच्छे दोस्त बनें :** उनके साथ बिल्कुल प्यार से बातें करें और उनको भी बात कहने का मौका दें । ताकि वे आपसे खुल के बात कर सकें ।
- ❖ **उन्हें जिम्मेदार इंसान बनाएं :** उन्हें घर के कुछ काम-काज संभालने का मौका दें । उन्हें घर की जिम्मेदारी लेना सिखाएं ।
- ❖ **उन पर अधिकार मत जताइए :** बल्कि उन्हें अपने में शामिल कीजिये, क्योंकि आज के युवा सुनते नहीं हैं । इसलिए माँ-बाप को थोड़ा-सा धैर्य रखना चाहिए ।
- ❖ **अपने लिए भी कुछ कीजिये :** माँ-बाप को चाहिए कि उन्हें आराम से अपने पास बैठ कर आत्मविश्लेषण करना सिखाना चाहिए । क्या चीज उनके जीवन में ठीक है और गलत है और क्या उनके जीवन के लिए बेहतर होगा ।
- ❖ **उनके सामने उनकी कमज़ोरी को बढ़ा-चढ़ा कर न बोलें -** माँ-बाप को चाहिए कि उन्हें ज्यादा से ज्यादा हर काम के प्रति उत्साहित करें, उनका मनोबल बढ़ायें । उन्हें समझाएं कि तुम किसी से कम नहीं हो । तुम हर काम कर सकते हो । उनको खुद की पहचान करनी सिखाएं । उनके साथ किशोर अवस्था से संबंधित बातें करनी चाहियें । उन्हें अकेले नहीं रहने देना चाहिए । उन्हें समझाएं कि शरीर के विकास की एक स्वाभाविक प्रक्रिया होती है जो कि प्राकृतिक होती है यह हर एक इंसान में

होती है इसलिए घबराना नहीं चाहिए। इस प्रकार हमें अपने बच्चों के मन को समझना और फिर उसके मनोबल व उत्साह को बढ़ाना न सिर्फ उसके कैरियर के लिए अच्छा होता है बल्कि समाज निर्माण व देश के विकास के लिए भी बहुत जरूरी है।

**किशोरों को समाज में किन-किन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है**

- ❖ **गरीबी और बेरोज़गारी :** गरीबी और बेरोज़गारी समाज में एक बहुत बड़ी समस्या बन गई हैं। गरीबी के कारण उन्हें शिक्षा से वंचित होना पड़ता है। क्योंकि कुछ माँ-बाप अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा दिलवाने में असमर्थ रहते हैं। दूसरी और बेरोज़गारी भी एक गंभीर समस्या बन गई है किशोरों के लिए, क्योंकि कुछ युवा बेरोज़गार होने के कारण तनाव के शिकार हो जाते हैं, शरीर में अनेक प्रकार की बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं। जिससे आने वाले भविष्य पर गहरा असर पड़ता है। और कुछ नौकरी के चक्कर में बहुत देरी से शादी करते हैं जिससे आने वाले बच्चों के स्वास्थ्य पर भी बहुत गहरा असर पड़ता है।
- ❖ **समाज की बेरूखी :** वैसे तो महिलाएं और पुरुष समाज के हर क्षेत्र में बढ़-चढ़ कर भाग ले रहे हैं। परंतु, फिर भी महिलाओं को कहीं न कहीं कुछ हद तक नज़रअंदाज किया जा रहा है और उनके काम को ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं समझा जाता है। उन्हें सिर्फ घर में ही रहने की इजाजत होती है। ये समाज और महिलाओं के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है। क्योंकि आज के समय में महिलाएं किसी भी क्षेत्र में पीछे नहीं हैं। इसलिए समाज के लोगों का व्यवहार बेरूखी नहीं होना चाहिए। समाज में उन्हें भी बराबर का दर्जा देना चाहिए।
- ❖ **भ्रष्टाचार :** किशोरों के लिए, ये भी एक बहुत गंभीर समस्या है। आज देश के हर क्षेत्र में भ्रष्टाचार फैला हुआ है। भ्रष्टाचार का अर्थव्यवस्था के विकास और किशोरों की जिंदगी पर बहुत ही बुरा असर हो रहा है।
- ❖ **शिक्षा में असमानताएं :** वैसे तो किशोर और किशोरियाँ शिक्षा के हर क्षेत्र में बराबर हैं। परंतु, आज भी किशोरियों की शिक्षा को लेकर समाज के रवैये में थोड़ी-सी बेरूखी है। उन्हें सिर्फ घर में ही रहने की इजाजत होती है। लड़कों को अच्छे महंगे स्कूल में पढ़ाया जाता है। जबकि लड़कियों की पढ़ाई पे ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता है। माँ-बाप को दोनों को बराबर शिक्षा का अवसर देना चाहिए। क्योंकि आज के समय में लड़कियाँ, लड़कों से किसी भी क्षेत्र में कम नहीं हैं।
- ❖ **दूसरी जात में शादी करने में समस्याएं :** आज के समय में समाज में ये काफी गंभीर समस्या बन गई है। क्योंकि ज्यादा से ज्यादा युवा महिला और पुरुष जाति के बंधनों से परे अपनी व्यक्तिगत पसंद से शादी करना चाहते हैं। सर्वोच्च न्यायलय ने भी इसे (राष्ट्रहित) में मानते हुए मान्यता दे दी है। परंतु, गाँव में आज भी दूसरी जात में शादी करना, गलत समझा जाता है।
- ❖ **नशीली दवाओं की लत पड़ जाना :** नशीली दवाओं का सेवन करना भी एक गंभीर समस्या बन गई है।

(शेष पृष्ठ 26 पर)

## हरी पत्तेदार सब्जियों का दैनिक भोजन में महत्व

सुमित्रा यादव एवं जितेन्द्र कुमार<sup>1</sup>

कृषि विज्ञान केन्द्र, मण्डकोला

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरी पत्तेदार सब्जियाँ महत्वपूर्ण खनिजों और विटामिनों का भंडार होती हैं, इस लिए उनका वर्गीकरण संरक्षी खाद्य के रूप में किया जाता है। इनमें आयरन, कैल्शियम, विटामिन-ए (जैसे केरोटीन), विटामिन 'सी' और 'बी' काम्प्लेक्स समूह के विटामिन विशेषतया राइबोफ्लेविन और फोलिक एसिड प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। इन सब्जियों में प्रोटीन की मात्रा कुछ कम होती है। लेकिन इन्हें अनाज-दाल में मिलाकर इस्तेमाल किया जाए तो भोजन में प्रोटीन की मात्रा अधिक हो जाती है।

**लाभ :**

- ❖ हरी पत्तेदार सब्जियों में आयरन भरपूर मात्रा में होता है और दैनिक आहार में लगभग 50 ग्राम इस्तेमाल करने से शरीर में पर्याप्त रूप से आयरन की आवश्यकता पूरी हो जाती है। हरी पत्तेदार सब्जियों में मौजूद विटामिन 'सी' आयरन को अधिक कारगर ढंग से खपाने में मदद करता है।
- ❖ इनमें कैरोटीन की मात्रा अधिक होती है। इसलिए यह न केवल हमारी आँखों की सुरक्षा करती है बल्कि बच्चों के शारीरिक विकास में सहायक होती है और बीमारियों के प्रति प्रतिरोध शक्ति का विकास करने में भी मदद करती है।
- ❖ भोजन के रेशा तत्व में बहुत से स्वास्थ्यवर्धक गुण होते हैं। इन सब्जियों से जो रुक्षांस प्राप्त होता है वह भोजन को अच्छी तरह से पचाने के लिए लाभदायक होता है।
- ❖ पत्तेदार हरी सब्जियाँ शरीर के विकास और सामान्य स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए आवश्यक हैं। ये बहुत सारे पौष्टिक तत्वों का स्रोत हैं और इन्हें अपनी शाकवाटिका में आसानी से उगाया जा सकता है।

अपने दैनिक भोजन में इन्हें शामिल करना चाहिए जैसे पालक, चौलाई, हरी मेथी, सहिजाने की पत्ती, एवं मूली के पत्तों का सामान्यतया पूरे देश में उपयोग किया जाता है। इन्हें परंपरागत व्यंजनों में भी इस्तेमाल किया जा सकता है जैसे:

- ❖ रोटी, मिस्सी रोटी, परांठा, आदि तैयार करने के लिए आटे में पत्तेदार सब्जियाँ काट कर मिलाएं।
- ❖ इन्हें खिचड़ी, उपमा आदि में इस्तेमाल करें।
- ❖ मूली, शलगम, चुकन्दर आदि के पत्तों से भूजिया तैयार करना।
- ❖ हरी सब्जियों से रायता बना सकते हैं।
- ❖ नारियल या मूंगफली मिलाकर इनसे चटनी तैयार करना।

(शेष पृष्ठ 32 पर)

<sup>1</sup>जिला विस्तार विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान) कृषि विज्ञान केंद्र, मण्डकोला।



# सूत्रकृमि प्रबंधन में फसल चक्र की उपयोगिता

विनोद कुमार, बबीता कुमारी एवं के. के. वर्मा

सूत्रकृमि विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

पादप सूत्रकृमि अथवा निमेटोड छोटे व अति सूक्ष्म, गोल शरीर वाले, खंड रहित धागे की तरह अकशेरुकी, सांप जैसे जीव होते हैं। ये अधिकतर मिट्टी में रहकर जड़ों को नुकसान करते हैं। नर व मादा प्रायः अलग-अलग होते हैं और ये लैंगिक प्रजनन करते हैं। अधिकतर सूत्रकृमि रंग विहीन होते हैं। इन्हें इनके सूक्ष्म आकार, अर्ध पारदर्शी शरीर के कारण सामान्य नग्न आँखों से खेतों में नहीं देखा जा सकता। ये सूक्ष्मदर्शी यंत्र से ही दिखाई देते हैं। आम आदमी के लिए खेतों में सूत्रकृमि का पता लगाना काफी मुश्किल है। खेतों को सूत्रकृमियों से पूर्णतः मुक्त करना व्यावहारिक रूप से असम्भव होता है। सभी पादप रोगजनक सूत्रकृमि अविकल्पी परजीवी होते हैं। अनेक पादप-परजीवी सूत्रकृमि जातियाँ केवल कुछ फसलों के पौधों में ही संक्रमण कर सकती हैं। किसी सूत्रकृमि का एक पादप परजीवी के रूप में महत्व विशेषकर इस बात पर निर्भर करता है कि उसकी संख्या सीमा फसल के पौधों की आर्थिक हानि पहुंचाने के स्तर तक बढ़ पाती है अथवा नहीं।

सूत्रकृमि प्रबंधन की विधि को चुनने का विकल्प सूत्रकृमि प्रजाति के जीव विज्ञान, पोषक फसलों तथा इसका प्रति एकड़ मूल्य, इनके फैलने का तरीका, इस्तेमाल की जा रही संवर्धन क्रियाएं तथा पारिस्थितिकीय संबंधों पर निर्भर करता है। रासायनिक साधनों द्वारा सूत्रकृमियों का प्रबंधन आर्थिक दृष्टि से अव्यावहारिक होता है। अतः खाद्यान्न उत्पादन को बढ़ाने के लिए किसान समुदाय को अपने संसाधनों के अनुरूप कृषि के तरीकों में बदलाव करने चाहिए। विभिन्न कर्षण क्रियाएं अनेक सूत्रकृमियों से उत्पन्न पादप रोगों की तीव्रता एवं उनके विकास को प्रभावित करती हैं। सूत्रकृमियों द्वारा उत्पन्न पादप रोगों से होने वाली हानि के फसल चक्र अपना कर रोकना एक सरल, प्रभावशाली, लाभकारी एवं वातावरणीय प्रदूषण की दृष्टि से उपाय है। लगातार एक ही फसल को बोने पर सूत्रकृमि की संख्या में वृद्धि, रसायनों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता का विकास, विभिन्न कीटों एवं रोगों का प्रकोप, पोषक तत्वों की कमी आदि कई समस्याओं के स्थाई निदान के लिए फसल प्रणाली में उचित फसल चक्र का होना आवश्यक है जिसे साधारण भाषा में जैविक खेती की तरफ एक कदम कहा जा सकता है। फसल चक्र जैविक खेती का एक महत्वपूर्ण अंग है जिसे बिना लागत के आदान की संज्ञा दी जा सकती है।

फसल चक्र का मुख्य उद्देश्य न्यूनतम संख्या को वृद्धि के उस स्तर तक रोकना है जिसमें फसल को संतोषजनक ढंग से उगाया जा सकता है। फसल चक्र अपनाने के लिए खेत की मिट्टी में मौजूद सूत्रकृमि प्रजातियों की प्रकार, इसके जैविक स्वरूप, पोषक पादप रेंज, जीव विज्ञान, जीवन निर्वाह, संख्या और इनकी प्रतिरोधी अथवा ग्रहणशील फसलों के विषय में जानकारी होना अति आवश्यक होता है। अतः एक खेत में निरंतर प्रतिवर्ष

एक ही रोगग्राही या ग्रहणशील परपोषी फसल उगाने से मिट्टी में सूत्रकृमि की संख्या में बहुत अधिक वृद्धि होती है। यदि सूत्रकृमि ग्रस्त खेत में 2 या 3 वर्षों तक परपोषी फसलों के स्थान पर अ-परपोषी फसलों को उगाया जाये तो उपयुक्त परपोषी पौधों के अभाव में उस खेत से सूत्रकृमि का भूख के कारण एवम् जनन क्रिया न होने से स्वतः ही विनाश हो जाता है।

## फसल चक्र क्या हैं :-

किसी निश्चित क्षेत्र पर निश्चित समय में निश्चित क्रम में फसलों को हेर-फेर कर बोना फसल चक्र है जिससे भूमि की उत्पादकता में वृद्धि एवं उर्वरा शक्ति बरकरार रहती है एवं अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। यह फसल चक्र एक वर्ष या अधिक अवधि के लिए हो सकता है। फसल विविधीकरण समय की मांग है तथा किसानों का जोखिम कम करने एवं टिकाऊ उत्पादन के लिए बहुत आवश्यक है। यह रोगग्राही या ग्रहणशील परपोषी फसलों को अपरपोषी फसलों के साथ हेर-फेर कर बोने की क्रिया ही फसल चक्र कहलाती है। जब अ-परपोषी अथवा प्रतिरोधी फसलों को खेत में एक निश्चित अवधि तक उगाने के बाद रोगग्राही फसल को उस खेत में उगाया जाता है, तब यह आशा की जाती है कि सूत्रकृमि आहार न मिलने के कारण भूखे मर जायेंगे। ऐसी फसलें जो सूत्रकृमियों के लिए अनुकूल पोषक पादप हैं उनमें सूत्रकृमि की संख्या नियंत्रित करने के लिए गैर पोषक फसलों के साथ चक्र में उगाया जाना चाहिए। सूत्रकृमि प्रबंधन की मात्रा फसल चक्र में उगाई गई फसलों की प्रतिरोधता के स्तर तथा संवेदनशील फसलों के बीच गैर पोषक पौधों या प्रतिरोधी फसलों के रोपण के वर्षों की संख्या पर निर्भर करती है।

## सारणी : सूत्रकृमि प्रबंधन के लिए मुख्य फसल चक्र।

सूत्रकृमि	फसल	प्रबंधन
जड़-गांठ सूत्रकृमि	सब्जियां	ऐसी फसलें जिन पर यह सूत्रकृमि नहीं पनप सकता (ग्वार, प्याज, लहसुन, अनाज वाली फसलें आदि) उन्हें सब्जियों के फसल चक्र में उगाएं।
गेंहूँ व जौ का सिस्ट सूत्रकृमि	गेंहूँ व जौ	मोल्ल्या रोग का सूत्रकृमि गेंहूँ व जौ की फसलों पर ही लगता है इसलिए इस बीमारी वाले खेत में ये फसलें न लेकर दूसरी फसलें जैसे कि सरसों, मेथी, सब्जी वाली फसलें आदि उगाएं।
धान का जड़-गांठ सूत्रकृमि	धान	सूत्रकृमि से प्रभावित खेत में धान व सुग्राही फसलें न बोएं। कपास व ग्वार उगाएं।
अरहर सिस्ट सूत्रकृमि	अरहर, मूंग, उड़द, ग्वार, सोयाबीन	प्रभावित खेत में दलहनी (पोषक) फसलें न उगाकर दूसरी फसलों का फसल चक्र अपनाएं।

## फसल चक्र के लाभ :-

उपयुक्त फसल चक्र अपनाने से कृषकों को निम्नलिखित लाभ होते हैं :

1. कुछ फसलों की जड़ों से निकलने वाले रिसाव हानिकारक मृदा जीवों जैसे सूत्रकृमि व अन्य सूक्ष्म जीवों की वृद्धि आगामी फसल के लिए व विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। जो आगामी फसल के लिए लाभदायक होते हैं।
2. भूमि को मृदा जनित रोगों व कीटों के प्रकोप से बचने में मदद मिलती है।
3. खरपतवार के नियंत्रण में सहायता मिलती है।
4. भूमि की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशा में सुधार होता है। दलहनी फसलों के कारण मृदा की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशा ठीक बनी रहती है तथा जैव पदार्थ की कमी नहीं होती है।
5. दूसरी फसल के लिए खेत तैयारी का पर्याप्त समय मिल जाता है।
6. फसल उत्पादन में लागत कम आती है।
7. फसलों की पैदावार/उपज में वृद्धि होती है।



(पृष्ठ 24 का शेष)

ये एक ऐसी स्थिति है जिसमें किसी व्यक्ति के भीतर किसी खास नशीली दवा का नियमित सेवन करने की हानिकारक प्रवृत्ति बन जाती है और वह सामान्य दिनचर्या चलाए रखने के लिए वह दवा या ड्रग पर ही निर्भर रहने लगता है। नशीली दवाओं के सेवन से केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र प्रभावित होता है और शारीरिक बीमारियाँ हो जाती हैं जिससे मानसिक विकास, शरीर का विकास, जागरूकता के स्तरों या अवबोधन एवं संवेदनाओं में परिवर्तन उत्पन्न होते हैं। दूसरी ओर नशीली दवाइयों के प्रयोग से किडनी पर बहुत गहरा असर पड़ता है।

- ❖ **शारीरिक समस्याएँ :** इनमें से कुछ समस्याएं इतनी बड़ी हैं इसलिए हमारे लिए इनका हल ढूंढना बहुत जरूरी हो जाता है। आज के किशोरों के लिए रात को नींद न आना भी एक बहुत बड़ी समस्या है भरपूर नींद न लेने के कारण कई प्रकार की शारीरिक समस्याएं हो जाती हैं। दिल का दौरा, तनाव, भूलने की बीमारी और पाचन क्रिया बिगड़ना जैसी समस्याएं हो जाती हैं।



## Sunflower diseases and their Management

Mamta, Rajender Singh and H. S. Saharan  
Department of Plant Pathology  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Sunflower is one of the most important oil seed crop grown as major source of vegetable oil in the world. In India, it has gained popularity due to the national priority of vegetable oil production. Haryana farmers are growing this crop in substantial area. To ensure good yield, the management of diseases, which are responsible for heavy losses to this crop, is necessary. The diagnostic symptoms and management of major diseases are given as under :

### 1. Alternaria Blight

This disease is caused by a fungus *alternaria helianthi*. In the early stages of disease development, there is formation of dark brown to black, circular to oval spots. These spots are surrounded by a necrotic zone with gray-white necrotic centre marked with concentric rings. With the growth of the plant, such spots develop on middle and upper leaves and later on elongated spots are formed on petioles, stems and florets. Under high humidity, these spots enlarge in size resulting in blighting of leaves. Hot and moist weather during the milk stage of the crop favour infection.

### Management

Spray of mancozeb @ 0.2 % on just after the appearance of the disease symptom. Repeat at 15 days interval.

### 2. Head Rot

The plants may remain healthy until the flower heads are produced. The symptoms may become visible on any part of the head. Initially symptoms of head rot appear as a brown, water soaked, irregular spot on the back of the ripening heads, usually adjacent to the flower stalk. The spot enlarges and becomes soft pulpy and get covered with superficial whitish mycelium. In severe cases, the infection reaches the flower stalk and the head drops off. Either there is no seed formation or the seeds remain unfilled and bitter in taste. In most of the cases, the head injury is necessary for infection. The pathogen survives in the soil. Cool weather and high moisture is favourable for the development of the disease. (Cont. page 28)

# Diversification through Horticulture—Need of the Hour

Vijay, R. P. S. Dalal and Sourabh

Department of Horticulture

CCS Haryana Agricultural University, Hisar

The National Aeronautics and Space Administration (NASA) sent a warning signal that agriculture output can collapse in states like Punjab and Haryana and there can be severe shortage of drinking water in big cities such as New Delhi, if efforts were not made to ensure sustainable groundwater usage. We need to look afresh at issues related to usage of water for agriculture, industrial and domestic purposes.

Rice-wheat cropping system considered to be the backbone of food security of the Country, is the very root cause of rising water crisis in North Western parts of India. Although we cannot ensure country's food security without existing rice-wheat system but we need to be aware of the vacuum that we are creating in the very eco-system we exist in. India produces 252 million tonnes food grain out of which rice is the major dominating cereal with a production figure of 103 mt. Out of this, we export 10 mt (approximately) to other countries like UAE, Saudi Arab, Iran, etc. The most interesting fact that we cannot deny is that we are one of few geographical areas that have the capability to produce the scented rice (basmati rice). Out of the existing 10 mt export of rice, basmati account for 40% (approx.), which we cannot afford to cut in, so the effort needs to be directed towards the diversification of the area under non-scented rice towards a future which ensures stability both in terms of environment as well as economy.

Now the question arises that what is the need to diversify when we are already earning quite well both on farmer and national level. Here we need to mention the cost we are paying to produce a single kg. of rice which is about 3000 litres. Hence, the 10 mt rice, that we are exporting, is consuming 30 billion cubic meter water to produce that we are gifting to other countries without realizing.

If we talk about prevailing conditions in Punjab, which has been contributing 25 to 50 per cent rice and 38 to 75 per cent wheat per annum over the years to the Central food pool. The conditions concerning the ground water level are quite serious. In Punjab, available underground water is

approximately 21 million cubic meter (MCM) whereas, there is net draft of approximately 31 MCM leading to a direct deficit of about 10 MCM. Out of a total 137 blocks, 103 blocks in Punjab are under over-exploited category where there is not enough recharging.

The Punjab government has given free power worth Rs. 45,000 crore since 1997 mainly to grow water-guzzling paddy crop. Had the State Government promoted less water-guzzling crops such as maize, sunflower, pulses and horticultural crops and supported their marketing with this money, the scenario might not have been so precarious. The situation is not pleasing in Haryana too. About 55 per cent of the blocks are under over exploited category.

This deteriorating condition requires a holistic and sustainable approach with the prime answer as "Diversification". We are in dire need to diversify atleast 20-25% area under existing rice-wheat system. Horticulture appears to be one of the most promising areas which could function as hinge around which diversification could be exploited. Why so? the answer lies in the very potential that it carries along with it. One of the most revolutionary change that went unnoticed was in the year 2012-13, when for the first time horticultural (268.85 mt) production surpassed food grain production (257.13 mt) of the Country. Another important fact is the superior performance of horticultural sector, especially under water deficit/drought conditions. India have faced three drought or dry years since 2001 and in each scenario horticulture proved its worth. The year 2002-03 registered long period average (LPA) of rainfall at 81% resulting in a reduction of 38.1 mt food grain production as compared to 2001-02 whereas, horticultural production just faced a downfall of 1.41mt in the same year. The second phase of dry spell was observed in 2009-10, which recorded LPA of rainfall at 77% which resulted in 16.66 mt reduction in foodgrain production as compared to 2008-09 whereas, the horticultural production miraculously increased by 8.37 mt over previous year despite of the drought conditions. The third but not the last dry spell faced by the Country was observed in 2014-15 with LPA of rainfall at 88 % resulting a downfall of 12.36 mt in food grain production over 2013-14 but still the horticultural production proved its worth again by showing an increase of 8.21 mt over previous year again.



Moreover, if we see the growth that the horticulture sector has seen in last one and half decade is remarkable itself. The horticultural production increased approximately 98.2 % from 145.79 mt in 2001-02 to 289 mt in 2014-15 as compared to foodgrain production which saw a meager growth of just 18.4% in the same time frame which answers the immense potential that the sector holds for us. If we talk about the export potential required to substitute the deficit that will be created, if we diversify ourself from the traditional rice-wheat system and move towards promising sectors such as horticulture, we should consider the rate with which the sector is promising growth. Horticultural export was worth Rs. 7157 crores in 2010-11, which increased more than 100 % to Rs.14364 crore in 2013-14.

Although the farmer seems to be satisfied with the regular income that he gets from the traditional rice-wheat system primarily because of MSP and assured procurement by government and fears from economic point of view in the initial 3-4 years while, establishing an orchard. What the farmer lacks and we need to accomplish is the transfer of latest knowledge, technology and measures to ensure that the farmer gets out of this myth and adopts horticulture for what it is worth. The concept of inter-cropping in orchards with vegetables and pulses not only ensures good side income to the farmer, but also solves the problem that we are facing with the increasing price of vegetables and need of pulses. Presently, we produce about 17 mt pulses and we have imported 5.79 mt of pulses during 2015-16 at the cost of Forex. Another positive aspect of horticulture is the availability of area specific crops and area specific varieties for any particular crop and location.

The farmer needs to be made aware of the immense potential under protected cultivation conditions which could result in exponential increase in economy and the support that the government is providing in form of guidance and subsidies (for construction of green/poly houses, cold storage, marketing, etc.). Practices, like drip and sprinkler irrigation, could be easily adopted under protected cultivation conditions with improved water use efficiency (about 90 % for drip irrigation, 70-80 % under sprinkler irrigation as compared to 50- 60 % in flood irrigation under field conditions).

Adopting horticulture would not only save us from existing water crises but will also improve soil health both in chemical as well as physical terms. The air pollution caused due to residual burning in rice-wheat fields and over-use of pesticides (particularly, in rice and cotton) is the small un-realized harm which is proving dangerous to both human as well as animals causing irreversible changes on DNA level. The soil organic carbon, which is considered as indicator of the soil potential is directly affected by residual burning. The studies have revealed that in the fields with residue burning as a common practice, soil organic carbon has gone below 0.2 % with normal conditions of 0.4-0.75%, whereas, it is more than 0.8 % in organic declared State Sikkim. The cultural practices in rice-wheat system have resulted in increase in bulk density and decrease in soil porosity due to which cultivation of other crops has become difficult. Under such circumstances, the diversification through horticultural crops seems to be a viable, potent and promising alternate.



(From page 26)

### Management

Seed treatment with carbendazim 2 g/kg seed. Grow crop in proper drainage area. Crop rotation with either wheat or barley.

### 3. Root and Stem Rot

The most common symptoms of the disease under field conditions is sudden wilting of plants which usually appears after pollination. Early symptoms are not visible on infected plants, but the plants become weak showing early maturity and become dry exhibiting black ashy discolouration of the stem. It has been observed that the fungus produces abundant *sclerotia* on the surface and pith of the affected plants due to which some portion of the stem becomes black in colour. Flowers from affected plants do not attain full size and yield few seeds. Sometimes the disease may cause death of the plants even in seedling stage. Moisture stress and high temperature increase the disease incidence.

### Management

Seed treatment with carbendazim @ 2 g/kg seed or thiram 3g/kg seed. Timely sowing helps in minimizing the disease development.



# Herbonanoeuticals : Traditional Medicine towards Herbal Therapeutics

Himani and Jayanti Tokas

Department of Biochemistry  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Today, biomedical science is an ever fast growing field of research which has been advanced with time and is still developing day after day. Herbs have been an integral part of our therapeutic consideration since thousands of years, but are still under investigation and have become a part of biomedical research laboratories. Applying nanotechnology to yield metal-herb formulations can be a new paradigm in biomedicine. This approach can be more appealing since it would be more physiologically compatible, less toxic, cost effective, and easily available owing to its natural origin. Herbonanoeuticals can be defined as engineered materials employed at nano-scale level using herbs for their synthesis, designed to participate in the physiological functioning of the body.

In fact, medicinal plants are still remain a popular choice for therapeutics in 80 % of people in developing countries owing to its easy bio-compatibility, natural origin, availability, acceptability and cost-effectiveness. A lot of literature has been documented on details of folk plant remedies and its practice. There are lists on numerous active herbal components derived from plant sources and its therapeutic applications in various ailments. Reports on herbal medicine, principles of herbal pharmacology treatment, validation of herbal therapeutics, issues of safety, dosage and dosage forms in herbal medicine have also been documented, where role of herbal medicines is highlighted in patho-physiological conditions in perspectives of physiological systems and ailments such as digestive system, cardiovascular system, the hepatic system, biliary system, , respiratory system, nervous system, urinary system, joint diseases, skin diseases and female reproductive system.

Ayurveda, India's traditional medicinal system is associated with the natural sources and natural product derived preparations for the medication of various diseases. It deals with the utilization of herbs, metals and minerals for medicinal purposes. About 6 % of plant species have been screened for biological activities.

Ayurvedic formulations of Samhita period (600-1000 BC) used metals in powdered forms. They were named as Ayaskrati. The metals used in Ayurveda include gold (Swarna), silver (Rajata), copper (Tamra), iron (Lauha), mercury (Parada), zinc (Yasada), lead (Naga), tin (Vanga), etc. Their internal use was limited because they were not free of unwanted toxic effects. Development of Rasashastra in 7<sup>th</sup> Century AD introduced many new pharmaceutical procedures for metal formulations of Ayurvedic preparations including Marana, Shodana and Jarana.

## Green Synthesis of Nanoparticles

The term 'Green' nanoparticles refers to synthesis of nanoparticles derived from metal salts by using the reducing property of biologically active compounds (derive from micro organisms, herbal extracts, animal extracts, etc.).

## Applications

Metal nanoparticles (as in *bhasmas*), in combination with herbs may function as a potent therapeutics. Active compounds present in herbs can reduce nanoparticles, stabilize it and in combination they can hold a better therapeutic potential. Nanoparticles conjugation makes the herbal extracts more effective and applicable. Anti-cancerous, anti-diabetic, anti-microbial, anti-arthritis and anti-anemic antioxidant properties of green nanoparticles have been established till date.

**Drug delivery using green nanoparticle :** Owing to very high surface area-to-volume ratio, metal nanoparticles have effectiveness to carry drugs to specific target organs. Nanoparticles possessing very small volume can reach target site very efficiently, carrying the drugs and mediate their effects. Drugs can be tagged with the surface, or loaded inside the hollow sphere of metal nanoparticles. They show sustained release procedures of drugs. Green gold nanoparticle of 40 nano meter is suitable for drug delivery as they are non-cytotoxic in nature. Targeted drug delivery in cancer also may be possible by using green gold nanoparticle synthesized using fruit peel extract of pomegranate (*Punica granatum*).

**Anti-microbial activity of green nanoparticles :** Green nanoparticles show tremendous potential of antimicrobial activity. Xylose, a monosaccharide found in straw, pecan shells and corncobs, cottonseed hulls was

used to synthesize and cap gold nanoparticle with effective anti bacterial activity against gram positive bacteria. Green nanoparticles exhibiting a diverse range of antimicrobial properties by using herbal based components is listed in Table 1. Gold nanoparticle synthesized, using *Cinnamomum zeylanicum* leaf broth exhibited efficient antibacterial activity against gram negative *Escherichia coli*, gram positive *Staphylococcus aureus* and antifungal activity against *Aspergillus niger* and *Fusarium oxysporum*. Gold nanoparticle synthesized from aqueous extract of *Terminalia chebula* showed better antimicrobial activity towards gram positive *S. aureus*, compared to gram negative *E. coli* using standard well diffusion method. Banana peel extract mediated synthesis of gold nanoparticle showed efficient antimicrobial activity towards most of the tested fungal and bacterial cultures. Silver nanoparticle synthesized

using methanol and ethyl acetate extracts of the inflorescence of the tree *Coccoloba nucifera* showed antimicrobial activity against human bacterial pathogens including *Bacillus subtilis*, *Klebsiella pneumoniae*, *Salmonella paratyphi* and *Pseudomonas aeruginosa*.

To conclude, with a new technology come new challenges, which has both pros and cons. Resolving these challenges can make this technology survive for years in research, development and applications. Initiatives need to be taken to solve these issues so that herbal nano-metal formulations i.e., herbonanocuticals can be a wonder drug for future therapeutics. Hence, the future medicine therefore will walk miles holding the hands of medicinal plants therefore research and development in this arena is required using upcoming technologies.

**Table 1. List of green nanoparticles exhibiting diverse range of biological activities**

Green nanoparticles	Biological activity	Herbal based components used in green synthesis
<b>Gold</b>	Xylose from straw, corncobs, pecan shells and cotton seed hulls	Anti microbial
	<i>Cinnamomum zeylanicum</i> (Leaf)	Anti microbial
	<i>Terminalia chebula</i>	Anti microbial
	Banana peel	Anti microbial
	Trigonella foenum-graecum (seed)	Anti anemic
	Methotrexate	Anti arthritic
	Propanoic acid 2-(3-acetoxy-4,4,14-trimethylandrosta-8-en-17-yl) isolated from <i>Cassia auriculata</i>	Anti diabetic
	<i>Couroupita guianensis</i> (Flower)	Anti cancer
	<i>Dioscorea peltata</i> (Rhizome)	Anti metastatic
	<i>Pleurotus florida</i>	Anti cancer
	<i>Eclipta Alba</i> (Leaves)	Anti cancer (breast cell line)
	<i>Cinnamomum zeylanicum</i> (Bark)	Anti cancer
	<i>Mimosa pudica</i> (Glucosylans from seeds)	Drug delivery
	<i>Punica granatum</i> (Fruit peel)	Drug delivery
<b>Silver</b>	<i>Achillea biebersteinii</i> (Flowers)	Anti-angiogenic
	<i>Plectranthus amboinicus</i> (Leaf)	Anti microbial
	<i>Heliotropium indicum</i> (Leaves)	Larvicidal
<b>Zinc</b>	<i>Coccoloba nucifera</i> (Inflorescence)	Anti microbial
	<i>Caulerpa peltata</i> , <i>Hypnea Valencia</i> , <i>Sargassum myriocystum</i>	Not discovered
	<i>Parthenium hysterophorus</i>	Anti fungal
<b>Copper</b>	<i>Calotropis procera</i> (Latex)	Not discovered
	<i>Carica papaya</i> (Leaf)	
<b>Iron</b>	Eucalyptus (Leaf)	
	Oak, pomegranate and green tea (Leaf)	





# Integrated Pest Management (IPM) in Okra for Quality Fruit Production

Bajrang Lal Sharma, B. R. Kamboj<sup>1</sup> and Sandeep Rawal<sup>2</sup>

DES Entomology  
KVK Damla, Yanunanagar

Okra enjoying a pre-dominant role among vegetables grown in India, as it is preferred by most of the Indians. Its quality production is challenging since it is affected by more than 72 insect pests throughout its season from seedling to harvest. The major pests are Leafhopper (*Amarasca biguttula*), whitefly (*Bemisia tabaci*), aphids (*Aphis gossypii*), shoot and fruit borer (*Earias vittela* & *Earias insulana*), okra fruit borer (*Helicoverpa armigera*) melon thrips (*Thrips palmi*) and aphids (*Aphis gossypii*). The farmers use lots of pesticides injudiciously to control them, which not only reduce the quality of fruits, but also increase input costs besides degrading the environment and killing beneficial insects and also affecting human health adversely. So it is urgent need to popularize management practices for Integrated Pest Management practices in okra for quality fruit production.

**Important Practices for Pest Free Okra Fruit Production are detailed below :**

## Identification of Different Okra Pests

**1. Leafhopper (*Amarasca biguttula*) :** Adults are greenish yellow, small, wedge shaped 3 mm long having black spot on each forewings and vertex. Lays yellowish eggs in clusters on underside, embedded in the leaf veins. Nymphs and adults feed underside by sucking sap.

**2. Whitefly (*Bemisia tabaci*) :** Adults are yellowish dusted with white waxy powder, 1.0-1.5 mm in length. Female lays stalked eggs singly on underside of leaves. Nymphs and adults suck the sap of leaves.

**3. Aphids (*Aphis gossypii*) :** Adults are small soft bodied found in colonies in tender parts. Damage is caused by both nymphs and adults by sucking cell sap. Black shooty molds develop on honey dew secreted by aphids on leaves.

**4. Shoot and fruit borer (*Earias vittela* and *E. insulana*) :** Adult of *earias vittela* is 2.5 cm across the wings and have narrow light green band in the middle of forewings. Whereas, *E. insulana* does not have such conspicuous band on forewings. Full grown larvae are

dull green, 2 cm long having tiny stout bristles and a series of black spots on the body. Eggs are sky blue and laid singly. Both bores in to shoots resulting in to drooping down of growing points and later on bore in to fruits.

**5. Okra fruit borer (*Helicoverpa armigera*) :** Polyphagous, lays spherical yellow eggs singly on tender parts. Larvae are of varying colour with darker broken lines along side of the body. Body covered with radiating hairs. Pupates inside the soil. Adult is medium sized brownish forewings with dark cross band near outer margin and dark spots near coastal margins. Bore fruits with circular irregular holes comparatively bigger in size. Half portions of larva remain inside the fruit while feeding.

**6. Melon thrips (*Thrips Palmi*) :** This is polyphagous but mostly found on *Cucurbitaceae* and *Solanaceae* crops. Eggs are colorless, bean shaped, laid singly inside the plant tissues. Larvae resembles adult, but lack of wings. They usually feed on older leaves. A full fed larvae descends to the soils of leaf litter where it pupates. Adult are pale yellow with numerous dark setae. Body length is 0.8-1.0 mm.

**7. Red spider mite (*Tetranychus spp.*) :** Mites are minute in size and vary in colour with two dark spots on the body. Infestation usually observed during warm and dry periods. Damage is done by sucking cell sap, giving grey patches on leaves and leaves become brown and fall. In severe infestation webbing is observed in plants.

## Pest Surveillance

Weekly monitoring through pest scouting and with the help of monitoring device like pheromone traps, colored sticky traps should be practiced from germination to harvesting stage. For field scouting, 100 plants per acre in a cross diagonal pattern through and zig zag manner should be selected for counting of each and every type of insects. If 95 % plants are found free from insect pests then the field should be considered fit for export of okra fruits.

## Management Practices

The following Good Agricultural Practices should be adopted for the management of various okra pests :

1. Destruction of debris, crop residues, weeds & other alternate hosts.
2. Deep summer ploughing.
3. Adoption of proper crop rotation and avoid growing of malvaceae crops in sequence.

<sup>1</sup>Sr. Coordinator, KUK Damla, Yanunanagar

<sup>2</sup>DES Agronomy, KUK Damla, Yanunanagar

4. Uproot hollyhock and the rationed cotton, which are host plants for bollworms.
5. Use of resistant and tolerant varieties recommended by the State Agricultural Universities (SAU) of the region.
6. Use well decomposed FYM @ 8-10 tones per acre or vermi-compost @ 5 tones per acre treated with *Trichoderma sp.* and *Pseudomonas sp.* @ 2 kg per acre as seed/ nursery treatment and soil application.
7. Apply neem cake @ 100 kg per acre for reducing nematode population.
8. Seed should be treated with *Imidacloprid* 70 WS @ 5 gm/kg seed for control of sucking pest up to 40- 45 days of crop.
9. Weeding and earthing up in rows should be done 25-30 days after sowing.
10. Field should be kept free from weeds.
11. Plant tall crops like maize, sorghum and pearl millet on border of the field to reduce white fly population.
12. Pheromone traps for two insects' viz.; *Helicoverpa armigera* and *Earias sp.* should be installed @ 4-5 traps per acre. Install the traps for each spp separated by distance of more than 75 feet in the vicinity of selected field. Fix the traps to the supporting poles at a height of one foot above the plant canopy. Change the lures after 2-3 weeks interval.
13. Set up 10-20 yellow/blue traps/ sticky traps per acre, 15 cm above the crop canopy for monitoring and mass trapping of thrips, white fly, aphids and Jassids.
14. Use light traps @ one trap per ha, 15 cm. above the crop canopy for monitoring and mass trapping of insects between 6 to 11 pm.
15. Collect and destroy the infested fruits with fruit and shoot borer and larvae of *Heliothis*, *Spodoptera* and adults of *blister beetle*.
16. Conserve the existing bio-control agents like spiders, coccinellids, syrphid flies, etc. in the field by avoiding, delaying and reducing the use of chemical pesticides and promoting the use of bio-pesticides including botanicals and microbial.
17. Augment the bio-control agents like, egg parasitoids, *Trichogramma chilonis*, *Trichogramma achaea*, *Trichogrammatoidea sp.*, *Telenomus sp.*, *Encarsia*

*spp.*; larval parasitoid *Bracon sp.*, *Campoletis chlorideae*, *Chelonus blackburni*; predators like *Chrysopa sp.*, *Coccinella sp.*

18. Install bird percher to conserve predatory birds.
19. Spray NPV @ 250 litre per hectare to control *H. armigera* and *Spodoptera litura*. Spray *Beauveria bassiana* 1% P@1500-2000 g in 160-200 litre of water/acre.
20. Spray Azadirachtin 0.03 % (300 ppm) neem oil based WSP @1000-2000 ml in 200-400 litre of water/ acre or Azadirachtin 5% W/W neem extract concentrate @80 ml in 160 litre of water/acre.
21. Spray Melathion 50 EC @ 400-500 ml in 250-300 liter water per acre (pick fruits before spray or at least three days after spray).



(पृष्ठ 24 का शेष)

पकाने का तरीका :

अधिक पोषक तत्व संरक्षित रखने के लिए हरी पत्तेदार सब्जियां ध्यानपूर्वक निम्नलिखित तरीके से पकाएं:-

- ❖ हरी सब्जियों को सलाद के रूप में इस्तेमाल किया जाना हो तो इन्हें काटने से पहले अच्छी तरह धोएं।
- ❖ जिस पानी में पत्तेदार सब्जियां पकाई हैं, उस पानी को न फेंकें। इसका इस्तेमाल दाल या सूप बनाने तथा आटा गूंथने में करें।
- ❖ पत्तेदार सब्जियों को थोड़ी देर तक ही पकायें और ज्यादा न तलें। पत्तेदार सब्जियां कम मूल्य पर बहुतायत मात्रा में उपलब्ध हों तो इन्हें सुखाकर बाद में प्रयोग कर सकते हैं। अच्छी तरह धो कर एक साफ चादर बिछाकर धूप में पूरी तरह सुखा लें। उसके बाद इन्हें हाथों से रगड़ कर मोटा-मोटा चूरा बनाकर हवा रहित डिब्बे में रख लें।

प्रतिदिन पत्तेदार सब्जियों से तैयार किया गया कम-से-कम एक व्यंजन अवश्य खाएं।



एक कदम स्वच्छता की ओर



हरियाणा

ISSN-0970-6518

# खेती

वर्ष 51

अंक 05



वार्षिक चंदा 150/-



मई 2018



आजीवन सदस्यता 1500/-



प्रकाशन अनुभाग  
विस्तार शिक्षा निदेशालय

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार



## इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
कपास फसल में रस चूसने वाले कीड़ों के नुकसान से बचाव : कैसे करें	अरूण जाँनू, के. के. दहिया एवं आर. एस. सांगवान	1
कपास की फसल में जड़गांठ सूत्रकृमि (निमेटोड) की समस्या एवं रोकथाम	बबीता कुमारी, विनोद कुमार एवं के. के. वर्मा	3
संरक्षित कृषि : आधुनिक कृषि में सब्जी उत्पादन का नया चेहरा	परवीन कुमार, मीनू पूनिया एवं जितेंद्र कुमार भाटिया	4
खरबूजा में समेकित कीट प्रबंधन	पूर्ति, रिकू एवं आर. एस. जागलान	5
उर्वरकों के सही उपयोग में मृदा परीक्षण का महत्व	सुनीता श्योराण, धर्म प्रकाश एवं सोनिया रानी	6
सब्जियों में जैविक तरीकों से कीटों पर नियंत्रण	विकास कुमार, टी.पी. मलिक एवं देश राज चौधरी	7
चूहे और उनकी रोकथाम	जयलाल यादव एवं नरेन्द्र सिंह	8
ग्रीष्मकालीन सब्जियों की काश्त	विकास कुमार, टी.पी. मलिक एवं देश राज चौधरी	10
बारानी क्षेत्रों में जल संरक्षण की उपयोगिता	सुरेन्द्र कुमार शर्मा, पात्तम कीर्ति एवं समुंद्र सिंह	11
शुष्क भूमि के लिए महत्वपूर्ण वृक्ष : रोहिडा	बिमलेन्द्र कुमारी एवं प्रीति सिंह	12
धान की फसल में सूत्रकृमि (निमेटोड) की समस्या एवं रोकथाम	विनोद कुमार, बबीता कुमारी एवं अनिल कुमार	21
हरे चारे के लिए लोबिया की सस्य क्रियाएं	सतपाल, डी.एस. फोगाट एवं उमा देवी	22
कपास में खरपतवारों की रोकथाम-कैसे करें	विवेन्द्र सिंह हुड्डा, मीनाक्षी सांगवान एवं समुन्द्र सिंह	23
सल्फर: एक अहम पोषक तत्व	सुमन चौधरी, रिकू धनखड़ एवं स्नेह गोयल	23
प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन अपनायें-पैदावार बढ़ायें	नरेन्द्र कुमार गोयल, बलदेव कम्बोज एवं संदीप रावल	25
मशरूम (खुम्बी) एक स्वास्थ्यवर्धक आहार	संतोष रानी, विनिता जैन एवं मक्खन मजोका	26
सुधरी किस्म के बुवाई यन्त्रों का प्रयोग	कुलदीप सिंह, जोगेन्द्र सिंह एवं संदीप कुमार	27
कैसे चुनें : बच्चों के लिए खिलौने	पारुल गिल, पंकज गिल एवं पूनम मलिक	28
फसल उत्पादन बढ़ाने में मधुमक्खियों का योगदान	भूपेन्द्र सिंह, सुरेन्द्र सिंह एवं आशा बत्तार	29
Role of Olive Oil In Human Health	Seema	30
Increasing Phosphorus Use Efficiency via Different Interventions	Sonia Rani, Mohammad Amin Bhat and Dinesh	31
<b>स्थाई स्तम्भ : जून मास के कृषि कार्य</b>		<b>13</b>

तकनीकी सलाहकार :

डॉ. आर. एस. हुड्डा

निदेशक, विस्तार शिक्षा

संकलन :

डॉ. एम. एस. ग्रेवाल

परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)

विस्तार शिक्षा निदेशालय

सह-निदेशक (प्रकाशन)

डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी

संपादक :

डॉ. सुषमा आनंद

सह-निदेशक (हिन्दी)

सुनीता सांगवान

सम्पादक अंग्रेजी

प्रकाशन अनुभाग

आवरण एवं सज्जा:

कुलदीप कुमार

**लेखकों से अनुरोध :** हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। टाईपिंग के लिए कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं [haryanakhethihau@gmail.com](mailto:haryanakhethihau@gmail.com)

# कपास फसल में रस चूसने वाले कीड़ों के नुकसान से बचाव : कैसे करें

✍ अरुण जाँनू, के. के. दहिया एवं आर. एस. सांगवान  
कपास अनुभाग, अनुवांशिकी व पौध प्रजनन विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कपास हरियाणा की एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। यह लगभग 6 लाख हैक्टेयर में उगाई जाती है। पिछले कुछ सालों में कपास की उत्पादकता घटी है जिसमें कीटों की अहम भूमिका रही है। कीट प्रकोप के कारण पैदावार में 60-70 प्रतिशत तक कमी आ जाती है तथा इसके साथ उपज की गुणवत्ता पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। कपास को हानि पहुँचाने वाले कीड़ों में रस चूसने वाले कीट भी शामिल हैं। रस चूसने वाले कीटों में सफेद मक्खी, हरा तेला, चुरड़ा, अल प्रमुख हैं जिनके प्रकोप के कारण 20-30 प्रतिशत पैदावार कम हो जाती है। ये कीट कोंपलों, कलियों, पत्तों से रस चूसकर पौधों की शक्ति कम कर देते हैं व पौधों की बढ़वार रुक जाती है। इन कीड़ों का संक्षिप्त विवरण व प्रबंध इस प्रकार है:-

## सफेद मक्खी (फाका)

इसके प्रौढ़ 1.0 से 1.5 मि.मी. लंबे, सफेद पंखों व पीले शरीर वाले होते हैं जबकि शिशु हल्के पीले, चपटे व अंडाकार रूप में पत्तों की निचली सतह से रस चूसते हैं तथा पौधों के थोड़ा सा हिलाने पर काफी संख्या में प्रौढ़ उड़ते हैं। पत्ते पीले व काले होकर नीचे की तरफ मुड़ने लगते हैं। पत्ते पर तेल सी चमक आ जाती है। सफेद मक्खी द्वारा छोड़े गए मीठे चिपचिपे पदार्थ पर काली फफूंद उग जाती है जिससे पौधे अपना भोजन ठीक से नहीं बना पाते हैं। देर से की गई बिजाई तथा शुष्क वर्षों में इस कीट का आक्रमण कपास फसल पर अधिक होता है।

गर्म व नम मौसम सफेद मक्खी के लिए अनुकूल है जिसके कारण इसका प्रकोप अगस्त से अक्तूबर तक अधिक रहता है। पिछले कुछ सालों से इसका प्रकोप जून से शुरू हो जाता है। सिन्थेटिक पायरेथ्राइड्स के अधिक प्रकोप से भी इस कीड़े का प्रकोप बढ़ जाता है। मादा कीट पत्तों की निचली सतह पर चावक के आकार के किंतु छोटे अंडे देती है जिनमें से 3-5 दिन में शिशु निकल आते हैं व प्यूपा में से 3-8 दिन में प्रौढ़ निकल आते हैं व एक जगह बैठकर रस चूसते रहते हैं। 9-11 दिन के बाद शिशु, प्यूपा में बदल जाते हैं व प्यूपा में से 3-8 दिन में प्रौढ़ निकल आते हैं। इस प्रकार इन कीड़ों की 8-10 पीढ़ियाँ एक वर्ष में पूरी हो जाती हैं। कपास की उपज व गुणवत्ता में हानि करने के अतिरिक्त सफेद मक्खी पत्ता बीमारी भी फैलाती है जिससे पौधों पर फलीय भाग नहीं लगते व पैदावार में भारी कमी आ जाती है।

## हरा तेला

हरे रंग के लगभग तीन मि.मी. लंबे प्रौढ़ कपास के खेतों में फुदकते दिखाई देते हैं। प्रौढ़ के अपारदर्शी पंख व तिकोना शरीर होता है। शिशु आरंभ में हरे पीले व बाद में हरे रंग के होते हैं जोकि पत्तों की निचली सतह

पर टेढ़े चलते दिखाई देते हैं। प्रौढ़ व बच्चे पत्तों से लगातार रस चूसते रहते हैं। इस कीट के प्रकोप से आरंभ में पत्ते किनारों से पीले पड़ने तथा नीचे की ओर मुड़ने लगते हैं तथा बाद में कप-नुमा हो जाते हैं। प्रभावित पत्ते पीले व लाल होकर सूख जाते हैं। पौधों की बढ़वार रुक जाती है व कलियाँ, फूल गिरने लगते हैं। जुलाई-अगस्त मास में इसका प्रकोप अधिक होता है। अगस्त अंत में वर्षा आने पर इसका प्रकोप सितम्बर में भी रहता है। मादा कीट पत्तों की नाड़ियों में लंबे आकार के अंडे देते हैं जिनमें से 4-8 दिनों में शिशु निकलते हैं। पत्तों से रस चूसकर ये शिशु 10-18 दिनों में प्रौढ़ बन जाते हैं। इस कीट का जीवनकाल-लगभग एक वर्ष में करीब 8-10 पीढ़ियाँ पूरी हो जाती हैं।

## थ्रिप (चूरड़ा)

छोटे पतले शरीर वाले हरे पीले रंग से भूरे रंग के यह कीड़े पत्तों की निचली सतह पर नाड़ियों के साथ चलते घूमते दिखाई देते हैं। प्रौढ़ प्रायः गहरे भूरे व काले रंग के होते हैं। शिशु तथा प्रौढ़ पत्तों की निचली सतह को खुरच कर रस चूसते हैं। अगर प्रकोप फसल की आरंभिक अवस्था में हो तो पत्ते ऊपर की ओर मुड़कर कप की तरह हो जाते हैं तथा पौधों की बढ़वार भी रुक जाती है। चूरड़ा ग्रसित पत्तों की निचली सतह को अगर धूप की ओर किया जाए तो वह चाँदी की तरह चमकती है। इस कीड़े का प्रभाव प्रायः मई से मध्य जुलाई तक दिखाई देता है परंतु शुष्क व रेतीले क्षेत्रों में इसका प्रभाव सितम्बर-अक्तूबर माह में दिखाई देता है। इसी समय प्रभावित पत्ते ऊपर से गहरे हरे व नीचे से हरे पीले दिखाई देते हैं व पत्ते शुष्क व कड़े हो जाते हैं। रेतीले व शुष्क क्षेत्रों, शुष्क वर्षों (कम बरसात के समय) थ्रिप का प्रकोप अधिक रहता है। प्रभावित पत्तों की बढ़वार रुक जाती है, फल कम आता है तथा फल गिरने लगता है। अगर प्रकोप के दौरान अच्छी बारिश हो जाए तो इस कीट का प्रकोप काफी कम हो जाता है।

प्रौढ़ कीड़े पत्तों के अंदर अंडे देते हैं जिनमें से 4-9 दिनों में हरे पीले शिशु निकलते हैं जो पत्तों की पिछली सतह पर नाड़ियों के साथ-साथ घूमते-फिरते हैं तथा इस समय पत्तों की निचली सतह को खुरच कर निकले रस को चूसते हैं। यह कीड़े 5-6 दिन में प्यूपा बन जाते हैं तथा 3-5 दिनों में इनमें से प्रौढ़ निकल आते हैं। साल भर में इस कीड़े की 8-10 पीढ़ियाँ पूरी हो जाती हैं।

**माईट/अष्टपदी :** इस कीड़े को माईट/जूं व अष्टपदी के नाम से जाना जाता है। यह कीड़े पत्तों की निचली सतह पर छोटा सा जाला बनाकर उसके अंदर रहकर रस चूसते हैं। प्रभावित पत्ते नीचे से हरे पीले व भूरे तथा ऊपर से लाल दिखाई देते हैं। इसका प्रकोप शुष्क व गर्म क्षेत्रों में अधिक रहता है। इस कीड़े के प्रौढ़ पत्तों की निचली सतह पर अंडे देते हैं जिनमें से 3-4 दिनों में शिशु निकलते हैं जोकि 6-10 दिनों में प्रौढ़ हालत में बदल जाते हैं। इस तरह साल में इस कीड़े की 15-17 पीढ़ियाँ पूरी हो जाती हैं। प्रौढ़ एवं शिशु मिलकर पत्तों में से रस चूसकर पौधों को कमजोर करते हैं। सितम्बर-अक्तूबर में इस कीड़े का प्रकोप अधिक होता है। भिण्डी, बैंगन, मिर्च, अन्य सब्जियाँ तथा कई जंगली पौधे इस कीड़े के भोजन हैं।

**लाल कीड़ा :** यह कीड़ा रेड कॉटन बग के नाम से जाना जाता है। इस कीड़े का रंग लाल, पंख लाल-काले तथा आकार बड़ा होता है। बच्चे/शिशु एवं प्रौढ़ मिलकर बन रहे टिण्डों तथा उनमें बन रहे बीजों का रस चूसते हैं जिससे फल व बीज कमजोर हो जाते हैं। इसका प्रकोप अगस्त से अक्तूबर माह तक बढ़ता रहता है। प्रौढ़ गीली व नरम जमीन के ऊपरी भाग में अंडे देते हैं जिनमें से 7-8 दिनों में शिशु निकलते हैं जो फलीय भागों में से लगातार रस चूसकर 40-60 दिनों में प्रौढ़ बन जाते हैं जो 20-30 दिन जीवित रह कर अपना जीवन पूरा कर लेते हैं। साल भर में इस कीड़े की 3-4 पीढ़ियां पूरी हो जाती हैं।

**धूसर कीड़ा (डस्की कॉटन बग) :** छोटे से आकार वाला यह कीड़ा काले भूरे रंग का तिकोने आकार का होता है इसके पंख हल्के भूरे व शरीर गहरा भूरा होता है परंतु शिशु गहरे भूरे प्रायः खुल रहे टिण्डों में इकट्ठे मिलते हैं। इसका प्रकोप प्रायः सितम्बर-नवम्बर माह तक रहता है। यह कीड़े न केवल बन रहे बीजों में से रस चूस कर नुकसान करते हैं बल्कि लोढ़ाई के समय मशीन में कुचले जाने के कारण कपास/रूई पर इनके शरीर से निकले रस से धब्बे/दाग हो जाते हैं जिससे कपास की गुणवत्ता बिगड़ जाती है। प्रौढ़ कीड़े पत्तों पर समूह में अंडे देते हैं जिनमें से 3-4 दिनों में शिशु 25-40 दिनों में प्रौढ़ बन कर 20-40 दिन जिंदा रहकर बन रहे बीजों का रस चूसते हैं जिससे बीज की पैदावार शक्ति कम हो जाती है। इनका प्रकोप सितम्बर-नवम्बर माह तक अधिक रहता है।

**चेपा/माहू :** चेपा या माहू के नाम के इस कीट का शरीर छोटा, गोल, नर्म व रंग हल्का पीला व जूँ के आकार का होता है। शिशु व प्रौढ़ पत्तों की निचली सतह व कोंपलों आदि से लगातार रस चूसते रहते हैं जिसके कारण पत्ते मुड़ने लगते हैं। यह कीड़ा एक प्रकार का चिपचिपा पदार्थ छोड़ता है जो कि निचले पत्तों की ऊपरी सतह पर पड़ता है। इस चिपचिपे पदार्थ पर काली फफूंद उग आती है। ग्रसित पत्ते तेल में डुबोए से लगते हैं। सितम्बर-अक्तूबर मास में तापमान कम होने की स्थिति में इस कीट का प्रकोप बढ़ जाता है जिसके कारण- रेशा कमजोर हो जाता है व बीज में तेल की मात्रा कम हो जाती है। मादा कीट शिशुओं को जन्म देती हैं जो कि 8-10 दिन में प्रौढ़ बन जाते हैं व जीवन चक्र जारी रखते हैं।

#### रस चूसने वाले कीड़ों का एकीकृत प्रबन्ध

1. अगेती व पछेली बिजाई में कीड़ों का प्रकोप अधिक रहता है। इसलिए कपास की बिजाई मध्य अप्रैल से मई माह में पूरी कर लें।
2. पौधों की संख्या सिफारिश के अनुसार रखें। पौध संख्या कम होने पर हरे तेल का प्रकोप अधिक होता है। फसल घनी होने पर सफेद मक्खी व अल का प्रकोप बढ़ जाता है।
3. आवश्यकतानुसार ही सिंचाई करें। अधिक सिंचाई के कारण कीड़ों का प्रकोप अधिक होता है।
4. नत्रजन खाद का अधिक प्रयोग न करें। खेत की मिट्टी के परीक्षण के आधार पर ही खादों का प्रयोग करें।
5. कपास की मोड़ी फसल न लें। पुराने उग रहे पौधों को जड़ से निकाल दें।

6. कपास के खेत के आसपास या मेड़ों पर उगे हुए खरपतवार नष्ट कर दें क्योंकि इन पर सफेद मक्खी व अन्य कीटों को आश्रय मिलता है।
7. कीटनाशकों की अधिक या कम मात्रा दोनों से ही कीट में कीटनाशक प्रतिरोधकता हो जाती है जिससे कीट की पुनरावृद्धि होती रहती है इसलिए सिफारिश की गई मात्रा ही प्रयोग करें।
8. सिंथेटिक पाइरेथ्राईड समूह वाले कीटनाशक दवाओं का उपयोग सफेद मक्खी व माईट की संख्या बढ़ाने में उत्प्रेरक का कार्य करते हैं। अतः इन कीटनाशकों का उपयोग सफेद मक्खी व माईट के लिए बिल्कुल न करें।
9. कीड़ेमार दवाओं का प्रयोग कीड़ों का आर्थिक कगार (कीड़ों की वह गिनती/नुकसान का वह स्तर जब रोकथाम के उपाय अपनाने आवश्यक हैं ताकि नुकसान न हो जाए) आने पर ही करना चाहिए।

कपास के प्रमुख कीड़ों का आर्थिक कगार निम्न प्रकार है :

कीट का नाम	आर्थिक कगार	निरीक्षण का पैमाना
सफेद मक्खी (फाका)	6 प्रौढ़ प्रति पत्ता या सुबह पत्ते चमकते/तेलिया /चिपचिपे दिखाई दें	सुबह या शाम अलग-अलग जगह से 30 पत्तों के निचले ऊपरले हिस्से का निरीक्षण करें।
हरा तैला	2 शिशु प्रति पत्ता या 20 पत्तियां किनारों से मुड़ने लगे या पीली पड़ने लगे	उपरोक्त
चूरड़ा/श्रिप्स	10 चूरड़ा प्रति पत्ता	उपरोक्त
चेपा/माहू	10-15 प्रतिशत ग्रसित पौधे	25 पौधों की जांच करें

10. इन कीटों की सामूहिक रासायनिक रोकथाम के लिए निम्नलिखित में से किसी एक कीटनाशक (दवा) का छिड़काव करें। आवश्यकता पड़ने पर कीटनाशक या आर्थिक कगार पर 10-15 दिन के अंतराल पर इन दवाओं का दोबारा बारी-बारी बदलकर छिड़काव किया जा सकता है।

निम्नलिखित में से किसी एक कीटनाशक (दवा) का छिड़काव करें :

कीटनाशक दवा	मात्रा/एकड़	पानी/एकड़ (ली.)
डाईमैथोएट (रोगोर) 30 ई.सी.	250-350 मि.ली.	120-150
ऑक्सीडीमेटान मिथाईल (मैटासिस्टाक्स) 25 ई.सी.	300-400 मि.ली.	120-150
ईमीडाक्लोपरिड (कोन्फीडोर) 200 एस. एल.	40 मि.ली.	120-150
थायामीथोक्सैम (एकतारा) 25 घु. दाने	40 ग्राम	120-150
कार्बेनिल (सेविन/कार्बेविन/हैक्साविन) 50 घु. पा.	600 ग्राम	150-175





# कपास की फसल में जड़गांठ सूत्रकृमि (निमेटोड) की समस्या एवं रोकथाम

बबीता कुमारी, विनोद कुमार एवं के के वर्मा

सूत्रकृमि विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कपास खरीफ की एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। विश्व में प्रतिवर्ष लगभग 150 लाख मीट्रिक टन कपास पैदा होता है। संयुक्त राज्य अमरीका, चीन, भारत, ब्राजील, सूडान आदि कपास के प्रमुख उत्पादक देश हैं। वर्तमान समय में कपास की खेती एक बहुत बड़े क्षेत्रफल में हो रही है। संयुक्त राज्य अमेरिका कपास उत्पादन का विश्व में सबसे बड़ा उत्पादक देश है। यहाँ विश्व का लगभग 22 प्रतिशत कपास पैदा किया जाता है। भारत में 8 प्रतिशत कपास का उत्पादन किया जाता है। कपास उत्पादन की दृष्टि से भारत का विश्व में तीसरा स्थान है। भारत में कपास को सफेद सोना भी कहा जाता है। कपास उत्पादन के प्रमुख राज्यों में क्रमशः महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश प्रमुख हैं। हरियाणा में कपास लगभग 6.00 लाख हैक्टेयर में उगाई जाती है व औसत पैदावर 5 -6 क्विंटल प्रति एकड़ है।

कपास में रोगों के लिए जिम्मेदार कई रोगजनकों में से, पादप परजीवी सूत्रकृमि विशिष्ट हैं। जड़गांठ निमेटोड कपास का सबसे महत्वपूर्ण निमेटोड है। यह सूत्रकृमि पौधों कि जड़ों में प्रवेश कर जाते हैं और पौधों की वृद्धि नहीं होने देते इससे पैदावर कम हो जाती है। सर्वेक्षण से पता चला है कि भारत में कपास उगाने वाले सभी क्षेत्रों में जड़ गांठ सूत्रकृमि की समस्या निरंतर बढ़ रही है।

जड़गांठ निमेटोड, मेलॉइडोगेनी जाति के सूत्रकृमि से होता है। इनको गाँठ सूत्रकृमि या गोलकृमि के नाम से भी जाना जाता है। ये आकार में बहुत छोटे होते हैं, जिन्हें नग्न आँखों से नहीं देखा जा सकता है। ये केवल सूक्ष्मदर्शी यंत्र से ही देखे जा सकते हैं।

इस सूत्रकृमि की एक विशेष प्रजाति (रेस 4) ही कपास को प्रभावित करती है। यह रोग भी रेतीले इलाकों में जहाँ कपास लगायी जाती है वहाँ देखने को मिलता है। कपास में सूत्रकृमि द्वारा उत्पन्न लक्षण प्रायः पोषक तत्वों की कमी से मिलते हैं जिनकी किसान भाई आमतौर पर पहचान नहीं कर पाते और अंधाधुंध कीटनाशकों व फफूंदनाशकों का प्रयोग करते हैं।

**जीवनचक्र :** जड़गांठ सूत्रकृमि गर्मी तथा खरीफ के मौसम में अधिक सक्रिय रहता है। एक मादा सूत्रकृमि 200-400 अंडे देती है जो जैली जैसे पदार्थ में जड़ के ऊपर चिपके रहते हैं। भ्रूणावस्था के बाद एक सूत्रनुमा, शिशु सूत्रकृमि उत्पन्न होता है जोकि चार बार क्रमिक केंचुली उतारने के बाद अंत में वयस्क नर या मादा का रूप प्राप्त करता है। दूसरी अवस्था के लार्वे जड़ों को संक्रमित करते हैं, लगभग 25-30 दिन में एक जीवन चक्र खरीफ में पूरा करते हैं। फसल की अवधि में कई पीढ़ियां पूरी हो जाती हैं।

मादा बिना नर के ही प्रजनन में सक्षम होती है। कम तापमान (सर्दियों) में इसकी गतिविधियां तथा हानि काफी कम हो जाती है।

**लक्षण :** जड़ों पर बनी गांठें ही इस सूत्रकृमि रोग का मुख्य लक्षण हैं। सूत्रकृमि ग्रसित पौधों की जड़ों पर छोटी-छोटी गांठें बन जाती हैं। कपास की जड़ का पूरा विकास नहीं हो पाने के कारण पौधा छोटा रह जाता है। पौधा जड़ों से खुराक नहीं ले पाता तथा फुटाव कम होता है, जिससे पत्तियां पीली पड़ने लग जाती हैं। पौधों में फूल वा टिंडे कम लगते हैं जिसके परिणामस्वरूप एक क्षेत्र के भीतर अलग-अलग समय पर कपास परिपक्व हो जाती है। सूत्रकृमि की उपस्थिति में अन्य रोगाणु भी जड़ों पर आक्रमण कर देते हैं इसके कारण जड़ें गल जाती हैं, पौधे सूख जाते हैं तथा पैदावार में भारी कमी आ जाती है। इस रोग से ग्रसित पौधों में उकठा व फफूंदी रोग शीघ्र लग जाता है। गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त पौधों में अक्सर पोषक तत्व की कमी के लक्षण दिखाई देते हैं जो निदान को जटिल कर सकते हैं। जिससे गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव के साथ उत्पादन भी कम हो जाता है। सूत्रकृमियों की वजह से कपास में 40-50 प्रतिशत हानि या उससे अधिक भी हो सकती है।

## रोकथाम

1. फसल चक्र कपास में निमेटोड समस्याओं को कम करने का एक अच्छा तरीका है। सूत्रकृमि ग्रस्त खेत में ऐसी फसलें जिन पर यह सूत्रकृमि नहीं पनप सकता (मक्का, बाजरा व ज्वार) उन्हें फसल चक्र में उगाएं।
2. इस सूत्रकृमि से निजात पाने के लिए खेतों को मई-जून के महीनों में 10-15 दिन के अंतराल पर गहरी जुताई करें पर सुहागा न लगाएं ताकि सूत्रकृमि के अंडे व लार्वा इत्यादि सूर्य की गर्मी से नष्ट हो जाएं।
3. खेतों को खरपतवार रहित रखें क्योंकि यह सूत्रकृमि बहुत से खरपतवारों पर भी पनपता है।
4. कपास के बीज को बायोटीका (जी. डी. 35 -47) से उपचारित करके ही बिजाई करें।



## आवश्यक सूचना

“हरियाणा खेती” मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

- सह-निदेशक (प्रकाशन)

# संरक्षित कृषि : आधुनिक कृषि में सब्जी उत्पादन का नया चेहरा

✍ परवीन कुमार, मीनू पूनिया एवं जितेंद्र कुमार भाटिया<sup>1</sup>

कृषि अर्थशास्त्र विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत एक कृषि आधारित अर्थव्यवस्था है। भारत में ग्रामीण परिवार का 58 प्रतिशत हिस्सा कृषि पर निर्भर करता है, जो कि आजीविका का प्रमुख स्रोत है। अगर हम भारतीय इतिहास देखते हैं, तो कृषि मुख्य आय स्रोत था। आज भी कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख हिस्सा है। वर्तमान समय में कृषि में कई प्रमुख बदलावों को देखा गया है। किसानों ने पारंपरिक कृषि को विविधता से आधुनिक कृषि में बदल दिया है। कृषि में विविधीकरण बहुत व्यापक रूप से प्रयोग किया गया है। अधिक लाभ प्राप्त करने के लिए आज के किसान उच्च मूल्य वाली फसलों, फलों एवं सब्जी की खेती आदि के साथ कृषि को विविधता प्रदान करते हैं। हरियाणा भारतीय कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत के उत्तर क्षेत्र में हरियाणा एक प्रमुख अनाज उत्पादक राज्य है। मुख्यतः हरियाणा में चावल-गेहूं, कपास-गेहूं, बाजरा-गेहूं मुख्य फसल चक्र हैं। एक लंबे समय से हरियाणा में इन फसल चक्रों की खेती की जाती रही है। लेकिन किसानों की शुद्ध आय इन फसल चक्रों से आशानुरूप नहीं बढ़ी। अब कृषि में किसानों की आय बढ़ने के लिए नई तकनीक अपनाने की जरूरत है। संरक्षित खेती अच्छा विकल्प हो सकता है। यह प्रधानमंत्री जी के सपने किसानों की आय को 2022 तक दोगुना करने में मददगार साबित हो सकता है।

## संरक्षित संरचना क्या है?

एक संरक्षित संरचना वह संरचना है जिसमें एक नियंत्रित पर्यावरण की स्थिति के तहत फसलों की खेती होती है। ये संरचनाएं आकार में छोटे सुरंगों से लेकर बड़े आकार के ढांचे तक होती हैं। ये संरक्षित संरचनाएं भिन्न प्रकार हैं जैसे उच्च तकनीक पॉलीहाउस, प्राकृतिक हवादार पॉलीहाउस, नेट हाउस और पॉली टनल। इस प्रकार की संरचना में उच्च-तकनीक पॉलीहाउस अन्य संरचनाओं की तुलना में महंगे हैं जबकि पॉली टनल कम महंगी है। उच्च-तकनीक पॉलीहाउस को अक्सर उच्च मूल्य वाले फल, सब्जियों और फूलों के लिए इस्तेमाल किया जाता है। संरक्षित संरचना कई महत्वपूर्ण हिस्सों से बना है। पॉलीहाउस में विभिन्न प्रकार की सामग्रियां होती हैं, जैसे कि एक प्लास्टिक की छत, प्लास्टिक की दीवारें जो कि संरचना के अंदर तापमान को गर्म करती हैं। संरक्षित संरचनाओं में टपका और फुहारा विधि की सहायता से सिंचाई की जाती है। पॉलीहाउस की स्थायी संरचना स्टेनलेस स्टील से बनती है।

## संरक्षित कृषि

फसलों के लिए उपयुक्त जलवायु परिस्थितियां आवश्यक हैं लेकिन आजकल, जलवायु में बदलाव आया है। अत्यधिक गर्मी और ठंडे तरंगों जैसी कठोर जलवायु परिस्थितियां फसलों के उत्पादन और उत्पादकता को कम करती हैं। उत्तर भारत में गर्मियों और सर्दियों के मौसम के दौरान, खुले

मैदान की स्थितियों में सब्जियां, फल, फूल और कुछ उच्च मूल्य फसलों को विकसित करना बेहद मुश्किल है क्योंकि ये जलवायु की स्थिति के प्रति बहुत संवेदनशील हैं हालांकि विभिन्न प्रकार के संरक्षित ढांचे को विकसित किया गया है ताकि पर्यावरण के अनुकूल वातावरण प्रदान करके और अत्यधिक गर्मी और ठंड से संरक्षण देकर लगातार कुछ उच्च मूल्य वाले फसलों को विकसित किया जा सके।

## संरक्षित कृषि की ओर सरकार की पहल

संरक्षित ढांचे के निर्माण के लिए हरियाणा राज्य बागवानी विकास संस्था, 5 एकड़ तक की जमीन के मामले में, लागत के 65 प्रतिशत तक की सहायता प्रदान करती है। यदि किसान की भूमि 5 एकड़ से अधिक है, तो वित्तीय सहायता 50 प्रतिशत होती है। पॉलीहाउस को लागत के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। नेट हाउस बनाने की लागत 300-600 वर्ग मीटर है। प्राकृतिक हवादार पॉलीहाउस की लागत 800-1100 वर्ग मीटर है और पूरी तरह से स्वचालित रूप से उच्च तकनीक पॉलीहाउस बनाने की लागत 1465-4000 वर्ग मीटर है। लाभार्थी स्थापना के बाद कम से कम 8 साल की अवधि के लिए संरक्षित संरचना का उपयोग करने के लिए बाध्य होता है, असफल रहने पर सहायता को पुनः प्राप्त किया जाता है। हर संरक्षित संरचना का बीमा अनिवार्य है। बीमा कंपनी के साथ बंधे हुए किसानों को बीमा कवर नोट के अधीन सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाएगी। हरियाणा राज्य बागवानी विकास संस्था से अंतिम किस्त बीमा पॉलिसी कवर नोट जमा करने के बाद जारी की जाती है।

## संरक्षित संरचना में उगाई जाने वाली फसलें

### सब्जियां

- **खीरा :** खीरा आम तौर पर पूरे भारत में उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण गर्मियों की सब्जी है। खीरा ग्रीष्म ऋतु की फसल है और इसके लिए 18 डिग्री से 24 डिग्री सेल्सियस तापमान उचित होता है। यह हल्की ठंड का सामना भी नहीं करता है। रेतिली मिट्टी से चिकनी मिट्टी तक की सभी प्रकार की मिट्टी में खीरे की उपज ली जा सकती है। मृदा की पीएच 5.5 से 6.7 के बीच अनुकूल है। संरक्षित संरचना में खीरे के पौधे से पौधे की दूरी 45 सेंटीमीटर और पंक्ति से पंक्ति की दूरी 75 सेंटीमीटर होनी चाहिए। खीरे के बीज को सीधे बोया जा सकता है। अच्छे तापमान और रोशनी की स्थिति के आधार पर खीरे की 5 से 6 सप्ताह की उम्र के अंकुरण का उपयोग प्रत्यारोपण के लिए किया जा सकता है। खीरे की कई किस्म हैं जो पॉलीहाउस में ली जाती हैं। जैसे जैपनीज़ लॉग ग्रीन, खीरा पूना और बालम खीरा। खीरे की खेती में लगभग 16 से 20 टन गोबर की खाद, नत्रजन अमोनियम सल्फेट या यूरिया के रूप में, फास्फोरस सुपर फॉस्फेट के रूप में और पोटाश  $K_2SO_4$  के रूप में उर्वरता की स्थिति के आधार पर दी जानी चाहिए। रोपण के 50 से 65 दिनों के बाद फसल की कटाई शुरू हो जाती है। संरक्षित संरचना में खीरे का प्रति एकड़ में 350-450 क्विंटल का उत्पादन है। पॉलीहाउस में एक कृषि वर्ष में खीरे का खेती तीन बार होती है। अगस्त में खीरे की पहली फसल लगाई जाती है और नवंबर तक काट ली जाती है। दूसरी फसल दिसंबर में लगाई जाती है और मार्च तक काट ली जाती है। खीरे की तीसरी फसल अप्रैल में लगाई जाती है और जून तक ली जाती है। विभिन्न शोध के अनुसार किसान पूरे वर्ष खीरे की खेती में अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

<sup>1</sup>मानव संसाधन प्रबंधन निदेशालय,

- **टमाटर** : टमाटर 1-3 मीटर की ऊंचाई का कमजोर तने का विशाल पौधा है। टमाटर अपने विशेष पौष्टिक मूल्य की वजह से सबसे महत्वपूर्ण खाद्य पदार्थों में से एक है। हरियाणा में, यमुना नगर, अंबाला, करनाल, सोनीपत, जींद, गुड़गांव और मेवात जैसे जिलों में बड़े पैमाने पर टमाटर की खेती की जाती है। हरियाणा में सब्जी की खेती के तहत कुल क्षेत्र का लगभग 7.6 प्रतिशत टमाटर शामिल है। यह एक गर्म सीजन की फसल है और 18 डिग्री से 30 डिग्री सेल्सियस तक मध्यम तापमान इसकी वृद्धि और फूलों के लिए सबसे अच्छा है। टमाटर रबी सीजन की फसल है और पॉलीहाउस में अगस्त-सितंबर में लगाया जाता है और मार्च तक काटा जाता है। यह फसल कम तापमान बर्दाश्त नहीं कर सकती और ठंड के प्रति अतिसंवेदनशील है। टमाटर की फसल को रेतीली मिट्टी से चिकनी मिट्टी तक लेकर विभिन्न प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है। मिट्टी को पोषक तत्वों और कार्बनिक पदार्थों में समृद्ध होना चाहिए। टमाटर की खेती में पौधे की पौधे से दूरी 40 सेंटीमीटर और पंक्ति की पंक्ति से दूरी 50 सेंटीमीटर होनी चाहिए। रोपाई के दौरान तापमान और प्रकाश की स्थिति के आधार पर 5-6 सप्ताह के पौधों का उपयोग प्रत्यारोपण के लिए किया जाता है। हरियाणा में टमाटर की कई किस्में हैं, जैसे हिमसोना और हिमशिखर। बेहतर फसल के लिए मिट्टी की तैयारी के दौरान 16 से 20 टन गोबर की खाद मिलायी जानी चाहिए। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटैश उर्वरक मिट्टी की उर्वरता की स्थिति के आधार पर दी जानी चाहिए। संरक्षित संरचना में टमाटर का प्रति एकड़ में 300-350 क्विंटल का उत्पादन है। अगर किसानों को अपने उत्पाद की अच्छी कीमत मिल जाए तो उन्हें फायदा होगा।
- **शिमला मिर्च** : शिमला मिर्च को उष्णकटिबंधीय अमेरिका का मूल माना जाता है। भारत में इसका परिचय पुर्तगाली के माध्यम से माना जाता है। शिमला मिर्च रबी सीजन की फसल है और पॉलीहाउस में अगस्त-सितंबर में लगायी जाती है और मार्च तक काटी जाती है। संरक्षित संरचना के तहत उगाई गई शिमला मिर्च को दिन और रात में अलग-अलग तापमान की आवश्यकता होती है। दिन में 21 डिग्री से 28 डिग्री सेल्सियस तक और रात में 18 से 20 डिग्री सेल्सियस तापमान इसकी वृद्धि के लिए सबसे अच्छा है। हालांकि शिमला मिर्च लगभग सभी प्रकार की मिट्टी में उगाई जा सकती है, लेकिन सूखी दोमट मिट्टी इसकी खेती के लिए आदर्श मानी जाती है। शिमला मिर्च की खेती में पौधे की पौधे से दूरी 40 सेंटीमीटर और पंक्ति की पंक्ति से दूरी 50 सेंटीमीटर होनी चाहिए। रोपण सामग्री रोगी और कीटों के प्रति प्रतिरोधी और स्वस्थ रहनी चाहिए। अंकुर की उम्र 35 से 40 दिन पुरानी होनी चाहिए। हरियाणा में शिमला मिर्च की कई किस्में हैं जैसे कैलिफोर्निया वंडर, इंद्रा, रॉयल वंडर। बेहतर फसल के लिए मिट्टी की तैयारी के दौरान 16 से 20 टन गोबर की खाद मिलायी जानी चाहिए। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटैश उर्वरक मिट्टी की उर्वरता की स्थिति के आधार पर दी जानी चाहिए। संरक्षित संरचना में शिमला मिर्च का प्रति एकड़ में 300-350 क्विंटल का उत्पादन है।



## खरबूजा में समेकित कीट प्रबंधन

✍ पूर्ति, रिकू एवं आर. एस. जागलान

कीट विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

खरबूजा एक महत्वपूर्ण कद्दूवर्गीय फल है, जिसकी फसल ग्रीष्म ऋतु में देश के उष्ण व उपोष्ण भागों में सफलतापूर्वक की जाती है। खरबूजे की खेती करने से किसानों को बहुत ही लाभ होता है अगर वो वैज्ञानिक तरीके से खेती करें तो प्रति एकड़ 125-150 क्विंटल तक की उपज मिल सकती है। उत्पादकता कम होने का कारण खरबूजा में लगने वाले विभिन्न कीट हैं। गर्मियों में खरबूजा के फलों का सेवन करने से गर्मी से राहत मिलती है। इसके स्वास्थ्यवर्धक फलों में पानी के अलावा खनिज पदार्थ और विटामिन भी पाए जाते हैं। इसमें पाया जाने वाला रेशा पाचन तंत्र के लिए काफी लाभदायक है। गर्मियों में लू से बचने के लिए इसके फल लाभदायक हैं।

खरबूजा की फसल को कीटों से बचाने के लिए ज़रूरी है कि इसको नुकसान पहुँचाने वाले कीटों की पहचान तथा उनका सही समय पर नियंत्रण किया जाये। खरबूजा में लगने वाले मुख्य कीटों का विवरण निम्नलिखित है :

**फल मक्खी** : फल मक्खी के वयस्क के पंख भूरे रंग के होते हैं। इस कीट का शिशु/मैगट ही क्षति पहुँचाता है। मादा फल मक्खी कोमल फलों के गूदे में अंडे देती है। अंडों से मैगट्स निकलकर फल के गूदे को खाते हैं जिससे फल काने व खराब हो जाते हैं। ग्रसित फल के छेद से लेसदार हल्के भूरे रंग का द्रव निकलता है।

**कद्दू का लाल कीड़ा (रैफिडोपलपा फोविकोलिस)**: इस कीड़े का वयस्क एवं शिशु/ग्रब दोनों नुकसान पहुँचाते हैं। वयस्क पत्तियों एवं फूलों को नुकसान पहुँचाता है और ग्रब पौधे की जड़ों को खाता है, जो फल जमीन पर रखे होते हैं उनमें इस कीट के ग्रब फल के जमीन से लगे भाग में छिद्र करके काफी संख्या में प्रवेश कर जाते हैं तथा फल को अंदर से खोखला कर देते हैं। इसके प्रकोप से छोटे पौधे पूर्णतया मर जाते हैं। मार्च के दूसरे पखवाड़े से अप्रैल के पहले पखवाड़े तक तथा मध्य जून से अगस्त तक इसका अधिक प्रकोप रहता है।

**हाडा बीटल (हेनोसेपीलेकना पंकटाटा)**: हाडा बीटल के वयस्क एवं शिशु/ग्रब दोनों पौधे को नुकसान पहुँचाते हैं। यह एक विशेष तरीके से पत्तियों एवं फलों को कुरेदता है और धीरे-धीरे पत्तियों एवं फलों को सुखा देता है।

**तेला, चेपा तथा माईट** : ये कीट पत्तों से रस चूसते हैं जिसके कारण फसल कमजोर हो जाती है व पैदावार कम हो जाती है।

समेकित कीट प्रबंधन के अंतर्गत निम्नलिखित घटक आते हैं जिनको अपनाकर खरबूजा में कीटों से होने वाले नुकसान को आर्थिक स्तर से नीचे रखा जा सकता है।



**फल को पेपर या प्लास्टिक से ढकना :** खरबूजा के फलों को दो परत वाले पेपर या नायलोन की थैलियों से ढकना चाहिए ताकि फल मक्खी अपने अंडे फलों पर नहीं दे पाए। इस प्रबंधन से 40-60 प्रतिशत तक फलों को नुकसान होने से बचाया जा सकता है।

**खेत की जुताई करना :** फल मक्खी, लाल कटू बीटल तथा हाडा बीटल आदि के प्रजनन चक्र और संख्या वृद्धि को रोकने के लिए ग्रीष्मकाल में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए। पौधों और फलों के क्षतिग्रस्त भागों को हटाकर खेत की सफाई करनी चाहिए।

**क्यू-आकर्षण ट्रैप का उपयोग :** क्यू-आकर्षण ट्रैप फल मक्खी के प्रबंधन में प्रभावशाली है। क्यू-आकर्षण ट्रैप नर मक्खी को आकर्षित करता है। इसके अंदर कीटनाशक रखा जाता है, जिससे नर मर जाता है और कीट की संख्या नियंत्रण में रहती है। खेत में 7-8 क्यू-आकर्षण ट्रैप का उपयोग करना चाहिए। खेत में रात के समय प्रकाश के ट्रैप लगाएं तथा उनके नीचे बर्तन में चिपकने वाला पदार्थ जैसे गुड़ का घोल अथवा सीरा भरकर रखें व इस घोल को 2-3 दिन बाद बदलते रहना चाहिए।

**जैविक नियंत्रण :** कुछ कीटों का नियंत्रण जैविक विधि से भी किया जा सकता है तथा यह समेकित कीट प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण घटक है। इस विधि में कुछ जीवित जीवों का प्रयोग कर फसलों को कीटों के नुकसान से बचाया जा सकता है। जैविक नियंत्रण कारकों में परजीवी (पैरासिटॉइड्स) तथा परभक्षी (प्रिडेटर्स) आते हैं। परजीवी (पैरासिटॉइड्स) ऐसे जीव हैं, जो अपने अंडे उनके पोषक कीटों के शरीर में या उनके ऊपर देते हैं तथा जीवन चक्र को पोषक कीट के शरीर में ही पूरा करते हैं। परिणामस्वरूप, पोषक कीट की मृत्यु हो जाती है। ट्राइकोडर्मा, अपेंटेलीस, ब्रेकोन, चिलोनस, ब्रैकिमेरिया आदि प्रमुख परजीवी (पैरासिटॉइड्स) हैं। परभक्षी (प्रिडेटर्स) स्वतंत्र रूप से रहने वाले जीव हैं, जो भोजन के लिए दूसरे जीवों पर निर्भर रहते हैं। इस श्रेणी में मकड़ियां, मक्खियां, डेमसेल फ्लाई, लेडी बर्ड बीटल, क्रायसोपा तथा पक्षी आदि जीव आते हैं जो कीट नियंत्रण में सहायक होते हैं।

**रासायनिक नियंत्रण :** जब कीटों का प्रकोप बढ़ जाता है तो रासायनिक कीटनाशकों का छिड़काव करना चाहिए। कीटनाशकों का प्रयोग कर आवश्यकतानुसार, सावधानीपूर्वक और आर्थिक नुकसान के स्तर के मुताबिक करना चाहिए। इस प्रकार न सिर्फ खर्च में कमी आती है, बल्कि अन्य समस्याएं भी कम हो जाती हैं।

**कटू का लाल कीड़ा :** 5 कि.ग्रा. कार्बेरिल 5 डी. 5 कि.ग्रा. राख का प्रति एकड़ धुड़ा करें या 25 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 30 मि.ली. फेनवलेरेट 20 ई.सी. या 100 ग्रा. कार्बेरिल 50 घु.पा. को 100 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ में छिड़काव करें। इस कीट के ग्रब्स से बचाव के लिए 1.6 लीटर क्लोरपाइरिफॉस 20 ई.सी. को बिजाई के एक महीने बाद सिंचाई के साथ लगाएं।

**तेला, चेपा तथा माईट :** 250 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर 10 दिन के अंतराल पर छिड़कें।

(शेष पृष्ठ 09 पर)

## उर्वरकों के सही उपयोग में मृदा परीक्षण का महत्व

सुनीता श्योराण, धर्म प्रकाश एवं सोनिया रानी

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मृदा जीवित एवम् सूक्ष्म जीवों को आश्रय प्रदान करने के साथ-साथ फसल उत्पादन के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करती है। परन्तु हम इसकी भूख के अनुसार मृदा में पोषक तत्वों की मात्रा की पूर्ति नहीं करते हैं जिसके परिणाम स्वरूप मृदा का दोहन हो रहा है। इसका एक मुख्य कारण मृदा परीक्षण का न करवाना या परीक्षण हेतु सही ढंग से नमूने न लेना है। मृदा परीक्षण के आधार पर खाद तथा उर्वरकों का प्रयोग फसलों में संतुलित पोषक तत्वों के प्रबंधन की मुख्य कड़ी है। अलग-अलग गठन वाली मृदा में तत्वों की मांग भी अलग-अलग होती है। परन्तु ज्यादातर किसानों को उनकी मृदा गठन के अनुसार खाद व उर्वरकों की दी जाने वाली मात्रा की जानकारी नहीं है। फसलों को उनकी मांग तथा मृदा से मिलने वाली पोषक तत्वों की मात्रा का ध्यान रखते हुए उर्वरकों व खादों का इस्तेमाल करना चाहिए। मृदा से मिलने वाले पोषक तत्वों की मात्रा का पता केवल मृदा परीक्षण से ही किया जा सकता है। मृदा परीक्षण के आधार पर उचित फसल का चुनाव, मिट्टी व पानी की समस्याओं तथा खाद व उर्वरकों की इस्तेमाल की जाने वाली मात्रा, ढंग व समय के बारे में सही सुझाव दिए जा सकते हैं। परन्तु यह अति आवश्यक है कि मिट्टी के नमूने उचित यन्त्रों जैसे ओगर, खुरपा या कस्सी के साथ वैज्ञानिक ढंग से लें।

### खादों एवम् उर्वरकों की सिफारिश के लिए नमूना लेने का ढंग :

जहां भी खेत की मिट्टी में अन्तर हो, खेतों को अलग-अलग लें। अन्तर मिट्टी की किस्म, ढलान, फसलों की वृद्धि व उपज या किसी अन्य कारण से भी हो सकता है। क्षेत्रफल की दृष्टि से अधिक से अधिक पांच एकड़ से एक नमूना लेना चाहिए। मिट्टी में अन्तर होने पर एक एकड़ या इससे भी कम से भी एक नमूना लेना पड़ सकता है। मिट्टी की सतह पर यदि घास-फूस हैं तो उसे हटा दें। कस्सी या खुरपा से नमूना लेने के लिए एक V जैसा कट लगाएं और उसकी एक तरफ से 15 सें.मी. गहराई तक 2 सें.मी. चौड़ी एकसार टिक्की निकाल लें। एक खेत में 8 से 10 अलग-अलग स्थानों से इसी प्रकार से मिट्टी लेकर तसले में मिला लें।

अगर खेत में फसल हो तो नमूने कतारों के बीच से लेने चाहिए। मिट्टी के नमूने को छाया में सुखाकर अच्छी तरह मिला लें और उसके चार भाग कर लें। दो भाग फेंक दें और दो को फिर मिला लें। उसमें से आधा किलोग्राम मिट्टी कपड़े या पॉलिथीन की साफ थैली में भर लें।

### ध्यान देने योग्य बातें :

1. कभी भी मृदा-परीक्षण के लिए नमूनों को असामान्य स्थानों जैसे पेड़ के नीचे, पानी की नाली व बरहे के नजदीक, गोबर के ढेर के पास तथा मेढ़ों के पास आदि से कभी नहीं लेने चाहिए।
2. नमूना सिंचाई, बरसात, खाद डालने तथा घास-फूस जलाने के तुरन्त बाद न लें।
3. नमूना भरते समय ऊपर का घास-फूस तथा कंकर पत्थर आदि हटा दें।
4. थैलियां कभी भी खाद या उर्वरक के संपर्क में नहीं आनी चाहिए। थैलियां ऐसे कपड़े की लें कि मिट्टी छनकर बाहर न आ पाए।
5. मृदा के नमूने को रखने के बाद कपड़े के थैले पर पूरी जानकारी देनी

चाहिए। जैसे किसान का नाम, गांव का नाम, खेत का नम्बर तथा खेत की पहचान, मृदा नमूने लेने की गहराई, पानी लगाने का हिसाब तथा पहले डाले गये खादों व उर्वरकों का विवरण, अगर कोई समस्या हो तो उसका विवरण व नमूनों का उद्देश्य भी लिखना चाहिए।

**मृदा परीक्षण रिपोर्ट तथा उसके आधार पर उर्वरकों का इस्तेमाल की जाने वाली मात्रा:** मृदा परीक्षण प्रयोगशाला में एक वैज्ञानिक जानकारी मिलती है। जिसको पढ़ना, समझना तथा उसके अनुसार खेतों में उर्वरकों का उपयोग अति आवश्यक है। अगर किसान इस जानकारी को नहीं समझते, तो मृदा परीक्षण से मिलने वाले लाभ से वंचित रह जायेंगे जिसके कारण उर्वरकों का उचित मात्रा में उपयोग होना असंभव होगा। मृदा परीक्षण के बाद, वैज्ञानिक रिपोर्ट से हमें मृदा की सेहत के बारे में पता लगता है जैसे

- 1. pH (पी.एच.):** यदि मृदा का पी.एच. मान 6.5 से कम है तो मृदा अम्लीय होती है तो मृदा में चूना डालने की आवश्यकता होती है और पी.एच. 6.6 से 8.7 तक है तो वह मृदा सामान्य होती है। पी.एच. 8.7 से अधिक होने पर मृदा क्षारीय होती है। क्षारीय मृदा में हरी खाद जैसे ढ़ेंचा का प्रयोग करना लाभकारी होता है।  
मृदा पी.एच. भूमि के बनने की क्रिया, उसके भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों को प्रभावित करता है। फसलों के लिए पोषक तत्वों की उपलब्धता भी इस पर निर्भर करती है।
- 2. EC (ई.सी.):** यह मृदा में कुल घुलनशील लवणों की मात्रा को दर्शाता है। जिस मृदा की ई.सी. 0.8 डेसी साइमन/मी. से कम होती है तो वह मृदा सभी फसलें उगाने के लिए उत्तम मानी जाती है। परन्तु 0.8 से अधिक और 1.6 से कम ई.सी. होने पर. दाल वाली फसल उगाने के लिए ठीक नहीं मानी जाती। जो ई.सी. 1.6 से अधिक तथा 2.5 से कम हैं तो सहनशील फसलें जैसे-जौ, ढ़ेंचा, धान, तम्बाकू, बरसीम, गन्ना तथा कपास आदि उगाएं। यदि ई.सी. 2.5 डेसी साइमन/मी. से अधिक है तो वह मृदा फसलों के लिए हानिकारक होती है। अधिक ई.सी. होने पर हरी खाद व फसल अवशेषों को मिट्टी में मिलाने की ज़रूरत होती है।
- 3. ऑर्गेनिक कार्बन (ओ.सी.):** मृदा परीक्षण प्रयोगशाला की सिफारिशों के अनुसार यदि मृदा में ओ.सी. 0.40 प्रतिशत से कम, 0.40 से 0.75 प्रतिशत तथा 0.75 प्रतिशत से अधिक है तो ये मृदा क्रमशः निम्न, मध्यम तथा उच्च नाइट्रोजन वाली होती है। मृदा ओ.सी. के आधार पर नाइट्रोजन उर्वरकों का इस्तेमाल की जाने वाली मात्रा का विवरण नीचे तालिका नं.1 में दिया गया है।
- 4. नाइट्रोजन के बाद दूसरा मुख्य पोषक तत्व फास्फोरस है।** यदि मृदा में उपलब्ध फास्फोरस (पी.) 10 किग्रा/हैक्टेयर से कम है तो वह निम्न श्रेणी की मृदा होती है। जिस मृदा में फास्फोरस 10 से 20 किग्रा/हैक्टेयर के बीच है, तो वह मध्यम श्रेणी व 20 किग्रा/हैक्टेयर से अधिक फास्फोरस होने पर वह उच्च श्रेणी की मृदा होती है। जो मृदा निम्न श्रेणी में आती है उनमें मध्यम श्रेणी की मृदा की तुलना में 50 प्रतिशत अधिक फास्फोरस उर्वरक डालने की आवश्यकता होती है तथा उच्च श्रेणी की मृदा में मध्यम श्रेणी की मृदा की तुलना में 50 प्रतिशत कम फास्फोरस डालने की आवश्यकता होती है।
- 5. मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं में परीक्षण किया जाने वाला तीसरा मुख्य तत्व पोटेसियम है।** सामान्यतया हरियाणा की भूमि में पोटाश की कमी नहीं पाई जाती। (शेष पृष्ठ 08 पर)

## सब्जियों में जैविक तरीकों से कीटों पर नियंत्रण

विकास कुमार, टी.पी. मलिक एवं देश राज चौधरी

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में हरित क्रांति का मुख्य उद्देश्य देश को खाद्य मामले में आत्मनिर्भर बनाना था लेकिन इस बात की आशंका किसी को नहीं थी कि सब्जियों में कीटनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग न केवल खेतों को बंजर बना देगा, बल्कि पर्यावरण को भी नुकसान पहुंचाएगा। क्योंकि देश के ज्यादातर किसान परंपरागत सब्जियों की खेती से दूर होते जा रहे हैं। किसानों के अधिक लालच के कारण कीटनाशकों के अत्यधिक व अनावश्यक मात्रा में प्रयोग से कृषि भूमि को बंजर बना दिया है। सरकार ने भी किसानों के हित में परंपरागत कृषि की ओर लौटने के लिए परंपरागत कृषि विकास योजना का शुभारंभ कर दिया है।

**पक्षियों के द्वारा कीट नियंत्रण :** मित्र पक्षियों को आकर्षित करने के लिए सब्जियों के खेतों की मेड़ों पर लकड़ी की खप्पचियां लगाएं। इस पर बैठकर पक्षी आकर्षित होकर सब्जी की फसलों में लगे कीड़ों एवं लटों को चुन-चुन कर खा जाते हैं। मित्र पक्षी जैसे मैना, किंग क्रो, बटेर, बगुले आदि।

**परभक्षी एवं परजीवी कीटों से नियंत्रण :** किसान लाभदायक मित्र कीट एवं जीवों का संरक्षण कर व इनको प्रोत्साहन देकर तथा इनके लार्वा का खेत में प्रयोग करके हानिकारक कीटों का बिना किसी कीटनाशकों के नियंत्रण किया जा सकता है। इनमें मेन्टिस, लेडी बर्ड बीटल, केटसिया, क्राइसोपरला, ट्राइकोडर्मा कीट, मकड़ी, झींगुर, चींटियां, ततैया, रोवर-फ्लाई, रिडूविड, मड-वेस्प, ड्रेगन फ्लाई एवं सिरकिड-फ्लाई आदि शामिल हैं।

**नीम दवा :** नीम के सभी भागों में कीटनाशक तत्व पाया जाता है। पांच किलो नीम की निंबोलियों को अच्छी प्रकार से धूप में सुखाकर बारीक पीस लें और 5 लीटर पानी लेकर उस पाऊंडर को 12 घंटे के लिए भिगो दें। इस के बाद इस घोल को मोटे कपड़े से छान लें। इस घोल में 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ के हिसाब से खेतों में छिड़काव करें। इसका प्रयोग टमाटर, भिण्डी, मिर्च व बेल वाली सब्जियों में नुकसान पहुंचाने वाले कीट जैसे चेपा, सफेद मक्खी, फुदका, कटुआ सूंडी तथा फल छेदक सूंडियों पर प्रभावी होता है।

**अरण्डी व नीम से दीमक पर नियंत्रण :** सब्जी की फसलों में बिजाई के एक महीने पहले अरंडी की खली 500 किलो ग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से उपयोग करें या फिर 4 लीटर नीम के तेल को सिंचाई के समय पानी के साथ मिलाकर देने से दीमक को नष्ट किया जा सकता है।

**ट्राइकोग्रामा कीट :** यह बहुत ही छोटे आकार का अंड परजीवी कीट है जो कि पतंगों और तितलियों के अंडों में अपने अंडे देता है। ट्राइकोग्रामा परजीवी प्रकृति में पाया जाता है।

**फेरामोन ट्रैप :** सब्जियों के एक खेत में 8 से 10 फेरामोन ट्रैप एक से डेढ़ फीट की ऊंचाई पर लगाएं। यह ट्रैप नर व मादा कीटों अथवा दोनों को अपनी तरफ आकर्षित करते हैं।

**लाइट ट्रैप :** कीटों को प्रकाश की ओर आकर्षित करने के लिए खेत की मेड़ों पर लाइट ट्रैप या ब्लब या पैट्रोमेक्स लैंप को लगाकर जलाएं। इसके

बाद लाइट ट्रेप के नीचे कैरोसिन मिले 5 प्रतिशत पानी की परात रखें, ताकि रोशनी पर आकर्षित कीट मिट्टी के तेल व पानी के घोल में गिरकर नष्ट हो जाएं। इसे बारिश के मौसम से लेकर सितंबर के अंत तक जारी रखें।

**रक्षक फसल का प्रयोग :** कीड़े अंडे देने के लिए व खाने के लिए कुछ पौधों/फसल की तरफ आकर्षित होते हैं। इन्हीं फसल व पौधों को ट्रेप फसल कहते हैं। टमाटर की फसल के चारों तरफ जहारा के पौधे लगाने से हरी सूंडी पहले हजारे के पौधे पर आकर्षित होती है। उसके बाद हजारे के पौधों पर कीटनाशक का छिड़काव करके हरी सूंडी के प्रकोप को खत्म किया जा सकता है।

**एन.पी.वी. का छिड़काव :** हरी सूंडी (लट) की रोकथाम के लिए एक हैक्टेयर में 250 एल.ई.एन.वी.पी. का घोल छिड़कने से सूंडियां 3 से 4 दिनों में पौधे पर उल्टी लटक कर मर जाती हैं। इस तरह किसान स्वयं ऐसी लटों को इकट्ठा कर सकते हैं।

**बीटी का छिड़काव :** तरल बीटी (बैसीलस थूरिन्जेन्सिस) एक लीटर को 500 से 600 लीटर पानी में अच्छी तरह घोलकर प्रति हैक्टेयर की दर से सब्जियों की फसलों पर छिड़काव करने से फली छेदक सूंडियां 1-3 दिन में मरने लग जाती हैं।

**ट्राइकोडर्मा :** ट्राइकोडर्मा कल्चर 6 से 10 ग्राम प्रति किलो की दर से बीज को उपचारित कर बोने से कवक जनित रोगों से सब्जी की फसलों को बचाया जा सकता है।



(पृष्ठ 07 का शेष)

परन्तु रेतीली भूमि में इसकी कमी आनी प्रारम्भ हो गयी है। यदि मृदा में उपलब्ध पोटेसियम की मात्रा 125 किग्रा/हैक्टेयर से कम है तो निम्न, 125 से 300 किग्रा/हैक्टेयर के बीच तो मध्यम तथा 300 किग्रा/हैक्टेयर से अधिक है तो उच्च श्रेणी की मृदा होती है। इसकी कमी को म्यूरेट ऑफ पोटाश नामक उर्वरक को मृदा में डालने से पूरा किया जाता है।

#### 1. तालिका : मृदा में ओ.सी. की मात्रा के आधार पर नाइट्रोजन डालने की सिफारिश

ऑर्गेनिक कार्बन :	नाइट्रोजन
0.40 से कम	20 प्रतिशत सिफारिश किये गये से अधिक
0.40 से 0.75	सिफारिश की गई मात्रा
0.75 से अधिक	20 प्रतिशत सिफारिश की गई मात्रा से कम

#### कुछ जरूरी बातें

1. खेत में गोबर की खाद 15 टन प्रति हैक्टेयर प्रयोग करने पर फास्फोरस व पोटाश की मात्रा आधी करें।
2. हरी खाद के रूप में ढेंचा का बीज 30 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर के हिसाब से मई के पहले सप्ताह में बो दें। ऐसा करने पर धान की फसल में 25 से 30 प्रतिशत नाइट्रोजन कम कर दें।
3. फसल चक्र में दलहनी फसलों को जरूर शामिल करें तथा फसलों के अनुसार जीवाणु खाद के टीके का प्रयोग करें।
4. धान-गेहूँ फसल चक्र में 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर के हिसाब से जिंक सल्फेट (21 प्रतिशत) धान की रोपाई करते समय डालें।



## चूहे और उनकी रोकथाम

जयलाल यादव एवं नरेन्द्र सिंह

कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

चूहे कई प्रकार से हानि पहुंचाते हैं। चूहे घरों, खेतों व भण्डारण जैसे स्थानों पर प्रायः देखने में मिलते हैं और यह बिलों में रहते हैं। यह देश के सभी भागों में पाये जाते हैं। ये खेतों में खड़ी फसलों और घरों में रखे अनाज व अन्य पदार्थों को बहुत अधिक मात्रा में हानि पहुंचाते हैं। इसके अतिरिक्त खाद्य सामग्री को मल-मूत्र और बालों से दूषित भी कर देते हैं। घरों में रखे कीमती वस्त्रों, कागजों और लकड़ी के सामान आदि को कुतर कर भी नष्ट कर देते हैं। कई बार विद्युत की तारों को काट कर, नहरों, सिंचाई की नालियों व बड़े-बड़े बांधों में सुराख (बिल) बना कर भारी मात्रा में नुकसान कर देते हैं। प्लेग जैसा भयंकर रोग भी चूहों द्वारा ही फैलता है। एक अनुमान के अनुसार भारत में चूहों द्वारा 1000 करोड़ रुपये से अधिक वार्षिक हानि तो केवल कृषि उत्पादन की ही हो जाती है।

खेतों में चूहे अधिकतर बिल बनाकर ही रहते हैं और रात के समय खाना खोजने के लिए बाहर निकलते हैं। यूं तो जहाँ भी खाने का सामान मिले वहीं ये जीव घर कर लेते हैं। खेत खलिहान में हानि पहुंचाने के अतिरिक्त चूहे अपने बिलों या छिपने के स्थान में अनाज इकट्ठा भी कर लेते हैं।

चूहे दो प्रकार के होते हैं- एक तो अपने बिलों का मुँह खुला रखते हैं और दूसरे प्रकार के चूहे बिल के मुँह को मिट्टी से ढक देते हैं जिसके कारण इन्हें अन्धा चूहा भी कहा जाता है। बिलों के इलावा चूहे ऐसे स्थान में रहना पसन्द करते हैं जहां अन्धेरा रहता हो जैसे छतों में, घरों में रखे सामान के नीचे, आदि जहाँ इनको छिपने में आसानी हो।

चूहों में प्रजनन क्रिया बहुत तेज़ होती है। चुहिया साल में करीब 5-6 बार बच्चे देती है किन्तु इसका मुख्य प्रजनन काल मार्च से मई तथा सितम्बर से अक्टूबर है। एक मादा एक बारी में 6-10 बच्चों को जन्म देती है जो तीन मास में स्वयं बच्चे पैदा करने योग्य हो जाते हैं। इस प्रकार एक जोड़े की सन्तान एक वर्ष में एक हजार से भी अधिक हो जाती है।

#### चूहे के नियन्त्रण की विधि

चूहों में सूंघने, सुनने, खाने और स्वाद चखने की विशेष शक्ति होती है जिसके कारण इनका नियन्त्रण कुछ कठिन हो जाता है। इस लिए खेतों में कुशल और सफल नियन्त्रण इस बात पर निर्भर करता है कि अलग-अलग स्थितियों में और भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में उचित समय पर उचित विधि द्वारा इनका नियन्त्रण किया जाये।

#### 1. यांत्रिक नियन्त्रण :

- क) फसल की कटाई के बाद जब खेत खाली हों तो खेतों में पानी लगाने से या सिंचाई करने से चूहे बिलों से बाहर आ जाते हैं। ऐसे समय में इन्हें डण्डों या लाठियों से मार दें।
- ख) पिंजरों के प्रयोग से चूहों को पकड़कर पानी में डुबोकर मार दें। इस क्रिया में प्रयोग लाने वाले पिंजरों को धो कर साफ कर लें ताकि इनमें से किसी प्रकार की गन्ध न आए। पिंजरों में ऐसा खाद्य पदार्थ रखें



जिससे चूहे आकर्षित हों जैसे- कटे हुए गेहूं, बाजरा व चावल के दाने आदि। पिंजरों को ऐसे स्थान पर रखें जहाँ चूहों का आना-जाना लगा रहता हो। पहले दो तीन दिन चूहों को पिंजरों में न फंसाएं ताकि इन्हें पिंजरों में आने-जाने की आदत पड़ जाए।

## 2. रासायनिक नियन्त्रण

चूहों का नियन्त्रण रासायनिक बेट द्वारा किया जा सकता है। इस बेट की क्षमता चूहों द्वारा इस बेट को स्वीकार करने पर, बेट बनाने वाले पदार्थों के गुण, कण, स्वाद, और गंध द्वारा चूहों का सन्तोषजनक नियन्त्रण सम्भव है।

- क) जिंक फास्फाईड (काली दवाई) चूहों को मारने में सक्षम पाई गई है। इस ज़हर को चूहों के मनपसन्द खाने (बाजरा, ज्वार, गेहूं, चना, मक्का के कटे दाने) में मिलाकर खिलाने से इन्हें मारा जा सकता है। एक किलोग्राम दानों पर 20 ग्राम सरसों का तेल मसल लें और उसमें 25 ग्राम जिंक फास्फाईड किसी छड़ी की सहायता से अच्छी प्रकार मिला दें। इन दवाई लगी दानों का एक चम्मच (10ग्राम) प्रत्येक चूहे के बिल में डालें। इन दानों को कागज की अधखुली पुड़िया में बन्द कर बिल में डालना बेहतर रहता है। तत्पश्चात् बिल का मुंह घास-फूस या मिट्टी के ढेले से बन्द कर दें।

**नोट :** जिंक फास्फाईड बेट में पानी कभी न डालें और बची हुई बेट को नष्ट कर दें।

- ख) ब्रोमो डियोलोन (0.25 प्रतिशत) नामक दवाई को कई बार खिलाने से भी चूहे स्वाभाविक तौर से मारे जा सकते हैं। इस दवाई की 20 ग्राम मात्रा एक किलोग्राम गेहूं, बाजरा, मक्का या ज्वार के आटे में 20 ग्राम शक्कर या बूरा व 20 मि.ली. सरसों के तेल के साथ भली-भांति मिलाकर छोटी-छोटी गोलियां तैयार कर लें। ऐसी 100-150 ग्राम गोलियां ऐसे स्थानों पर रख दें जो इन्सान व जानवरों की पहुंच से दूर हों।

**नोट :** चूहे बहुत चालाक प्राणी हैं। तनिक शक पड़ने पर भी यह विषयुक्त अनाज को नहीं खाते। इस लिए बेट प्रयोग करने से पहले 10 ग्राम दाने (सरसों का तेल लगे) को कागज के टुकड़ों पर रखकर कम से कम एक एकड़ में 40 स्थानों पर 2-3 दिन लगातार रखें। इससे चूहे इन दानों को स्वाभाविक तौर पर खाने लगेंगे। इसके तुरन्त बाद विषयुक्त दाने उन्हीं स्थानों पर रख दें जहाँ चूहे आते-जाते रहते हैं।

## चूहामार अभियान

चूहों की बिलें दूर-दूर तक खेतों, नालियों (नाले), मेढ़ों पर खुलती हैं जो अन्दर ही अन्दर एक दूसरे से जुड़ी रहती हैं। चूहे इन बिलों के रास्तों का प्रयोग समय-समय पर बदल-बदल कर करते हैं। ये बिल न केवल खेतों में बल्कि गांव की खाली/बंजर भूमि में पंचायत की जमीन तक भी फैली होती हैं। गांव के कुछ लोग यदि चूहे मार भी लें तो भी चूहे दूसरे खेतों से आकर हानि पहुंचाने लगते हैं। इसलिए इनके नियन्त्रण के लिए गांव स्तर पर उचित समय पर चूहा मार अभियान चलाना चाहिए।

चूहामार अभियान चलाने का सही समय खरीफ में मई-जून व रबी में नवम्बर-दिसम्बर के महीने होते हैं क्योंकि इस समय या तो खेत खाली होते हैं या किसानों को भी कुछ फुरसत होती है। इन दिनों में खेतों में, मेढ़ों पर,

पानी के नालों और अन्य खाली स्थानों पर चूहों के बिलों को आसानी से देखा जा सकता है और उनमें दवाई डाली जा सकती है। कुछ चूहे अपनी बिलों को ताज़ी मिट्टी से ढक लेते हैं। ऐसी बिलों की मिट्टी हटा कर सुरंग में विषयुक्त दाने रख कर बिल बन्द कर देने चाहिए।

## धूमिकरण विधि द्वारा चूहों का नियन्त्रण

चूहों को धूमिकरण द्वारा भी मारा जा सकता है। विशेषकर जो चूहे ऊपर दी गई रासायनिक नियन्त्रण विधि के अभियान में बच जायें उन्हें ज़हरीली गैस छोड़ने वाली एल्यूमिनियम फास्फाईड दवाई की टिकियों से मारना चाहिए। इस विधि में भी एक दिन पहले सभी बिलों को बन्द कर दें व अगले दिन जो बिलें खुली मिलें उनमें इस दवाई की 3 ग्राम वाली आधी टिकिया (सेल्फास, क्विकफास, फासफ्यूम) प्रति बिल के हिसाब से डालकर बिलों को मिट्टी से बन्द कर दें ताकि ज़हरीली गैस बिल में फैल जाए और चूहे मारे जायें।

**नोट :** इस दवाई की टिकिया में से ज़हरीली गैस नमी मिलने पर ही निकलती है। इसलिए शुष्क व सूखे स्थानों पर 1-2 लीटर पानी प्रति बिल इस दवाई की टिकिया अन्दर करने से पहले डालना चाहिए ताकि गैस जल्दी बननी शुरू हो जाए।

## सावधानियाँ

1. चूहेमार दवा व विषयुक्त दाने खाने पीने की वस्तुओं, बच्चों, पालतू जानवरों व पक्षियों की पहुंच से दूर रखें।
2. चूहेमार दवा को शरीर के किसी भाग पर न लगने दें, न ही इसे सांस द्वारा अन्दर जाने दें। इस दवा को दानों पर लगाते समय या तो दस्तानों का प्रयोग करें या किसी छड़ या खुरपा आदि से इसे मिलाएं।
3. विषयुक्त दाने (बेट) बनाने के पश्चात् शरीर व हाथों को अच्छी प्रकार से धोकर साफ कर लें।
4. बेट बनाने के लिए घर में प्रयोग लाने वाले बर्तनों का प्रयोग कदापि न करें।
5. बची हुई बेट व मरे हुए चूहों को मिट्टी में गहरा दबा दें।
6. धूमिकरण का प्रयोग विशेषज्ञों की देख-रेख में करना चाहिए और उस दौरान धूम्रपान व खानपान नहीं करना चाहिए।



(पृष्ठ 06 का शेष)

**फल मक्खी :** 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 500 ग्रा. कार्बेनिल 50 घु.पा. को 200-250 लीटर पानी तथा 1.25 कि.ग्रा. गुड़/सीरा में मिलाकर 10 दिन के अंतराल पर प्रति एकड़ छिड़कें।

- नोट:** 1. सिफारिश की गई कीटनाशक ही डालें क्योंकि खरबूजा की बेल अन्य कीटनाशकों से जल सकती है।
2. ओस के समय धूड़ा न करें।
  3. 8-10 मीटर की दूरी पर मक्का की कतारें लगाएं क्योंकि उस पर फल मक्खियां इकट्ठी होकर बैठती हैं। मक्का पर ऊपर लिखी दवाई का छिड़काव अच्छी तरह करें।
  4. काने व सड़े फल इकट्ठे करके मिट्टी में गहरा दबा दें।



# ग्रीष्मकालीन सब्जियों की काश्त

✍ विकास कुमार, टी.पी. मलिक एवं देश राज चौधरी

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

ग्रीष्म ऋतु में चौलाई, भिण्डी आदि की बिजाई, बैंगन तथा खरीफ प्याज की पौध तैयार करने का उत्तम समय होता है। जून महीने में शकरकंद की रोपाई का भी उत्तम समय होता है। अप्रैल और मई में बिजाई की गई सब्जी की फसलों में समय-समय पर निराई-गुड़ाई करने से खरपतवार को नष्ट किया जा सकता है और साथ-साथ मिट्टी की सतह पर बनने वाली पपड़ी भी टूट जाती है। जिसके कारण पौध में अच्छी बढ़वार होती है। मई एवं जून मास में खरीफ सब्जी फसलों की बिजाई के लिए खेतों को तैयार करना भी एक प्रकार का प्रमुख कृषि कार्य है। खेत की हरो और कल्टीवेटर की सहायता से 3 से 4 बार जुताई करनी चाहिए तथा हर एक जुताई के बाद पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरी एवं समतल कर लेना चाहिए। इसके बाद 20-25 टन अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद को खेत की तैयारी से 25 से 30 दिन पूर्व खेत में मिलाना चाहिए। गर्मियों में खेतों की उपजाऊ क्षमता बढ़ाने के लिए हरी खाद की फसल जैसे ढैंचा का 15-20 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ की दर से बिजाई करें। जब ढैंचा की फसल 6 से 8 सप्ताह की हो जाए उस समय मिट्टी पलटने वाले हल की सहायता से खेत की जुताई कर फसल को अच्छी तरह मिट्टी में मिला देना चाहिए। हरी खाद खेत की उपजाऊ क्षमता तथा कार्बनिक पदार्थों को बढ़ाती है। खाली पड़े खेतों के अन्दर खाद मिलाना तथा खेतों का समतलीकरण आदि कार्य भी किए जा सकते हैं।

## सब्जी फसलों की पौध तैयार करना

पौध तैयार करने के लिए उस जगह का चुनाव करना चाहिए जहां पर सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्रा में मिलता हो। अच्छे जल निकास वाली हल्की भुरभुरी मिट्टी बीज के अंकुरण के लिए उत्तम है। पौध तैयार करने वाली भूमि को फॉरमेलिडहाइड 25 मि.ली. की दर से एक लीटर पानी में अच्छी तरह घोलकर छिड़काव करने के बाद सफेद रंग की पारदर्शी पॉलीथीन से ढक दें। उसके एक सप्ताह बाद पॉलीथीन को हटाकर अच्छी तरह खुदाई करके खुली अवस्था में छोड़ दें। जिसमें रसायन का असर समाप्त हो जाए। इसके 10-15 दिन बाद मिट्टी को बिजाई के लिए तैयार करना चाहिए। यह उपचार आर्द्रगलन की रोकथाम में सहायक होता है। उपचारित भूमि में विभिन्न सब्जियों की बिजाई करें ताकि स्वस्थ पौध तैयार हो सके। अच्छी प्रकार से सड़ी-गली 20-25 कि.ग्रा. गोबर की खाद और 15 से 20 ग्राम फफूंदनाशक दवा जैसे डायथेन एम-45 या कैप्टान और कीटनाशक जैसे मिथाइल पैराथियान 20 से 25 ग्राम मिट्टी में अच्छी तरह मिलाकर 1 मीटर चौड़ी एवं 3 मीटर या आवश्यकतानुसार लम्बी तथा 15 सें.मी. ऊंची क्यारियां बनाएं।

सब्जियों के बीजों को बिजाई से पहले फफूंदनाशक कैप्टान या बाविस्टीन (2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) की दर से उपचार करना चाहिए।

बीजों की कतारों में बिजाई करनी चाहिए। इस से निराई-गुड़ाई सरलता से होती है। बिजाई के बाद बीजों को मिट्टी एवं गोबर की खाद के मिश्रण से हल्का ढकना चाहिए। बिजाई के बाद क्यारियों को हल्का ढकना चाहिए। बिजाई के बाद क्यारियों को सूखी घास से ढक देना चाहिए इससे नमी का संरक्षण होता है। बीज का अंकुरण होने पर घास की पलवार को उठा देना चाहिए। आर्द्रगलन रोग होने की आशंका में नर्सरी में कैप्टान (2 ग्राम प्रति लीटर) पानी में अच्छी तरह घोलकर सिंचाई करें यदि पौधे कमजोर हों तो 0.3 प्रतिशत यूरिया के घोल (3 ग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें।

## पौधों की रोपाई कैसे करें

जब पौधे 28-35 दिन के तथा 10-15 सें.मी. लम्बे हों और 3-4 पत्ते आ जायें तो रोपाई करनी चाहिए। पौध उखाड़ने से 3-4 दिन पूर्व सिंचाई न करें परन्तु पौधों को निकालने से 24 घण्टे पहले उनकी हल्की सिंचाई करें।

## बेल वर्गीय सब्जियों की बिजाई:

- मई-जून के मध्य में बेल वाली सब्जी फसलें जैसे घीया, खीरा, करेला एवं तोरई की उत्तर-दक्षिण दिशा में 60 सें.मी. चौड़ी तथा 45 सें.मी. गहरी नालियां बनाकर पूर्व दिशा में बुवाई करें।
- खीरा की उन्नत किस्में जैसे पूसा, पूसा उदय, पूसा बरखा आदि का चुनाव करके 2.5 से 3.5 कि.ग्रा बीज प्रति हैक्टेयर की दर से कतार से कतार की दूरी 1.5 मीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 30-45 सें.मी. रख कर बिजाई करनी चाहिए।
- करेला की फसल में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 1.5 से 2.5 मीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 0.5 मीटर रखते हुए 4-6 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर की दर से उन्नत किस्म जैसे पूसा पूर्वी, पूसा दो मौसमी, पूसा विशेष, काशी उर्वशी, अका हरित, संकर किस्में जैसे पूसा हाईब्रिड-1, पूसा हाईब्रिड-2 आदि की बिजाई करनी चाहिए।

## तोरई

चिकनी तोरई (पूसा सुप्रिया, पूसा स्नेहा, पूसा चिकनी, काशी दिव्या) एवं धारीदार तोरई (पूसा नूतन या सतपुतिया) की बिजाई मध्य जून में करें। तोरई का 4-5.5 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर की दर से 25 मीटर पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45-50 सें.मी. और पौधे से पौधे की दूरी पर बिजाई करें।

## भिण्डी की बुवाई:

भिण्डी की वर्षा ऋतु की फसल के लिए 5 से 6 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ के हिसाब से उपयुक्त रहता है। बरसात की फसल में कतार से कतार का अन्तर 45 से 60 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 30 सें.मी. होनी चाहिए। बुवाई के लिए उन्नत किस्में जैसे वर्षा उपहार, हिसार नवीन, अर्का, अनामिका, परभनी क्रांति, पंजाब-7 आदि का चुनाव करें। बिजाई से पहले बीज को रात भर पानी में भिगों दें। भिगोने के बाद बीज को लगभग एक घंटा छाया में सुखा कर बिजाई करें।

## खरीफ प्याज की बिजाई :-

- जून के दूसरे सप्ताह में खरीफ प्याज की उन्नत किस्में जैसे एन-53,

भीमा डार्क रेड, एग्रीफाउंड डार्क रेड, वसवंत-780, भीमा शक्ति, अर्का कल्याण आदि किस्मों की पौध तैयार करें।

- नर्सरी को 4-5 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से तथा बीज को थाइरम (2 से 3 ग्राम) प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करें।
- प्याज़ की एक हैक्टेयर भूमि की रोपाई के लिए 8-10 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त रहता है तथा 0.05 हैक्टेयर क्षेत्र की पौधशाला की आवश्यकता पड़ती है।
- प्याज़ की क्यारियों की लम्बाई कम से कम 3 मीटर व चौड़ाई 0.6 मीटर होनी चाहिए। नर्सरी में ट्राईकोडर्मा विरिडी का 5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से अच्छी तरह छिड़काव करने से आर्द्रगलन की समस्या दूर होती है।
- बीजों की बुवाई पंक्तियों में करें तथा बिजाई की गहराई 1.5 से 2.0 सें.मी. रखें। बुवाई के 6 से 7 सप्ताह बाद प्याज़ की पौध रोपाई के लिए तैयार हो जाती है। प्याज़ की फसल में कतार से कतार का फासला 15 सें.मी. तथा पौधे से पौधे का फासला 10 सें.मी. रखते हैं।

#### बैंगन की बिजाई :

- उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में बैंगन की अगेती फसल के लिए मध्य मई से जून के प्रारंभ में बीजों की बिजाई करनी चाहिए।
- बैंगन की उन्नत किस्में जैसे बी.आर.112, हिसार श्यामल, हिसार प्रगति, एच.एल.बी-25, हिसार बहार, पूसा श्यामल, पूसा क्रांति या संकर किस्में जैसे पूसा हाईब्रिड-5, पूसा हाईब्रिड-9 आदि का चुनाव करके 400 से 500 ग्राम बीज प्रति हैक्टेयर की नर्सरी में बिजाई करें।
- पौध 5 से 6 सप्ताह बाद रोपाई के लिए तैयार हो जाती है। उसके बाद गोल बैंगन की किस्मों के लिए कतार से कतार की दूरी 75 सें.मी. और पौधे से पौधे की दूरी 60 सें.मी. तथा लम्बे और बोलोंग बैंगन की किस्मों के लिए 60 सें.मी. की दूरी रखी जाती है।

#### शकरकंद की रोपाई :

जून में शकरकंद की उन्नत किस्में जैसे कि नंदनी, पूसा लाल, पूसा सफेद, श्री रतना, श्री आरूण आदि की 30-40 लम्बी बेलें जिन पर कम से कम 3-4 गांठें हों कलम को 60 सें.मी. की दूरी पर बनी डोलियों पर 30 सें.मी. की दूरी पर लगाएं। कलम को दो तरीकों से लगाया जा सकता है। किनारों की दोनों गांठें ज़मीन से बाहर निकली हों तथा बीच की दोनों गांठें ज़मीन के अन्दर दबी हों या कलम का नीचे वाला सिरा 2 गांठ तक ज़मीन में दबा हो तथा दूसरा वाला हिस्सा ज़मीन के ऊपर हो। आमतौर पर कलम को शाम के समय लगाएं तथा लगाने के तुरन्त बाद सिंचाई करें।

#### चौलाई की बिजाई :

चौलाई की उन्नत किस्में जैसे पूसा किरण, पूसा लाल चौलाई, पूसा बड़ी चौलाई अर्का अरूनीमा आदि एक हैक्टेयर के लिए 1.5 से 2.0 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त रहता है। कतार से कतार की दूरी 20-30 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से 15 सें.मी. रखते हैं।



## बारानी क्षेत्रों में जल संरक्षण की उपयोगिता

सुरेन्द्र कुमार शर्मा, पातम कीर्ति एवं समुंद्र सिंह

सस्य विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बारानी खेती मुख्यतः वर्षा पर निर्भर करती है। वर्षा जल को सही ढंग से संरक्षित करके निश्चित रूप से बारानी क्षेत्रों में पैदावार को बढ़ाया जा सकता है। हरियाणा प्रान्त के कुल खेती योग्य भूमि के लगभग 21 प्रतिशत भाग में बारानी खेती की जाती है। मुख्य बारानी भाग (87 प्रतिशत) दक्षिण पश्चिमी शुष्क क्षेत्र है जिसमें मुख्यतः हिसार, भिवानी, चरखी दादरी, महेन्द्रगढ़, रेवाड़ी, गुरुग्राम, मेवात, झज्जर, सिरसा व फतेहाबाद जिलों का कुछ भाग आता है। इन क्षेत्रों में कम वर्षा (250-500 मिमी) होती है। जिसकी 80-85 प्रतिशत वर्षा मानसून पर निर्भर है। ऐसी स्थिति में वर्षा जल के संरक्षण का महत्वपूर्ण योगदान है। इसके अतिरिक्त आज के समय में जलवायु परिवर्तन के कारण किसान की आमदनी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। आर्थिक सर्वेक्षण (2017-18) से भी यह बात सामने आई है कि तापमान में बढ़ोत्तरी व कम वर्षा के कारण किसान की आमदनी प्रभावित हो रही है। वर्षा का आगमन, वर्षा की वापसी व वर्षा के दिनों में लगातार परिवर्तन देखने को मिल रहा है। यदि हम पिछले वर्षों की मानसून की स्थिति का आंकलन करें तो निश्चित रूप से कह सकते हैं कि वर्षा के दिनों में लगातार परिवर्तन हो रहा है। पहले जहाँ मानसून के मौसम में वर्षा के दिनों की संख्या ज्यादा होती थी, आजकल वर्षा के दिनों की संख्या में गिरावट देखने को मिल रही है। ऐसी स्थितियों से निपटने के लिए हमें वर्षा जल के समुचित संरक्षण के उपायों पर गौर करना होगा। वर्षा जल का समुचित संरक्षण ही बारानी खेती की सफलता की कुंजी माना जाता है। आमतौर पर देखने में आया है कि बारानी क्षेत्रों में वर्षा की मात्रा का अधिकतर भाग बहकर चला जाता है। बारानी क्षेत्रों में यदि हम वर्षा की प्रत्येक बूंद का संरक्षण सही ढंग से कर लेते हैं तो निश्चित रूप से अच्छी पैदावार ली जा सकती है। वर्षा के पानी को अच्छी प्रकार से भूमि में तथा खेत के तालाबों में संरक्षित करके वैज्ञानिक ढंग से खेती करना ही किसान के लिए लाभदायक है। इस प्रकार बारानी क्षेत्रों के किसान भाई निम्नलिखित समुचित जल संरक्षण के वैज्ञानिक उपाय अपनाकर अपनी पैदावार में बढ़ोत्तरी करके अपनी आय को बढ़ा सकते हैं।

**1. मेढ़बन्धी एवं समतल करना :** बारानी क्षेत्रों में अधिकतर खेतों का आकार ऊंचा-नीचा होता है। इसलिए सबसे पहले भूमि को एकसार समतल कर लेना चाहिए। ऐसे खेतों में जहां ढलान ज्यादा हो, उन्हें छोटे-छोटे हिस्सों में विभाजित कर उनके चारों ओर मेढ़बन्धी कर लेनी



चाहिए ताकि वर्षा का जल खेत से बहकर बाहर न जाए बल्कि वर्षा प्रारंभ होने से पूर्व ही कर देनी चाहिए। खेतों में ढाल के विपरीत मेढ़बन्धी करने से वर्षा का पानी अधिक मात्रा में रोका जा सकता है। मेढ़ों कम से कम 45 सें0 मी0 ऊंची रखनी चाहिए। जहां तक संभव हो अपने खेत की हद एवं मोटी मेढ़ों पर सरकंडा लगाना चाहिए ताकि मेढ़ें टूटने न पाएं।

**2. खेत की तैयारी :** वर्षा के पानी को संचय करने में गर्मी की जुताई का महत्वपूर्ण योगदान है। ग्रीष्म ऋतु में गहरी जुताई करने से मिट्टी की जल शोषण शक्ति बढ़ती है तथा खरपतवार, हानिकारक कीड़े व बीमारी के जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार फसल की पैदावार अच्छी होती है। खरीफ फसलों की बिजाई से पहले दो बार देसी हल या हैरो से जुताई मॉनसून की शुरू की वर्षा पर कर लेनी चाहिए। परती भूमि में, जहाँ रबी की बिजाई करनी हो, पहली जुताई मॉनसून आरंभ होने के दो सप्ताह बाद कर देनी चाहिए। बाद की जुताई प्रत्येक अच्छी वर्षा (कम से कम 20-25 सें0 मी0) के बाद करते रहना चाहिए। मॉनसून के समाप्त होने पर उचित नमी संरक्षण के लिए हल्की जुताई के साथ-साथ सुहागा अवश्य लगाना चाहिए। जुताई करते समय ढाल वाले खेत में इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि यदि उत्तर-दक्षिण का ढलान है तो जुताई पूर्व-पश्चिम की दिशा में की जाए जिससे पानी के बहाव में अवरोध उत्पन्न हो व भूमि का कटाव न हो। इसी प्रकार पूर्व से पश्चिम ढाल रहने पर उत्तर-दक्षिण की दिशा में जुताई की जानी चाहिए।

**3. डोली तथा नाली विधि से जल संरक्षण :** इस विधि के द्वारा खेत में डोलियां एवं नालियां बनाकर डोलियों पर फसल उगाई जाती है तथा नालियों में जल एकत्रित किया जाता है। इस विधि से जहां वर्षा गिरेगी वहां भूमि में समा जाएगी तथा पानी खेत से बाहर बहकर नहीं जाएगा। यदि वर्षा ज्यादा हो तो पानी को खेत के पोखर में एकत्रित किया जा सकता है जो कि सूखे की अवस्था में सिंचाई के काम लाया जा सकता है। जहां पर खेत ढलान वाले हों वहां पर इस विधि से सावनी में बाजरा डोलियों पर व साढ़ी में सरसों नालियों में जुडवां कतारों में बोनी चाहिए।

**4. निराई-गुड़ाई से जल संरक्षण :** मिट्टी की सतह से वाष्प एवं खरपतवारों द्वारा पानी की काफी हानि होती है। पहिए वाले कसोले से निराई-गुड़ाई करना बहुत ही सरल एवं सुगम है तथा इससे बारानी क्षेत्रों में नमी का संरक्षण बनाए रखने में काफी सहायता मिलती है। पंक्तियों के बीच में पलवार बिछाने से भी वाष्प से होने वाली पानी की हानि को बचाया जा सकता है। पलवार के लिए निराई किए खरपतवार, सूखी पत्ती, घास व सरसों के तूड़ा आदि का प्रयोग किया जा सकता है।

## शुष्क भूमि के लिए महत्वपूर्ण वृक्ष : रोहिडा

बिमलेन्द्र कुमारी एवं प्रीति सिंह

वनिकी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

रोहिडा शुष्क इलाकों का एक महत्वपूर्ण वृक्ष है। वृक्ष की लकड़ी की गुणवत्ता अति उत्तम स्तर की होने के कारण प्रायः इस वृक्ष की तुलना *Tectona grandis* (टीक या सागवान) से की जाती है, जो कि प्रथम श्रेणी की इमारती लकड़ी प्रदान करने वाला वृक्ष है। जिसके कारण ही इस वृक्ष को साधारणतः स्थानीय भाषा में मरूस्थली टीक या मारवाड़ी टीक भी कहा जाता है। इस वृक्ष का वैज्ञानिक नाम *Tecomella undulata* है।

इस वृक्ष से प्राप्त लकड़ी बहुत उत्तम स्तर की, अधिक सघन व हानि पहुंचाने वाले कीटों के प्रकोप से रहित होती है। राजस्थान में आज तक मौजूद सभी पुरानी इमारतों, किलों, महल इत्यादि में दरवाजे, खिडकियों, छतों, छज्जों से लेकर फर्नीचर तक इसी लकड़ी का उपयोग हुआ था व बिना किसी विशेष रख-रखाव के इस लकड़ी से निर्मित किलों व महलों के विशाल दरवाजे आज भी हमें हैरान होने पर मजबूर कर देते हैं।

**जलवायु :** यह वृक्ष एक मरूस्थली अथवा शुष्क भागों का वृक्ष है, इसकी बढ़वार बहुत धीमी गति से होती है। यह वृक्ष भारत वर्ष के कुछ प्रान्तों में (महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, पंजाब व हरियाणा में) प्राकृतिक तौर पर पाया जाता है। यह राजस्थान व गुजरात के अत्यधिक गर्म क्षेत्रों में रेतीले टीलों पर सहज तौर पर उगता है, जहां तापमान शरद ऋतु में अत्यधिक कम (0 डिग्री सैल्सियस से 2 डिग्री सैल्सियस) व ग्रीष्म ऋतु में अधिकतम प्रायः 48-50 डिग्री सैल्सियस के आसपास पहुंच जाता है व वर्षा (150-500 मि.मी) बहुत कम होती है।

**वृक्ष विवरण :** यह वृक्ष प्रायः चटकीले पीले गहरे-संतरी-लाल रंग के फूलों से लदा पाया जाता है। फूलों से लदे रोहिडा के वृक्ष की छटा देखते ही बनती है। इन्हीं सुन्दर फूलों के कारण ही इस वृक्ष को राजस्थान के राजकीय फूल वृक्ष का दर्जा हासिल है। यह वृक्ष जब फूलों रहित होता है तो बहुत ज्यादा सुन्दर नहीं दिखाई देता। इसकी शाखाएं बेतरतीब सा आकार ले लेती हैं, पत्ते 5-12 सें.मी. लम्बे, पतले व मुड़े-तुड़े किनारे वाले होते हैं। फूल ट्यूब के आकार में सुन्दर चटख पीले से लाल रंग के होते हैं। फूल खिलने का मौसम जनवरी से मार्च तक होता है। तत्पश्चात् 20 सें.मी. लम्बे, पतले, घुमावदार कैप्सूल के आकार के फल तैयार होते हैं। फल पकने के पश्चात पंखनुमा आकार के बीज हवा के बहाव से दूर-दूर तक विचरित हो जाते हैं।

**नर्सरी व पौधारोपण :** मार्च माह के बाद वृक्ष में फलियां विकसित हो जाती हैं व अप्रैल-मई माह में बीज तैयार हो जाते हैं। रोहिडा के बीजों को नर्सरी में तैयार पॉलीथीन की थैलियों में जुलाई-अगस्त माह में रोपित कर दिया जाता है व बढ़वार की गति (शेष पृष्ठ 27 पर)



# जून मास के कृषि कार्य



## फसलों में

### कपास

कपास की फसल को पहला पानी देने से पहले एक गोड़ी अवश्य कर लें। इससे घास-फूस नष्ट हो जाते हैं तथा नमी कुछ और समय तक बनी रहती है। जहां तक संभव हो सिंचाई देर से करें। फसल की छंटाई करके फालतू पौधों को कतारों से निकाल दें। कतारों में पौधों की दूरी कम से कम 30 सें.मी. व संकर कपास में 60 सें.मी. रखें। साधारणतः कपास में पहला पानी बिजाई के 45-50 दिन बाद लगायें। कपास में बिजाई के 40-45 दिनों के बाद सूखी गुड़ाई के बाद ट्रैफलान 0.8 लीटर प्रति एकड़ या स्टोम्प 1.25 लीटर प्रति एकड़ के 200-250 लीटर पानी में घोल से उपचार के पश्चात् सिंचाई करने से भी वार्षिक खरपतवारों का उचित नियन्त्रण हो जाता है।

2, 4-डी इस फसल के लिए अत्यंत घातक है। इसलिए ध्यान रखें कि जिन छिड़काव यंत्रों से 2, 4-डी पहले प्रयोग में लाया गया हो उन्हें फफूंदनाशक या कीटनाशक दवाओं के छिड़काव के लिए प्रयोग में न लायें। 2, 4-डी का संपर्क कपास के प्रयोग में लाए जाने वाले उर्वरकों, कीट व फफूंदनाशक दवाओं के साथ भी न होने दें। समस्या हो जाने पर प्रभावित कोंपलों (बन्दरपंजा) को 15 सें.मी. काट दें तथा फसल में नत्रजन वाली खाद डालें एवं 2.5 प्रतिशत यूरिया तथा 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव करें। कोंपलें काटने तथा यूरिया+जिंक सल्फेट के छिड़काव का काम एक सप्ताह बाद दोबारा करें।

चूरड़ा (थ्रिप्स) या माईट का प्रकोप होने पर 250 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या 300 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. को 150 लीटर पानी में

लेखक :

- आर. एस. हुड्डा, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- आर. के. गोदारा, सह-निदेशक (बागवानी)
- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (पादप रोग विज्ञान)
- एम. एस. ग्रेवाल, परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)
- अशोक चन्द्र यादव, परामर्शदाता (सब्जी विज्ञान)
- वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह, सहायक वैज्ञानिक, लुवासा (पशु पालन विभाग)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। कोणदार धब्बों से बचाव के लिए प्रति एकड़ फसल पर 6 ग्राम स्ट्रैप्टोसाईक्लिन व 600 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराईड प्रति एकड़ 150 लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें। मीलीबग से बचाव के लिए नदी-नालों, सड़कों, मेढ़ों, खालों आदि के किनारों पर उगने वाले खरपतवारों, विशेषकर कांग्रेस घास को जलाकर नष्ट करें।

### गन्ना

समय-समय पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें व खरपतवारों को नलाई करके निकाल दें।

गन्ने की फसल में नाइट्रोजन की तीसरी मात्रा इस महीने के अंत तक अवश्य डाल दें। गन्ने के खेत में चौथा पानी लगाने के बाद जब खेत में बत्तर आ जाए तो 45 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से डालकर ऊपर से गोड़ी कर दें या फिर यही मात्रा खरपतवार रहित खेत में पानी लगाने से पहले डालें और बाद में हल्का पानी लगा दें। मोढ़ी फसल में उपर्युक्त खादों की डेढ़ गुनी मात्रा डालें।

कांगियारी के प्रकोप को रोकने के लिए कांगियारीयुक्त दुमों के ऊपर बोरी चढ़ाकर सावधानी से काट लें और बाद में रोगी पौधों को जड़ से उखाड़ कर नष्ट कर दें। कांगियारीयुक्त दुमों से भरी बोरी को दस मिनट तक उबलते हुए पानी में रखकर कांगियारी के बीजाणुओं को नष्ट कर दें। इस कार्यक्रम को अभियान के रूप में अपनाएं।

यदि मोढ़ी फसल हो व कनसुआ का प्रकोप हो, तो 2.5 लीटर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. प्रति एकड़ फसल में सिंचाई के साथ दें। काली भूण्डी व पाइरिल्ला का आक्रमण होने पर 400 मि.ली. फेनिट्रोथियोन 50 ई.सी. या 160 मि.ली. डाईक्लोरवास 76 ई.सी. को 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। परजीवियों द्वारा पाइरिल्ला की रोकथाम करें। अधिक जानकारी के लिए नजदीक के कृषि विज्ञान केन्द्र या गन्ना अनुसंधान केन्द्र, जी. टी. रोड, करनाल या गन्ना विभाग के अधिकारियों से मिलें। माईट (अष्टपदी) को मारने के लिए 500 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या 600 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। कुछ क्षेत्रों में चोटी बेधक (टॉप बोरर) काफी नुकसान पहुंचाता है। इसके लिए जून के अंतिम सप्ताह में 13 किलोग्राम कार्बोफ्यूथुरान 3 जी (फ्यूराडान) या 8 किलोग्राम फोरेट (थिमेट) 10-जी दानेदार कीटनाशक प्रति एकड़ डालकर तुरंत सिंचाई कर दें। यह उन्हीं खेतों में डालें जिनमें अप्रैल-मई में 5 प्रतिशत से अधिक पौधे कीटग्रस्त थे या फिर पिछले वर्ष 15 प्रतिशत से अधिक हानि थी। इन कीटनाशकों को यूरिया खाद में मिलाकर भी डाल सकते हैं।

## बैसाखी मूंग

मूंग में 70-80 प्रतिशत फलियां पकने पर फसल की कटाई कर लें ताकि सावनी फसलों की बिजाई के लिए खेत खाली हो सकें।

गर्मियों में ली जाने वाली फसलों में हरा तेला, सफेद मक्खी और छोटी-छोटी सूण्डियों की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 250 मि.ली. डाईमैथोएट 30 ई.सी. या 250 मि.ली. ऑक्सीडेमिटोन मिथाईल 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

## धान

धान की रोपाई इस माह से शुरू कर दें। इसके लिए खेत के चारों ओर डोलों को मजबूत करें, खेत में अच्छी तरह पौध पनपने के लिए व पानी बनाए रखने के लिए खेत को अच्छी तरह कट्टू करके एकसार कर लें। यदि खेत में हरी खाद वाली फसल खड़ी हो तो जुताई करके पहले इसे दबा दें व फिर रोपाई करें। पौध को पंक्तियों में रोपें। लंबी किस्मों की रोपाई 20 × 15 सें.मी. की दूरी पर करें। बौनी किस्मों की व पछेती हालत में लंबी बढ़ने वाली किस्मों की रोपाई 15 सें.मी. फासले की कतारों में व पौधों में भी 15 सें.मी. की दूरी रखकर करें। ध्यान रखें कि पौध 2-3 सें.मी. से अधिक गहरी न रोपें।

यदि पनीरी गारा किए खेत में लगाई जा रही है तो ऐसे खेतों में लगाने से पहले 20 कि.ग्रा. यूरिया और 60 कि.ग्रा. सुपरफास्फेट या 22 कि.ग्रा. डी. ए. पी. तथा 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ का छींटा लगाएं। 15 दिन की पनीरी होने पर 25 कि.ग्रा. यूरिया का छींटा देकर ऊपर से हल्का पानी लगाएं।

बौनी मध्यम अवधि वाली किस्में जैसे एच के आर 127, एच के आर 126, एच के आर 120, हरियाणा संकर धान 1, जया व पी आर 106 एवं मध्यम कम अवधि वाली किस्मों जैसे एच के आर 47, आई आर 64, एच के आर 46 में 130 कि.ग्रा. यूरिया, 150 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट, 40 कि.ग्रा. म्युरेट आफ पोटाश तथा 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ तथा जिंक, फास्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की 1/3 मात्रा लेव बनाते समय शेष दो बार बराबर-बराबर मात्रा में रोपाई के 3 व 6 सप्ताह बाद दें। जबकि बौनी, कम अवधि वाली किस्मों, जैसे एच के आर 48 व गोबिन्द आदि में 105 कि.ग्रा. यूरिया, 150 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट, 40 कि.ग्रा. म्युरेट ऑफ पोटाश व जिंक सल्फेट की ऊपर बताई गई मात्रा प्रति एकड़ प्रयोग करें। नत्रजन की 1/3 मात्रा तथा फास्फोरस, पोटाश व जिंक सल्फेट की पूरी मात्रा खेत तैयार करते समय प्रयोग करें तथा 1/3 नत्रजन की मात्रा बिजाई के 21 दिन बाद व 1/3 मात्रा रोपाई के 42 दिन बाद प्रयोग करें। अगर खेत में ढँचे की हरी खाद लगाई गई हो तो ऊपर बताई गई नत्रजन की 1/3 मात्रा कम कर दें।

लंबी बासमती धान में 50 कि.ग्रा. यूरिया, 75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट व 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ प्रयोग करें जबकि बौनी बासमती में 80 कि.ग्रा. यूरिया, 75 कि.ग्रा./एकड़ सिंगल सुपर फास्फेट व

10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रयोग करें। फास्फोरस व जिंक सल्फेट की पूरी मात्रा खेत तैयार करते समय प्रयोग करें। लंबी बासमती में नत्रजन की आधी मात्रा रोपाई के 21 दिन बाद व शेष आधी मात्रा 42 दिन बाद डालें। जबकि बौनी बासमती में 1/3 नत्रजन खेत की तैयारी करते समय, 1/3, 21 दिन बाद व 1/3, 42 दिन बाद प्रयोग करें। ध्यान रहे कि नत्रजन उर्वरक उस समय दें जब खेत में पानी खड़ा न हो।

खरपतवारों की प्रारंभ से ही रासायनिक ढंग से रोकथाम के लिए पौध लगाने के 1-3 दिन बाद खड़े पानी में (4-5 सें.मी. गहरा) प्रति एकड़ 12 कि.ग्रा. मचैटी दानेदार या बासालीन दानेदार सारे खेत में छिड़क दें या सैटर्न दानेदार केवल 6 किलोग्राम प्रति एकड़ के हिसाब से रोपाई के 2-3 दिन बाद खड़े पानी में एकसार बिखेर दें या ब्यूटाक्लोर 50 ईसी (मचैटी, डेलक्लोर ई.सी., मिलक्लोर, नर्वदाक्लोर, कैप क्लोर, ट्रैप, तीर, हिल्टाक्लोर) या सैटर्न ई.सी. या स्टोम्प 30 ई.सी. में से किसी एक को प्रति एकड़ 1.2 लीटर के हिसाब से या अनिलोफास 30 ई.सी. (एरोजीन, अनिलोगार्ड, कन्ट्रोल एच) की 530 मिली. मात्रा या अनिलोफास 50 ई.सी. (अनिलोगार्ड) 325 मि.ली. या अनिलोफास 18 ई.सी. (रिको) या प्रेटिलाक्लोर 50 ई.सी. (रिफिट इरेज) 800 मिली. या प्रेटिलाक्लोर 40 ई. डब्ल्यू (एरिजान) 1000 मिली. या प्रेटिलाक्लोर 6.0 प्रतिशत + पायरोजोसल्फयूरोन ईथाईल 0.15 प्रतिशत जी.आर. (इरोज 6.15 प्रतिशत दानेदार) 4.0 कि.ग्रा. या ओक्साडायर्जिल (टोपस्टार 80 प्रतिशत घु.पा.) 50 ग्रा. मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से 60 कि.ग्रा. सूखी रेत में मिलाकर रोपाई के 2-3 दिन बाद खड़े पानी में छिड़क दें। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियन्त्रण हेतु मेटसल्फयूरोन + क्लोरोम्यूरान (एलमिक्स 20 घु. पा.) का 8 ग्राम तैयारशुदा मिश्रण + 0.2 प्रतिशत सरफेक्टेन्ट या ईथाक्सी सल्फयूरान (सनराईस 15 घु. दाने) 50 ग्राम या 2, 4-डी एस्टर की 400 ग्राम (प्रोडेक्ट) का पौध रोपण के 20-25 दिन बाद 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें अथवा पिनोक्सुलाम (ग्रेनाईअ 24 प्रतिशत एस.सी.) की 37.5 मिली. मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से 120 लीटर पानी में मिलाकर पौध रोपाई के 8-12 दिन बाद छिड़काव करें। छिड़काव करने से एक दिन पहले व एक दिन बाद खेत में पानी खड़ा न हो। धान में मिले जुले खरपतवारों के लिए 100 मिली. बिस्पाइरी बैक सोडियम (नोमिनी गोल्ड/तारक) 10 प्रतिशत एस एल को 200 लीटर पानी में घोलकर पौध रोपण या सीधी बिजाई के 15-25 दिन बाद प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़कें। छिड़काव करने से एक दिन पहले व एक दिन बाद खेत में पानी खड़ा न हो। ध्यान में रखें कि उपर्युक्त खरपतवारनाशकों में से केवल एक ही का प्रयोग एक बार ही करना होता है।

बीजजनित रोगों से बचाव के लिए बीजोपचार अवश्य करें। भारी व स्वस्थ बीज के चुनाव हेतु 10 प्रतिशत नमक के घोल (10 लीटर पानी में 1 कि.ग्रा. नमक) में बीज को थोड़ा-थोड़ा करके डालें। ऊपर तैरते हुए बीज तथा अन्य पदार्थों को बाहर निकालकर नष्ट कर दें। नीचे बैठे भारी बीज को साफ पानी में 3-4 बार धो लें ताकि बीज की सतह पर नमक का अंश न



रहने पाए और फिर बीजगत फफूंद व जीवाणुओं के निवारण के लिए फफूंदनाशक उपचार करें। इसके लिए 10 लीटर पानी में 10 ग्राम एमिसान या 10 ग्राम कार्बेन्डाजिम (बाविस्टिन) व 2.5 ग्राम पौसामाईसिन या 1 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन घोल लें और इस घोल में 8 कि.ग्रा. लंबी किस्मों के व 12 कि.ग्रा. बौनी किस्मों के बीज को 24 घण्टे तक भिगोकर उपचारित करें। धान की पनीरी को उखाड़ने से 7 दिन पहले कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से रेत में मिलाकर पनीरी में एक साथ बिखेर दें। ध्यान रहे पनीरी में उथला पानी हो। धान की पनीरी खड़े पानी में ही उखाड़ें। पौध शय्या में यदि पौध पीली पड़कर सफेद हो जाए तो 0.5 प्रतिशत हरा कसीस या फ़ैरस सल्फेट के घोल का छिड़काव करें।

धान में जड़ की सूंडी की समस्या हो तो 10 कि.ग्रा. कार्बेरिल 4-जी या सेविडाल 4-जी या कार्बोफ्यूरेन 3-जी या 4 कि.ग्रा. फोरेट 10-जी प्रति एकड़ डालें। दवाई एक सार डालने के लिए इनमें यूरिया खाद मिला दें।

### बाजरा

बाजरा के बीजने का समय आ ही गया है। उन्नत संकर किस्मों, एच एच बी 50, 60, 67 (संशोधित), एच एच बी 94, 117 व एच एच बी 146, 197, 216, 223, 226, 234, 272 तथा मिश्रित एच सी 10 व 20 के बीज का अपने साधनों के हिसाब से प्रबंध कर लें। संकर बाजरे का बीज हर साल नया लेकर ही बोएं। वैसे तो 1-15 जुलाई तक का समय बाजरे की बिजाई का उत्तम समय है परंतु बारानी इलाकों में मानसून की पहली वर्षा पर ही बिजाई शुरू करें। खेत को 2 या 3 बार जोतकर फौरन सुहागा लगाकर अच्छी तरह तैयार करें ताकि घास-फूस न रहे व नमी बनी रहे। बारानी क्षेत्रों में वर्षा से पहले खेत के चारों तरफ खूब मजबूत डोलें बनाएं ताकि खेत में पानी जमा हो जाए तो आगामी फसल के काम आए। एक एकड़ के लिए 1.5 से 2 कि.ग्रा. बीज चाहिए। खेत में सही उगाव के लिए बिजाई खूड़ों में इस तरह से करें कि बीज के ऊपर 2.0 सें.मी. से ज्यादा मिट्टी न पड़े। दो खूड़ों का फासला 45 सें.मी. रखें। वर्षा के मौसम में मेढ़ों पर बिजाई करना अच्छा होता है। इस तरीके की बिजाई के लिए विश्वविद्यालय के शुष्क खेती अनुसंधान केन्द्र द्वारा निर्मित मेढ़ों पर बीजने वाले हल का प्रयोग करें।

यदि असिंचित संकर बाजरा इस माह के अंत में बोने जा रहे हैं तो उसमें 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, जोकि लगभग 35 कि.ग्रा. यूरिया से प्राप्त हो सकती है, बिजाई के समय डालें। यदि खेत में फास्फोरस की मात्रा मध्यम दर्जे से कम है तो इस जमीन में 50 कि.ग्रा. सुपरफास्फेट प्रति एकड़ के हिसाब से भी डालें। रेतीली व हल्की जमीन में 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट बिजाई के समय प्रति एकड़ अवश्य डालें।

सिंचित क्षेत्रों में संकर बाजरे में बिजाई के समय 25 कि.ग्रा. नत्रजन, 25 कि.ग्रा. फास्फोरस व 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ डालें। इसके लिए बिजाई के समय 55 कि.ग्रा. यूरिया व 150 कि.ग्रा. सिंगल सुपरफास्फेट प्रति एकड़ डालें। बाकी नत्रजन को दो बार बराबर मात्रा में पौधों की छंटाई के बाद व सिट्टे निकलते समय डालें।

बिजाई से पूर्व बीजोपचार करना न भूलें। बीजोपचार के लिए 10 प्रतिशत नमक के घोल (10 लीटर पानी में 1 कि.ग्रा. नमक) में बाजरे के बीज को थोड़ा-थोड़ा डालकर हाथ से हिलाएं। चेपा के पिंड तथा तैरते हुए पदार्थों को निकाल कर नष्ट कर दें तथा नीचे बैठे हुए भारी बीजों को साफ पानी से 3-4 बार अच्छी तरह धोकर छाया में सुखा लें ताकि बीज पर से पानी सूख जाए और पुनः प्रति किलोग्राम बीज का 2.0 ग्राम एमिसान व 4 ग्राम थाइरम या मैटालैक्सिल 6 ग्राम से सूखा उपचार करके बोएं, जो किसी बीजोपचारी ड्रम या मिट्टी के घड़े आदि में किया जा सकता है। घड़े या ड्रम में दो-तिहाई बीज और आवश्यक अनुपात में दवा डाल देते हैं। यदि उपचार घड़े से करें तो घड़े के मुंह को पॉलिथीन या मोटे कपड़े से बांध लें और फिर बीज व दवा से भरे हुए घड़े या ड्रम को लगभग 10 मिनट तक अच्छी तरह हिलाएं ताकि दवा अच्छी तरह मिल जाए। अगेती बोई फसल, यानि जून के अंतिम या जुलाई के शुरू में बोई गई फसल में अरगट या चेपा का प्रकोप कम होता है।

बाजरे में खरपतवारों की रोकथाम रसायनों द्वारा भी की जा सकती है। बिजाई के तुरन्त बाद 400 ग्राम एट्राजीन 50 प्रतिशत घु.पा. प्रति एकड़ 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़कें। यदि बिजाई के तुरन्त बाद एट्राजीन का प्रयोग न कर सकें तो बिजाई के बाद 10-15 दिन के बीच में भी उतनी ही मात्रा प्रयोग कर सकते हैं।

### अरहर

अरहर की कम समय में पकने वाली मानक (एच 77-216), यू पी ए एस-120, पारस (एच 82-1) अच्छी किस्में हैं जोकि 130-140 दिन में पक कर तैयार हो जाती हैं। इन सभी की बिजाई इस माह में पूरी कर लें। एक एकड़ के लिए लगभग 5-6 कि.ग्रा. बीज डालें। इन सभी किस्मों की बिजाई कतारों में 40 सें.मी. की दूरी रखकर करें। यह और भी अच्छा रहेगा कि अरहर की दो कतारों के बीच के हिस्से में मूंग या उड़द की कम समय में पकने वाली किस्म की एक-एक कतार उगाई जाए। यदि ऐसा करना हो तो खूड़ों का फासला 50 सें.मी. रखकर अरहर की बिजाई करें। बीज को राइजोबियम के टीके से उपचारित करके ही बोएं। जिन खेतों में गत वर्ष अंगमारी का प्रकोप रहा हो उनमें अरहर की खेती न करें।

अरहर की बिजाई करते समय 18 कि.ग्रा. यूरिया और 100 कि.ग्रा. सिंगल सुपरफास्फेट या इनके अभाव में 35 कि.ग्रा. डाइअमोनियम फास्फेट (डी. ए. पी.) प्रति एकड़ के हिसाब से बिजाई के समय ड्रिल करें। बीज को बोते समय राइजोबियम का टीका लगाने से पैदावार में वृद्धि की संभावना रहती है। इसके लिए एक एकड़ के बीज में एक टीका राइजोबियम का व एक टीका फास्फोबैक्टीरिया का बिजाई से पहले लगाना चाहिए।

### मूंगफली

मूंगफली की बिजाई इस माह के अन्तिम सप्ताह से शुरू कर देनी चाहिए तथा जुलाई के प्रथम सप्ताह तक पूरी कर लें। इसकी उन्नत किस्मों, मुख्यतः गुच्छेदार किस्मों, एम एच-4 व पंजाब मूंगफली नं. 1 बोने की

सिफारिश की जाती है। बुवाई कतार से कतार का फासला 30 सें.मी. रखकर करनी चाहिए। कतारों में बुवाई इस प्रकार करें कि बीज लगभग 15 सें.मी. के फासले पर पड़े जबकि पंजाब मूंगफली नं. 1 के लिए यह फासला 22.5 सें.मी. रखें। एम एच 4 के लिए 32 कि.ग्रा. गिरी व पंजाब मूंगफली नं. 1 के लिए 34 किलोग्राम गिरी प्रति एकड़ की दर से डालें।

मूंगफली बोते समय एक एकड़ भूमि में बिजाई के समय 13 कि.ग्रा. यूरिया या 30 कि.ग्रा. अमोनियम सल्फेट व 125 कि.ग्रा. सुपरफास्फेट, 16 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश व 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट मिलाकर ड्रिल करें। मूंगफली में जिप्सम का प्रयोग लाभदायक पाया गया है।

दीमक व सफेद लट के प्रकोप से फसल को बचाने के लिए 15 मि. ली. क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. या क्विनलफॉस 25 ई.सी. प्रति कि.ग्रा. बीज में बिजाई से दो-तीन घंटे पूर्व मिला लें।

जून में वर्षा होते ही सफेद लट के प्रौढ़ों (भूण्डों) को अभियान चलाकर नष्ट करें। बीज गलन व पौध गलन से बचाव के लिए रोगमुक्त गिरियों को बोने से पूर्व कैप्टान या थाइरम (3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) से उपचारित अवश्य कर लें।

### तिल

तिल की बिजाई अगले महीने या मानसून की पहली वर्षा पर की जा सकती है। इसके लिए उन्नत किस्म हरियाणा तिल नं. 1 व एच टी 2 की सिफारिश की जाती है। एक एकड़ के लिए लगभग 2 कि.ग्रा. बीज इस्तेमाल करें और पंक्तियों में एक फुट के फासले पर बिजाई करें। पौधे से पौधे का फासला 15 सें.मी. रखें। बिजाई के समय 33 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ पोरे। खुडों का फासला 30 सें.मी. रखें। जड़गलन व तना गलन के बचाव के लिए बीज का उपचार थाइरम 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज के हिसाब से करें।

### मक्का

मक्का की बिजाई इस माह के अंत में शुरू कर लें। केवल उन्नत किस्में एच एच एम-1, एच एच एम-2, एच एम-4, एच एम-5, एच एम-10, एच एम-11, एच क्यू पी एम-5, एच क्यू पी एम-4 व एच क्यू पी एम-1 बीजें। एक एकड़ में बिजाई के लिए 8 कि.ग्रा. बीज की ज़रूरत पड़ती है। खेत को अच्छी तरह तैयार करके बिजाई कतारों में 75 सें.मी. व पौधे से पौधे की 22 सें.मी. की दूरी पर करें। मक्का की किस्मों में 130 कि.ग्रा. यूरिया, 150 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट, 40 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश व 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ डालें। फास्फोरस, पोटाश व जिंक सल्फेट बिजाई पर डालें व 1/3 नत्रजन की मात्रा बिजाई पर, 1/3 जब फसल एक फुट की लंबाई की हो जाए व 1/3 मात्रा जब सिद्धे निकलने वाले हों तब डालें।

बीज गलन व पौध अंगमारी से बचाव हेतु बोने से पहले बीज को थाइरम (4 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) से उपचारित करें। मक्की में होने वाले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए एट्राजीन 50 प्रतिशत घु.पा. की 400-600 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से बिजाई के तुरन्त बाद 200-250 लीटर

पानी में मिलाकर छिड़कें। मक्की में सभी तरह के खरपतवारों के नियन्त्रण के लिए टेम्बोटाथोन (लोडिस 34.4 प्रतिशत घु.पा.) का 115 मिली. + 400 मिली. चिपचिपे पदार्थ को 200 लीटर पानी में मिलाकर बिजाई के 10-15 दिन बाद या खरपतवार की 2-3 पत्ती की अवस्था पर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

### गेहूँ

बीज हेतु रखने वाले गेहूँ का यदि आप सौरताप या सूर्य की गर्मी से बीजोपचार कर लें तो आप अगले वर्ष इन्हीं बीजों से खुली कांगियारी रहित गेहूँ की फसल ले सकते हैं। बीजोपचार के लिए मई-जून के महीने में किसी शांत व धूप वाले दिन गेहूँ को 8 बजे प्रातः से 12 बजे दोपहर तक पानी में भिगोयें। ऊपर तैरते हुए पदार्थों को बाहर निकालकर नष्ट करें। चार घण्टे बाद भीगे हुए बीज को किसी पक्के फर्श या तिरपाल पर दिन भर सुखाकर अगले वर्ष बोने के लिए प्रयोग में लाएं। धूप उपचार के बाद किसी दवा उपचार की आवश्यकता नहीं।

### सोयाबीन

जून के अंत से जुलाई के आरंभ तक बिजाई करें। अच्छे जमाव के लिए बिजाई के समय जमीन में नमी पूरी मात्रा में होनी चाहिए। 30 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़, कतार से कतार का फासला 45 सें.मी. रखकर 2.5 सें.मी. गहरी बिजाई करें। पी के 416, 564 और 472 किस्में ही बोएं। 22 किलोग्राम यूरिया और 200 कि.ग्रा. एस.एस.पी. प्रति एकड़ बिजाई के समय डालें। फसल की नाइट्रोजन की ज़रूरत पूरी करने के लिए बीज का सोयाबीन के राइजोबियम टीके से उपचार अवश्य करें।

### ज्वार

एस एस जी 59-3, एच सी 136, 171, 308 एच जे 541 व एच जे-513 किस्मों की जून 25 से 10 जुलाई तक बिजाई करें। 20-24 कि.ग्रा. बीज व सुडान घास के लिए 12-14 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़, 25 सें.मी. कतार से कतार की दूरी पर बिजाई करें। कम वर्षा वाले व बारानी इलाकों में बिजाई के समय 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति एकड़ डालें। सारी खाद बिजाई के समय कतारों में ड्रिल करें। अधिक वर्षा वाले व सिंचित इलाकों में 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति एकड़ बिजाई के समय तथा 10 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति एकड़ बिजाई के एक महीने बाद भी डालें। दाने की कांगियारी से बचाव के लिए बीज को एमिसान 2 ग्राम/कि.ग्रा.बीज की दर से उपचारित करें। ज्वार में खरपतवारों की रोकथाम के लिए बिजाई के 7-15 दिन के अन्दर-अन्दर 200 ग्राम अट्राजीन 50 घु.पा. प्रति एकड़ के हिसाब से 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़कें।



## सब्जियों में

### टमाटर

टमाटरों को अधपका ही तोड़ें तथा पकाकर बाज़ार में बेचने के लिए भेजें। फसल की नियमित रूप से सिंचाई करें तथा ज़रूरत पड़ने पर

कीटनाशक दवाओं का प्रयोग करें। विषाणु रोग से ग्रसित पौधों को निकालकर नष्ट कर दें।

खरीफ की फसल के लिए टमाटर के बीज की नर्सरी में बिजाई करें। टमाटर की फसल के लिए उन्नत किस्मों को ही प्रयोग में लें, जैसे कि हिसार अरुण, हिसार ललित और हिसार लालिमा। एक एकड़ खेत के लिए लगभग 200 ग्राम बीज की ज़रूरत होगी। नर्सरी को लगभग 20 सें.मी. ऊंचा बनाएं जिससे कि अधिक वर्षा से पौध को हानि न हो। बिजाई से पहले बीज का उपचार करें। थाइरम या कैप्टान नामक दवा एक ग्राम प्रति 400 ग्राम बीज की दर से प्रयोग करें। नर्सरी में पौध की देखरेख करें।

इस फसल में हरा तेला, सफेद मक्खी और माईट जैसे रस चूसने वाले कई कीड़े लग जाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। फल छेदक कीड़े के लिए 500 ग्राम कार्बेरिल 50 घु. पा. या 75 मि.ली. फेनवालेरेट 20 ई.सी. या 200 मि.ली. डेकामेथ्रिन 2.8 ई.सी. या 60 मि.ली. साईपरमेथ्रिन 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ खेत पर छिड़काव करें। दवा प्रयोग करने से पहले ग्रसित फलों को तोड़ कर नष्ट कर दें।

### बैंगन

बैंगन के कच्चे फलों की तुड़ाई करें और बाज़ार में बेचने के लिए भेजें। ध्यान रखें कि किसी तेज़ धार वाले चाकू से फलों को पौधे से काटें। ज़रूरत पड़ने पर फसल की सिंचाई करें तथा विषाणु रोग से बचाव करें। रोगी पौधों को उखाड़कर फेंक दें। फल व गोभ छेदक सूण्डी से ग्रसित फल व गोभ को काटकर ज़मीन में दबा दें तथा 60 मि.ली. स्पाइनोसेड (ट्रेसर 45 एस.सी.) को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ 15 दिन के अंतर पर तीन छिड़काव करें। (हड्डा भुण्डी व लेस बग के लिए ऊपर बताई गई कार्बेरिल नामक दवाई का ही प्रयोग करें)।

खरीफ की फसल के लिए नर्सरी में बिजाई करें। उन्नत किस्मों को प्रयोग में लाएं, जैसे बी आर 112, हिसार श्यामल (एच 8), हिसार प्रगति, एच एल बी-25 तथा हिसार बहार।

बिजाई के लिए लगभग 200 ग्राम बीज की एक एकड़ खेत के लिए आवश्यकता होगी। बिजाई से पहले बीज का थाइरम या कैप्टान नामक दवा से (एक ग्राम दवा प्रति 400 ग्राम बीज) उपचार करें। समय से खेत की तैयारी शुरू कर दें। इसमें हरा तेला, सफेद मक्खी तथा माईट के नियंत्रण के लिए 300-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. का 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ में छिड़काव करें।

### मिर्च

फसल में तैयार मिर्चों की तुड़ाई करें तथा उन्हें बेचने के लिए बाज़ार भेजें। ज़रूरत पड़ने पर सिंचाई करें। हानि पहुंचाने वाले कीड़ों, थ्रिप्स, अल और सफेद मक्खी तथा माईट से फसल के बचाव के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 250 मि.ली. प्रेमप्ट 20 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें तथा ज़रूरत पड़ने

पर 15 दिन के अंतर पर फिर दोहराएं। कीटनाशक दवाओं के छिड़काव से विषाणु रोगों का भी नियंत्रण हो जाता है। विषाणु रोगग्रस्त पौधों को निकालकर नष्ट कर दें। खरीफ की फसल के लिए टमाटर में बताए तरीके से मिर्च की भी नर्सरी में बिजाई करें। इनकी उन्नत किस्में एन पी 46ए, पंत सी-1, पूसा ज्वाला, हिसार शक्ति तथा हिसार विजय हैं। इसके लिए 400 ग्राम बीज की प्रति एकड़ आवश्यकता होगी।

### अगेती फूलगोभी

इस माह अगेती फूलगोभी (किस्म पूसा कातकी) की बिजाई नर्सरी में करें तथा पौध तैयार करें। अगेती फूलगोभी के लिए लगभग 400-500 ग्राम बीज एक एकड़ खेत के लिए काफी है। नर्सरी लगभग 20 सें.मी. ऊंची बनाएं तथा बिजाई से पहले बीज का उपचार करें (एक ग्राम थाइरम या कैप्टान प्रति 300 ग्राम बीज की दर से)। यदि बिजाई पिछले माह में की गई है तो उसकी उचित देखभाल करें। आर्द्रगलन से बचाने के लिए नर्सरी में पौध को 0.3 प्रतिशत कैप्टान के घोल से सींचें। समय पर खेत की तैयारी करें। नर्सरी में वर्षा का पानी न रुकने दें।

### भिण्डी

भिण्डी के नर्म फलों को नियमित रूप से तोड़ें व बाज़ार में बेचने के लिए भेजें। आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। हरे तेले व चित्तीदार सूण्डी से बचाव के लिए पहले बताई गई दवाइयों का इस्तेमाल करें। दवा के प्रयोग के बाद 8-10 दिनों तक फलों को काम में न लें। दवा के छिड़काव से पहले, सभी तैयार फलों को तोड़ लें।

खरीफ की फसल के लिए खेत की तैयारी करें। एक एकड़ खेत में 10 टन गोबर की खाद डालकर जुताई करें तथा बिजाई से पहले 12 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (50 कि.ग्रा. किसान खाद) तथा 25 कि.ग्रा. फास्फेट (150 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ की दर से दें। पोटेश खाद मिट्टी की जांच के आधार पर दें। खेत को क्यारियों में बांट लें। भिण्डी की विषाणु रोगरोधी किस्मों, वर्षा उपहार या हिसार उन्नत का चुनाव करें। एक एकड़ के लिए लगभग 6 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होगी। जड़ गलन नामक रोग की रोकथाम के लिए बिजाई करने से पहले बीजोपचार कैप्टान या बाविस्टिन नामक दवा से (एक ग्राम दवा प्रति 400 ग्राम बीज) कर लें। बिजाई कतारों में करें। कतारों की दूरी 45-60 सें.मी. रखें तथा पौधों में दूरी 30 सें.मी. रखें। कीड़ों की रोकथाम के लिए बैंगन के लिए बताई गई दवा का प्रयोग करें।

### तरबूज व खरबूजा

तरबूज व खरबूजा के पके फलों को तोड़कर बाज़ार में बेचने के लिए भेजें। इस महीने दोनों फसलें पककर तैयार हो जाती हैं तथा तुड़ाई का काम भी पूरा कर लिया जाता है। फलों के पकते समय सिंचाई न करें। जल्दी वर्षा होने पर इन फलों का मीठापन कम हो जाता है। फसल पूरी हो जाने के बाद खेत को खरीफ की अन्य फसलों के लिए तैयार करें।

### कहू जाति की अन्य सब्जियां

कहू जाति की अन्य सब्जियां, जैसे लौकी, तोरी, करेला, टिण्डा आदि



कच्चे फलों को तोड़कर नियमित रूप से बाज़ार भेजें। खरीफ की बेल वाली सब्जियों को लगाने के लिए इस महीने खेत तैयार करें। खेत तैयार करते समय 6 टन गोबर की खाद, 6 किलोग्राम नाइट्रोजन (25 किलोग्राम किसान खाद), 10 कि.ग्रा. फास्फोरस (60 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) व 10 कि.ग्रा. पोटाश (16 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रति एकड़ की दर से दें। खाद को नालियों में दें।

कट्टू जाति की फसलों में लाल भुण्डी (लालड़ी) से बचाव के लिए कार्बेरिल 2.5 प्रतिशत का धूड़ा 10 किलोग्राम प्रति एकड़ प्रयोग करें। इसके स्थान पर 100 ग्राम कार्बेरिल 50 घु. पा. या 25 मि.ली. साईपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 30 मि.ली. फेनवालेरेट 20 ई.सी. को 100 लीटर पानी में मिलाकर भी प्रति एकड़ छिड़काव कर सकते हैं। इस कीट की लटों से बचाव के लिए 1.6 लीटर क्लोरपाईरिफॉस 20 ई.सी. को बिजाई के एक महीने बाद सिंचाई के साथ लगाएं।

सफेद चूर्णी रोग से बचाव हेतु 8-10 किलोग्राम प्रति एकड़ बारीक गंधक के चूरे का धुरकाव या धूड़ा करें, धूड़ा सुबह या शाम के समय करें या 500 ग्राम घुलनशील गंधक (सलफैक्स) को 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। खरबूजे की फसल पर गंधक का धूड़ा न करें।

इन फसलों में अल, माईट, सफेद मक्खी और हरा तेला की रोकथाम के लिए 250 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। यदि फसल में फल मक्खी का प्रकोप हो तो 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 500 ग्राम कार्बेरिल 50 घु. पा. या 250 मि.ली. फेनीट्रोथियान 50 ई.सी. व 1.25 किलोग्राम गुड़ को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

### शकर कन्दी

शकरकन्दी की काटों को इस माह भी लगाया जा सकता है। खेत की तैयारी पिछले माह बताए गए तरीके से करें तथा खरपतवार निकालें।

### खरीफ प्याज़

खरीफ प्याज़ (किस्म एन-53 एवं एग्रीफाउण्ड डाकरैंड) के बीज की नर्सरी में बिजाई करें। इसके लिए लगभग 5-6 किलोग्राम बीज की एक एकड़ के लिए आवश्यकता होगी। इसके लिए जून का दूसरा पखवाड़ा उचित समय है। नर्सरी ऐसे स्थान पर बनाएं जहां वर्षा का पानी न रुकता हो। अधिक गर्मी से बचाव के लिए नर्सरी की देखभाल आवश्यक है। खरपतवार निकालें, नियमित सिंचाई करें तथा बीमारी से बचाएं।

### अरबी

फसल की नियमित सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें। खड़ी फसल में नाइट्रोजन वाली खाद दो बार देने की आवश्यकता होती है- प्रथम बार बिजाई के लगभग 3-4 सप्ताह बाद तथा दूसरी मात्रा इतने ही दिनों के अंतर पर। अरबी की नई बिजाई भी की जा सकती है। खेत की तैयारी व लगाने की विधि पहले बता दी गई है।

### पालक

पालक की फसल की नियमित सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें और कटाई लायक होने पर काटें। पालक की नई बिजाई भी तैयार क्यारियों में की जा सकती है।

### मूली

पूसा चेतकी मूली की किस्म को गर्मी में लगाया जा सकता है। यदि आपने इसकी बिजाई पहले कर रखी है तब फसल की सिंचाई करें, निराई करें तथा जड़ों पर मिट्टी चढ़ा दें। इसकी फसल बिजाई के बाद लगभग 40 दिनों में तैयार हो जाती है। कीड़ों आदि का आक्रमण होने पर मैलाथियान या कार्बेरिल जैसी दवाओं का छिड़काव करें। जड़ों को नर्म अवस्था में, कड़ी होने से पहले उखाड़ लें तथा धोकर बाज़ार भेजें। नई बिजाई भी इसी महीने की जा सकती है।

### अन्य सब्जियां

अन्य सब्जियों, जैसे ग्वार व लोबिया, की फसलों की नियमित रूप से सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें। नर्म फलियों को तोड़कर बाज़ार में भेजें। कीट व बीमारियों से बचाव के लिए कीटनाशक व फफूंदनाशक दवाओं का प्रयोग करें तथा प्रयोग के 8-10 दिन बाद तक फसल को खाने के काम में न लाएं। ग्वार व लोबिया की खरीफ की फसल लेने के लिए खेत की तैयारी करें तथा बिजाई करें।



## फलों में

### नींबूवर्गीय फल

नये पौधों को गर्मी से बचाएं। पुराने पौधों के तनों पर 3 कि.ग्रा. चूने में 2 कि.ग्रा. नीला थोथा को 30 लीटर पानी में अलग-अलग भिगोकर और छानकर मिलाकर लेप करें ताकि सूर्य की तेज़ रोशनी से तने को क्षति न पहुंचे। यह घोल हर बार ताज़ा बनाकर ही प्रयोग में लाएं। इसके अतिरिक्त सिंचाई भी करते रहें व सिंचाई के पश्चात मल्लिग अवश्य करें। जस्ते की कमी व फल गिरने से बचाने के लिए 5 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट और 2.5 कि.ग्रा. बुझा हुआ चूना 1000 लीटर पानी में घोल कर पौधों पर छिड़काव करें। इसी प्रकार नाइट्रोजन की कमी को पूरा करने के लिए 1-2 कि.ग्रा. यूरिया 100 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। पत्तों में लीफ माईनर के नियंत्रण के लिए 750 मि.ली. मेटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। नए व छोटे पौधों को लू से बचाएं, नियमित सिंचाई कर उचित नमी बनाए रखें।

### अंगूर

नई या एक साल पुरानी बेलों में 25-30 ग्राम यूरिया प्रति बेल हर दूसरी सिंचाई पर देते रहें, सिंचाई भी करते रहें व फालतू बढ़वार रोकते रहें। बेलों की सिंचाई 10 दिन के अंतर पर करते रहें लेकिन जब फल तोड़ना

शुरू करें तो सिंचाई करना बंद कर दें और फल खत्म होने पर सिंचाई ज़रूर करें। पुरानी बेलों में लगे फलों को चिड़ियों से बचाएं और पके फलों को गुच्छों को सावधानी से तोड़कर बाज़ार भेजें।

बालों वाली सूण्डी व अन्य कीटों की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. डाइक्लोरोवास 76 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। थ्रिप्स के लिए 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 150 मि.ली. फेनवालेरेट 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

### बेर

इस महीने के दूसरे सप्ताह तक बेर की कटाई-छंटाई का काम समाप्त कर लें और पौधों की छतरी तक गुड़ाई करें। प्रति पेड़ लगभग 100 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद व सिंगल सुपर फास्फेट 2.5 कि.ग्रा. अच्छी तरह मिलाकर गहरी सिंचाई करें। बत्तर आने पर गहरी जुताई करें।

### अमरूद

नए पौधों को गर्मी व लू से बचाएं और सिंचाई सप्ताह में एक बार अवश्य करें। पौधों की सूखी शाखाओं को निकाल दें। फल मक्खी के लिए फिरोमोन ट्रैप का प्रयोग करें।

### आड़ू

इस महीने के पहले सप्ताह तक शरबती और मैचलैस किस्म के फल पकने शुरू हो जाएंगे इसलिए उनकी तुड़ाई का प्रबंध करें और हल्की सिंचाई भी करते रहें और तुड़ाई से पहले सिंचाई बंद कर दें। नए पौधों के तनों के साथ मिट्टी चढ़ाएं।

### आम

बागों की सिंचाई नियमित रूप से करते रहें। छोटे पौधों को गर्मी व लू से बचाएं। नाइट्रोजन की बाकी बची मात्रा अगर पिछले महीने नहीं डाली है तो इस महीने डालें। पके हुए फलों की ग्रेडिंग करके बाज़ार में भेजें।



## पशुओं में

### गाय-भैंस

- पिछले माह के अनुसार पशुओं को अत्यधिक तापक्रम, धूप व लू से बचाने के उपाय करें व इस महीने में भी पशुपालकों का विशेष रूप से गर्मी प्रबंधन के उपाय करना उद्देश्य रहना चाहिए।
- जैसा कि मई मास के कार्य में बताया गया था कि पशुओं को उच्च ऊर्जा के साथ-साथ सुपाच्य भोजन, बाई-प्रोटीन (मछली-चूरा इत्यादि) का उपयोग, गेहूँ चोकर व जौ का पशु-आहार में बढ़ाना, दिन में कम से कम 4-5 बार नमक सहित पानी देना, 2-3 बार नहलाना, खनिज मिश्रण का उपयोग, हवादार आवास, शेड़ में फव्वारों वाले पंखे/कूलर आदि का इस्तेमाल, रात्रिकाल/सांयकाल में भोजन व्यवस्था आदि कार्य पशुपालक कर सकते हैं।

- ‘पाइका’ ग्रस्त पशुओं को पेट के कीड़े मारने की दवा देकर लवण-मिश्रित आहार प्रदान करें, ताकि ‘पाइका’ रोग के लक्षणों से छुटकारा प्राप्त हो।
- पशुओं को हरा चारा नहीं मिल रहा हो तो ‘विटामिन ए’ के इंजेक्शन लगवाएं।
- पशुओं को विटामिन एवं लवण-मिश्रित आहार दें।
- घास की रोपाई हेतु खेत की तैयारी करें।
- ग्रीष्मकाल में पशुओं की भूख कम हो सकती है व पशु कम भोजन खाते हैं। अतः उन्हें कम भोजन में अधिक ऊर्जा की ज़रूरत हो सकती है। अतः उन्हें तेल इत्यादि भी दे सकते हैं। इसके साथ-साथ पशुओं का पाचन तंत्र भी बिगड़ सकता है, अतः उन्हें सुपाच्य भोजन एवं पर्याप्त मात्रा में पानी भी दें।
- गेहूँ की कटाई के बाद नई तूड़ी आने से पशुओं के पेट में बंधा पड़ सकता है। अतः पशुओं का आहार एकदम से न बदलें और बंधा पड़ने पर चिकित्सीय सलाह से हींग, हरड़, सेंधा नमक, मोटी सौंफ इत्यादि दें।
- गलघोंटू व मुँह-खुर के टीकाकरण सुनिश्चित करें।
- पशुओं को पेट में कीड़े मारने की दवा दें।
- गर्मियों के मौसम में पैदा की गई ज्वार में ज़हरीला पदार्थ हो सकता है, जो पशुओं के लिए हानिकारक है। अप्रैल में बिजाई की गई ज्वार के खिलाने से पहले 2-3 बार पानी अवश्य दें।
- बरसात के मौसम में चारे की अच्छी पैदावार लेने के लिए ज्वार व मक्का की बिजाई करें।
- पिछले माह में भेड़ के ऊन कतरने का कार्य न किया हो तो इस माह में कर लें।
- भेड़ के शरीर को ऊन कतरने के 21 दिन बाद, बाह्य परजीवियों से बचाने के लिये कीटाणुनाशक घोल से भिगोएं।

### भेड़ें

भेड़ों में पुट्टे सूजने के रोग से बचाव का टीका अपने समीपस्थ पशु चिकित्सालय से लगवा दें। भेड़ों के पेट के कीड़े मारने के लिए अपने पशु चिकित्सक की सलाह से उन्हें समय-समय पर दवाई पिलाएं।

भेड़ तथा ऊन विकास केन्द्र में बने डिपिंग टैंक में अपनी भेड़ों को नहलाएं। इस माह में भेड़ों का प्रजनन चलेगा। अतः अच्छी नस्ल के बच्चे उत्पन्न कराने हेतु अच्छी नस्ल के मेंढ़े भी भेड़ तथा ऊन विकास केन्द्र से प्राप्त हो सकते हैं।

### फार्म प्रबन्ध

कृषि उत्पादों का अधिक मूल्य प्राप्त करने के लिए उचित ढंग से मण्डीकरण करें। रबी फसलों की जिन्सों का अच्छा भाव लेने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें।

- कटाई के बाद किसान, अपनी उपज को एक साथ ही मण्डियों में न

लाकर उसे धीरे-धीरे लाएं, जिससे उन्हें कठिनाई न उठानी पड़े तथा उनकी उपज का सही मूल्य उन्हें मिल सके।

2. फसल को जहां तक संभव हो सरकारी संस्था अथवा सहकारी सोसायटी द्वारा बेचें तथा यह ध्यान रखें कि उपज का न्यूनतम मूल्य प्राप्त हो।
3. अच्छी कीमत प्राप्त करने के लिए उपज को साफ-सुथरा करके तथा अच्छी बोरियों में भरकर मण्डी में लाएं। इससे मण्डी में भराई-सफाई का अतिरिक्त खर्चा नहीं लगेगा।
4. किसान को अधिक कीमत प्राप्त करने के लिए बढिया और घटिया किस्म की फसलों को अलग-अलग बेचना चाहिए।
5. किसानों को चाहिए कि वह अपनी फसल मण्डी में तोलकर ले जाएं और बाद में पड़ताल के लिए तोल कराएं।
6. फसल को ग्रेड कर लेने के बाद उसकी उचित कीमत लगती है। कृषि विभाग द्वारा प्रमुख मण्डियों में कृषि उत्पादों की ग्रेडिंग के लिए केन्द्र स्थापित किए गए हैं। इन केन्द्रों पर किसानों की उपज की निःशुल्क ग्रेडिंग सुविधा उपलब्ध है।
7. विभिन्न जिन्सों (फसलों) के मिश्रण को मण्डी में नहीं ले जाना चाहिए। उनको अलग-अलग बेचने पर ही अधिक लाभ होता है। जैसे गेहूँ व जौ के मिश्रण की बजाय उन्हें अलग-अलग बेचने पर ही अधिक लाभ होता है।
8. फसल बेचने से पहले मण्डी के भाव की जानकारी लेना अति आवश्यक है। किसान को विभिन्न मण्डियों के भाव की जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। यह जानकारी अखबार, रेडियो का कृषि कार्यक्रम अथवा व्यक्तिगत संपर्क के माध्यम से प्राप्त हो सकती है।
9. जो किसान भाई अपनी जिन्स को रोककर देर से बेचने की क्षमता रखते हैं तथा जिनके पास जिन्स के भण्डारण की उचित व्यवस्था है उन्हें फसल काटते ही मण्डी लेकर नहीं पहुंचना चाहिए। जिन्स की कम आवक होने पर बेचने से भाव अच्छे मिल जाते हैं व परेशानी भी कम उठानी पड़ती है।



## घर-आंगन में

गर्मी के मौसम में बच्चों के शरीर से दस्त एवं उल्टियों के रूप में लगातार पानी निकलने से बच्चों में निर्जलन हो जाता है जिससे बच्चे की आंखें धंस जाती हैं तथा निर्जलन के गम्भीर मामलों में सिर का तालू गिरने लगता है। बच्चा पेशाब नहीं करता तथा सुन्न पड़ जाता है तथा बेहोश हो जाता है। बच्चा श्वास भी जल्दी-जल्दी तथा कठिनाई से लेता है। माँ को ऐसी स्थिति आने ही नहीं देनी चाहिए। अगर बच्चे को चार-पांच पतले दस्त आ गए हों तो शीघ्र ही उसे नमक एवं चीनी का घोल बनाकर देना

चाहिए। इससे उसमें पानी की कमी नहीं आएगी तथा बच्चे की हालत भी सुधरेगी। नमक व चीनी का घोल बनाने के लिए तीन चुटकी भर नमक, एक मुट्ठी भर चीनी, उबला और ठंडा किया हुआ पांच कप पानी में अच्छी तरह मिलाएं। यदि उपलब्ध हो तो आधे खट्टे नींबू का रस भी मिलाएं।

अतिसार में बच्चों को खिलाना-पिलाना जारी रखना बहुत जरूरी है। खाना-पिलाना जारी रखने से बच्चे जल्दी अच्छे हो जाते हैं और कुपोषण का शिकार नहीं होते। नमक और चीनी के घोल के साथ-साथ छोटे बच्चे का स्तनपान भी जारी रखें। बड़े बच्चे जो गाय-भैंस का दूध पीते हैं उन्हें बिना पानी मिलाए दूध देना जारी रखें। इसके अतिरिक्त चावल का पानी, दाल का पानी, मूंग की धुली हुई दाल, ताजा बना हुआ खाना जैसे खिचड़ी, दलिया आदि थोड़ा सा घी अथवा तेल डालकर ही पकाएं। दही, केला, और उबला हुआ आलू भी दें। यदि इतना कुछ करने पर भी बच्चे की स्थिति में सुधार नहीं आता तो आप नज़दीकी हस्पताल से संपर्क स्थापित करें।

इस महीने में अत्यधिक गर्मी होने के कारण ज्यादा से ज्यादा शुद्ध जल का प्रयोग करें। ताकि आप अपने आपको दूषित जल से होने वाली बीमारियों से बचा सकें। शुद्ध जल के लिए आप जनता वाटर फिल्टर का प्रयोग कर सकते हैं। इसको कैसे बनाया जाए, इसके लिए आप अपने क्षेत्र में कार्यरत जिला विस्तार विशेषज्ञ (गृह विज्ञान) से संपर्क स्थापित करें। इसके अतिरिक्त आप पानी को साफ करने के लिए क्लोरीन की गोलियां नज़दीकी हस्पताल से भी ले सकते हैं।

- कच्चे आम के पत्ते का प्रयोग करके आप अपने आपको एवं परिवार को लू से बचा सकते हैं।
- सिरके में प्याज का प्रयोग करके आप अपने आपको एवं परिवार को लू से बचा सकते हैं।



## आवश्यक सूचना

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार स्थित किसान सेवा केन्द्र में किसानों हेतु सप्ताह में तीन दिन सोमवार, बुधवार एवं शुक्रवार को 10 से 12 बजे तक निःशुल्क फोन सुविधा (हैल्प लाइन) फोन नं. 1800-180-3001 पर उपलब्ध है जिसमें वैज्ञानिकों से कृषि-संबंधी परामर्श किया जा सकता है। यदि किसी जगह से यह फोन सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो किसान भाई 01662-232768 पर सशुल्क फोन करके उपर्युक्त दिनों में इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल में भी सोमवार, बुधवार, शुक्रवार 10 से 12 बजे तक फोन नं. 1800-180-4002 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, ऊचानी (करनाल) में भी मंगलवार व बृहस्पतिवार 10 से 11 बजे तक फोन नं. 1800-180-3111 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।



# धान की फसल में सूत्रकृमि (निमेटोड) की समस्या एवं रोकथाम

✍ विनोद कुमार, बबीता कुमारी एवं अनिल कुमार

सूत्रकृमि विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

धान विश्व की प्रमुख खाद्यान्न फसलों में से एक है। विश्व में भारत, चीन के बाद दूसरा सबसे बड़ा धान उत्पादक देश है। भारत में आधी जनसंख्या अपने भोजन के लिए धान पर निर्भर है। भारत में धान का 59 प्रतिशत क्षेत्र सिंचित है और शेष 41 प्रतिशत क्षेत्र वर्षा पर आधारित है। हरियाणा, पंजाब, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश में धान के अधिकांश क्षेत्र सिंचित हैं। धान के अधिक मूल्य पर बिकने एवं हमेशा अधिक मांग में रहने के कारण इसकी खेती किसानों के लिये फायदे का सौदा रही है, अन्य फसलों की तरह कई पौधे-परजीवी निमेटोड धान से जुड़े होते हैं एवं फसल को नुकसान पहुंचाते हैं। सूत्रकृमि की वजह से धान का जड़गाँठ रोग (मलायडोंगाइनीप्रेमिनिकोला) व धान का जड़ सूत्रकृमि (हर्शमेनियलाओराईजी) धान की महत्वपूर्ण बीमारी बन गई है जो धान के उत्पादन को खतरा माना जाता है।

## सूत्रकृमि क्या है ?

सूत्रकृमि, जो कि गोलकृमि या अंग्रेजी में निमेटोड भी कहलाते हैं। पौधों के सूत्रकृमि छोटे, पतले, खंडरहित धागे की तरह के द्विलिंगी जंतु हैं। ये नंगी आखों से दिखाई नहीं देते इसलिए इनकी ओर किसानों का ध्यान कम ही जाता है। इनमें से अनेक पौधों की जड़ों से अपना भोजन ग्रहण करते हैं तथा कुछ पौधों के ऊपरी भागों पर निर्भर करते हैं। धान की फसल में सूत्रकृमि धान का जड़गाँठ रोग उत्पन्न करता है, जिसकी पहचान आम किसान नहीं कर पाते एवं अन्य रोगनाशक रसायनों का छिड़काव कर रोकथाम करने का प्रयास करते हैं, जिससे उनका श्रम, पैसा व समय बर्बाद होता है एवं सफलता भी नहीं मिलती। अतः इन सूत्रकृमियों की पहचान करना जरूरी है एवं इनसे होने वाले रोगों की पहचान कर इन्हें विभिन्न विधियों द्वारा नियंत्रित किया जाना चाहिये। अतः इसकी आवश्यकता को देखते हुए इस लेख में इनके रोगजनक, रोग के लक्षण एवं रोकथाम के उपाय निम्नानुसार दिये जा रहे हैं।

## रोग : धान का जड़गाँठ सूत्रकृमि

**रोगजनक :** जड़गाँठ सूत्रकृमि (मलायडोंगाइनीप्रेमिनिकोला)

धान के अलावा, यह निमेटोड उत्तरी भारत में तथा अन्य रबी एवं खरीफ के खरपतवारों पर अपना जीवनचक्र पूरा करता है। धान का जड़-गाँठ निमेटोड, उन क्षेत्रों में बड़ा खतरा बन गया है जहां जल बचाव प्रणाली द्वारा धान का उत्पादन किया जाता है। निमेटोड संक्रमण के कारण वर्षा और जल तनाव की स्थिति में लगभग 21 प्रतिशत की उपज की हानि और ऊंची चट्टानों में 16-32 प्रतिशत हानि दर्ज की गई है। पौधों में रूट-गाँठ की समस्याएं सबसे ज्यादा नर्सरी में बढ़ रही हैं तथा रोग ग्रसित पौधे खेत में लगाने से यह बीमारी सारे खेत में फैल जाती है। धान-गेहूं फसल चक्र में गेहूं ही वजह है जो कि जड़ों में गाँठ सूत्रकृमि की आबादी में वृद्धि करता है।

## लक्षण :

- शुरुआत में पौधों का रंग पीला हो जाता है और बाद में पत्तियां सूखने लगती हैं। • प्रभावित फसल छोटी, कमजोर व पीली रह जाती है।
- पौधों में फुटाव कम होता है। • जड़ों पर हुकनुमा गाँठें बन जाती हैं।
- पैदावर में कमी आ जाती है।

## रोकथाम :

- मई-जून में 10-15 दिन के अंतराल पर 2-3 गहरी जुताइयां करें।
- पनीरी वाले स्थान में हल्का पानी देकर 3-4 सप्ताह तक पतली सफेद पॉलिथिन से ढककर सील कर दें।
- सूत्रकृमि ग्रसित खेत में धान व सुग्राही फसलें न लेकर कपास, ज्वार, ग्वार आदि उगाएं।
- स्वस्थ पनीरी (बिना गाँठ) का ही प्रयोग करें।
- पनीरी लगाने वाले स्थान को हर बार बदलते रहें।
- अगर सारे खेत में रोग है तो दो से तीन साल तक धान की फसल न लगाएं।
- खेत एवं नर्सरी के स्थान को खरपतवार से मुक्त रखें क्योंकि यह सूत्रकृमि बहुत से खरपतवारों पर भी पनपता है।

## रोग/धान का सूत्रकृमि रोग

**रोगजनक :** धान का जड़ सूत्रकृमि (हर्शमेनियलाओराईजी)

हर्शमेनियला अर्थात धान जड़ सूत्रकृमि, धान के प्रमुख कीटों में से एक है। यह सूत्रकृमि भी पूरे भारत वर्ष में धान उगाने वाले राज्यों में पाया जाता है। यह धान की फसल पर परजीवी है जो कि सम्पूर्ण धान उगाने वाले क्षेत्र में विशेष रूप से निचले भागों एवं सिंचित धान के खेतों में पाये जाते हैं।

## लक्षण :

- प्रभावित पौधे बौने रह जाते हैं और फुटाव कम होता है।
- बालियां 7-8 दिन में निकलती हैं तथा पकने में भी अधिक समय लेती हैं।
- जड़ें छोटी रह जाती हैं और उन पर भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। बाद में पूरी जड़ गहरे भूरे रंग की हो जाती है।
- उपज में काफी कमी आ जाती है।

## रोकथाम :

- पनीरी बोने से पहले क्यारियों में फ्यूराडान-3 (कार्बोफ्यूथ्रान) 13 किलोग्राम प्रति एकड़ की दर से डालें।
- फसल चक्र बदल कर जैसा कि प्याज, लहसुन, सरसों आदि उगाकर इन सूत्रकृमियों की संख्या कम की जा सकती है।
- इस सूत्रकृमि से निजात पाने के लिए खेतों की मई-जून के महीनों में 10-10 दिन के अंतराल पर गहरी जुताई करें पर सुहागा न लगाएं ताकि सूत्रकृमि के अंडे व लार्वा इत्यादि सूर्य की गर्मी से नष्ट हो जाएं।
- खेत को खरपतवारों से मुक्त रखें।
- इसके अलावा, किसानों को सलाह दी जाती है कि वे धान की नर्सरी लगाने से पूर्व मिट्टी की सूत्रकृमि हेतु जाँच कराएं, धान-गेहूं फसल चक्र में जड़-गाँठ निमेटोड के साथ सम्बन्धित सूत्रकृमि प्रबंधन पैकेज का पालन करें।



# हरे चारे के लिए लोबिया की सस्य क्रियाएं

सतपाल, डी.एस. फोगाट एवं उमा देवी

चारा अनुभाग, आनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

लोबिया, गर्मी व खरीफ मौसम की फलीदार, पौष्टिक एवं स्वादिष्ट चारे वाली फसल है। इसकी खेती प्रायः सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इसे हरे चारे के अलावा दलहन, हरी फली (सब्जी) व हरी खाद के रूप में अकेले अथवा मिश्रित फसल के तौर पर उगाया जाता है। अगर इसे ज्वार तथा बाजरा के साथ उगाएं तो इन फसलों के चारे की गुणवत्ता बढ़ जाती है। गर्मियों में इसे दुधारू पशुओं की दूध देने की क्षमता बढ़ाने के लिए अवश्य खिलाना चाहिए। इसके चारे में औसतन 15-20 प्रतिशत प्रोटीन और सूखे दानों में लगभग 20-25 प्रतिशत प्रोटीन होती है।

लोबिया से हरे चारे की अधिक पैदावार लेने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए।

## अच्छी किस्म का चुनाव :

**सी एस-88 :** यह लोबिया की सीधी बढ़ने वाली किस्म है जिसके पत्ते गहरे हरे रंग के तथा चौड़े होते हैं। यह किस्म विभिन्न रोगों से मुक्त है। विशेषकर, पीले मौजेक विषाणु रोग के लिए। इस किस्म की बिजाई सिंचित एवं कम सिंचाई वाले क्षेत्रों में गर्मी तथा खरीफ के मौसम में की जा सकती है। इसका हरा चारा लगभग 55-60 दिनों में कटाई योग्य हो जाता है। इसके हरे चारे की पैदावार लगभग 140-150 क्विंटल प्रति एकड़ है। यदि फसल बीज के लिए लेनी हो तो लोबिया की बिजाई का सही समय मध्य जुलाई से अगस्त का प्रथम सप्ताह है।

## मिट्टी व खेत की तैयारी :

लोबिया की काशत के लिए दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है परन्तु रेतीली दोमट मिट्टी में भी इसे आसानी से उगाया जा सकता है। ज़मीन समतल एवं अच्छे जल निकास वाली होनी चाहिए।

## बिजाई का समय :

लोबिया की बुवाई मध्य मार्च से लेकर जुलाई अन्त तक कर सकते हैं। गर्मियों में सबसे अच्छा समय मध्य मार्च से लेकर मई का पहला सप्ताह है, जिससे इसका हरा चारा चारे की कमी वाले समय में उपलब्ध हो जाता है। खरीफ में इसकी बिजाई मध्य जून से जुलाई अन्त तक कर सकते हैं।

## बीज की मात्रा व बिजाई का ढंग :

पौधों की उचित संख्या व बढ़वार के लिए 16-20 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ उचित रहता है। पंक्ति से पंक्ति का फासला 30 सें.मी. रखकर पोरे अथवा ड्रिल द्वारा बिजाई करें। लेकिन जब मिश्रित फसल बोई जाए तो लोबिया के बीज की एक तिहाई मात्रा प्रयोग करें। लोबिया के लिए सिफारिश किए गए राइजोबियम कल्चर से बीज का उपचार करके बिजाई करें।

## उर्वरक :

दलहनी फसल होने के कारण, लोबिया में नाइट्रोजन की अधिक आवश्यकता नहीं होती। अच्छी बढ़वार के लिए 10 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति एकड़ बिजाई के समय डालें। बिजाई से पहले सिंचित इलाकों में 25 किलोग्राम फास्फोरस तथा बारानी क्षेत्रों में 12 किलोग्राम फास्फोरस पोरा या ड्रिल से डालें। मिश्रित खेती में उर्वरक फसल की सिफारिश के अनुपात में ही डालें।

## निराई-गुड़ाई :

गर्मी में बोई गई फसल में एक निराई-गुड़ाई पहली सिंचाई देने के बात बत्तर आने पर करें। मानसून की वर्षा पर बोई गई फसल में एक गुड़ाई बिजाई के लगभग 25 दिन बाद करें।

## सिंचाई और जल निकास :

मार्च-अप्रैल में बोई गई फसल में पहली सिंचाई बिजाई के 20-25 दिन बाद तथा मई में बोई गई फसल में पहली सिंचाई बिजाई के 15-20 दिन बाद करें। आगे की सिंचाइयां 15-20 दिन के अन्तराल पर करें। इस तरह कुल मिलाकर 3-4 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। बरसात के मौसम में बीजी गई फसल में आमतौर पर सिंचाई की जरूरत नहीं होती है। जल-निकास का उचित प्रबन्ध करना आवश्यक है।

## कीड़ों से बचाव :

सूखे मौसम में लोबिया पर हरा तेला आक्रमण करता है। इसकी रोकथाम के लिए 200 मिलीलीटर मैलाथ्रिया 50 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। लेकिन यह विशेष ध्यान रखें, कि छिड़काव के 7-10 दिन बाद तक इस फसल का हरा चारा पशुओं को न खिलाएं।

## कटाई :

लोबिया से दो कटाई ली जा सकती हैं - पहली कटाई बिजाई के 55 दिन बाद व दूसरी कटाई फसल में फूल आने पर। लोबिया की हरे चारे के लिए कटाई 50 प्रतिशत फूल आने से लेकर 50 प्रतिशत फलियां बनने तक पूरी कर लेनी चाहिए। अन्यथा इसके बाद इसका तना सख्त व मोटा हो जाता है और चारे की पौष्टिकता व स्वादिष्टता दोनों ही प्रभावित होती हैं।

इसके हरे चारे को अकेले खिलाने की बजाए सूखी तूड़ी या ज्वार, बाजरा, मक्की के हरे चारे या इनकी कड़वी के साथ मिलाकर खिलाएं।



एक कदम स्वच्छता की ओर

## कपास में खरपतवारों की रोकथाम-कैसे करें

✍ विरेन्द्र सिंह हुड्डा, मीनाक्षी सांगवान एवं समुन्द्र सिंह

सस्य विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कपास हरियाणा प्रान्त के दक्षिणी पश्चिमी क्षेत्रों में उगाई जाने वाली खरीफ की मुख्य नकदी फसल है। कपास की फसल, खासकर बी.टी. कपास में खूड से खूड व पौधे से पौधे का फासला ज्यादा होने व शुरू की अवस्था में कपास के पौधों की बढवार कम होने के कारण, खरपतवारों को उगने व पनपने का अनुकूल वातावरण मिलता है जिसके कारण कपास की फसल को भारी नुकसान पहुंचता है। यह खरपतवार केवल कपास की बढवार को ही नुकसान नहीं पहुंचाते अपितु मिलीबग, सांटा सूंडी व सफेद मक्खी जैसे कीड़ों को आश्रय दे कर फसल को नुकसान पहुंचाते हैं।

### कपास के मुख्य खरपतवार:

**संकरी पत्ती वाले :-** मकड़ा, छोटा सांवक, बड़ी सांवक, मधाना, तकड़ी घास, कुत्ता घास, चिड़ियों का दाना आदि।

**चौड़ी पत्ती वाले :-** सांठी (इटसिट), कोंधरा, भाखड़ी, हजारदाना, मकरू बेल, चौलाई, पलपोटण, कागारोटी, जल भंगड़ा, कुकर भंगड़ा, झिरणीया, गंधेली, कनकुआ, चिलमिल आदि।

**सदाबहार :** हिरणखुरी, डीला (मोथा), मोथा, बरु, कांस, बुई, ढाब आदि।

उपरोक्त सभी खरपतवारों में सांठी, कोंधरा, डीला (मोथा), मकड़ा व सांवक सबसे ज्यादा नुकसानदायक खरपतवार हैं। सांठी खरपतवार कपास की फसल में 2-3 बार उगता है और उगने के 15 दिन बाद ही इस पौधे में फूल आ जाते हैं। इसका एक पौधा बढकर ज़मीन पर गलीचा-सा बना देता है और एक पौधे से लगभग 20 हज़ार बीज पैदा होते हैं जो कि ज़मीन पर गिरने के तुरन्त बाद भी उगने की क्षमता रखते हैं।

### खरपतवारों की रोकथाम:

- कपास की फसल में पहली सूखी गुड़ाई बिजाई के 20-25 दिन बाद व दूसरी पहला पानी लगाने के बाद करें।
- जब फसल 50- 60 दिन की हो जाये तो बैलों वाली त्रिफाली से या ट्रैक्टर के पीछे कल्टीवेटर लगाकर हलौड़ दें।
- बिजाई से पहले ट्रैप्लान 48 ई.सी. (ट्राईफ्लुरालिन) की 800 ग्राम मात्रा या बिजाई के तुरन्त बाद 2-3 दिन के अन्दर स्टॉम्प 30 ई.सी. (पेंडीमेथालिन) की 1.5 लीटर मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करने से सांठी, कोंधरा, सांवक व मकड़ा खरपतवारों का अच्छा नियन्त्रण हो जाता है।
- कपास में खरपतवारों के नियन्त्रण हेतु, बिजाई के 40-45 दिन बाद सूखी गोड़ाई के पश्चात् ट्रैप्लान 48 ई. सी. (ट्राईफ्लुरालिन) की 800 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ या स्टॉम्प 30 ई. सी. (पेंडीमेथालिन) की 1.5 लीटर मात्रा प्रति एकड़ को 250-300 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें तत्पश्चात् फसल में सिंचाई लगायें।

(शेष पृष्ठ 26 पर)

## सल्फर: एक अहम पोषक तत्व

✍ सुमन चौधरी<sup>1</sup>, रिकू धनखड़<sup>2</sup> एवं स्नेह गोयल<sup>3</sup>

सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम के बाद सल्फर को चौथे प्रमुख तत्व के रूप में मान्यता प्राप्त है। यह फसलों में मुख्य रूप से प्रोटीन, तेल, विटामिन और तेज़ सुगंध (सरसों का तेल और प्याज़ का रस) वाले यौगिक पदार्थों के निर्माण का कार्य करता है। प्रमुख रूप से सल्फर के दो रूप पाये जाते हैं- ऑर्गेनिक और इनऑर्गेनिक रूप। सल्फर, आग्नेय और तलछटी चट्टानों में सल्फाइड के रूप में होता है। इसके अलावा यह ऑर्गेनिक तौर पर मिट्टी में पौधों के अवशेष, औद्योगिक अपशिष्ट, समुन्द्र के पानी और वातावरण में गैसीय उत्सर्जन के रूप में मौजूद है। प्राकृतिक परिस्थितियों में सल्फर का मुख्य स्रोत ऑर्गेनिक पदार्थ है। मिट्टी में भी 95 प्रतिशत से अधिक सल्फर ऑर्गेनिक रूप में ही मौजूद है। दूसरी ओर इन ऑर्गेनिक सल्फर यौगिक में मुख्यतः हाईड्रोजन सल्फाइड, सल्फेट, सल्फाइट, मौलिक सल्फर, टैट्राथायोनेट, थॉयोसल्फेट इत्यादि हैं।

सल्फर की कमी भारत सहित 70 से अधिक देशों में सूचित की गई है। भारत में गंगा के मैदान, लाल और पहाड़ी मिट्टी सल्फर की कमी से ग्रसित है। निरंतर रूप से सल्फर युक्त उर्वरकों और जैविक खाद के कम उपयोग के कारण हरियाणा के कई हिस्सों में सल्फर की कमी देखी गई है। रेवाड़ी जिले में सर्वाधिक और सिरसा में सबसे कम सल्फर की कमी पाई गई है।

### फसलों और पौधों के लिए सल्फर की भूमिका:

- सल्फर पौधों की जड़ों की वृद्धि और बीज के निर्माण का कार्य करता है।
- इसकी मुख्य आवश्यकता सल्फर युक्त अमीनो एसिड जैसे मिथियोनिन (21 प्रतिशत सल्फर), सिस्टीन (26 प्रतिशत सल्फर) और सिस्टाइन (27 प्रतिशत सल्फर) के बनने में पड़ती है और ये तीनों ही प्रोटीन का प्रमुख घटक हैं।
- सल्फर क्लोरोफिल, ग्लूकोसाइड, ग्लूकोसिनोलेट्स (सरसों का तेल) के बनने में उपयोगी हैं। यह एंजाइम्स और सल्फाहाइड्रल को सक्रिय करता है जो कि प्याज़ और तेलों के तीखेपन का कारण है।
- सल्फर आवश्यक विटामिनों जैसे बायोटिन और थाइमीन (बी1) और सह कारक जैसे कॉ-एंजाइम ए के संश्लेषण के लिए जरूरी है।

**नोट :** सल्फर तिलहन फसलों के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि इन फसलों को अनाज फसलों की तुलना में अधिक सल्फर की आवश्यकता होती है।

### मिट्टी में सल्फर की कमी के प्रमुख कारण :

- आमतौर पर एन, पी, के उर्वरकों पर ज्यादा ध्यान देना और सल्फर वाले उर्वरकों का प्रयोग नहीं करना।

<sup>1,2</sup> छात्राएं, सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग

<sup>3</sup> प्राध्यापिका, सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग



- रासायनिक उर्वरकों का नियमित प्रयोग और जैविक खाद की अनदेखी।
- एक साल में एक ही क्षेत्र से अनेक फसलें लेना और साथ ही प्रमुख फसल भाग के साथ उसके सभी अवशेष भागों को हटा देना।
- रेतीली बनावट वाली मिट्टी जिसमें (कम मिट्टी सामग्री (क्ले), कम सतह क्षेत्र) और कम ऑर्गेनिक पदार्थ वाली मिट्टी मुख्यतः उच्च वर्षा क्षेत्रों में जहाँ नियमित तौर पर लिचिंग होती है, सल्फर की कमी की सम्भावना ज्यादा होती है।
- ज्यादा उपज वाली फसलें उगाना।
- सल्फर युक्त कीटनाशक और कवकनाशक का कम उपयोग करना।
- सिंचाई के पानी का विवेकहीन उपयोग।
- ऊर्जा संयंत्रों और विभिन्न औद्योगिक स्रोतों से सल्फर डाई-ऑक्साइड गैस का कम उत्सर्जन।

#### फसलों में सल्फर की कमी की पहचान कैसे करें:

मिट्टी में सल्फर की कमी को मिट्टी परीक्षण केंद्रों से परीक्षण कराके पहचाना जा सकता है। चूंकि तैलीय (तिलहन) फसलों को सल्फर की अधिक आवश्यकता होती है। इसलिए तिलहन फसलों जैसे सरसों, मूंगफली, सूरजमुखी आदि को उगा कर भी किया जा सकता है। प्रारम्भ में जब फसलें सल्फर की कमी से पीड़ित होती हैं तो कोई बाहरी लक्षण नज़र नहीं आता है और जब कमी गम्भीर होती जाती है तो कई लक्षण दिखते हैं। इन लक्षणों की सही पहचान ही सल्फर की कमी के निदान में पहला कदम है। कई मायनों में सल्फर के कमी के लक्षण नाइट्रोजन की कमी जैसे दिखाई पड़ते हैं जैसे पत्तों का पीलापन और हरे रंग का फीका पड़ना। पर नाइट्रोजन की तुलना में सल्फर की कमी ठीक विपरीत नई पत्तियों पर पहले दिखाई देती है। सल्फर की कमी से पौधे छोटे और डंठल पतला हो जाता है जिससे विकास की गति मंद पड़ जाती है। पत्तियों में बैंगनी रंजकाता का विकास और युवा पत्ती झुलस कर कप आकार की हो जाती है।

#### मिट्टी में सल्फर की मात्रा बेहतर करने के तरीके:

मिट्टी निरीक्षण प्रयोगशाला से सल्फर और अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के लिए मिट्टी का परीक्षण करवा कर उपयुक्त सल्फर उर्वरक का इस्तेमाल करना चाहिए। नीचे दिये गए विभिन्न यौगिकों में सल्फर पाई जाती है:-

1. **मौलिक (एलिमेंटल सल्फर) (99 प्रतिशत सल्फर):** यह सल्फर का बहुत अच्छा स्रोत है लेकिन अघुलनशील है और पौधों द्वारा इसके

प्रयोग से पहले सल्फेट के रूप में माइक्रोबियल (सूक्ष्मजीव) ऑक्सीकरण की आवश्यकता होती है।

2. **क्ले-संशोधित सल्फर (90 प्रतिशत सल्फर):** यह सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ इस्तेमाल किया जा सकता है। इसमें सल्फ्यूरिक एसिड द्वारा उत्पादित अम्लता सूक्ष्म पोषकों को उपलब्ध करवाने में मदद करता है।
3. **पाइराइट (53.33 प्रतिशत सल्फर):** खनिज पाइराइट या आयरन पाइराइट, इसको मूर्खों का सोना भी कहा जाता है। यह सबसे ज्यादा इस्तेमाल होने वाला सल्फाईड तत्व है।
4. **अमोनियम सल्फेट:** यह नाइट्रोजन और सल्फर दोनों की पूर्ति करता है।
5. **पोटाशियम मैगनेशियम सल्फेट (लैंगबेनाइट) (20-22 प्रतिशत सल्फर):** यह अत्यन्त घुलनशील है।
6. **पोटाशियम सल्फेट (17-18 प्रतिशत सल्फर):** यह आसानी से घुलनशील और सल्फेट का बहुत अच्छा स्रोत है। आपकी जानकारी के लिए पौधे सल्फेट के रूप में ही सल्फर का सर्वाधिक प्रयोग करते हैं।
7. **जिप्सम (16-18 प्रतिशत सल्फर):** यह पानी में कम घुलता है और मुख्यतः अमिलियोरेट की तरह इस्तेमाल होता है।
8. **एप्सम लवण (14 प्रतिशत सल्फर):** यह पानी में अत्यन्त घुलनशील है।
9. **एकल सुपर फॉस्फेट (11-12 प्रतिशत सल्फर):** व्यापक रूप में इस्तेमाल होने वाला और लोकप्रिय उर्वरक। यह पौधों को सल्फर और फास्फोरस दोनों प्रदान करता है।

**नोट:** सल्फर के उचित स्रोत के चयन के लिए कई कारक जिम्मेदार हैं जैसे-पी एच, लिचिंग प्रकृति, मिट्टी के गुण, प्रकार एवं ऑर्गेनिक पदार्थ इत्यादि।

**भविष्य परिप्रेक्ष्य :** सल्फर सामान्यतः मिट्टी में जैविक और अन्य घटक रूपों में मौजूद है जो कि सीधे तौर पर पौधों द्वारा प्रयोग नहीं किया जा सकता है। इसके निवारण के लिए हम जैव उर्वरक प्रयोग कर सकते हैं जो माइक्रो ऑर्गेनिज्म जैसे सल्फर ऑक्सीकरण बैक्टीरिया या अन्य सूक्ष्म जीवों के संयोजन से बने हों। इनका प्रमुख कार्य अनुपलब्ध सल्फर उपलब्धता प्रदान करवाना है। साथ ही इनके प्रयोग से रासायनिक उर्वरकों के इस्तेमाल को काफी हद तक कम किया जा सकता है। अतः सल्फर ऑक्सीकरण बैक्टीरिया जैसे जैव उर्वरकों के प्रयोग से रासायनिक उर्वरकों पर हमारी निर्भरता को कम करके मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है।



पत्तियों का पीलापन



सरसों की पत्ती कप आकार में



पत्ती की नस का बैंगनीपन

# प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन अपनाये-पैदावार बढ़ाये

नरेन्द्र कुमार गोयल, बलदेव कम्बोज एवं संदीप रावल  
कृषि विज्ञान केन्द्र, यमुनानगर  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हमारा देश विकासशील है। जनसंख्या की दृष्टि से यह विश्व में दूसरे स्थान पर है। देश में जनसंख्या की वृद्धि एक गंभीर समस्या है जिसके कारण भुखमरी, कुपोषण, प्रदूषण जैसी समस्याएं गंभीर स्थिति पैदा कर रही हैं। निरंतर बढ़ती हुई जनसंख्या की मांग को पूरा करने के लिए उत्पादन बढ़ाना बहुत जरूरी है लेकिन खेती योग्य भूमि में कमी होती जा रही है। सन् 2025 में हमें 201 मिलियन टन खाद्यान्नों की ज़रूरत होगी। क्योंकि कृषि क्षेत्र में अधिक से अधिक भूमि का उपयोग कर लिया गया है तथा आगे कृषि क्षेत्र को बहुत अधिक बढ़ाना संभव नहीं है इसलिए हमें प्राकृतिक संसाधनों के कुशल प्रबन्धन से ही उत्पादन की मांग को पूरा करना होगा। स्थायी कृषि अपनाने के मुख्य लक्ष्य में हमें ऐसी कृषि तकनीकों का विकास करना होगा जो लाभप्रद हो, जिनसे प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण हो सके, पर्यावरण सुरक्षित रहे, उत्पादन में गुणवत्ता तथा स्वास्थ्य व सुरक्षा की दृष्टि से लाभप्रद हों। इन्हें प्राप्त करने का उपाय है-कम लागत वाली ऐसी विधियों और कुशल प्रबन्धन की व्यवस्था करना जिनसे प्रबन्धन में दक्षता आये और उत्पादन में काम आने वाले संसाधनों का उपयोग हो सके।

## संसाधन प्रबन्धन तकनीकें

1. **जीरो टिलेज :** इस तकनीक द्वारा खेतों की बिना जुताई किये एक विशेष प्रकार की ड्रिल द्वारा फसलों की बिजाई की जाती है जिसमें दो कतारों के बीच की जगह बिना जुती ही रहती है जिससे जीवांश नष्ट नहीं होता व खरपतवार का जमाव भी कम होता है। इस तकनीक से गेहूँ, चना, सरसों जैसी फसलें बोई जा सकती हैं। इस तकनीक से खेत को तैयार करने में होने वाले खर्च को भी बचाया जा सकता है व फसल कटाई के बाद बचे फसल अवशेष भूमि में गल कर भूमि की उपजाऊ शक्ति में बढ़ोत्तरी कर सकते हैं।

2. **बैंड प्लांटिंग :** इस तकनीक में फसल की बुवाई मेड़ों पर की जाती है व नाली में दूसरी फसल ली जा सकती है। इस तकनीक से गन्ना-गेहूँ, गन्ना चना, गन्ना-मसर, गन्ना सरसों, गन्ना-प्याज, लहसुन की खेती की जा सकती है। इस तकनीक से सिंचाई जल की बचत के साथ-साथ दो फसलों के लिए अलग खेत तैयार करने में होने वाले खर्च को बचाया जा सकता है। यह तकनीक उत्पादन खर्च तो कम करती ही है साथ ही साथ उत्पादन में बढ़ोत्तरी भी अधिक मिलती है। मेड़ों पर फसल में होने वाले खरपतवार भी भली-भांति नियंत्रण कर सकते हैं। इस तकनीक से 20-25 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत की जा सकती है। अधिकतर मुनाफा गन्ना-प्याज व गन्ना-लहसुन फसलों से बैंड प्लांटिंग से लिया जा सकता है।

3. **धान की सीधी बिजाई :** धान की सीधी बिजाई ड्रिल के माध्यम से करने से पौधे तैयार करने व खेत को कददू करने में होने वाले खर्च को कम किया जा सकता है लेकिन इस विधि में खेत का लेवल (समतलीकरण)

होना बहुत आवश्यक है क्योंकि इससे बीज के अंकुरण पर असर पड़ता है। धान की सीधी बिजाई से 25-30 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत की जा सकती है। यह तकनीक किसानों में ज्यादा लोकप्रिय नहीं हुई क्योंकि इस विधि से किसानों द्वारा खरपतवारों की समस्या महसूस की गई। लेकिन इस विधि से पूरा लाभ उठाने के लिए ज़रूरी है कि खेत में बिजाई/खरपतवार दवाई के छिड़काव के समय पर्याप्त नमी हो, खेत समतल हो, ड्रिल से बीज की गहराई एक सतह पर हो व खरपतवारों का नियंत्रण सही समय पर हो। खेतों में लेबर की समस्या को देखते हुए व बिगडते प्राकृतिक संसाधन संतुलन को ध्यान में रखते हुए इस विधि को अपनाना अधिक लाभप्रद होगा।

4. **लेजर लैवलिंग :** लेजर लैवलिंग एक नई वैज्ञानिक तकनीक है जिसमें एक विशेष उपकरण द्वारा खेत की मिट्टी को पूरी तरह समतल किया जाता है। इस विधि से पूरी तरह खेत समतलीकरण होने के कारण सिंचाई की बचत हो जाती है। फसलों की उत्पादकता भी बढ़ती है और कम समय में खेत में सिंचाई की जा सकती है। हरियाणा व पंजाब के किसानों में यह तकनीक बहुत लोकप्रिय है और कई किसानों द्वारा किराये पर प्रति घंटा 600-700 रुपये लेकर यह सुविधा प्रदान की जा रही है। इस विधि से एक एकड़ में औसतन 1800 से 2100 रुपये समतलीकरण पर खर्च करके काफी लाभ उठाया जा सकता है। सिंचाई जल संरक्षण में यह तकनीक किसानों के लिए वरदान सिद्ध हुई है।

## 5. अन्य कृषि तकनीकी सुझाव :

अ) फसलों की सिंचाई के लिए नई सिंचाई प्रणालियों के प्रयोग को बढ़ावा देना होगा। बूंद-बूंद सिंचाई (ड्रिप विधि) द्वारा 30-50 प्रतिशत पानी की बचत की जा सकती है। फव्वारा सिंचाई (स्प्रिंकलर विधि) से 13-43 प्रतिशत पानी की बचत के साथ-साथ फसलों के उत्पादन में भी बढ़ोत्तरी की जा सकती है। इन प्रणालियों द्वारा फसलों में सुरक्षात्मक दवाई/खाद के प्रयोग के साथ-साथ फसल की माँग के अनुसार एक सार पानी मिलने से पानी का दुरुपयोग भी कम होता है। इन सिंचाई विधियों पर सरकार द्वारा उद्यान व कृषि विभाग द्वारा 25-50 प्रतिशत अनुदान किसानों को देने की व्यवस्था है। इसके अलावा भूमिगत पाइप लाइन सिंचाई व्यवस्था अपनाने पर सिंचाई जल व समय की बचत भी की जा सकती है। इसके लिए किसान भाई सहायक भूमि संरक्षण अधिकारी से संपर्क स्थापित कर इस योजना का लाभ उठा कर सिंचाई जल की बचत में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं।

ब) **वर्षा जल का संरक्षण :** वर्षा के जल का समुचित दोहन व बचाव के लिये जहां तक संभव हो भूमि को समतल करना चाहिये व वर्षा शुरू होने से पहले खेत के चारों ओर मेडबंदी कर देनी चाहिए ताकि वर्षा का जल भूमि में जाये व बहकर बेकार न जाये। मिट्टी पलटने वाले हल द्वारा भूमि की गहरी जुताई करके नमी को खेत में संरक्षित रखा जा सकता है। नमी की मात्रा बढ़ाने के लिए भूमि में जीवांश मात्रा को बढ़ाना बहुत आवश्यक है जिसके लिए गोबर की खाद, कंपोस्ट, केंचुआ खाद, मिल की मैली, हरी खाद (मूंग, ढ़ँचा, लोबिया, बरसीम, मेथी), फसल अवशेषों को जमीन में मिलाना बहुत ज़रूरी है। जैविक खादों से भूमि व

जल संरक्षण को बढ़ावा मिलता है व भूमि की भौतिक, रासायनिक व जैविक दशा में सुधार हो जाता है।

**स) उन्नत कृषिगत विधियाँ :** जल व भूमि संरक्षण के लिए उन्नत कृषि विधियाँ जैसे उचित समय पर उचित कृषि मशीनरी से बुवाई, उपयुक्त फसल चक्र, समय पर खरपतवार नियंत्रण, संतुलित उर्वरक प्रयोग, अन्तरवर्तीय फसलें, सहफसली फसलें अपनाकर जल-संरक्षण के साथ-साथ भूमि संरक्षण को भी बढ़ाया जा सकता है। नई तकनीकों में धान-कटाई के बाद फसल अवशेषों को बिना जलाये हैप्पी सीडर मशीन से गेहूँ की बिजाई कृषि मशीनरी में एक सराहनीय कदम है जिससे भूमि, जल संरक्षण के साथ-साथ पर्यावरण सुरक्षा भी की जा सकती है।

कृषि क्षेत्र में इस समय सबसे ज्यादा पानी का इस्तेमाल किया जा रहा है। बढ़ती जल मांग को पूरा करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति की नैतिक ज़िम्मेदारी व भागीदारी बन जाती है कि हम हर एक बूंद को सहेजें ताकि आने वाली पीढ़ी को भीषण जल संकट से न जूझना पड़े। इस दिशा में किसान ऊपर बताई कृषि सिंचाई तकनीकों को अपनाकर महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं।



(पृष्ठ 23 का शेष)

➤ जुलाई-अगस्त महीने में ज्यादा बरसात होने पर सांठी व सांवक जैसे खरपतवार उगने पर ग्रेमक्सान 0.3 प्रतिशत यानि 3 मि. ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से या राउंड अप/ग्लाइसल (ग्लाइफोसेट) 0.5 प्रतिशत यानि 5 मि. ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से नोज़ल पर हुड (प्रोटेक्टर) लगाकर छिड़काव करें।

**सावधानियाँ :**

- खरपतवारनाशक की सिफारिश की गई मात्रा को पानी की सिफारिश की गई मात्रा (250 से 300 लीटर) में मिला कर शाम के समय ही छिड़काव करें। अगर ज़मीन में नमी की थोड़ी कमी हो तो पानी की मात्रा बढ़ा लें।
- ट्राइफ्लान (ट्राइफ्लुरालिन) या स्टॉम्प (पेंडीमेथालिन) के छिड़काव के समय खेत में अच्छी नमी ज़रूर हो।
- ट्राइफ्लान (ट्राइफ्लुरालिन) का छिड़काव करने के बाद उसे हैरो, रोटोवेटर या कल्टीवेटर चला कर ज़मीन की 2-4 सें. मी. ऊपर वाली सतह में मिला कर ही कपास की बिजाई करें।
- फसल बड़ी होने पर प्रयोग की जाने वाली खरपतवारनाशक का प्रयोग केवल तब करें जब खेत में नमी हो।
- अगर स्प्रे पम्प गेहूँ की फसल में 2,4-डी. के छिड़काव हेतु प्रयोग किया गया है तो कपास की फसल में छिड़काव करने से पहले पम्प को अच्छी तरह साबुन से धो कर ही प्रयोग में लायें।



## मशरूम (खुम्बी) एक स्वास्थ्यवर्धक आहार

संतोष रानी<sup>1</sup>, विनिता जैन<sup>2</sup> एवं मक्खन मजोका

सब्जी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मशरूम स्वास्थ्यवर्धक और औषधीय गुणों से युक्त एक उत्तम आहार है जिसमें मौजूद प्रोटीन, विटामिन, खनिज लवण व कार्बोहाइड्रेट बाल्यकाल अवस्था से युवावस्था तक कुपोषण से बचाते हैं। खुम्बी में वसा की मात्रा कम होने के कारण यह हृदय रोग तथा कार्बोहाइड्रेट की अल्प मात्रा होने के कारण मधुमेह रोगियों के लिए उत्तम आहार है। चाहे कोई शाकाहारी हो या माँसाहारी मशरूम की सब्जी हर किसी की पसंद होती है। डॉक्टर का कहना है कि इसका सेवन मानव सेहत के लिए रामबाण है। विश्वभर में लगभग एक दर्जन से भी अधिक खुम्बी की प्रजातियों का उत्पादन व्यापारिक स्तर पर किया जाता है परन्तु हमारे हरियाणा में तीन ही प्रजातियाँ प्रचलित हैं जिनकी खेती व्यापारिक स्तर पर की जाती है

1. सफेद बटन (यूरोपीय मशरूम)
2. आयस्टर मशरूम (ढिंगरी)
3. दूधिया खुम्ब (मिल्की मशरूम)

**मशरूम के लाभ :-**

1. **प्रतिरक्षा प्रणाली को मज़बूत बनाये :** मशरूम प्रतिरक्षा प्रणाली को मज़बूत बनाता है। मशरूम में मौजूद एंटी ऑक्सीडेंट हमें हानिकारक फ्री रेडिकल्स से बचाते हैं। मशरूम का सेवन करने से शरीर में प्रोटीन की मात्रा बढ़ती है जो कि शरीर की कोशिकाओं की मरम्मत करता है। यह एक प्राकृतिक एंटीबायोटिक है, जो सूक्ष्मजीवीय और अन्य फंगल के संक्रमण को भी ठीक करता है।
2. **हृदय रोगों से बचाव :** मशरूम हृदय रोगों से बचाव करता है। मशरूम में उच्च कोटि के न्यूट्रियेंट्स पाये जाते हैं, जो दिल के लिए भी अच्छे होते हैं। साथ ही इसमें कुछ एन्जाइम्स ऐसे पाये जाते हैं जो कि कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करते हैं।
3. **रक्त निर्माण में सहायक :** मशरूम खाने से हिमोग्लोबिन का स्तर भी बढ़ता है। इसके अलावा इसमें बहुमूल्य फॉलिक एसिड भी प्रचुर मात्रा में होते हैं जो केवल मांसाहारी खाद्य पदार्थों में होते हैं। अतः लौह तत्व और फॉलिक एसिड की कमी के कारण रक्त की कमी की शिकार महिलाओं और बच्चों के लिए सर्वोत्तम आहार है।
4. **मधुमेह से बचाव :** मधुमेह रोगियों के लिए मशरूम सर्वश्रेष्ठ आहार माना जाता है। मशरूम में शर्करा (0.5 प्रतिशत) और स्टार्च की मात्रा बहुत कम होती है। इसमें वो सब कुछ होता है जो मधुमेह रोगियों को चाहिए। इसमें विटामिन, खनिज और फाइबर होते हैं। मशरूम इन्सुलिन के निर्माण में भी मदद करता है।
5. **कैंसर रोग के बचाव में गुणकारी :** मशरूम का सेवन करने से प्रोस्टेट और ब्रेस्ट कैंसर से बचाव होता है क्योंकि इसमें बीटा ग्लाइसीन और

<sup>1</sup>जिला विस्तार विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, कैथल

<sup>2</sup>जिला विस्तार विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, सदलपुर



लिनीलिक एसिड होते हैं। कई शोध भी इस बात का समर्थन करते हैं कि मशरूम में मौजूद तत्व कैंसर के प्रभाव को कम करते हैं।

6. **मोटापे से बचाव :** मशरूम प्रोटीन से भरपूर होता है जो कि वजन घटाने में मददगार होता है। मोटापा कम करने वालों को प्रोटीन की डाइट लेने की सलाह दी जाती है।
7. **पेट के विकार दूर करना :** ताजे मशरूम में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन व रेशे होते हैं। इसका सेवन कब्ज, अपच सहित कई विकारों को दूर करता है।



(पृष्ठ 12 का शेष)

धीमी होने के कारण इन तैयार पौधों को प्रायः एक साल बाद ही पौधारोपण स्थल पर स्थानान्तरित किया जाता है।

प्राकृतिक तौर पर हवा के द्वारा बीजों का दूर-दूर तक फैलाव होता है व बीज प्रकृति में स्वयं ही रोपित-अंकुरित होकर पौधों का रूप ले लेते हैं। वृक्ष की ऊपरी स्थलीय जड़ों के कारण, भूमि संरक्षण एवं रेतीले टीलों के प्रबन्धन के लिए यह वृक्ष अत्यन्त उपयोगी है।

**वृक्ष के लाभ :**

1. इस वृक्ष की कीमती लकड़ी जो कि अत्यधिक मजबूत, टिकाऊ होती है व काफी सुन्दर दिखती है, के कारण ही इस वृक्ष को जाना जाता है।
2. इसकी लकड़ी का उपयोग जलाऊ लकड़ी के तौर पर व कोयला बनाने में भी होता है, क्योंकि प्राप्त लकड़ी की ज्वलन-क्षमता बहुत अधिक (4500 कि. कैलोरी प्रति कि.ग्रा.) होती है।
3. रोहिडा का वृक्ष जड़ों द्वारा भूमि को बांधने में स्वयं सक्षम है, इसलिए इस वृक्ष की लकड़ी को रेतीले टीलों के संरक्षण व वायु पट्टियों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है।
4. यह पक्षियों को घर तथा अन्य जीव-जन्तुओं को छाँव व आश्रय देता है।
5. वृक्ष की पत्तियां शुष्क क्षेत्रों में पाए जाने वाले पशुओं (ऊँट, भेड़ व बकरियों) के द्वारा बहुत चाव से खाई जाती हैं। इन पत्तियों में प्रोटीन प्रचुर मात्रा में विद्यमान है, अतः यह एक पौष्टिक चारा वृक्ष है।
6. रोहिडा का वृक्ष औषधीय गुणों से भी भरपूर है। वृक्ष की छाल में टैकोमिन नामक ग्लुकोसाइड, एलकेन, एलकेनोलस इत्यादि रसायन पाए जाते हैं। वृक्ष की छाल से मूत्र सम्बन्धित रोगों का, बढ़ी हुई पित्त की थैली एवं जिगर का व स्त्री रोगों का उपचार भी होता है।
7. शुष्क रेतीले क्षेत्रों में स्थानान्तरण करने वाले रेत के टीलों के संरक्षण व रखरखाव में इस वृक्ष का महत्वपूर्ण योगदान है।



## सुधरी किस्म के बुवाई यन्त्रों का प्रयोग

कुलदीप सिंह, जोगेन्द्र सिंह एवं संदीप कुमार

कृषि विज्ञान केन्द्र, सोनीपत

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

पुरानी परिपाटी के कृषि यन्त्रों में बहुत-सी कमियां हैं, जिनका बदलाव करके सुधरे किस्म के यन्त्रों का प्रयोग नितान्त आवश्यक हो गया है। महंगे किस्म के उन्नत बीजों, रासायनिक खादों व दवाइयों का प्रयोग यदि पुराने किस्म के यन्त्रों और उपकरणों द्वारा किया जाए तो ये पदार्थ काफी मात्रा में व्यर्थ चले जाते हैं। देश और विदेश में किये गये शोधकार्यों से भली-भांति मालूम हो सका है कि सुधरी किस्म की बुवाई मशीन का प्रयोग करने से पुरानी पद्धति की तुलना में लगभग 5-7 प्रतिशत अधिक पैदावार सिंचित कृषि में तथा 10-15 प्रतिशत अधिक पैदावार शुष्क खेती में प्राप्त की जा सकती है। सुधरे यन्त्रों द्वारा बोये गये बीजों का अधिकाधिक अंकुरण तथा खेत में डाले गये उर्वरक और नमी का भली-भांति उपयोग होने के कारण ऐसा सम्भव हो सकता है। पुरानी पद्धतियों द्वारा बोये गये बीजों द्वारा वांछित संख्या में पौधे प्राप्त करने के लिए या तो अधिक बीज और उर्वरक डालने पड़ते हैं या खाली स्थानों पर पौधे का रोपण करना पड़ता है। इस प्रकार किसान को आर्थिक हानि से बचाव के लिए अनावश्यक रोपाई कार्य करना पड़ता है और फिर भी अच्छी पैदावार पाने में कठिनाई आती है। इसलिए सुधरे यन्त्रों का प्रयोग करके अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

**बीज बोने के ढंग**

अ) परम्परागत पद्धतियां :

1. छिटकवां विधि से बुवाई करना।
2. नाली या कुंड में हाथ द्वारा बीज गिराना।
3. देसी हल के साथ नाली के माध्यम से हाथ द्वारा बीज बोना।
4. छोटे-छोटे गड्ढों में सब्जी के बीज हाथ से बोना आदि।

ब) सुधरी पद्धतियां :

1. दो या अधिक कुंड वाली बीज उर्वरक बुवाई (यन्त्र) पद्धति।
2. दो या अधिक कुंड वाला प्लान्टर (यन्त्र) पद्धति।
3. पौधरोपाई (यन्त्र) पद्धति।
4. धन रोपाई (यन्त्र) पद्धति।
5. आलू बुवाई (यन्त्र) पद्धति।
6. गन्ना बुवाई (यन्त्र) पद्धति।
7. बहुफसलीय बुवाई (यन्त्र) पद्धति।
8. कपास बुवाई (यन्त्र) पद्धति।
9. 'डिबलर' बुवाई (यन्त्र) पद्धति।
10. अत्याधुनिक बीज बुवाई (यन्त्र) पद्धति आदि।

बीज की बुवाई खेत में तभी उचित ढंग से की जा सकती है, जबकि मिट्टी में उपयुक्त नमी हो और अंकुरण के लिए उचित तापमान मिल सके। अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि बीज को ठीक मात्रा में उचित गहराई तथा बराबर दूरी पर बोया जाये। बीजों के अंकुरण और अंकुरित पौध की बढ़ोत्तरी पर किन विशेष बातों का प्रभाव

पड़ सकता है और बुवाई की पद्धतियों से उनके क्या सम्बन्ध हैं, निम्नलिखित है :

1. बीज के सम्पर्क में आने वाले बुवाई मशीन के भागों की बनावट सही नहीं होगी तो बीजों पर लगने वाली सम्भावित चोटें और दरारों से अंकुरण में कमी आती है।
2. अगर बीज नमीयुक्त मिट्टी के ठीक से सम्पर्क में नहीं आया तो वह बीज अंकुरित नहीं होगा।
3. बीज यदि वांछित वातावरण जैसे नमी, वायु और तापमान से वंचित रहे तो वह अंकुरित नहीं होगा।
4. बीज सही गहराई पर गिरना चाहिए। बीज कम गहराई पर गिरने से उपयुक्त वातावरण नहीं मिल पाता तथा अधिक गहराई तक चले जाने पर अंकुरित पौध ऊपर आने में बाधाएं झेलती है।
5. बीज का ठीक प्रकार से मिट्टी में न गिरने के कारण भी बीज अंकुरित नहीं हो पाता है।
6. बीज का अधिक उर्वरक की मात्रा से सम्पर्क होने पर भी अंकुरण नहीं हो सकेगा तथा अंकुरित बीज मर सकता है।

एक सुधरे कृषि यन्त्र के प्रयोग से उपरोक्त दर्शायी गई बातों को रोका जा सकता है तथा सही प्रकार से बीज उचित गहराई पर मिट्टी और नमी के अच्छे वातावरण में स्थापित किया जा सकता है। एक पंक्ति से दूसरी पंक्ति की दूरी भी ऐसी होनी चाहिए कि अंकुरित बीज जब पौधे के रूप में बढ़ें तो उनकी जड़ें आसानी से नमी और खुराक पाती रहें। अधिक घने पौधे ठीक प्रकार से नहीं बढ़ते हैं और उनसे उत्पन्न बीज हल्के पड़ जाते हैं। पौधे की कतारों में बुवाई होने पर कतारों के बीच में आसानी से निराई-गुड़ाई की जा सकती है तथा बिना किसी खरपतवारनाशक के प्रयोग के उचित नियन्त्रण किया जा सकता है क्योंकि खरपतवार का पौधा हमारे उगाए गए पौधे से अधिक नमी एवं खुराक ग्रहण करता है तथा पैदावार को प्रभावित करता है।

शुष्क खेती पद्धति में जहाँ मिट्टी की ऊपरी सतह नमीहीन सी होती है, वहाँ बीज को 8-10 सें.मी. नीचे डालना चाहिए तथा सिंचित कृषि पद्धति में बीज 5 सें.मी. नीचे तथा उर्वरक को बीज से भी 5 सें.मी. नीचे और 5 सें.मी. बगल में गिराना लाभकारी होता है। ऐसी स्थितियों को प्राप्त करने के लिए सुधरी किस्म की मशीन तथा मिट्टी की गुणवत्ता के अनुसार कुंड बनाने वाले भाग (पैफरो ओपनर) का चुनाव सही होगा। पैफरो ओपनर का चुनाव मिट्टी की प्रकार के अनुसार करें।


#### सुधरे किस्म के बुवाई यन्त्रों की विशेषताएं :

सुधरे किस्म के बुवाई यन्त्रों की विशेषताएं उनकी कार्यप्रणाली से समझी जा सकती हैं जो कि परम्परागत बुवाई यन्त्र नहीं प्राप्त कर सकते हैं। एक अच्छी बनावट वाली सुधरी मशीन से निम्न कार्य कर सकते हैं :

1. विभिन्न प्रकार के बीजों और उर्वरकों का ठीक रूप से नाप करना तथा निर्धारित मात्रा अनुसार मिट्टी में डालना।
2. बिना किसी प्रकार का दबाव डाले बीज को मीटर करना ताकि चोट न लगे।
3. खेत में उचित प्रकार के बीजों और उर्वरकों को वांछित गहराई पर बो देना।

(शेष पृष्ठ 29 पर)

## कैसे चुनें : बच्चों के लिए खिलौने

 पारुल गिल, पंकज गिल एवं पूनम मलिक

मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

खिलौने बच्चों को बहुत प्रिय होते हैं। एक खिलौना दे कर रोते हुए बच्चे को हँसाया जा सकता है। खिलौने न सिर्फ बच्चों का मनोरंजन करते हैं बल्कि वे उनके मानसिक, शारीरिक, सामाजिक व भावनात्मक विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसलिए माता-पिता का कर्तव्य बनता है कि वे बच्चों के लिए खिलौनों का चुनाव करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें:-

- उम्र के अनुसार बच्चे के शारीरिक व मानसिक विकास का स्तर बदलता रहता है। विकास के स्तर के अनुसार ही उनकी रुचि में भी परिवर्तन आता है। अतः माता-पिता को बच्चे के विकास व रुचि के अनुसार खिलौना चुनना चाहिए। उदाहरण के लिए 6-8 महीने के शिशु के लिए झुनझुना, 2-3 वर्ष के बच्चे के लिए बड़े आकार की गेंद, 4-5 वर्ष के बच्चे के लिए बैट-बॉल तथा 6-7 वर्ष के बच्चे के लिए सांप-सीढ़ी खरीदे जा सकते हैं।
- खिलौने का आकार भी न बहुत छोटा हो और न ही बहुत बड़ा। बहुत छोटे आकार वाले खिलौने गुम हो जाते हैं और बहुत बड़े आकार वाले खिलौने बच्चे सम्भाल नहीं पाते।
- छोटे बच्चों के खिलौनों में, खासतौर पर 3 वर्ष से छोटे बच्चों के खिलौनों में छोटे आकार से अलग हो सकने लायक ऐसी चीज़ें नहीं होनी चाहिए जिन्हें बच्चा गलती से निगल सके। उदाहरण के लिए गुड़िया के कपड़ों में लगे बटन या कार के बहुत छोटे पहिए।
- खिलौने आकर्षक व रंग-बिरंगे होने चाहिए।
- छोटे बच्चों के लिए रोएंदा खिलौनों को न खरीदें क्योंकि उन्हें हर खिलौना मुँह में डालने की आदत होती है। ऐसे में छोटे रोएं बच्चे की श्वास नली में फंस कर परेशानी का कारण बन सकते हैं।
- खिलौने मज़बूत व टिकाऊ होने चाहिए।
- खिलौने घटिया किस्म के प्लास्टिक से न बने हों। ऐसे घटिया रबर व प्लास्टिक में ज़हरीले पदार्थ व रसायन हो सकते हैं।
- खिलौने शिक्षाप्रद होने चाहिए जिनसे बच्चा कुछ सीख सके। उदाहरण के तौर पर सांप-सीढ़ी के खेल में बच्चे खेल-खेल में गिनती सीख लेते हैं।
- माता-पिता को चाहिए कि बच्चे के लिए बहुत महंगे खिलौने न खरीदें। बच्चे बहुत शीघ्र बढ़ते हैं और खिलौनों में उनकी रुचि बदलती जाती है।
- बच्चों के लिए बहुत अधिक संख्या में खिलौने नहीं खरीदने चाहिए। बच्चे आमतौर पर अपने 2-3 प्रिय खिलौनों के साथ ही अधिक खेलते हैं।
- अधिक शोर करने वाले या दूसरों को परेशानी देने वाले खिलौने नहीं खरीदने चाहिए।

- बच्चों में हिंसात्मक प्रवृत्ति को बढ़ावा देने वाले खिलौने जैसे पिस्तौल आदि न खरीदें।
- ऐसे खिलौनों का चुनाव करें जिनसे बच्चे की स्व-अभिव्यक्ति को बढ़ावा मिले। जैसे रंगों से बच्चे अपनी भावनाओं की कागज़ पर अभिव्यक्ति कर सकते हैं।
- बच्चों के लिए चुनौतीपूर्ण खिलौने चुनें जिससे उनके दिमाग का विकास होता है उदाहरण के लिए ब्लॉक्स।
- खिलौने बहुत पेचीदा न हों और उनमें न ही अधिक दिशा-निर्देश हों। ऐसे खिलौनों से बच्चे 2-3 बार से ज्यादा नहीं खेलते।
- बहुउपयोगिता वाले खिलौनों का चुनाव करें। जैसे गेंद एक ऐसा खिलौना है जिससे वे अकेले व दूसरों के साथ घर के बाहर खेल सकते हैं। इससे छोटे-बड़े, लड़का-लड़की सभी खेल सकते हैं। इससे खेलने के लिए बहुत अधिक कौशल की आवश्यकता नहीं होती और इसके साथ कई प्रकार से खेला जा सकता है जैसे बैट-बॉल, फुटबॉल, कैच-कैच, पिट्टू आदि।
- खिलौने ऐसे हों जो बच्चे को परिवार व मित्रों के साथ जोड़ें अर्थात् जिनसे वह दूसरों के साथ मिलकर खेलें न कि ऐसे खिलौने जिनसे वह अकेले ही खेलें और अकेलेपन को बढ़ावा मिले उदाहरण के तौर पर वीडियो गेम्स, प्लेस्टेशन इत्यादि।



(पृष्ठ 28 का शेष)

4. बीजों को उचित मात्रा में चाहे हुए ढंग से गिराकर ठीक से ढक देना और आसपास की मिट्टी को दबा देना।

यदि उपरोक्त प्रकार से बीज और उर्वरक नहीं डाले गये हैं तो यन्त्रों को सुधरा यन्त्र नहीं माना जा सकता है।

अतः किसान भाइयों को सलाह दी जाती है कि अच्छी किस्म के सुधरे हुए बुवाई यन्त्रों का प्रयोग करके ही अपनी फसलों की बुवाई करें, ताकि महंगे कृषि आदानों का सही व पूर्ण प्रयोग करते हुए भरपूर पैदावार प्राप्त की जा सके। बुवाई से पहले खेत की तैयारी भली-भांति होना आवश्यक है। अच्छी बीज शय्या तैयार करने से तात्पर्य है कि खेत में टूट तथा खरपतवार नहीं होने चाहिए। खेत की मिट्टी भुरभुरी होनी चाहिए और ढेलों की संख्या न के बराबर होनी चाहिए।



## फसल उत्पादन बढ़ाने में मधुमक्खियों का योगदान

भूपेन्द्र सिंह, सुरेन्द्र सिंह एवं आशा बत्तार  
सायना नेहवाल कृ. प्रौ. प्र. एवं शिक्षा संस्थान  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मधुमक्खियों से हमें केवल शहद, मोम, राजअवलेह आदि पदार्थ ही नहीं मिलते बल्कि ये बहुत सारी फसलों और पेड़ों में परागण क्रिया कर उनकी पैदावार बढ़ाने में भी सहायता करती हैं। मधुमक्खियां पौधों से अपना भोजन (पराग व मकरंद) एकत्र करती हैं तथा बदले में परागण करती हैं जिससे फसलों की पैदावार में 10-12 गुणा बढ़ोत्तरी हो जाती है। फूलों में पांच प्रतिशत परागण स्वयं और 95 प्रतिशत वायु, पानी, पक्षी, कीटों आदि द्वारा किया जाता है तथा 95 प्रतिशत में से 85 प्रतिशत केवल कीटों द्वारा ही होता है और कीटों में मधुमक्खियां सबसे महत्वपूर्ण पाई गई हैं जिनके द्वारा लगभग 80 परागण क्रिया की जाती है।

### परागण क्रिया क्या होती है?

फसलों, सब्जियों, फलों तथा वानिकी पौधों में बीज एवं फल बनने के लिए सेचन की ज़रूरत होती है। इस क्रिया में नर कोशिका तथा मादा कोशिका का मिलन होता है। परन्तु इस क्रिया के पूर्व फूलों में परागण की क्रिया होती है। इसमें नर भाग से पराग-कण मादा भाग तक पहुंचते हैं। अतः फूलों के नर भाग (पुंकेसर/पोलन) का मादा भाग (ओवरी) से मिलने की क्रिया को परागण कहते हैं। यह दो प्रकार का होता है-स्वपरागण और परपरागण। स्वपरागण क्रिया प्रायः द्विलिंगी फूलों में होती है जिसमें नर भाग के परागकोश से पराग-कण उसी फूल के मादा भाग के वर्तिकाग्र तक पहुंचते हैं। परपरागण क्रिया एक लिंगी फूलों में होती है जिसमें एक फूल के परागकोश से पराग-कण दूसरे फूल के वर्तिकाग्र तक विभिन्न माध्यमों द्वारा पहुंचाए जाते हैं जैसे हवा, पानी, जीव-जन्तु, कीट आदि।

### कौन सी फसलों में परपरागण क्रिया द्वारा फल या बीज बनता है?

नीचे दी गई फसलें परागीकरण के लिए मधुमक्खी तथा अन्य परागणकर्ताओं पर निर्भर रहती हैं:-

**तेलवाली (तिलहनी) फसलें :** सरसों, तोरिया, राई, तिल, तारामीरा, गोभी, सरसों, राया, सूरजमुखी आदि।

**दानों वाली फसलें :** मक्का, बाजरा, रागी आदि।

**रेशे वाली फसलें :** कपास व सन।

**चारे वाली फसलें :** बरसीम, रिजका आदि।

**फल :** लीची, सेब, खुबानी, नींबू जाति के फल, बादाम, रसभरी, चेरी, अंजीर, करौंदा, अमरूद, आड़ू, नाशपाती, बेल, अनार, खजूर, आंवला, जामुन, केला, पपीता आदि।

**सब्जियां :** बेल वाली सब्जियां जैसे खीरा, ककड़ी, घीया, तोरी, करेला, गाजर, धनिया, सौंफ, मूली, प्याज़, मेथी तथा गोभी बीज उत्पादन के लिए।

**सजावटी फूल :** कोसमास, गुलमोहर, पोपीपोरटालुका, जीनिया, कारनेशन, डेहलिया, गेंदा आदि।

**वानिकी पौधे :** शीशम, सफेदा, जामुन, तुन, शहतूत, खैर, अर्जुन आदि।



मौन परागण से फसल उत्पादन में लाभ : मधुमक्खियां फसलों में परपरागण का अत्यंत उत्तम और सरल साधन हैं जिनसे फसलों की पैदावार में काफी बढ़ोत्तरी होती है और किसान की आमदन बढ़ती है।

#### मौनपरागण से फसल उत्पादन में वृद्धि

क्रम	फसल उत्पादन वृद्धि	संख्या (प्रतिशत)
1.	सरसों	13.00-22.00
2.	सूरजमुखी	21.00-34.00
3.	बंद गोभी	10.00-30.00
4.	राई	18.00
5.	तोरिया	66.00
6.	अलसी	2.00-49.00
7.	गाजर	9.00-13.50
8.	प्याज़	35.40-98.78
9.	मूली	22.00-100.00
10.	सेब	18.00-69.50
11.	अंगूर	23.00-54.00
12.	अमरूद	12.00
13.	नाशपाती	24.00-60.14
14.	आम	3.00
15.	पपीता	10.00

विभिन्न फसलों में पैदावार बढ़ाने के लिए मधुमक्खियों के बक्सों की प्रति हैक्टेयर आवश्यकता नीचे तालिका में दी गई है :-

फसल	मौन बक्से प्रति हैक्टेयर
सरसों	2-3
सूरजमुखी	4-5
बरसीम	2-3
लूसर्न	3-4
प्याज़ (बीज)	1-2
फूलगोभी (बीज)	2-3
पत्तागोभी (बीज)	2-3
मूली (बीज)	1-5
शलगम (बीज)	2-3
सौंफ	2-3
आड़ू	2-3
नाशपाती	1-5
आलूबुखारा	2-5
लीची	4-5

अतः किसान अपनी फसल में वृद्धि करने के लिए आवश्यकतानुसार फसलों के बीच-बीच में मौन गृह रख सकते हैं। जैसा पहले बताया गया है कि अलग-अलग फसलों में परागीकरण के लिए मधुमक्खी बक्सों की संख्या अलग-अलग होती है। परन्तु औसतन 2.5 मौनवंश प्रति हैक्टेयर रखकर परागित फसलों में परपरागण की आवश्यकता पूरी करवाकर उत्पादन में काफी वृद्धि की जा सकती है। (शेष पृष्ठ 32 पर)

## Role of Olive Oil in Human Health

 Seema

Ph. D. Scholar (Food & Nutrition)

CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Olive oil is an oil which is extracted from the fruits of the olive tree, *Olea European L.*, capable of surviving several hundred years. Olive word was derived from Greek word *elaion* (superior). Due to high yield and reasonable cost olive oil is used in Mediterranean countries. Olive oil usually has a greenish- yellow colour and a characteristic olive flavour and odour. This oil contains triglycerides composed mainly mono unsaturated oleic fatty acids. Only 10 to 18% of the fatty acids are saturated in the olive oil. The high oleic and low linoleic fatty acid contents make olive oil more resistant to oxidation than other liquid oils. Researchers have found that the phenols in olive oil have anti-inflammatory antioxidants and clot preventing capabilities, which assist in heart health. Olive rich diet plays an important role in keeping our body fit and healthy. Studies have shown that olive oil contains vitamins, antioxidants and mono unsaturated fats that protect the body from chronic ailments such as heart attacks, strokes, cancer, diabetes and arthritis. Regular consumption of above oil has been found to increase longevity, retard the effect of aging and reduce the risk of age related decline. It improves metabolic functions. Therefore, Olive oil has health-boosting benefits; so add olive oil to your diet as a snack, a spread in salads or dips.

**Olive Oil and Cardiovascular System :** Olive oil, rich in monosaturated fatty acids, is most commonly used fat for frying in Mediterranean countries, and large amount of fried foods are consumed both at and away from home, no association was observed between fried food consumption and the risk of coronary heart disease or death. People who regularly consume olive oil are up to 41% less likely to develop cardiovascular disease, including hypertension, stroke and hyperlipidemia.

**Cancer:** The phytonutrient in olive oil, mimics the effect of ibuprofen in reducing inflammation, which can decrease the risk of breast cancer and it's recurrence. Squalene and lignans are among other olive oil components being studied for the possible effect on cancer.

The researchers, nutritional scientist Paul Breslin (Rutgers University), biologist David Foster (Hunter College) and chemist OnicaLe Gendre (Hunter College) discovered in a lab study that the ingredient, called oleocanthal, causes a rupture of a part of the cancerous cell which releases enzymes and causes cell death, without harming healthy cells. In this way, cancer cells are killed by their own enzymes.

“Oleocanthal is a name for a chemical in extra virgin olive oil (EVOO) that means ‘Stinging Oil Aldehyde.’ It is made by the olive when it is crushed to make the pulp from which the oil is pressed. There are many compounds in EVOO that have a 6-carbon ring structure on them and collectively they are known as phenolics. These compounds are collectively good anti-oxidants preventing oxygen pore-radicals from forming and they also tend to be anti-inflammatory. Oleocanthal caused cancer cells to break down and die very quickly; within 30 minutes, instead of the 16 to 24 hours it takes for programmed cell death, known as apoptosis. Oleocanthal has been shown to interfere with processes associated with many types of inflammation, alzheimer’s disease, and cancer formation and growth.

**Olive Oil and the liver:** Extra virgin olive oil may protect the liver from oxidative stress. Oxidative stress refers to cell damage associated with the chemical reaction between free radicals and other molecules in the body.

**Diabetes :** Type II diabetes is the most common and preventable form of diabetes. Individuals, who are obese or overweight and have a metabolic syndrome are at highest risk of developing this form of diabetes. Chances of developing type 2 diabetes are comparatively lower for those who consume olive oil diet as compared to low fat diet. It is important to note that reduction of diabetes risk was independent of changes in body weight or physical activity.

**Nutritional Value :** According to the United States Department of Agriculture (USDA), 100 ml, or 3.5 ounces, of one type of olive oil, contains:

Energy- 800 kcal

Fat- 93.3 gm, of which 13.33 gm is saturated and 66.6 gm monounsaturated.

It contains no carbohydrates or protein.



## Increasing Phosphorus Use Efficiency via Different Interventions

✍️ Sonia Rani, Mohammad Amin Bhat and Dinesh

Department of Soil Science  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

The rock phosphate reserves of the world are decreasing and people are becoming familiar about it, therefore, increasing the efficiency of these reserves is of utmost concern to sustain existing agricultural productivity or even to increase it. Annual grain crops viz., cereals, oilseeds and pulses supply almost 60% of the dietary energy for the burgeoning world population. Efficiency denotes the amount of nutrient taken up by a crop from the total nutrient applied to the soil. In order to increase the efficiency of phosphorus (P) fertilizer use, plant growth needs increased P acquisition from the soil and better use of P in processes that contributes to rapid growth and enhanced partitioning of biomass to harvestable organs. Since, only 15-30% of applied fertilizer P is taken up by crops in the year of its application, therefore, the efficiency can be increased by improving P acquirement. Phosphorus use efficiency can be increased by following these interventions.

### Nature of Fertilizer

Nowadays there are various phosphatic fertilizers available to the farmers. Phosphatic fertilizers are classified as water soluble or citric acid soluble on the basis of their solubility. The soils of Haryana are by and large calcareous in nature, therefore, the efficiency of fertilizers, which contain phosphorus in water soluble form, will be more compared to those containing citrate or mineral acid soluble form of phosphorus.

### Method of Application

To achieve the maximum efficiency of phosphatic fertilizers, the method of application should be followed precisely as per the recommendation. For instance, the mobility of phosphorus in the soil is limited; therefore, broadcast application of P is not very effective if not incorporated and is regarded as inferior to other placement methods at lower rates. The application of phosphatic fertilizers should be done before sowing as far as possible by drilling 5 cm below the seed. The soils having high retention capacity of P owing to absorption reactions; band placement is the excellent management practice for soluble phosphorus fertilizers since this

diminishes the contact between soil and fertilizer thereby limits strong adsorption. Contrarily, for sparingly soluble fertilizers like reactive rock phosphates, broadcast application is best since this enhances dissolution in the soil.

### Time of Application

Plants require different rates and ratios of nutrients at various phenological stages. Therefore, fertilizers should be applied at right timing so that the nutrients will be available when the plants need them. For that reason, the timing of fertilizer application is determined by nutrient uptake by the crop. During early stages of crop growth almost all crops accrue major amount of phosphorus, therefore, dependence on extraneous phosphorous is more during the initial stages of crop growth compared to later stages. Hence, it is imperative that phosphatic fertilizers should be applied before or at the time of sowing of crops.

### Dose of Application

It is well documented that the phosphatic fertilizers show residual effect which goes on decreasing with the passage of time as applied phosphorus goes converted to non-water soluble forms in due course of time. Therefore, small doses of phosphorus should be applied to each crop as compared to heavy application of phosphorus to a single crop in multiple cropping system. However, higher doses of P application in certain cases can help to skip the application of P fertilizer to the succeeding crop owing to residual effect without reduction in the yield of the crop.

### Balanced Fertilizer Use

In soil, the efficiency of one nutrient is dependent upon the availability of other nutrients. Therefore, if any nutrient other than applied one is available in limited quantity, the growth of plants will be hampered and efficiency of nutrient will be decreased. This is evident for phosphorus which can not exhibit its effect unless and until both N and Zn are present in adequate quantity. The available P status of the soil will determine how much P should be added. Uniformity between N and P application will be helpful in enhancing P use efficiency. Mostly, a ratio of 2:1 for nitrogen and phosphorus has been observed to be best for attainment of optimum yield of crops.

### Amount of Irrigation

Moisture is one of the most crucial factors responsible for supply of plant nutrients in the soluble form because most of the nutrients are supplied by mass

flow. Besides, moisture influences the growth of both roots and aerial parts of the plant, thus, moisture can affect fertilizer use efficiency by restricting plant growth and limiting supply of nutrients to root zone. So as to have maximum P use efficiency, proper moisture should be maintained by light and frequent irrigations.

### Management Practices

Agronomic practices play a pivotal role in enhancing fertilizer use efficiency. The improved agronomic practices like optimum field preparation, crop stand, control of pests, weeds and diseases all go a long way in increasing fertilizer use efficiency. Use of mycorrhizal fungi commonly known as VAM (Vesicular-Arbuscular Mycorrhizae) colonize roots of plants symbiotically thereby help the plants to absorb more phosphorus by enabling the plant roots to explore a larger volume of soil which results in greater P uptake into the roots. Moreover, the factors which are responsible for higher yields are also associated with higher P use efficiency.



(पृष्ठ 30 का शेष)

### किसान तथा मधुमक्खी पालक के सम्बन्ध

भारत में ज्यादातर किसान मधुमक्खियों से होने वाले अप्रत्यक्ष लाभ से अभी तक अनभिज्ञ हैं और इसीलिए वे मधुमक्खी पालकों को अपने खेत में बक्से रखने से मना करते हैं। लेकिन पाश्चात्य देशों में, विशेषतः संयुक्त राज्य अमेरिका में किसान मधुमक्खी के सशक्त मण्डलों को परागीकरण के लिए 25 हजार डालर तक किराए पर लेता है। किराये की कुछ अदायगी मधुमक्खी मण्डलों के रखते समय की जाती है तथा बाकी रकम फसल कटने के बाद अदा की जाती है। बगीचों में मधुमक्खी मण्डल रखने पर किसान 60 पौंड शहद की कीमत के बराबर की रकम का मधुमक्खी पालक को भुगतान करते हैं। उसके बाद बाकी रकम मण्डलों की वापसी के समय दी जाती है।

इस प्रकार मधुमक्खी का महत्त्व अन्य परागणकारियों से अधिक है क्योंकि मधुमक्खी एक ऐसी परागणकारी है जो कृत्रिम रूप से पाली जा सकती है और आवश्यकता पड़ने पर इनकी वांछित संख्या में वृद्धि भी की जा सकती है। इसलिए किसानों और फल उत्पादकों को सलाह दी जाती है कि वे अपने खेत में मधुमक्खियों के वंशों को रखें और यदि स्वयं नहीं रख सकते हैं तो मधुमक्खी पालकों से रखवाएं तथा अधिक पैदावार का लाभ उठाएं।





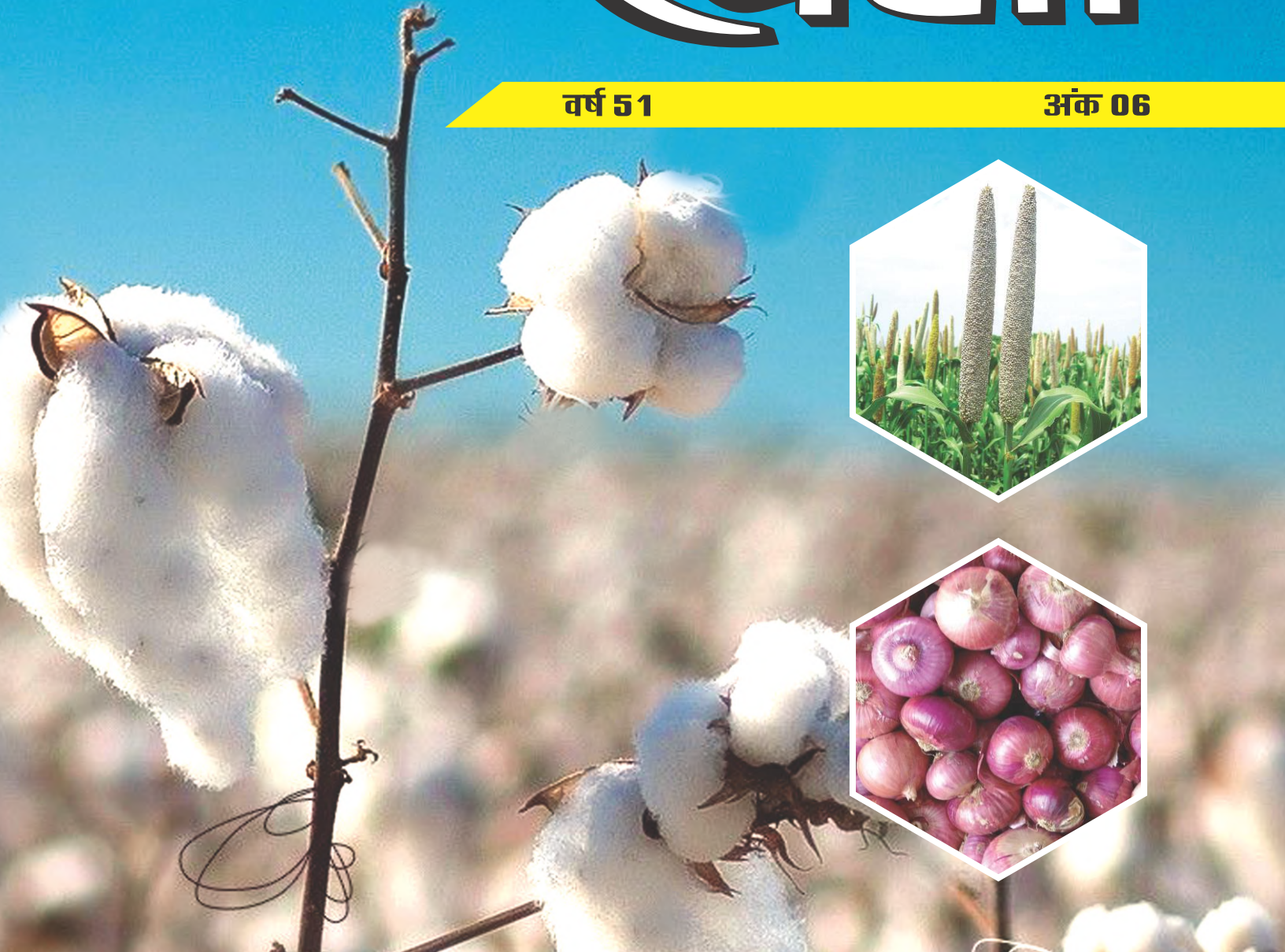
ISSN-0970-6518

हरियाणा

# स्वर्वा

वर्ष 51

अंक 06



वार्षिक चंदा 150/-

जून 2018

आजीवन सदस्यता 1500/-



प्रकाशन अनुभाग  
विस्तार शिक्षा निदेशालय

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. ( 2 ) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित  
© कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 51

जून 2018

अंक 06

## इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
बाजरा फसल की रोगों व कीटों से रक्षा	नरेंद्र सिंह यादव, बलबीर सिंह एवं जयलाल यादव	1
ग्वार की पैदावार : बढ़ाएं	सत्यजीत, एस. पी. यादव एवं शशि विशिष्ट	2
ग्वार उत्पादन : उन्नत कृषि क्रियाएं	रमेश कुमार, जयलाल यादव एवं अशोक ढिल्लों	3
उन्नत सस्य क्रियाएं अपनाएं : कपास का उत्पादन बढ़ाएं	करमल सिंह मलिक एवं अरुण जानू	4
कपास की फसल में पोटाशियम का महत्त्व	पूजा रानी, ऊषा कौशिक एवं देवराज	5
फसलों में उर्वरक प्रयोग की विधि और समय	प्रमोद कुमार यादव, मुकेश कुमार जाट एवं आभा टिक्कू	5
खरीफ में बारानी खेती-समस्याएं एवं समाधान	सत्यजीत, एस.पी. यादव एवं शशि विशिष्ट	7
शुष्क क्षेत्रों में कैसे लें : सावनी फसलों की अधिक पैदावार	सुरेन्द्र कुमार शर्मा एवं कौटिल्य चौधरी	8
तिल उत्पादन : उन्नत कृषि क्रियाएं	रमेश कुमार, जयलाल यादव एवं अशोक ढिल्लों	9
टिशू कल्चर तकनीक से कृषि उपज और गुणवत्ता में सुधार	राकेश यादव एवं औम प्रकाश नेहरा	10
सब्जी फसलों की जैविक खेती	पूजा रानी, बी.पी.एस. पंघाल एवं विनोद कुमार	12
तोरी के बीजोत्पादन की उन्नत तकनीक	मकखन मजोका, विजयपाल पंघाल एवं शिवानी कम्बोज	20
प्याज की भण्डारण क्षमता कैसे बढ़ाएं	सुमन बाला एवं जितेन्द्र कुमार	21
फलों व सब्जियों की उचित डिब्बाबंदी : अधिक आमदनी	सुमन बाला एवं जितेन्द्र कुमार	21
हरे चारे के लिए ज्वार फसल-प्रबंधन	सतपाल, पम्मी कुमारी एवं अनिल	22
हरियाणा-ग्रामीण पुरातन संग्रहालय : प्राचीन हरियाणा कृषि एवं लोक संस्कृति का आईना	अशोक कुमार, प्रदीप कुमार चहल एवं राजेश कुमार	24
किण्वित उत्पादों के स्वास्थ्य लाभ	कृतिका रावत, अंजू कुमारी एवं राकेश गहलोत	25
समन्वित कृषि प्रणाली : किसान की आय का श्रेष्ठ साधन	सूबे सिंह एवं एम.एस. ग्रेवाल	25
पोपलर : संबंधित कीट व प्रबंधन	विवेन्द्र दलाल, सुनील कुमार एवं एस.एस. कुण्डू	26
अनार खाने के लाभ	हेमन्त सैनी, विजय एवं आर.के. गोदारा	27
Role of Fruits and Vegetables in Human Nutrition	Meenu Sirohi and Veenu Sangwan	28
Vermicompost - A Rich Source of Nutrients	Sonia Rani, Manoj Kumar and Sunita Sheoran	29
Balanced Fertiliser Use - A Key To Higher Yield	N. K. Goyal, B. R. Kamboj and Sandeep Rawal	31

## स्थाई स्तम्भ : जुलाई मास के कृषि कार्य

13

तकनीकी सलाहकार :

डॉ. आर. एस. हुड्डा

निदेशक, विस्तार शिक्षा

संकलन :

डॉ. एम. एस. ग्रेवाल

परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)

विस्तार शिक्षा निदेशालय

सह-निदेशक (प्रकाशन)

डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी

संपादक :

डॉ. सुषमा आनंद

सह-निदेशक (हिन्दी)

सुनीता सांगवान

सम्पादक अंग्रेजी

प्रकाशन अनुभाग

आवरण एवं सज्जा:

कुलदीप कुमार

**लेखकों से अनुरोध :** हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। टाईपिंग के लिए कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं [haryanaketihau@gmail.com](mailto:haryanaketihau@gmail.com)



# बाजरा फसल की रोगों व कीटों से रक्षा

नरेंद्र सिंह यादव, बलबीर सिंह एवं जयलाल यादव

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बाजरा खरीफ की एक मुख्य फसल है। हरियाणा में इसे विशेषकर वर्षा पर निर्भर क्षेत्रों व हल्की भूमि में बोया जाता है। उन्नत किस्मों की पैदावार क्षमता लगभग 13-17 क्विंटल प्रति एकड़ है। परन्तु किसानों के खेतों में इस फसल की उपज 4-8 क्विंटल प्रति एकड़ ही हो पाती है। इतनी कम पैदावार होने के कई कारण हैं। जिनमें बीमारियों व कीटों का प्रकोप भी एक प्रमुख कारण है। इनके आक्रमण से होने वाली हानि एवं रक्षा के लिये निम्न उपाय दिये जा रहे हैं।

## बीमारियाँ व इनकी रक्षा

**झाऊनी मिल्ड्यू या कोढ़िया :-** इस रोग से प्रभावित पौधे बौने रह जाते हैं। पत्तियाँ पीली पड़ने लग जाती हैं तथा उनकी निचली सतह पर सफेद रंग का पाऊंडर जमा हो जाता है। रोगग्रस्त पौधों के पत्ते सूखने शुरू हो जाते हैं तथा धीरे-धीरे पूरा पौधा नष्ट हो जाता है। फसल की बाद की अवस्था में सिट्टों में दाना न बनकर हरी-हरी पत्तियों का गुच्छ-सा बन जाता है जो काफी समय तक हरा बना रहता है। रोग की उग्र अवस्था में पूरी फसल नष्ट हो जाती है।

## रोकथाम के उपाय:-

1. बिजाई से पहले बीजों का 2.0 ग्राम एमिसान तथा थाइरम या 6.0 ग्राम मेटालैक्सिल 35 प्रतिशत से प्रति किलो बीज का सूखा उपचार करें।
2. बिजाई के तीन-चार सप्ताह बाद रोग ग्रस्त बौने व पीले पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें।
3. रोगग्रस्त पौधों को निकालने के बाद फसल पर 0.2 प्रतिशत जाईनेब या मेंकोजेब के घोल (500 ग्राम दवा व 250 लीटर पानी प्रति एकड़) के हिसाब से छिड़काव करें।

**कांगियारी या स्मट :-** इस रोग से बालियों की शुरू की अवस्था में कई जगह रोगी दाने बन जाते हैं। जो आकार में बड़े, उभरे हुये, चमकदार व गहरे हरे रंग के होते हैं। रोग ग्रस्त दाने जब फटते हैं तो उनमें से काले रंग का चूर्ण निकलता है जिसमें रोग जनित फफूंद के असंख्य बीजाणु होते हैं।

## रोकथाम :-

1. मई-जून में खेत की गहरी जुताई करके खुला छोड़ दें जिससे धूप में रोग के अवशेष नष्ट हो जायेंगे।
2. बोये जाने वाले बीजों को 2.0 ग्राम एमिसान और 4 ग्राम थाइरम फफूंदनाशक से प्रति किलो बीज के हिसाब से सूखा उपचार करें।

**अरगट चेपा :-** रोग ग्रस्त बालों से हल्के गुलाबी रंग का चिपचिपा गाढ़ा रस टपकने लगता है जो कि बाद में गहरा-भूरा हो जाता है। कुछ दिनों बाद दानों के स्थान पर गहरे भूरे रंग के पिंड बन जाते हैं।

## रोकथाम :-

1. फसल की समय पर बिजाई करें।

<sup>1</sup>कृषि विज्ञान केन्द्र, बावल

<sup>2</sup>कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़

2. शुरू में बिजाई से पहले बीजों को 10 प्रतिशत नमक के घोल में बीज को डालकर 10 मिनट तक चलाएं और ऊपर तैरते हुये पिण्डों को निकाल दें और नष्ट कर दें।
3. चेपा रोग से ग्रस्त पौधों/सिट्टों को नष्ट कर दें।
4. रोग ग्रस्त खेतों में तीन-चार साल तक फसल चक्र अपनाएं।
5. फसल में पत्तों से बालें बाहर आने वाली अवस्था में 400 मि.ली. क्युमान एल. को 200 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

## बाजरा के कीट व उनकी रोकथाम

**सफेद लट :-** यह कीट बाजरा को बहुत अधिक हानि पहुंचाता है। इस कीट की सूंडी (लट) सफेद रंग की होती है जिसका सिर भूरा व जबड़े काफी शक्तिशाली होते हैं। लट भूमि में पौधों की जड़ों को काटकर उन्हें सुखा देती है। प्रौढ़ का रंग हल्का या गहरा भूरा होता है जो मानसून की पहली भारी वर्षा वाली रात को करीब 7.30 से 8.00 बजे के बीच मिट्टी से बाहर निकलकर व पास के पेड़ों पर बैठकर उनकी पत्तियों को खाते हैं। यह प्रौढ़ सुबह आसपास के खेतों की गीली मिट्टी में छुप जाते हैं व वहीं पर अंडे देते हैं जिनसे लट्टें निकलकर फसलों की जड़ों को खाती हैं। इस प्रकार से फसल को बहुत ज्यादा नुकसान पहुंचाती हैं।

**रोकथाम :-** इनकी रोकथाम के लिए पेड़ों पर इकट्ठे हुए प्रौढ़ भुण्डों को वर्षा के बाद पहली व दूसरी रात्रि को पेड़ हिलाकर नीचे गिरा कर एकत्र करें व उन्हें मिट्टी के तेल के घोल में डालकर नष्ट कर दें। यदि यह कार्य अभियान चलाकर किया जाए तो सर्वोत्तम है अथवा प्रौढ़ भुण्डों को मारने के लिए पहली, दूसरी व तीसरी वर्षा होने के बाद (उसी दिन या एक दिन बाद) खेतों में खड़े पेड़ों पर 0.04 प्रतिशत मोनोक्रोटोफोस 36 एस. एल. या 0.05 प्रतिशत क्विनलफॉस 25 ई.सी. का छिड़काव करें।

**बालों वाली सूंडियां :-** इस कीट को कातरा भी कहते हैं। यह लंबे तथा घने बालों वाली भूरे पीले या काले रंग की होती हैं जिनका आक्रमण खरीफ की फसलों पर प्रायः हर वर्ष होता है। सूंडियां पत्तियों को खाकर हानि करती हैं तथा अधिक प्रकोप होने पर पूरी फसल नष्ट हो जाती है। रेतीले क्षेत्रों में प्रायः इन सूंडियों का अधिक आक्रमण होता है। इस कीट की सूंडियां छोटी अवस्था में इकट्ठी रह कर पत्तों की निचली सतह पर नुकसान करती हैं। पत्तों को छलनी कर देती हैं। बाद की अवस्था में यह सारे खेत में फैल जाती हैं तथा इधर-उधर घूमती रहती हैं तथा मूंग, उड़द, बाजरा आदि खरीफ की फसलों के पत्तों को खाती हैं। इस कीट की दो प्रजातियां हैं बिहार हैयरी केटरपिलर व रेड हैयरी केटरपिलर। लाल बालों वाली सूंडियां जुलाई के दूसरे पखवाड़े से अगस्त मास के आखिरी दिनों तक सक्रिय रहकर नुकसान करती हैं। दूसरी प्रजाति की सूंडियां अगस्त से अक्टूबर तक भारी नुकसान पहुंचाती हैं। इस कीट के मोथ पत्तों पर इकट्ठे अंडे देते हैं। अण्ड समूह को बालों से ढक देते हैं तथा प्रथम इन्स्टार लार्वा पत्तों की निचली सतह पर इकट्ठा रहते हैं तथा पत्तों को खा कर छलनी कर देते हैं। पौधों पर सिर्फ पत्तों की शिरायें रहती हैं। (शेष पेज 6 पर)



# ग्वार की पैदावार : कैसे बढ़ाएं

सत्यजीत, एस. पी. यादव<sup>1</sup> एवं शशि वशिष्ठ

कृषि विज्ञान केन्द्र, झज्जर

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा के बारानी क्षेत्रों में ग्वार दाने की एक महत्वपूर्ण खरीफ की फसल है। यह हरियाणा एवम् राजस्थान प्रदेश के शुष्क क्षेत्रों में खरीफ की औद्योगिक फसल के रूप में जानी जाने लगी है। इसका उपयोग दवाई, खनन, कपड़ा उद्योग, विस्फोटक पदार्थ, सौंदर्य प्रसाधन व खनन में किया जाता है। ग्वार के बीज में 31 प्रतिशत प्रोटीन एवम् 30-32 प्रतिशत गोंद पाया जाता है। इसका उपयोग पशुओं के पौष्टिक चारे के रूप में अकेले या ज्वार, बाजरा व लोबिया के साथ मिश्रित करके किया जा सकता है। दलहनी फसल होने के कारण इसको हरी खाद के रूप में ज़मीन में मिला कर भूमि की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाया जा सकता है। हरियाणा में इसकी उत्पादकता लगभग 772 किलोग्राम व भारत में 320 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर है। यदि किसान भाई उचित तरीके से बीज उपचार करके बिजाई करें व सही समय पर पौध संरक्षण की तरफ ध्यान दें तो ग्वार की पैदावार को काफी हद तक बढ़ाया जा सकता है।

## उन्नत किस्में :

**एच. जी. 75 :** यह किस्म 1981 में विकसित की गई थी। यह शाखाओं वाली बीमारी को सहन करने वाली किस्म है। यह झाड़ीनुमा व छोटे कद वाली है और देर से बोई गई अवस्था में भी एकसार पक जाती है। यह 110 से 115 दिन में पक जाती है। इसके बीज का रंग आर्कषक व क्रीम जैसा सफेद होता है इसके दाने की औसत पैदावार लगभग 7-8 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

**एच. जी. 365 :** यह किस्म 1998 में विकसित की गई थी। यह जल्दी पकने वाली किस्म है। यह 85-100 दिनों में पक जाती है। इसका पौधा छोटा, पत्तियां कोमल व कटाव वाली तथा इसका दाना छोटा एवं सलेटी रंग का होता है। इसकी औसत पैदावार लगभग 6.5-7.5 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**एच. जी. 563 :** यह एक शीघ्र पकने वाली किस्म है जिसको सामान्य खेती के लिए 2004 में अनुमोदित किया गया। यह पकने में 85-100 दिन लेती है तथा पौधे पर फलियां पहली व दूसरी गांठ से शुरू हो जाती हैं। इसका दाना चमकदार तथा एच. जी. 365 के मुकाबले मोटा होता है। इस किस्म की औसत पैदावार लगभग 7-8 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**एच. जी. 870 :** यह जल्दी पकने वाली (100-105 दिन) किस्म हरियाणा प्रांत के लिए 2010 में विकसित की गई। इसके दाने में प्राप्त गोंद उच्च गाढ़ापन लिए होता है। इसकी औसत पैदावार 7-8 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**एच. जी. 2-20 :** ग्वार की यह नई किस्म पूरे भारतवर्ष में ग्वार उत्पादन वाले क्षेत्रों के लिए 2010 में अनुमोदित की गई है। यह किस्म भी शीघ्र पकने (90-100 दिन) वाली है। इसकी फली में दानों की संख्या

सामान्यतः अन्य किस्मों से अधिक व दाना मोटा होता है। इस किस्म की औसत पैदावार 8-9 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**भूमि व खेत की तैयारी :** कल्लर व सेम वाली भूमि इसकी काशत के लिए ठीक नहीं है। अच्छे जल-निकास वाली रेतीली दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। खेत तैयार करने के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा बाद की एक या दो जुताइयां देसी हल से करें।

**बिजाई का समय :** अगेती पकने वाली किस्मों एच. जी. 365 व एच. जी. 563 की बिजाई जून के दूसरे पखवाड़े में करने से पैदावार अधिक आती है। फसल की कटाई के बाद सिंचित अवस्था में राया की फसल भी सफलतापूर्वक ली जा सकती है। इसके अलावा एच. जी. 870 व एच. जी. 2-20 की बिजाई के लिए जुलाई का प्रथम पखवाड़ा उचित रहता है लेकिन इसके बाद बिजाई करने पर पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

**बीज मात्रा व बिजाई का तरीका :** एक एकड़ के लिए 5-6 कि.ग्रा. बीज उपरोक्त किस्मों के लिए पर्याप्त रहता है। एच. जी. 365 व एच. जी. 563 को 30 सें.मी. तथा एच. जी. 870 व एच. जी. 2-20 को 45 सें.मी. के फासले पर पोरा विधि से 5-6 सें.मी. गहरा बोयें तथा पौधे से पौधे का फासला 15 सें.मी. रखें।

**बीज उपचार :** बिजाई से पहले बीज उपचार हेतु 6 लीटर पानी में 6 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन घोल लें और इस घोल में 5-6 किलोग्राम ग्वार बीज आधा घण्टा तक भिगोयें तथा बीज को इस घोल से निकाल कर छाया में सुखा लें। इसके बाद बीज को राइजोबियम (राइजोटीका) व पी.एस.बी. (फास्फोटीका) कल्चर से एक एकड़ बीज के लिए प्रति पैकेट के हिसाब से कल्चर के साथ दी गई विधि अनुसार उपचारित करके छाया में सुखाकर बिजाई करें। ये टीके चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार के माइक्रोबायोलॉजी विभाग एवं किसान सेवा केन्द्र से प्राप्त किये जा सकते हैं।

**खाद :** खादों के समुचित उपयोग हेतु मिट्टी की जांच अति आवश्यक है। बिजाई के समय 16 कि.ग्रा. फास्फोरस (100 कि.ग्रा. सिंगल सुपरफास्फेट) तथा 8 किलो नाइट्रोजन (18 किलो यूरिया) प्रति एकड़ के हिसाब से डालें। यदि खेत में गंधक की कमी हो तो 60 कि.ग्रा. जिप्सम प्रति एकड़ बिजाई पर डालें।

**निराई-गुड़ाई :** एक गोड़ाई बिजाई के 25-30 दिन पर व ज़रूरत पड़े तो दूसरी गोड़ाई हेंड व्हील 'हो' से 15 दिन बाद करें।

**सिंचाई :** बारानी फसल होने के कारण सामान्य मानसून की वर्षा पर्याप्त होती है। यदि फलियां बनते समय वर्षा न हो तो एक सिंचाई अवश्य करें।

**बीमारी व कीड़े :** आमतौर पर बारानी फसल होने के नाते किसान भाई खेतों का निरीक्षण समय पर नहीं करते तथा जीवाणु अंगमारी व जड़ गलन बीमारी का प्रकोप बढ़ने पर फसल में काफी नुकसान हो जाता है। किसान भाई समय-समय पर तथा खासतौर पर 55-60 दिन की फसल होने पर अवश्य अपने खेतों का निरीक्षण करें। जीवाणु अंगमारी रोग के कारण पत्तों पर भूरे व काले रंग के जलसिक्त धब्बे बन जाते हैं तथा नमी के मौसम में ये धब्बे आपस में मिलकर बड़े आकार के हो जाते हैं। बाद में ये तनों व फलियों पर भी दिखाई देते हैं। कभी-कभी फसल पर तेले का आक्रमण भी हो जाता है।

(शेष पृष्ठ 09 पर)

<sup>1</sup> क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल

# ग्वार उत्पादन : उन्नत कृषि क्रियाएं

रमेश कुमार, जयलाल यादव एवं अशोक ढिल्लों  
कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

ग्वार एक औद्योगिक तथा नगदी फसल है। औद्योगिक फसल होने के कारण ग्वार की खेती का महत्व रहेगा। हरियाणा प्रदेश में ग्वार की खेती अधिकतर दक्षिण-पश्चिम क्षेत्रों में होती है। पिछले पांच-छः वर्षों में इस फसल के क्षेत्रफल में निरन्तर परिवर्तन देखने में आया है। फसल उत्पादन के मूल्य में बढ़त-घटत के कारण क्षेत्रफल में परिवर्तन हुआ है। ग्वार की खेती से किसानों को न केवल नगद आमदनी प्राप्त होती है अपितु भूमि की उपजाऊ शक्ति भी बढ़ती है। इसलिए किसानों को उत्पाद की कीमतों को दरकिनार करके फसल उत्पादन की उन्नत क्रियाएं अपनाकर पैदावार लेने के प्रयास करने चाहिए। ग्वार उत्पादक किसानों से उत्पादन तकनीकों के प्रयोग पर एकत्रित जानकारी से ज्ञात होता है कि अधिकतर किसान पैदावार बढ़ाने में सहायक प्रमुख तकनीकों को अपनाने में पीछे हैं। यही कारण है कि ग्वार फसल की प्रदेश स्तर पर औसत पैदावार (3.27 क्विंटल प्रति एकड़) तथा उन्नत किस्मों की औसत पैदावार (7.0-8.0 क्विंटल प्रति एकड़) में काफी अन्तर है। इस अन्तर को कम करके ग्वार की उत्पादकता व पैदावार बढ़ाई जा सकती है। किसानों को ग्वार की अधिक पैदावार के लिए चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों द्वारा विकसित ग्वार उत्पादन की निम्नलिखित उन्नत कृषि क्रियाएं अपनानी चाहिए।

**उन्नत किस्मों का प्रयोग :** किसानों को चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा अनुमोदित उन्नत किस्में उगानी चाहिए। इन किस्मों की अधिक पैदावार देने की क्षमता होती है। इन किस्मों का संक्षेप विवरण इस प्रकार है :-

**एच. जी. 75 :** इस किस्म के पौधे झाड़ीनुमा तथा अधिक शाखाओं के होते हैं। यह किस्म 110 से 115 दिन में पक जाती है तथा अधिकतर फलियां एकसार पकती हैं। इसका दाना आकर्षक तथा क्रीम जैसा सफेद होता है। यह किस्म बीमारियों के प्रति सहनशील है तथा अधिक गोंद उत्पन्न करने वाली किस्म है। इस किस्म से 7-8 क्विंटल प्रति एकड़ दाने की औसत पैदावार मिल जाती है।

**एच. जी. 365 :** इस किस्म का पौधा छोटा होता है। यह जल्दी पकने वाली फसल है। यह किस्म 85-100 दिन में पक जाती है। इसका दाना छोटा तथा सलेटी रंग का होता है। दाने की औसत पैदावार 6.5-7.5 क्विंटल प्रति एकड़ हो जाती है। दाने में गोंद की मात्रा 30 प्रतिशत होती है। कम समय में पकने के कारण इस किस्म की कटाई के बाद राया की फसल ली जा सकती है।

**एच. जी. 563 :** यह एक शीघ्र पकने वाली किस्म है जो 85-100 दिन में पक जाती है। इसके पौधों पर फलियां पहली तथा दूसरी गांठ से शुरू हो जाती हैं। इसका दाना चमकदार व एच. जी. 365 के दाने से मोटा होता है। यह किस्म ग्वार की सभी बीमारियों की प्रतिरोधी है। इस किस्म की औसत पैदावार 7-8 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**एच. जी. 2-20 :** यह किस्म 90-100 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसकी फलियों में दानों की संख्या अन्य किस्मों की तुलना में अधिक होती है। इसके दानों की पैदावार 8-9 क्विंटल प्रति एकड़ है। यह किस्म जीवाणुज पत्ता अंगमारी, जड़ गलन तथा आल्टरनेरिया अंगमारी रोगों के

प्रति सामान्यतः रोगरोधी है।

**बिजाई का समय :** वर्षा पर निर्भर क्षेत्रों में ग्वार की बिजाई मानसून की वर्षा होने पर करनी चाहिए। जल्दी पकने वाली किस्म एच. जी. 365 व एच. जी. 563 की बिजाई जून के दूसरे पखवाड़े में करने से अधिक पैदावार मिलती है। देर से पकने वाली किस्म एच. जी. 75 की बिजाई मध्य जुलाई में करनी चाहिए। इससे पहले बिजाई करने से फसल की अधिक बढवार होने से पैदावार कम मिलती है। जुलाई के तीसरे सप्ताह के बाद की बिजाई में पैदावार में काफी कमी आ जाती है।

**बीज की मात्रा व बिजाई का तरीका :** ग्वार की प्रमुख उन्नत किस्मों के दाने में भिन्नता के कारण बीज की मात्रा किस्म के अनुसार बदलती रहती है। एच. जी. 365; एच. जी. 563 तथा एच. जी. 2-20 की एक एकड़ में बिजाई के लिए 5-6 किग्रा. तथा एच. जी. 75 के 7-8 किग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। बिजाई खुदों में 45 सेंमी. व पौधों में 15 सेंमी. की दूरी पर करें। एच. जी. 365 की बिजाई के लिए खुदों में 30 सेंमी. की दूरी रखें।

**बीज उपचार :** अधिक पैदावार के लिए फसल को प्रमुख बीमारी बैक्टीरियल लीफ ब्लाइट से बचाने व नत्रजन तत्व की पूर्ति के लिए अनुमोदित फंफूदनाशक तथा राइजोबियम कल्चर से बीज का उपचार करके बिजाई करनी चाहिए। इसके लिए एक एकड़ के बीज को 6 लीटर पानी व 6 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के घोल में 15-20 मिनट तक भिगोएं। उसके बाद आधा घण्टा छाया में सुखाने के पश्चात बीज का राइजोबियम कल्चर से अन्य दलहनी फसलों की भांति उपचार करें। उपचारित बीज को आधा घण्टा छाया में सुखाने के बाद बिजाई करें।

**उर्वरक :** ग्वार की अच्छी पैदावार के लिए उर्वरकों का प्रयोग उचित समय व संतुलित मात्रा में करना चाहिए। इसके लिए 16 किग्रा. फास्फोरस (100 किग्रा. सिंगल सुपरफास्फेट या 35 किग्रा. डी0 ए0 पी0) तथा 8 किलो ग्राम नाइट्रोजन (18 किग्रा. यूरिया) प्रति एकड़ बिजाई से पहले डालें। यदि भूमि में गन्धक की कमी है तो 8 किग्रा. गन्धक (60 किग्रा. जिप्सम) प्रति एकड़ बिजाई से पहले अन्तिम जुताई के समय डालें।

**निराई-गोडाई :** अच्छी पैदावार के लिए फसल को खरपतवार मुक्त रखना अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए एक गोड़ाई बिजाई के 25-30 दिन बाद तथा आवश्यकता हो तो दूसरी 'हैंड व्हील हो' से करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त खरपतवारों की रोकथाम बैसालीन 800 मिली. प्रति एकड़ 250 लीटर पानी में मिला कर फसल बिजाई से पहले ज़मीन में मिलाकर भी की जा सकती है।

**कीड़ों की रोकथाम :** ग्वार की फसल में कीड़ों से कोई विशेष हानि नहीं होती परन्तु कभी-कभी तेला इस फसल को नुकसान करता है। इसकी रोकथाम के लिए 200 मि0 ली0 मैलाथियान 50 ई0 सी0 को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ में छिड़काव करें।

**बीमारियों की रोकथाम :-** जीवाणुज पत्ता अंगमारी ग्वार की प्रमुख बीमारी है जिससे पैदावार काफी प्रभावित होती है। इस बीमारी की रोकथाम के लिए बीज का पहले बताए गए फंफूदनाशक से उपचार करके बिजाई करनी चाहिए। खड़ी फसल में बीमारी के लक्षण दिखाई देने पर 30 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन एवं 200 ग्राम कॉपर आक्सीक्लोराइड को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ 15-20 दिन के अन्तर पर दो छिड़काव करें।



# उन्नत सस्य क्रियाएं अपनाएं : कपास का उत्पादन बढ़ाएं

करमल सिंह मलिक एवं अरुण जानू  
कपास अनुभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कपास हरियाणा में खरीफ की महत्वपूर्ण नकदी फसल है। हरियाणा में कपास लगभग 5 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में उगाई जाती है। हरियाणा में कपास (रूई) का औसत उत्पादन लगभग 5.7 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। परंतु कई प्रगतिशील किसान उन्नत कृषि क्रियाएं अपनाकर 10 से 12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक की पैदावार लेने में सफल होते हैं।

इस लेख के माध्यम से किसानों को फसल में अपनाई जाने वाली उन्नत सस्य क्रियाओं के बारे में बताया जाएगा ताकि किसान भाई अपनी पैदावार बढ़ा सकें।

**भूमि व खेत की तैयारी :** कपास की फसल रेतीली, लूणी व सेम वाली भूमि में न की जाए, जमीन को अच्छी प्रकार से तैयार करने के लिए 3-4 जुताई करें, दो-तीन साल में एक बार गहरी जुताई भी करें, प्रत्येक जुताई के बाद खेत में सुहागा लगायें। खेत का लेवल भी सही होना चाहिए।

**बिजाई का समय :** कपास की बिजाई अप्रैल माह की शुरुआत से ही की जा सकती है व मई के अंत तक पूरी कर ली जानी चाहिए। बिजाई में देरी होने पर कपास का उत्पादन कम होता है।

**बीज उपचार :** हरियाणा में लगभग 98 प्रतिशत बी.टी. कपास की बिजाई की जाती है व बी.टी. कपास का बीज उपचारित मिलता है। देसी कपास की बिजाई करने वाले किसान भाई कपास के बीज का उपचार अवश्य करें। रोएंदार बीज का 6-8 घण्टे तक तथा रोएं उतारे गये बीज का केवल दो घण्टे तक ही उपचार करें।

एमिसान : 5 ग्राम, स्ट्रैप्टोसाईक्लिन : 1 ग्राम

सक्सीनिक तेजाब : 1 ग्राम, पानी : 10 लीटर

कपास का बीज : 5-6 कि.ग्रा. रोएं उतारे बीज

6-8 कि.ग्रा. रोएंदार बीज

जिन क्षेत्रों में दीमक की समस्या हो वहां उपर्युक्त उपचार के बाद बीज को थोड़ा सुखाकर 10 मि.ली. क्लोरपाईरीफास 20 ई.सी. व 10 मि.ली. पानी प्रति किलो बीज की दर से मिला कर थोड़ा-थोड़ा बीज पर छिड़कें व अच्छी तरह मिलाएं तथा बाद में 30-40 मिनट छाया में सुखा कर बिजाई करें।

जड़ गलन की समस्या वाले क्षेत्रों में ऊपर बताए गये उपचार के बाद बीज को 2 ग्राम बाविस्टिन प्रति कि.ग्रा. बीज के हिसाब से सूखा उपचार करें। यह उपचार 40-50 दिन तक ही फसल को बचा सकता है।

**बीज की मात्रा :** बी.टी. कपास के दो पैकट प्रति एकड़ के हिसाब से लगाएं व देसी कपास में 5.0 कि.ग्रा. प्रति एकड़ रोएं उतारे बीज का प्रयोग करें। अगर संकर कपास की बिजाई करें तो 1.2-1.5 कि.ग्रा प्रति एकड़ के हिसाब से बिजाई करें।

**बिजाई का तरीका :** बीज को 4-5 सें.मी. गहरा बोयें। बी.टी. व संकर कपास में कतार से कतार की दूरी 67.5 सें.मी. या 100 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 60 सें.मी. या 45 सें.मी. रखें। देसी कपास में कतार से कतार की दूरी 67.5 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 30 सें.मी. रखें। कपास में कतारों की दिशा पूर्व से पश्चिम होने से उत्पादन अधिक होता है। बिजाई के दो-तीन सप्ताह बाद कतारों में पौधों के सिफारिश किए आपसी फासले को ध्यान में रख कर कमजोर व रोगग्रस्त पौधों को निकाल दें। एक जगह पर एक ही पौधा रखें। पौधों की छंटाई पहली सिंचाई से पहले कर लें।

**खाद :** कपास में खादों की मात्रा जो है विश्व विद्यालय द्वारा प्रति एकड़ के हिसाब से बताई गई (किलोग्राम/एकड़) का प्रयोग करें व मिट्टी की जाँच अवश्य करवाएं।

	नाइट्रोजन	फास्फोरस	पोटाश	जिंक सल्फेट (21 प्रतिशत)
बी.टी. कपास	70	24	24	10
देसी कपास	20	-	-	10

सारा फास्फोरस, पोटाश व जिंक सल्फेट बिजाई के समय डालें। बी.टी. किस्मों के लिए नाइट्रोजन खाद तीन बराबर हिस्सों में बांट कर तीन बार डालें-बिजाई के समय, बौकी आने पर तथा फूल आने पर।

**यूरिया का पत्तों पर छिड़काव :** 2.5 प्रतिशत यूरिया का घोल बनाकर कपास की फसल में फूल व टिण्डे लगते समय छिड़काव करें अगर ऐसा करें तो नाइट्रोजन प्रति एकड़ 8 किलो कम की जा सकती है।

**पोटाशियम नाइट्रेट का छिड़काव :** फसल में फूल आने पर एवं टिण्डे बनने के समय एक प्रतिशत पोटाशियम नाइट्रेट का पत्तों पर छिड़काव करने से कपास का उत्पादन व गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

**निराई तथा गोड़ाई :** कपास में खरपतवार नियंत्रण के लिए दो-तीन बार निराई-गोड़ाई करनी चाहिए। पहली गोड़ाई पहली सिंचाई से पहले करें। बाद में हर सिंचाई या बरसात के बाद करें। उगने से पहले स्टोम्प 30 का प्रयोग 2 किलो प्रति एकड़ के हिसाब से करने पर सांठी व सांवक किस्म के खरपतवारों पर नियंत्रण पूरी तरह से हो जाता है।

**सिंचाई :** कपास की फसल में वर्षा के हिसाब से 3 से 4 बार सिंचाई करने की आवश्यकता पड़ती है। पहली सिंचाई जितनी देर से की जाए अच्छी है परंतु फसल को नुकसान नहीं होना चाहिए। फूल और फल आते समय सिंचाई के अभाव में फसल पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

आखिरी सिंचाई एक-तिहाई टिण्डों के खुलते ही कर दें। इसके बाद कोई सिंचाई न करें। कपास में डोलियां बना कर भी सिंचाई कर सकते हैं। कपास की फसल में टपका विधि से भी सिंचाई कर सकते हैं। कपास में मूंग की खेती भी की जा सकती है। लेकिन इसके लिए कपास की बिजाई अप्रैल के पहले सप्ताह में करें व मूंग की ग्रीष्मकालीन किस्म ही लगाएं, कपास की दो कतारों के बीच में मूंग की दो कतार लगाएं। कपास व मूंग की बिजाई एक ही दिन करें व खाद वही डालें जो कपास में अनुमोदित है।

**चुनाई :** मण्डियों में अच्छे दाम प्राप्त करने के लिए साफ व सूखी कपास चुनें। कपास का सूखे गोदामों में भण्डारण करें।





# कपास की फसल में पोटाशियम का महत्व

पूजा रानी, ऊषा कौशिक एवं देवराज

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कपास खरीफ की एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। इस फसल की समुचित पैदावार में पोषक तत्वों का बहुत योगदान है। सही समय पर, सही तत्व पर्याप्त मात्रा में पौधों को मिलना उनके विकास के लिए बहुत जरूरी होता है। पोटाश सभी प्रकार के पौधों के लिए मुख्य पोषक तत्व है जो पत्तियों में शर्करा और स्टार्च के निर्माण की कुशलता बढ़ाता है। यह पौधे में नाइट्रोजन की कार्य कुशलता को बढ़ाता है व लोहे को अधिक चलायमान रखता है। यह पौधे की संपूर्ण जल वयवस्था को नियंत्रित करता है और पौधे की पाले व सूखे से रक्षा करता है। पोटाशियम कपास के रेशों को लंबा, मजबूत, चमकदार बनाता है। मिट्टी में पोटाशियम की पर्याप्त मात्रा पौधों में रोगों के प्रति प्रतिरोधिता को बढ़ाता है। जीवाणु अंगमारी या कोणदार धब्बों का रोग कपास का मुख्य रोग है जो पौधे के सभी भागों पर अपने लक्षण दिखाता है परंतु पोटाश की पर्याप्त उपलब्धता से पौधों में इस बीमारी के प्रकोप से काफी हद तक बचा जा सकता है। इसी तरह पोटाश की पर्याप्तता कपास के पौधों को उखेड़ा, पत्ता अंगमारी व पत्तों पर धब्बे बनना जैसे रोगों से लड़ने की अपार शक्ति प्रदान करती है।

हरियाणा की ज़मीन में पोटाशियम की कमी बढ़ती जा रही है तथा हल्की ज़मीन में इसकी कमी ज्यादा पाई गई है। हरियाणा की करीब 20 प्रतिशत ज़मीन में पोटाश की कमी पाई गई है। हरियाणा में मुख्यतः सिरसा, फतेहाबाद, हिसार, जींद, भिवानी व रोहतक मुख्य कपास उत्पादक ज़िले हैं। इन ज़िलों में क्रमशः सिरसा की 29.57 प्रतिशत, फतेहाबाद की 51.83, हिसार 1.49, जींद की 37.10, भिवानी की 43.68 ज़मीन में पोटाश का स्तर कम है। अतः इस ज़मीन में पोटाश की खाद का सीधा प्रभाव पौधे की वृद्धि व पैदावार पर दिखता है। पोटाश की कमी से कपास के पौधे में नीचे की पत्तियों का रंग पहले गहरा हरा हो जाता है और बाद में पत्तियों की मध्य शिरा का भाग भूरा-बैंगनी हो जाता है। पत्तियां सख्त हो जाती हैं एवं शिराओं से सूख जाती हैं तथा समय से पहले गिर जाती हैं। टिण्डे छोटे व अपरिपक्व रह जाते हैं और एक साथ खिलने में विफल रहते हैं। कपास के रेशे भी कम गुणवत्ता के होते हैं। अतः किसानों को सलाह है कि कपास की बिजाई के समय 40 किलोग्राम प्रति एकड़ के हिसाब से म्युरेट ऑफ पोटाश अवश्य डालें। मिट्टी जाँच रिपोर्ट के आधार पर सिफारिश की गई पोटाश की मात्रा बिजाई के समय डालना और भी ज्यादा फायदेमंद होगा। यदि किसी कारणवश बिजाई के समय पोटाश की खाद न डाली गई हो तो पहले पानी के समय भी पोटाश को डाला जा सकता है।

**पोटाशियम नाइट्रेट के छिड़काव का महत्व :** कपास की फसल बरसात के मौसम में उगाई जाती है तथा कई बार बरसात के कारण पोषक तत्व ज़मीन के नीचे चले जाते हैं तथा टिण्डे बनते समय पोषक तत्वों की कमी आ जाती है जिसके कारण पैदावार घट सकती है। ऐसी परिस्थितियों में कपास के खेत में पोटाश की कमी भी आ सकती है। (शेष पृष्ठ 10 पर)

# फसलों में उर्वरक प्रयोग की विधि और समय

प्रमोद कुमार यादव, मुकेश कुमार जाट एवं आभा टिक्कू

मृदा विज्ञान विभाग

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

**उर्वरकों का प्रयोग :** उर्वरकों से अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करने के लिए उनका सही चयन व प्रयोग विधि एक आवश्यक कदम है।

**नाइट्रोजन वाले उर्वरक :** अधिकतर नाइट्रोजन यूरिया के रूप में आसानी से उपलब्ध हो जाता है। यूरिया नाइट्रोजन का एक अच्छा स्रोत है जो अधिकतर हर प्रकार की भूमि में व फसलों में उपयोग किया जाता है। गंधक (सल्फर) की कमी वाले क्षेत्रों में अमोनियम सल्फेट अधिक प्रभावशाली सिद्ध होता है जबकि असिंचित क्षेत्रों में किसान खाद एक लाभदायक उर्वरक है।

**फास्फोरस वाले उर्वरक :** अधिकतर फास्फोरसधारी उर्वरक पानी में घुलनशील हैं जैसे सिंगल सुपर फास्फेट (एस.एस.पी.), डाई अमोनियम फास्फेट (डी.ए.पी.) आदि जो फसलों की आवश्यकता व कीमत के आधार पर चुने जा सकते हैं। अम्लीय भूमि में रॉक फास्फेट, गंधक की कमी वाली भूमि में सिंगल सुपर फास्फेट (एस.एस.पी.) या अमोनियम फास्फेट सल्फेट (ए.पी.एस) का प्रयोग लाभदायक होता है।

**पोटाश वाले उर्वरक :** पोटाशियम क्लोराइड (एम.ओ.पी.) एक अच्छा स्रोत है जो अधिकांश भूमि में सफलतापूर्वक प्रयोग किया जाता है परन्तु जो फसलें क्लोरीन को नहीं सह पातीं जैसे तम्बाकू, आलू, कुछ फल वृक्ष आदि उनके लिए पोटाशियम सल्फेट (एस.ओ.पी.) उपयुक्त रहता है परन्तु यह पोटाशियम क्लोराइड से महंगा है। इसलिए जिन फसलों में गुणवत्ता का विशेष महत्व है उसे वहाँ ही प्रयोग करना चाहिए।

**गंधक वाले उर्वरक :** गंधक की आवश्यकता जिप्सम, सिंगल सुपर फास्फेट, अमोनियम, सल्फेट, सल्फेट ऑफ पोटाश से पूरी की जा सकती है।

**सूक्ष्म पोषक तत्वों का चयन:** जिंक के लिए जिंक सल्फेट, लोहे के लिए फ़ैरस सल्फेट, तांबे के लिए कॉपर सल्फेट, मैंगनीज़ के लिए मैंगनीज़ सल्फेट प्रयोग करें। बोरॉन के लिए बोरेक्स व मोलिब्डेनम के लिए अमोनियम मोलिब्डेट का प्रयोग करें।

**उर्वरक प्रयोग की विधि :** उर्वरक चयन करने के बाद उसका सही समय पर प्रयोग आवश्यक होता है। उर्वरक का प्रयोग तीन प्रकार से किया जाता है।

1. भूमि में प्रयोग
2. खड़ी फसल में प्रयोग
3. फसल पर छिड़काव

**1. भूमि में प्रयोग:** इस विधि में उर्वरक बुवाई के समय ड्रिल या पोरे द्वारा दिया जाता है। यदि किसान के पास कोई यंत्र नहीं है तो वह उर्वरक को हाथ से आखिरी जुताई से पहले बिखेर (छिट्टा लगाना) सकता है। उर्वरक को भूमि की सतह पर न छोड़ें और अच्छी तरह मिट्टी में मिला दें।

**2. खड़ी फसल में प्रयोग:** खड़ी फसल में उर्वरक ऊपर से (छोटी फसल में) या पौधे की कतारों के बीच में हाथ से बिखेरा जाता है। उर्वरक

को गुड़ाई द्वारा भूमि में मिलाया जाता है या हल्की सिंचाई की जाती है।

**3. छिड़काव:** उर्वरक को पानी में घोला जाता है और स्प्रेयर यंत्र से पत्तों पर छिड़काव किया जाता है। यह आमतौर पर तब किया जाता है जब किसी खड़ी फसल में किसी विशेष पोषक तत्व की कमी आ जाती है जैसे नाइट्रोजन या सूक्ष्म तत्वों की।

**उर्वरक देने का उपयुक्त समय:** उर्वरक का प्रयोग बुवाई के समय और खड़ी फसल में किया जाता है। किसी भी फसल की भरपूर पैदावार के लिए आवश्यक है कि प्रारम्भ से ही पौधों की अच्छी बढवार हो जिसके लिए बुवाई के समय 1/2 या 1/3 भाग नाइट्रोजन खाद, पूरी फास्फोरस, पोटाश, जिंक व गंधक की मात्रा खेत में डालें। नाइट्रोजन की बीज अंकुरण के समय कम मात्रा में आवश्यकता होती है परन्तु बढोत्तरी व फल-फूल आने के समय अधिक आवश्यकता होती है साथ ही नाइट्रोजन पानी में घुल कर नीचे गहराई में भी चला जाता है। इसलिए नाइट्रोजन खाद का आधा भाग बुवाई के पूर्व और शेष आधा दो या तीन बार में खड़ी फसल में देना चाहिए।

फास्फोरस जड़, बाली और दानों के लिए आवश्यक है जिसे पौधा उपयुक्त मात्रा में अपने बढवार के समय लेता है। यह नाइट्रोजन की तरह जमीन में कम चलायमान नहीं होता इसलिए इसकी पूरी मात्रा बुवाई से पहले देनी आवश्यक है। खड़ी फसल में फास्फोरस की कमी दूर करना असम्भव है। क्षारीय तथा उदासीन भूमि में घुलनशील फास्फोरस जैसे सुपरफास्फेट का प्रयोग करें। पोटाश पौधे का प्रयोग प्रारम्भ से अंत तक करता है और बढवार की अवस्था में पोटाश का उपयोग नाइट्रोजन व फास्फोरस की अपेक्षा अधिक करता है और यह भूमि में कम चलायमान है अतः पोटाश का भी प्रयोग बुवाई से पूर्व करें। जिंक की कमी के क्षेत्रों में बुवाई से पूर्व जिंक सल्फेट डाल देना चाहिए। खड़ी फसलों में शेष नाइट्रोजन पौधों में फुटाव के समय और फूल आने से पूर्व दिया जाना लाभदायक होता है।

**उर्वरक डालने का तरीका :** नाइट्रोजन वाले उर्वरकों को छिड़क कर या पोर कर देना चाहिए। यदि उर्वरक यूरिया है तो छिड़कने के बाद सुहागा लगा देना चाहिए। यदि उर्वरक यूरिया है तो छिड़कने के बाद सुहागा लगा देना चाहिए ताकि उर्वरक मिट्टी की परत से ढक जाये अन्यथा इसे मिट्टी में पोर देना चाहिए। फास्फोरस और पोटाश वाले उर्वरकों को जमीन में 7 से 10 सें.मी. (3-4 इंच) की गहराई पर बिजाई से पहले पोर देना चाहिए ताकि मिट्टी के कणों के साथ कम से कम संपर्क में आये, भूमि में बंध नहीं पाए और पौधों की जड़ों को आसानी से उपलब्ध हो। जिंक की पूरी मात्रा बिजाई से पूर्व अथवा बिजाई के समय पोर देनी चाहिए।

खड़ी फसलों में नाइट्रोजन दो बार छिड़का जाता है। भारी भूमि में सिंचाई से पहले तथा हल्की भूमि में सिंचाई के बाद, छिड़क कर हल्की गोड़ी कर देनी चाहिए जिससे वाष्पीकरण द्वारा उर्वरक का नुकसान न हो। सुबह के समय जब फसल पर ओस पड़ी हो या पत्ते गीले हों, उस समय नाइट्रोजन खाद फसल पर न छिड़कें अन्यथा फसल के झुलसने का डर रहता है। नाइट्रोजन की खाद को हवा में खुला न छोड़ें। बारानी क्षेत्रों में नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश व जिंक उर्वरकों की पूरी मात्रा बिजाई से

पूर्व खेत में पोर देनी चाहिए। जिन खेतों में नमी कम हो उनमें नियमित मात्रा में ही उर्वरकों का प्रयोग करें। अगर बारानी फसल में नाइट्रोजन की कमी के लक्षण दिखाई दें तो 2.5 प्रतिशत यूरिया (2.5 कि.ग्रा. यूरिया प्रति 100 लीटर पानी में) के घोल के रूप में दो या तीन बार पौधे के फुटाव के समय या फूल आने से पूर्व छिड़क देना चाहिए।

**उर्वरकों के प्रयोग के लिए कुछ विशेष ध्यान देने योग्य बातें:**

1. पोषक तत्वों को मिट्टी परीक्षण पर आधारित संतुलित मात्रा में दें।
2. खाद को उचित समय व उचित तरीके से दें।
3. बीच व खाद को साथ न मिलायें।
4. खड़ी फसल में नाइट्रोजन उर्वरक देने के बाद खुला न छोड़ें और तुरन्त हल्की गोड़ाई करें।
5. जब फसल पर ओस पड़ी हो तो नाइट्रोजन खाद न डालें।



(पेज 1 का शेष)

**नियन्त्रण :-**

1. खरीफ फसलों की कटाई के बाद गहरी जुताई करें। जिससे इस कीट के प्यूपा ज़मीन के बाहर आ जाते हैं जो पक्षियों द्वारा व अन्य कारणों से नष्ट हो जाते हैं।
2. लाल बालों की सूँड़ी के पतंगे रोशनी की तरफ आकर्षित होते हैं। पहली बारिश के उपरान्त एक महीने तक प्रकाश प्रपंच का उपयोग कर के इकट्ठे करें।
3. खेतों के आस-पास खरपतवारों को न रहने दें क्योंकि ये कीट उन पर अंडे देते हैं।
4. यह कीट समूह में अंडे देते हैं अतः अंडा समूह को पत्ते सहित तोड़ कर खत्म कर दें।
5. पत्तों को छोटी सूँड़ियों समेत तोड़ लें तथा ज़मीन में गहरी दबा दें या मिट्टी के तेल के घोल में डालकर मार दें।
6. बड़ी सूँड़ियों को कुचलकर मार दें।
7. आवश्यकता पड़े तो बड़ी सूँड़ियों की रोकथाम के लिए 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफोस 36 एस. एल. या 500 मिली क्विनालफॉस (एकालक्स) 25 ई. सी. को 250 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

**भूण्डी:** यह सलेटी रंग की होती है जो पत्तियों को किनारों से खाकर अगस्त से अक्टूबर तक फसल को नुकसान करती है।

**रोकथाम:** इस कीट का यदि आक्रमण दिखाई दे तो 400 मि. ली. मैलाथियान 50 ई. सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।



# खरीफ में बारानी खेती-समस्याएं एवं समाधान

सत्यजीत, एस.पी. यादव<sup>1</sup> एवं शशि वशिष्ठ

कृषि विज्ञान केन्द्र, झज्जर

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

खरीफ में खाद्यान्नों के अन्तर्गत बोया जाने वाला क्षेत्रफल रबी मौसम की तुलना में लगभग डेढ़ गुणा अधिक होता है। लेकिन खाद्यान्न का उत्पादन इस अनुपात में नहीं है जिसके अनेक कारण हैं, खरीफ में कृषि उत्पादन मुख्यतः दक्षिण-पश्चिम मानसून पर निर्भर करता है। खरीफ में प्राकृतिक आपदा जैसे सूखा-बाढ़ आदि का प्रकोप भी अधिक होता है। मौसम में आर्द्रता होने के कारण खरपतवार, कीट एवं बीमारियों का प्रकोप भी खरीफ में अधिक होता है।

## बारानी खेती की मुख्य समस्याएं :

- कभी-कभी लगातार वर्षा होने के कारण फसलों की बुवाई बार-बार करनी पड़ती है।
- फसल का सही जमाव नहीं हो पाता परिणामस्वरूप पौधों की संख्या बहुत कम रह जाती है।
- प्रायः किसान खाद व उन्नत किस्म के बीज का प्रयोग कम करते हैं।
- खरपतवारों का फैलाव अधिक होने के कारण उपज 50 प्रतिशत तक प्रभावित हो जाती है।
- खेतों पर मेढ न होने के कारण वर्षा जल का संरक्षण नहीं हो पाता है।
- जमीन का कम उपजाऊ होना। बारानी क्षेत्रों की भूमि केवल प्यारी ही नहीं बल्कि भूखी भी है।
- उचित समय पर पौधों का कीट व बीमारियों से बचाव न होना।
- बरसात के पानी को इकट्ठा करने के लिए किसान स्तर पर उचित प्रबन्धन का न होना।
- वार्षिक वर्षा कम व वाष्पीकरण की दर का अधिक होना तथा तेज हवाओं से भूमि का कटाव।
- बारानी क्षेत्र के किसान के पास धन व उन्नत तकनीकी जानकारी का अभाव होता है।
- सूखे का प्रकोप होने पर न केवल पैदावार घटती है बल्कि चारे की गुणवत्ता पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है।
- कम बारिश की स्थिति में क्षारीय पानी का दोहन ज्यादा होता है, जिसके कारण भूमि की ऊपरी सतह में नमक की मात्रा बढ़ जाती है।

## समस्याओं का समाधान :

### वर्षा जल एवम् मृदा का समुचित प्रबन्ध :

- लेजर लैंड लैवलर द्वारा भूमि को अवश्य समतल करवाएं तथा वर्षा की शुरुआत होने से पहले खेत के चारों ओर मेढबन्दी करनी चाहिए।
- मृदा में वर्षा जल के प्रवेश को बढ़ाने के लिए मानसून शुरू होने से पहले, खेत की अच्छी जुताई करें।
- अपने फार्म का ऊपरी (ऊँचाई वाला) हिस्सा खरीफ फसलों के लिए व नीचे का भाग रबी फसलों के अन्तर्गत लेना चाहिए।
- खरीफ फसलों की बिजाई, जब भी जून या जुलाई में 20-30 मि.मी.

या इससे अधिक वर्षा होने पर तुरन्त कर देनी चाहिए।

- फसल की बिजाई से पहले हारो या कल्टीवेटर से खेत की एक या दो बार जुताई करें व तुरन्त सुहागा लगाएं ताकि नमी संरक्षण किया जा सके।
- संचित नमी से वाष्पीकरण द्वारा होने वाली हानि को रोकने के लिए मृदा सतह पर फसलों के अवशेष, सूखी पत्तियां, सूखी घास, गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद व पॉलीथीन की चादरें पलवार के रूप में भूमि की सतह पर प्रयोग करनी चाहिए।
- बिजाई के लिए उन्नत कृषि यन्त्रों, जैसे रीजर-सीडर या दोहरी लाईन वाले बारानी हल का प्रयोग करें। इससे पपड़ी बनने की समस्या कम रहती है व साथ में बिजाई भी जल्दी से हो जाती है।
- ज़रूरत से ज्यादा वर्षा-जल को इकट्ठा करना चाहिए, ताकि ज़रूरत पड़ने पर फसल को बचाने के लिए फसल की सिंचाई की जा सके।
- तीन साल में एक बार खेत की गहरी जुताई अवश्य करें। फसल की बिजाई खेत की ढलान के विपरीत करनी चाहिए, ताकि पानी के बहाव से मृदा के कटाव को रोका जा सके।
- फार्म की ज़मीन के 60 प्रतिशत भाग में खरीफ फसलों की बिजाई करनी चाहिए तथा शेष 40 प्रतिशत हिस्से में रबी फसलें लेनी चाहिए।
- खरीफ के 60 प्रतिशत भाग के आधे हिस्से में बाजरा, एक-चौथाई में ग्वार व बाकी एक-चौथाई में दलहनी व चारे वाली फसलें लेनी चाहिए।
- फसलों की कम समय में पकने वाली एवम् सूखे को सहन करने वाली किस्मों का चुनाव करना चाहिए।
- उर्वरकों का प्रयोग बारानी फसलों के लिए सिफारिश की गई मात्रा के अनुसार ही प्रयोग करें।
- बाजरा व मूंग की बिजाई 6:3 या 8:4 के खूड अनुपात में स्ट्रीप विधि द्वारा 30 सें.मी. खूडों की दूरी रखकर ट्रैक्टर चालित बीज एवं खाद ड्रिल द्वारा सफलतापूर्वक की जा सकती है। यह विधि बाजरा में ग्वार या लोबिया के 2:1 खूड अनुपात वाली अन्तरवर्तीय विधि की अपेक्षा अधिक लाभदायक पायी गई है।
- यदि फसल अवधि के दौरान सूखा पड़ जाए तो बाजरे की हर तीसरी कतार चारे के लिए काट लेनी चाहिए। इससे हरा चारा मिल जाता है और दाने की उचित पैदावार भी प्राप्त हो जाती है।
- जीवाणु खादों (साइजोटीका, एजोटीका व फास्फोटीका) से बीज उपचार, रासायनिक उर्वरकों की कीमत को कम करने में सहायक है।
- खरपतवार फसलों के सबसे बड़े शत्रु हैं क्योंकि ये फसल पौधों के साथ खाद, नमी, प्रकाश व जगह के लिए संघर्ष करते हैं, जिससे समय पर खरपतवार नियन्त्रण करना अति आवश्यक है। इसके लिए पहिये वाला कसोला (व्हील हैंड हो) या “ब्लेड हो” का प्रयोग करना चाहिए ताकि खरपतवार नियन्त्रण के साथ-साथ खेत में पर्याप्त नमी का संरक्षण भी हो सके।
- आमतौर पर कीड़े व बीमारियों के प्रकोप से पैदावार में 10-25 प्रतिशत तक की कमी आ जाती है और कभी-कभी इनके भयंकर प्रकोप के कारण पूरी फसल नष्ट हो जाती है। अतः फसलों में कीट व रोग का नियन्त्रण अत्यंत आवश्यक है। किसान भाइयों को कृषि रसायनों का प्रयोग सही समय व सिफारिश की गई मात्रा में बहुत ही सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

<sup>1</sup> क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल





# शुष्क क्षेत्रों में कैसे ले: सावनी फसलों की अधिक पैदावार

सुरेन्द्र कुमार शर्मा एवं कौटिल्य चौधरी

सस्य विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा प्रांत का मुख्य शुष्क भाग (87 प्रतिशत) दक्षिण-पश्चिमी क्षेत्रों के अंतर्गत आता है जिसमें मुख्यतः हिसार, भिवानी, चरखी दादरी, महेंद्रगढ़, रेवाड़ी, गुरुग्राम, मेवात, झज्जर, सिरसा व फतेहाबाद जिलों का कुछ भाग आता है। इन क्षेत्रों में कम वर्षा (250-500 मि.मी.) होती है जिसकी 80 से 85 प्रतिशत वर्षा मानसून पर निर्भर करती है। भूमि में नमी का सही ढंग से उपयोग न करना व वैज्ञानिक ढंग से खेती न करना आदि शुष्क क्षेत्रों की मुख्य समस्याएं हैं। फसलों व किस्मों का उपयुक्त चयन न होना, वर्षा जल का उचित संरक्षण न करना, पौधों की उपयुक्त संख्या का न होना, खरपतवारों को पनपने देना, कीट व बीमारी पर नियंत्रण न करना व पोषक तत्वों का उपयोग सही ढंग से न करना आदि कारणों से शुष्क क्षेत्रों में सावनी फसलों की पैदावार कम होती है। इसके अतिरिक्त बदलते हुए मौसम में वर्षा की कुल मात्रा व वर्षा के दिनों की संख्या भी बदलती जा रही है।

सस्य विज्ञान विभाग के अंतर्गत बारानी खेती अनुभाग शुष्क क्षेत्रों में पाई जाने वाली समस्याओं को आधार मानकर कार्य कर रहा है व इन समस्याओं पर काबू पाने के लिए काफी सिफारिशें व विधियां भी विकसित की गई हैं। इससे सावनी फसलों की पैदावार में बड़ेतरती दर्ज की गई है व किसानों को भी लाभ मिल रहा है। इस प्रकार शुष्क क्षेत्रों में सावनी फसलों की अधिक पैदावार लेने हेतु निम्नलिखित सस्य क्रियाओं को अपनाने पर बल देना चाहिए ताकि अधिक से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सके।

**समुचित जल संरक्षण :** वर्षा के पानी का समुचित संरक्षण ही शुष्क क्षेत्रों की सफलता की कुंजी है। अधिकतर शुष्क क्षेत्रों में खेत ऊंचे नीचे पाए जाते हैं। अतः सबसे पहले खेत को समतल कर लेना चाहिए। जिन खेतों में ढलान ज्यादा हो, उन्हें छोटे-छोटे हिस्सों में विभाजित करके उनके चारों तरफ मेड़बंदी कर लेनी चाहिए ताकि वर्षा का पानी खेत से बहकर बाहर न जाए बल्कि उसका भूमि में यथावत संरक्षण हो जाए। वर्षा के पानी को अधिक मात्रा में रोकने के लिए खेतों में ढलान के विपरीत मेड़बंदी करनी चाहिए। खेत की हद एवं मोटी मेड़ों पर सरकंडे लगाने से मेड़ें ज्यों की त्यों बनी रहती हैं। ग्रीष्म ऋतु में खेतों में प्रत्येक तीन वर्ष में एक बार गहरी जुताई करने से मिट्टी की जल शोषण शक्ति बढ़ती है। सावनी फसलों की बिजाई से पहले दो बार देसी हल या हैरो से जुताई मानसून की आरंभ की वर्षा में कर लेनी चाहिए।

**उपयुक्त किस्मों का चयन :** सावनी फसलों की उपयुक्त किस्मों का चयन शुष्क क्षेत्रों में पैदावार बढ़ाने में सहायक है। इस प्रकार सही किस्म का चयन समय रहते कर लेना चाहिए। बाजरा की शीघ्र पकने वाली संकर किस्में जैसे एच एच बी 67 (संशोधित), एच एच बी 197, एच एच बी 216, एच एच बी 226, एच एच बी 234 व एच एच बी 272 बिजाई के

लिए उत्तम पाई गई हैं। ग्वार के लिए एच जी 365, एच जी 563 व एच जी 2-20 किस्में उपयुक्त हैं। मूंग की विकसित किस्मों में सत्या, मुस्कान, बसंती व एम एच 421 बिजाई हेतु उत्तम हैं। उड़द के लिए टी 9 व यू एच 1 उपयुक्त किस्में हैं।

**खेत की तैयारी :** खेत को तैयार करने के लिए हैरो की सहायता से एक या दो बार गहरी जुताई करके सुहागा लगाना चाहिए ताकि खेत भुरभुरा व समतल हो।

**बिजाई का उपयुक्त समय :** बिजाई का उपयुक्त समय किसी भी फसल की पैदावार बढ़ाने में सहायक है। अतः सावनी फसलों की बिजाई मानसून शुरू होने पर ही करनी चाहिए। यदि किसी वर्ष के जून के महीने में 25 से 30 मिलीमीटर वर्षा हो जाए तो बाजरा की बिजाई अवश्य कर देनी चाहिए।

**बीज की मात्रा :** बीज की सही मात्रा का प्रयोग भी सावनी फसलों की पैदावार बढ़ाने में सहायक है। इसके लिए बाजरा में 1.5 से 2.0 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ व ग्वार/मूंग/उड़द में 6 से 8 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ के हिसाब से प्रयोग करना चाहिए।

**बीज का उपचार :** बीज को उपचारित करके बीजने से हमेशा अच्छी पैदावार मिलती है। बाजरा में प्रति एकड़ बीज को 100 मिलीलीटर बायोमिक्स से उपचारित करना चाहिए। दलहनी फसलों के बीज को राइजोबियम व पी.एस.बी. कल्चर से उपचारित करना चाहिए। ये टीके चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार के माइक्रोबायोलॉजी विभाग एवं किसान सेवा केंद्र से प्राप्त किए जा सकते हैं। कल्चर के साथ दी गई हिदायतों के अनुसार ही कल्चर का सही ढंग से प्रयोग करना चाहिए।

ग्वार में बैक्टीरियल ब्लाइट के नियंत्रण के लिए बीज का उपचार करना अति आवश्यक है। इसके लिए 6 लीटर पानी में 6 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन को घोल लें व इस घोल में 6 किलोग्राम ग्वार का बीज 25 से 30 मिनट तक भिगोएं व बाद में 30 से 40 मिनट बीज को छाया में सुखाकर बिजाई कर देनी चाहिए।

**बिजाई का तरीका :** पूर्व से पश्चिम दिशा में पंक्तियों में 45 सेंटीमीटर के फासले पर फसलों की बिजाई करनी चाहिए। इससे बीजों के अच्छे जमाव एवं खरपतवार नियंत्रण में मदद मिलती है।

**पौधों की उपयुक्त संख्या :** किसी भी फसल की पैदावार पौधों की संख्या पर निर्भर करती है। बाजरा में उपयुक्त पौधों की संख्या से पैदावार बढ़ती है। इसके लिए रीजर सीडर द्वारा बिजाई करने से सफलता मिलती है। बाजरे की बिजाई के तुरंत बाद यदि वर्षा हो जाती है तो जमीन पर पपड़ी बनने की संभावना बहुत ज्यादा हो जाती है तथा यह पौधों की संख्या को प्रभावित करती है। रीजर सीडर के प्रयोग से इस समस्या पर काफी हद तक काबू पाया गया है। सावनी के मौसम में ज्यादा बारिश होने से इस यंत्र द्वारा बनी नाली जल निकास का कार्य करती है तथा पौधों को मरने से बचाया जा सकता है।

**उचित पोषक तत्वों का प्रयोग :** शुष्क क्षेत्रों में ज्यादातर किसान भाई उचित पोषक तत्वों का प्रयोग नहीं करते, जिससे पैदावार काफी कम

मिलती है, जबकि इन क्षेत्रों में नमी के साथ-साथ पोषक तत्वों की भी कमी पाई जाती है। पोषक तत्वों का प्रयोग हमेशा मृदा जांच के आधार पर ही करना चाहिए। बाजरा में 16 किलोग्राम नाइट्रोजन, 8 किलोग्राम फास्फोरस व 3 वर्ष में एक बार 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ डालना चाहिए। ग्वार व अन्य दाल वाली फसलों में 8 किलोग्राम नाइट्रोजन, 16 किलोग्राम फास्फोरस व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ की दर से डालना चाहिए।

**खरपतवार नियंत्रण :** शुष्क क्षेत्रों में किसान खरपतवारों को बढ़ने देते हैं जिससे वे फसलों को मिलने वाले मुख्य पोषक तत्वों व नमी को ग्रहण कर लेते हैं जिससे पैदावार कम मिलती है। किसान का उद्देश्य खरपतवारों को चारे की तरह प्रयोग करना रहता है जो कि अवैज्ञानिक विधि है। अतः समय पर खरपतवार नियंत्रण अति आवश्यक है। इसके लिए पहिए वाला कसौला व ब्लेड हो का प्रयोग करना चाहिए ताकि खरपतवार नियंत्रण के साथ-साथ अच्छी नमी का संरक्षण भी हो सके।

**पौध संरक्षण :** शुष्क क्षेत्रों में सावनी फसलों पर प्रायः कीटों व बीमारियों का प्रकोप होता रहता है। अतः इन फसलों को कीटों व बीमारियों से बचाने के लिए समय-समय पर पौध संरक्षण करना अति आवश्यक है ताकि अधिक से अधिक पैदावार मिल सके।



(पृष्ठ 02 का शेष)

**बीमारी व कीड़ों का समन्वित प्रबन्ध :** जीवाणु अंगमारी बीमारी की शुरुआत होने पर स्ट्रैप्टोसाइक्लिन (30 ग्राम प्रति एकड़) एवं कॉपर आक्सीक्लोराइड (400 ग्राम प्रति एकड़) को 200 लीटर पानी में मिलाकर 15-20 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करें। तेले की रोकथाम के लिए 200 मि. ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें। यदि फसल चारे के लिए लगाई गई है तो छिड़काव के 7 दिन बाद तक यह पशुओं को नहीं खिलानी चाहिये।

**फसल-चक्र :** सिंचित क्षेत्रों में ग्वार-गेहूँ, ग्वार-राया व ग्वार-जौ का फसल चक्र अपनाएं। अगर ग्वार के बाद राया की फसल लेनी है तो उस अवस्था में ग्वार की जल्दी पकने वाली किस्मों की बिजाई जून के दूसरे पखवाड़े में ही करें।



बीमारी रहित फसल



जीवाणु अंगमारी से ग्रसित पौधा



## तिल उत्पादन : उन्नत कृषि क्रियाएं

रमेश कुमार, जयलाल यादव एवं अशोक ढिल्लों  
कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत एक प्रमुख तिल उत्पादक देश है। विश्व में सबसे अधिक तिल की खेती भारत में होती है तथा पैदावार भी अन्य देशों की अपेक्षा अधिक है। अन्य देशों की तुलना में भारत में तिल की खेती 19.5 लाख हैक्टेयर में होती है और कुल पैदावार 8.5 लाख टन है। हरियाणा प्रदेश में तिल की खेती तीन हजार हैक्टेयर में होती है। यद्यपि राज्य में तिल की पैदावार 1000 किग्रा. प्रति हैक्टेयर है जो देश की औसत पैदावार 436 कि० ग्रा० प्रति हैक्टेयर से काफी अधिक है तो भी फसल की पैदावार क्षमता 1680 कि० ग्रा० प्रति हैक्टेयर से काफी कम है। पैदावार क्षमता तथा औसत पैदावार के इस अन्तर को इस फसल की उन्नत ढंग से खेती करके कम किया जा सकता है। अच्छी पैदावार के लिए किसान भाइयों को निम्नलिखित आधुनिक तरीके अपनाने चाहिए।

**अच्छी किस्म के बीज का चुनाव :** किसानों को अधिक पैदावार लेने के लिए उन्नत किस्म के अच्छी गुणवत्ता के बीज का चुनाव करना चाहिए। किसानों को तिल की उन्नत किस्मों का अच्छा बीज उपलब्ध नहीं हो पाता जिसके कारण इस फसल की अच्छी पैदावार नहीं मिल पाती। चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय ने तिल की हरियाणा तिल नं. 1 (एच. टी. 1) तथा हरियाणा तिल नं. 2 (एच. टी. 2) किस्में आम काश्त के लिए अनुमोदित की हैं। इन किस्मों का संक्षेप में विवरण इस प्रकार से है :-

**एच. टी. 1 :** यह किस्म तिल की प्रमुख बीमारियों पत्ती मरोड़ व फायलोडी की प्रतिरोधी है। यह 75-80 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसकी ऊंचाई मध्यम, पत्ते गहरे हरे तथा बीज सफेद व सुडौल होते हैं। इसमें तेल की मात्रा 49 प्रतिशत होती है। इसकी औसत उपज 2.9 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**एच. टी. 2 :** यह किस्म पत्ते का मोजैक वायरस व फायलोडी रोग की अवरोधी है। यह 87 दिनों में पक जाती है। इसका दाना सफेद होता है जिसमें तेल की मात्रा 48.2 प्रतिशत होती है। इसकी औसत पैदावार 4.0 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**बिजाई का समय :** तिल की बिजाई का उपयुक्त समय जुलाई महीने का पहला सप्ताह रहता है। इससे पहले बिजाई की गई फसल में बीमारियों व कीड़ों का प्रकोप अधिक रहता है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में मानसून की शुरुआत के साथ ही बिजाई कर देनी चाहिए।

**बीज की मात्रा व बिजाई की विधि :** तिल की एक एकड़ की बिजाई के लिए उत्तम गुणवत्ता का 2 किलो ग्राम बीज काफी रहता है। अच्छी पैदावार के लिए बिजाई पोरा या ड्रिल की सहायता से 4 से 5 सें.मी. की गहराई में करें। बिजाई खुड्डों में 30 सें.मी. तथा पौधों में 15 सें.मी. के फासले पर करें। उचित दूरी पर बीज डालने के लिए बीज को मिट्टी, राख या खाद में मिलाकर मात्रा बढ़ाएं तथा बिजाई करें।

**खाद की मात्रा तथा डालने की विधि :** तिल की फसल को अधिक खादों की आवश्यकता नहीं होती। यदि सम्भव हो सके तो गोबर की गली सड़ी खाद बिजाई से पहले देना अच्छा रहता है। कम उपजाऊ ज़मीन में 15 किग्रा. नाइट्रोजन (30-35 किग्रा. यूरिया) प्रति एकड़ बिजाई से पहले डाल देना चाहिए।

**फसल की सिंचाई :** तिल की खेती आमतौर पर कम पानी वाले क्षेत्रों में की जाती है। कम वर्षा की स्थिति में ज़रूरत के अनुसार एक या दो सिंचाई फूल आने के समय व डोडियां बनने के बाद अच्छी पैदावार के लिए देना आवश्यक है।

**फसल की निराई व गुड़ाई :** फसल को खरपतवार से मुक्त रखने के लिए बिजाई के 20-25 दिन बाद 'व्हील हेंड हो' से निराई-गुड़ाई करें।

**कीड़ों की रोकथाम :** तिल की फसल में तिल की पत्ती लपेट सूण्डी, फली बेधक सूण्डी तथा हरा तेला का प्रमुख रूप से प्रकोप होता है। पत्ती लपेट व फली बेधक सूण्डी की रोकथाम के लिए 600, 650 तथा 725 ग्राम कार्बेनिल 50 घु. पा. को क्रमशः 200, 220 तथा 240 लीटर पानी में घोलकर बिजाई के 25, 40 व 55 दिन के अंतराल पर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। हरा तेला की रोकथाम के लिए 200 मि.ली. मैलाथियान 50 ई. सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर दो बार, 2 से 3 सप्ताह के अन्तर पर प्रति एकड़ छिड़कें।

**बीमारियों की रोकथाम :** फायलोडी, झुलसा रोग, जड़ गलन तथा तना गलन तिल फसल की प्रमुख बीमारियां हैं। फायलोडी की रोकथाम के लिए फसल की अगेती बिजाई न करें। फसल की बिजाई 15 जुलाई के लगभग करें। रोगी पौधों को शुरू से ही निकाल कर नष्ट कर दें। कीड़ों की रोकथाम रोगों से करें। झुलसा रोग की रोकथाम के लिए फसल पर मैन्कोजेब 800 ग्राम प्रति एकड़ का 250 लीटर पानी में घोल बनाकर 10-15 दिन के अन्तर पर छिड़काव करें। जड़ व तना गलन की रोकथाम के लिए बीज का उपचार थाइरम 3 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से करें।



(पृष्ठ 05 का शेष)

जिसको पोटाशियम नाइट्रेट के छिड़काव से पूरा किया जा सकता है। सूखे की परिस्थिति में कपास की फसल में पोटाशियम नाइट्रेट के छिड़काव से उत्साहवर्धक परिणाम प्राप्त हुए हैं। इसके छिड़काव से पोटाशियम तथा नाइट्रेट दोनों मिलकर पौधों के अंदर ओसमोटिक रेगुलेशन की क्रिया करते हैं जिससे पौधों में सूखे को सहन करने की क्षमता बढ़ जाती है। पोटाशियम नाइट्रेट का छिड़काव फूल बनते समय 85-90 दिन तथा टिण्डे बनते समय (100-105) पर 1 प्रतिशत के हिसाब से (10 ग्राम प्रति लीटर) करना चाहिए।

अतः कपास की अच्छी पैदावार व अधिक मुनाफा कमाने के लिए पोटाश पर अवश्य ध्यान देने की ज़रूरत है।



## टिशू कल्चर तकनीक से कृषि उपज और गुणवत्ता में सुधार

राकेश यादव<sup>1</sup> एवं औम प्रकाश नेहरा

सस्य विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

किसान माटी के समृत होते हैं। वे मिट्टी से सोना उपजाते हैं। अपने श्रम से संसार का पेट भरते हैं। अधिक पढ़े-लिखे नहीं होते, परंतु उन्हें खेती की बारीकियों का ज्ञान होता है। मौसम के बदलते मिज़ाज को पहचान कर तदनुसार नीति निर्धारित करने में दक्ष होते हैं। हमारे देश के किसानों को कृषि कार्यों में विभिन्न प्रकार की समस्याओं से दो-चार होना पड़ता है। सबसे बड़ी समस्या है कृषि में आने वाली लागत जो दिनों-दिन बढ़ती चली जा रही है। किसानों को अच्छे बीज खरीदने पड़ते हैं जो बहुत महंगे दामों में मिलते हैं। भारतीय किसान कृषि की उन्नत एवं आधुनिक वैज्ञानिक कृषि का अनुसरण करने लगे हैं जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। परंतु अब भी उसे अनेक प्रकार की सहूलियतों की आवश्यकता है। कृषि और बागवानी के क्षेत्र में उभरती चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए ऊत्तक संवर्धन (टिशू कल्चर) की कृषि विकास में अहम भूमिका है। कृषि की अनेक ज्वलंत समस्याओं के निराकरण जैसे रोगमुक्त पौधों का उत्पादन, पौधों में आनुवंशिक सुधार, उसके निष्पादन से सुधार या उनसे विभिन्न उत्पादों के उत्पादन में वृद्धि आदि इस तकनीक के उपयोग से संभव हैं। इस दिशा में स्पेन, हालैंड, इजराइल, तुर्की, फ्रांस और अमेरिका जैसे देशों में उल्लेखनीय कार्य हुआ है।

### ऊत्तक संवर्धन (टिशू कल्चर) क्या है?

एक परखनली में बहुत नियंत्रित एवं स्वच्छ स्थितियों में पौधे के एक हिस्से या एक कोशिका समूह के उपयोग द्वारा पूरे पौधे के निर्माण एवं प्रसार को 'टिशू कल्चर' कहा जाता है। इसके द्वारा जब कटा हुआ पौधा परिपक्व हो जाता है तो उसे मिट्टी में गाड़ देते हैं, जिससे वह सामान्य पौधों के जैसा ही कार्य करता है। इस विधि से कम समय व कम स्थान में विशाल संख्या में पौधों (क्लोन) को तैयार किया जा सकता है।

पादप ऊत्तक संवर्धन एक ऐसी तकनीक है जिसमें किसी भी पौधे के स्वस्थ भाग जैसे जड़, तना, परं व पुष्प आदि को प्रयोगशाला के माध्यम से उगाया व उनसे नए रोगमुक्त एवं उन्नत पौधों को तैयार किया जा सकता है। फसल सुधार व बागवानी के क्षेत्र में टिशू कल्चर तकनीक की एक महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इस तकनीक से नई उपलब्धियों की जानकारी किसान भाइयों के लिए आवश्यक है।

### टिशू कल्चर रोपाई के निम्नलिखित महत्वपूर्ण फायदे हैं :-

- कीट और रोग मुक्त विकसित छोटे पौधे
- एक समान बढ़त, अधिक पैदावार
- गुणवत्ता वाले फल और सब्जियों के पौधों का उत्पादन
- उच्च उत्पादन क्षमता वाले फलों और सब्जियों के पौधों का उत्पादन

<sup>1</sup>बायो व नैनो विभाग, गुरु जम्भेश्वर विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, हिसार



- अच्छे प्रबंधन के साथ केवल मातृ पौधे।
- कम समय में फसल की परिपक्वता-भारत जैसे कम भूमि स्वामित्व वाले देश में ज़मीन का अधिकतम उपयोग संभव है।
- कम अवधि में एक के बाद एक, दो अंकुरण संभव हैं जो खेती की लागत कम कर देते हैं।
- बगैर अंतर के कटाई।
- वर्ष भर रोपाई संभव है क्योंकि विकसित छोटे पौधे वर्ष भर उपलब्ध कराये जाते हैं।
- विशेष रूप से आलू में सूक्ष्म कंदों के उत्पादन।
- क्लोन केले के 95 से 98 प्रतिशत पौधों में गुच्छे लगते हैं।
- कम अवधि में नई किस्में पेश की जा सकती व बढ़ाई जा सकती हैं।
- नई किस्मों को विकसित किया जा सकता है।

सामान्यतः पौधे जैसे अनाज, फल और सब्जियां रोगग्रस्त और संक्रमित हो सकते हैं। इसलिए टिशू कल्चर से तैयार पौधों की रोपाई के लिये सिफारिश की जाती है। वे स्वस्थ, रोग मुक्त, एक समान तथा प्रामाणिक होते हैं। रोपने के लिये केवल उचित तौर पर कठोर पौधों की सिफारिश की जाती है। केंद्रीय अनुसंधान संस्थान, शिमला में आलू के पोटेटो वायरस मुक्त पौधे तैयार किये जा चुके हैं। इसके अलावा गन्ना, शक्करकंद, स्ट्राबेरी, गोभी, कार्नेशन व डहेलिया आदि के रोगमुक्त पौधे भी विकसित किये जा चुके हैं। फल, फूल, सब्जी, कंद-मूल, औषधियां, जड़ी-बूटियां, मसाले, अनाज, पेड़-पौधों, वृक्षों, आदि सभी के पौधों (क्लोन) को तैयार किया जा सकता है। अनेक दुर्लभ और बेशकीमती पौधों का क्लोन भी तैयार किया जा सकता है।

इसके अलावा टिशू कल्चर रोपाई के अनेक निम्नलिखित महत्वपूर्ण फायदे हैं :-

1. **दुर्लभ और बेशकीमती पौधों का संरक्षण:** वर्तमान समय में कई उपयोगी व उत्तम गुणों वाले पौधे तीव्र गति से लुप्त होते जा रहे हैं। इन पौधों के जनन द्रव्य को उच्चतम संवर्धन की सहायता से संरक्षित किया जा सकता है। इस विधि से जनन द्रव्य को लम्बे समय तक भंडारण के लिए संबंधित उच्चतम को हिमशीतल करने के पश्चात् इसे 190 डिग्री पर द्रव नत्रजन में रखते हैं। इस विधि को निम्न ताप संरक्षण कहते हैं। इस विधि से कम स्थान में लम्बे समय तक जनन द्रव्य को संरक्षित किया जा सकता है। क्लोनिंग द्वारा प्रवर्धित पौधों व अत्यंत कम जीवन क्षमता वाले बीजों के भंडारण के लिए यह विधि अत्यंत उपयोगी है।
2. **नए संकर पौधों/किस्मों का विकास :** जीव द्रव्यक प्रौद्योगिकी से दूरस्थ संकरणों में भी जननक्षम संकर उत्पन्न किया जाना संभव हुआ है। इनकी संतति में उपयोगी गुणों जैसे शुष्कता प्रतिरोधी, कीट व रोगाणु प्रतिरोधी, शीत व पाला सह्यता, शाकनाशक प्रतिरोधी तथा साइटोप्लाज्मिक नर बन्ध्यीकरण आदि का अवलोकन कर प्रतिरोधी किस्मों का विकास किया जा सकता है।
3. **त्रिगुणित पौधों का उत्पादन:** त्रिगुणित पौधे सामान्यतः बीज रहित होते हैं। आर्थिक दृष्टि से कई महत्वपूर्ण पौधे जैसे सेब, केला, चुकंदर,

चाय आदि व्यापारिक उपयोग में त्रिगुणित पौधों के रूप में काम आते हैं। प्रकृति में त्रिगुणित पौधों का निर्माण चतुर्गुणित व द्विगुणित के मध्य संकरण से होता है। लेकिन उच्चतम संवर्धन से त्रिगुणित पौधे आसानी से प्राप्त किये जा सकते हैं।

**4. कृत्रिम बीज उत्पादन:** कायिक भ्रूणों से कृत्रिम बीजों को तैयार किया जाता है। उच्चतम संवर्धन द्वारा क्लोनिय प्रवर्धन की परम्परागत विधियों के साथ प्रवर्धनों के भण्डारण व परिवहन की समस्याओं से बचने के लिए कृत्रिम बीजों का विकास किया जाता है। कृत्रिम बीजों के निर्माण में कायिक भ्रूणों को एल्लिजेंट की उपयुक्त खोल में लपेट दिया जाता है। खोल में एल्लिजेंट के अतिरिक्त पोषक वृद्धि, कवक व कीटनाशक तथा खरपतवारनाशक और प्रति जैविक पदार्थ भी सम्मिलित किये जाते हैं। इन्हें सुखाया नहीं जाता है अतः चिपचिपे होते हैं तथा खुली हवा में ही सूख जाते हैं। इन्हें जलयोजित बीज भी कहते हैं। इन बीजों का भण्डारण लगभग एक वर्ष तक किया जा सकता है। एक स्थान से दूसरे स्थान पर बिना क्षति के परिवहन संभव है। सीधे खेत में बोने के काम में लिया जा सकता है। ये जीवन क्षमता अधिक होने की दृष्टि से भी उपयुक्त हैं।

कृषि क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि के लिए प्रौद्योगिकी हस्तांतरण महत्वपूर्ण है। टिशू कल्चर की खेती किसानों के लिए काफी लाभदायक सिद्ध होगी। इससे समय की बचत और किसानों की आय में दो गुना से अधिक की बढ़ोत्तरी की जा सकती है। हमारे देश के अधिकतर कृषि व बागवानी विश्वविद्यालयों ने अपने क्षेत्र विशेष की फलों व अन्य फसलों की टिशू कल्चर उत्पादन से संबंधित सभी जानकारीयां अपने वेबसाइट पर डाल रखी हैं जिन्हें किसान इन्टरनेट के माध्यम से घर बैठे अपने कम्प्यूटर पर प्राप्त कर सकते हैं। हरियाणा और आसपास के किसान भाई टिशू कल्चर पौधों के ऑर्डर हेतु चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार कैंपस स्थित सेंटर फॉर प्लांट बायोटैक्नोलॉजी में संपर्क कर सकते हैं।



## भण्डारित अनाज की कीड़ों से रक्षा

अगर अनाज अच्छी तरह से सुखा कर, कीट-रहित व सूखे भण्डार में ढककर भण्डारित किया है तो उसके कीड़ों अथवा नमी से खराब होने की संभावना बहुत कम है। फिर भी भण्डारित अनाज का समय-समय पर निरीक्षण करना चाहिए। यह क्रिया वर्षा ऋतु में बहुत महत्वपूर्ण होती है। यदि अनाज में कीड़ा लगा हो तो इसमें जहरीली गैस छोड़ने वाली दवाई एल्यूमिनियम फास्फाईड ( सैल्फास, क्विनलफॉस, फास्फ्यूम ) की 7 गोलिएयां ( 3 ग्राम ) प्रति 1000 घनफुट या 28 घनमीटर स्थान के हिसाब से डालें और 7 दिन तक भण्डार बंद रखें। इन दवाइयों का प्रयोग पूरी सावधानी से किसी विशेषज्ञ की देखरेख में करें।

# सब्जी फसलों की जैविक खेती

✍ पूजा रानी, वी.पी.एस. पंधाल एवं विनोद कुमार

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत एक कृषि प्रधान देश है और देश की अर्थ व्यवस्था का मुख्य आधार कृषि है। भोजन मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता है और इसकी पूर्ति के लिए देश में हरित क्रान्ति लाई गई और अधिक अन्न उपजाओ का नारा दिया गया था, जिसके परिणामस्वरूप रासायनिक उर्वरकों, रासायनिक खरपतवारनाशक दवाओं और कीटनाशकों का अन्धा-धुन्ध व असन्तुलित उपयोग प्रारम्भ हुआ, अतः पिछले कुछ समय से इसके दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं:

- ❖ रासायनिक उर्वरकों से ज़मीन की उपजाऊ क्षमता में कमी आ रही है, जिसके फलस्वरूप फसल उत्पादन में भी कमी आयी है।
- ❖ फसलों के उत्पादन में लागत ज़्यादा आती है, जिसके कारण आय में कमी आती है।
- ❖ इसका कुप्रभाव मनुष्य व पशुओं के स्वास्थ्य पर नहीं बल्कि पानी, भूमि एवं पर्यावरण पर भी स्पष्ट दिखाई देने लगा है।

अब हम रासायनिक खादों व ज़हरीले कीटनाशकों के उपयोग के स्थान पर जैविक खादों एवं दवाइयों का उपयोग कर, अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं जिससे न केवल भूमि की उर्वरा शक्ति लम्बे समय तक बनी रहती है, बल्कि पर्यावरण भी प्रदूषित नहीं होता तथा कृषि लागत घटने व उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ने से कृषक को अधिक लाभ भी मिलता है और मनुष्य एवं प्रत्येक जीवधारी स्वस्थ भी रहते हैं।

**जैविक खेती क्या है:-** जैविक खेती कृषि की एक ऐसी पद्धति है, जिसमें रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा खरपतवारनाशकों की जगह पर जैविक खाद, पोषक तत्वों (गोबर की खाद कम्पोस्ट, हरी खाद, जीवाणु कल्चर आदि), जैव नाशकों (बायो-पैस्टीसाईड) व बायो एजेंट जैसे क्राईसोपा आदि का प्रयोग किया जाता है।

जैविक खेती के लिए अति आवश्यक है कि जिस खेत में ऐसी खेती करनी हो उस खेत में कम से कम तीन साल तक रासायनिक खादों और दवाइयों का उपयोग न किया गया हो। अतः अगर आप जैविक खेती करना चाहते हो तो आज से ही रासायनिक खादों और दवाइयों का प्रयोग बंद करना होगा और इसके तीन साल के बाद आप अपने खेत में जैविक सब्जी प्राप्त कर सकते हैं।

जैविक कृषि के कुछ मूल सिद्धांत हैं:

1. स्वास्थ्य के सिद्धांत – कार्बनिक कृषि को मिट्टी, पौधे, पशु और मानव के स्वास्थ्य को एक और अविभाज्य के रूप में बनाए रखना चाहिए।
2. पारिस्थितिक विज्ञान का सिद्धांत – जैविक कृषि जीवित पारिस्थितिक तंत्र और चक्रों पर आधारित होना चाहिए, उनके साथ काम करना चाहिए, उन्हें अनुकरण करना चाहिए और इसकी मदद

से उन्हें बनाए रखने में मदद करनी चाहिए।

3. निष्पक्षता का सिद्धांत – जैविक कृषि उन संबंधों पर निर्मित होनी चाहिए जो सामान्य पर्यावरण और जीवन के अवसरों के संबंध में निष्पक्षता सुनिश्चित करे।
4. देखभाल के सिद्धांत – कार्बनिक कृषि को वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों और पर्यावरण के स्वास्थ्य और कल्याण की रक्षा के लिए एक सावधानी और ज़िम्मेदार तरीके से प्रबंधित किया जाना चाहिए।

जैविक खेती का मुख्य उद्देश्य यही है कि मिट्टी की उर्वरक शक्ति बनाए रखें और इसके साथ फसलों का उत्पादन भी बढ़े।

**जैविक खेती की कुछ प्रमुख क्रियाएं:**

1. कार्बनिक खादों का उपयोग।
2. जीवाणु खादों का उपयोग।
3. फसल अवशेषों का उचित प्रयोग।
4. फसल चक्र में दलहनिया फसलों को अपनाना।
5. मृदा संरक्षण क्रियाएं अपनाना, आदि।

**रासायनिक खाद व दवाइयों का विकल्प:** रासायनिक खाद के स्थान पर जैविक खाद का प्रयोग करते हैं। जैविक खाद में गोबर की खाद, बायोगैस की खाद, केंचुए के खाद, कम्पोस्ट, ढ़ेंचे की हरी खाद, नीम की खली, रतनजोत की खली, अरंड की खली आदि का इस्तेमाल कर सकते हैं। प्रायः ऐसा देखा गया है कि जिस फसल में जितना ज़्यादा रासायनिक खाद का प्रयोग किया जाता है उतना ही उसमें बीमारी और कीड़ों की समस्या बढ़ती है जबकि जिस फसल में रासायनिक खाद के स्थान पर जैविक खाद प्रयोग किया जाता है उसमें कीड़ों और बीमारी का प्रकोप कम मिलता है। अगर फिर भी जब कभी सब्जी की फसलों में बीमारी और कीड़ों से नुकसान देखने को मिलता है तो नीम, मिर्च, धतूरा, अदरक, लहसुन आदि का घोल बनाकर फसल पर छिड़काव कर दें तथा इनसे बनी हुई दवाइयां बाज़ार में भी उपलब्ध हैं।

बीमारी और कीड़ों के प्रकोप से बचने के लिए फसलों की सही समय पर बिजाई करनी चाहिए। सब्जी की फसलों में जीवाणु खाद का प्रयोग बहुत ही लाभकारी रहता है। फलीदार सब्जियों जैसे मटर, सेम, ग्वार आदि की जड़ों में छोटी-छोटी गांठें पायी जाती हैं। इन गांठों में ही राइजोबियम नामक जीवाणु रहता है जो वायुमंडलीय नत्रजन गैस को पौधों के इस्तेमाल लायक बनाकर जड़ों में एकत्रित करता है, जिन्हें पौधों द्वारा आसानी से ग्रहण कर लिया जाता है। इस कारण इन फसलों में ज़्यादा नाइट्रोजन की आवश्यकता नहीं पड़ती परन्तु भूमि में मौजूद राइजोबियम जीवाणुओं को पौधों की जड़ों में ग्रंथियां बनाने में 20 से 30 दिन लगते हैं। इसके प्रयोग से भूमि में 10 से 15 प्रतिशत की वृद्धि होती है और भूमि की उर्वरता भी बढ़ती है।

फलीदार सब्जियों के अलावा अन्य सब्जियों जैसे टमाटर, बैंगन, आलू आदि में राइजोबियम की जगह एजोटोबैक्टर खाद का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(शेष पृष्ठ 22 पर)

# जुलाई मास के कृषि कार्य



## फसलों में

### बाजरा

संकर बाजरे की किस्में, एच एच बी 50, एच एच बी 60, एच एच बी 94, एच एच बी 67 (संशोधित), एच एच बी 117, एच एच बी 146, एच एच बी 197, एच एच बी 216, एच एच बी 223 व एच एच बी 226, एच एच बी 234, एच एच बी 272 या कम्पोजिट किस्में, एच सी 10 व एच सी 20 बोएं। संकर बाजरे का बीज हर साल नया ही लेकर बोएं। बिजाई के लिए जुलाई का प्रथम पखवाड़ा सबसे उत्तम समय है परंतु बारानी इलाकों में मानसून की पहली वर्षा होने पर ही बिजाई करें। खेत को 2 या 3 बार जोतकर फौरन सुहागा लगाकर अच्छी तरह तैयार करें ताकि घासफूस न रहे। बारानी क्षेत्रों में वर्षा से पहले खेत के चारों तरफ खूब मजबूत डोलें बनाएं ताकि खेत में पानी जमा हो जाए जो आगामी फसल के काम आएगा। एक एकड़ के लिए 1.5 से 2 किलोग्राम बीज चाहिए। खेत में सही उगाव के लिए बिजाई खूडों में इस तरह करें कि बीज के ऊपर 2.0 से 3.0 सें.मी. से ज्यादा मिट्टी न पड़े। दो खूडों का फासला 45 सें.मी. रखें। वर्षा के मौसम में मेड़ों पर बिजाई करना अच्छा होता है। इस तरीके से बिजाई के लिए विश्वविद्यालय के शुष्क खेती अनुसंधान केन्द्र द्वारा निर्मित मेड़ों पर बीजने वाले हल का प्रयोग करें। आम उपजाऊ व सिंचाई की सुविधा वाली भूमि में प्रति एकड़ 62.5 किलोग्राम नाइट्रोजन (135 कि.ग्रा. यूरिया), 25 कि.ग्रा. फास्फोरस (150 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट डाली जानी चाहिए। आधी नाइट्रोजन बिजाई के समय ड्रिल करें व शेष दो बार दें—एक छंटाई के समय व दूसरी सिट्टे बनते समय। असिंचित बाजरे में 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (35 कि.ग्रा. यूरिया) व 8 कि.ग्रा. फास्फोरस (50 कि.ग्रा. एस एस पी) प्रति एकड़

### लेखक :

- आर. एस. हुड्डा, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- आर. के. गोदारा, सह-निदेशक (बागवानी)
- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (पादप रोग विज्ञान)
- एम. एस. ग्रेवाल, परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)
- अशोक चन्द्र यादव, परामर्शदाता (सब्जी विज्ञान)
- वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह, सहायक वैज्ञानिक, लुवास (पशु पालन विभाग)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बिजाई के समय ड्रिल करें। सिंचित बाजरा में फास्फोरस व जिंक सल्फेट बिजाई के समय पोरें।

चेपा या अरगत रोग से बचाव हेतु बीज को 10 प्रतिशत नमक के घोल (10 लीटर पानी में 1 किलोग्राम नमक) में डुबो लें और तैरते हुए पिण्डों व अन्य पदार्थों को बाहर निकाल कर जला दें। नीचे बैठे हुए बीज को साफ पानी में 3-4 बार धोकर सुखा लें और 2 ग्राम एमिसान व 4 ग्राम थाइरम प्रति किलोग्राम बीज के मिश्रण से बीजोपचार करके बिजाई करें। यदि बीज पहले से उपचारित न हो तो डाऊनी मिल्ड्यू (जोगिया या हरे बालों वाला रोग) की शुरुआती रोकथाम के लिए बीज को मैटालेक्सल 35 प्रतिशत से 6 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचारित करें। बाजरे की बिजाई के 3 और 5 सप्ताह बाद निराई-गुड़ाई करें। खरपतवारों की रोकथाम रसायनों द्वारा भी की जा सकती है। बिजाई के तुरंत बाद 400 ग्राम एट्राजीन (50 प्रतिशत घु. पा.) प्रति एकड़ 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़कें। यदि बिजाई के तुरन्त बाद एट्राजीन का प्रयोग न कर सकें तो बिजाई के बाद 10-15 दिन के बीच में भी उतनी ही मात्रा प्रयोग कर सकते हैं। ज्योंही खेत में कोढिया या डाऊनी मिल्ड्यू दिखाई दे प्रभावित पौधे उखाड़ कर नष्ट कर दें और वहां स्वस्थ पौध रोप दें ताकि खेत में पौधों की संख्या पूरी बनी रहे। सफेद लट के नियंत्रण के लिए विश्वविद्यालय की सिफारिश के अनुसार मानसून की वर्षा होते ही गांवों में अभियान चलाएं।

पछेती दशा में बाजरे की रोपाई करने के लिए जुलाई माह के पहले सप्ताह में नर्सरी में क्यारियों में बिजाई करें। नर्सरी के लिए क्यारियां ऐसी जगह बनाएं जहां वर्षा के न होने पर भी सिंचाई के लिए पानी का साधन हो। वर्षा की हालत में बीज छिटक कर तथा सूखी अवस्था में तंग कतारों में बोएं। नर्सरी में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। खेत में रोपाई के लिए लगभग तीन हफ्ते में पौध तैयार हो जाती है।

### मक्का

संकर मक्का की एच एच एम-1, एच एच एम-2, एच एम-4, एच एम-5, एच एम-10, एच एम-11, एच क्यू पी एम 1, एच क्यू पी एम 5, एच क्यू पी एम 4 किस्में ही बीजें। इनकी बिजाई कतारों में 75 सें.मी. की दूरी पर 20 जुलाई तक पूरी कर लें। बिजाई के 10 दिन बाद फालतू पौधे निकाल कर पौधे से पौधे की दूरी 20 सें.मी. रखें। बीज की गहराई 3 से 5 सें.मी. हो। साधारणतया 8.0 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ बिजाई के लिए काफी होता है। मक्की में खरपतवारों को कल्टीवेटर, व्हील हँड या खुरपे/कसोले द्वारा निराई करके या खरपतवारनाशक दवाइयों से नष्ट किया जा सकता है। बिजाई के तुरन्त बाद 400-600 ग्राम एट्राजीन (50 प्रतिशत घु.पा.) प्रति एकड़ 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़कें। मक्की में सभी तरह के खरपतवारों के नियन्त्रण के लिए टैम्बोत्रायोन (लोडिस 34.4 प्रतिशत) का 115 मिली. तैयार शुद्ध मिश्रण+400 मि.ली.



चिपचिपे पदार्थ को 200 लीटर पानी में घोलकर बिजाई के 10-15 दिन बाद या खरपतवार की 2-3 पत्ती की अवस्था पर प्रति एकड़ छिड़कें। तना छेदक कीट से बचाव के लिए पहला छिड़काव फसल उगने के 10 दिन बाद 200 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर करें। दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव के 10 दिन पश्चात 300 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. को 300 लीटर पानी में मिलाकर करें। 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 24 कि.ग्रा. फास्फोरस, 24 कि.ग्रा. पोटाश, 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ बिजाई पर पोंरें। 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/एकड़ पौधों के घुटने तक बढ़ा होने पर व इतना ही झंडे आने से कुछ पहले दें।

### धान

धान की आई आर-64, एच के आर-46, एच के आर-47, पी आर-106, जया, एच के आर-120, एच के आर-126, एच के आर-127 व हरियाणा संकर धान-1 की रोपाई 7 जुलाई तक पूरी कर लें। कम अवधि वाली किस्म गोविन्द व एच के आर -48 की रोपाई जुलाई अन्त तक कर सकते हैं। धान की अन्य किस्में, लंबी बासमती जैसे तरावड़ी बासमती, सी एस आर-30, बासमती-370 व बौनी बासमती जैसे हरियाणा बासमती-1, पूसा बासमती-1, पूसा बासमती-4 (पूसा 1121) की रोपाई भी जुलाई के मध्य में पूरी कर लें। इसमें ब्लास्ट या बदरा रोग कम लगता है। खेत में अच्छी तरह से पौध चलने के लिए व पानी बनाए रखने के लिए खेत को अच्छी तरह कद्दू करके एकसार कर लें। रोपाई के लिए कम समय वाली बौनी किस्मों हेतु 25-30 दिन पुरानी पौध प्रयोग करें। धान की समय पर रोपाई के लिए लंबी किस्मों में कतारों में 20 सें.मी. व पौधों में 15 सें.मी. दूरी रखें। जबकि देर से रोपाई हेतु यह दूरी 15-15 सें.मी. रखें। एक जगह कम से कम 2-3 पौध सीधी लगाएं लेकिन 2-3 सें.मी. से अधिक गहरी नहीं। कल्लर वाले खेतों में एक जगह कम से कम 3-4 पौध लगाएं। धान की बौनी मध्यम, मध्यम काट अवधि व संकर धान वाली किस्मों जैसे जया, पी आर 106, एच के आर 120, एच के आर 126 एच के आर 127 व हरियाणा संकर धान-1 में 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 24 किलोग्राम फास्फोरस, 24 किलोग्राम पोटाश व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ का प्रयोग करें जबकि कम अवधि वाली गोबिन्द में 48 किलोग्राम नाइट्रोजन व ऊपर दी गई फास्फोरस, पोटाश व जिंक सल्फेट की मात्रा प्रयोग करें। नत्रजन की 1/3 मात्रा, फास्फोरस, पोटाश व जिंक सल्फेट की पूरी मात्रा रोपाई के समय खेत में डालें। 1/3 नत्रजन की मात्रा रोपाई के 21 दिन बाद और बाकी 1/3 नत्रजन रोपाई के 42 दिन बाद खेत में डालें। रोपाई पर डालने वाली 1/3 नत्रजन की मात्रा रोपाई के एक सप्ताह के अंदर भी डाली जा सकती है। अगर खेत में ढेंचे की हरी खाद का प्रयोग किया गया है तो नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश की 2/3 मात्रा का ही प्रयोग करें। लम्बी बासमती धान में 24 किलोग्राम नाइट्रोजन, 12 किलोग्राम फास्फोरस व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ दें। नाइट्रोजन रोपाई के 21 व 42 दिन बाद दो बार डालें। बौनी बासमती धान में 36 किलोग्राम नत्रजन, 12 किलोग्राम फास्फोरस व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट दें। नत्रजन की 1/3 मात्रा व फास्फोरस की पूरी मात्रा पौध लगाते समय दें। बाकी 1/3 मात्रा 21 दिन बाद व 1/3 मात्रा 42 दिन बाद दें। धान

की फसल में सांवक और मोथा बहुतायत में पाए जाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए ब्यूटाक्लोर (मचौटी, डेलक्लोर ई.सी. व मिलक्लोर, नर्वदाक्लोर, कैपक्लोर, ट्रेप, तीर हिल्टाक्लोर, ई.सी.) 1.2 लीटर प्रति एकड़ 60 किलोग्राम सूखी रेत में मिलाकर पौध रोपण के 2-3 दिन उपरांत 4-5 सें. मी. गहरे पानी में एकसार बिखेर दें। इसके अतिरिक्त अन्य खरपतवार-नाशकों का प्रयोग भी समग्र सिफारिशों के अनुरूप करें।

रोपाई के (6 से 10 दिन) बाद जब पौधे ठीक प्रकार से जड़ पकड़ लें तो पानी रोक लें ताकि पौधों की जड़ें विकसित हो जाएं। एक बार में 5-6 सें.मी. से अधिक गहरा पानी न लगाएं। धान की जड़ की सूण्डी के आक्रमण से पौधे पीले हो जाते हैं व फुटाव भी कम होता है जिससे पौधे छोटे भी रह जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए 10 किलोग्राम कार्बेरिल 4-जी/कार्बोफ्यूथुरान 3-जी या 4 किलोग्राम फोरेट (थिमेट) 10-जी प्रति एकड़ डालें। यदि पत्ता लपेट सूण्डी का आक्रमण हो तो 200 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस.एल. या 400 मि.ली. क्विनलफास 20 ए.एफ. को 200 लीटर पानी में प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें या फिर 10 किलोग्राम मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत प्रति एकड़ फसल पर धुँडें।

### कपास

यदि कपास की बिजाई किसी कारण देर से की हो तो जुलाई के पहले सप्ताह में फसल को पानी लगाएं तथा फालतू पौधों को निकाल दें जिससे कि एक कतार में पौधे से पौधे का फासला 30 सें.मी. रह जाए। कोणदार धब्बों से बचाव हेतु जुलाई के पहले सप्ताह में 6-8 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन व कॉपर आक्सीक्लोराइड (600-800 ग्राम प्रति एकड़) को 150-200 लीटर पानी में मिलाकर 15-20 दिन के अंतर पर लगभग 4 छिड़काव करें। नरमा में नाइट्रोजन 35 कि.ग्रा., फास्फोरस 12 कि.ग्रा., देसी कपास में नाइट्रोजन 20 कि.ग्रा. व संकर कपास में 70 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की सिफारिश है। नाइट्रोजन की खाद आधी बौकी आने (जुलाई-अंत) के समय तथा आधी फूल आने के समय डालें। संकर किस्मों में इन दोनों समय पर नाइट्रोजन 1/3 की दर से डालनी चाहिए। बेहतर होगा कि सारा फास्फोरस व 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट बिजाई के समय डालें।

### 2, 4-डी कपास के लिए घातक

इसके प्रभाव से कपास की पत्तियों में बारीक कटाव (हथेली जैसा) आ जाता है, फूल गिर जाते हैं और टिण्डे नहीं बनते। इसलिए ध्यान रखें कि जिस स्प्रेयर से 2, 4-डी प्रयोग में लाया गया हो उसे बीमारी व कीड़े मारने वाली दवाओं के छिड़काव के लिए प्रयोग में न लाएं। साथ ही 2, 4-डी का संपर्क कपास की फसल में प्रयोग में लाए जाने वाले कीटनाशकों और फफूंदनाशकों के साथ न होने पाए। कीट या फफूंदनाशकों के छिड़काव के लिए घोल बनाने से पूर्व बोतल या टीन का लेबल ध्यान से देख लें। 2, 4-डी से प्रभावित पौधों की समस्या हो जाने पर प्रभावित कोंपलों को 15 सें.मी. काट दें और इसके बाद 2.5 प्रतिशत यूरिया तथा 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव करें। खरपतवार नियंत्रण के लिए पहली गोड़ाई पहली सिंचाई से पहले कसौला से करें। बाद में हर सिंचाई के बाद समायोज्य कल्टीवेटर से निराई-गोड़ाई करें। पहली सिंचाई जितनी देर से की जाए अच्छी है। आमतौर पर बिजाई के 40-45 दिन बाद सिंचाई करें।

कपास में बिजाई के 40-45 दिनों के बाद सूखी गुड़ाई के बाद ट्रैफलान 0.8 लीटर/एकड़ या स्टोम्प 30 ई.सी. की 1.25 लीटर मात्रा प्रति एकड़ को 200-250 लीटर पानी में घोल से उपचार के बाद सिंचाई करने से भी वार्षिक खरपतवारों का उचित नियन्त्रण हो जाता है।

हरा तेला की रोकथाम के लिए एक से दो छिड़काव 300-400 मि.ली. मैटासिस्टाक्स 25 ई.सी. या 40 मि.ली. कोन्फीडोर या 40 ग्रा. एकतारा या 250-350 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 120 से 150 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ 15 दिन के अंतर पर छिड़कें। पहला छिड़काव तब करें जब 20 प्रतिशत पूरे विकसित पत्ते किनारों से पीले होकर मुड़ने लगें। सफेद मक्खी का भी यही इलाज है।

यदि बालों वाली सूण्डी, पत्ता लपेट सूण्डी, कुब्बड़ कीड़े या चित्तीदार सूण्डी का भी आक्रमण जुलाई अंत से मध्य अगस्त तक हो तो 600 मि.ली. क्विनलफॉस (एकालक्स) 25 ई.सी. या 75 मि.ली. स्पाइनोसेड (ट्रेसर) 75 एस सी या 1 लीटर नीम (अचूक निम्बीसीडीन) का प्रयोग करें। मीली-बग से बचाव के लिए खेतों के आसपास उगे खरपतवारों, विशेषकर कांग्रेस घास, कंघी बूटी, जंगली भुट आदि को काट कर जला दें।

### मूंगफली

मूंगफली की बिजाई इस माह के मध्य तक पूरी कर लें। पंजाब मूंगफली नं. 1, एम एच-4 की बिजाई क्रमशः 30×22.5 व 30-15 सें.मी. पर करें। बीज 'केरा' विधि से खूड़ों में 5 सें.मी. की गहराई पर डालें। पंजाब मूंगफली नं. 1 के लिए 34 किलोग्राम व एम एच-4 के लिए 32 किलोग्राम गिरी एक एकड़ के लिए काफी होगी। बोने से पूर्व स्वस्थ गिरियों का एमिसान या कैप्टान या थाइरम 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज से उपचार करें। सफेद लट व दीमक से फसल को बचाने के लिए 15 मि.ली. क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. या क्विनलफास 25 ई.सी. प्रति किलोग्राम बीज का बुवाई से 4-5 घंटे पहले उपचार करें। मूंगफली में 6 किलोग्राम नाइट्रोजन, 20 किलोग्राम फास्फोरस, 10 किलोग्राम पोटाश व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट/एकड़ बिजाई के समय डिल करें। मूंगफली में जिप्सम का प्रयोग लाभदायक पाया गया है।

बिजाई के 21 व 42 दिन पर निराई-गुड़ाई द्वारा खरपतवार नियंत्रण करें। पहली सिंचाई 30-35 दिन बाद तथा एक सिंचाई फूल आने पर करें।

### मूंग, उड़द व लोबिया

मूंग मुस्कान, सत्या, बसंती, एम एच 421, एम एच 318, उड़द यू एच-1 तथा लोबिया एफ एस-68, एच सी 46 किस्में बोंएं। मूंग व उड़द के लिए 6 से 8 किलोग्राम तथा लोबिया के लिए 12 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ डालें और बीज गलन व पौधे अंगमारी से बचाव हेतु बीज में 4 ग्राम थाइरम प्रति किलोग्राम बीज मिलाएं। बिजाई जुलाई के पहले पखवाड़े तक 30 व 45 सें.मी. (क्रमशः सिंचित व असिंचित क्षेत्र के लिए) की दूरी पर कतारों में करें। दो बार निराई-गोड़ाई करें। इन सभी दलहनी फसलों में बिजाई के समय 6-8 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रारंभिक मात्रा के रूप में तथा

16 किलोग्राम फास्फोरस प्रति एकड़ खेत में पोर दें। सभी फसलों को राईजोबियम के टीके से उपचारित करके बोएं।

### सोयाबीन

सोयाबीन की पी के-416, पी के-564 व पी के-472 किस्में हरियाणा के लिए उत्तम हैं। इसकी बिजाई जून के आखिरी या जुलाई के प्रथम सप्ताह में करें। राईजोबियम के टीके से उपचारित 30 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ डालें। कतार का फासला 45 सें.मी. रखकर ढाई सें.मी. गहरी बिजाई करें। अधिक उपज पाने के लिए 10 किलोग्राम नाइट्रोजन तथा 32 किलोग्राम फास्फोरस प्रति एकड़ बिजाई के समय डालें। 15 व 35 दिन बाद इसकी निराई-गोड़ाई करें।

### अरहर

अरहर की कम समय में पकने वाली यू पी एस-120 या मानक या पारस की बिजाई शीघ्र ही जुलाई के प्रथम सप्ताह में पूरी कर लें। एक एकड़ के लिए लगभग 5-6 किलोग्राम बीज डालें। इन सभी किस्मों की बिजाई कतारों में 40 सें.मी. की दूरी रखकर करें। बीज को राईजोबियम के टीके से उपचारित करके ही बोएं तथा 8 किलोग्राम नाइट्रोजन (17.5 कि. ग्रा. यूरिया) व 16 कि.ग्रा. फास्फोरस (100 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ बिजाई के समय डालें।

### गन्ना

चोटी (अगोला) बेधक कीट के लिए जून में कीटनाशक न डाली हो तो अब तुरंत 13 किलोग्राम फ्यूराडान 3-जी या 8 किलोग्राम फोरेट 10-जी को खाद के साथ मिलाकर प्रति एकड़ डालें व इसके तुरंत बाद हल्की सिंचाई करें। यदि नाइट्रोजन खाद की शेष आधी मात्रा लगानी रहती है तो उसे पूरा कर लें। बसन्तकालीन फसल में 20 कि.ग्रा. फास्फोरस व 20 कि.ग्रा. पोटाश बिजाई के समय, 1/3 नाइट्रोजन दूसरी तथा 1/3 नाइट्रोजन चौथी सिंचाई के साथ डालें।

### तिल

हरियाणा तिल नं. 1 व हरियाणा तिल नंबर 2 को जुलाई के पहले पखवाड़े में 4-5 सें.मी. गहराई व 30 सें.मी. का फासला रखकर खूड़ों में बोएं व पौधे से पौधे का फासला 15 सें.मी. रखें। दो किलोग्राम प्रति एकड़ बीज प्रयोग करें। बिजाई से पूर्व प्रति किलोग्राम बीज में 3 ग्राम कैप्टान या थाइरम मिलाकर बिजाई करें। कम उपजाऊ व हल्की ज़मीन में 15 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति एकड़ बिजाई से पहले डिल करें।



## सब्जियों में

### बैंगन

बैंगन की पिछली फसल के कच्चे फलों को तोड़कर बाज़ार बेचने के लिए भेज दें। फलों को तोड़ने के लिए किसी चाकू या तेज़ धार वाले

औज़ार का प्रयोग करें जिससे कि तोड़ते समय पौधों को क्षति न हो। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। फल व तना छेदक कीड़े के लगने पर ग्रसित फलों को तोड़कर नष्ट कर दें व इसके बाद 75 ग्राम स्पाइनोसेड (ट्रेसर 45 एस.सी.) को प्रति एकड़ 80 लीटर पानी में घोलकर 15 दिन के अंतर पर तीन छिड़काव करें। दवा प्रयोग करने के बाद फलों को 8-10 दिन तक खाने के काम में न लाएं।

वर्षा ऋतु की फसल के लिए खेत की तैयारी करें। इसकी उन्नत किस्मों, बी आर-112, हिसार श्यामल, हिसार प्रगति व एच एल बी-25 को प्रयोग में लाएं। नर्सरी में पौध इस महीने तक तैयार हो जाएगी। खेत को तैयार कर क्यारियों में बांट लें। एक एकड़ खेत में लगभग 10 टन गोबर की खाद बिखेर दें और जुताई कर दें। पौधरोपण से पहले 30 कि.ग्रा. यूरिया (15 कि.ग्रा. नाइट्रोजन), 125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट (20 कि.ग्रा. पोटाश) तथा 17 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश (10 कि.ग्रा. पोटाश) प्रति एकड़ दें। कतारों का फासला लंबी किस्मों में 60 सें.मी. तथा गोल किस्मों में 75 सें.मी. रखें। पौधे से पौधे की दूरी 60 सें.मी. रखें। पौधरोपण के बाद सिंचाई अवश्य करें। विषाणु रोग से बचाव के लिए शुरू से ही कीटनाशक दवाएं प्रयोग में लें।

हरा तेला, सफेद मक्खी, गोभ व फल छेदक कीड़े आदि बैंगन की फसल में नुकसान पहुंचाते हैं। रस चूसने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए 300-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें। फल लगने शुरू होते ही बारी-बारी से सिन्थेटिक पाइरेथ्राइड (80 मि.ली. फैनवालेरेट) 20 ई.सी. या 200 मि.ली. डेल्टामैथ्रीन 2.8 ई.सी. या 500 ग्रा. कार्बेरिल 50 घु.पा. को 200 लीटर पानी में प्रति एकड़ छिड़कें ताकि फल छेदक का नियंत्रण भी हो जाए। सिन्थेटिक पाइरेथ्राइड का छिड़काव 21 दिन तथा दूसरे कीटनाशकों का 15 दिन के अंतर पर दोहराएं।

### फूलगोभी अगेती

इसके लिए एक एकड़ खेत में लगभग 20 टन गोबर की सड़ी खाद मिलाएं तथा पौधरोपण से पहले 30 कि.ग्रा. यूरिया (15 कि.ग्रा. नाइट्रोजन), 125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट (20 कि.ग्रा. फास्फोरस) तथा 35 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश (20 कि.ग्रा. पोटाश) की दर से मिलाकर खेत को समय पर तैयार करें। अगेती फूलगोभी (पूसा कातकी) की पौध इस माह तैयार हो जाएगी। अच्छा होगा कि हल्की डोलियां बना लें जिससे कि अधिक वर्षा में पौधे खराब न हों। पौधरोपण कतारों में 45 सें.मी. की दूरी पर करें और पौधे की दूरी 30 सें.मी. रखें। पौधरोपण शाम के समय करें तो उचित रहेगा। वर्षा न होने पर सिंचाई करें।

### मिर्च

मिर्च की गर्मी की फसल की तुड़ाई करके बाज़ार भेजें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। हरा तेला, सफेद मक्खी, माईट तथा रस चूसने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ शुरू से ही 15 दिन के अंतर पर छिड़कें। इस दवा से विषाणु रोग की रोकथाम हो सकती है क्योंकि

सफेद मक्खी रोग फैलाती है। रोगग्रस्त पौधों को निकाल कर नष्ट कर दें।

मिर्च की पौध इस माह तैयार हो जाएगी। अतः रोपाई का प्रबंध करें। मिर्च के खेत की तैयारी के लिए 10 टन गोबर की खाद प्रति एकड़ की दर से बिखेर दें। खेत को उचित नाप की क्यारियों में बांट लें। पौधरोपण से पहले 30 कि.ग्रा. यूरिया (15 कि.ग्रा. नाइट्रोजन), 75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट (12 कि.ग्रा. फास्फोरस) और 20 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश (12 कि.ग्रा. पोटाश) प्रति एकड़ की दर से खेत में मिला दें। तैयार खेत में शाम के समय पौधरोपण करें। पौधरोपण के बाद सिंचाई अवश्य करें।

### भिण्डी

भिण्डी की गर्मी की फसल को हरा तेला से बचाने के लिए एकटारा 25 डब्ल्यू जी (थायामिथोक्सम) नामक दानेदार कीटनाशक 40 ग्राम दवा को 150-200 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ में छिड़काव करें। 20 दिन के अंतराल पर आवश्यकता हो तो दोहराएं। भिण्डी में फल लगने पर जो खाने के लिए उगाई गई हो छिड़काव न करें तथा 300-500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. 200-300 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

वर्षाकालीन फसल के लिए यदि बिजाई जून माह में न की हो तो अब करें। एक एकड़ खेत में 10 टन गोबर की खाद डालकर जुताई करें और बिजाई से पहले 40 कि.ग्रा. यूरिया (20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन) तथा 150 कि.ग्रा. सुपरफास्फेट (24 कि.ग्रा. फास्फोरस) प्रति एकड़ की दर से दें। पोटाश खाद आवश्यकता पड़ने पर डालें। खेत को क्यारियों में बांट लें। वर्षा उपहार या हिसार उन्नत किस्मों को प्रयोग में लाएं। एक एकड़ खेत की बिजाई के लिए 5-6 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होगी। बिजाई करने से पहले बीजोपचार बाविस्टिन (2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) नामक दवा से कर लें। बिजाई कतारों में लगभग 45-60 सें.मी. की दूरी पर करें तथा पौधों की दूरी 30 सें.मी. रखें। आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा प्रारंभ से ही खरपतवारों पर नियंत्रण रखें।

### कढ़ू जाति की सब्जियां

तरबूज व खरबूजे की फसल की तुड़ाई कर ली होगी। अतः खेत को दूसरी फसलों के लिए तैयार करें। इस जाति की और सब्जियों, जैसे लौकी, करेला, टिण्डा, तोरी, ककड़ी आदि के कच्चे फलों को तोड़कर नियमित रूप से बाजार भेजें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें।

गर्मी की पुरानी फसल को फल छेदक मक्खी से बचाने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 500 ग्राम कार्बेरिल 50 प्रतिशत घु.पा. और 1.25 कि.ग्रा. गुड़ को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। लालड़ी का आक्रमण हो तो 100 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. को 100 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ की बेलों पर छिड़कें। 5 कि.ग्रा. कार्बेरिल 5-डी 5 कि.ग्रा. राख का प्रति एकड़ धूड़ा भी अच्छा रहता है। सफेद चूर्णी रोग लगने पर 800 ग्राम घुलनशील गंधक अथवा 200 मि.ली. कैराथेन का प्रति एकड़ की दर से खेत पर छिड़काव करें। गर्मी की फसल समाप्त होने पर जुताई करें और अन्य फसलें लगाने की तैयारी करें।

नई उग रही फसल पर लाल भूण्डी (लालड़ी) का प्रकोप होने पर



100 ग्राम कार्बेरिल 50 प्रतिशत घु.पा. (सेविन/हैक्साविन/कार्बाविन) को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

वर्षाकालीन कद्दू जाति की सब्जियां लगाने के लिए खेत की तैयारी करें। खेत तैयार करते समय 6 टन गोबर की खाद, 8 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (15 कि.ग्रा. यूरिया), 10 कि.ग्रा. फास्फोरस (60 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 10 कि.ग्रा. पोटाश (16 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रति एकड़ की दर से दें।

बिजाई नालियों के दोनों ओर करें। किस्म के चुनाव, बीज की मात्रा तथा बीजने की दूरी निम्नलिखित तालिका में दी गई है।

फसल का नाम	किस्म	बीजने की दूरी (सैं.मी.)	
		कतारों में	पौधों में
घीया	पूसा/समर प्रौलिफिक लांग व	200	60
	पूसा समर प्रौलिफिक राउण्ड		
करेला	कोयम्बटूर लांग व पूसा दो-मौसमी	150	45
तोरी	पूसा चिकनी व गुच्छेदार	200	60
(चिकनी)	पूसा नसदार (धारीदार)	200	60
खीरा	जैपनीज लांग ग्रीन या स्थानीय	100-150	60
टिण्डा	हिसार सलैक्शन, बीकानेर ग्रीन व	150	60
	हिसार टिण्डा		

खीरा के लिए लगभग एक कि.ग्रा. बीज तथा अन्य फसलों के लिए लगभग (1½-2) कि.ग्रा. बीज की प्रति एकड़ बिजाई के लिए ज़रूरत होगी। फसलों की सिंचाई आवश्यकतानुसार करें तथा खरपतवारों को निकालते रहें। फसलों के उगने के बाद लाल भूण्डी नामक कीड़े से बचाव के लिए पौधों पर 10 कि.ग्रा. कार्बेरिल 2.5 प्रतिशत धूड़ा प्रति एकड़ धूड़ें।

### अरबी

अरबी की फसल में आवश्यकता पड़ने पर सिंचाई करें, खरपतवार निकालें तथा मिट्टी चढ़ाएं। खड़ी फसल में नाइट्रोजन वाली खाद (यूरिया) बिजाई के लगभग 7-8 सप्ताह बाद डालकर मिट्टी चढ़ा दें। बरसात की फसल की बिजाई का समय जून-जुलाई माह है। एक एकड़ खेत में बिजाई करने के लिए लगभग 300-400 कि.ग्रा. कन्दों की आवश्यकता होती है। कन्दों की बिजाई करने की दूरी 45-60 सैं.मी. कतारों में तथा 30 सैं.मी. पौधों में रखते हैं।

### पालक

पालक की पहले लगाई गई फसल की आवश्यकता होने पर सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें। जब पालक काटने लायक हो जाए तो उसके पत्तों को काटकर बंडलों में बांधें तथा बाजार भेजें। नई फसल के लिए खेत की तैयारी करें तथा बिजाई करें। इसकी उन्नत किस्में, जौबनेर-ग्रीन, आलग्रीन या एच एस 23 का प्रयोग करें। इसके लिए 8 कि.ग्रा. बीज एक एकड़ में बिजाई करने के लिए काफी होगा तथा खेत तैयार करते समय लगभग 16 टन गोबर की सड़ी खाद, 12 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (25 कि.ग्रा.

यूरिया) तथा 20 कि.ग्रा. फास्फोरस (125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ खेत में मिलाएं तथा उचित नाप की क्यारियों में खेत बांट लें। बिजाई कतारों में 15-20 सैं.मी. की दूरी पर करें।

### शकरकन्दी

शकरकन्दी की उन्नत किस्में पूसा सफेद व पूसा लाल हैं। शकरकन्दी की फसल की काट को अप्रैल से जुलाई तक खेत में लगाते हैं। एक एकड़ खेत में लगभग 24000 से 28000 बेलों की काटों की आवश्यकता होती है। प्रत्येक काट लगभग 30-40 सैं.मी. लंबी होनी चाहिए। लगाने की दूरी कतारों में 60 सैं.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 30 सैं.मी. रखें। खेत तैयार करते समय 10 टन गोबर की खाद, 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (30 कि.ग्रा. यूरिया), 36 कि.ग्रा. फास्फोरस (225 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 32 कि.ग्रा. पोटाश (55 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रति एकड़ की दर से काटें लगाने से पहले दें तथा क्यारियां बना लें। खड़ी फसल में 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (30 कि.ग्रा. यूरिया) की आधी-आधी मात्रा दो बार देने की आवश्यकता होती है। यदि फसल पहले लगाई जा चुकी है तब आवश्यकता होने पर सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें। लवणीय या क्षारीय भूमि में शकरकन्दी की खेती नहीं की जा सकती।

### खरीफ प्याज

नर्सरी की देखभाल करें, खरपतवार निकालें, सिंचाई करें तथा अधिक वर्षा से बचाव करें। आर्द्रगलन की समस्या होने पर 0.2 प्रतिशत कैप्टान के घोल से नर्सरी की सिंचाई करें। खेत की तैयारी भी शुरू करें।

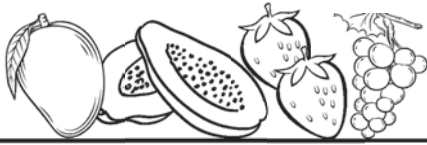
### मूली

यदि आपने मूली की अगेती किस्म, पूसा चेतकी की बिजाई पहले कर रखी है तो आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। यदि नहीं तो इसकी बिजाई इस माह भी कर सकते हैं। खरपतवार निकालें व जड़ों पर मिट्टी चढ़ाएं। तैयार जड़ें उखाड़कर तथा धोकर बाजार भेजें। चेपा का प्रकोप होने पर 250-400 मि.ली. डाईमैथोएट 30 ई.सी. को 250-400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। पूसा चेतकी की फसल लगभग 40 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी बिजाई के लिए लगभग 4-5 कि.ग्रा. बीज की एक एकड़ खेत के लिए आवश्यकता होगी। नई फसल लगाने के लिए खेत तैयार करते समय लगभग 20 टन गोबर की खाद, 12 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (25 कि.ग्रा. यूरिया) तथा 12 कि.ग्रा. फास्फोरस (75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ डालें। बिजाई कतारों में 30-45 सैं.मी. की दूरी पर करें तथा पौधे से पौधे की दूरी 5-8 सैं.मी. रखें। उचित होगा कि बिजाई हल्की-हल्की डोलियों पर करें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें।

### अन्य सब्जियां

अन्य सब्जियों, जैसे ग्वार, लोबिया आदि फसलों की आवश्यकता होने पर सिंचाई करें तथा नर्म फलियों को तोड़कर बाजार भेजें। ग्वार की उन्नत किस्म पूसा नवबहार प्रयोग करें तथा बिजाई की दूरी 30-45 सैं.मी. कतारों में तथा 15-20 सैं.मी. पौधों में रखें। एक एकड़ के लिए 6 कि.ग्रा.

बीज की आवश्यकता होगी। लोबिया की उन्नत किस्में पूसा बरसाती या पूसा दो-फसली प्रयोग करें तथा बिजाई की दूरी 30-45 सें.मी. कतारों में तथा 15-20 सें.मी. पौधों के बीच रखें। एक एकड़ के लिए लगभग 8-10 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होगी। हानिकारक कीड़ों से रक्षा के लिए कीटनाशक दवाओं का प्रयोग करें। दवा प्रयोग के बाद एक सप्ताह तक फसल को खाने के काम में न लें।



## फलों में

### अंगूर

फल तोड़ने के बाद जो बड़वार आती है उसको  $\frac{1}{2}$ - $\frac{3}{4}$  मीटर रखने के बाद सिरे से तोड़ते रहें। नई बेलों में 25-50 ग्राम यूरिया प्रति बेल डाल दें और अगर वर्षा न हो तो खाद डालने के बाद सिंचाई अवश्य करें। खरपतवार नियंत्रण के पश्चात नमी को बनाए रखने के लिए काली पॉलीथीन शीट बिछाएं।

श्विप्स व हरा तेला के रस चूसने से पौधा पीला व भूरा-लाल हो जाता है। इनकी रोकथाम के लिए आधा लीटर मैलाथियान 50 ई.सी. या 150 मि.ली. फैनवालेरेट 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। अंगूर में एन्थ्रेक्नोज बीमारी की रोकथाम के लिए बाविस्टिन 0.2 प्रतिशत का छिड़काव जुलाई के अंतिम सप्ताह में करें।

### संगतरा, माल्टा इत्यादि

हर सप्ताह सिंचाई का प्रबंध करें।

इन पौधों को तेला (सिल्ला), पौधों में सुरंग बनाने वाले कीट, सफेद मक्खी और पत्ते खाने वाली सूण्डी से बचाने के लिए 750 मि.ली. मैटसिस्टॉक्स 25 ई.सी. या 625 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफोस 36 डब्ल्यू एस सी को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

बरसात की पहली बौछार के तुरंत बाद 0.3 प्रतिशत कॉपर-ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें।

फलों को गिरने से रोकने के लिए पेड़ों पर 6 ग्राम 2,4-डी, 3 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट, 12 ग्राम ओरियोफिन्जिन और 1.5 कि.ग्रा. चूने को 550 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ जून-जुलाई में पहला छिड़काव व दूसरा छिड़काव सितम्बर के दूसरे सप्ताह में करें। अगर बाग के पास कपास खड़ी है तो 2,4-डी का छिड़काव न करें। इस परिस्थिति में 20 मि.ग्रा. एन. ए. ए. को प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। अगर पौधों में जस्ते की कमी हो तो 500 मि.ग्रा. प्लान्टोमाइसिन और 2 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का प्रति लीटर पानी की दर से जुलाई, अक्टूबर, दिसम्बर व फरवरी में छिड़काव करें।

### बेर

प्रति पौधा 50 किलोग्राम गोबर की खाद अगर काट-छांट के बाद न

डाली हो तो इस माह में ज़रूर डालें और 625 ग्राम यूरिया व 2.5 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट भी प्रति पेड़ डालकर गुड़ाई करें और फिर सिंचाई करें। इस महीने देसी पौधों पर चस्पा/पैच विधि द्वारा पौधे तैयार कर सकते हैं।

### अमरूद

750 ग्राम यूरिया, 625 ग्राम सुपर फास्फेट, 250 ग्राम सल्फेट ऑफ पोटैश एवं बाकी आधी बची खाद इसी माह में डालकर अच्छी तरह मिलाकर सिंचाई करें। जो कीड़े अंगूर में लगते हैं वही अमरूद में लगते हैं। इसलिए अंगूर वाले कार्यक्रम को अपनाएं।

### आम

फल तोड़कर मंडी भेजना शुरू कर दें। फल तोड़ते समय यह ध्यान रखें कि 'नाकू' फल के साथ अवश्य रखें।

### अन्य फल

आड़ू, अलूचा और नाशपाती में सप्ताह के अंतराल पर, हल्की सिंचाई अवश्य करें। बाग के इर्द-गिर्द पौधों को गर्म एवं शुष्क हवाओं से बचाने के लिए शीशम, जामुन, पोपलर व सफेदा व करोंदा आदि के पेड़ लगाएं।

जब बगीचों में फल लग रहे हों तब उनकी कतारों के बीच फसल नहीं बोनी चाहिए लेकिन जिन बगीचों में पेड़ अभी छोटे हों और फल न लगे हों वहां पंक्तियों के बीच उड़द, लोबिया, मूंग, ग्वार आदि फसलें बोई जा सकती हैं। इन फसलों को ज़रूरत के अनुसार खाद की अतिरिक्त मात्रा भी देनी चाहिए। यदि ज़मीन कमजोर है तो हरी खाद के लिए ग्वार या ढ़ेंचा अवश्य बीजें। ढ़ेंचा को बिजाई के 45 दिन बाद जुताई करके मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें।

**नोट :** किसान बागों में रोटावेटर को न चलाएं। रोटावेटर की जुताई से पौधों की जड़ों को नुकसान पहुंचता है और जड़ें कट जाती हैं और पौधे को पूरी खुराक नहीं मिलती व धीरे-धीरे पौधे सूखने लगते हैं।



## पशुओं में

### गाय-भैंस

बरसात के मौसम में बारिश के कारण व उच्च तापमान के कारण वातावरण में आर्द्रता बढ़ जाती है। आर्द्रता के कारण पशु अपने आप को तनाव में महसूस करते हैं।

वर्षा शुरू होने पर गाय-भैंसों में छूत के रोग हो जाते हैं, विशेषकर गलघोंटू और फड़ सूजन की बीमारियां पशुओं को अधिकतर लग जाती हैं। यदि आपने अपने पशुओं को गलघोंटू या फड़ सूजन की बीमारी से बचाव के टीके अभी तक न लगवाए हों तो शीघ्र ही लगवा लें। ये टीके पशु चिकित्सालय में निःशुल्क लगाए जाते हैं। यदि आपका पशु बीमार है तो उसे दूसरे पशुओं से अलग कर लें और उसका इलाज कराएं। जिन पशुओं की छूत की बीमारी से मृत्यु हो जाए, उन्हें गांव से बाहर गड्ढे में चूना आदि डालकर दबाएं। उनके मल-मूत्र को भी गांव के बाहर गड्ढे में डालकर दबा

दें या जला दें तथा गड्डे के आसपास तथा ऊपर चूना डाल दें।

सायं को जब पशु घर पर आते हैं तो ध्यान से देखें कि वे चारा ठीक प्रकार से खा रहे हैं या नहीं। यदि पशु चारा, दाना न खाए तो यह इस बात का लक्षण है कि वह बीमार है। उस समय आप निकटतम पशु-चिकित्सक से मिलें और पशु का इलाज तुरंत कराएं।

बरसात के मौसम में बाड़े में पानी नहीं भरना चाहिए तथा बाड़े की नालियां साफ सूथरी रहनी चाहिए। बाड़े की सतह सूखी व फिसलन वाली नहीं होनी चाहिए। लगातार गीले होने के कारण पशुओं के खुर्ों में संक्रमण होने की संभावना अधिक रहती है, इसलिए सप्ताह में एक या दो बार हल्के लाल दवाई के घोल से खुर्ों को साफ करना चाहिए।

इस महीने के आखिर में भैंसों का ब्यांत शुरू हो जाता है। इसलिए किसान भाई इनकी तरफ विशेष ध्यान दें।

पशुओं से पूरी मात्रा में दूध लेने के लिए यह अनिवार्य है कि इनकी खुराक में हरे चारे का प्रयोग किया जाए। दाने में मिलाकर पशुओं को 50 ग्राम खनिज मिश्रण जोकि आई.एस.आई. मार्का हो तथा नमक देना चाहिए। यह खनिज मिश्रण पशु पोषण विभाग, लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय से भी प्राप्त किया जा सकता है।

ब्याने वाली गाय-भैंस की खुराक का विशेष ध्यान रखें। खुराक ऐसी हो जो कब्ज न करे। जो गायें, भैंसें ब्या गई हों उन्हें उनकी दूध की मात्रा के अनुसार दाना दें। दूध देने वाली गायों और भैंसों को प्रति 2.5 कि.ग्रा. व 2 किलोग्राम दूध के लिए एक किलोग्राम दाने का मिश्रण दें। दाने की मात्रा चारे की पौष्टिकता व उपलब्धि के हिसाब से कम व ज्यादा कर सकते हैं।

नवजात बछड़े-बछड़ियों तथा कट्टे-कट्टियों को साफ स्थान पर रखें। गंदगी के कारण उनका सूण्ड सूज जाता है और साथ ही बुखार आता है। टांगों के जोड़ सूज जाते हैं। दस्तों की भी शिकायत हो जाती है। इस बीमारी को सूंड सूजने की बीमारी भी कहते हैं। इससे बचाने के लिए इनके लटकते हुए सूण्डों को पैदा होते ही ऊपर से डेढ़ इंच छोड़ कर काट देना चाहिए और कटे हुए स्थान पर टिंचर आयोडीन लगाकर साफ पट्टी बांधें। नवजात बच्चे को आधा घंटे के अंदर ही खीस पिलाएं ताकि उसकी बीमारियों से बचाव की क्षमता बढ़ जाए तथा बीमारियों से बचाव हो सके।

नवजात पशु को फर्श की फिसलन तथा वातावरण के तनाव से बचाना चाहिए।

पशुओं को बरसात में गंदा पानी पीने से रोकना चाहिए अन्यथा पेट में कीड़े हो जाते हैं और इसके कारण उनकी दूध देने की क्षमता भी घट जाती है तथा पशुओं में अन्य बीमारियां भी हो सकती हैं। पेट के कीड़ों की रोकथाम के लिए पशु चिकित्सक की सलाह से पेट के कीड़े मारने की दवा समय पर दें।

### भेड़

भेड़ों में आंतों के सूजने से दस्त लग जाते हैं। इसे एन्टेरोटाक्सिमिया कहते हैं। इस रोग से बचाने के लिए अपनी भेड़ों को इस बीमारी से बचाव का टीका लगवाएं। बरसात में अधिकतर भेड़ों के पेट में कीड़े हो जाते हैं। इन कीड़ों के कारण इनका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है और कई प्रकार के रोग लग जाते हैं। भेड़ों को स्वस्थ रखने के लिए अपने पशु-चिकित्सक की

सलाह से उन्हें नियमित रूप से कृमिनाशक दवा पिलाते रहना चाहिए। भेड़ को पीने के लिए साफ एवं स्वच्छ जल उपलब्ध करायें तथा संपूर्ण आहार दें।

### कुक्कुट

जिन चूजों की आयु 6 से 8 सप्ताह तक की हो गई हो, उन्हें रानीखेत से बचाव का टीका (आर.बी. 2) लगवा लें। इन चूजों को फाऊल पॉक्स की बीमारी से बचाने के लिए भी टीका लगवा लें।

चूजों में खूनी दस्त रोकने के लिए उनकी खुराक में ऑक्सीडोयोस्टेट मिलाकर दें। ऐसे आक्सीडोयोस्टेट जो आसानी से मिल सकते हैं, वे हैं-बाईप्रान, एमप्रोल आदि। बाईप्रान तथा एमप्रोल को एक क्विंटल खुराक में 25 ग्राम तक मिलाया जाता है। ऐसी खुराक खिलाने से खूनी दस्त की बीमारी से बचाव हो सकता है।

चूजों का आवास हवादार होना चाहिए। इसमें बरसात के पानी का आवागमन नहीं होना चाहिए। वातावरण के तनाव से बचाव हेतु पंखों का इस्तेमाल किया जा सकता है।

### गृह विज्ञान

5 जून का दिन प्रत्येक वर्ष विश्व वातावरण दिवस के रूप में मनाया जाता है। अतः इस दिन ग्रामवासियों को वातावरण की स्वच्छता के बारे में जागरूक करना अति आवश्यक है। स्वच्छता लोगों की मूलभूत आवश्यकता है क्योंकि इसका संबंध खाद्य स्वच्छता, व्यक्तिगत स्वच्छता, घरेलू तथा पर्यावरण की स्वच्छता से है। स्वच्छता की आदतों से जल और मृदा के प्रदूषण पर रोक लगती है। जिससे बीमारियां नहीं फैल पातीं।

स्वच्छता से तात्पर्य है कि तरल तथा ठोस अपशिष्ट का ठीक ढंग से निपटारा, खाद्य स्वच्छता, व्यक्तिगत, घरेलू तथा वातावरण की स्वच्छता भी शामिल हैं। ठीक स्वच्छता न केवल सामान्य स्वास्थ्य की दृष्टि से ज़रूरी है बल्कि इसका व्यक्तिगत तथा सामाजिक ज़िन्दगी में भी महत्वपूर्ण स्थान है। पानी की स्वच्छता के लिए जनता वाटर फिल्टर का इस्तेमाल करें जिसको घर पर बनाना बहुत ही सरल एवं सस्ता है। वातावरण की स्वच्छता के लिए पानी सोखने वाले गड्डे, शौच के सही निपटारे के लिए गड्डे वाले शौचालय का इस्तेमाल करें। हवा की शुद्धता एवं भूमि के संरक्षण के लिए वृक्षारोपण करें।



### आवश्यक सूचना

“हरियाणा खेती” मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

— सह-निदेशक (प्रकाशन)



# तोरी के बीजोत्पादन की उन्नत तकनीक

मकखन मजोका, विजयपाल पंधाल एवं शिवानी कम्बोज<sup>1</sup>

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

तोरी का हमारे भोजन में मुख्य स्थान है। तोरी पोषक होने के साथ-साथ आय का भी अच्छा स्रोत है। इसकी अधिक उपज एवं गुणवत्ता बढ़ाने में शुद्ध व उच्चकोटि के बीज की अहम भूमिका होती है। तोरी का स्वस्थ बीज निम्नलिखित गुणों से परिपूर्ण होना चाहिए:-

1. तोरी का बीज किस्म के आधार पर शुद्ध होना चाहिए।
2. बीज बाहरी बनावट व आकार से उच्चकोटि का होना चाहिए।
3. बीज स्वस्थ व अच्छे अंकुरण वाला होना चाहिए।
4. तोरी का बीज बीमारी, खरपतवार तथा अन्य फसलों के बीजों से मुक्त होना चाहिए।

तोरी के शुद्ध बीजोत्पादन के लिए विशिष्ट ज्ञान व कुशलता की आवश्यकता होती है, अतः कुछ आधारभूत बातों की जानकारी संक्षेप में इस प्रकार है -

## उन्नत किस्में:-

**पूसा नसदार:** इस किस्म के फल धारीदार, हल्के हरे रंग के होते हैं। इसके फल छोटे आकार के अच्छी सुगंध लिए पीले गूदे के होते हैं। ग्रीष्म ऋतु के लिए यह किस्म सर्वोत्तम है।



**पूसा चिकनी:** इस किस्म में बहुत अधिक फल धारण करने की क्षमता है। इसके फल गहरे रंग के तथा चिकने होते हैं।

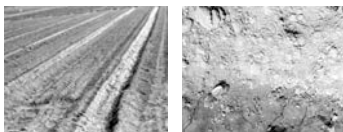


**भूमि की तैयारी:** यद्यपि दोनों ही प्रकार की तोरी को किसी भी तरह की मिट्टी में उगाया जा सकता है, परन्तु फिर भी अच्छी जल-निकास व्यवस्था वाली और जैवांश से भरपूर दोमट मिट्टी इनकी खेती के लिए सर्वोत्तम रहती है। दो-तीन बार खेत जोतकर व पाटा लगाकर खेत को तैयार कर लें।

**बिजाई का समय:** दोनों ही प्रकार की तोरी के बीजोत्पादन के लिए फरवरी-मार्च तथा जून-जुलाई का समय बिजाई के लिए उपयुक्त है। बिजाई फरवरी-मार्च के महीने में कुछ उत्तम मानी गई है।

**बीज की मात्रा:** एक एकड़ के लिए 2-3 किलोग्राम बीज पर्याप्त है।

**बिजाई की विधि:** इसकी बिजाई 2 मीटर चौड़ी क्यारियों में नाली के किनारे पर करें। पौधों के बीच की दूरी 60 सें.मी. रखें। एक स्थान पर 2-3 बीज बोयें।



**खाद व उर्वरक:** 6 टन गोबर

की खाद, 20 किलोग्राम नाइट्रोजन, 12 किलोग्राम फॉस्फोरस और 12 किलोग्राम पोटाश की शुद्ध मात्रा प्रति एकड़ डालें। बिजाई के समय फॉस्फोरस व पोटाश की सारी मात्रा तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा डालनी चाहिए। शेष नाइट्रोजन को खड़ी फसल में दें।

**सिंचाई:** बिजाई के तुरंत पश्चात् हलकी सी सिंचाई की जानी चाहिए। सिंचाई इस प्रकार से करें कि नालियां आधी सतह तक पानी से भर जाएं। दूसरी सिंचाई पहली सिंचाई के 4-5 दिन के पश्चात् करना आवश्यक है। फूल व कच्चे फलों के लगने की अवस्था में सिंचाई अवश्य करें।

**खरपतवार नियन्त्रण:** इसके लिए 2-3 निराई-गुड़ाई की आवश्यकता पड़ती है। दूसरी या तीसरी गुड़ाई के समय जब बेल बड़ी हो जाये और उन पर फूल आ जाये तो बेलों को नालियों से हटाकर क्यारियों में कर देना चाहिए। इससे पके फल खराब नहीं होते हैं।



**परागण:** तोरी एक बेल वाली परपरागित फसल है जिसमें नर व मादा पुष्प एक ही बेल पर अलग-अलग स्थान पर तथा अलग-अलग समय पर खिलते हैं। नर पुष्प पहले तथा गुच्छे में लगते हैं जबकि मादा पुष्प बेल की पार्श्व शाखाओं पर अकेले लगते हैं। पुष्प का रंग चमकीला पीला एवं आकर्षक होता है। मादा पुष्प के निचले भाग में फल की आकृतियुक्त अंडाशय होता है जो निषेचन के पश्चात् फल का निर्माण करता है।



**इथ्रेल का प्रयोग:** पौधों की 2 एवं 4 सच्ची पत्तियों की अवस्था में इथ्रेल के 100 पी.पी.एम. घोल (4 मि.ली. इथ्रेल 50 प्रतिशत को 20 लीटर पानी में मिलाकर थोड़ा सा चिपचिपा पदार्थ डालें) के दो छिड़काव करने से मादा फूलों की संख्या बढ़ जाती है, जिसके फलस्वरूप फसल की पैदावार में 25-35 प्रतिशत तक वृद्धि हो जाती है। प्रति एकड़ 20-25 लीटर घोल की आवश्यकता पड़ती है।

**पृथक्करण:** शुद्ध बीजोत्पादन के लिए फसल की दो किस्मों के बीच एक निश्चित दूरी (पृथक्करण) रखना आवश्यक है। तोरी एक परपरागित फसल है, इसलिए इसमें परपरागण मधुमक्खियों, अन्य कीट पतंगों व वायु द्वारा होता है। अन्य बेल वाली फसलों से और तोरी की अन्य किस्मों से इसका पृथक्करण कम से कम 800-1000 मीटर दूरी तक करें, क्योंकि कीट पतंगों व वायु के द्वारा इन फसलों के परागण काफी दूर तक फैल सकते हैं और बीज किस्म के आधार पर शुद्ध नहीं होगा।

**फसल निरीक्षण व अवांछनीय पौधे निकालना:** जो पौधे किस्म के गुणों (पत्तियों, फूलों व फलों के आकार व रंग) के आधार पर पूरे न उतरें वो अवांछनीय पौधे कहलाते हैं। शुद्ध बीजोत्पादन के लिए इन पौधों को निकालना बहुत ज़रूरी है। परन्तु इन्हें निकालते समय रोगग्रस्त पौधे, खरपतवार तथा दूसरी किस्मों के पौधे भी निकाल दें। (शेष पृष्ठ 26 पर)

<sup>1</sup>शोध विद्यार्थी, सब्जी विज्ञान विभाग, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार

## प्याज़ की भण्डारण क्षमता कैसे बढ़ाएं

✍ सुमन बाला एवं जितेन्द्र कुमार

वनस्पति विज्ञान एवं पादप क्रिया विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

प्याज़ भारत की एक मुख्य फसल है, भारत देश के विभिन्न प्रांतों में अलग-अलग समय पर ये फसल उगाई जाती है परंतु प्याज़ में दो मुख्य फसलें हैं-रबी और खरीफ। रबी प्याज़ की भण्डारण क्षमता खरीफ प्याज़ के मुकाबले अच्छी रहती है इसलिए उसका भण्डारण आसानी से किया जा सकता है। परंतु खरीफ प्याज़ उत्पादन के पश्चात् ही अंकुरण शुरू कर देता है जिससे इसकी भण्डारण क्षमता कम हो जाती है जिससे किसान इस प्याज़ का उत्पादन करने में रुचि नहीं लेते। हालांकि विभिन्न रासायनों से हम इसके अंकुरण को नियंत्रित कर सकते हैं परंतु रसायन इसकी गुणवत्ता को समाप्त कर देते हैं इसलिए इसकी भण्डारण क्षमता बढ़ाने के लिए कुछ ऐसे सुझाव इस प्रकार हैं जिससे बिना रसायन के इसकी भण्डारण क्षमता बढ़ाई जा सके।

हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय में खरीफ प्याज़ के अंकुरण को रोकने तथा भण्डारण क्षमता बढ़ाने हेतु शोध कार्य किया गया। पिछले कुछ वर्षों के अनुसंधान से यह परिणाम मिला है कि कृत्रिम ढंग से प्याज़ के कंदों को सुखाने से इनकी भण्डारण शक्ति में वृद्धि हो जाती है। खरीफ प्याज़ के कंदों की भण्डारण शक्ति की बढ़ोत्तरी के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है :-

1. **सिंचाई :** खुदाई के तीन सप्ताह पहले फसल में पानी देना बंद कर देना चाहिए। प्याज़ कंद के ऊपरी भाग को हल्का सा दबाकर गिरा देना चाहिए। पत्तियों को गिराते समय इस बात का पूरा ध्यान देना चाहिए कि प्याज़ कंद के ऊपरी भाग में किसी प्रकार की यान्त्रिक क्षति न पहुंचे। यदि आवश्यकता हो तो इस विधि को दस दिन में पुनः कर देना चाहिए।

2. **पूरी तरह सुखाना :** प्याज़ के कंदों को पूरी तरह से सुखाना चाहिए क्योंकि इससे भण्डारण शक्ति बढ़ जाती है। इसे दो विधियों से किया जा सकता है:

**पहली विधि:** पत्तों सहित खोदे गये कंदों को 2-3 सप्ताह खुली धूप में रखें जब तक कंद की ऊपरी पत्ती सूख कर कागज़ की तरह न बन जाए। ओस से बचाने के लिए कंदों को रात के समय तिरपाल से ढक दें। अच्छी तरह से सुखाने के लिए कंदों को बीच-बीच में उलटते रहें। इस तरह कंदों की गर्दन पतली एवं बंद हो जाती है। ऐसा भी माना गया है कि अंकुरण विरोधन रसायन पत्तियों से कंद में स्थानांतरित हो जाता है जो अंकुरण को रोकता है। यह विधि बहुत बढ़िया, आसान एवं खर्च रहित है।

**दूसरी विधि :** कंद सूर्य ऊर्जा से सुखाव यंत्र में भी सुखाए जा सकते हैं। इस विधि में पत्तियों सहित कंदों को यंत्रों के कांचगृह में फैला देते हैं और इसके रोशनदान खोल देते हैं। कांचगृह के अंदर का तापक्रम 40 सें. से अधिक नहीं होना चाहिए। इसमें रखे गए कंदों को दिन में कई बार उलट-पलट करना चाहिए। उपरोक्त दोनों विधियों में से किसी एक विधि द्वारा सुखाए गए कंदों का भण्डारण वायु के अच्छे आवागमन वाले साधारण भण्डारगृह में अप्रैल माह के अंत तक किया जा सकता है।

## फलों व सब्जियों की उचित डिब्बाबंदी : अधिक आमदनी

✍ सुमन बाला एवं जितेन्द्र कुमार

वनस्पति विज्ञान एवं पादप क्रिया विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में विभिन्न मौसमों में विभिन्न तरह का तापमान व वातावरण के कारण इनमें विभिन्न समय में भिन्न-भिन्न तरह की सब्जियां व फल पैदा होते हैं। जिसके कारण भारत विश्व में फलों तथा सब्जियों के उत्पादन में दूसरे स्थान पर है। परन्तु भारतीय किसानों को इन फलों तथा सब्जियों के उचित दाम नहीं मिल पाते। विभिन्न कारणों में डिब्बाबंदी भी एक मुख्य कारण है।

डिब्बाबंदी इन उत्पादों को यातायात तथा भण्डारण के समय उचित अवस्था में रखती है तथा उपभोक्ता को एक अच्छी अवस्था में इनको उपलब्ध कराती है। हमारे किसानों को डिब्बाबंदी का उचित ज्ञान नहीं है। वह अभी भी लकड़ी की टोकरियों तथा बोरियों को इस कार्य के लिए प्रयोग करते हैं जो बहुत हानिकारक है। विभिन्न अनुसंधानों से पता चला है कि डिब्बाबंदी से विभिन्न तरह के नुकसान होते हैं। अधिकतर फलों तथा सब्जियों में गत्ते के डिब्बों को निम्नलिखित कारणों से सबसे उचित माना जाता है।

1. **निम्न भार:** इन डिब्बों का सबसे कम भार होता है इसीलिए ये यातायात तथा रखरखाव के लिए सबसे उचित माने जाते हैं।
2. **पुनर्चक्रण:** गत्ते के डिब्बे कृषि के व्यर्थ उत्पादों से बनाये जाते हैं जो वातावरण के प्रदूषण को भी कम करते हैं।
3. **कम उत्पाद:** गत्ते के डिब्बे वजन में हल्के होने की वजह से बहुत कम उत्पाद से बनते हैं।
4. **आसान रख-रखाव:** गत्ते के डिब्बे एक आकार के होने की वजह से यातायात व भण्डारण के समय आसानी से एक दूसरे के ऊपर रखे जा सकते हैं।
5. **सुराखों से हवा का आदान-प्रदान:** फल तथा सब्जियां जीवित वस्तु होने के नाते तुड़ाई उपरान्त भी श्वसन क्रिया करती रहती हैं, जो इन बंद डिब्बों में सुराख करके आसानी से उपलब्ध कराई जा सकती हैं।
6. **नाम व सुंदरता के लिए छपाई:** सभी डिब्बों पर उत्पाद का नाम, उसका वर्गीकरण व उत्पादक का नाम उसकी कीमत को बढ़ाता है। इससे उत्पादक का नाम सीधा उपभोक्ता तक जाता है जिसके कारण वह सदा के लिए उससे जुड़ जाता है। इससे पूरा लाभ उत्पादक को मिलता है तथा बिचौलियों की कमीशन समाप्त हो जाती है व उत्पादक को पूरा नकद भी मिलता है।
7. **अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता :** गत्ते के डिब्बे विश्व के सभी राष्ट्रों में माननीय हैं जिससे उत्पादक अपने उत्पाद को किसी भी भाग में भेज सकता है।



8. **आसान डिब्बाबंदी:** इन डिब्बों को बिना किसी ज्ञान के आसानी से किसान प्रयोग में ला सकता है क्योंकि यह आसानी से खुल व बंद हो जाते हैं।

आलू तथा प्याज की डिब्बाबंदी के लिए किसान बोरी प्रयोग में लाता है जो विश्व में कहीं भी माननीय नहीं है। इनकी डिब्बाबंदी के लिए नाइलोन के धागे से बंधे हुए थैले अलग तरह के साईज में उपलब्ध हैं। ये थैले बहुत ही सस्ते एवं दोबारा प्रयोग में लाये जाते हैं। इनमें उत्पादन दिखाई देता रहता है जिससे उपभोक्ता को संतुष्टि होती है। ये थैले आसानी से एक दूसरे के ऊपर रखे जा सकते हैं।



(पृष्ठ 12 का शेष)

एजोटोबैक्टर जीवाणु खाद भूमि में पहले से मौजूद अधुलनशील फास्फोरस आदि पोषक तत्वों को घुलनशील अवस्था में परिवर्तित कर पौधों को आसानी से उपलब्ध कराती है। जैविक खाद के साथ-साथ जीवाणु खाद का प्रयोग करना अति उत्तम रहता है। जैविक खाद जीवाणु खाद की क्षमता को बढ़ाती है।

जैविक विधि से तैयार की गई सब्जियां गुणों से भरपूर होती हैं जैसे पोषक तत्व और इनमें अधिक समय तक ताज़ा रहने की क्षमता भी होती है। जैविक विधि से तैयार की गई सब्जियां खाने में रासायनिक विधि से अधिक स्वादिष्ट होती हैं क्योंकि जैविक खेती में कीटनाशकों का प्रयोग नहीं किया जाता जिससे उत्पादों की गुणवत्ता बनी रहती है।

#### जैविक खेती से होने वाले लाभ

- जैविक खेती करने से यह लाभ है कि इससे ज़मीन की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि होती है।
- जैविक खेती से तैयार सब्जी फसलों की गुणवत्ता अच्छी होने के कारण किसान को बाजार में सब्जी के अच्छे भाव मिलते हैं जिससे किसान की आय में भी वृद्धि होती है।
- जैविक खेती करने से सब्जी फसलों के उत्पादन की लागत में भी कमी आती है।
- ज़मीन की गुणवत्ता में जैविक खेती से सुधार आता है और ज़मीन की जल-धारण क्षमता भी बढ़ जाती है।
- जैविक खेती से उपजी फसलों के उपयोग से हमारे शरीर को पारम्परिक रूप से पौष्टिक तत्व मिलते हैं, जिससे शरीर को कई प्रकार के विषाक्त तत्वों से बचाया जा सकता है।
- पशुओं के गोबर तथा कचरे के प्रयोग से जैविक खाद बनाने से वातावरणीय प्रदूषण में भी कमी आती है।



## हरे चारे के लिए ज्वार फसल - प्रबंधन

सतपाल, पम्मी कुमारी एवं अनिल

चारा अनुभाग, अनुवांशिकी व पौध प्रजनन विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

चारा फसलों में ज्वार गर्मी व खरीफ मौसम की एक महत्वपूर्ण फसल है। हरे चारे के रूप में ज्वार पशुओं की पहली पसन्द है। हरा व मीठा चारा, शीघ्र बढ़ने की क्षमता और अधिक चारा उत्पादन का गुण ज्वार को आदर्श चारा फसल बनाता है। ज्वार का पौधा कठोर होने के कारण प्रतिकूल परिस्थितियां जैसे अधिक तापमान और सूखे को सहन करने की क्षमता रखता है। इसीलिए इसे कम पानी या शुष्क क्षेत्रों में भी हरे चारे के लिए लगाया जाता है। हरे चारे के अलावा इसे सूखा चारा (कड़वी), साइलेज व 'हे' के रूप में भी पशु चारे के लिए उपयोग किया जाता है। ज्वार के हरे चारे में पौष्टिकता की दृष्टि से प्रोटीन (7 से 10 प्रतिशत), फाइबर (30 से 32 प्रतिशत) और लिग्निन (6 से 7 प्रतिशत) पाए जाते हैं जो अन्य चारों की अपेक्षा इसकी पाचन क्रिया, स्वादिष्टता एवं पशु स्वास्थ्य को बनाए रखने में अधिक उपयोगी होते हैं।

#### ज्वार की उन्नत किस्में:

**बहु-कटाई वाली किस्म :** मीठी सुडान घास 59-3 (एस एस जी 59-3): यह हरियाणा के सिंचित व मैदानी क्षेत्रों के लिए सिफारिश की गई है। यह मीठी व अच्छे गुणों वाली किस्म है जिससे लम्बे समय तक हरा चारा मिलता रहता है, विशेषकर जब दूसरे चारों की कमी रहती है। यह किस्म मई से नवम्बर तक 3-5 कटाइयों में 300 किंव./एकड़ हरे चारे की पैदावार देती है।

**एक-कटाई वाली किस्में :** हरियाणा ज्वार 541: यह लम्बी, मीठी व हरे चारे और बीज उत्पादन के लिए उपयुक्त किस्म है। इस किस्म की हाइड्रोसायनाइड विषाक्तता भी कम है। अधिक प्रोटीन व अधिक पाचनशील शुष्क पदार्थ होने के कारण इसकी गुणवत्ता अच्छी है। इसकी रोगों से लड़ने की क्षमता ज्यादा है। इसके हरे चारे की औसतन पैदावार 200-225 किंव./एकड़ है। यह पकने तक हरी रहती है। यह 80 से 90 दिन में (फूल आने पर) हरे चारे के लिए तैयार हो जाती है।

**हरियाणा ज्वार 513:** यह किस्म कड़वी के लिए भी बहुत उपयोगी है। इसके पत्ते चौड़े और लम्बे हैं। यह लम्बी, बिना मिठास वाली किस्म है जिसकी हरे चारे की पैदावार 190-210 किंव./एकड़ है। यह पकने तक हरी रहती है व पत्ते के रोगों व कीड़ों की प्रतिरोधी है। यह 80 से 85 दिन में (फूल आने पर) हरे चारे के लिए तैयार हो जाती है।

**हरियाणा चरी 308 :** यह लम्बी, रसदार एवं पत्तेदार किस्म है। इसके हरे चारे की औसत पैदावार 215 किंव./एकड़ है। यह 85 से 95 दिन में हरे चारे के लिए तैयार हो जाती है।

**हरियाणा चरी 260 :** यह लम्बी, बिना मिठास वाली किस्म है जिसे सूखे चारे के लिए अधिक उपयोग में लाया जाता है। इसके पत्ते लम्बे व चौड़े होते हैं और यह पत्ता रोग रोधी किस्म है। इस किस्म की हरे चारे की औसत पैदावार 180 से 200 किंव./एकड़ है। यह 65 से 70 दिन में हरे चारे के लिए तैयार हो जाती है।



**हरियाणा चरी 171:** यह एक मध्यम ऊंचाई वाली मीठी, रसदार व चौड़े पत्ते वाली किस्म है। यह लाल पत्ती रोग रोधी है। इस किस्म से हरे चारे की औसत पैदावार 180-185 किं.व./एकड़ है।

**हरियाणा चरी 136:** यह किस्म लम्बी, मीठी, रसदार तथा दो कटाइयां देने में सक्षम है और देर से पकती है। इसके पत्ते अधिक लम्बे व चौड़े होते हैं जो पकने तक हरे रहते हैं। हरे चारे की औसत पैदावार 200-220 किं.व./एकड़ है। यह 90 से 95 दिन में हरे चारे के लिए तैयार हो जाती है।

**भूमि व खेत की तैयारी :** ज्वार की खेती वैसे तो सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है परन्तु अच्छे जल निकास वाली दोमट मिट्टी इसकी खेती के लिए बढ़िया है। खरपतवार नष्ट करने तथा फसल की अच्छी पैदावार के लिए खेत को खूब अच्छी तरह तैयार करना चाहिए। सिंचित इलाकों में मिट्टी पलटने वाले हल से एक जुताई और उसके बाद भी देसी हल से 2 जुताइयां (एक दूसरे के आर-पार) बिजाई से पहले अवश्य करनी चाहिए।

**बिजाई का समय :** ज्वार की गर्मी की फसल 20 मार्च से 10 अप्रैल तक बो देनी चाहिए। यदि सिंचाई व खेत उपलब्ध न हो तो बिजाई मई के पहले सप्ताह तक की जा सकती है। बहु-कटाई वाली किस्में जैसे कि एस एस जी 59-3 किस्म इस मौसम में लगाने से ज्यादा गर्मी वाले समय में भी पशुओं को हरा चारा उपलब्ध हो जाता है और यह किस्म अन्य किस्मों की तुलना में हरा चारा लम्बे समय तक उपलब्ध कराती है। खरीफ की फसल की बिजाई का सही समय 25 जून से 10 जुलाई है। जिन क्षेत्रों में सिंचाई उपलब्ध नहीं है वहां खरीफ की फसल मानसून में पहला मौका मिलते ही बो देनी चाहिए।

**बीज की मात्रा और बिजाई का तरीका :** ज्वार के लिए 20-24 किग्रा. व सुडान घास के लिए 12 से 14 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ के हिसाब से 25 सें.मी. के फासले पर कतारों में डिल या पोरे की मदद से करें। बीज को बिखेरकर न बोएं। यदि किसी कारणवश छिड़काव विधि द्वारा बुवाई करनी पड़े तो बीज की मात्रा में 15-20 प्रतिशत की वृद्धि आवश्यक है।

**उर्वरक प्रबन्धन:** कम वर्षा वाले व बारानी इलाकों में बिजाई के समय 20 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति एकड़ दें। सारी खाद बिजाई से पहले कतारों में डिल करें। अधिक वर्षा वाले या सिंचित इलाकों में 20 किलोग्राम नाइट्रोजन बिजाई के समय तथा 10 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति एकड़ बिजाई के एक महीने बाद भी डालें। सुडान घास के लिए हर कटाई के बाद 10 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति एकड़ देनी चाहिए। जिन खेतों में फास्फोरस की कमी हो वहां 6 किलोग्राम शुद्ध फास्फोरस प्रति एकड़ के हिसाब से बिजाई से पहले डालें।

**खरपतवार प्रबन्धन :** ज्वार उगने के 15-20 दिन बाद या पहली सिंचाई के बाद, बत्तर आने पर एक बार निराई-गुड़ाई करें, दूसरी गुड़ाई बरसात में जब खरपतवारों का प्रकोप बढ़ जाए तब करें। इससे खरपतवार नियन्त्रण में रहते हैं तथा ज़मीन में नमी भी बनी रहती है। ज्वार में खरपतवारों की रोकथाम के लिए बिजाई के 7-15 दिन के अन्दर-अन्दर 200 ग्राम एट्राज़ीन (50 प्रतिशत घु.पा.) प्रति एकड़ 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़कें ऐसा करके खरपतवारों को काफी हद तक रोका जा सकता है।

**सिंचाई प्रबन्धन:** मार्च-अप्रैल में बीजी गई फसल में पहली सिंचाई बिजाई के 15-20 दिन बाद तथा आगे की सिंचाइयां 20-25 दिन के अन्तर

पर करें। इस प्रकार लगभग 4-5 सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है। वर्षा ऋतु में बोई गई फसल में आमतौर पर सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। यदि बरसात का अन्तराल बढ़ जाए तो आवश्यकता अनुसार सिंचाई करें। अधिक कटाई वाली फसल में हर कटाई के बाद सिंचाई अवश्य करें इससे फुटाव जल्दी व अधिक होता है।

#### हानिकारक कीट प्रबन्धन :

- ❖ चारा ज्वार की फसल में मुख्यतः गोभछेदक मक्खी, तना छेदक एवं टिड्डे का प्रकोप अधिक होता है। गोभ छेदक मक्खी फसल को मार्च से मध्य मई और मध्य जुलाई से सितम्बर तक हानि पहुंचाती है। इसलिए फसल को मध्य मई से लेकर जून तक बो दें। बीज की 10 प्रतिशत मात्रा अधिक प्रयोग में लाएं।
- ❖ तनाछेदक का आक्रमण फसल उगने के 15 दिन बाद शुरू हो जाता है। छोटी फसल में पौधों की गोभ सूख जाती है। बड़े पौधों में इसकी सूंडियां तने में सुराख बनाकर फसल की पैदावार व गुणवत्ता को काफी कम कर देती हैं। इन कीड़ों की रोकथाम के लिए 400 ग्राम कार्बेरिल 50 प्रतिशत घु.पा. को 200 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ फसल पर बिजाई के 20 दिन के बाद 10-12 दिन के अन्तर पर दो छिड़काव करें। इसका चारा पशुओं को छिड़काव के 21 दिन तक न खिलाएं।
- ❖ टिड्डे, ज्वार की फसल को छोटी अवस्था से लेकर पूरे वृद्धिकाल तक हानि पहुंचाते हैं। शिशु और प्रौढ़ पत्तों को किनारों से खाते हैं जिससे भारी प्रकोप की अवस्था में केवल पत्तों की मध्य शिराएं और कभी-कभी तो केवल पतला तना ही रह जाता है। फसल छोटी रह जाती है। फसल पर इन कीड़ों की संख्या बहुत होती है जिससे इनके मलमूत्र की बहुतायत के कारण फफूंद आ जाती है और प्रकोपित फसल चारे के योग्य नहीं रहती। इस कीड़े की रोकथाम के लिए 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. का छिड़काव 250 लीटर पानी में प्रति एकड़ करें। इसका चारा पशुओं को छिड़काव के 21 दिन तक न खिलाएं।

**कटाई प्रबन्धन :** एक-कटाई वाली किस्मों की कटाई फूल आने पर करें। बहु-कटाई वाली चारा फसल में पहली कटाई बुवाई के 60 दिन बाद करें और तत्पश्चात् प्रत्येक कटाई 40-45 दिन के अन्तराल पर करें। बहु कटाई वाली किस्मों की कटाई ज़मीन से 10-12 सें.मी. ऊपर से करें ताकि फुटाव जल्दी हो।

**विषैले तत्वों का प्रबन्धन :** ज्वार में हाइड्रोसाइनिक अम्ल की अधिक सांद्रता पशुओं के लिए हानिकारक होती है। हाइड्रोसाइनिक अम्ल अगर 200 माइक्रोग्राम/ग्राम से ज्यादा हो तो यह पशुओं के लिए घातक होता है। 30 दिन की फसल में इसकी सांद्रता ज्यादा होती है। इसलिए फसल को बिजाई के 40 से 45 दिन बाद ही काटना चाहिए, अगर बहुत ज़रूरी हो तो एक सिंचाई करने के बाद ही कटाई करें और अन्य चारे के साथ उचित अनुपात में मिलाकर पशुओं को खिलाएं। अधिक नत्रजन उर्वकों का प्रयोग एवं अधिक सूखा भी हाइड्रोसाइनिक अम्ल की सांद्रता को बढ़ाता है। इसलिए इसकी विषाक्तता को कम करने और पशुओं को इसके दुष्प्रभाव से बचाने के लिए ज्वार के हरे चारे को सूखे चारे के साथ मिलाकर पशुओं को खिलाएं।



# हरियाणा-ग्रामीण पुरातन संग्रहालय : प्राचीन हरियाणा कृषि एवं लोक संस्कृति का आईना

✍ अशोक कुमार, प्रदीप कुमार चहल एवं राजेश कुमार

विस्तार शिक्षा निदेशालय

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत गणतंत्र में, हरियाणा की स्थापना एक अलग राज्य के रूप में, यद्यपि 1 नवम्बर, 1966 को हुई किन्तु एक विशिष्ट ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक इकाई के रूप में हरियाणा का अस्तित्व प्राचीन काल से मान्य रहा है। यह राज्य आदिकाल से ही भारतीय संस्कृति और सभ्यता की धुरी रहा है। शब्द 'हरियाणा' का अर्थ 'भगवान का निवास' होता है जो संस्कृत शब्द 'हरि' (हिन्दु देवता विष्णु) और 'अयण' (निवास) से मिलकर बना है। हरियाणा कृषि प्रधान देश है और इसे कृषि उत्पादन में अग्रणी स्थान प्राप्त है। कृषि के साथ-साथ यहां की संस्कृति रीति-रिवाज पूरे भारत में जाने जाते हैं। हमारे पूर्वजों के अटूट संघर्ष, अथक परिश्रम तथा निरंतर प्रयासों से ही आज हरियाणा सामाजिक व आर्थिक क्षेत्रों में अग्रणी भूमिका अदा कर रहा है और राष्ट्र को अनूठा उदाहरण पेश कर रहा है।

हरियाणा ने देश के कृषि उत्पादन में अग्रणी स्थान प्राप्त किया है। आधुनिक युग की भाग-दौड़ भरी जिन्दगी में हरियाणा की संस्कृति, रीति-रिवाज व प्राचीन कृषि सामग्री लुप्त हो रही है। इस आधुनिक युग में हरियाणा की लुप्त होती जा रही संस्कृति व प्राचीन कृषि सामग्री को बचाने के लिए चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार ने अपने परिसर में हरियाणा-ग्रामीण-पुरातन संग्रहालय स्थापित किया है जो देश में अपनी ही प्रकार का एक मात्र ऐसा संग्रहालय है जो पूर्ण रूप से कृषि-संपदा सामग्री तथा ग्रामीण सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण को समर्पित है। यह संग्रहालय प्राचीन हरियाणा की ग्रामीण संस्कृति को मुख्य छत के नीचे प्रदर्शित करने वाला उचित एवं सुन्दर और उपयुक्त ज्ञान स्थल है।

यह संग्रहालय चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के विस्तार शिक्षा निदेशालय में स्थित है। इस बहुरूपी व बहुपयोगी संग्रहालय में हरियाणा की प्राचीन जीवन शैली, कृषि तकनीकों का ज्ञान, यातायात के साधन, हस्तशिल्प कला, लोक परिधान, लोक साहित्य, प्राचीन परंपराओं तथा रीति-रिवाजों का समावेश है। दर्शकों की सुविधा तथा सहज समझ के लिए इसकी संग्रहीत सामग्री को बड़े यत्न से सुंदर कलात्मक तथा सुरुचिपूर्ण ढंग से इस तरह प्रदर्शित किया गया है जिससे कि दर्शकों को कृषि विकास तथा कृषि धरोहर-सामग्री के साथ ही हरियाणा के ग्रामीण जीवन की जानकारी मिल सके। इसके साथ-साथ कृषि क्षेत्र में समय के साथ आए बदलावों, नवीनतम कृषि यन्त्र तथा कृषि विश्वविद्यालय की भूमिका को बड़े सुरुचिपूर्ण ढंग से प्रदर्शित किया गया है।

संग्रहालय के प्रवेशद्वार के सामने हरियाणा के ग्रामीण भाईचारे को दर्शाते हुए लोहे का बहुत बड़ा प्राचीन कढ़ाहा रखा गया है। यह कढ़ाहा पुराने समय में बनाए जा रहे पंचायती भोज की महत्ता को दर्शाता है।

संग्रहालय के प्रवेश द्वार के मॉडल देखकर ऐसा लगता है जैसे कि हम किसी पुरातन ग्रामीण हवेली में प्रवेश कर रहे हैं। यानि हम पूरी तरह ग्रामीण वातावरण में रंगे जाते हैं। संग्रहालय में प्रदर्शित की गई ग्राम चौपाल जिसमें चारपाई, मुड्डे, हुक्का, चौपट-स्यार देखकर ग्राम के भाई-चारे का प्रतीक ग्राम-पंचायत की याद दिलाता है। हरियाणा के ग्रामीण लोक संस्कृति नगाड़े, ढोल, हवनकुण्ड, माला, कमण्डल, खड़ाऊं, कुएं से पानी खींचता हुआ ढोल व हरियाणवी परिधान में पनिहारी प्राचीन हरियाणा के पनघट का दृश्य नजरो के सामने जीवित कर देती हैं।

हरियाणा के प्राचीन ग्राम में शादी में प्रयोग होने वाले रथ व यातायात के साधन, घरेलू उपयोग में इस्तेमाल होने वाली वस्तुएं जैसे ऊँट की खाल से बनी कुपिया, भिन्न-भिन्न प्रकार की मिट्टी से बनी सुराहियां, मटके, थाली, बैला, हाथ से आटा पीसने की चक्की, चिमटा, पल्टा, चिलम, कच्ची मिट्टी के चूल्हे, छत से लटकता छीका, हाथ से बनी सुन्दर-सुन्दर इठिया, बिजनै मनमोहक कपड़े से बने गुड्डा-गुडियां संग्रहालय में आकर्षित ढंग से रखे गए हैं। हरियाणवी वेशभूषा में एक महिला दूध बिलौती व दूसरी महिला चरखा कातती प्राचीन हरियाणवी संस्कृति का अनुभव कराती है। हरियाणा के त्योहार तीज का प्रतीक झूला भी संग्रहालय में छत से लटकाया गया है।

संग्रहालय में ग्रामीण महिलाओं के रंग-बिरंगे घाघरे, लहंगे, ओढ़ने, लहंगा-चुन्दड़ी व पुरुषों तथा बच्चों की पारम्परिक वेशभूषा प्रदर्शित किए गए हैं। इस संग्रहालय में गाँव की भूमि का रिकार्ड दर्शाता सिजरा, प्राचीन मुद्राएं, सिक्के भी रखे गए हैं।

हरियाणा ग्रामीण पुरातन संग्रहालय में हरियाणवी संस्कृति ही नहीं बल्कि हमारे पूर्वजों के कृषि क्षेत्रों में अथक मेहनत, संघर्ष व प्रयासों को भी बहुत सुन्दर ढंग से दिखाया गया है। किस तरह से उन्होंने साधारण कृषि यंत्रों से आज कृषि में क्रांति लाई है व हरियाणा को उत्पादन में प्रथम स्थान दिलाया है। संग्रहालय में कृषि संबंधित अनेक प्रकार की जेलियां, दरातियां, गंडासे, खुरपा, टोकरी, झकना, छाज, उखल-मूसल, पल्टू हल, खराशा का पहिया, बैलों का जुआ इत्यादि दर्शकों को प्राचीन कृषि पद्धति में प्रयोग होने वाले औजारों तथा तकनीकी के विषय में जानकारी देते हैं।

यह संग्रहालय आधुनिक युग में संपूर्ण हरियाणवी ग्रामीण संस्कृति को एक छत के नीचे लाने का विश्वविद्यालय द्वारा किया गया एक अनूठा तथा प्रशंसनीय प्रयास है। इसकी महत्ता आधुनिक युग में भी विश्वविद्यालय पहुंचने पर सभी आगंतुकों द्वारा इस संग्रहालय के प्रति दर्शाई जाने वाली रुचि से पता चलता है। देशी हो या विदेशी कृषि वैज्ञानिक हो या किसान, सामान्य नागरिक हो या छात्र यह संग्रहालय सभी विश्वविद्यालय पहुंचने वालों के आकर्षण का केन्द्र आज भी बना हुआ है। इसी को ध्यान में रखकर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के सहयोग से विश्वविद्यालय इसका नवीनीकरण व आधुनिकीकरण करवाने जा रहा है ताकि आने वाली पीढ़ियों को भी इसमें जुटाई गई कृषि संबंधी व सांस्कृतिक धरोहर से रूबरू करवाया जा सके।



## किण्वित उत्पादों के स्वास्थ्य लाभ

कृतिका रावत, अंजू कुमारी एवं राकेश गहलोत  
खाद्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी केन्द्र  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

किण्वन विश्व में भोजन तैयार करने के सबसे प्राचीन और व्यावसायिक तरीकों में से एक है। किण्वन आमतौर पर फायदेमंद सूक्ष्मजीव के कारण होता है। किण्वित खाद्य पदार्थ को आम तौर पर उन खाद्य पदार्थों या पेय पदार्थों के रूप में परिभाषित किया जाता है जिन्हें नियंत्रित सूक्ष्मजीव विकास और बड़े और छोटे खाद्य घटकों के किण्वित रूपांतरण के माध्यम से बनाया जाता है। किण्वन के दौरान सूक्ष्मजीव कार्बन-डाइ-ऑक्साइड और अल्कोहल जैसे अंतिम उत्पाद बनाते हैं। आंत में पाए जाने वाले इन फायदेमंद माइक्रोफ्लोरा को प्रोबायोटिक्स कहा जाता है। प्रोबायोटिक्स, जिसका शाब्दिक अर्थ है 'जीवन के लिए सूक्ष्म जीव मानव और जानवरों में स्वास्थ्य को बढ़ावा देने के प्रभावों को लागू करने के लिए प्रमाणित हैं'। मुख्यतः किण्वन लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया के द्वारा होता है। किण्वन खाद्य उत्पाद एंटीमाइक्रोबियल समृद्ध होते हैं उद्धरण स्वरूप ऑर्गेनिक एसिड, इथनॉल और बैक्टीरियोसाइन। किण्वन के साथ, खाद्य पदार्थों में कई विटामिन जैसे कि विटामिन बी 2 (राइबोफ्लेविन), विटामिन बी 9 (फोलेट), विटामिन बी 12 और अन्य पोषक तत्वों का स्तर बढ़ जाता है। ये प्रोबायोटिक माइक्रोफ्लोरा वांछित खाद्य उत्पाद में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जैसे कि (क) लैक्टिक एसिड और अन्य रोगाणुरोधक यौगिक भोजन के संरक्षण में शामिल हैं। (ख) स्वाद के यौगिकों का उत्पादन (जैसे कि योगहर्ट में एसिटिलीन और दही में डाइएक्टाइल) और अन्य चयापचय जो कि उत्पाद में स्वाद को बढ़ाता है (ग) भोजन के पोषण मूल्य में सुधार, और (घ) उत्पाद में चिकित्सीय गुण विकसित करता है।

किण्वन खाद्य उत्पाद के आधार पर भी वर्णित किया जा सकता है जिसमें मांस, मछली, दूध, सब्जियां, सोया सेम और फलियां, अनाज, स्टार्च की जड़ें, अंगूर और अन्य फल शामिल हैं। बाज़ार में उपलब्ध कुछ सामान्य किण्वित भोजन में दही, याक़ुल्ट, पनीर, साउरकराट, अचार, राबड़ी, छाछ, लस्सी, सिरका, वाइन, सोया सॉस आदि प्रमुख हैं। किण्वन मूल पोषण के साथ अतिरिक्त गुण प्रदान करता है। किण्वित खाद्य पदार्थों पर हाल ही में मानव नैदानिक अध्ययन अनुसार दिल से सम्बंधित बीमारी, मधुमेह, मोटापे, आंत्र रोग, गठिया और स्केलेरोसिस जैसे प्रतिरक्षा से संबंधित रोगों में किण्वित खाद्य पदार्थों के स्वास्थ्य लाभों का भी अनुमान लगाया गया है। अपने आहार में अधिक प्रोबायोटिक खाद्य पदार्थ जोड़कर आप निम्न सम्बंधित स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर सकते हैं: मज़बूत प्रतिरक्षा प्रणाली, पाचन सुधार, विटामिन बी 12 के उत्पादन से ऊर्जा में वृद्धि, स्वस्थ त्वचा, एक्जिमा और छालरोग में आराम, स्वस्थ पाचन तंत्र, और आंत्र रोग से उपचार, वज़न घटना, इत्यादि। अंत में, खाद्य उत्पादों के सेवन से हमारे तन-मन पर सकारात्मक प्रभावों का उल्लेख मिलता है। किण्वित खाद्य उत्पादों का लाभ कभी समाप्त नहीं होता है, इसलिए हमें इन उत्पादों को अपने आहार में नियमित रूप से शामिल करना चाहिए।



## समन्वित कृषि प्रणाली : किसान की आय का श्रेष्ठ साधन

सूबे सिंह एवं एम.एस. ग्रेवाल  
विस्तार शिक्षा निदेशालय

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा प्रान्त में चावल-गेहूँ, कपास-गेहूँ, कपास- बाजरा आदि फसल प्रणाली को मुख्यतः अपनाया जा रहा है। भरपूर उत्पादकता के लिए उन्नतशील अधिक उपज देने वाली विभिन्न प्रजातियों के चयन एवं सघन कृषि पद्धतियों के उपयोग के फलस्वरूप भूमिगत जल-स्तर में लगातार गिरावट हुई है। भूमिगत जल-स्तर में उतार-चढ़ाव, पोषक तत्वों की कमी, खरपतवारों, रोग एवं अन्य तरह के बुरे प्रभाव के कारण आशानुरूप उपज प्राप्त करने के लिए सम्पूर्ण खर्च में वृद्धि करना पड़ रहा है। ऐसी दशा में निरंतर उत्पादकता में वृद्धि बनाए रखना एक कठिन चुनौती है। समन्वित कृषि प्रणाली में मुख्य फसल के साथ अन्य कृषि आधारित उधोग धंधे अपनाने से अधिक उपज के साथ- साथ अधिक लाभ मिलता है।

समय की मांग को देखते हुए किसानों को समन्वित कृषि प्रणाली पर ध्यान देने की आवश्यकता है। भारत सरकार द्वारा निर्धारित वर्ष 2022 तक किसानों की आय को दुगना करने का लक्ष्य समन्वित कृषि प्रणाली के बिना पूरा करना बहुत कठिन है। कृषि को अधिक लाभकारी बनाने के लिए कृषि फसल के साथ-साथ अन्य व्यवसाय जैसे सब्जी, फल, फूल, डेयरी, मछली, मुर्गी, खुम्ब उत्पादन, वर्मी कम्पोस्ट/कंचुआ खाद एवं कृषि वानिकी आदि को एक साथ समायोजन किया जाए, जो एक दूसरे पर निर्भर हो, जिससे प्रति इकाई उत्पादन क्षमता एवं भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाये रखा जा सके।

इस प्रकार की कृषि प्रणाली को आपस में सम्मिलित करने से उत्पादन लागत में कमी आएगी तथा प्राकृतिक एवं समस्त पर्यावरण को संरक्षित रखने में मदद मिलेगी। इस प्रकार की कृषि प्रणाली से किसान परिवार को सारा साल लगातार रोज़गार भी प्राप्त होता रहेगा जिससे परिवार की आय, सामाजिक एवं आर्थिक विकास तथा जीवन स्तर में भी सुधार होगा। फसल उत्पादन व पशु-पालन एक दूसरे पर निर्भर हैं तथा पशुपालन के बिना टिकाऊ खेती संभव नहीं हो सकती। अतः किसान कृषि के साथ-साथ पशुपालन को भी समन्वित कृषि प्रणाली में अपनाएं जिससे महिलाओं के रोज़गार की उपलब्धता बढ़ेगी एवं साथ में भूमि की उत्पादन क्षमता को निरंतर बनाए रखने में सहायता मिलेगी। पशुओं द्वारा विसर्जित पदार्थ गोबर व मल-मूत्र-ईंधन तथा कम्पोस्ट खाद के रूप में प्रयोग किया जा रहा है, जिससे मिट्टी की उर्वरकता को सुधारने में मदद मिलती है और भूमि की संरचना में सुधार के साथ-साथ फसलोत्पादन में वृद्धि में सहायक सिद्ध होता है। पशुओं के गोबर से निर्मित बायोगैस-खाद के प्रयोग करने से रासायनिक उर्वरकों की निर्भरता में कमी लाकर कृषि लागत में कमी के साथ-साथ वातावरण, प्रदूषण, कीट व बीमारियों के प्रकोप को भी कम किया जा सकता है। वर्मी कम्पोस्ट के उपयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति, जल-धारण क्षमता एवं भूमि की संरचना में सुधार व पौधों में प्रति-रोधक



क्षमता बढ़ती है। समन्वित कृषि प्रणाली सीमांत व लघु किसानों के लिए बहुत लाभप्रद है, इससे फसलोत्पादन के साथ-साथ अन्य व्यवसाय अपनाकर किसान अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं तथा कम क्षेत्र में भी अधिक लाभ अर्जित कर अपनी आर्थिक व सामाजिक स्थिति में सुधार कर सकते हैं। इस प्रकार समन्वित कृषि प्रणाली अपनाकर किसान अपने प्राकृतिक संसाधन का उचित प्रयोग कर सकते हैं।

किसान भाई अपनी स्थिति व सुविधा के अनुसार निम्नलिखित कृषि प्रणाली को अपनाकर अपनी आय में बढोत्तरी के साथ-साथ पर्यावरण संतुलन में अपनी भूमिका अदा कर सकते हैं।

1. फसल, डेयरी, बागवानी, मधुमक्खी पालन, मछली पालन, खुम्ब उत्पादन।
2. फसल, डेयरी, बागवानी, मछली पालन, मुर्गी पालन।
3. फसल, पशुपालन/डेयरी, मुर्गी पालन, मछली पालन, वर्मी-कम्पोस्ट।
4. फसल, डेयरी, बकरी पालन।
5. फसल, डेयरी, बागवानी।
6. फसल, डेयरी, मुर्गी पालन।
7. फसल, पशुपालन/डेयरी।

इसके इलावा किसान किसी भी समीकरण को अपने खेत में अपनाकर समन्वित कृषि प्रणाली को अपना सकते हैं जिससे अपनी आय बढ़ा कर भारत सरकार का वर्ष 2022 तक किसान की आय दुगुनी करने का लक्ष्य प्राप्त किया जा सके।



#### (पृष्ठ 20 का शेष)

फसल का निरीक्षण निम्नलिखित तीन अवस्थाओं में करके अवांछनीय पौधों को निकाल देना चाहिए:

- फूल आने से पूर्व पौधों के बाह्य गुणों के आधार पर, पत्तों का रंग, आकार, बेल की वृद्धि, इत्यादि।
- फूल आने के समय, फूलों के गुणों के आधार पर जैसे फूलों का रंग, आकार एवं प्रकार आदि।
- फूलों की तुड़ाई से पूर्व, फल वृद्धि तथा तुड़ाई के समय फलों की गुणवत्ता के आधार पर।

**तुड़ाई एवं बीज निष्कासन :** मादा प्रजनक के फलों का रंग सूखने के पश्चात भूरा होने लगता है। जब परिपक्व फलों को हिलाने पर फल में उपस्थित बीजों की आवाज़ आने लगे, इनको बेलों से तोड़ लिया जाता है। परिपक्व फलों को 5 से 10 दिनों तक छायादार स्थान पर रखकर सुखाया जाता है, ताकि फलों एवं बीजों में उपस्थित अतिरिक्त नमी निकल जाए। सूखे हुए फलों से बीज निकाल दो। परिपक्व बीज काले व चमकीले रंग के दिखाई देते हैं। तोरी के सूखे शुद्ध बीज की औसत पैदावार 80-100 किलोग्राम प्रति एकड़ मिल जाती है।



## पोपलर : संबंधित कीट व प्रबंधन

✍ विरेन्द्र दलाल, सुनील कुमार ढांडा एवं एस.एस. कुण्डू

कृषि विज्ञान केन्द्र, सदुलपुर

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

पोपलर का पौधा अपनी तेज़ बढ़वार व इसकी लकड़ी का औद्योगिक प्रयोग जैसे माचिस की तीलियां, प्लाईवुड, पार्टिकलबोर्ड, गत्ता, कैरेट, गुद्दा, पैकिंग सामग्री, फूस, फर्नीचर, तख्त व ईंधन लकड़ी आदि के प्रयोग में आने की वजह से यह हरियाणा, पंजाब, उत्तरप्रदेश, उत्तराखण्ड, जम्मू-कश्मीर व हिमाचल प्रदेश के किसानों द्वारा बहुतायत में लगाया जाता है। डा. ढिल्लों के अनुसार इसमें औसत वार्षिक शुद्ध लाभ 54,753/- रुपये प्रति हैक्टेयर प्रतिवर्ष (शुद्ध खेती के रूप में) व 72,480/- रुपये प्रति हैक्टेयर प्रतिवर्ष (अन्तर फसल के रूप में), जिसका लाभ : लागत अनुपात 1.9 : 1 व 2.13 : 1 है। अतः इसकी महत्ता को देखते हुए इसके कीट प्रबंधन पर भी ध्यान देना ज़रूरी है ताकि किसानों को इसका उचित लाभ मिल सके।

**1. पत्ता खाने वाले कीट (लीफ डीफोलियेटर) :** ये कीट मुख्य रूप से दो तरह के होते हैं—क्लोस्टिरा फुलग्रीटा व क्लोस्टिरा कपरियाटा। ये कीट पूरे भारत में पाए जाते हैं। मादा कीट अपने अण्डे पत्ते के नीचे के भाग पर देती है, जिनकी संख्या लगभग 200 से 300 तक हो सकती है। इस कीट का जीवन-चक्र 19 से 20 दिनों का होता है। इसकी सालभर में 8 से 9 पीढ़ी पैदा होती हैं। यह कीट लारवल स्टेज पर ही पौधे के लिए हानिकारक होता है। इस कीट का प्रभाव मार्च-अप्रैल से प्रारंभ होता है और अक्टूबर के पहले पखवाड़े तक रहता है। यह कीट अपनी अनुकूल परिस्थितियों में पोपलर के पत्तों को 60 से 100 प्रतिशत तक प्रभावित कर सकता है।



क्लोस्टिरा कपरियाटा



क्लोस्टिरा फुलग्रीटा

#### प्रबंधन

1. पोपलर के प्रतिरोधी क्लोन का प्रयोग करें।
2. कीटों के अण्डों को इकट्ठा करें व उन्हें नष्ट कर दें।
3. दिसम्बर माह में खेत को 2 से 3 बार जोतें, क्योंकि इस कीट का प्यूपा बाहरी वातावरण के सम्पर्क में आने से नष्ट हो जाता है।
4. नीम सीड रस का 0.1 प्रतिशत की दर से प्रयोग करें।
5. परभक्षी कीट को बढ़ावा दें।

**2. छाल खाने वाली सूण्डी (बार्क ईटिंग कैटरपिल्लर) :** बार्क ईटिंग कैटरपिल्लर इस समूह की मादा कीट अण्डे गुच्छों में व पेड़ की छाल के अन्दर की तरफ देती है और तीन-से-चार दिन के अन्दर इन अण्डों से लारवा निकल आते हैं और जून-जुलाई तक ये लारवा परिपक्व हो जाते हैं। इस कीट से ग्रसित पेड़ की पहचान आसानी से की जा सकती है। इसमें तने

की छाल के चारों ओर रेशमी जाल बन जाता है। इस कीट के लारवा व प्रौढ़ दोनों ही स्टेज पौधों के लिए हानिकारक हैं, क्योंकि ये छाल को खाने के साथ-साथ तनों में अन्दर की तरफ छेद कर देते हैं। यह छेद 'L' आकार की सुरंग के रूप में होता है। इस कीट का लारवा 9 से 11 महीनों तक छाल को रात के समय में खाता है।

#### प्रबंधन

1. प्रभावी छाल व टहनी को जला दें।
2. सघन पौधा-रोपण से बचें अर्थात् पौधे-से-पौधे की दूरी कम-से-कम 8 से 10 फुट होनी चाहिए।
3. निरन्तर खेत की सफाई व जुताई करें।
4. गर्मी के महीनों में निरन्तर सिंचाई होनी चाहिए।
5. लाईट-ट्रैप का प्रयोग करके इस कीट से छुटकारा पाया जा सकता है।
6. पोपलर का पौधा-रोपण किसी बाग के नजदीक व बाग के साथ नहीं होना चाहिए।
7. कैरोसीन या पेट्रोल से रूई के टुकड़े को भिगोकर छेद में डाल दें और छेद को चिकनी मिट्टी से बंद कर दें ताकि कीड़ा अन्दर ही नष्ट हो जाए।



बार्क ईटिंग कैंटरपिल्लर



स्टैम बोरर

**3. तना छेदक (स्टैम बोरर) :** पोपलर में तना छेदक कीट का प्रकोप 3 साल तक के पौधों में बहुत अधिक होता है। यह कीट पोपलर के मुलायम तने को बेधकर इसकी पith में गैलरी बना लेता है और कई बार तो यह पौधों की जड़ों तक प्रभाव डाल देता है। इस कीट का लारवा एक पौधे में दो-से-तीन समानान्तर गलियारे बना डालता है। यह कीट मार्च-से-अक्टूबर महीने तक सक्रिय रहता है और नवम्बर-से-फरवरी माह में यह सुप्त अवस्था में चला जाता है। यह 2 साल में अपना जीवन-चक्र पूरा करता है। अतः ज्योंही आपको पोपलर के तने के छेद में बारीक बुरादा नज़र आए तो समझ जाएं कि उस पेड़ पर तना-छेदक कीट का प्रकोप हुआ है।

#### प्रबंधन

1. हमें निरन्तर खेत की जांच करते रहना चाहिए।
2. हमें विकल्प पोषक पौधा-रोपण प्रणाली (ऑल्टरनेट होस्ट प्लांट) से बचना चाहिए।
3. इस कीट से ग्रसित शाखाओं को काट दें, ताकि कीट मुख्य तने तक ना पहुंच पाए।
4. कैरोसीन या पेट्रोल से रूई के टुकड़े को भिगोकर उस छेद में डाल दें और छेद को चिकनी मिट्टी से बंद कर दें ताकि कीड़ा अन्दर ही नष्ट हो जाए।
5. लोहे की तार को छेद में डालकर कीट को मारा जा सकता है।
6. पोपलर के प्रतिरोधी क्लोन 'जी-48' का प्रयोग करें।



## अनार खाने के लाभ

हेमन्त सैनी, विजय एवं आर.के. गोदारा

बागवानी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

अनार शब्द सुनते ही एक कहावत स्मरण हो आता है- एक अनार, सौ बीमार। चोंकिए मत, अनार बीमारियों का घर नहीं है, बल्कि यह तो हमारे शरीर के लिए काफी फायदेमंद होता है। इसके साथ सबसे अच्छी बात यह है कि यह पूरे साल उपलब्ध रहता है। हालांकि कई लोग पौष्टिक फल की श्रेणी में इस शानदार फल को कम आंकते हैं। लेकिन आज हम आपको बताते हैं कि अनार किस तरह हमारे शरीर के लिए फायदेमंद है। अनार के कई बड़े फायदे हैं, जैसे अगर आपके घर में कोई गर्भवती महिला है तो आप उसे रोज़ अनार का जूस पिलाएं। इससे उसका बच्चा स्वस्थ पैदा होगा और उसके बच्चे को कम वज़न जैसी बीमारी का सामना नहीं करना पड़ेगा।

पदार्थ	पौष्टिक तत्त्व	आर.डी.ए. (प्रतिशत)
ऊर्जा	83 के कैलोरी	4 प्रतिशत
कार्बोहाइड्रेट	18.70 ग्राम	14 प्रतिशत
प्रोटीन	1.67 ग्राम	3 प्रतिशत
कुल वसा	1.17 ग्राम	6 प्रतिशत
कोलेस्ट्रॉल	0 मि.ग्रा.	0 प्रतिशत
रेशा	4 ग्राम	11 प्रतिशत

#### विटामिन

फोलेट्स	38 माइक्रोग्राम	9.5 प्रतिशत
नियासिन	0.293 मि.ग्रा.	2 प्रतिशत
पैंटोथेनिक एसिड	0.135 मि.ग्रा.	3 प्रतिशत
पायरीडोक्साइन	0.075 मि.ग्रा.	6 प्रतिशत
राइबोफ्लेविन	0.053 मि.ग्रा.	4 प्रतिशत
थाईमिन	0.067 मि.ग्रा.	5.5 प्रतिशत
विटामिन सी	10.2 मि.ग्रा.	17 प्रतिशत
विटामिन ई	0.60 मि.ग्रा.	4 प्रतिशत
विटामिन के	16.4 माइक्रोग्राम	14 प्रतिशत

#### इलेक्ट्रोलाइट

सोडियम	3 मि.ग्रा.	0 प्रतिशत
पोटाशियम	236 मि.ग्रा.	5 प्रतिशत

#### मिनरल

कैल्शियम	10 मि.ग्रा.	1 प्रतिशत
कॉपर	0.158 मि.ग्रा.	18 प्रतिशत
लोहा	0.30 मि.ग्रा.	4 प्रतिशत
मैगनीशियम	12 मि.ग्रा.	3 प्रतिशत
मैंगनीज	0.119 मि.ग्रा.	5 प्रतिशत
फास्फोरस	36 मि.ग्रा.	5 प्रतिशत
सेलेनियम	0.5 माइक्रोग्राम	1 प्रतिशत
ज़िंक	0.35 मि.ग्रा.	3 प्रतिशत

स्त्रोत : [Dailyonefruit.com/nutrient-chart](http://Dailyonefruit.com/nutrient-chart)

**बुढ़ापा आने से बचाए :** बहुत कम लोग ही इस तथ्य से परिचित हैं कि अनार एंटीऑक्सीडेंट का बहुत ही अच्छा स्रोत है। इसलिए यह शरीर की कोशिकाओं को फ्री रेडिकल्स से बचाता है जिससे आप वक्त से पहले बूढ़े नहीं दिखते। फ्री रेडिकल्स का निर्माण सूर्य की रोशनी और वातावरण में मौजूद विषैले तत्व से होता है।

**प्राकृतिक ब्लड थिनर :** खून दो तरह से जमते हैं। पहला तो कटने या जलने की स्थिति में खून जमता है जिससे खून का बहाव रुक जाता है। वहीं दूसरे तरह का खून आंतरिक रूप से जमता है जो बहुत ही खतरनाक होता है। मसलन हृदय या धमनी में खून जम जाने से इसका परिणाम प्राणघातक भी हो सकता है। अनार में मौजूद एंटीऑक्सीडेंट गुण खून के लिए वही काम करता है जो पेट के लिए थिनर करता है। यह शरीर में खून को जमने या थक्का बनने से रोकता है।

**एथेरोस्क्लेरोसिस से रोकता है :** बढ़ती उम्र और गलत खानपान से रक्तवाहिनी की दीवार कोलेस्ट्रॉल व अन्य चीजों से कठोर हो जाती है जिससे रक्त के बहाव में अवरोध पैदा होता है। अनार का एंटीऑक्सीडेंट गुण कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन और कोलेस्ट्रॉल को ऑक्सीडाइजिंग से रोकता है। यानी अनार रक्तवाहिनी की दीवार को अतिरिक्त वसा से कठोर होने से बचाता है।

**अनार करता है ऑक्सीजन मास्क की तरह काम :** साधारण शब्दों में कहें तो अनार का जूस खून में ऑक्सीजन के स्तर को बढ़ाता है। इसका एंटीऑक्सीडेंट कोलेस्ट्रॉल को कम करता है, फ्री रेडिकल्स से बचाता है और खून का थक्का बनने से रोकता है। यानी अनार शरीर में खून के प्रवाह को बेहतर बनाता है जिससे खून में ऑक्सीजन का स्तर भी सुधरता है।

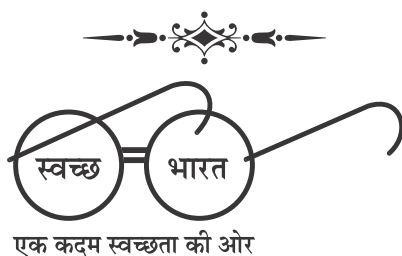
**अल्जाइमर रोग को घटाता है :** अल्जाइमर रोग जैसी याददाश्त से संबंधित बीमारी से निजात दिलाने में भी अनार काफी उपयोगी होता है।

**ब्लड प्रेशर को कम करता है :** ब्लड प्रेशर कम करने के लिए भी अनार काफी अच्छा माना जाता है।

**हड्डी बने मजबूत :** कार्टिलेज को विकृत होने से बचाता है—इस फल से हड्डी को मजबूती मिलती है और कार्टिलेज को विकृत होने से बचाता है।

**वजन नहीं बढ़ाता :** अनार से वजन नहीं बढ़ता है क्योंकि यह बिना कैलोरी वाला फल है।

**दस्त में राहत :** अगर आप दस्त से जूझ रहे हैं तो अनार खाना अच्छा रहता है। इसका जूस मिचली पैदा होने से भी बचाता है।



## Role of Fruits and Vegetables in Human Nutrition

 **Meenu Sirohi and Veenu Sangwan**

Deptt. of Food & Nutrition

CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Nature has provided us various sources of food and nutrients. Fruits and vegetables are one of them which not only fulfill the nutritional requirement of our body but also act as natural remedy by providing protective agents in the form of antioxidants, vitamins and minerals to our body. They play a very crucial role in health and nutrition of people of various age groups of developed and developing countries. They are good source of various nutritional and non-nutritional factors especially, photochemicals. The nutrients present in them are minerals like calcium, potassium, magnesium, zinc, manganese, copper, phosphorus, etc., fat and water soluble vitamins like beta carotene, vitamin K, ascorbic acid, thiamine, riboflavin, niacin, pyridoxine and folic acid, etc. They are also rich source of complex carbohydrate, dietary fibre and vegetable protein. The non-nutritional factors present in them are phytochemicals like polyphenols, flavonoids, allicin, etc., and pigments like chlorophyll, anthocyanin, carotenoids, lycopene, etc. Anthocyanins are present in fruits and vegetables in different ratios and these pigments give red, blue and purple color to them. Chlorophyll gives green colour, while carotenoids like  $\alpha$ ,  $\beta$  and  $\gamma$ -carotene give orange color. All these non-nutritional factors alongwith some nutritional factors like ascorbic acid and tocopherol act as anti-oxidants in the body. Various international organizations and agencies like FAO and USDA have suggested that at least five servings of fruits (2 servings) and vegetables (3 servings) should be included in the diet daily. All colorful fruits and vegetables, citrus fruits, roots and tubers should be consumed fresh and raw in the form of salad as much as possible. They can also be included in cooked or juice form in the diet of younger children and old age people as they are unable to chew and digest them in raw form. It is reported that higher consumption of simple sugars, saturated fat and high amount of processed foods containing salts and spices can cause the risk of various chronic diseases like diabetes mellitus, cardiovascular diseases, obesity, hypertension, water retention, etc. If the diet is deficient in fresh fruits and vegetables, which are rich sources of antioxidants, it can accelerate the formation of free radicals in the body. The target of these free radicals is damage to DNA, oxidation of polyunsaturated fatty acids, damage to membrane lipids, oxidation of amino acids, oxidatively inactivate specific enzymes by oxidation of co-factors, etc. These free radicals increase the burden of oxidative stress



which affects the activity of vital organs like cell membrane, deoxyribonucleic acid, pancreas, retina of the eye, etc and can even damage them. Free radicals also accelerate the oxidation of low density lipoprotein, increase the formation of tumors and various types of cancers, inflammation, cataract, early ageing, kidney diseases, neurological diseases, like alzheimer's disease, parkinson's disease, multiple sclerosis, memory loss, depression, rheumatoid arthritis, diabetes, pulmonary disease, etc. Fruits and vegetables are the best remedy provided by nature to counteract the formation of free radicals in the body as they are the richest source of various types of antioxidants which act as free radical scavengers and help in cleaning up free radicals before they cause any detrimental health effect. They are also rich source of soluble and insoluble dietary fiber which provide bulk to the diet and thus help in controlling constipation. The soluble fibre helps in reducing the burden of hyperglycemia and hypertriglyceridemia in the body by delaying the absorption of the glucose and fat in the intestine. Thereby, contributing towards reducing the risk of obesity, cardiovascular diseases, diabetes mellitus, other life style and degenerative diseases. The insoluble dietary fibre present in fruits and vegetables can be fermented in the colon, which also increases the concentration of short chain fatty acids (acetate, propionate and butyrate) in colon. These short chain fatty acids have anticarcinogenic properties which help in maintaining good health. According to various studies fruits and vegetables help in reducing the risk of osteoporosis among middle aged menopausal women and elderly men. Due to their buffering action they help in checking the removal of calcium and other nutrients from bones and reduce the risk of osteoporosis. They provide alkaline medium to the body because they are the good source of potassium and magnesium, which are alkaline in nature and thus help in maintaining the acid base balance of the body. Keeping above facts and nutritional benefits of fruits and vegetables in human health and nutrition it is established that people of all age groups, who consume colorful fruits and vegetables, lead a healthy and happy life. This also decreases burden on economy of family budget as money saved in medicines can be used elsewhere. Moreover increased utilization of fruits and vegetables will further increase their demand in market thereby benefitting the farmers.

### Suggestions

- At least two servings (200 g) of fruits and three servings (300 g) of vegetables should be included in the diet daily.
- Before consumption they should be washed thoroughly to remove the dirt, dust and pesticides.
- They should be washed before peeling and cutting otherwise all the water soluble nutrients will leach out.

(Cont. page 31)

## Vermicompost - A Rich Source of Nutrients

✍️ **Sonia Rani, Manoj Kumar and Sunita Sheoran**

Department of Soil Science

CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Organic manure production due to the activity of earthworm is commonly known as vermicompost. It is an effective method of conversion of organic waste into useful manure with the help of earthworm. Vermicompost are the product of non- thermophilic biodegradation of organic material. The earthworms consume various organic wastes and reduce the volume by 40-60 per cent. Each earthworm weigh about 0.5-0.6 g, eats waste equivalent to its body weight in a day and produces cast equivalent to about 50% of the waste it consume. The average quantity of rural compost in India is 184.3 million tonnes having the nutrient value of 2.56 million tonnes. Use of waste could lead to reduction in production cost of agricultural crops under farming and may help in increasing farmers' income.

**Vermicast** – It is the end product of breakdown of organic matter by earthworms with the reduced levels of contaminants, a higher amount of nutrients than organic matter before vermicompost. It contains excreta of the earthworms, earthworm cocoons and undigested feed. These are rich in nutrients, vitamins, antibiotics, enzymes and plant growth regulators, and have high microbial activity. The enzymes continue disintegration of organic matter even after excretion from the worms as casts.

**Vermiwash** - Advance in vermiculture technology have recently lead to novel products like vermiwash which is prepared by washing the earthworm mass. The product has now not only caught the attention of commercial vermiculturists but also the farmers. Farmers in their own way have started collecting vermiwash for foliar application. For preparation of vermiwash, 1 kg adult earthworms devoid of casts (approximately numbering 1000-1200 worms) are released into a trough containing 500 ml of lukewarm distilled water (37-40°C) and agitated for two minutes. Earthworms are then taken out and again washed in another 500 ml of ordinary water and released back into the tanks. The agitation in lukewarm water makes the earthworms release sufficient quantities of mucus and body fluids. Transferring into ordinary water serves to wash the mucus sticking still on to their body surface and helps the earthworms to revive from the shock.

**Vermiculture** - The rearing of earthworms is called as vermiculture. The species, which are suitable for making vermicompost are epigeic. Earthworms of this group can not make burrow in the soil. They can only move through the

cervices of the soil surface. They are found in aggregate in litter heaps or in the loose soil with high level of nitrogen. They feed exclusively on decomposing organic wastes. They remain active throughout the year if conditions are favourable in the environment. *Eudrilus eugeniae* and *Eisenia fetida* are being used as prominent composting earthworms; two more species, namely, *Perionyx excavates* and *Dichogaster bolau* are also used for this purpose. Therefore, selection of suitable earthworm is one of the important aspects for vermicomposting.

#### **Materials Required For Preparation of Vermicompost**

Biodegradable wastes can be used for the production of vermicompost as given below :

1. Crop residues
2. Leaf litter
3. Vegetable waste
4. Weed biomass
5. Biodegradable portion of urban and rural wastes
6. Waste from agro-industries

#### **Stages of Vermicomposting**

- 1 Processing involving collection of wastes, shredding, mechanical separation of the metal, glass and ceramics and storage of organic wastes.
- 2 Pre-digestion of organic waste for 20 days by heaping the material along with cattle dung slurry. This process partially digests the material and fit for earthworm consumption. Cattle dung and biogas slurry may be used after drying. Wet dung should not be used for vermicompost production. Because heat released from wet dung could reduce the earthworm population.
- 3 **Preparation of Earthworm Bed** : A concrete base is required to put the waste for vermicompost preparation. Loose soil will allow the worms to go into soil and also while watering; all the dissolvable nutrients go into the soil along with water.
- 4 **Collection of Earthworm After Vermicompost Collection** : Sieve the composted material to separate fully composted material. The partially composted material will be again put into vermicompost bed.
- 5 Storing the vermicompost in proper place to maintain moisture and allow the beneficial micro organisms to grow.

#### **Essential components, which are required for compost worms**

**Bedding** - Bedding is any material that provides the worms with a relatively stable habitat. This habitat must have the

following characteristics :

- **Good Bulking Potential** - If the material is too dense to begin with or packs too tightly, then the flow of air is reduced or eliminated. Worms require oxygen to live, just as we do. Different materials affect the overall porosity of the bedding through a variety of factors, including the range of particle size and shape, the texture and the strength and rigidity of its structure. The overall effect is referred to in this document as the material's bulking potential.
- **High Absorbency** - Worms breathe through their skin and therefore must have a moist environment in which to live. If a worm's skin dries out, it dies. The bedding must be able to absorb and retain water fairly well for better survival of worms.
- **Low Protein and/or Nitrogen Content (High Carbon Nitrogen)** - Although the worms do consume their bedding as it breaks down, it is very important that this be a slow process. High protein/nitrogen levels can result in rapid degradation and its associated heating, creating inhospitable, often fatal conditions. Heating can occur safely in the food layers of the vermiculture or vermicomposting system, but not in the bedding. Therefore, materials with wide C:N ration should be preferred for vermicompost preparation.

#### **Requirements**

- **Housing** : Sheltered culturing of worms is recommended to protect the worms from excessive sunlight and rain. All the entrepreneurs have set up their units in vacant cowsheds, poultry sheds, basements and back yards.
- **Containers** : Cement tanks are constructed. These should be separated in half by a dividing wall. Another set of tanks are also constructed for preliminary decomposition.
- **Bedding and Feeding Materials** : During the beginning of the enterprises, most women used cow dung in order to breed sufficient numbers of earthworms. Once they have large populations, they can start using all kinds of organic waste. Half of the entrepreneurs now reach the populations of 12,000 to 15,000 adult earthworms.

#### **Nutritive Value of Vermicompost**

The nutrients content in vermicompost vary depending on the waste material that is being used for compost preparation. If the waste materials are heterogeneous one, there will be wide range of nutrients available in the compost. If the waste materials are homogeneous one, there will be only certain nutrients available. The common available nutrients in vermicompost are :

Organic carbon	9.5 – 17.98 %
Nitrogen	0.5 – 1.50 %
Phosphorous	0.1 – 0.30 %
Potassium	0.15 – 0.56 %
Sodium	0.06 – 0.30 %
Calcium and Magnesium	22.67 to 47.60 meq/100g
Copper	2 – 9.50 mg/kg
Iron	2 – 9.30 mg/kg
Zinc	5.70 – 11.50 mg/kg
Sulphur	128 – 548 mg/kg

#### Advantages of Vermicompost

- Productive utilization of organic waste material such as agricultural waste, animal droppings, forest litter and agro-based industrial waste.
- Vermicompost is one of the organic source to supply the plant nutrients.
- Vermicompost is a storehouse of plant nutrients and prevents nutrient losses and increases the use efficiency of chemical fertilizers.
- To improve physical, chemical and biological properties by improving soil structure, texture, aeration, and water holding capacity and prevents soil erosion and ensures better crop productivity.
- Earthworms are the rich source of beneficial soil micro flora as fixers, P- solubilizers, destroy soil pathogens and convert organic waste into vitamins, enzymes, antibiotics, etc.
- Earthworms are an important link in the natural food chain and promote soil health by recycling the organic materials.



(From page 29)

- Vegetables should be cooked in a pan having a lid otherwise nutrients are oxidized and destroyed.
- Try more and more to consume them in raw form i.e. as salad. They should not be cut into very small pieces. After cutting they should be eaten immediately otherwise, enzymatic reactions occur which cause discoloration (Browning).
- Encourage rural and urban population for home gardening so that fresh, organic and low cost fruits and vegetables are available.
- Efforts should be done at government and non-government level to create awareness among various segments of the population about the importance of fruits and vegetables through various media packages.



## Balanced Fertilizer - A Key to Higher Yield

 **N. K. Goyal, B. R. Kamboj and Sandeep Rawal**

Krishi Vigyan Kendra, Damla, Yamunanagar  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Fertilizer is an essential component of modern agriculture. Though there has been substantial increase in production and consumption of fertilizers over the years, nutrient response ratio is not so encouraging mainly due to imbalanced fertilization and lack of use of micro and secondary nutrients. Balanced and integrated use of fertilizers is the key to sustain growth in food grain production. Increased use of chemical fertilizer has raised the food–grain production to a significant high level. Food grains productivity has to be stepped up further for increasing food security in the growing population. Balanced fertilization is characterized by sustained agriculture productivity, sustained soil productivity and efficiency in production system including efficient fertilizer use.

Balanced fertilization means application of essential plant nutrients particularly, major plant nutrients, like N,P and K in right proportion and in optimum quantity through correct method at best suited proportion and in optimum quantity through correct method at best suited time for a specific soil-crop climatic condition. It is must for sustaining optimum yields and profits. Balanced, here means a total plant nutrition system which is capable of taking care of all nutrient deficiencies which occur in an area, be they of macro and micronutrients. For fertilizer use to be efficient, energy saving and environment friendly, balance among nutrients is a pre-requisite.

In most parts of India, still many farmers know only N (Urea) as a fertilizer. Excessive use of nitrogen causes lodging of crop, low sugar content in sugar crops, increased incidence of weed and pest attack. Nutrient balance must be considered beyond N, P and K. The NPK use ratio of 4:2:1 is often cited as appropriate for grain based systems .. Legumes may need nutrients ratio of 0:1:2, 1:2:2 or 1:2:3 and root and some other crops a ratio of 2:1:2. For increased agricultural production, it is necessary to identify all of the deficient plant nutrients and develop a balanced fertilization programme to decrease their negative effect as yield limiting factors. The deficiency of secondary /micronutrients also limits yield. Ignoring these deficiencies will result in significant losses in yield and in efficiency of applied NPK.

Different crops need or remove nutrients from soil in other proportions. Different crops remove N, P and K nutrients in different quantities (Table.1.). It is usually seen that removal of K is equal/higher than N removal but K is not being added to the



soil. Because crops like wheat, paddy, sugarcane, potato, etc. remove large quantities of potash and to these crops application of K along N and P is must to get good yields. In balanced nutrition, both correct amount and ratios of applied nutrients are critical. Nutrient imbalance results in depletion of the most deficient nutrients in the soil. Once the critical level is reached, yield fall dramatically, even though large aggregate amount of other nutrients may have been applied. Soil testing is the best tool to detect nutrient deficiencies in the soil. Application of fertilizers on soil test basis ensures balanced nutrition. Application of nutrients in balanced proportion may increase the efficiency of applied fertilizers and thereby help in increasing higher yield, quality and profit.

**Table 1** : Nutrients uptake by different crops

Crop	Yield (Kg/ha)	Nutrient Uptake (Kg/ha)		
		Nitrogen	Phosphorus	Potash
Wheat	5000	112	60	90
Rice	6000	117	55	238
Sugarcane	8000	112	64	320
Maize	4000	118	43	88
Potato	30000	220	83	416
Jowar	4000	714	41	14
Sarsoan	1000	50	25	48

Current gap between annual drains of nutrients from the soil and inputs from external source is 10 million tonnes which is likely to grow further. The deficiency of micronutrients particularly, of Zn, Fe, B, Mn and Cu is becoming a yield limiting factor in many soil. An analysis of 2.5 lakh soil samples and about 50000 plant samples from 20 states shows 48.5 % soils are deficient in Zn, 31% in boron, 13 % in iron, 4 % in manganese and 2 % in copper.

Fertilizer is costliest input today, yet there is need to increase the fertiliser consumption per unit cropped area. To produce 300 million tonnes food grains in 2025, we would require 45 MT total plant nutrients both from organic and inorganic source. The farmers need to be educated on the significance of certain simple measures that may be very helpful in improving the use efficiency of these inputs. Top dressing of urea in the evening after irrigating the field and when the soil is in near Water conditions, will improve the efficiency of N fertiliser. Choice of a suitable fertilizer depending upon the nature of soil and crop to be grown may prove very helpful in optimising crop productivity.

There is a urgent need to promote balanced use of chemical fertilizers in conjunction with organic manures, green manuring and biofertilizers. Awareness need to be created about the importance of soil health, soil testing and use of organic manures, only then we will achieve the theme of Indian

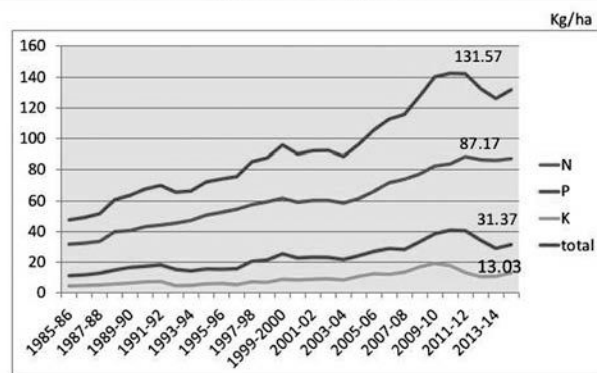
Science Congress i.e., food, nutrition and environmental security. Therefore balanced fertilizer use must be given top priority in agricultural crop production.

To meet the growing foodgrains need of the population, the only option available is increasing productivity through proper planning and optimum utilization of resources, such as fertilizers, seeds, water, etc. for proper planning, availability of reliable, accurate and time series data is a prerequisite.

## Imbalance in NPK ratio

NORTH		WEST	
Haryana	61.4 : 18.7 : 1	Gujarat	13.2 : 3.4 : 1
Punjab	61.7 : 19.2 : 1	Maharashtra	3.5 : 1.8 : 1
UP	25.2 : 8.8 : 1	Rajasthan	44.9 : 16.5 : 1
SOUTH		EAST	
AP	7.1 : 2.8 : 1	Bihar	12.3 : 3.6 : 1
Karnataka	3.6 : 1.6 : 1	Orissa	6.2 : 2.4 : 1
T Nadu	3.9 : 1.5 : 1	W Bengal	2.9 : 1.6 : 1

## All India consumption of plant nutrients per unit of gross cropped area



source-Authors calculation based on FAI 2014-2015.





ISSN-0970-6518

# हरियाणा

# खेती

वर्ष 51

अंक 07



वार्षिक चंदा 150/-

जुलाई 2018

आजीवन सदस्यता 1500/-



**प्रकाशन अनुभाग**  
**विस्तार शिक्षा निदेशालय**

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

# हरियाणा श्वेती

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. ( 2 ) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित  
© कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 51

जुलाई 2018

अंक 07

## इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
धान की बेहतर उत्पादकता व लागत कम करने के उपाय	नीरज पंवार, निर्मल कुमार एवं अशोक ढिल्लों	2
खरीफ की दलहनी व तिलहनी फसलों में-खरपतवार नियंत्रण	मीनाक्षी सांगवान, विरेंद्र सिंह हुड्डा एवं मीना सुहाग	3
मूँग फसल के मुख्य कीट व बीमारियाँ : रोकथाम के उपाय	स्वाति मेहरा, तरुण वर्मा एवं हरबिन्द्र सिंह यादव	4
फसलों में समन्वित कीट प्रबन्ध	जयलाल यादव एवं रमेश कुमार	5
बाजरा की फसल के मुख्य कीट एवं प्रबंधन	रूमी रावल एवं तरुण वर्मा	6
बढ़ते तापमान में करें-बैंगन की माइट (वरुथी) का नियन्त्रण	बजरंग लाल शर्मा, बलदेव राज कम्बोज एवं धर्मेन्द्र सिंह	6
हल्दी की उन्नत काश्त	विकास कुमार एवं टी.पी.मलिक	7
बायोगैस संयंत्र : ग्रामीण भारत का ऊर्जा स्रोत	सुशांत भारद्वाज, यादविका एवं वाई. के. यादव	9
मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने में एकीकृत पोषक प्रबंधन: (आईएनएम) की भूमिका	हरदीप सिंह श्योराण, वेद फोगाट एवं रिधम कक्कड़	10
किसानों की आय दोगुनी करने हेतु रणनीति एवं प्रगति की झलक	सूबेसिंह एवं संदीप भाकर	11
बेल स्कैश के फायदे एवं बनाने की विधि	सौरभ, हेमंत सैनी एवं आर. के. गोदारा	12
बीज का महत्व व उपयोगिता	सूर्यपाल सिंह एवं हर्षिता सिंह	19
शतावरी : प्रकृति का एक वरदान	प्रियंका रानी, वर्षा रानी एवं नीलम खेतरपाल	20
केंचुआ एवं वर्मीकम्पोस्ट पृथक्करण संयंत्र	यादविका, रवीना कारगवाल एवं एम. के. गर्ग	20
नवजात शिशु की देखभाल	पूनम रानी एवं बिमला ढांडा	21
गर्मियों के दौरान : बच्चों की देखरेख	रीना एवं बिमला ढांडा	22
धीरे सीखने वाले बच्चे	पूनम रानी	23
नीम की उन्नत खेती : आय बढ़ाए	ए. के. देशवाल, वी. पी. एस. यादव एवं जे. एन. यादव	24
दुधारू पशुओं में थनैला रोग : रोकथाम	इंदु पांचाल, रूबी सिवाच एवं कान्ता यादव	25
बागवानी फसल-कचरा : किसानों की आय सृजन व पर्यावरण सुरक्षा में सहयोगी	हर्षिता सिंह एवं सूर्यपाल सिंह	26
Krishi Vigyan Kendra : An Innovative Institution in the Service of Farmers	Jogender Singh, Kuldeep Singh and Anil Kumar Rathee	28
Salt Affected Soils : Their Reclamation and Management for Crop Production	Sonia Rani, Mohammad Amin Bhat and Dinesh	29
Direct Seeded Rice Cultivation Technology For Basmati Paddy	P. K. Chahal, Anil Kumar Rohila and B.S. Ghanghas	31

## साई स्तम्भ : अगस्त मास के कृषि कार्य

13

तकनीकी सलाहकार :

डॉ. आर. एस. हुड्डा

निदेशक, विस्तार शिक्षा

संकलन :

डॉ. एम. एस. ग्रेवाल

परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)

विस्तार शिक्षा निदेशालय

सह-निदेशक (प्रकाशन)

डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी

संपादक :

डॉ. सुषमा आनंद

सह-निदेशक (हिन्दी)

सुनीता सांगवान

सम्पादक अंग्रेजी

प्रकाशन अनुभाग

आवरण एवं सज्जा:

कुलदीप कुमार

**लेखकों से अनुरोध :** हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। टाईपिंग के लिए कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं [haryanaketihau@gmail.com](mailto:haryanaketihau@gmail.com)



# धान की बेहतर उत्पादकता व लागत कम करने के उपाय

नीरज पंवार, निर्मल कुमार<sup>1</sup> एवं अशोक ढिल्लों<sup>2</sup>  
कृषि विज्ञान केन्द्र, झज्जर  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की केन्द्र बिन्दु व भारतीय जीवन की धुरी है। देश की कुल श्रम-शक्ति का लगभग 52 प्रतिशत भाग कृषि एवं इससे संबंधित उद्योग-धंधों से अपनी आजीविका कमाता है और निजी क्षेत्र का यह सबसे बड़ा अकेला व्यवसाय है। हरियाणा क्षेत्रफल (4.4 मिलियन हैक्टर) के हिसाब से छोटा राज्य है, जिसके अधीन देश का केवल 1.5 प्रतिशत हिस्सा है लेकिन खाद्यान्नों के मामले में योगदान 11.7 प्रतिशत है। हरियाणा, 1966 में अलग राज्य बना तो खाद्यान्नों का उत्पादन 26 लाख टन

था जो अब आठ गुणा बढ़ोत्तरी के साथ 183 लाख टन तक पहुँच गया।

धान हरियाणा की मुख्य खरीफ फसल है और यह प्रांत उत्तम श्रेणी का चावल पैदा करने के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ बासमती धान की खेती धान के लगभग 55 प्रतिशत क्षेत्रफल में होती है और लगभग 20 हजार करोड़ का बासमती चावल निर्यात होता है। धान का क्षेत्रफल 1966 में 2.30 लाख हैक्टर व उत्पादकता 14 क्विंटल प्रति हैक्टर हो गयी। चावल की बढ़ती हुई माँग व निर्यात की अच्छी सम्भावनाओं को देखते हुए धान उत्पादकता में और भी बढ़ोत्तरी करना आवश्यक है।

बीते समय के मुकाबले कृषि लागत बढ़ती जा रही है और कृषि व्यवसाय पर दबाव भी बढ़ रहा है। इन सब परिस्थितियों के बावजूद भी किसान भाई निम्न महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर ध्यान देकर निश्चित रूप से अपने सीमित संसाधनों का सदुपयोग करते हुए उत्पादकता एवं मुनाफे में सतत् इजाफा कर सकते हैं।

क्या करें	क्या पाएँ
❖ अपने खेत (मिट्टी) के अनुसार प्रमाणित व उन्नत किस्मों की समय पर बिजाई करें।	❖ 15-20 प्रतिशत तक उपज बढ़ाएँ।
❖ खेत को लेजर-लेवलर से समतल करें व धान की सीधी बिजाई करें।	❖ पानी की बचत व कम लागत में अधिक पैदावार प्राप्त करें।
❖ मिट्टी व पानी की जाँच कराएं व संतुलित उर्वरक इस्तेमाल करें। सर्वेक्षण के अनुसार किसान यूरिया का सिफारिश से ज़्यादा इस्तेमाल कर रहे हैं।	❖ आवश्यकतानुसार उर्वरक डालें व लागत कम करें।
❖ बीज उपचार (फफूंद नाशक) में समय (24 घंटे तक बीज को दवा के पानी में भिगोयें) का ध्यान अवश्य रखें।	❖ कम लागत में निरोग व स्वस्थ फसल काटें।
❖ एक एकड़ धान की नर्सरी के लिए 125 वर्ग गज (एकड़ का 40वां हिस्सा) ज़मीन होनी चाहिए। पौध उखाड़ते समय नर्सरी में पानी होना चाहिए।	❖ अच्छी बढ़वार व स्वस्थ पौध प्राप्त करें।
❖ पौधों की उचित संख्या : एक वर्गमीटर में 30 पौध होनी चाहिए। सर्वेक्षणनुसार ज़्यादातर खेतों में 20-24 पौध ही पाई गई।	❖ बेहतर उत्पादकता लें।
❖ खेतों में लगातार पानी खड़ा करने की बजाय नमी बनायें रखें।	❖ पानी की बचत होगी व हवा का अवागमन अच्छा होगा।
❖ समन्वित कीट नियंत्रण प्रणाली अपनाएं। ज़्यादातर किसान कार्बन हाइड्रोक्लोराइड (पदान, सेनवैक्स) 4जी कीटनाशक (तना छेदक के लिए है) को फूट की दवा के तौर पर इस्तेमाल करते हैं जो कि गलत है।	❖ कम लागत में कारगर कीट नियंत्रण करें।
❖ भाव को ध्यान में रखते हुए उपज को दो-तीन भागों में बेचें।	❖ अधिक मूल्य पाएं।
❖ गेहूँ-धान के बीच में ग्रीष्मकालीन मूँग की फसल अवश्य लें।	❖ मूँग से अतिरिक्त आय व धान की फसल में खाद की भी बचत होती है।
❖ धान-गेहूँ के अवशेषों को न जलाएं।	❖ खेती के लिए लाभदायक व स्वच्छ वातावरण।
❖ कृषि एवं विकास कार्यक्रमों में बढ़-चढ़ कर भाग लें।	❖ नवीनतम जानकारी लें, समस्या का समाधान पाएं तथा योजनाओं का लाभ उठाएं।

<sup>1</sup>कृषि अर्थशास्त्र विभाग, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार

<sup>2</sup>कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़

# खरीफ की दलहनी व तिलहनी फसलों में-खरपतवार नियंत्रण

मीनाक्षी सांगवान<sup>1</sup>, विरेंद्र सिंह हुड्डा एवं मीना सुहाग

सस्य विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मूंग, लोबिया, उड़द व अरहर हरियाणा प्रान्त की खरीफ की महत्वपूर्ण दलहनी फसलें हैं। दालों की काशत कम उपजाऊ ज़मीन में की जाती है। परन्तु पैदावार क्षमता व वास्तविक पैदावार में अन्तर के लिए, फसलों में कीड़े व बीमारियों का अधिक प्रकोप, वर्षा की अधिकता का प्रतिकूल असर के साथ-साथ, सावनी की फसलों में खरपतवारों का अधिक जमाव होना भी एक मुख्य कारण है। दाल वाली सभी फसलों में अगर समय पर खरपतवार नियंत्रण न किया जाये तो पैदावार में 20-50 प्रतिशत तक नुकसान हो जाता है।

## सावनी की दलहनी फसलों में मुख्य खरपतवार

सांठी, सांवक, कोंधरा, मकड़ा, मोथा (डीला), भाखड़ी, पलपोटण, तकड़ी घास, जंगली जूट, दूधी, चिलमिल, दूब व तांदला।

## खरपतवारों की रोकथाम:

**निराई- गुड़ाई :** दाल वाली सभी फसलों में 1-2 गुड़ाई (मौसम अनुसार) की सिफारिश की जाती है। कई बार दूसरी गुड़ाई की ज़रूरत ही नहीं पड़ती क्योंकि पहली गुड़ाई के बाद फसल इतनी बढ़ जाती है कि फसल खरपतवारों को नीचे दबा देती है। इसलिए, आमतौर पर दाल वाली फसलों में पहली गुड़ाई बिजाई के तीन सप्ताह बाद करें। ज़रूरत पड़े तो दूसरी गुड़ाई बिजाई के 6 सप्ताह बाद करें। अप्रैल-मई में बोई गई अरहर की पहली गुड़ाई बिजाई के चार-पांच सप्ताह बाद करें।

**खरपतवारनाशक का प्रयोग :** कई वर्ष के प्रयोगों द्वारा पाया गया है कि दलहनी फसलों में खरपतवारनाशकों के प्रयोग द्वारा भी खरपतवारों की रोकथाम सम्भव है जो कि इस प्रकार है:

खेत को अच्छी तरह तैयार करके बिजाई से पहले बासालीन 45 ई.सी. या ट्रफ्लान 48 ई.सी. की 800 ग्राम मात्रा 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़क दें। कल्टीवेटर या हैरो द्वारा खरपतवारनाशक को मिट्टी में अच्छी तरह मिला कर फिर बिजाई करें क्योंकि यह खरपतवारनाशक अगर मिट्टी में अच्छी तरह न मिलाये जायें तो धूप में उड़ जाते हैं।

## या

बिजाई के बाद 48 घंटे के अन्दर-अन्दर स्टॉम्प 30 ई.सी. (पैन्डीमिथालीन) की 1.25 लीटर मात्रा 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करने से भी दलहनी फसलों के खरपतवारों का अच्छा नियंत्रण होता है। खरपतवारनाशकों का प्रयोग शुरू में ही खरपतवारों के जमाव को रोक देता है। अगर इसके भी बावजूद ज़रूरत पड़े तो बिजाई से एक महीना बाद एक गुड़ाई कर दें।

प्रयोगों में पाया गया है कि दलहनी फसलों में खरपतवारनाशक परसुट (इमजेथापायेर) की 280 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ या

खरपतवारनाशक ओडिसी (इमजेथापायेर+इमेजामोक्स) की 40 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ की दर से खरपतवारों की 2-3 पत्ती की अवस्था पर प्रयोग करने से मोथा खरपतवार के साथ-साथ दोनों तरह के खरपतवारों (चौड़ी पत्ती व घास जाति) का 70 से 80 प्रतिशत तक नियंत्रण हो जाता है लेकिन इनके इस्तेमाल के बाद उस खेत में सरसों की फसल की बिजाई नहीं करनी चाहिए क्योंकि सरसों की फसल के जमाव व उसकी बढ़वार पर प्रतिकूल असर पड़ सकता है।

**तिलहनी फसलें :** मूंगफली व तिल हरियाणा प्रान्त की मुख्य तिलहनी खरीफ फसलें हैं। इन दोनों फसलों के अधीन 70 प्रतिशत क्षेत्रफल वर्षा पर आधारित व इनकी काशत हल्की रेतीली जमीन पर की जाती है। इसलिए, पानी के पोषक तत्वों की कमी के साथ खरपतवारों का उचित नियंत्रण न होना, पैदावार में कमी के मुख्य कारण हैं।

**मुख्य खरपतवार :** मकड़ा, मंधाना, चिड़िया घास, डीला, सांवक, कोंधरा, तकड़ी घास, चिलमिल, पलपोटण, भाखड़ी, बेल (चिबड़), सांठी इत्यादि।

## खरपतवारों की रोकथाम :

**निराई-गुड़ाई :** इन फसलों में खरपतवार नियंत्रण हेतु दो बार निराई-गुड़ाई करें। पहली गुड़ाई बिजाई के 3 सप्ताह बाद व दूसरी बिजाई के 6 सप्ताह पर की जाये तो खरपतवारों पर काफी हद तक नियंत्रण हो जाता है। मूंगफली में बिजाई के 6 सप्ताह बाद निराई-गुड़ाई न करें क्योंकि बिजाई के 40-45 दिन बाद सूईयाँ बनकर ज़मीन में अन्दर जाने लगती हैं। अगर इस अवस्था पर गुड़ाई की जाये तो सूईयाँ कट कर पैदावार में काफी कमी आ जाती है। बिजाई के 6 सप्ताह बाद अगर घास ज़्यादा हो तो खरपतवारों को हाथ से निकाल दें।

**खरपतवारनाशकों का प्रयोग :** कई साल के प्रयोगों द्वारा पाया गया है कि तिलहनी फसलों में खरपतवारनाशकों के प्रयोग द्वारा भी खरपतवारों की रोकथाम सम्भव है जो कि इस प्रकार है:

बिजाई से पहले खेत की तैयारी के बाद ट्रफ्लान (ट्राइफ्ल्यूरोलिन 48 ई.सी.) या बासालीन की 800 ग्राम मात्रा या बिजाई के 2-3 दिन के अन्दर-अन्दर स्टॉम्प (पैन्डीमिथालीन 30 ई.सी.) की 1.5 लीटर मात्रा को 300 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव किया जाये तो सांठी, सांवक, कोंधरा व अन्य घास जाति के खरपतवारों का 60-70 प्रतिशत तक नियंत्रण हो जाता है।

तिलहनी एवम् दलहनी फसलें ज़्यादातर वर्षा पर निर्भर करती हैं। अतः ऐसी स्थिति जिसमें खेत की ऊपरी सतह सूखी रहती है ज़मीन पर डाली जाने वाली खरपतवारनाशक रसायन की सिफारिश नहीं की जाती क्योंकि सूखी ज़मीन में इन दवाओं का असर खरपतवार नियंत्रण पर असरदार नहीं पाया गया है। अतः ऊपर बताई गई अलग-अलग दवाओं खासकर स्टॉम्प (पैन्डीमिथालीन 30 ई.सी.) को दलहनी एवम् तिलहनी फसल में केवल उसी अवस्था में सुनिश्चित करें जब इन फसलों को पहले पानी लगाकर यानि पलेवा देकर या बरसात की पूरी नमी हो। जहां तक सम्भव हो सके, निराई-गुड़ाई का तरीका ही अपनाएं। इस विधि/तरीके को अपनाने से बीज की गुणवत्ता बढ़ती है, साथ-साथ फसल की पैदावार अच्छी होती है।

**नोट :** आजकल बासालीन व ट्रफ्लान मार्किट में नहीं आ रहे हैं तो दूसरे खरपतवारनाशकों का प्रयोग करें।



# मूँग फसल के मुख्य कीट व बीमारियाँ : रोकथाम के उपाय

✍ स्वाति मेहरा, तरूण वर्मा एवं हरबिन्द सिंह यादव<sup>1</sup>

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, करनाल

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

दलहनी फसलों का हमारे जीवन में महत्वपूर्ण योगदान है। दालों में पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन पाया जाता है जो कि मानव शरीर की संरचना में अहम भूमिका निभाता है। मूँग की फसल का दलहनी फसलों में महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी काश्त ग्रीष्म एवम् खरीफ दोनों मौसम के दौरान की जा सकती है। मूँग की फसल में आने वाले कीट व बीमारियाँ इसकी उत्पादकता में कमी के मुख्य कारण हैं। अतः किसान समय पर हानिकारक कीटों व बीमारियों की पहचान व उनकी रोकथाम के तरीकों को अपनाकर मूँग की अच्छी पैदावार ले सकते हैं।

## मुख्य कीट व नुकसान :

1. **सफेद मक्खी:** इस कीट के प्रौढ़ छोटे आकार और पीले रंग के होते हैं। इनके पंखों पर सफेद पाऊंडर जैसा पदार्थ जमा होने की वजह से इसको सफेद मक्खी के नाम से जाना जाता है। इसके शिशु व प्रौढ़ पत्तों की निचली सतह से रस चूसकर फसल को कमजोर कर देते हैं। यह कीट रस चूसते समय चिपचिपा पदार्थ छोड़ता है जिसके कारण पत्तों पर काली फफूँद लग जाती है और पौधे की भोजन बनाने की क्षमता पर प्रभाव पड़ता है। इसके साथ यह कीट विषाणु रोग (पीला मौजेक) भी फैलाता है।

2. **हरा तेला :** इस कीट के शिशु व प्रौढ़ छोटे व हरे रंग के होते हैं। यह कीट भी पत्तों की निचली सतह से रस चूसते हैं परिणामस्वरूप पत्ती के किनारे नीचे की ओर मुड़ जाते हैं। अत्यधिक प्रकोप होने पर पत्ते पीले व जंगनुमा हो जाते हैं।

**रोकथाम के उपाय :** इसकी रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 250 मि.ली. डाईमेथोएट (रोगोर) 30 ई. सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर 2-3 हफ्ते के अंतराल पर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें। इन छिड़कावों से विषाणु रोग (मौजेक) भी कम हो जाएगा।

3. **फली बीटल (पत्ता छेदक):** यह कीट अप्रैल से सितंबर तक मूँग व उड़द को नुकसान पहुंचाता है। यह कीट सुबह व सांयकाल में अधिक सक्रिय रहता है व दोपहर के समय तापमान बढ़ने से यह भूमि में छिप जाता है। इसका प्रकोप नई पौध पर अधिक होता है। यह पत्तों को काटकर छोटे-छोटे सुराख कर देता है जिससे पौधे की भोजन बनाने की क्षमता पर प्रभाव पड़ता है। अधिक प्रभावित पत्ते छलनी जैसे हो जाते हैं।

4. **बालों वाली सूण्डियां :** छोटी अवस्था में इस कीट की सूण्डियां एक साथ रहकर पत्तों की निचली सतह को खाकर छलनी कर देती हैं। बड़ी

होने पर सूण्डियां अलग होकर पत्तों को खाती हैं। इस कीट का प्रकोप जुलाई व अगस्त माह के दौरान होता है। उपरोक्त कीटों के अलावा कूबड़ा कीट का प्रकोप भी फसल में पाया जाता है।

**रोकथाम के उपाय:** बालों वाली सूण्डियों के अण्ड समूह को नष्ट करें तथा छोटी सूण्डियों को पत्तों सहित तोड़कर नष्ट करें। बड़ी सूण्डियों के लिए 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस (मोनोसिल/न्यूवाक्रान) 30 एस.एल. या 200 मि.ली. डाईक्लोरवास (न्यूवान) 76 ई.सी. या 500 मि.ली. क्विनलफॉस (एकालक्स) 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें। इन्ही कीटनाशकों से पत्ता छेदक व कूबड़ा कीट की भी रोकथाम हो जाती है।

## मुख्य रोग व लक्षण :

1. **पत्तों का धब्बा रोग:** इस बीमारी से ग्रसित पत्तों पर कोनदार व भूरे लाल रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। पत्तों, तनों व फलियों पर इस तरह के धब्बे बीच में से धूसर या भूरे रंग के और सिरों से लाल-जामुनी रंग के होते हैं।

**रोकथाम के उपाय:** इसकी रोकथाम के लिए ब्लाईटॉक्स-50 या इण्डोफिल एम-45 की 600-800 ग्राम मात्रा को 200 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें।

2. **पत्तों का जीवाणु रोग:** इस बीमारी के कारण पत्तों की सतह के नीचे छोटे-छोटे जलसिकत बिन्दु से नज़र आते हैं। जिसकी वजह से आसपास के तन्तु मर जाते हैं।

**रोकथाम के उपाय:** इसकी रोकथाम के लिए 600-800 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड को 200 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें।

3. **जड़ गलन :** इस बीमारी में पौधों की जड़ें गल जाती हैं। पौधे पीले व सिकुड़े हुए दिखाई देते हैं। धीरे-धीरे पूरा पौधा नष्ट हो जाता है।

**रोकथाम के उपाय:** इस बीमारी की रोकथाम के लिए बिजाई से पहले 4 ग्राम थाईराम प्रति किलो बीज की दर से सूखा बीजोपचार करें। तीन साल का फसल चक्र अपनाने से भी इस बीमारी का प्रकोप कम हो जाता है।

4. **पीला मौजेक :** इस रोग से प्रभावित पौधों के पत्ते पीले व कहीं-कहीं से हरे नज़र आते हैं। अत्यधिक प्रभावित पौधों के पत्ते पूरी तरह पीले पड़ जाते हैं जिससे फसल की पैदावार कम हो जाती है। यह रोग सफेद मक्खी के कारण फैलता है।

## रोकथाम के उपाय:

- ❑ रोगरोधी किस्मों मुस्कान व सत्या का चयन करना चाहिए।
- ❑ रोगी पौधों को जड़ से उखाड़कर नष्ट कर दें।
- ❑ फसल में खरपतवारों को नष्ट कर दें।
- ❑ सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए बताई गई कीटनाशकों का प्रयोग करें।





# फसलों में समन्वित कीट प्रबन्ध

✍ जयलाल यादव एवं रमेश कुमार

कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

देश को आज़ादी मिलने के बाद वैज्ञानिकों का सबसे महत्वपूर्ण योगदान कृषि में पैदावार को बढ़ाना है जो पैदावार सन् 1950 में 5 करोड़ टन थी वह सन् 2017 तक 27.5 करोड़ टन प्रति वर्ष को भी पार कर गई। यह उत्पादन इसलिए बढ़ा कि खेती में कीटनाशकों सहित सभी तकनीकी विधियों का निवेश बहुत अधिक मात्रा में किया गया। ज़हरीली कीटनाशकों के अधिक व ठीक प्रकार से काम में न लेने के कारण से मनुष्य के लिए कई समस्याएं पैदा हो गई हैं, जैसे वातावरण का दूषित होना, मानव तथा कई लाभदायक जीवों को हानि, कीटों में प्रतिरोध शक्ति पैदा होना, अचानक कीटों की संख्या बढ़ जाना, पदार्थों में कीटनाशकों के अवशेष सिफारिश की गई मात्रा से अधिक रहना, द्वितीय प्रकार के कीटों का फैलना व साधारण हानिकारक कीटों का मुख्य हानि करने वाले कीटों में परिवर्तित हो जाना आदि। ऐसी स्थितियों ने वैज्ञानिकों को बाध्य कर दिया है कि वे ऐसे कीट नियन्त्रण के उपाय निकालें जो वातावरण के लिए अच्छे, वायुमण्डल के लिए सुरक्षा प्रदान करने वाले, समाज को मान्य व आर्थिक रूप से लाभदायक हों। उपरोक्त उद्देश्य तभी प्राप्त किये जा सकते हैं यदि समन्वित कीट प्रबन्ध की विधि अपनाई जाये।

समन्वित कीट प्रबन्ध वह तरीका है जिसमें परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए जितने प्रकार के कीट नियन्त्रण के उपाय हैं उनमें से अच्छे-से-अच्छे उपायों का सम्मिश्रण करके काम में लें ताकि कीटों की संख्या आर्थिक कगार या सीमा से अधिक न हो। ऐसा होने से फसल में हानि भी नहीं होती तथा वायुमण्डल में भी अधिक प्रदूषण नहीं फैलता। समन्वित कीट प्रबन्ध की विधि में कीटनाशकों की बहुत कम मात्रा को काम में लिया जाता है व कृषिगत, यान्त्रिक तथा भौतिक, जैविक, जननिक तथा वैधानिक नियन्त्रण की विधियां काम में लेकर कीटों से फसलों को बचाया जाता है। कीटनाशकों को तो जब बहुत ज़रूरी हो तभी काम में लेना चाहिए। फसलों में लगने वाले कीटों को खत्म करने की बजाय आर्थिक हानि सीमा से नीचे रखना ज़रूरी है ताकि फसलों में पल रहे लाभदायक कीटों को ज़िन्दा रहने के लिए हानिकारक कीट भोजन के रूप में मिलते रहें।

## क) समन्वित कीट प्रबन्ध के लिए क्या करें ?

- सबसे पहले सर्वेक्षण द्वारा फसलों में कीटों के आक्रमण का सही पता लगाएं कि आर्थिक कगार तक उनकी संख्या पहुंची या नहीं। यदि कीट संख्या आर्थिक कगार के पास पहुंचे तभी नियन्त्रण के उपाय करें।
- कीटों के नियन्त्रण के सही तरीकों का चुनाव करें।
- ऐसा उपाय करें ताकि किसानों व समाज को लाभ हो।
- कई प्रकार के कीट हों तो सभी के नियन्त्रण का एक साथ ध्यान रखकर उपाय करें।

## ख) समन्वित कीट प्रबन्ध के तरीके :

- 1 **कृषिगत या सस्य क्रियाएं सम्बन्धित नियन्त्रण:** प्रतिरोधी किस्में, सस्य आवर्तन, बीज बोने, पौध लगाने एवम् फसल काटने के समय में हेर-फेर करना, स्वच्छ कृषि, जुताई तथा गुड़ाई, मिश्रित सस्य, प्रपंची फसल लगाना, सन्तुलित खादों का प्रयोग तथा जल निष्कासन आदि।
  - 2 **यान्त्रिक नियन्त्रण:** हाथ से एकत्रित करना, रस्सी खींचना, रोक लगाना, प्रकाश प्रपंच, झाड़ना आदि।
  - 3 **भौतिक नियन्त्रण:** उचित पानी का प्रयोग, अनाजों को सुखाना, ताप तथा धूप का प्रयोग, ध्वनि का प्रयोग तथा अणुशक्ति का प्रयोग।
  - 4 **जैविक नियन्त्रण:** शिकारी व परजीवी कीट, सूत्रकृमि, प्रोटोजोआ, कवक, जीवाणु (बैक्टीरिया), वायरस आदि।
  - 5 **रासायनिक नियन्त्रण :** सभी प्रकार के रसायन जो कीड़ों को आकर्षित करके या दूर भगाकर या मार कर फसलों को होने वाली हानि से बचायें।
  - 6 **विनिमय (संगरोध) नियन्त्रण:** कानून बनाकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर न जाने देना या दूसरे देशों से हमारे देश में किसी वस्तु के साथ कीटों को न आने देना।
  - 7 **जननिक (जैनेटिक) नियन्त्रण :** कीटों के जननांगों को निष्क्रिय करके नियन्त्रण कर सकते हैं।
- ग) **समन्वित कीट प्रबन्ध में आने वाली समस्याएं :** संस्थागत समस्याएं, सूचनागत समस्याएं, सामाजिक समस्याएं, आर्थिक समस्याएं व राजनीतिक समस्याएं।
- घ) **समन्वित कीट प्रबन्ध लागू करने के उपाय :** किसानों की भागीदारी, सरकारी सहायता, वैज्ञानिक उपाय, संस्थागत सुधार करके, जागृति पैदा करके।
- ङ) **समन्वित कीट प्रबन्ध का महत्व :** स्थिरता, आर्थिक, स्वास्थ्य, शुद्ध व उत्तम वायुमण्डल, सामाजिक व राजनैतिक टिकाव, ज्ञान, कृषि सामान को बाहर भेजना आदि।



## भण्डारित अनाज की कीड़ों से रक्षा

अगर अनाज अच्छी तरह से सुखा कर, कीट-रहित व सूखे भण्डार में ढककर भण्डारित किया है तो उसके कीड़ों अथवा नमी से खराब होने की संभावना बहुत कम है। फिर भी भण्डारित अनाज का समय-समय पर निरीक्षण करना चाहिए। यह क्रिया वर्षा ऋतु में बहुत महत्वपूर्ण होती है। यदि अनाज में कीड़ा लगा हो तो इसमें जहरीली गैस छोड़ने वाली दवाई एल्यूमिनियम फास्फाईड (सैल्फास, क्विनलफॉस, फास्फ्यूम) की 7 गोлияं (3 ग्राम) प्रति 1000 घनफुट या 28 घनमीटर स्थान के हिसाब से डालें और 7 दिन तक भण्डार बंद रखें। इन दवाइयों का प्रयोग पूरी सावधानी से किसी विशेषज्ञ की देखरेख में करें।

# बाजरा की फसल के मुख्य कीट एवं प्रबंधन

रूमी रावल एवं तरूण वर्मा

कीट विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बाजरा हरियाणा राज्य की खरीफ मौसम में बोई जाने वाली मुख्य फसल है जो कि राज्य के बारानी क्षेत्र विशेषकर, हिसार, रोहतक, झज्जर, जींद, महेन्द्रगढ़, भिवानी व गुडगांव में बोई जाती है। बाजरे की फसल में कई प्रकार के कीटों का प्रकोप होता है जिनकी वजह से इसकी पैदावार में कमी आती है। प्रस्तुत लेख में बाजरे में लगने वाले कीटों और उनकी रोकथाम के उपाय बताये गए हैं जिन्हें अपनाकर किसान अच्छी पैदावार ले सकते हैं।

**1. सफेद लट :** यह कीट बाजरे के साथ-साथ मूंगफली, ज्वार, गन्ना आदि खरीफ फसलों की जड़ों को नुकसान पहुंचाता है। इस कीट के प्रौढ़ भूरे व हल्के भूरे रंग के होते हैं, जो मानसून की पहली बारिश होने के बाद शाम को अंधेरा होने पर भूमि से निकलते हैं, और आसपास के लगे वृक्षों पर इकट्ठे हो जाते हैं और पत्तों को खाते हैं। सुबह होने से पहले ये कीट वापिस ज़मीन में चले जाते हैं। इसका लट सफेद रंग का होता है जिसका मुंह भूरे रंग का होता है और यह अंग्रेजी के अक्षर सी (c) के आकार का होता है। यह लट बाजरे की जड़ों में अगस्त से अक्टूबर तक भारी नुकसान पहुंचाता है। इस कीट से ग्रसित पौधे पीले होकर सूख जाते हैं।

## रोकथाम :

- इस कीट के नियंत्रण के लिए एकीकृत कीट प्रबंधन तकनीक अपनानी चाहिए।
  - जिस दिन मानसून की बारिश हो, उस दिन की और दूसरे दिन की रात्रि को खेतों से पेड़ों तक पहुँचे प्रौढ़ भूण्डों को एक अभियान के रूप में पेड़ों को हिलाकर, नीचे गिराकर एकत्र कर लें व उन्हें मिट्टी के घोल में डालकर नष्ट कर दें।
  - मानसून की वर्षा से पहले खेतों के आस-पास खड़े पेड़ों की छंटई कर दें।
  - प्रौढ़ भूण्डों को मारने के लिए पहली, दूसरी व तीसरी बारिश होने के बाद (उसी दिन या एक दिन बाद) खेतों में खड़े वृक्षों पर 500 मि.ली. क्विनलफॉस 25 ई.सी. (0.05 प्रतिशत) या 275 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस. एल. (0.04 प्रतिशत) को लेकर 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।
- 2. भूण्डी :** इस कीट का नुकसान फसल में अगस्त से अक्टूबर तक ज़्यादा होता है। यह कीट सलेटी रंग का होता है। जो फसल की पत्तियों को किनारे से खाकर नुकसान पहुंचाता है।

(शेष पृष्ठ 7 पर)

# बढ़ते तापमान में करें- बैंगन की

## माइट (वरुथी) का नियन्त्रण

बजरंग लाल शर्मा, बलदेव राज कम्बोज एवं धर्मेन्द्र सिंह

कृषि विज्ञान केन्द्र, दामला (यमुनानगर)

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बैंगन की सब्जी पूरे देशभर में प्रचलित है। इसकी नरम और कोमल प्रकृति के कारण इसमें बहुत सारे कीटों, बीमारियों व लाल रंग की माइट का आक्रमण बहुत अधिक होता है। बैंगन में लाल रंग की माइट जिसका वैज्ञानिक नाम टेट्रानिकस सिन्नबेरिनस है (Tetranychus Cinnabarinus)। बैंगन को नुकसान पहुँचाने वाली लाल रंग की माइट कीटों की तरह ही होती है जिनमें आठ पैर (चार जोड़ी) होती हैं। इनका शरीर दो भागों में सिर एवं उदर में विभक्त होता है। इनका रंग भूरा लाल या संतरी लाल होता है। माइट के ऊपर वाले भाग पर प्रायः दो गाढ़े रंग के धब्बे होते हैं। इस माइट का प्रभाव प्रायः गर्मियों में अधिक होता है तब इनकी संख्या तेज़ी से बढ़ती है।

मादा करीब 100 अण्डे देती है जो प्रायः सफेद रंग के होते हैं और बाद में पीले हो जाते हैं। लारवा जिसके छः पैर होते हैं बाद में निम्फ में परिवर्तित हो जाते हैं और जिनके आठ पैर होते हैं व पीलापल लिए होते हैं निम्फ बाद में वयस्क बन जाता है। माइट का जीवन चक्र करीब आठ दिन में पूर्ण हो जाता है।

गर्म तथा शुष्क में जीवन चक्र जल्दी होता है। इस प्रकार एक ही फसल पर कई पीढ़ियां पूरी हो जाती हैं। ठंडे मौसम में मादा सुषुप्त अवस्था में चली जाती है और मौसम गर्म हो जाने पर फिर सक्रिय हो जाती है।

**नुकसान :** लाल माइट से बैंगन की फसल को प्रतिवर्ष लगभग 25-30 प्रतिशत तक नुकसान होता है। लाल माइट के मुखांग सूई जैसे होते हैं जिसे यह पत्तियों या टहनियों की कोशिकाओं में चुभाकर उनका रस चूस लेती हैं। इसके निम्फ तथा वयस्क दोनों ही अवस्थाएं रस चूसती हैं, इससे क्लोरोफिल नष्ट हो जाता है, परिणामस्वरूप पत्तियों पर पहले हल्के सफेद रंग के सूई के नोक के समान धब्बे दिखाई देते हैं बाद में पीले रंग के धब्बे हो जाते हैं, जो खेत में दूर से ही दिखाई देते हैं। धीरे-धीरे पत्तियां पीली या भूरी हो जाती हैं और सूखकर गिर जाती हैं। अधिक आक्रमण होने पर माइट पौधों एवं तने पर मकड़ी के समान जाले बना लेती है एवम् उस जाल में अण्डे एवं माइट की सभी अवस्थायें पाई जाती हैं।

माइट पत्तियों के अतिरिक्त कोमल शाखा से भी रस चूसती हैं तथा पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया को प्रभावित करती हैं जिससे पौधा कमजोर हो जाता है तथा पैदावार में (40 प्रतिशत दक्षिण भारत) भारी कमी आ जाती है। प्रभावित पौधों में फल छोटे लगते हैं और गुणवत्ता में भी कमी आ जाती है।

## नियन्त्रण :

- अधिक प्रकोप वाली टहनियों व पत्तियों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

कीट विज्ञान विभाग, चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार

## हल्दी की उन्नत काश्त

✍ विकास कुमार एवं टी.पी.मलिक

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

- फसल पर सादे पानी का छिड़काव करने से भी काफी संख्या में माइट मर जाती हैं।
- फसल कटाई के बाद खरपतवार व फसल अवशेषों को एकत्रित करके जला देना चाहिए।
- सफल नियन्त्रण हेतु प्रोपराफाईट (ओमाईट) 57 ई.सी. 2 मि.ली प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर फसल पर छिड़कें तथा 10-15 दिन बाद फिर इस दवा का छिड़काव दुबारा करें या डायकोफॉल 18.5 ई.सी. का 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें तथा 6-7 दिन बाद इस छिड़काव को दोबारा करें।



(पृष्ठ 6 का शेष)

**रोकथाम :** इस कीट की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

**3. बालों वाली सूंडियां (कातरा) :** फसल को नुकसान सूण्डियों द्वारा होता है जब ये सूण्डियां छोटी अवस्था में होती हैं तो पत्तियों की निचली सतह पर इकट्ठी रहती हैं तथा पत्तों को छलनी कर देती हैं। जब ये बड़ी अवस्था में होती हैं ये सारे खेत में इधर-उधर घूमती रहती हैं और पत्तों को खाकर नुकसान पहुंचाती हैं।

**रोकथाम :**

- ❖ फसलों का निरीक्षण अच्छी तरह से करना चाहिए तथा कातरे को अण्ड समूहों को नष्ट कर दें।
- ❖ आक्रमण के शुरू-शुरू में छोटी सूण्डियां कुछ पत्तों पर अधिक संख्या में होती हैं। इसलिए ऐसे पत्तों को सूण्डियों के समेत तोड़कर ज़मीन में गहरा दबा दें या फिर मिट्टी के तेल के घोल में डालकर नष्ट कर दें।
- ❖ कातरा की बड़ी सूण्डियों को भी इकट्ठा कर ज़मीन में गहरा दबा दें या मिट्टी के तेल में डालकर नष्ट कर दें।
- ❖ खेत में व खेत के आसपास खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिए।
- ❖ खेतों में खरीफ फसलों को काटने के बाद गहरी जुताई करें जिससे ज़मीन में छुपे हुए प्यूपे बाहर आ जाते हैं और पक्षियों द्वारा खा लिए जाते हैं।
- ❖ बड़ी सूण्डियों की रोकथाम के लिए 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफ़ास (न्यूवाक्रान) 36 एस.एल. या 200 मि.ली. डाईक्लोर्वास (न्यूवान) 76 ई.सी. या फिर 500 मि.ली. क्विनलफास (एकालक्स) 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।



हल्दी एक महत्वपूर्ण मसाले वाली फसल है जिसका उपयोग औषधि से लेकर अनेक कार्यों में किया जाता है। विभिन्न प्रकार के गुणों से भरपूर उपयोगिता के आकर्षण के कारण देश में निरन्तर हल्दी की मांग वृद्धि क्रम में बनी रहती है। यह फसल गुणों से परिपूर्ण है, हल्दी की खेती आसानी से की जा सकती है तथा कम लागत तकनीक को अपनाकर अच्छी आमदनी का एक साधन बनाया जा सकता है। हमारे देश में हल्दी की खेती दक्षिण भारत में आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल तथा पश्चिम भारत में महाराष्ट्र, पूर्व में उड़ीसा, बिहार एवं उत्तर प्रदेश में की जाती है।

**हल्दी उगाने के लिए उचित जलवायु :** हल्दी की फसल को उगाने के लिए गर्म व नमी भरी जलवायु उपयुक्त रहती है। हल्दी की फसल के लिए औसतन 750-1200 मि.मी. वर्षा उपयुक्त होती है। हल्दी की बिजाई तथा जमाव के समय पर कम व पौधों की वृद्धि एवं विकास के समय अधिक वर्षा का अनुकूल प्रभाव हल्दी की फसल पर पड़ता है।

**हल्दी उगाने के लिए भूमि का चुनाव :** हल्दी की खेती बलुई दोमट या मटियार दोमट मृदा में सफलतापूर्वक की जाती है। भूमि में जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। यदि भूमि थोड़ी अम्लीय है तो हल्दी की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

**हल्दी उगाने के लिए खेत की तैयारी :** हल्दी की खेती के लिए भूमि को अच्छी तरह से तैयार करना अति आवश्यक है। मोल्ट बोल्ट प्लाऊ से कम से कम एक फीट गहरी जुताई करने के बाद दो तीन बार कल्टीवेटर चलाकर जमीन को अच्छी तरह से तैयार कर लेना चाहिए और इसमें पाटा चलाकर जमीन को समतल कर लें एवं बड़े ढेलों को छोटा कर लेना चाहिए। जीवांश कार्बन का स्तर बनाये रखने के लिए अन्तिम जुताई के समय 25-30 टन अच्छी तरह गली व सड़ी हुई गोबर की खाद/कम्पोस्ट प्रति हैक्टेयर की दर से खेत में मिला देना चाहिए। कार्बन युक्त एवं भुरभुरी मिट्टी में गांठों की संख्या एवं आकार दोनों में वृद्धि होती है।

**बीज उपचार :** हल्दी की बिजाई से पहले गांठों को फफूंदीनाशक इंडोफिल एम-45 की 25 ग्राम मात्रा अथवा कारबेन्डाजिम 1 ग्राम प्रति लीटर की मात्रा से पानी में अच्छी तरह घोल बनाकर बीज को उपचारित करना चाहिए। घोल में गांठों को 60 मिनट तक डुबोकर रखने के बाद बीज को छाया में सुखाकर 24 घण्टे के बाद ही बिजाई करनी चाहिए।

**बिजाई का समय :** हरियाणा प्रदेश में बिजाई का उचित समय मई माह से जुलाई माह तक होता है।

**बिजाई की विधि :** हल्दी की बिजाई दो तरीकों से की जाती है। क्यारियों में समतल भूमि पर तथा मेड़ बनाकर, समतल क्यारियों में कतार से कतार की दूरी 30-40 सें.मी. तथा कंद से कंद की दूरी 15-20 सें.मी. रखें। कंद



को मिट्टी में 4-5 सें.मी. की गहराई पर बोना चाहिए। बिजाई के बाद सामान्य स्थिति में लगभग 30 दिन पर कंद अंकुरित हो जाती हैं एवं सिंचित भूमि में अंकुरण 15-20 दिन में ही हो जाता है।

**बीज की मात्रा :** हल्दी की फसल के लिए मुख्य रूप से स्वस्थ व रोगमुक्त मातृ कन्द एवं प्राथमिक प्रकन्दों को ही बीज के रूप में प्रयोग करना चाहिए बिजाई के समय प्रत्येक कन्द में 2-3 सुविकसित आंख अवश्य होनी चाहिए। सामान्य तौर पर कंद के आकार व वजन के अनुसार 6 से 8 किंवटल प्रति एकड़ की दर से पर्याप्त होती है।

**हल्दी में खाद एवं उर्वरक :** हल्दी की फसल में 10-15 टन प्रति एकड़ की मात्रा से अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद का उपयोग करना चाहिए क्योंकि गोबर की खाद डालने से ज़मीन अच्छी तरह से भुरभुरी बन जायेगी तथा जो भी रासायनिक उर्वरक दी जाएगी उसका समुचित उपयोग हो सकेगा। इसके बाद 40 कि.ग्रा. नत्रजन, 20 कि.ग्रा. फास्फोरस व 20 कि.ग्रा. पोटाश प्रति एकड़ की दर से खेत में लगाएं।

**हल्दी की विकसित किस्में :** हल्दी की कई किस्में विकसित की गई हैं उनमें से कुछ अच्छी किस्में भारत वर्ष में प्रसिद्ध हैं जैसे राजेन्द्र सोनिया, एन डी एच-14, एन डी एच-18, बरूआसागर, पड़रौना लोकल, सुगंधा, स्वर्णा तथा सी ओ-1 आदि प्रमुख किस्में हैं।

किस्में	फसल अवधि (दिन)	कन्दों का औसत उत्पादन (टन/हे.)	करक्यूमिन (प्रतिशत)	औलियोरेजिन (प्रतिशत)	शुष्क उपलब्धता (प्रतिशत)
राजेन्द्र सोनिया	225	27.0	8.4	10.0	18
सुगन्धा	210	15.0	3.10	11.0	23.3
स्वर्णा	200	17.5	8.70	13.5	20.0
एन डी एच-18	200	35-37	8.0	11.5	22.0
एन डी एच-14	205-210	30-32.5	7.0	13.8	21.5

**सिंचाई एवं जल निकास :** हल्दी की फसल को ज़्यादा सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। यदि फसल गर्मी में ही बोई जाती है तो वर्षा प्रारंभ होने से पहले 4-5 सिंचाई की ज़रूरत नहीं पड़ती किंतु यदि बीच में वर्षा नहीं होती तो ऐसी परिस्थिति में 20-25 दिन के अंतराल पर सिंचाई करना आवश्यक हो जाता है। हल्दी की फसल में जल निकास का उचित प्रबंध करना चाहिए अन्यथा हल्दी की फसल पर विपरीत प्रभाव पड़ता है तथा पौधे एवं पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं। अतः समय-समय पर वर्षा के ज़्यादा पानी को खेत से बाहर निकालने की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

**हल्दी में खरपतवार नियंत्रण :** हल्दी के खेत में सूखी घास व पत्तियों की मलचिंग लगाने से खरपतवारों पर नियंत्रण किया जा सकता है। हल्दी की ज़्यादा पैदावार लेने के लिए 2-3 निराई-गुड़ाई करनी चाहिए, इससे खरपतवार नष्ट हो जाते हैं तथा कन्दों में वृद्धि होती है।

**कीट नियंत्रण :** आमतौर पर हल्दी की फसल में कीड़ों की कोई ज़्यादा समस्या नहीं होती। हल्दी की फसल में बेधक (दीमक) तथा थ्रिप्स (रस चूसने वाले कीटों) की समस्या आती है। इन के नियंत्रण हेतु 1.0 लीटर

डाइमैथोएट 30 ई.सी. को 200 से 300 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करना चाहिए।

**बालदार सूंडी :** यह एक बहुभक्षीय कीट है जो कि प्रारम्भिक अवस्था में समूह के रूप में हल्दी की पत्तियों को खाकर नुकसान पहुंचाता है। पूरी तरह से विकसित सूंडी पत्तियों को खाकर जालीनुमा आकृति शेष छोड़ देती है।

**रोकथाम :** हल्दी की फसल में सूंडी की रोकथाम के लिए 1 लीटर मैलाथियान 50 ई.सी. की मात्रा को 200-300 लीटर पानी में अच्छी तरह से घोल बनाकर छिड़काव करने से बालदार सूंडी को नष्ट किया जा सकता है। इस विधि को 10-15 दिन बाद एक बार फिर दोहराएं।

**दीमक :** हल्के भूरे रंग के कीट ज़मीन में रहकर जड़ों व तनों को काट देते हैं, पौधे मुरझाकर सूख जाते हैं, इस कीट का अधिक प्रकोप सितम्बर से नवम्बर तथा फरवरी माह में होता है।

**रोकथाम :** गोबर की कच्ची खाद का उपयोग न करें। पुरानी फसल के अवशेषों को खेत से बाहर निकाल दें। फसल की गहरी जुताई करें व पानी दें जिससे दीमक का प्रकोप कम होता है। जहां तक हो सके रानी दीमक को नष्ट करें। दीमक को नष्ट करने के लिए क्लोरपाईरीफॉस 20 ई.सी. 500 मि.ली. प्रति एकड़ की दर से सूखी रेत में मिलाकर अच्छी तरह खेत में छिड़काव करें तथा तुरन्त बाद सिंचाई कर दें, ऐसा करने से दीमक को नष्ट किया जा सकता है।

**बीमारियों की रोकथाम :**

**पत्तों का ब्लाच :** इस रोग के कारण पत्तों पर सफेद धब्बे के निशान पड़ जाते हैं जो बाद में बड़े होकर पत्ती को सुखा देते हैं।

**रोकथाम :** फसल पर 10-12 दिन के अन्तर पर ब्लाईटॉक्स-50 अथवा इण्डोफिल एम-45 को 400 ग्राम दवा 200 लीटर पानी में प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें।

**धब्बा रोग :** इस रोग में हल्दी के पत्तों पर अण्डे के आकार के धब्बे पत्तों पर बनते हैं जिनमें काले रंग की धारियां दिखाई देती हैं पत्ते धीरे-धीरे सूख जाते हैं।

**रोकथाम :** इस रोग की रोकथाम के लिए ब्लाईटॉक्स-50 अथवा इण्डोफिल एम-45 को 400 ग्राम प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें।

**हल्दी की कटाई या खुदाई :** मई-जुलाई में बोई गई फसल फरवरी-मार्च माह तक खोदने लायक हो जाती है। इस समय कन्दों का विकास हो जाता है और पत्तियां पीली पड़कर सूखने लग जाती हैं उस समय हल्दी की खुदाई या कटाई करनी चाहिए। हल्दी की अगेती फसल 7-8 माह, मध्यम अवधि की फसल 8-9 माह तथा देर से पकने वाली फसल 9-10 माह में तैयार हो जाती है।

**हल्दी की उपज :** हल्दी की फसल बिजाई के 190-220 दिन बाद तैयार हो जाती है तथा फसल की औसत पैदावार 70-90 किंवटल प्रति एकड़ कच्ची हल्दी प्राप्त होती है। कच्ची हल्दी सूखने के बाद 15-25 प्रतिशत ही रह जाती है।



# बायोगैस संयंत्र : ग्रामीण भारत का ऊर्जा स्रोत

सुशांत भारद्वाज, यादविका एवं वाई. के. यादव

प्रसंस्करण एवं खाद्य प्रौद्योगिकी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में लगभग 250 लाख पशुधन है जिनसे लगभग 1200 लाख टन अपशिष्ट पदार्थ का उत्पादन होता है। आम तौर पर इस पशुधन अपशिष्ट का उपयोग खाना पकाने के ईंधन के रूप में ग्रामीण परिवारों द्वारा किया जाता है, लेकिन अभी भी पशुधन अपशिष्ट को ग्रामीणों द्वारा पूर्ण रूप से उपयोग में नहीं लिया जा रहा है और अपशिष्ट का एक बहुत बड़ा हिस्सा व्यर्थ हो जाता है। जो कि बायोगैस संयंत्र द्वारा प्रभावी रूप से संसाधित (Processed) किया जा सकता है। बायोगैस संयंत्र एक ऐसा संयंत्र है जो पशुधन अपशिष्ट का कुशलतापूर्वक प्रबंधन करता है और साथ ही साथ ग्रामीण भारत के लिए ऊर्जा का उत्पादन करता है।

**बायोगैस (Bio-Gas) :** बायोगैस ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत के रूप में लोकप्रिय है। बायोगैस वह गैस मिश्रण है जो ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में जैविक सामग्री के विघटन से उत्पन्न होती है। यह सौर ऊर्जा और पवन ऊर्जा की तरह ही नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत है। यह पशुओं और स्थानीय रूप से उपलब्ध अपशिष्ट पदार्थों से पैदा की जा सकती है। जो विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में खाना पकाने और प्रकाश व्यवस्था के लिए ऊर्जा की आपूर्ति को पूरा करता है, साथ ही बायोगैस तकनीकी अवायवीय पाचन (anaerobic digestion) के बाद उच्च गुणवत्ता वाला खाद प्रदान करता है जो कि सामान्य उर्वरक की तुलना से बहुत अच्छा होता है। इस प्रौद्योगिकी के माध्यम से वनों की कटाई को रोका जा सकता है और पारिस्थितिकी संतुलन (ecological balance) को प्राप्त किया जा सकता है।

चूंकि इस उपयोगी गैस का उत्पादन जैविक प्रक्रिया (बायोलॉजिकल प्रॉसेस) द्वारा होता है, इसलिए इसे जैविक गैस भी कहते हैं। बायोगैस विभिन्न घटकों का एक मिश्रण है (प्रत्येक घटक) की प्रतिशत मात्रा फीड स्टॉक के प्रकार पर निर्भर होती है।

पदार्थ (Substance)	प्रतिशत मात्रा
मीथेन ( $\text{CH}_4$ )	55-75
कार्बन डाइऑक्साइड ( $\text{CO}_2$ )	25-50
हाइड्रोजन ( $\text{H}_2$ )	0.3
नाइट्रोजन ( $\text{N}_2$ )	1.5
हाइड्रोजन सल्फाइड ( $\text{H}_2\text{S}$ )	0.1-0.5
कार्बन मोनोऑक्साइड ( $\text{CO}$ )	0.0-3
ऑक्सीजन ( $\text{O}$ )	0.0

## बायोगैस संयंत्र के भाग

**डाइजेस्टर :** डाइजेस्टर, बायोगैस संयंत्र का महत्वपूर्ण भाग है जो धरातल के नीचे बनाया जाता है एवं बीच में एक विभाजन दीवार से दो कक्षों में बांटा जाता है। इसमें गोबर व पानी के घोल का किण्वित (fermentation) होता है।

**मिक्सिंग टैंक :** मिक्सिंग टैंक का उपयोग गोबर या अन्य कोई अपशिष्ट को पानी के साथ अच्छी तरह मिक्स करने के लिए होता है। बाद में इस मिश्रण को डाइजेस्टर में प्रवाह कर देते हैं।

**गैस डोम :** डोम एक स्टील ड्रम के आकार का होता है जिसे डाइजेस्टर पर उल्टा फिक्स किया जाता है साथ ही इस बात का ध्यान रखा जाता है कि डोम ऊपर या नीचे की दिशा में आसानी से फ्लोट हो सके। डोम के शीर्ष में एक गैस होल्डर लगा होता है जो पाइप द्वारा स्टोव से जुड़ा होता है। जब गैस बनना प्रारंभ होती है तो सबसे पहले डोम में एकत्रित होती है एवं बाद में होल्डर द्वारा स्टोव तक पहुंचती है।

**ओवर फ्लो टैंक :** यह टैंक डाइजेस्टर में किण्वित (fermentation) हुए घोल को बाहर निकालने के काम आता है।

**वितरण पाइप लाइन :** गैस ज़रूरत की जगह पर वितरण करने के लिए इसका उपयोग करते हैं। प्रयास यही किया जाता है कि वितरण पाइप लाइन ज़्यादा लम्बी न हो।

## बायो गैस संयंत्र के लाभ

- यह गैस पर्यावरण के अनुकूल है एवं ग्रामीण क्षेत्रों के लिए बहुत उपयोगी है।
- यह तकनीकी पर्यावरण को स्वच्छ रखने में मदद करती है।
- बायोगैस की उपलब्धता से खाना पकाने में लगने वाली लकड़ी के उपयोग को कम कर सकते हैं फलस्वरूप पेड़ों को भी बचाया जा सकता है।
- इसके उत्पादन के लिए कच्चे माल की आपूर्ति गाँवों से ही पूरी हो जाती है। वहीं और से कच्चे माल को आयात करने की आवश्यकता नहीं है।
- लकड़ी और गोबर के चूल्हे में बहुत धुआं निकलता है जो गृहणियों के स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक होता है। परन्तु इस तकनीकी में धुआं नहीं निकलता है जिससे स्वास्थ्य संबंधी बीमारियों की रोकथाम में सहायता मिलती है।
- यह संयंत्र बायोगैस के साथ-साथ फसल उत्पादन के लिए उच्च गुणवत्ता वाला खाद भी हमें देता है।

खाद प्रकार	नाइट्रोजन	पोटाशियम	फास्फोरस
फार्म की खाद	0.5-1	0.5-0.8	0.5-1
डाइजेस्टर स्लरी तरल	1.5-2	1	1
डाइजेस्टर स्लरी सूखी	1.3-1.7	0.85	0.85

गोबर गैस प्लांट लगाने के लिए निम्नलिखित आवश्यकताओं का होना ज़रूरी है :

- गोबर गैस से छोटे से छोटा प्लांट लगाने के लिए कम से कम दो या तीन पशु हमेशा होने चाहिए।
- गैस प्लांट का आकार गोबर की दैनिक प्राप्त होने वाली मात्रा को ध्यान में रखकर करना चाहिए।

(शेष पेज 10 पर)

# मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने में एकीकृत पोषक प्रबंधन : (आईएनएम) की भूमिका

हरदीप सिंह श्योराण, वेद फोगाट एवं रिधम कक्कड़

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कृषि प्रौद्योगिकियों में सुधार और अनाज की उच्च उपज देने वाले बौनी किस्मों के रिलीज़ के साथ, उर्वरकों की मांग विशेष रूप से नाइट्रोजन उर्वरकों में कई गुणा वृद्धि हुई है। अधिकांश मिट्टी आदर्श रूप से उपजाऊ होने से दूर हैं और इसलिए, मिट्टी के जीवन की गतिविधि को बनाए रखने के लिए जैविक पदार्थों का निरंतर रूप से संकलन करना चाहिए। चूंकि कृषि अधिक गहन और रासायनिक पदार्थों पर निर्भर होती है इसलिए मिट्टी की विषाक्तता और असंतुलित पोषक तत्व स्थायी उत्पादन के लिए खतरा बनती है। इसलिए हमें रासायनिक उर्वरकों के साथ पोषक तत्वों के लिए सस्ता और आसानी से उपलब्ध होने वाले वैकल्पिक स्रोत के बारे में सोचना होगा जो न केवल मिट्टी में पोषक तत्वों की आपूर्ति करे बल्कि मिट्टी के भौतिक-रासायनिक गुणों में भी सुधार करे। इस प्रकार जैविक खाद और उर्वरकों के संयुक्त रूप से इस्तेमाल के माध्यम से पोषक तत्वों की सप्लाई करके उर्वरकों की मांग में कमी लाई जा सकती है। पोषक तत्वों की आपूर्ति के अलावा, जैविक खाद, मिट्टी के स्वास्थ्य, भौतिक-रासायनिक गुणों और मिट्टी की जैविक स्थितियों में भी सुधार लाती है। जैविक खाद के प्रयोग से मिट्टी में देशी पोषक तत्वों की उपलब्धता और साथ ही लागू उर्वरकों की दक्षता में भी सुधार हो सकता है। इसलिए भविष्य में मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए हमें एकीकृत पोषक प्रबंधन पर ध्यान देना होगा।

## एकीकृत पोषक प्रबंधन (आईएनएम) क्या है?

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन वह तकनीक है जिससे मिट्टी की उर्वरता और पौधों की पोषक तत्व आपूर्ति को इष्टतम स्तर पर बनाए रखा जाता है ताकि वांछित फसल उत्पादकता का लाभ उठाया जा सके। इसके तहत पौधों के सभी पोषक तत्वों के स्रोत से एकीकृत तरीके से अनुकूल लाभ उठाया जाता है। दूसरे शब्दों में एकीकृत पौष्टिक प्रबंधन पोषक तत्वों की कमी को रोकने और मिट्टी के स्वास्थ्य और फसल उत्पादकता को बनाए रखने के लिए एकीकृत रूप से विभिन्न पोषक तत्वों के स्रोत का उपयोग है।

**1. हरी खाद :** हरी खाद, जिसे उर्वरता निर्माण की जाने वाली फसलों के रूप में भी जाना जाता है, को मोटे तौर पर मिट्टी के लाभ के लिए उगाई गई फसलों के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। हरी खाद लेने के लिए सबसे उपयुक्त समय मई से विशेष रूप से धान के घूर्णन के मामले में जून से होता है। सक्रिय रूप से हरी खाद से वसंत में भूमि को सूखा रखा जा सकता है।

**2. कार्बनिक स्रोत :** मिट्टी के प्रबंधन के तरीकों में उर्वरक का इस्तेमाल भी एक तरीका है जो मिट्टी के स्वास्थ्य पर बहुत प्रभाव डालता है। गोबर की खाद केंचुआ खाद आदि पोषक तत्वों के सक्षम स्रोत हैं जो मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों और मिट्टी की गुणवत्ता को बढ़ाने में अनुकूल प्रभाव डालने में सक्षम हैं।

**3. उर्वरकों का संतुलित उपयोग :** संतुलित निषेचन के प्रयोग से न केवल मृदा उत्पादकता बनी रहती है बल्कि पौधों के पोषक तत्वों को बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण है। यह उर्वरकों के उचित मात्रा में और सही अनुपात में आवेदन सुनिश्चित करती है जो बदले में मिट्टी की उर्वरता बनाए रखता है और परिणामस्वरूप फसल उत्पादकता बनी रहती है।

**4. जैव-उर्वरक:** जैव उर्वरक वह पदार्थ है जिसमें जीवित सूक्ष्मजीव होते हैं जब बीज पौधों की तरह या मिट्टी में उपनिवेश करते हैं और बढ़ते हैं व मेजबान पौधे को प्राथमिक पोषक तत्वों की आपूर्ति या उपलब्धता करवाते हैं तब जैव उर्वरक नाइट्रोजन निर्धारण की प्राकृतिक प्रक्रियाओं के माध्यम से पोषक तत्वों को जोड़ते हैं, फास्फोरस को सुलझाने, और पौधों के विकास के लिये उत्तेजित करते हैं।

**5. रोटेशन में दलहनी फसलों का प्रयोग :** आम तौर पर रोटेशन में दलहनी फसलों के लाने से मिट्टी में नाइट्रोजन की तादाद को बढ़ावा मिलता है क्योंकि यह फसलें पौधों के साम्राज्य में एक बड़े विवध और कृषि के क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवार है। दलहनी फसलें वायुमंडल से नाइट्रोजन को पौधों की जड़ों में पर्याप्त मात्रा में केंद्रित कर सकती हैं जो उर्वरकों की खपत में कमी लाती हैं और मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी को दूर करती हैं।

## आईएनएम का उद्देश्य:

1. उर्वरकों की आवश्यकता में कमी लाना।
2. पोषक तत्व उपयोग दक्षता में वृद्धि करना।
3. वातावरण स्वस्थ रखना।
4. मिट्टी की गुणवत्ता को उच्च स्तर पर बनाए रखना।
5. मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ को पुनः स्थापित करना है।



## (पेज 9 का शेष)

- गोबर गैस प्लांट गैस प्रयोग करने की जगह के नज़दीक स्थापित करना चाहिए ताकि गैस अच्छे दबाव पर मिलता रहे।
- गोबर गैस प्लांट लगवाने के लिए उत्तम किस्म का सीमेंट तथा ईंटें प्रयोग करनी चाहिए। छत से किसी प्रकार की लीकेज नहीं होनी चाहिए।
- गोबर गैस प्लांट किसी प्रशिक्षित व्यक्ति की देखरेख में बनवाना चाहिए।

**प्रयोग :** गोबर गैस प्लांट की स्थापना के बाद इसे गोबर व पानी के घोल (1:1) से भर दिया जाता है और चलते हुए प्लांट से निकला गोबर (दस प्रतिशत) भी साथ ही डाल दिया जाता है। इसके बाद गैस की निकासी का पाइप बंद करके 10-15 दिन छोड़ दिया जाता है। जब गोबर की निकासी वाले स्थान से गोबर बाहर आना शुरू हो जाता है तो प्लांट में ताज़ा गोबर प्लांट के आकार के अनुसार सही मात्रा में हर रोज़ एक बार डालना शुरू कर दिया जाता है तथा गैस को आवश्यकतानुसार इस्तेमाल किया जा सकता है एवं निकलने वाले गोबर को उर्वरक के रूप में प्रयोग किया जा सकता है जो गुणवत्ता के हिसाब से गोबर की खाद के बराबर होता है।





# किसानों की आय दोगुनी करने हेतु रणनीति एवं प्रगति की झलक

✍ सूर्यसिंह एवं संदीप भाकर<sup>1</sup>

जिला विस्तार विशेषज्ञ, विस्तार शिक्षा

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

किसान देश की जीवन रेखा हैं और किसी भी देश का विकास उसके कृषि क्षेत्र के विकास के बिना अधूरा है। देश की खाद्य सुरक्षा को सतत आधार पर सुनिश्चित करने का श्रेय हमारे किसानों को ही जाता है। आज भारत देश न केवल बहुत से कृषि उत्पादों में आत्म निर्भर व आत्म संपन्न है बल्कि बहुत से उत्पादों का निर्यातक भी है। इन सत्यों के साथ यह भी सच है कि किसान अपने उत्पादों का लाभकारी मूल्य नहीं पाते हैं। अतः सरकार द्वारा कृषि क्षेत्र में इस तरह का विकास किया जाए कि अन्न एवं कृषि उत्पादों के भण्डारण के साथ-साथ किसान की पैदावार के साथ-साथ उनकी आय भी बढ़े। इसी संदर्भ में फरवरी 2016 को माननीय प्रधानमंत्री जी ने एक महत्वपूर्ण महत्वाकांक्षी उद्देश्य के साथ वर्ष 2022 तक किसान की आय दोगुनी करने का लक्ष्य चुनौती के रूप में लिया है। यह केवल एक चुनौती नहीं है। एक अच्छी रणनीति, सुनियोजित कार्यक्रम पर्याप्त संसाधनों एवं कार्यान्वयन में सुशासन के माध्यम से इस लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। अतः इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए माननीय प्रधानमंत्री जी ने निम्नलिखित सात सूत्रीय रणनीति का आह्वान किया है।

1. प्रतिबूंद - अधिक फसल :- इसके सिद्धांत पर पर्याप्त संसाधनों के साथ सिंचाई पर विशेष बल।
2. प्रत्येक खेत की मिट्टी गुणवत्ता के अनुसार गुणवान बीज एवं पोषक तत्वों का प्रावधान।
3. गोदाम एवं कोल्डचेन में निवेश : कटाई के बाद फसल नुकसान को रोकने के लिए गोदामों एवं कोल्डचेन में बड़ा निवेश।
4. मूल्य संवर्धन : खाद्य प्रसंस्करण के माध्यम से मूल्य संवर्धन को प्रोत्साहन।
5. ई-प्लेटफार्म की शुरुआत: राष्ट्रीय कृषि बाजार का क्रियान्वयन एवं सभी केन्द्रों पर विकृतियों को दूर करते हुए ई-प्लेटफार्म की शुरुआत।
6. फसल बीमा योजना : जोखिम को कम करने के लिए कम कीमत पर फसल बीमा योजना की शुरुआत।
7. कृषि एवं सहायक गतिविधियों का बढ़ावा देना : डेयरी/पशुपालन, मुर्गी पालन, मधुमक्खी पालन, मछली पालन, खुम्ब उत्पादन, बागवानी आदि सहायक गतिविधियों को बढ़ावा।

किसानों की आय वर्ष 2022 तक दोगुनी करने की वृहद योजना तैयार करने के लिए सरकार ने 13 अप्रैल 2017 को एक समिति का गठन किया गया जिसमें अर्थशास्त्र एवं सांख्यिकी विभाग के वरिष्ठ अर्थशास्त्री एवं

सांख्यिकी सलाहकार, भारत सरकार के खाद्य प्रसंस्करण, फसल, पशुपालन एवं डेयरी तथा नीति प्रभागों के संयुक्त सचिव, नीति आयोग के कृषि सलाहकार, बागवानी आयुक्त, राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम के प्रबंधक निदेशक, राष्ट्रीय कोल्डचेन विकास केन्द्र के मुख्य कार्यकारी अधिकारी, राष्ट्रीय कृषि आर्थिक एवं नीति अनुसन्धान संस्थान के निदेशक एवं कई अन्य गैर सरकारी सदस्य शामिल किए गए। कृषि नीति को “उत्पादन केन्द्रित” के बजाय आय केन्द्रित बनाने के लिए इस आठ सदस्यीय समिति का मुख्य लक्ष्य कृषि के अन्य संभावनाशील क्षेत्रों की पहचान करना है जिनमें ज्यादा निवेश होना चाहिए। साथ ही समिति का लक्ष्य आय बढ़ाने के लिए उद्यानिकी और पशुपालन तथा मत्स्य पालन जैसे कृषि संबंधित क्षेत्रों की ओर विविधीकरण पर विचार कर कृषि में जोखिम कम करने के तरीके भी सुझाना है। इसके अतिरिक्त समिति खेती की लागत कम करने और मौसम की अनिश्चितता एवं कृषि क्षेत्र में दाम में उतार-चढ़ाव से निपटने के तरीकों पर भी विचार कर अपनी सिफारिशें रखेगी। विस्तृत तौर पर इस समिति के कार्यक्षेत्र में आने वाले विचारार्थ मुद्दों में किसानों/कृषि मजदूरों की वर्तमान आय का अध्ययन करना, मौजूदा आय की ऐतिहासिक बढ़त दर को आंकना, वर्ष 2021-2022 तक किसानों/कृषि मजदूरों की आय दोगुनी करने के लिए आवश्यक विकास दर निर्धारित करना तथा इन सभी लक्ष्यों को पूरा करने के लिए अपनाई जाने वाली रणनीतियों पर विचार करना और निर्धारित कार्यान्वयन की समीक्षा के लिए एक संस्थागत तंत्र की सिफारिश करना आदि शामिल हैं। सही अर्थ में कृषि की आय को दोगुना करने के लिए बनाई गई समिति जिसे डी.एफ.आई. समिति भी कहा जाता है, के द्वारा तीन क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित किया गया।

1. उत्पादकता लाभ।
2. फसल की लागत में कमी।
3. लाभकारी मूल्य।

इस सामरिक ढांचे में चार चिंताओं पर भी विचार किया गया जैसे: (क) टिकाऊ एवं सतत कृषि उत्पादन (ख) किसानों के उत्पाद का मौद्रिकरण (ग) विस्तार सेवाओं का पुनः मजबूतीकरण और (घ) कृषि को एक उद्यम के रूप में माध्यमता प्रदान करना। किसानों की आय को 2015-2016 को आधार वर्ष मानते हुए वास्तविक आधार पर 2016-17 से 2022-23 तक दोगुना करने के लिए कृषि सिंचाई, ग्रामीण सड़कों, ग्रामीण ऊर्जा और ग्रामीण विकास में निवेश एवं मुद्रा स्कीम आदि के माध्यम से गैर खेती बाड़ी से निर्यात को बढ़ाने पर बल दिया गया है ताकि कृषि आय में खेती की आय तथा गैर खेतीबाड़ी के अनुपात को 60:40 से 70:30 के अनुपात तक लाया जा सके। इसी लिए विकास के प्रमुख स्रोतों की पहचान करते हुए स्थाई उत्पादन प्रणाली को अपनाने तथा राष्ट्रीय और राजकीय दोनों स्तरों पर उपक्षेत्रीय बढ़त दर में वृद्धि करने को भी रणनीति का हिस्सा माना गया है। वर्तमान में चालू योजनाओं को आय संवर्धन के साथ जोड़ने पर भी विशेष बल दिया जा रहा है, जैसे कि -

**उत्पादकता बढ़ोत्तरी से उत्पादन में वृद्धि : राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन**

<sup>1</sup>कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहाबाद

एवं बागबानी के समेकित विकास के लिए गठित मिशन के क्रियान्वन पर बल दिया गया है।

**कृषि लागत में कटौती :** इसके अन्तर्गत मृदा स्वास्थ्य कार्ड व नीम लेपित यूरिया के इस्तेमाल और हर बूंद से ज्यादा फसल संबंधी योजनाओं को लक्षित किया गया है।

**लाभकारी आय स्रोत :** इसके सृजन के लिए ई-नाम (E-National Agricultural Marketing) शुष्क एवं ठण्डे भंडारण संसाधन, डी.ई.डी.एफ. (डेयरी प्रसंस्करण और अवसंरचना विकास कोष), ब्याज की रियायती दरों पर भंडारण की सुविधाएं और कटाई पश्चात् ऋण की सुविधा तथा वार्षिक आधार पर न्यूनतम समर्थन मूल्य बढ़ाने आदि पर जोर दिया गया है।

**जोखिम प्रबंधन एवं स्थाई पद्धतियां अपनाना :** इस पद्धति को अपनाने हेतु प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, परम्परागत कृषि विकास योजना तथा उत्तरपूर्वी राज्यों के लिए जैविक खेती पर मिशन आदि के माध्यम से सतत कृषि को बढ़ावा दिया जा रहा है।

कृषि के अतिरिक्त किसान के आय के साधनों को बढ़ाने के लिए सरकार ने राष्ट्रीय पशुधन मिशन, गोकुल मिशन, नीली क्रान्ति, मधुमक्खी पालन, मुर्गीपालन आदि बहुत सी योजनाएं प्रारम्भ की हैं जिनके कारण गत वर्षों में डेयरी, पोल्ट्री, मधुमक्खी, मत्स्य पालन क्षेत्र में काफी वृद्धि दर्ज हुई है। डी.एफ.आई समिति ने किसानों की आय को प्रभावित करने वाले विषयों का चयन कर अपनी रिपोर्ट को 14 खण्डों के विस्तृत क्षेत्र में तैयार करने का निर्णय लिया है। विभिन्न श्रेणियों को बारी-बारी से जारी किया जा रहा है ताकि इच्छुक स्टेक होल्डर्स इसका अध्ययन कर रचनात्मक टिप्पणियां व सुझाव दे सकें। अब तक पाँच खण्ड तैयार कर सार्वजनिक किये जा चुके हैं। क्रियान्वयन के अगले चरण में अंतर शैक्षणिक वाद-विवाद हेतु आमन्त्रण भी प्रस्तावित है। अब तक एकत्रित सूचना एवं परिचर्चाओं के मध्यनजर तथा विकास के सात स्रोतों जैसे कि (1) फसल उत्पादकता में सुधार (2) पशुधन उत्पादकता में सुधार (3) संसाधन उपयोग दक्षता (लागत, बचत और स्थिरता) (4) फसल सघनता में शुद्धि (5) अधिक मूल्य वाली फसलों के माध्यम से विविधता (6) किसानों द्वारा प्राप्त वास्तविक मूल्यों में सुधार तथा (7) कृषि से गैर कृषि कार्यों में बदलाव को ध्यान में रखते हुए डी.एफ.आई समिति ने अपनी अंतरिम सिफारिशें सरकार से सांझा की हैं जिन्हें वर्तमान में चालू योजनाओं के माध्यम से अमल में भी लाया जा रहा है। सारांश में डी.एफ.आई समिति की मुख्य सिफारिशें एवं अनुशंसाओं की झलक निम्नानुसार है -

1. खेती, पशुधन, गैर कृषि व्यवसाय, मजदूरी और वेतन की विकास दर के अनुसार जो क्रमशः 3.8 प्रतिशत, 19.7 प्रतिशत, 0.5 प्रतिशत, व 1.6 प्रतिशत है के आधार पर पशुधन के क्षेत्र पर अधिक बल देना।
2. कृषि एवं कृषि विकास में निवेश के बीच सकारात्मक सम्बन्ध स्थापित करना ताकि कृषि के लिए सार्वजनिक निवेश, विशेषकर कोर्पोरेट सैक्टर के निवेश में बढ़ोत्तरी हो।

(शेष पृष्ठ 18 पर)

## बेल स्ववैश के फायदे एवं बनाने की विधि

✍ सौरभ, हेमंत सैनी एवं आर. के. गोदारा

उद्यान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बेल वास्तव में एक जड़ी बूटी है जो हमारे स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त उपयोगी है। आयुर्वेद में इसके कई फायदों का उल्लेख मिलता है। बेल में प्रोटीन, बीटा-कैरोटीन, थायमीन, राइबोफ्लेविन और विटामिन सी भरपूर मात्रा में पाया जाता है। बेल के फल का इस्तेमाल कई तरह की दवाइयों को बनाने में तो किया ही जाता है साथ ही ये स्वादिष्ट पेय पदार्थों और व्यंजनों में भी प्रमुखता से इस्तेमाल होता है जिनमें से एक है-बेल स्ववैश। यह फलों के स्वच्छ छने हुए रस से निर्मित पेय है जिसमें फल का कुछ गूदा व इसे मीठा बनाने के लिए चीनी डाली जाती है। बेल स्ववैश गर्मियों में ठंडक देता है और इसे पीने से रक्त भी साफ रहता है। हृदय, गुर्दा, लिवर एवं पेट का स्वास्थ्य भी बना रहता है।

### बेल की किस्में

एनबी-5, एनबी-9, कागज़ी, समस्तीपुर स्लैक्शन और गोंडा स्लैक्शन

### स्ववैश बनाने की विधि

अप्रैल के आखिरी सप्ताह में पूर्ण विकसित बेल के फल तोड़कर 10-15 दिन के लिए सामान्य तापमान पर पकने के लिए रख दें। मध्यम आकार के फल स्ववैश बनाने के लिए उपयुक्त हैं। फल स्ववैश बनाने के लिए तैयार है यह देखने के लिए फल के नक्कू को हटाएं, अगर नक्कू आसानी से उतर जाए तो समझिये फल तैयार है। फल तोड़कर गूदा एक बर्तन में निकाल लें और उसके बराबर का पानी मिला दें जिससे गूदा डूब जाए। 15-20 मिनट तक छोड़ दें। गूदे को पानी में ही मसलें ताकि बीज व रेशा अलग हो जाए और 10-15 मिनट के लिए छोड़ दें। अब इस घोल को मलमल के कपड़े से छान लें। एक दूसरे बर्तन में चाशनी तैयार करें। एक लीटर जूस के लिए 1 लीटर पानी में 1.5 किलो चीनी व 15-20 ग्राम सिट्रिक एसिड डाल कर चाशनी बना लें। चाशनी तैयार होने पर उसको ठंडा करें व उसमें जूस का घोल बनाकर नाप लें। इसमें एक ग्राम सोडियम बेंजोएट प्रति लीटर तैयार पेय पदार्थ के अनुसार तोल कर आधा कप पानी में घोल लें और फिर तैयार चाशनी में मिला दें। ठण्डा होने के पश्चात् बोतल में डालकर सील व लेबल लगाकर सुरक्षित जगह भण्डारण करें। इसको पीने से पहले पानी मिलाकर पतला कर लेना चाहिए।

### स्ववैश के मानक

कम से कम कुल विलय ठोस (40 प्रतिशत) और कम से कम फलों का रस 25 प्रतिशत। इसमें लगभग 1.0 प्रतिशत खटास और 350 पी.पी.एम. सल्फर-डाई-आक्साईड या 600 पी.पी.एम. सोडियम बेंजोएट होना चाहिए। ये रसायन स्ववैश को लम्बे समय तक उपयोग योग्य रखते हैं।



# अगस्त मास के कृषि कार्य



## फसलों में

### बाजरा

बिजाई के लगभग 3 सप्ताह बाद किसी वर्षा वाले दिन कतारों में से फालतू पौधे निकाल कर खाली स्थानों में लगाएं ताकि पौधे से पौधे का फासला लगभग 12 सें.मी. रहे। इसी समय निराई-गुड़ाई करें ताकि खेत में खरपतवार न रहें। यदि किसी कारणवश बाजरे की बिजाई न हो पाई हो तो इसकी पौध रोपाई तीन हफ्ते पुरानी पौध से मध्य-अगस्त तक किसी वर्षा वाले दिन, 45 सें.मी. के अंतर पर कतारों में करें व पौधे से पौधे का फासला 12 सें.मी. रखें। संकर बाजरे की सिंचित फसल में नाइट्रोजन की दूसरी मात्रा, लगभग 25 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ बिजाई के 3 हफ्ते बाद फसल की छंटाई के समय तथा 25 किलोग्राम यूरिया, जब गोभ में सिट्टा आ जाए, डालें। यदि खाद डालते समय खेत में पर्याप्त नमी न हो और वर्षा भी न हो रही हो तो फसल में पानी लगा दें। बाजरे की बारानी फसल में अगर किसी कारणवश यूरिया खाद बिजाई के समय न डाल सके हों तो लगभग 35 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ खड़ी फसल में तभी डालें जब वर्षा हो जाए या होने की संभावना हो। यदि बाजरे की फसल में जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई दें तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट का छिड़काव करें। एक एकड़ के लिए एक किलोग्राम जिंक सल्फेट, 6 किलोग्राम यूरिया व 200 लीटर पानी का प्रयोग करें। 10-12 दिन के अंतर पर कम से कम 2-3 छिड़काव करें।

कोढ़िया या डाऊनी मिल्ड्यू रोग से प्रभावित पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। ऐसे पौधे रंग में पीले, कद में बौने होते हैं तथा पत्तियों की निचली या दोनों सतहों पर सफेद रंग का पाऊंडर-सा छाया रहता है। ध्यान रहे कि रोगी पौधों को उखाड़ने का काम बिजाई के तीन या चार सप्ताह के अंदर पूरा कर लें। जब पत्तों से बालें बाहर आने लगें तो बालों पर चेपा रोग की रोकथाम के लिए क्यूमान एल. (400 मि.ली. प्रति एकड़) का 200

लेखक :

- आर. एस. हुड्डा, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- आर. के. गोदारा, सह-निदेशक (बागवानी)
- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (पादप रोग विज्ञान)
- एम. एस. ग्रेवाल, परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)
- अशोक चन्द्र यादव, परामर्शदाता (सब्जी विज्ञान)
- वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह, सहायक वैज्ञानिक, लुवासा (पशु पालन विभाग)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। चेपाग्रस्त बालों के दिखाई देते ही उन्हें खेत से निकालकर नष्ट कर दें। खरपतवार की रोकथाम के तुरंत बाद यदि रसायन का छिड़काव न किया हो तो बिजाई के 7 से 15 दिन के अंदर 400 ग्राम (50 प्रतिशत घु.पा.) एट्राजिन 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

यदि बालों वाली सूण्डी का आक्रमण हो तो पत्तों पर अंडों के जो समूह होते हैं उन पत्तों को अंडों सहित तोड़कर नष्ट कर दें। सूण्डियों को मारने के लिए क्विनलफॉस 25 ई.सी. या 200 मि.ली. डाइक्लोरवास 76 ई.सी. 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें। प्रौढ़ों को प्रकाश प्रपंच से नष्ट करें।

### मक्का

अगर वर्षा न हो तो ज़रूरत के अनुसार फसल को पानी दें। जल निकास का पूरा प्रबंध करें। खेत में खरपतवार बिल्कुल न उगने दें। महीने के पहले पखवाड़े में पौधे घुटनों तक उग आने पर संकर व कम्पोजिट मक्की में 45 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से कतारों में, पौधों में थोड़ी दूर से डालें व फसल की निराई करें। कतारों में खड़े फालतू पौधों को इस हिसाब से निकालें कि संकर किस्मों में एक पौधे से दूसरे पौधे का फासला 22.0 सें.मी. रहे। दूसरे पखवाड़े में संकर मक्का में झण्डे आने से पहले कतारों के बीच 45 किलोग्राम यूरिया की अंतिम मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से डालें और उसे मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें। यदि पत्तों पर जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई दें तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट का यूरिया के साथ छिड़काव कर दें। कम से कम 2-3 छिड़काव 10-12 दिन के अंतराल पर करें। इसके लिए 200 लीटर पानी में 1 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट व 6 कि.ग्रा. यूरिया का प्रयोग करें।

पत्तों की अंगमारी व पत्तों के अन्य रोगों से बचाव के लिए 600 ग्राम जिनेब या मैन्कोजेब के घोल का 10-15 दिन की अवधि पर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

इस फसल के तना छेदक कीड़े की रोकथाम के लिए 4 छिड़काव 10 दिन के अंतर पर किए जाने चाहिए। पहला छिड़काव फसल उगने के 10 दिन बाद करें। इस मास तीसरा व चौथा छिड़काव करें व इसके लिए 400 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. 400 लीटर पानी में प्रति एकड़ छिड़कें।

### कपास

देसी कपास में पौधे से निकल रही फूटों को इस माह के पहले पखवाड़े में काट दें। इस माह के मध्य तक कपास में नाइट्रोजन खाद की दूसरी मात्रा अवश्य डाल दें। अमेरिकन कपास में फूल आने के समय 40 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से डालें। देसी कपास में इस समय 22 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ डालें। संकर किस्मों के लिए नत्रजन



खाद तीन बराबर हिस्सों में बांट कर तीन बार-बिजाई के समय, बौकी आने पर तथा फूल आने पर डाली जाती है। अतः आगे फूल आने पर 50 किलोग्राम यूरिया की तीसरी मात्रा अवश्य डालें। यदि ज़मीन में पर्याप्त नमी न हो तो हल्का पानी लगा दें। इससे पैदावार में बढ़ोत्तरी होती है। अमेरिकन कपास में फलों को सड़ने तथा टिण्डों को गिरने से रोकने के लिए फसल में एन.ए.ए. (जैसे प्लेनोफिक्स या और कोई इस जैसी दवा) का दो बार छिड़काव करें। पहला छिड़काव 50 ई.सी. दवा 280 लीटर पानी में मिलाकर फल आने के समय प्रति एकड़ करें व दूसरा छिड़काव 70 सी.सी. के हिसाब से पहले छिड़काव के 20 दिन बाद करें। छिड़काव में खारे पानी का प्रयोग न करें।

फसल को कोणदार धब्बों की बीमारी से बचाव हेतु प्लांटोमाइसिन (30-40 ग्राम प्रति एकड़) या स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (6-8 ग्राम प्रति एकड़) व कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (600-800 ग्राम प्रति एकड़) के घोल का 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें। 2,4-डी कपास के लिए घातक है। किसी भी रूप में इसे कपास की फसल के संपर्क में न आने दें। जिन छिड़काव यंत्रों से पहले 2,4-डी का छिड़काव किया गया हो उन्हें कपास में कीट या फफूंदनाशकों के छिड़काव के लिए प्रयोग में न लाएं।

2, 4-डी से प्रभावित पौधों की समस्या हो जाने पर प्रभावित कोंपलों को 15 सैं.मी. काट दें और इसके बाद 2.5 प्रतिशत यूरिया तथा 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव करें।

अगस्त-सितम्बर में कपास की फसल को कीड़ों से बचाने के लिए 12 से 15 दिन के अंतर पर चार छिड़काव करने पड़ेंगे। अभी से कीटनाशकों का प्रबंध करें। इसके लिए जो भी दवाई आपने खरीदी है उसका थोड़ा घोल बनाकर पहले 15-20 पौधों पर छिड़क लें। यदि पौधों में चार-पांच दिन तक कोई खराब असर विशेषकर बन्दरपंजा न हो तो आगे छिड़काव करें, नहीं तो वह दवाई प्रयोग न करें।

अगस्त के पहले पखवाड़े में अधिक नमी वाला मौसम होने के कारण हरे तेले का प्रकोप अधिक होता है। आवश्यकता पड़ने पर (2 शिशु तेला/पत्ता) हरा तेला की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. ऑक्सीडेमेटान मिथाइल 25 ई.सी. या 350 मि.ली. डाईमैथोएट 30 ई.सी. या 40 मि.ली. ईमीडाक्लोपरिड 200 एस.एल. या 40 ग्राम थायोमीथोक्सेम 25 घु. पा. को 150 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। ये कीटनाशक सूण्डियों की रोकथाम के लिए प्रयोग हो रही कीटनाशकों में मिलाई जा सकती हैं। चित्तीदार सूण्डी, गुलाबी सूण्डी तथा अमेरिकन सूण्डी की रोकथाम के लिए सप्ताह में दो बार खेत में 10 पौधों का निरीक्षण करें तथा उन पर 5 सूण्डियां मिलने या 5 प्रतिशत फल प्रभावित होने की अवस्था में 600 मि.ली. क्विनलफॉस 25 ई.सी. या 600 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. या 500-600 मि.ली. ट्राइएजोफास 40 ई.सी. में से किसी एक को 150-200 लीटर पानी में मिलाकर बारीक फव्वारे द्वारा प्रति एकड़ छिड़काव करें। दूसरा छिड़काव किसी एक सिन्थेटिक पायरेथरायड (100-125 मि.ली. फैनवालरेट 20 ई.सी. या 100-125 मि.ली. अलफामैथरीन 10 ई.सी. या 80-100 मि.ली. साईपरमैथरीन 25 ई.सी. या 160-200 मि.ली. डेकामैथरीन 2.8 ई.सी.) को 150-200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। अमेरिकन सूण्डी की रोकथाम के लिए सिन्थेटिक

पायरेथरायड का प्रयोग न करें अपितु 300 ग्राम थायोडिकार्ब 75 डब्ल्यू. पी. या 75 मि.ली. स्पाइनोसेड (ट्रेसर) 45 एस.सी. का प्रयोग करें।

अगर बी.टी. कपास बोई है तो अगस्त मास में सूण्डियों के नियंत्रण के लिए कीटनाशकों का छिड़काव करने की आवश्यकता नहीं है, परंतु इस पर रस चूसने वाले कीड़ों का प्रकोप प्रायः अधिक होता है। अतः इनके नियंत्रण के लिए 2-3 छिड़काव करने पड़ सकते हैं।

किसी एक कीटनाशक का एक से अधिक बार प्रयोग/छिड़काव न करें। मीलीबग के प्रकोप की अवस्था में पिछले अंक में सुझाए गए उपाय अपनाएं।

## धान

फसल में पानी की कमी न होने दें। सिंचाई 5-6 सैं.मी. से अधिक गहरी न करें। खेत में खरपतवारों को कभी न पनपने दें। धान की बौनी बासमती किस्मों में प्रति एकड़ 85 किलोग्राम यूरिया को तीन बार में डालें-रोपाई पर, 3 सप्ताह बाद व 6 सप्ताह बाद। लंबी किस्म वाली बासमती धान में 24 किलोग्राम नाइट्रोजन (50 किलोग्राम यूरिया) प्रति एकड़ के हिसाब से रोपाई के 3 व 6 सप्ताह बाद आधी-आधी डालें। खाद डालते समय खेत की मिट्टी गीली हो पर उसमें पानी न खड़ा हो। खाद डालने के 12-24 घण्टे बाद खेत में पानी दें।

पत्तियों पर बदरा (ब्लास्ट) बीमारी के लक्षण नज़र आते ही प्रति एकड़ 120 ग्राम ट्राइसाइक्लाजोल (बीम या सिविक) 75 डब्ल्यू पी या 200 ग्राम कार्बेन्डाजिम के घोल का छिड़काव करें। पानी की मात्रा 200 लीटर रखें। दूसरा छिड़काव 50 प्रतिशत बालियां निकलने पर करें। बालियां निकलते समय खेत में सूखा न लगने दें। बैक्टीरियल लीफ ब्लाइट या जीवाणुज पत्ती अंगमारी जिन खेतों में आ जाए उनमें पानी लगातार न खड़ा रहने दें और न ही उस खेत का पानी दूसरे खेतों में जाने दें। ऐसे खेतों में नाइट्रोजन खाद बाद में न डालें।

यदि धान में जड़ की सूण्डी (रूट वीवल) का आक्रमण हो तो 10 किलोग्राम सेविडोल 4-जी या 10 किलोग्राम फ्यूराडान 3-जी या 4 कि. ग्रा. फोरेट 10-जी प्रति एकड़ डालें। सफेद पीठ वाला व भूरा तेला (ब्राउन प्लांट हॉपर) पौधे के तने के साथ लगा रहता है और इससे फसल छोटे-छोटे क्षेत्रों में पीली होकर सूखने लगती है। इसकी रोकथाम के लिए 10 किलोग्राम कार्बेरिल 5 प्रतिशत या मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत का धूड़ा प्रति एकड़ धूड़ें या 400 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. या 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. या 330 मि.ली. बुपरोफिजिन (ट्रिब्यून) 25 एस.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

## अरहर, मूँग, उड़द, लोबिया व सोयाबीन

खरपतवारों की समय पर रोकथाम करने के लिए निराई करें। खेत में पानी न ठहरने दें। प्रायः पत्तों पर लाल व भूरे रंग के कोणदार धब्बे (जिनके बीच का रंग सलेटी होता है) बन जाते हैं। इस बीमारी की रोकथाम के लिए लक्षण दिखते ही 600 ग्राम ब्लाइटॉक्स या ब्ल्यू कॉपर का 200 लीटर पानी में घोल बनाकर एक एकड़ फसल पर छिड़काव करें और 10 दिन के अंतर पर आवश्यकतानुसार छिड़काव दोहराएं।

मूँग, उड़द व लोबिया में विषाणु रोगों के प्रकोप से पौधों की बढ़वार

रुक जाती है तथा पत्तियां पीली, चितकबरी या झुरीदार हो जाती हैं। इनकी रोकथाम के लिए शुरू में ही रोगी पौधों को निकालकर नष्ट कर दें। ध्यान रहे कि उखाड़ते समय रोगी पौधों का संपर्क स्वस्थ पौधों से न होने पाए। सफेद मक्खी, जोकि विषाणु रोग फैलाती है, की रोकथाम के लिए 400 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. या 250 मि.ली. रोगर 30 ई.सी. या इतनी ही मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ फसल पर 10-15 दिन के अंतर पर छिड़कें।

उपर्युक्त कीटनाशक दूसरे रस चूसने वाले कीड़ों के लिए भी हैं।

### गन्ना

ईख की बंधाई शुरू कर दें। यदि अभी तक मिट्टी चढ़ाने का काम पूरा नहीं किया तो अब कर लें। इन दिनों गुरदासपुर छेदक (बोरर) की रोकथाम के लिए हर सप्ताह प्रभावित गन्नों को एकत्रित करके नष्ट करते रहें। ईख के जिन खेतों में पाइरिल्ला अधिक बढ़ रहा हो वहां इसके परजीवी गन्ना अनुसंधान केन्द्र, करनाल से लाकर छोड़ने चाहिए।

पाइरिल्ला (अल) का प्रकोप होने पर मैलाथियान 50 ई.सी. को 600 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। यदि परजीवियों की संख्या काफी हो तो कीटनाशक न छिड़कें। वैसे अपनी फसल में पाइरिल्ला बढ़ते ही परजीवी खेत में छोड़ने का प्रबंध करें। जड़ बेधक का आक्रमण हो तो अगस्त के अंत में 8 कि.ग्रा. क्विनलफॉस 5-जी प्रति एकड़ फसल में डालें व फिर हल्की सिंचाई कर दें।

### मूंगफली

घास - फूस को नष्ट करने के लिए निराई करें तथा आवश्यकतानुसार पानी लगाएं।

यदि बालों वाली सूण्डियों का आक्रमण हो तो बाजरे की फसल में बताए गए उपाय से नियंत्रण करें।

टिक्का नामक बीमारी के आक्रमण से पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। इनके नियंत्रण के लिए लक्षण दिखते ही 400-500 ग्राम मैन्कोजेब या 200-250 ग्राम बाविस्टीन को 200-250 लीटर पानी में घोल बनाकर एक एकड़ की फसल पर 10-15 दिन के अंतर पर दो बार छिड़कें।

### तिल

फायलोडी रोग को (बालियों की जगह हरी पत्तियों के गुच्छों का बनना) रोकने के लिए अभी से ही कीड़ों को नष्ट करें क्योंकि हरे तेले ही इस रोग के रोगाणु फैलाते हैं। तेले के नियंत्रण के लिए 200 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। पत्ता लपेट व फल छेदक सूण्डी के नियंत्रण के लिए 600 ग्राम कार्बेनिल 50 प्रतिशत घु.पा. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

### तोरिया

इस माह के अंत में या अगले माह के शुरू में तोरिया की बिजाई के लिए खेत की तैयारी पूरी कर लें। तोरिया की उन्नत किस्म “संगम” टी

एल 15 या टी एच 68 के बीज का प्रबंध कर लें। एक एकड़ के लिए 2 किलोग्राम बीज की आवश्यकता पड़ेगी। सिंचित तोरिया में 26 किलोग्राम यूरिया व 50 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट बिजाई के समय प्रति एकड़ प्रयोग करें, बाकी यूरिया पूरी मात्रा में न डाल सकें तो पहले पानी के साथ अवश्य डालें। असिंचित तोरिया में 35 किलोग्राम यूरिया तथा 50 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट बिजाई के समय पोरे। यदि ज़मीन में जस्ते की कमी हो तो बिजाई के समय 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट भी डालें। यदि बिजाई के समय जिंक सल्फेट नहीं डाला है और खड़ी फसल में कमी आ जाए तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट का छिड़काव करें। फसल में गंधक की कमी न आए, इसके लिए फास्फोरस का स्रोत सिंगल सुपर फास्फेट ही प्रयोग करें। यदि फास्फोरस डी.ए.पी. से दें तो 100 किलोग्राम जिप्सम भी डालें जिससे फसल में गंधक की पूर्ति हो जाए। जिस ज़मीन में पर्याप्त गंधक हो वहां गंधक डालने से कोई लाभ नहीं होगा।

### चारे की फसलें

सूडान घास व संकर हाथी घास की हरे चारे के लिए कटाई करें। वर्षा न हो तो पानी लगाएं। प्रत्येक कटाई के बाद 22 किलोग्राम व 26 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से क्रमशः सूडान घास व संकर हाथी घास में दें। ज्वार व बाजरा की चारे वाली फसलों में बिजाई के 30-35 दिन बाद 22 किलोग्राम तथा मकचरी में 44 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ दें। वर्षा न हो तो पानी लगाएं।



## सब्जियों में

**विशेष :** सब्जियों की सभी फसलों में अधिक वर्षा होने पर जल निकास का प्रबंध करें।

### बैंगन

पिछली फसल के कच्चे फलों को तोड़कर बाज़ार बेचने के लिए भेज दें। तोड़ने के लिए तेज़ चाकू या अन्य तेज़ धार वाले औज़ार का प्रयोग करें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। खरीफ की नई लगाई गई फसल में निराई-गुड़ाई करें। पौधरोपण के लगभग तीन-चार सप्ताह बाद प्रति एकड़ लगभग 100 किलोग्राम यूरिया खड़ी फसल में दें तथा सिंचाई करें। अधिक वर्षा होने पर जल-निकास का प्रबंध करें। विषाणु रोग से बचाव के लिए कीटनाशक दवा का प्रयोग करें तथा रोगी पौधों को निकाल कर नष्ट कर दें। रस चूसने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए 15 दिन के अंतर पर 300-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200 से 250 लीटर पानी में प्रति एकड़ छिड़कें। फल लगने पर सूण्डी का आक्रमण होने लगता है, अतः 75 ग्राम स्पाइनोसेड (ट्रेसर 45 एस.सी.) 200 लीटर पानी में 15 दिन के अंतर पर प्रति एकड़ छिड़कें। दवा प्रयोग करने से पहले फसल से बैंगनों को तोड़ लें तथा दवा छिड़कने के 8-10 दिन तक इन्हें सब्जी के काम में न लें। कीड़े से मुरझाई कोंपलों और काने फलों को हर सप्ताह तोड़कर ज़मीन में दबाते रहें।

## मिर्च

पिछले माह रोपी गई फसल में निराई-गुड़ाई करें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। अधिक वर्षा होने पर पानी के निकास का प्रबंध करें। पौधरोपण के लगभग तीन-चार सप्ताह बाद प्रति एकड़ 18 किलोग्राम यूरिया (8 किलोग्राम नाइट्रोजन) खड़ी फसल में देकर सिंचाई करें। विषाणु रोग से बचाव के लिए शुरू से ही 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ खेत पर छिड़कें तथा रोगी पौधों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। इसी कीटनाशक के प्रयोग से मिर्च के अन्य हानिकारक कीटों (थ्रिप्स, अल और सफेद मक्खी) का भी नियंत्रण हो जाता है।

## फूलगोभी अगेती

अगेती किस्मों (पूसा कातकी व पूसा दीपाली) की पौध की तैयार खेत में रोपाई करें। खेत की तैयारी पिछले माह बताए गए तरीके से करें। पौधरोपण शाम के समय करें तथा उसके बाद सिंचाई करें। खेत में से नियमित रूप से खरपतवार निकालें तथा यदि सूखा भाग हो तो सिंचाई करें। अधिक वर्षा होने पर खेत से जल-निकास का प्रबंध करें। मध्यम वर्ग की फूलगोभी की बिजाई इस माह नर्सरी में करें। एक एकड़ के लिए 250 से 300 ग्राम बीज की आवश्यकता होगी। नर्सरी में पौध की उचित देखभाल करें।

## भिण्डी

गर्मी की फसल से भिण्डी की नर्म फलियां नियमित रूप से तोड़कर बाज़ार भेजें। यदि आवश्यकता पड़े तो सिंचाई करें। अधिक वर्षा होने पर खेत से जल-निकास का प्रबंध करें। रस चूसने वाले कीड़ों के नियंत्रण के लिए 300-500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-300 लीटर पानी में 15 दिन के अंतर से प्रति एकड़ छिड़कें। फल लगने शुरू होते ही 400-500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. तथा 400-500 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. या 75-80 मि.ली. स्पाइनोसेड 45 एस जी को बारी-बारी से 250-300 लीटर पानी में 15 दिन के अंतर से प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें। ऐसा करने से फल की सूण्डी का भी नियंत्रण हो जाएगा। कीटनाशक छिड़कने से पहले फलों को तोड़ लें तथा छिड़काव के बाद एक सप्ताह तक फलों को खाने के काम में न लें।

जुलाई में बोई फसल से खरपतवार शुरू से ही निकालते रहें। आवश्यकतानुसार सिंचाई करें या जल निकास करें। खड़ी फसल में बिजाई के लगभग तीन-चार सप्ताह बाद लगभग 30 कि.ग्रा. यूरिया (14 किलोग्राम नाइट्रोजन) देकर सिंचाई करें। पीली शिराओं वाले विषाणु रोग से बचाव के लिए कीटनाशक दवा प्रयोग करें तथा 6-7 दिन तक भिण्डी न तोड़ें। रोगी पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें।

## कहू जाति की सब्जियां

गर्मी की फसल के कच्चे फलों को तोड़कर बाज़ार भेजें। इस वर्ग की प्रमुख सब्जियां, घीया, टिण्डा, करेला, तोरी, कहू व खीरा हैं। हानिकारक कीड़ों से बचाव के लिए जून माह में बताई गई दवा का प्रयोग करें। वर्षा ऋतु में बीजी गई फसलों से खरपतवार निकालें, आवश्यकता होने पर

सिंचाई करें। अधिक वर्षा होने पर पानी के निकास का प्रबंध करें। बिजाई के लगभग एक माह बाद 14 किलोग्राम यूरिया (6 किलोग्राम नाइट्रोजन) प्रति एकड़ की दर से खेत में देकर सिंचाई करें।

लालड़ी (लाल भूंडी) का प्रकोप होने पर 100 ग्राम कार्बेरिल 50 प्रतिशत घु.पा. 100 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़कें या एक एकड़ खेत में 5 किलोग्राम सेविन 5 प्रतिशत 5 किलोग्राम राख का धूड़ा करें। विषाणु रोग के प्रभाव से पत्तों पर हरे पीले रंग का चितकबरापन या गहरे-हरे रंग के फफोले बन जाते हैं तथा पत्तियां कड़ी हो जाती हैं। इनसे बचाव के लिए रोगी पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। इस रोग को फैलाने वाली मक्खी और दूसरे रस चूसने वाले कीड़ों के लिए 250 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। फल की मक्खी की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 500 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. को 1.25 किलोग्राम गुड़ और 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें।

## शकरकन्दी

शकरकन्दी की फसल से नियमित रूप से खरपतवारों को निकालें व आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। अधिक वर्षा होने पर जल-निकास का प्रबंध करें। फसल लगाने के लगभग 4 सप्ताह बाद 18 किलोग्राम यूरिया (8 कि.ग्रा. नाइट्रोजन) प्रति एकड़ की दर से डालकर सिंचाई करें।

## अरबी

अरबी की फसल की निराई-गुड़ाई करें, आवश्यकता होने पर सिंचाई करें, अधिक वर्षा में जल-निकासी का प्रबंध करें। बिजाई के लगभग चार-पांच सप्ताह बाद 18 किलोग्राम यूरिया (8 कि.ग्रा. नाइट्रोजन) प्रति एकड़ की दर से खेत में देकर सिंचाई करें।

## पालक

पहले लगाई फसल की आवश्यकता होने पर सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें। कटाई लायक होने पर पत्तों को काटें तथा बंडलों में बांधकर बाज़ार भेजें। नई बीजी गई फसल की भी देखभाल करें। बिजाई के लगभग 4 सप्ताह बाद 30 किलोग्राम यूरिया (14 किलोग्राम नाइट्रोजन) प्रति एकड़ खेत में देकर सिंचाई करें। पालक की बिजाई इस माह भी की जा सकती है।

## मूली, शलगम व गाजर

मूली की पहली बीजी गई फसल की देख-रेख करें, जड़ों को उखाड़कर तथा धोकर बाज़ार भेजें। इस माह मूली, शलगम व गाजर की देसी (अगेती) किस्मों की बिजाई की जा सकती है। मूली की किस्मों में पूसा चेतकी, शलगम की किस्म 4 हार्डट तथा गाजर की किस्म पूसा केसर बीजें। गाजर का 4-5 किलोग्राम तथा मूली या शलगम का 2-3 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ काफी होता है। समय से खेत की तैयारी करें। एक एकड़ में लगभग 20 टन गोबर की सड़ी खाद, 26 कि.ग्रा. यूरिया (12 कि.ग्रा. नाइट्रोजन) 80 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट (12 कि.ग्रा. फास्फोरस) प्रति एकड़ देकर खेत तैयार करें। गाजर की फसल के लिए ऊपर दी गई खाद के अलावा लगभग 20 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश (12 कि.ग्रा.



पोटाश) भी खेत तैयार करते समय प्रति एकड़ की दर से दें। बिजाई का फासला कतारों में 30-45 सें.मी. व पौधों में लगभग 8 सें.मी. रखें। उचित होगा कि छोटी डोलियां बनाकर बिजाई करें।

### खरीफ प्याज

खेत तैयार करें। 10-12 टन गोबर की खाद प्रति एकड़ अच्छी तरह मिला लें। 25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (55 कि.ग्रा. यूरिया) तथा 15 कि.ग्रा. फास्फोरस (95 कि.ग्रा. सिंगल सुपरफास्फेट) प्रति एकड़ की दर से देकर खेत को क्यारियों में बांट लें। नर्सरी में तैयार पौधों की कतारों में 15 सें.मी. की दूरी पर रोपाई करें। पौध से पौध की दूरी 10 सें.मी. रखें। उचित होगा कि हल्की डोलियों पर पौधरोपण करें। पौधरोपण का उचित समय अगस्त का दूसरा पखवाड़ा या सितम्बर का प्रथम सप्ताह है।

### अन्य सब्जियां

अगेती बंदगोभी के लिए इस माह के दूसरे पखवाड़े में नर्सरी में बिजाई शुरू की जा सकती है। अगेती किस्में 'प्राइड ऑफ इण्डिया' व (गोल्डन एकड़) प्रयोग में लें। एक एकड़ खेत के लिए लगभग 250-300 ग्राम बीज काफी होता है व बिजाई से पहले बीज को कैप्टान से उपचारित करें।

### टमाटर तथा बैंगन में जड़ गाँठ सूत्रकृमि की रोकथाम

जुलाई में बोई गई दोनों सब्जियों की नर्सरी अब तक रोपाई के लिए तैयार हो जाती है। सारे खेत में दवाई डालने से आने वाली अधिक कीमत व दवाई के न मिलने पर अरंड अथवा आक के बारीक काटे हुए पत्तों को 8 कि.ग्रा./वर्गमीटर की दर से रोपाई के 15-20 दिन पहले खेत में मिलाना इस सूत्रकृमि के लिए अत्यधिक प्रभावशाली पाया गया है। इन पौधों के पत्ते आसानी से खेतों के आसपास ही मिल जाते हैं और प्रभावित जगहों में डालने के लिए प्रयोग किए जा सकते हैं।

**खुम्ब उत्पादन :** इस महीने में खुम्ब की ढींगरी तथा सफेद दूधिया खुम्ब का उत्पादन किया जा सकता है।



## फलों में

### अंगूर

अंगूर की बेलों पर शाखाओं को ज़्यादा न बढ़ने दें व लगभग एक मीटर तक रखकर सिरा चूंड दें। यदि ज़मीन में नमी नहीं है तो हल्की सिंचाई करें।

एंथ्रेक्नोज तथा अन्य बीमारियों से बचाव के लिए जुलाई के अंतिम सप्ताह, अगस्त के दूसरे व अंतिम सप्ताह में 0.2 प्रतिशत बेनलेट या बाविस्टिन का छिड़काव करें।

अंगूर में प्रायः पत्ते खाने वाली भूण्डियां तथा बालों वाली सूण्डियां आती हैं। इनकी रोकथाम के लिए 400 मि.ली. डाइक्लोरोवास 76 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़कें। इन कीड़ों का

आक्रमण बेर, आड़ू, अलूचा आदि फलों पर होता है। उन पर भी इन्हीं दवाइयों का प्रयोग करें। थ्रिप्स (चूरड़ा) के नियंत्रण के लिए 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 150 मि.ली. फेनवेलरेट 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

### बेर, आंवला, अमरूद व जामुन

देसी पौधों में अच्छी किस्म का पेबंद चढ़ाने का इस महीने सबसे अच्छा समय है। अतः विश्वसनीय स्थान से उन्हीं किस्मों की कली की शाखा प्राप्त करके पेबंद चढ़ाने का प्रबंध करें।

### किस्में

**बेर :** गोला, कैथली, उमरान।

**आंवला :** चकईया, नीलम (एन ए 7), बलवंत (एन ए 10)।

**अमरूद :** हिसार सफेदा, हिसार सुरखा।

### अमरूद

यदि पिछले महीने खाद न डाली हो तो इस महीने खाद व उर्वरक पौधों की उम्र के हिसाब से डालें।

### अन्य फल

फलदार पौधे लगाने के लिए बरसात का मौसम सबसे अच्छा रहता है। अच्छी वर्षा होने पर आप पिछले महीने बताए गए पौधे लगाएं व नियमित सिंचाई और गुड़ाई करते रहें।



## पशुओं में

### गाय-भैंस

वर्षा ऋतु आरंभ हो गई है। अतः गलघोंटू व फड़ सूजने की बीमारी से बचाव के टीके यदि न लगवाए हों तो लगवा दें। जब पशु सायं को बाहर से आता है तो यह ध्यान से देखें कि पशु ने चारा खाना तो नहीं छोड़ दिया। यदि पशु ने चारा खाना छोड़ दिया हो तो आप उसका तापमान लें। यदि उसे बुखार है तो आप अपने नज़दीकी पशु चिकित्सक से संपर्क करें।

पशु से पूरा दूध लेने व नियमित नए दूध में लाने के लिए उसे हरे चारे के साथ 50-60 ग्राम खनिज मिश्रण संतुलित आहार के साथ आवश्यकतानुसार दें।

बरसात में पशु घरों को सूखा रखें और कीचड़ से बचाएं। मक्खी रहित करने के लिए पशु घरों में फिनाइल आदि का घोल छिड़कें। यदि पशुओं को जुएं या चीचड़ लग गई हों तो उन पर 0.5 प्रतिशत मैलाथियान या सुमिथियान तथा पशुओं के आवास में चारों तरफ तथा दीवारों पर मैलाथियान या सुमिथियान 1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। पशुओं को साफ पानी पिलाएं अन्यथा उनके पेट में कीड़े हो जाते हैं। उनको कीड़ों से मुक्त करने के लिए कृमिनाशक दवा पशु चिकित्सक की सलाह से नियमित रूप से दें।

नवजात बछड़े-बछड़ियों तथा कटड़े-कटड़ियों को शुद्ध वातावरण में रखें। उन्हें बीमारी से बचाने के लिए जन्म के पश्चात् आधे से 1 घण्टे के अंदर तथा प्रथम 2-3 दिन खीस अवश्य पिलाएं। खीस पिलाने के लिए जेर गिरने की इन्तज़ार नहीं करनी चाहिए। पैदा होते ही उनके सूण्ड (नाल) को साफ ब्लेड या कैंची से काटकर टिंचर-आयोडीन लगा दें और साफ पट्टी बांध दें। ऐसा करने से सूण्ड सूजने के रोग से बचाव हो सकता है।

### भेड़

इस मौसम में भेड़ों को एन्टरोटाक्सिमिया रोग लग जाता है जिसके कारण उनकी आंतों में सूजन आ जाती है। इस रोग से बचाव के लिए अपनी भेड़ों को इस बीमारी से बचाव का टीका अवश्य लगवाएं। भेड़ों के पेट में आजकल के मौसम में कीड़े हो जाते हैं जिसके कारण उनमें बढ़ने की शक्ति कम हो जाती है तथा उनमें ऊन का उत्पादन भी कम हो जाता है। अपने पशु चिकित्सक की सलाह से भेड़ों को नियमित रूप से कृमिनाशक दवा पिलाएं।

### कुक्कुट

1. चूजों के ठीक पालन व मुर्गियों से अच्छा अण्डा उत्पादन के लिए यह ज़रूरी है कि गर्मी के मौसम में उनकी खुराक में कमी न हो। खुराक ऐसी हो जो मुर्गियों द्वारा अधिक से अधिक खाई जा सके। इसके लिए खुराक में “प्रोटीन” व विटामिनों की मात्रा बढ़ा दें।
2. मुर्गीघरों में “डीप लिटर” को दूसरे या तीसरे दिन उलट देना चाहिए। “डीप लिटर” गीला रहने से बीमारी फैल जाती है। फफूंद लगी खुराक या वर्षा से भीगी खुराक मुर्गियों को नहीं खिलानी चाहिए।
3. मुर्गीघरों में साफ हवा जानी चाहिए और अधिक मुर्गियों को एक स्थान पर इकट्ठा नहीं होने देना चाहिए। मुर्गीघरों के आसपास पूरी सफाई रखें। मक्खियां व मच्छर मुर्गियों को परेशान करते हैं, जिससे अण्डों की पैदावार घटती है।
4. अण्डे देने वाली मुर्गियों को पुलोरम रोग होने की संभावना हो सकती है। अतः इसकी जांच कराएं।
5. पशु चिकित्सक की सलाह से पेट को कीड़ों से रहित रखने की दवा दें।
6. यदि मुर्गियों के शरीर पर जुएं व चीचड़ियां हों तो पशु चिकित्सक की सलाह से उन्हें तुरंत नष्ट करें।



## घर-आंगन में

### घर-आंगन में

हमारे देश में कुपोषण का मुख्य कारण अज्ञानता है। हरी पत्तेदार सब्जियों द्वारा मिलने वाले पोषक तत्वों की कमी हमारे देश में प्रायः पाई जाती है। हरी सब्जियों को घरों में बहुत आसानी से उगाया जा सकता है। हरी पत्तेदार सब्जियां खनिज और विटामिनों का भण्डार होती हैं। इनमें

आयरन (लोहा), कैल्शियम, विटामिन ‘ए’, विटामिन ‘सी’, फोलिक एसिड तथा रेशे पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे उत्तम श्रेणी के प्रोटीन भी पाए जाते हैं जो स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी हैं क्योंकि ये जीव विष को कम करने में सहायक होते हैं। पत्तेदार सब्जियों में उपस्थित आहार रेशा कब्ज को दूर करने में तथा खून को साफ करने में बहुत सहायक है। इसके अतिरिक्त हरी पत्तेदार सब्जियां आंखों के लिए भी अच्छी हैं। अतः दैनिक आहार में हरी पत्तेदार सब्जियों को परम्परागत व्यंजनों में जैसे चपाती, परांठा, चटनी, मिस्सी रोटी, पूरी, दाल, खिचड़ी, उपमा इत्यादि में प्रयोग करते रहना चाहिए। जब यह सब्जियां आसानी से कम मूल्य में उपलब्ध हों तो इन्हें सुखाकर रखा जा सकता है तथा बेमौसम में इनका इस्तेमाल किया जा सकता है।



### (पृष्ठ 12 का शेष)

3. किसानों की बची हुई फसल (ज़रूरत से अधिक उपज) की 100 प्रतिशत कीमत को उत्पादन पश्चात हस्तक्षेप से अधिग्रहण करना।
4. बाज़ार हस्तक्षेप तथा फसल उत्पादन के बाद की प्रक्रियाओं को प्राथमिकता देना।
5. किसानों की उपज को रोकने की क्षमता को बढ़ाना।
6. सूखे व गीले भंडारण की बुनियादी अवसंरचना को मज़बूत करना।
7. नई बाज़ार पहलों जैसे इलैक्ट्रॉनिक व्यापार, एकल व्यापारी लाइसेंस, बाज़ार शुल्क के लिए एकमात्र बिन्दु, बाज़ार शुल्क पर नियंत्रण, अनुबंध खेतों को बढ़ाना, कृषि मूल्य प्रणाली मंच का गठन, प्रत्येक किसान को मूल्य शृंखला में एकीकृत करना तथा 25 प्रतिशत विस्तार एवं आत्मा कर्मियों को विपणन के काम में लगाना आदि शामिल हैं।
8. उत्पादन में सतत् प्रथाओं जैसे कि जल संरक्षण, एकीकृत खेती प्रणाली, वाटर शेड प्रबंधन, जैविक खेती आदि को लागू करना।
9. खेती से जुड़ी गतिविधियों एवं सहायक कृषि क्षेत्रों जैसे मधुमक्खी पालन, मशरूम की खेती, खाद बनाना, लाख की खेती, कृषि वानिकी आदि को बढ़ावा देना।
10. कृषि विस्तार कार्यक्रमों में नई शक्ति डालना, विस्तार कर्मियों की रिक्तियों को भरना, विस्तार कार्यों के लिए मानव शक्ति व आई.सी.टी. के समावेश पर बल देना।
11. अन्य संरचनात्मक सुधारों पर ध्यान देना।

वर्तमान में सरकार के सभी चालू कार्यक्रमों एवं प्रयासों का एक मात्र लक्ष्य किसानों की आमदनी को 2022 तक दोगुना करना और इसके लिए समिति की रिपोर्ट के अनुसार जो भी कदम उठाना है, सरकार उसके लिए कृत संकल्प है। इसी रास्ते पर आगे बढ़ते हुए यह विश्वास जगा है कि आज़ाद भारत में खुशहाल किसान के लक्ष्य को पाया जा सकता है।

**स्रोत :** कृषि एवं किसान कल्याण विभाग, भारत सरकार।

“जय जवान, जय विज्ञान, जय किसान”



# बीज का महत्व व उपयोगिता

✍ सूर्यपाल सिंह एवं हर्षिता सिंह

सब्जी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है, जिसकी अर्थव्यवस्था में कृषि रीढ़ की हड्डी के समान है। जहाँ 60-68 प्रतिशत तक लोग या तो कृषि या उस से जुड़े व्यवसाय में लिप्त हैं। हमारे देश प्रदेश में हमारी आजीविका का प्रमुख साधन कृषि है। हमेशा से और आज भी कृषि उत्पादन में बीजों की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण रही है। बीज खेती की नींव का आधार और मूलमंत्र है। अतः अच्छी गुणवत्ता वाले बीज से फसलों का भरपूर उत्पादन प्राप्त होता है।

उत्तम गुणवत्ता वाला बीज सामान्य बीज की अपेक्षा 20 से 25 प्रतिशत अधिक कृषि उपज देता है। अतः शुद्ध एवं स्वस्थ “प्रमाणित बीज” अच्छी पैदावार का आधार होता है। प्रमाणित बीजों का उपयोग करने से जहाँ एक ओर अच्छी पैदावार मिलती है वहीं दूसरी ओर समय एवं पैसों की बचत होती है, किसान भाई अगर अशुद्ध बीज बोते व तैयार करते हैं तो उन्हें इससे न अच्छी पैदावार मिलती है और न बाजार में अच्छी कीमत। अशुद्ध बीज बोने से एक ओर उत्पादन तो कम होता ही है और दूसरी ओर अशुद्ध बीज के फलस्वरूप भविष्य के लिए अच्छा बीज प्राप्त नहीं होता है बल्कि अशुद्ध बीज के कारण खेत में खरपतवार उगने से नौदा नियंत्रण के लिए अधिक पैसा खर्चा करना एवं अन्त में उपज का बाज़ार भाव कम प्राप्त होता है, जिससे किसानों को अपनी फसल का उचित लाभ नहीं प्राप्त होता है। यदि किसान भाई चाहें कि उनके अनावश्यक खर्चें घटें और अधिक उत्पादन व आय मिले तो उन्हें फसलों के प्रमाणित बीजों का उत्पादन एवं उपयोग करना होगा। देश के प्रधानमन्त्री का संकल्प 2022 तक किसानों की आमदनी दुगुनी करने का प्रयास बीज उत्पादन के माध्यम से साकार किया जा सकता है। कृषि उत्पादन में बीज का महत्वपूर्ण योगदान है। एक ओर जैसा बोओगे वैसा काटोगे यह बात किसानों की समझ में आनी चाहिए इसलिए अच्छी किस्म के बीजों का उत्पादन ज़रूरी है। दूसरी ओर सर्व गुणों युक्त उत्तम बीज की कमी रहती है। इसलिए बीज उत्पादन को उद्योग के रूप में अपनाकर कृषक जहाँ स्वयं के लिए उत्तम बीज की मांग की पूर्ति कर सकते हैं, वहीं इसे खेती के साथ-साथ रोज़गार स्वरूप अपनाकर अतिरिक्त आय का साधन बना सकते हैं तथा राज्य के कृषि उत्पादन को बढ़ाने में सहयोग दे सकते हैं।

**मनुस्मृति में कहा गया है:**

क्षेत्रे बीजमुत्सृष्टमन्तरैव विनश्यति।

बीजकमपि क्षेत्रं केवलं स्थण्डिलं भवेत्॥

सुबीजम् सुक्षेत्रे जायते संवर्धते

उपरोक्त श्लोक द्वारा स्पष्ट किया गया है कि अनुपयुक्त भूमि में बीज बोने से बीज नष्ट हो जाते हैं और अबीज अर्थात् गुणवत्ताहीन बीज भी खेत में केवल लाथड़ी बनकर रह जाता है। केवल सुबीज-अर्थात् अच्छा बीज ही अच्छी भूमि से भरपूर उत्पादन दे सकता है। अब यह जानना आवश्यक है कि सुबीज क्या है सुबीजम् सु तथा बीजम् शब्द से मिल कर बना है। सु का अर्थ अच्छा और बीजम् का अर्थ बीज अर्थात् अच्छा बीज। अच्छा बीज जानने के पूर्व यह जानना भी आवश्यक है कि बीज क्या है? व्यावसायिक दृष्टि से बीज की परिभाषा के अंतर्गत लैंगिक जनन द्वारा उत्पन्न बीज के साथ-साथ फल, तना, जड़ व अन्य प्रवर्धन सामग्री से है जो अनुकूल वातावरणीय परिस्थितियों नमी, ताप, वायु व प्रकाश की सुलभता और मृदा के संपर्क में नये पौधे में विकसित हो जाता है।

देश में हरित क्रांति की नींव हाईब्रीड, उच्च उपज देने वाले बीज थे। 1963 में सरकार ने नींव और प्रमाणित बीज का निर्माण करने के लिए राष्ट्रीय बीज निगम (एनएससी) की स्थापना की। एनएससी और राज्य बीज निगमों ने गेहूँ, चावल, मक्का, बाजरा आदि जैसे फसलों के उच्च उपज के बीज के उत्पादन में सहायनीय सेवा की है। लेकिन ये सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियाँ अनाजों के लिए बीज के उत्पादन से आगे नहीं आ सकीं। धीरे-धीरे, उनका काम गिरावट पर चला गया। चूँकि, निजी क्षेत्र इस गतिविधि के लिए नहीं खोला गया, गुणवत्ता वाले बीज उत्पादन खंड हमेशा उपेक्षित रहा। 1991 के एलपीजी सुधारों के बाद, निजी बहुराष्ट्रीय निगमों को भारत के बीज बाज़ार में प्रवेश करने की अनुमति दी गई थी। लेकिन इन कंपनियों ने गैर-फूड, उच्च मूल्य और कम मात्रा में फसलों में काम करना पसंद किया क्योंकि उच्च लाभ इसी से मिला इससे फलों, सब्जियों और अन्य गैर खाद्य फसलों जैसे कि कपास में इन कंपनियों की आय में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई। कपास एक गैर-खाद्य फसल है जिसका बम्पर उत्पादन निजी क्षेत्र से संकर और बीटी बीज की उपलब्धता के कारण है। हालांकि, गेहूँ, चावल और अन्य स्टेपल के लिए गुणवत्ता वाले बीज का उत्पादन मुख्य रूप से सार्वजनिक क्षेत्र में रहा। इस असंतुलन का असर यह था कि एक तरफ, कम मूल्य वाली उच्च मात्रा की फसलों जैसे कि स्टेपल के लिए गुणवत्ता के बीज की अपर्याप्त उपलब्धता थी।

स्थायी कृषि के लिए बीज मूल और सबसे महत्वपूर्ण इनपुट है अन्य सभी आदानों की प्रतिक्रिया बड़े पैमाने पर बीज की गुणवत्ता पर निर्भर करती है यह अनुमान लगाया जाता है कि कुल उत्पादन के लिए अकेले गुणवत्ता वाले बीज का प्रत्यक्ष योगदान फसल के आधार पर लगभग 15-20 प्रतिशत है और इसे अन्य इनपुट के कुशल प्रबंधन के साथ 45 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है भारत में बीज उद्योग में विकास, विशेष रूप से पिछले 30 वर्षों में, बहुत महत्वपूर्ण हैं, जिसने उस बुनियादी ढांचे को मज़बूत किया जो कि उस समय के सबसे ज़रूरी और प्रासंगिक थे। यह बीज उद्योग को एक संगठित आकार देने में एक पहला कदम के रूप में कहा जा सकता है। नई बीज विकास नीति (1988) लागू होना भारतीय बीज उद्योग में एक और महत्वपूर्ण मील पत्थर था, जिसने बीज उद्योग के स्वरूप को बदल दिया। इसी नीति के कारण सर्वश्रेष्ठ बीज तक किसानों की पूरी दुनिया में पहुंच बनी जिससे हमारी उत्पादकता बढ़ी और आज हम अन्न उत्पादन में स्वावलंबी हैं। इस नीति ने भारतीय बीज क्षेत्र में निजी व्यक्तियों, भारतीय कॉर्पोरेट और बहुराष्ट्रीय कंपनियों को प्रोत्साहित किया। परिणाम स्वरूप देश में बीज की उपलब्धता बढ़ी और किसानों को यह आसानी से मिलने लगा और एक कठिन कार्य सरल हुआ। हालांकि, राज्य बीज निगमों के लिए एक ज़रूरी आवश्यकता है कि वे बुनियादी ढांचे, तकनीकों, दृष्टिकोण और प्रबंधन संस्कृति के मामले में उद्योग के साथ तालमेल बनाने के लिए प्रतिस्पर्धी बाज़ार में जीवित रहने और राष्ट्र में अपने योगदान को बढ़ाने के लिए सक्षम हो।

किसान मेलों में बीज खरीद के लिए लम्बी कतार इस बात का प्रमाण है कि मांग और पूर्ति में आज भी एक अंतर है। युवा एवं प्रगतिशील इस दिशा में पहल कर बीज उत्पादन से स्वरोज़गार के आयाम साथापित कर इसे आय सृजन का साधन बना सकते हैं। किसान भाई किसानों का अपना समूह बना कर बीज उत्पादन शुरू कर सकते हैं। आजकल 100 करोड़ तक की किसान के एफ पी ओ या किसान कम्पनी पंजीकरण के बाद आय कर में छूट प्राप्त कर सकते हैं। यह उन किसानों के लिए अवसर प्रदान करेंगे जो उच्च गुणवत्ता के बीज पैदा कर अपनी आय सृजन के साथ-साथ दूसरे किसानों के लिए अच्छे बीज उपलब्ध करा सकेंगे।





## शतावरी : प्रकृति का एक वरदान

प्रियंका रानी, वर्षा रानी एवं नीलम खेतरपाल

खाद्य एवं पोषण विभाग

गृह विज्ञान महाविद्यालय

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

शतावर या शतावरी एक गुणकारी औषधीय पौधा है। प्रायः इस पौधे की जड़ को सुखाकर व पाऊंडर बनाकर प्रयोग में लाया जाता है। इस पाऊंडर में सौ से भी अधिक बीमारियों को ठीक करने की क्षमता पायी जाती है। इसलिए इसे शतावरी (शत् अर्थात् सौ) कहा जाता है। शतावर का पाऊंडर महिलाओं के लिए वरदान है। इसकी जड़ में सेपोनिन नाम का एक रासायनिक तत्व पाया जाता है जोकि महिलाओं में स्त्रावित हार्मोन को नियंत्रित करता है। शतावर (शतावरी) की जड़ का उपयोग मुख्य रूप से



ग्लैक्टागोज़ के लिए किया जाता है जो स्तन दुग्ध के स्राव को उत्तेजित करता है। शतावरी में पाये जाने वाले पोषक तत्व स्तनपान कराने वाली माताओं में दूध की मात्रा को बढ़ाने के साथ-साथ दूध की गुणवत्ता को भी बेहतर करते हैं। ग्लैक्टागोज़ के अलावा, स्त्रियों में बांझपन व गर्भपात जैसी गंभीर समस्याओं से निजात पाने के लिये, शरीर से कम होते वजन को बढ़ाने एवं महिलाओं के स्तनों के विकास में भी शतावरी पाऊंडर का उपयोग सहायक है। इसकी जड़ का उपयोग अतिसार, पेचिश, सूजन, कैंसर, टी.बी. (क्षय रोग), हृदय रोग तथा मधुमेह के उपचार में भी किया जाता है। सामान्य तौर पर यह स्वस्थ रहने तथा रोगों के प्रतिरक्षण के लिए उपयोग में लाया जाता है। यह कमजोर शरीर प्रणाली में एक बेहतर शक्ति प्रदान करता है। इसमें पाये जाने वाले एंटीऑक्सीडेंट तत्व शरीर की रोगों से लड़ने में सहायता करते हैं एवं बढ़ती उम्र के लक्षणों को भी कम करते हैं। शतावरी का पाऊंडर जोड़ों के दर्द एवं मिर्गि में भी लाभप्रद होता है। इसका उपयोग शारीरिक एवं मानसिक कार्य क्षमता बढ़ाने के लिए भी किया जाता है।

शतावरी पाऊंडर महिलाओं एवं किशोरियों में मासिक धर्म से जुड़ी अनियमितताओं को दूर करने में सहायक है जैसे कि मासिक धर्म का समय से पहले आना या देर से आना तथा इसके दौरान होने वाले दर्द व चिड़चिड़ापन को भी कम करता है। यह महिलाओं में रजोनिवृत्ति से जुड़ी समस्याएं जैसे कि अनिद्रा, थकान, पसीना आना, मानसिक तनाव इत्यादि को कम करने में भी लाभकारी है। इसलिए यह हर उम्र और वर्ग की महिलाओं के लिए प्रकृति का एक वरदान है।

अतः शतावरी के पाऊंडर का प्रयोग नियमित रूप से किया जाये तो इसके गुणों का पूर्ण लाभ उठाया जा सकता है तथा शरीर को पूर्ण रूप से स्वस्थ रखा जा सकता है। इस पाऊंडर का प्रयोग आमतौर पर खाये जाने वाले खाद्य पदार्थों जैसे हलवा, लड्डू, पंजीरी, बर्फी बनाने में किया जा सकता है तथा इसे बिस्किट व केक में भी प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार शतावरी पाऊंडर के प्रयोग से बने उत्पाद महिलाओं के लिए पूर्णतया स्वास्थ्यवर्धक और लाभकारी होंगे।

## केंचुआ एवं वर्मीकम्पोस्ट पृथक्करण संयंत्र

यादविका, रवीना कारगवाल एवं एम. के. गर्ग

प्रसंस्करण एवं खाद्य अभियांत्रिकी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

### पोर्टेबल केंचुआ पृथक्करण संयंत्र का प्रदर्शन/मूल्यांकन

किसानों द्वारा केंचुए और खाद को पृथक् करने के लिए परम्परागत तरीके का प्रयोग किया जाता है जिसमें कई दिन का समय लग जाता है और ये तरीका कठिन भी होता है। इस समस्या को दूर करने के लिए चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार के कृषि अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय के प्रसंस्करण एवं खाद्य अभियांत्रिकी विभाग ने पोर्टेबल केंचुआ पृथक्करण संयंत्र विकसित किया है। इस संयंत्र का कार्य खाद से केंचुए को अलग करने के पारंपरिक तरीके से भिन्न है। इस मशीन में एक वर्गाकार जाली वाला सिलेंडर लगा हुआ है जो कि हैंडल के साथ जुड़ा हुआ है। हैंडल की सहायता से सिलेंडर को घुमाया जाता है जिससे खाद व केंचुए का मिश्रण अलग-अलग हो जाता है। मशीन के अंत में एक होपर लगा हुआ है जिसमें खाद और केंचुए का मिश्रण डाला जाता है। अलग किए हुए केंचुए दुबारा से खाद उत्पादन के लिए उपयोग किये जा सकते हैं।

### केंचुआ पृथक्करण संयंत्र के भाग :-

**सिलेंडर :** सिलेंडर वर्गाकार जाली से बना हुआ है जो कि हैंडल के साथ जुड़ा हुआ है। केंचुए को खाद से अलग करने के लिए सिलेंडर को हैंडल की सहायता से घुमाया जाता है। सिलेंडर की लम्बाई 95 सें.मी. है।

**हैंडल :** हैंडल का प्रयोग सिलेंडर को घुमाने के लिए होता है।

**निकास द्वार :** मशीन में दो निकास द्वार हैं। एक केंचुए की निकासी के लिए और दूसरा खाद के लिए।

**हौपर :** हौपर में केंचुए और खाद के मिश्रण को डाला जाता है। इसका आकर 25 × 23 सें.मी. है।

फ्रेम, रिम तथा वॉल बियरिंग आदि इसके अन्य भाग हैं।

### केंचुआ पृथक्करण संयंत्र के लाभ

- ❖ इस संयंत्र से केंचुए बिना किसी घाव (शरीर पर बिना रगड़) के आसानी से अलग हो जाते हैं।
- ❖ यह मशीन खाद और केंचुए के विभाजन के लिए कुशल और सुविधाजनक है।
- ❖ इस मशीन को चलाने के लिए प्रशिक्षण लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती।
- ❖ यह एक पोर्टेबल संयंत्र है जिसे आसानी से स्थानान्तरित किया जा सकता है।
- ❖ पारम्परिक तरीके से केंचुए को खाद से अलग करने में कई दिन लग जाते हैं परन्तु इस पोर्टेबल संयंत्र से बहुत ही कम समय में यह कार्य किया जा सकता है। जैसे कि 2 किलो खाद को केंचुए से अलग करने

में 1 मिनट का समय लगता है।

❖ इसकी कार्यक्षमता 90 प्रतिशत से अधिक आँकी गयी है।



कीमत : इसकी कीमत लगभग 2000 रु है जो कि छोटे किसान की पहुँच में है।

#### तालिका

मापदण्ड	माप (सैं.मी.)
ऊपरी अंत की ऊंचाई	69
फ्रेम की निकास द्वार से ऊंचाई	59
सिलेंडर की लंबाई	95
सिलेंडर व्यास	42
फ्रेम की चौड़ाई	52
झुकाव कोण	240
फ्रेम की लंबाई	122
शाफ्ट की लंबाई	144
हैंडल की लंबाई	15.5
हौपर का साईज	2523

**केंचुए एवं वर्मीकम्पोस्ट पृथक्करण संयंत्र का परीक्षण :** केंचुए और खाद पृथक्करण के लिए, संयंत्र का परीक्षण किया गया था। लगभग 28 प्रतिशत नमी वाले 2 कि.ग्रा. खाद (केंचुओं के साथ) का परीक्षण किया गया था। मिश्रण हौपर में डाला गया और फिर सिलेंडर को हाथ से घुमाया गया। इस प्रकार केंचुए, खाद से अलग हो गये। पृथक्करण के बाद, खाद के वजन को मापा गया जो कि 1.5 कि.ग्रा. और खाद जो सिलेंडर के जाल के माध्यम से बाहर नहीं निकली उसका वजन 0.5 कि.ग्रा. था जिसमें सभी केंचुए और कुछ खाद के मोटे कण थे। 2 कि.ग्रा. खाद को केंचुए से अलग करने में कुल समय लगभग 1 मिनट लगा। कोई भी केंचुआ सिलेंडर के जाल के माध्यम से बाहर नहीं निकला। केंचुए और खाद अलग-अलग, निकास द्वार पर एकत्र किए गए। पोर्टेबल केंचुआ विभाजक की क्षमता 90 प्रतिशत के आसपास पाई गई। पोर्टेबल केंचुआ पृथक्करण संयंत्र से खाद और केंचुए शीघ्रता से अलग हो गए। केंचुआ पृथक्करण संयंत्र से सभी केंचुए निकास द्वार में एकत्र किए गए और कोई भी केंचुआ परीक्षण के एक सप्ताह बाद तक भी नहीं मरा। इस मशीन द्वारा खाद से केंचुआ अलग करने में पारंपरिक विधि की तुलना में बहुत कम समय लगता है। इसकी कीमत भी अधिक नहीं है जिसके कारण इसे कोई छोटा किसान भी आसानी से खरीद या बनवा सकता है।



## नवजात शिशु की देखभाल

✍ पूनम रानी एवं बिमला ढांडा<sup>1</sup>

मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

जन्म लेते ही बच्चे का रोना बहुत ज़रूरी होता है क्योंकि रोने से शिशु में साँस लेने की स्वाभाविक क्रिया शुरू हो जाती है। जन्म के समय शिशु के शरीर पर एक सफेद, चिकना मोम जैसा पदार्थ चिपका रहता है, साफ रूई या बारीक मुलायम कपड़े से इसे पोंछ दें। बच्चे की नाल पर स्पिरिट लगाकर पाऊंडर लगा दें या तेल और हल्दी को गर्म करने के बाद ठण्डा करके लगाया जा सकता है। मौसम के अनुसार ढीले, मुलायम तथा साफ कपड़े पहनायें।

**नवजात शिशु का आहार :** कुछ घण्टों बाद बच्चे को स्तन से लगाएं और कोलोस्ट्रम (खीस) ज़रूर पिलायें। बच्चे को उसकी भूख के अनुसार दूध पिलायें। बच्चे को 2, 3 या 4 घण्टे के अन्तर पर दूध पिलायें जो उसकी धीरे-धीरे आदत बन जाएगी। तीन दिन के पश्चात दूध की मात्रा बढ़ने पर शिशु को उसकी भूख के अनुसार 6-6 बार दूध पिलायें। रात के समय भी जब वह भूखा हो तो दूध पिलायें। ध्यान रहे कि दूध पिलाते समय दोनों स्तनों का उपयोग हो सके।

**शिशु का बिस्तर :** शिशु की चारपाई या पालने में साफ धुला हुआ बिस्तर बिछाकर, उसके ऊपर मोमजामा डालकर साफ चादर बिछाएं। बच्चे का तकिया नीचा व नरम होना चाहिए ताकि वह आराम से सो सके।

**शिशु की निद्रा :** स्वस्थ शिशु दिन में प्रायः 20 से 22 घण्टे सोता है। वह भूख लगने पर या मलमूत्र त्यागने पर ही जागता है। उस की नींद धीरे-धीरे कम हो जाती है। दो-तीन महीने का हो जाने पर वह लगभग 18 से 20 घण्टे सोता है। यदि शिशु सोते हुए चौंक पड़े या उसे गहरी नींद न आए तो यह अस्वस्थता के लक्षण हैं। ऐसी स्थिति में डॉक्टर की सलाह लें।

#### शिशु का स्नान एवं वस्त्र

**स्नान :** प्रतिदिन स्नान करने से शरीर में रक्त संचार अच्छी तरह होता है जिससे शरीर में ताज़गी आती है, भूख लगती है तथा अच्छी नींद आती है और रोगजनक कीटाणु दूर होते हैं। यह क्रिया बच्चों के लिए बहुत आनन्दकारी होती है।

**स्नान करने से पूर्व तैयारी :** स्नान करने से पूर्व ही बच्चे को नित्य क्रिया से निपटा कर शरीर पर घी, सरसों या जैतून के तेल की मालिश करनी चाहिए व ज़रूरत का सामान पहले से ही तैयार कर एक स्थान पर रखें।

#### स्नान करवाते समय ध्यान देने योग्य बातें :-

- बच्चे को हर रोज़ निश्चित समय पर स्नान कराएं। हो सके तो गर्मियों में दो बार स्नान करवाएं।
- स्नान करवाते समय बच्चे की आंख, कान, नाक की सफाई पर भी ध्यान दें।

(शेष पृष्ठ 23 पर)

# गर्मियों के दौरान : बच्चों की देखरेख

रीना एवं बिमला ढांडा

मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

गर्मियों का मौसम बच्चों के लिए बहुत ही मुश्किल भरा मौसम होता है। इस मौसम में बच्चों को स्वास्थ्य और त्वचा सम्बन्धी कई समस्याओं और काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। जैसे : बच्चों के शरीर में पानी की कमी होना, दस्त लगना, अधिक गर्मी लगना, घमौरियां और त्वचा रैशेज़ आदि। बच्चे खेल-कूद में इतने व्यस्त रहते हैं कि वह सब कुछ भूल जाते हैं कि गर्मी है या सर्दी। ऐसे में माँ-बाप को अपने बच्चों की बहुत ज़्यादा देखभाल करने की ज़रूरत रहती है इसलिए आज हम आपको बता रहे हैं कि कैसे आप अपने बच्चों की देखभाल कर सकते हैं ताकि उन्हें हम गर्मी भरे मौसम और लू से बचा सकें।

## गर्मी से कैसे करें बचाव :

1. इस मौसम में सूती (कॉटन) कपड़े बहुत अच्छे रहते हैं जबकि अन्य कपड़े से बने कपड़ों के कारण बच्चों को घमौरियां होने की संभावना रहती है क्योंकि कृत्रिम (सिंथेटिक) कपड़े शरीर के पसीने को नहीं सोख पाते, जिससे कपड़े की बार-बार रगड़ से त्वचा से सम्बन्धित समस्याएं और घमौरियों की समस्या हो सकती है।
2. जब आप उसे बाहर ले जा रहे हों तो पूरी बांह वाले कपड़े ही पहनाएं।
3. हल्के रंग के कपड़े पहनाएं, क्योंकि गहरे रंग के कपड़े ज़्यादा प्रकाश को सोखते हैं जिससे ज़्यादा गर्मी लगती है यहाँ तक कि यह मक्खी और मच्छर को भी अपनी ओर आकर्षित करते हैं।
4. जितना हो सके परतों (लेयर्स) में कपड़े पहनाएं, क्योंकि मौसम के अनुसार हम कपड़े को उतार भी सकते हैं।
5. जब आप अपने बच्चे को बाहर खेलने के लिए ले जा रहे हों उसे टोपी ज़रूर पहनाएं।
6. जूते भी ऐसे पहनाएं, जिनमें हवा आर-पार होती रहती हो।
7. बच्चों को सुबह 10 से शाम 4-5 बजे के बीच के समय में घर से बाहर न ले जाएं, क्योंकि उस समय ज़्यादा गर्मी होती है। इस समय में जितना हो सके बच्चे को घर के अंदर ही रखें और ठंडे वातावरण में रखें। अगर बच्चों को बाहर ले जाना भी पड़ जाए तो पूरे शरीर को ढक कर ले जाएं, जैसे-पूरी बांह वाले कपड़े पहनाएं, टोपी और सनस्क्रीन लगाएं।

## कैसे करें त्वचा की देखभाल :

- शिशु के जन्म के बाद 6 महीने तक शिशु के शरीर पर कुछ भी नहीं लगाना चाहिए, क्योंकि शिशु की त्वचा बहुत नाजुक होती है।
- सुबह और शाम दो बार नहलाना चाहिए। पानी हमेशा सामान्य ताप का होना चाहिए।
- जब बच्चे बाहर से खेल कर आएंगे तो उनके हाथ साबुन से अच्छे से धुलाएँ ताकि संक्रमण न हो सके।

## मक्खी-मच्छर से कैसे करें बचाव :

- हल्के रंग के कपड़े पहनाएं, क्योंकि गहरे रंग से मक्खी-मच्छर ज़्यादा आकर्षित होते हैं।
- तीन महीने तक शिशु का ज़्यादातर समय सोने में बीतता है इसलिए उसके शरीर पर कोई भी ऐसी खुशबूदार चीज़ न लगाएं, क्योंकि खुशबूदार चीज़ से भी मक्खी-मच्छर इत्यादि जल्दी आकर्षित होते हैं। साथ ही रात को सोते समय मच्छरदानी का इस्तेमाल करें।

## डायपर की गुणवत्ता :

- छोटे बच्चों के लिए डायपर की जगह पर सूती कपड़े की नेपी पहनानी चाहिए, जिससे बच्चों में त्वचा से सम्बन्धित कोई समस्या नहीं होती।
- अगर डायपर का प्रयोग करना पड़े तो अच्छी गुणवत्ता वाले डायपर का इस्तेमाल करें और उचित समय पर डायपर बदलें।

## बच्चों में पानी की कमी के लक्षण :

- बच्चे के होंठ सूखे-सूखे से लगना।
  - स्तनपान एकदम बंद कर देना।
  - पेशाब बहुत कम आना।
- इन लक्षणों से हम जान सकते हैं कि बच्चे के शरीर में पानी की कमी हो सकती है।

## शरीर में पानी की कमी कैसे पूरी करें :

- गर्मी के मौसम में पानी की ज़रूरत ज़्यादा रहती है।
- 6 महीने से कम आयु के बच्चे को हम पानी नहीं दे सकते, तब माँ को चाहिए कि दिन में बार-बार स्तनपान कराए, जिससे पानी की कमी नहीं होगी।
- 6 महीने से अधिक आयु के बच्चे को स्तनपान के अलावा उसे पानी, लस्सी, दूध, दही भी दे सकते हैं इससे बच्चे के शरीर को ठंडक मिलेगी और पानी की कमी भी नहीं होगी।
- बाहर का खाना न खिलाएं, जितना हो सके घर का खाना बना कर दें।
- जितना ज़्यादा हो सके बच्चों को ताज़े फलों जैसे: संतरा, अंगूर, अनानास, तरबूज का जूस बना कर दें और सब्जियों का सूप भी बना कर दें।
- मूली, खीरा और टमाटर में पानी की मात्रा काफी ज़्यादा होती है इसे सलाद में ज़रूर दें।
- नारियल पानी पिलाएं।

## ध्यान रखने योग्य बातें :

- सुबह 10 बजे से शाम के 4-5 बजे के बीच बच्चों को बाहर खेलने न दें, क्योंकि उस समय बहुत तेज़ गर्मी होती है, हो सके तो शाम के समय बच्चों को खेलने और बाहर घुमाने के लिए ले जाएं, क्योंकि बच्चों के लिए खेलना-कूदना भी ज़रूरी है।
- बच्चों को आईसक्रीम, कोल्ड ड्रिंक, बर्फ और बाहर के खाने से दूर रखें।
- पेय पदार्थ जैसे जूस और शरबत आपके बच्चे को अतिरिक्त ऊर्जा भी प्रदान करेंगे। लेकिन साथ ही ध्यान रखें, चीनी का अत्यधिक सेवन



शरीर के लिए अच्छा नहीं होता ।

- नहलाने के बाद, बच्चे को 10-15 मिनट तक पंखे या कूलर की हवा में न ले कर जाएं। नहलाने के बाद अच्छे से पूरे शरीर को पोंछ कर ही पंखे या कूलर की हवा में लाएं क्योंकि तब तक बच्चे के शरीर का तापमान समान्य हो जायेगा ।
- अगर आप कूलर का इस्तेमाल कर रहे हों तो समय-समय पर पानी बदलना न भूलें। रूके या जमा हुए पानी में मच्छर पनपते हैं और कई गंभीर बीमारियां होने की सम्भावना को बढ़ाते हैं ।
- रात को सुलाते समय बच्चे को तंग (टाइट) कपड़े न पहनाएं, इससे बच्चे को हिलने-डुलने में परेशानी होती है और सांस लेने में भी परेशानी होती है इसलिए ढीले-ढाले कपड़े ही पहनाएं ।
- सफर के दौरान स्कूटर पर बच्चों को आगे खड़ा करने से और बैठाने से सीधी धूप तथा तेज़ गर्म हवा से उन्हें नुकसान पहुंचता है। तेज़ गर्म हवाएं बच्चों के मुँह पर सीधी पड़ती हैं, जिससे आंखों और त्वचा पर बुरा असर पड़ता है इसलिए उन्हें बीच में या पीछे बैठाएं और सिर पर टोपी पहनाएं। इससे गर्मी का कुप्रभाव कम रहेगा ।



(पृष्ठ 21 का शेष)

- स्नान करवाते समय बच्चे के सिर के नीचे हाथ रखें ताकि सिर पानी में न डूबे ।

#### स्नान के पश्चात

- स्नान के बाद बच्चे को साफ कपड़े से अच्छी तरह पोंछें ।
- बच्चे की मुट्ठी खोलकर अच्छी तरह पोंछें क्योंकि अक्सर बच्चे मुट्ठी बन्द रखते हैं और उसमें मैल जमा हो जाता है ।
- स्नान के बावजूद भी बच्चे की टांगों को दिन में कई बार धोएं क्योंकि नीचे बैठने से व घुटने के बल चलने से टांगें गन्दी हो जाती हैं तथा कई बार पेशाब में भी भीग जाती हैं ।

**वस्त्र :** बच्चों के लिए वस्त्रों का चुनाव करते समय विशेष बातों का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है :

- बच्चे के कपड़े मौसम के अनुसार आसानी से धुलने वाले होने चाहिए ।
- शरीर की त्वचा कोमल होती है, इसलिए उनके कपड़े खुरदरे व रोएंदार नहीं होने चाहिए ।
- बच्चों के वस्त्र ढीले-ढाले हों ताकि आसानी से उतारे व पहनाए जा सकें ।
- बच्चे के वस्त्र सादे सिले हों। लेस तथा रिबन ज़्यादा लम्बे न हों और इलास्टिक ज़्यादा कसी न हो ।



## धीरे सीखने वाले बच्चे

पूनम रानी

मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

धीरे सीखने वाले बच्चे वो होते हैं जो स्कूल में अपने साथ वाले बच्चों से पढ़ाई में पीछे रहते हैं लेकिन विशेष शिक्षा के योग्य नहीं होते। इन बच्चों को निदान श्रेणी में नहीं रखा जाता। धीरे सीखने वाले बच्चों में से कुछ बच्चे स्कूल छोड़ने वाले, अविवाहित किशोर माताएं, नशीली दवाओं का सेवन करने वाले, अनपढ़ व्यक्ति, बेरोज़गार, हिंसक अपराधी, शराब का सेवन करने वाले और स्कूल में विफलताओं वाले हो सकते हैं।

नई अवधारणाओं को सीखने के लिए एक धीरे सीखने वाले बच्चे को सफल होने के लिए अध्यापक से अधिक समय, अधिक पुनरावृत्ति और अधिक साधनों की ज़रूरत होती है। दूसरे शब्दों में, धीरे सीखने वाले बच्चे को समाज व शिक्षा में बहुत सारी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन बच्चों का बुद्धि स्तर 70-85 या 90 होता है।

#### धीरे सीखने वाले बच्चों के लक्षण :-

- दिखने में सामान्य ।
- लम्बी याददाश्त में कमज़ोर ।
- आत्मविश्वास की कमी ।
- धीरे-धीरे सीखना ।
- सीखने की क्रिया में कम ध्यान देना ।
- सीखने की सामग्री को याद न रख पाना ।
- कम आध्यात्मिक क्षमता ।
- बलपूर्वक गृह कार्य करवाना ।
- स्कूल की गतिविधियों में भाग लेने से डरना ।
- एक ही समय में सिर्फ एक ही काम पर ध्यान केन्द्रित करना ।
- बहुत अवस्थाओं में संतुष्टिजनक व्यवहार करना ।
- कम पढ़ना व कम समझना ।
- किसी भी बात का जवाब देरी से देना ।

#### कारण :

- सामाजिक व आर्थिक स्तर का कम होना ।
- अनुवांशिकता ।
- परिवार का प्रशासनिक वातावरण कम होना ।
- उत्साह की कमी होना ।
- अभिभावकों के द्वारा ज़्यादा सुरक्षा देना ।
- अभिभावकों का कम सहयोग देना ।
- अनुचित सामग्री प्रदान करना/देना ।
- स्कूल की गुणवत्ता में कमी होना ।
- अवसरों और सुविधाओं की कमी होना ।

#### धीरे सीखने वाले बच्चों की पहचान / वर्गीकरण करना ।

##### 1. अध्ययन करना :

- शिक्षक और अभिभावकों का व्यवहार ।

- कक्षा, खेल के मैदान और समूह में व्यवहार।
  - प्रमाणिक और प्रभाविक बातचीत।
  - सांस्कृतिक और मनोरंजक रूचियों का अध्ययन।
- 2. शैक्षणिक अध्ययन :**
- सामान्य विषयों में प्राप्त स्कोर।
  - स्कूल में असफलता।
  - स्कूल के प्रति अवधारणा।
  - स्कूल का बदलाव।
- 3. सामाजिक अध्ययन :**
- विकास के स्तम्भों का अध्ययन।
  - परिवार में किसी की मानसिक व शारीरिक कमजोरी का अध्ययन।
  - सांस्कृतिक और आर्थिक कारण।
  - पारिवारिक दृष्टिकोण और संबंध।
- 4. घर पर करने वाली गतिविधियां :**
- बच्चे के साथ घर पर लगातार बात करना।
  - भाई-बहनों के साथ खेलना।
  - बहुत सारे दोस्त बनाना।
  - मजबूत अनुशासन होना।
  - पिता व दादी से कहानियाँ सुनना पसंद करना।
  - पिता को उसकी स्कूल की समस्याओं को याद रखना।
  - भाई-बहनों के साथ तालमेल बनाना।
- 5. शारीरिक गतिविधियां :**
- कोई आकृति या चित्र बनाना पसंद करना।
  - छुट्टी/अवकाश वाले दिन खेलने के लिए उत्सुक होना।
  - खेल के मैदान पर बातचीत करना।
  - सबके साथ बहुत अच्छा तालमेल बनाए रखना।
  - हमेशा खेल खेलने के बारे में सोचना।
  - कभी-कभी शारीरिक शिक्षा में प्रमुख भूमिका निभाना।

#### कमजोरियां :

- 1. साक्षरता -**
- पढ़ाई में कमजोर/ पढ़ने में कमजोर।
  - शब्दों को समझने में कमजोर।
  - पठन सामग्री की कम समझ।
  - लिखने की गतिविधियों में कमजोर।
  - लगातार पढ़ने में कमजोर।
- 2. समझने की शक्ति :-**
- ध्यान केन्द्रित करने में कमी।
  - अध्यापक के द्वारा पूछे गए सवाल का जवाब न देना।
  - कक्षा के निर्देशों का पालन न करना।
- 3. मौखिक बातचीत :**
- कक्षा में किसी भी बात का जवाब न देना।
  - बहुत सारी व्याकरण संबंधी गलतियां करना।
  - मौखिक बातचीत में कमजोर। (शेष पृष्ठ 32 पर)

## नीम की उन्नत खेती : आय बढ़ाए

ए. के. देशवाल, वी. पी. एस. यादव एवं जे. एन. यादव  
कृषि विज्ञान केन्द्र, भोपानी (फरीदाबाद)  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

नीम का वानस्पतिक नाम *अजडिरेक्टा इंडिका* है जोकि मिलिएसी परिवार से सम्बन्ध रखने वाला बहुत ही सख्त, सदाबहार और प्रकाश चाहने वाला मध्यम अकार का वृक्ष है। यह पूरे भारत वर्ष में पाया जाता है। पदम पुराण में इसे आयु वृद्धि करने वाला वृक्ष कहा गया है। वानिकी साहित्य में इसे शुष्क क्षेत्रों में पुनर्वनीकरण, मृदा संरक्षण, क्षारीय मृदा में सुधार तथा छाया के लिए पंक्तियों में लगाने और सजावट के लिये उपयुक्त वृक्ष माना गया है। चरक और सुश्रुत, प्राचीन भारत के शल्य चिकित्सकों ने इसके औषधीय और आहार संबंधी गुणों पर बहुत जोर दिया है। हरियाणा में नीम सभी जगहों में लगाया जा सकता है। अगर हर खेत में 3-4 नीम के वृक्ष हों तो फसलों में हानिकारक कीड़े और बीमारियों का प्रकोप कम होता है। नीम का वृक्ष हरियाणा के दक्षिणी सूखा ग्रस्त भागों के लिए सबसे उपयुक्त है। नीम के बीज को प्रयोग करने वाले उत्तरी भारत में लगे उद्योग नीम के बीज को दक्षिण भारत से मंगवाते हैं। इसलिए किसान और खेतीहर मजदूर इसके बीज को बेचकर लाभ प्राप्त कर सकते हैं। नीम का पौधा 120-150 सें.मी. की लपेट का होने पर लगभग 1600 रुपये की आमदनी देता है। नीम की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखना चाहिए।

**भूमि :** नीम हर प्रकार की मिट्टी जैसे कि सूखी, पथरीली, रेतीली और चिकनी मिट्टी में अच्छी तरह उग सकता है। परन्तु जल भराव वाले स्थानों पर या शुष्क मौसम में जब जल स्तर जमीन में 18 मीटर से नीचे हो तब यह पैदा नहीं हो सकता। जिस भूमि का क्षारक 6.2 या इससे उपर है, नीम की खेती के लिए उपयुक्त रहती है।

**पौधशाला :** नीम के बीजों को किसी भी प्रकार के उपचार की आवश्यकता नहीं होती और एकत्रित करने के एक सप्ताह के अन्दर थोड़ा सुखाकर बो देने से अच्छे परिणाम मिलते हैं। नीम के बीज पौधशाला में उंची उठी शय्या में जुलाई माह में कतारों में बोए जाते हैं। कतार से कतार की दूरी 20 सें.मी. और बीज से बीज की दूरी 5 सें.मी. रखनी चाहिए तथा बीज को 1.5 सें.मी. की गहराई में बोया जाना चाहिए। इससे 7-8 दिनों में नीम का अंकुरण प्रारम्भ हो जाता है और लगभग 3 सप्ताह तक चलता रहता है। सितम्बर मास में पौधों को क्यारियों से पॉलिथीन की थैलियों में बदल दिया जाता है। नीम के बीजों को सीधे पॉलिथीन की थैलियों में भी बो सकते हैं।

**पौधारोपण :** एक या दो वर्ष पुराने पौधों को मिट्टी के साथ उठा कर पौधारोपण के लिए प्रयोग किया जाता है। दो वर्ष की अपेक्षा एक वर्ष पुरानी पौध अधिक अच्छी होती है। वृक्षारोपण अप्रैल से मई में 45 सें.मी. × 45 सें.मी. × 45 सें.मी. आकार के खोदे हुए गड्ढों में जुलाई से अगस्त में बरसात के मौसम में किया जाता है। शुष्क क्षेत्रों में नीम का पौधारोपण अक्टूबर महीने में करना चाहिए।

**पौधों की देखभाल :** नीम प्रारम्भिक अवस्था में अधिक पाला नहीं बर्दाश्त कर सकता है इसलिए इसे पाले से बचाना चाहिए। छोटी अवस्था में पशुओं से बचाने के लिए बाड़ लगानी चाहिए और ज़्यादा सूखे की अवस्था में पानी भी देना चाहिए।

**कृषि वानिकी :** कृषि वानिकी के लिए पौधे 10 मी. × 10 मी. की दूरी पर लगाए जाते हैं। हालांकि दक्षिण हरियाणा में पानी की कमी के कारण अन्य वृक्षों की बढ़वार कम होती है परन्तु नीम के पौधों को खेत की मेड़ों पर 5 मी. की दूरी पर लगाकर किसान इससे लाभ प्राप्त कर सकता है। इसके बीज को बेचकर अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं। कृषि वानिकी में नीम के साथ चारे वाली फसलें ज़्यादा लाभदायक हैं। रबी में बरसीम व जई और खरीफ में ज्वार की फसल अच्छी पैदावार देती है। इसके साथ छाया पसन्द करने वाली सब्जियां काफी कामयाब हैं। अनाज वाली फसलें व सरसों की पैदावार काफी कम होती है।

**उपयोग :** नीम के अन्दर की लकड़ी लाल रंग तथा सख्त और टिकाऊ होती है। इसका प्रयोग मकान बनाने, ठेले और फर्नीचर बनाने में किया जाता है तथा इससे जलाऊ लकड़ी प्राप्त होती है। नीम के तेल और अँजेडीरेक्टिन पदार्थ जोकि नीम के बीजों से प्राप्त होते हैं से अनेक प्रकार के कीट नाशक और मनुष्यों के लिए अनेक प्रकार की दवाइयां तैयार की जाती हैं। इसकी छोटी-छोटी टहनियों को दातुनों के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। इसे चारे के लिये अच्छा वृक्ष माना गया है। भेड़-बकरी और कभी-कभी अन्य जानवरों को खिलाने के लिय इसकी पत्तियां काफी मात्रा में उपयोग की जाती हैं। इसके पत्तों को सुखाकर अनाज खासकर गेहूँ में ढ़रे, सुरसी के उपचार के लिए डाला जाता है और गेहूँ को बिना पत्ते निकाले ही पीसकर खाने से स्वास्थ्य लाभ भी मिलता है। नीम के बीजों से प्राप्त खली को खाद के रूप में काम में लाया जाता है क्योंकि इसमें नत्रजन काफी मात्रा में होता है और तकरीबन हर प्रकार के हानिकारक कीटों को मारने की भी इसमें क्षमता पायी जाती है। यूरिया के साथ नीम खली को मिलाकर खेत में डालने से धान की लगभग 40 प्रतिशत और ज्वार की लगभग 25 प्रतिशत तक ज़्यादा पैदावार ली जा सकती है। नीम कोटिड यूरिया भी आज कल खेती में प्रयोग किया जा रहा है।

**पैदावार एवं बीज बिक्री :** पौधा लगाने के पांच वर्ष बाद नीम में फल आने लगते हैं। दस-बारह वर्ष पुराने एक वृक्ष से वर्ष में 35 से 55 किलो ग्राम ताज़ा निंबोली की पैदावार होती है। निंबोलियों को एकत्रित करने के बाद बिना सुखाए और छिलका उतारे बेचा जा सकता है लेकिन फैंक्ट्रियों वाले छिलके के साथ सूखी हुई निंबोली को ही लेना ज़्यादा पसन्द करते हैं।



## दुधार पशुओं में थनैला रोग : रोकथाम

इंदु पांचाल, रूबी सिवाच<sup>1</sup> एवं कान्ता यादव<sup>2</sup>

डेयरी इंजीनियरिंग विभाग

ला. ला. रा. पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

### क्या है थनैला रोग ?

थनैला रोग दुधार पशुओं में लगने वाला एक संक्रामक रोग है। वैसे तो प्रकृति ने पशुओं के थन ऊतकों को सुरक्षात्मक प्रक्रिया दी है जो सामान्य स्थिति में रोग पैदा करने वाले जीवाणुओं को नष्ट कर देती है। प्रकृति ने प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक सुरक्षात्मक प्रक्रिया दी है। प्राथमिक सुरक्षात्मक प्रक्रिया थन नलिकाओं द्वारा दी जाती है। थन नलिका प्राकृतिक सुरक्षात्मक प्रक्रिया के तहत हानिकारक जीवाणुओं को प्रवेश नहीं करने देती है। द्वितीयक सुरक्षात्मक प्रक्रिया बी-लिम्फोसाइट एवं टी-लिम्फोसाइट के द्वारा दी जाती है। तृतीयक सुरक्षात्मक प्रक्रिया सभी भक्षी कोशिकाओं एवं न्यूट्रोफिल के द्वारा दी जाती है। परन्तु किसी कारण वश जीवाणु थन में प्रवेश करते हैं तो फिर जीवाणु बाहरी थन नलिका से अन्दर वाली थन नलिकाओं में प्रवेश कर जाते हैं और फिर उनकी संख्या बढ़नी शुरू हो जाती है और पशुओं के थनों में संक्रमण उत्पन्न हो जाता है तथा जीवाणु स्तन ऊतक कोशिकाओं को क्षति पहुंचाते हैं। थन ग्रंथियों में सूजन आ जाती है जो कि बाहर से साफ दिखाई पड़ती है, इस अवस्था को थनैला रोग कहा जाता है। इस अवस्था में पशु को बहुत पीड़ा होती है शारीरिक तापमान भी बढ़ जाता है। लक्षण प्रकट होते ही दूध की गुणवत्ता प्रभावित होती है। दूध में छटका, खून एवं पीप (पस) की अधिकता हो जाती है। पशु खाना-पीना छोड़ देता है एवं अरुचि से ग्रसित हो जाता है।

यह बीमारी दुनिया भर में जहां कहीं भी पायी जाती है वहां इस बीमारी के निरंतर फैलने के कई कारण हैं जैसे कि प्रबंधन की कमी, उचित दुहन प्रणाली न अपनाना, दोषपूर्ण दुग्ध उपकरण, अपर्याप्त आवास और दूध की मात्रा को बढ़ाने के लिए प्रजनन इत्यादि। पशुओं में पायी जाने वाली यह एक जानलेवा और महंगी बीमारी है। थनैला रोग दुग्ध व्यवसाय के लिये सबसे बड़ा संकट है। क्योंकि इस बीमारी के कारण दूध की उत्पादकता में कमी आती है, इसमें उनकी बीमारी के उपचार की लागत भी सम्मिलित है और पशुओं की मृत्यु भी हो जाती है। पशु पालक को ही पशु को मारना पड़ता है। प्राचीन काल से यह बीमारी दूध देने वाले पशुओं एवं उनके पशुपालकों के लिए चिंता का विषय बना हुआ है। पशु धन विकास के साथ श्वेत क्रांति की पूर्ण सफलता में अकेले यह बीमारी सबसे बड़ी बाधक है। इस बीमारी से पूरे भारत में प्रतिवर्ष करोड़ों रूपये का नुकसान होता है, जो अंततः पशुपालकों की आर्थिक स्थिति को प्रभावित करता है।

### थनैला रोग के लक्षण

थनैला रोग दो प्रकार का होता है-अलाक्षणिक और लाक्षणिक

**अलाक्षणिक :** इस प्रकार के रोग में थन व दूध बिल्कुल सामान्य प्रतीत होते हैं लेकिन प्रयोगशाला में दूध की जाँच द्वारा रोग का निदान किया जा सकता है।

<sup>1</sup>डेयरी केमिस्ट्री विभाग, ला.ला.रा. पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय हिसार

<sup>2</sup>डेयरी केमिस्ट्री विभाग, आई सी ए आर-राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल



**लाक्षणिक :** इस रोग में जहाँ कुछ पशुओं में केवल दूध में मवाद/छिछड़े या खून आदि आता है तथा थन लगभग सामान्य प्रतीत होता है वहीं कुछ पशुओं में थन में सूजन या कड़ापन/गर्मी के साथ-साथ दूध असामान्य पाया जाता है। कुछ असामान्य प्रकार के रोग में थन सड़ कर गिर जाता है। ज्यादातर पशुओं में बुखार आदि नहीं होता। रोग का उपचार समय पर न कराने से थन की सामान्य सूजन बढ़ कर अपरिवर्तनीय हो जाती है और थन लकड़ी की तरह कड़ा हो जाता है। इस अवस्था के बाद थन से दूध आना स्थाई रूप से बंद हो जाता है। सामान्यतः प्रारम्भ में एक या दो थन प्रभावित होते हैं और बाद में अन्य थनों में भी रोग फैल सकता है। कुछ पशुओं में दूध का स्वाद बदल कर नमकीन हो जाता है।

**दूध की गुणवत्ता पर थनैला रोग का प्रभाव :** थनैला रोग में विशेष रूप से अलाक्षणिक प्रकार, दुनिया भर में पशुओं के बीच दुग्ध की स्वच्छता और गुणवत्ता के महत्व के हिसाब से लगातार और व्यापक रूप से प्रसार बीमारियों में से एक है। थनैला रोग कुल दूध उत्पादन को प्रभावित करता है और दूध की संरचना और तकनीकी उपयोगिता को संशोधित करता है। गावों में, एससीसी सेल्स की गिनती थनैला रोग का एक उपयोगी सूचक है, और इसलिए, यह गुणवत्ता, स्वच्छता और थनैला रोग नियंत्रण के संदर्भ में दूध का एक महत्वपूर्ण घटक है। एसएससी की मात्रा अगर दूध में ढाई लाख से ज्यादा है तो ऐसा दूध मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकता है और एसएससी की अधिकतम मात्रा दूध की संरचना को भी प्रभावित करती है जैसे कि कम कैसिइन और पनीर पैदा होना। इसमें एंजाइम की मात्रा में वृद्धि होती है, जिससे प्रोटीन की गुणवत्ता, फैटी एसिड संरचना, लैक्टोज, आयरन और खनिज एकाग्रता में परिवर्तन और कच्चे दूध के उच्च पीएच पर प्रभाव पड़ता है। दूध में इन एंजाइमों की उपस्थिति दूध के स्वाद पर प्रभाव डालती है और दुर्गन्ध भी आती है। इस प्रकार, कच्चे दूध की एससीसी की संख्या का प्रभाव शेल्फ जीवन, स्वाद और विशेष रूप से पनीर की पैदावार के लिए महत्वपूर्ण है। तालिका 1 दूध की संरचना पर एससीसी सेल्स का प्रभाव को दर्शाती है।

**तालिका 1: दूध संरचना पर एससीसी सेल्स के प्रभाव**

माप	साधारण	उच्च सेल्स की गणना	सामान्य प्रतिशत
कुल ठोस पदार्थ	13.1	12.0	92
लैक्टोज	4.7	4.0	85
फैट	4.2	3.7	88
क्लोराइड	0.09	0.14	161
कुल प्रोटीन	3.6	3.6	100
केसिन	2.8	2.3	82
व्हेय प्रोटीन	0.8	1.3	162

**थनैला रोग फैलने के प्रमुख कारण :** थनैला रोग पशुओं में कई प्रकार के जीवाणु, विषाणु, फफूँद एवं यीस्ट तथा मोल्ड के संक्रमण से होता है। इसके अलावा चोट तथा मौसमी प्रतिकूलताओं के कारण भी थनैला रोग हो जाता है। कई ऐसे कारक हैं, जिनके कारण थनैला रोग फैलता है जो कि इस प्रकार हैं :-

1. क्षति एवं ट्राuma के कारण थन की स्थिति।
2. थन पर गोबर एवं यूरिन की चड़ का संक्रमण होने पर।
3. दूध दोहने के समय अच्छी तरह सफाई का न होना।
4. फर्श की अच्छी तरह साफ-सफाई का न होना।
5. पूरी तरह थन ग्रंथियों से दूध का न निकलना।
6. गाय की उम्र तथा आनुवांशिक कारक।
7. थन नलिका में असमानताएं।

**थनैला रोग की जांच:** इस अदृश्य प्रकार की बीमारी को समय रहते पहचानने के लिए निम्न प्रकार के उपाय किए जा सकते हैं :-

1. पी.एच. पेपर द्वारा दूध की समय-समय पर जांच या संदेह की स्थिति में विस्तृत जांच।
2. कैलिफोर्निया मास्टाइटिस सोल्यूशन के माध्यम से जांच।
3. संदेह की स्थिति में दूध कल्चर एवं सेन्सिटिविटी जांच।

इसके अलावा पशुओं का उचित रख-रखाव, थन की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने वाली औषधियों का प्रयोग एवं रोग के समय उचित इलाज करना श्रेयस्कर है।

**थनैला रोग की रोकथाम :** थनैला रोग की रोकथाम ज़रूरी है क्योंकि यह एक संक्रामक रोग है तथा एक पशु से दूसरे पशु में संचारित होता है। नीचे लिखी निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखकर हम उपरोक्त बीमारी से पशुओं को बचा सकते हैं:-

1. आसपास के वातावरण की साफ-सफाई ज़रूरी है।
2. जानवरों का आवास हवादार होना चाहिये।
3. फर्श सूखा एवं साफ होना चाहिये।
4. थनों की सफाई नियमित रूप से करनी चाहिये।
5. एक पशु का दूध निकालने के बाद दूसरे पशु का दूध निकालने से पहले ग्वाले को अपने हाथ अच्छी तरह से धोने चाहिये।
6. थनों का समय-समय पर परीक्षण करते रहना चाहिये। उनमें कोई गठान एवं दूध में थक्के हों तो थनैला रोग के लक्षण होते हैं तुरंत पशु चिकित्सक की सलाह लेनी चाहिये।
7. संक्रमित पशु को दूसरे पशुओं से अलग रखना चाहिए।
8. दूध का परीक्षण करवाएं यदि उसमें थक्के जैसे तथा जैल जैसी संरचना दिखाई दे तो इसका परीक्षण हरियाणा शासन स्थित पशु प्रयोगशालाओं एवं पशु चिकित्सा महाविद्यालय में किया जाता है।



एक कदम स्वच्छता की ओर

# बागवानी फसल-कचरा : किसानों की आय सृजन व पर्यावरण सुरक्षा में सहयोगी

✍ हर्षिता सिंह एवं सूर्यपाल सिंह

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत की विविध जलवायु ताज़ा फल और सब्जियों के लिए एक सकारात्मक एवं अनुकूल परिस्थिति प्रदान करती है। कृषि मंत्रालय के अधिकारिक सूत्र के अनुसार उचित खुदरा बिक्री और पर्याप्त भंडारण क्षमता की कमी के कारण भारत में फल और सब्जी उत्पादन का लगभग 72 प्रतिशत हिस्सा कचरा हो जाता है। भारत सब्जियों के उत्पादन में चीन के बाद आता है। सब्जी और फल उत्पादन कृषि जीडीपी का 30 प्रतिशत से अधिक का योगदान देता है। लेकिन असली चुनौती उत्पादन के बाद शुरू होती है। इस क्षेत्र में आपूर्ति शृंखला, कम उत्पादकता और अपर्याप्त भंडारण, शीत शृंखला और परिवहन बुनियादी ढांचा, रसद और आपूर्ति शृंखला प्रबंधन से उत्पन्न होने वाले भारी नुकसान के बाद बड़े पैमाने पर विखंडन से विवश है। राष्ट्रीय बागवानी योजना के तहत 34 लाख हैक्टेयर में बागवानी फसलों की खेती की जा रही है और अगले तीन वर्ष में पांच लाख हैक्टेयर नए क्षेत्र में फलों एवं सब्जियों को लगाने का लक्ष्य है। इसके अलावा लगभग 2.70 लाख हैक्टेयर में जैविक बागवानी की जा रही है। देश के सकल कृषि घरेलू उत्पादन में बागवानी वाली फसलों की हिस्सेदारी एक तिहाई से अधिक है। यह हिस्सेदारी सब्जी उत्पादन में 7.5 फीसदी और फल उत्पादन में 9.5 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर के साथ बढ़ते हुए क्रम पर अग्रसर है। ताज़ा फल और सब्जी के निर्यात में मूल्य के आधार पर 14 प्रतिशत और प्रसंस्करित पर 16.27 प्रतिशत वृद्धि दर्ज हुई है। फल और सब्जियों की लगातार बढ़ती मांग के अनुरूप अधिक उत्पादन करके किसानों की आय बढ़ाना संभव है। उत्पादन के बाद विपणन, प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन एवं निर्यात से किसान अपनी आमदनी में बढ़ोत्तरी कर सकते हैं। बागवानी का क्षेत्र और उत्पादन दोनों में वृद्धि हो रही है लेकिन उसके साथ-साथ एक बड़ी समस्या जो बागवान आज महसूस कर रहे हैं वो है-बागवानी से उत्पन्न होने वाले कचरे का निष्पादन या निपटारा। एक अनुमान के अनुसार भारत में बागवानी जनित कचरे की मात्रा इतनी है कि हर शहर अपनी ऊर्जा की ज़रूरत शहरी कचरे से ही पूरी कर सकता है। बागवानी (फलों में नट, फल, आलू सहित सब्जियों, कंदीय फसलें, मशरूम, कट फ्लावर समेत शोभाकारी पौधे, मसाले, रोपण फसलें और औषधीय एवम संगंधीय पौधे) का देश के कई राज्यों के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान है और कृषि जीडीपी में इसका योगदान 30.4 प्रतिशत है। भा.कृ.अनु.प. का बागवानी संभाग इस प्रौद्योगिकी आधारित विकास में प्रमुख भूमिका निभाता है। आनुवंशिक संसाधन बढ़ाना और उनका उपयोग, उत्पादन दक्षता बढ़ाना और उत्पादन हानि को पर्यावरण हितैषी तरीकों से कम करना आदि इस क्षेत्र के अनुसंधान की प्राथमिकता है। आनुवंशिक संसाधनों का प्रभावी प्रबंधन, बढ़ोत्तरी, जैव संसाधनों का मूल्यांकन और श्रेष्ठ गुणों वाली, उच्च उत्पादक, कीट और रोग सहिष्णु एवं अजैविक दबावों को सहने में सक्षम

उन्नत किस्मों का विकास। उत्पादकता बढ़ाने हेतु अच्छी किस्मों के लिए सुधरी प्रौद्योगिकियों का विकास जो जैविक और अजैविक दबावों की सहिष्णु होने के साथ ही स्वाद, ताज़गी, स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होने जैसी बाज़ार की आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। विभिन्न बागवानी फसलों के लिए स्थान विशिष्ट प्रौद्योगिकियों के विकास द्वारा उत्पादन, गुणवत्ता की विविधता को कम करना, फसल हानि को कम करने के साथ बाज़ार गुणों में सुधार करना। पोषक तत्वों और जल के सही उपयोग की पद्धति विकसित करना और नई नैदानिक तकनीकों की मदद से कीट और रोगों के प्रभाव को कम करना। स्थानीय परिस्थितिकी और उत्पादन पद्धति के बीच संबंध को समझकर जैव विविधता के संरक्षण और संसाधनों के टिकाऊ उपयोग की पद्धतियों का विकास करना। ऐसी उत्पादन पद्धति का विकास करना जिसमें कम अपशिष्ट निकलें और अपशिष्ट के अधिकतम पुनर्उपयोग को बढ़ावा दें। अधिक लाभ के लिए फलों, सब्जियों, फूलों की ताज़गी को लम्बे समय तक बनाये रखना, उत्पाद विविधता और मूल्य संवर्धन। समुदाय विशेष की आवश्यकता को समझकर संसाधनों के प्रभावी उपयोग और प्रौद्योगिकियों को अपनाने के लिए क्षमता निर्माण करना।

**भविष्य की रूपरेखा :** कृषि में वांछित विकास के लिए बागवानी क्षेत्र को प्रमुख भूमिका निभाने के लिए निम्न अनुसंधान प्राथमिकता के क्षेत्रों पर केंद्रित करना होगा।

- विभिन्न पर्यावरण परिस्थितियों में उगाये जाने वाले फलों और सब्जियों के जीन और एलील आधारित परीक्षण।
- पोषण डायनेमिक्स एंड इंटरएक्शन।
- जैव ऊर्जा और ठोस अपशिष्ट उपयोग।
- नारियल, आम, केला और परवल का जीनोमिक्स।
- बागवानी फसलों में उत्पादकता और गुणवत्ता सुधार के लिए कीट परागणकर्ता।
- अपारम्परिक क्षेत्रों के लिए बागवानी किस्मों का विकास।
- फल और सब्जी उत्पादन में एरोपोनिक्स और हाइड्रोपोनिक्स तकनीकों का मानकीकरण।
- फलों और सब्जियों में पोषण गुणवत्ता का अध्ययन।
- बागवानी फसलों में कटाई उपरांत तकनीकी और मूल्य वर्धन।
- फलों और सब्जियों के लंबे भंडारण और परिवहन के लिए संशोधित पैकेजिंग।

आज उपरोक्त क्षेत्र में कार्य बड़ी तेज़ी से हो रहे हैं लेकिन सबसे महत्वपूर्ण है कि बागवानी से निकलने वाले कचरे का निष्पादन।

## बागवानी से जुड़ी संभावनाएं और चुनौतियां :

भारत में लगभग 25-30 प्रतिशत फल और सब्जियां कटाई के बाद ही खराब हो जाती हैं जिस के कारण उनकी गुणवत्ता में गिरावट आती है और किसान को उसका उचित मूल्य नहीं मिल पाता। इस से बचने के लिए भण्डारण व्यवस्था का विस्तार ज़रूरी है। फल और सब्जी उगने वाले क्षेत्र में शीत भण्डारण की व्यवस्था की जा सकती है जिस से किसान की फसल सुरक्षित रहे और नुकसान से बचा जा सके। (शेष पृष्ठ 32 पर)

# Krishi Vigyan Kendra : An Innovative Institution in the Service of Farmers

 **Jogender Singh, Kuldeep Singh and Anil Kumar Rathee**  
Krishi Vigyan Kendra, Sonipat  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Krishi Vigyan Kendra, popularly known as Farm Science Centres, owe their genesis to the recommendations made by the Education Commission (1964-66). This Commission recommended the creation and establishment of "Agricultural Polytechniques" like ITIs for imparting vocational trainings in agriculture and allied areas. The suggestions provided by the Commission were discussed and deliberated intensively and hence, ICAR took initiative for establishing Farm Science Centers (KVKs) and appointed a committee under the Chairmanship of Dr. Mohan Singh Mehta in 1973 to work out the detailed plan for implementing the project.

**Innovative Institution :** The concept of vocational trainings through Krishi Vigyan Kendras was new to cater the emerging needs and demands of farming community to adopt rapidly growing technology era in agriculture and other aspects of prevalent farming system.

The philosophy behind KVKs is to impart need-based and skill-oriented vocational trainings to the practicing farmers, farmwomen; school drop-outs and even grassroot level extension functionaries in agriculture and allied areas. These areas could be specialized as per needs of the area, namely, productions of crops, horticulture and vegetables, dairying, poultry, piggery, fisheries, mushroom, apiculture and protected cultivation, etc.

The approach and methods of vocational trainings at KVKs are rooted in the pedagogical principles of "teaching by doing", "learning by doing" and providing adequate "work-experience" to the practicing farmers. This help them to develop enough confidence apart from gaining knowledge and new skills of modern technology of farming system.

For this, the institution is equipped with relevant teaching-learning infrastructure such as demonstration units, technology parks, training workshops and laboratories where trainees work with their own hands and learn to master the new skills and techniques and derive maximum benefits from the adoption of changing agricultural technologies. Besides, KVKs are also conducting FLDs to showcase the production potentials of different agricultural technology and also actively

engaged in conduction of OFTs for fine tuning of the technology for location specificity.

At present, the mandated activities of KVK are :

1. Conducting "On-Farm Trials (OFT)" for identifying technologies in terms of location-specific sustainable and use system.
2. Organizing trainings to update the extension personnel with emerging advances in agricultural research on regular basis.
3. Organizing short and long-term training courses in agriculture and allied fields for the farmers and rural youth with emphasis on 'learning by doing' for higher production on farms and for generating self-employment.
4. Organizing 'Front Line Demonstrations' (FLD) on various crops and other allied agriculture sectors to generate production data and feedback information.

In order to sustain the creative and innovative character of KVKs, earlier Trainers' Training Centres (TTCs) were set-up to orient the KVK-staff in relevant specialized areas of technology and in latest training pedagogy and management. The nomenclatures of TTCs changed to Zonal Coordinating Units and ATARI.

**Operational Area :** At present, there are 669 KVKs, out of which 458 are under State Agricultural Universities (SAU) and Central Agricultural University (CAU), 55 under ICAR Institutes, 100 under NGOs, 35 under State Governments, and the remaining 21 under other educational institutions and administered, monitored at Zonal level by eleven Agricultural Technology Application Research Institutes (ATARI) .

**Future Approach :** The KVKs are emerging as the most potential and viable institutions in their respective districts. They have established their credentials due to conceptual soundness and more so due to dynamic and devoted spirit of working with the people even in the remotest tribal areas. It has been widely acknowledged by policy planners and administrators that it is the "KVK" which can serve as a light-house for the farmers as well as the State Extension System on the one hand and the research scientists on the other.

In order to perform these enlarged responsibilities, the KVKs will have the need to be strengthened with enhanced staff and financial resources. It is intended to have one such KVK in each district of the country.





# Salt Affected Soils : Their Reclamation and Management for Crop Production

✍️ **Sonia Rani, Mohammad Amin Bhat and Dinesh**

Department of Soil Science

CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Owing to poor quality of water resources, scarcity of rainfall in arid and semi-arid climates the salts are not frequently leached from the soil, therefore the salts tend to accumulate. This is because the potential evapotranspiration at the soil surface exceeds rainfall and thus the net movement of water is upward in the profile. As a result, the salts accumulate at or near the surface of these arid and semi-arid regions. Expansion of irrigation to arid areas, nevertheless, mostly had led to increase in the area affected by shallow water tables thereby escalating and increasing the dangers of salinity. Since, irrigation water transports additional salts and releases immobilized salts (often called as fossil salts) in the soil through weathering and mineral dissolution. Subsequently, the process of evaporation and lateral groundwater flow can move these salts to the surface and concentrate these salts in soil solution. In addition to this, fertilizers and decaying organic matter also serve as source of salts. The irony is that the salts usually become a problem when too much water is supplied and not too little. Salt-affected soils are soils on which most crops cannot make normal growth owing to the presence of excessive soluble salts in the soil solution (saline soils), the presence of exchangeable sodium on surface of the soil particles (sodic soils) or both (saline-sodic soils). Using electrical conductivity of the saturated extract (ECe), exchangeable sodium percentage (ESP) or sodium adsorption ratio (SAR) and pH, salt affected soils are classified as saline, saline sodic and sodic.

**Saline Soils :** Saline soils are those soils having enough salinity to provide ECe values greater than  $4 \text{ dSm}^{-1}$ , however, have ESP less than 15 in the saturation extract. The pH of saline soils is usually less than 8.5. The process that results in the accrue of neutral soluble salts is known as salinization. In saline soils the salts are primarily chlorides and sulphates of calcium (Ca), magnesium (Mg), sodium (Na) and potassium (K). The concentration of neutral salts ( $\text{Cl}^-$  and  $\text{SO}_4^{2-}$ ) is higher than those of alkali salts ( $\text{CO}_3^{2-}$  and  $\text{HCO}_3^-$ ). The concentration of these salts is suffice to interfere with the plant growth. Due to presence of excess salts and low amount of  $\text{Na}^+$  ions on exchange complex, the dispersion of soil colloids is prevented. In general, plant growth is not inhibited by poor infiltration, aggregate stability or aeration in saline soils. Saline soils are also known as white alkali because the evaporation of water leads to the formation of white salt crust on the soil surface. In

vernacular language saline soils are called as 'reh' and 'thar' at various places in India.

**Saline Sodic Soils :** Saline sodic soils have detrimental levels of neutral soluble salts (have ECe greater than  $4 \text{ dSm}^{-1}$ ) and a high proportion of  $\text{Na}^+$  ions (ESP greater than 15). These soils are formed by the as a result of both salinization and alkalization processes. Saline sodic soils show physical conditions intermediate between saline and sodic soils. In these soils the growth of plants can be adversely influenced both by excess soluble salts and high exchangeable sodium. In saline sodic soils the pH shows variation depending upon the dominance of exchangeable sodium ( $\text{pH} > 8.5$ ) and soluble salts ( $\text{pH} < 8.5$ ).

**Sodic Soils :** Sodic soils have electrical conductivity (ECe) less than  $4 \text{ dSm}^{-1}$  because of the low levels of neutral salts, however, these soils have higher levels of sodium ions on the exchange complex (ESP greater than 15). The pH values of these soils go beyond 8.5 even rising to a value of 10 or higher which may be attributed to the fact that solubility of sodium carbonate is higher than that of calcium and magnesium carbonate thereby maintains high concentrations of  $\text{CO}_3^{2-}$  and  $\text{HCO}_3^-$  in the soil solution. Generally, the alkalinity due to these two ions ( $\text{CO}_3^{2-}$  and  $\text{HCO}_3^-$ ) is known to reduce the availability of iron (Fe) to plants. The high exchangeable sodium on exchange complex causes dispersion of the soil by destroying the soil aggregates. This leads to clogging of soil pores as a result of which hydraulic conductivity and infiltration are reduced. This makes the soil susceptible for crusting and soil erosion. Sodic soils are also called as black alkali because of the exceedingly high pH owing to high sodium content thereby causing the dispersion of organic matter which gives black colour to the soil. In India, sodic soils are called as 'usar' in some areas and 'kallar' at other places.

**Effect of Salt Affected Soils on Plant Growth :** The accumulation of soluble salts badly inhibits plant growth as it induces plasmolysis by which water moves out of the plant tissues into the soil solution as higher amount of soluble salts increases the osmotic potential of the soil water. Salt damage is obvious at early stages of the plant growth as salinity may hinder or even inhibit germination of the seeds. The saline conditions may kill the young seedlings, however, older plants of the same species could tolerate.

Plants respond differently to the toxic effect of various ions. Certain ions like  $\text{Na}^+$ ,  $\text{Cl}^-$ ,  $\text{H}_2\text{BO}_4^-$  and  $\text{HCO}_3^-$  are quite toxic to plants. Furthermore, high level of sodium can cause imbalances in nutrient uptake and usage. For instance, in saline sodic and sodic soils,  $\text{Na}^+$  competes with  $\text{K}^+$  ions in the process of transport and uptake thereby making it difficult for plants to obtain  $\text{K}^+$  they need. The high pH in many soils decreases the availability of micronutrients like Fe, Cu, Zn and

Mn causing their deficiency in the plants. The physical effect of sodicity, like dispersion of colloids decreases the oxygen concentration in soil as limited movement of oxygen takes place thereby making oxygen deficient. Moreover, it has negative impact on water relations as infiltration and percolation rates are decreased.

**Reclamation of Salt Affected Soils :** The restoration of soil chemical and physical properties conducive to high productivity is known as soil reclamation. In essence, there are three potential hazards of salt affected soils to plants salinity, sodicity and alkalinity. Salinity hazard is determined by electrical conductivity, sodicity hazard by sodium adsorption ratio and alkalinity hazard by residual sodium carbonate. The processes which result in the accumulation of soluble salts and build up of exchangeable sodium on soil colloids have to be reversed. This can be achieved by providing adequate drainage, replacement of  $\text{Na}^+$  ions from exchange complex and leaching out of soluble salts from root zone by good quality irrigation water.

In general, the physical methods for restoration of salt affected soils include deep ploughing, sub-soiling, sanding, profile inversion and scrapping. However, the hydro-technical method involves the removal of salts from the saline soil or displacement of sodium ions from the exchange complex through the process of leaching with water and drainage. Reclamation of saline soils, therefore means reducing soil salinity to acceptable levels by leaching and alleviating waterlogging caused by irrigation and preventing subsequent salinization. For reclamation of saline soils to acceptable salinity levels, the amount of water required depends significantly on initial soil salinity, the quality of water used for irrigation, the soil depth to be reclaimed and the water application technique. Since, saline-sodic soils have the unfavourable characteristics of both saline and sodic soils. Thus, for amelioration of these soils, leaching of soluble salts and reducing the level of exchangeable  $\text{Na}^+$ . However, it is advised to reduce the level of exchangeable sodium first and subsequently the soluble salts because leaching out of soluble salts first would increase the level of exchangeable  $\text{Na}^+$  and pH and would take the adverse properties of sodic soils. Soil salinization is particularly high when the water table is shallow and the salinity of groundwater is high. Mulching can reduce evaporation from the soil surface and encourage downward flow of soil water there by check the accumulation of salts on soil surface.

Since, sodic soils contain sodium carbonate ( $\text{Na}_2\text{CO}_3$ ) and sodium bicarbonate ( $\text{NaHCO}_3$ ) which upon hydrolysis produce alkalinity. This alkalinity can be averted by replacing the exchangeable  $\text{Na}^+$  ions from exchange complex which can be accomplished by application of chemical or organic

amendments. The chemical amendments for these soils can be classified as :

- Soluble Sources of Calcium :** This group include gypsum ( $\text{CaSO}_4 \cdot 2\text{H}_2\text{O}$ ), calcium chloride ( $\text{CaCl}_2$ ) and phsophogypsum (an industrial by-product).
- Sparingly Soluble Calcium Salts :** Calcite ( $\text{CaCO}_3$ )
- Acids or Acid Formers :** Sulphur, Sulphuric acid, Sulphates of Iron and Aluminium, Pyrites and Lime-sulphur.

Undoubtedly, gypsum is the most common and economical chemical amendment used for amelioration of sodic soils. In fact, calcium chloride is highly soluble in water but its high cost and hygroscopicity prohibit its use on a large scale. Moreover, organic materials can also be used as effective reclaiming agents in sodic soils as they act as a source of carbon dioxide and organic acids which help in mobilizing calcium by dissolving calcium compounds.

**Crop Management :** During reclamation of sodic soils, the choice of crops to be grown is imperative for satisfactory yields. Therefore, it is inferred that growing of crops, which are tolerant to sodicity or salinity rationally, can assure satisfactory returns in the early stages of reclamation. In salt affected soils, a number of interrelated factors such as physiological constitution of the plant, its stage of growth and its rooting habits have significant effect on plant growth. The plants which can be grown on salty soils are known as halophytes (salt loving plants). More frequent irrigations prevent the salt accumulation by keeping the soil at higher soil moisture content. So, crops grown in saline soils must be irrigated more frequently. Moreover, salt tolerant varieties developed by plant breeders come handy under these situations. Plant breeders have successfully developed plant varieties of various crops having salt tolerance greater than conventional varieties. The salt tolerant crops/varieties are suggested to be grown according to their sensitiveness; which are enlisted in the following table.

Highly salt tolerant crops	Barley, sugarcane, sugar beet, oats, sesbania, etc.
Moderately salt tolerant crops	Wheat, rice, cotton, sorghum, maize, pearl-millet, etc.
Low salt tolerant crops	Pulses, peas, beans, sesame, radish, sun-hemp, white clover, etc.
Saline sensitive crops	Tomato, onion, potato, carrot, etc.



#### आवश्यक सूचना

“हरियाणा खेती” मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

- सह-निदेशक ( प्रकाशन )

# Direct Seeded Rice Cultivation Technology for Basmati Paddy

✍ P. K. Chahal, Anil Kumar Rohila and B.S. Ghanghas

Department of Extension Education  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Rice is the most prominent crop of India and staple food of more than 70 per cent of population of the country. It plays a key role in country's food security as well as providing livelihood to millions of rural households in the country. Haryana is second largest state to contribute in central procurement pool of rice after Punjab. The conventional puddle transplanted rice is a major source of greenhouse gas (GHG) emission, particularly methane causing global warming and climate change. While, global warming also leads to other regional and global changes in climate related parameters such as rainfall, soil moisture, and sea level. These changes may adversely affect water availability and thereby growing of much water intensive transplanted rice cultivation. So, CCS Haryana Agricultural University, Hisar have recommended package of practices of DSR cultivation in the year 2012.

## What is DSR

Direct seeding of rice refers to the process of establishing the crop from seeds sown in the field rather than by transplanting seedlings from the nursery.

## DSR production technology recommended by CCSHAU

- **Method of sowing**  
Seed drill or specially designed drill
- **Preparation and Sowing**  
Well prepared seed bed after 2-3 harrowing followed by planking & sowing should be done in evening
- **Depth of Sowing** : 2-3 cm
- **Recommended Varieties**  
Tarawari Basmati, CSR-30, Pusa Basmati- 1121
- **Sowing Time**  
2<sup>nd</sup> to 3<sup>rd</sup> week of June
- **Recommended Seed Rate**  
8 kg per acre
- **Seed treatment**  
10 gram Bavistin/10 gram Emisan+1 gram Streptocycline/2.5 gram Posamycine for 10 kg seed in 10 litre water
- **Weedicide**  
**Vattar DSR:** Stomp 30% EC @1.3 litre per acre in 200 litre water, Nomini Gold 10% SC @ 100 ml in 120 litre water per acre 15-25 days after sowing

**Dry DSR:** Topstar 80% WP @ 50 gram in 200 litre water, Nomini Gold 10% SC @ 100 ml in 120 litre water per acre 15-25 days after sowing 2,4 D Eastor @ 500 ml/acre for broad leaf control 25-30 days after sowing Sunrice 15 WGP @ 50 gram/acre for broad leaf control

## Irrigation Schedule

1st irrigation after 7-15 DAS and after this weekly interval  
In drought conditions just after sowing and next 4-5 days after sowing

## Fertilizers

30 kg N + 12 kg P + 10 kg Zn Sulphate per acre

## Time of Fertilizers Application

25 kg Urea + 10 kg Zn Sulphate at time of sowing

28 kg Urea per acre 15 and 50 DAS by broadcasting method

Ferrous sulphate spray at appearance of iron deficiency symptoms

## Fungicides for Control of Diseases

Badra or Blast : Sivik 70 WP @ 200 ml, Carbendazim @200 ml or Hinosan

Brown Spot : Mancozab @ 600 ml per acre in 200 litre water and after 15 days if need

Paranchhedan, Galan and Badrange daane: Propiconazole 25 EC @ 200 ml per acre in 200 litre water

## Insecticides for Control of Insect Pest

Dhan ki jad ki sundi : Carbaryl 4-G @ 10 kg or sovidol 4-G @ 10 kg per acre or Carbofuran (Furadan) 3-G @ 10 kg or Forate @ 4 kg/acre

Patta lappet sundi : Quinalphos @ 400 ml or Monochrotophos 36 SL @ 200 ml in 200 litre water per acre

Hopper : Dichlorovos 76 EC @ 250 ml in 1.5 litre water + 20 kg soil and broadcast it

Tidda : Methyl Parathion @ 10 kg

Gandhi Bug : Methyl Parathion @ 10 kg

Tanna chhedak : 500 ml Methyl Parathion 50 EC/ Monochrotophos 36 SL or 1 litre Chlorpyrifos 20 EC before 30, 50 or 70 days before sowing or Padan @ 7.5 kg/acre

## Need for DSR Cultivation

- Water scarcity
- Increasing demand and competition for water from non-agricultural sector
- The rising cost and scarcity of labour at peak periods
- Adverse effects of puddling & transplanting method on climate
- Rising interest in conservation agriculture
- Best fit in cropping system



## Advantages of DSR

Direct-seeding of rice has the potential to provide several benefits to farmers and the environment over conventional practices of puddling and transplanting. The various benefits are:

- Saves labour and water
- Sowing can be done in stipulated time frame because of easier and faster planting
- Early crop maturity by 7-10 days which allows timely planting of subsequent crops
- Better net returns as compare to transplanting
- More efficient water use and higher water stress tolerance.

## Weeds Related Constraints Associated with DSR

- Poor crop establishment due to variable rainfall pattern during crop establishment stage
- Shift and changes in weed flora
- Development of herbicide resistance
- Emergence of weedy rice
- Increase in soil-borne pathogens
- Higher emissions of nitrous oxide

## Future Research Needs

- Development of sustainable and effective weed management options employing integrated approach of chemical and non-chemical strategies
- Developing cultivars suited to DSR for different rice based systems in the country
- Developing irrigation scheduling for different soil types
- Development of new strategies about scheduling of fertilizers dose and their application
- Optimization of crop residue cover needs in systems' perspective
- Understanding pest and disease dynamics and defining management strategies under DSR

## Suggestions for Promotion of DSR Cultivation Technology

- Continuous awareness campaigns and workshops should be organized for promotion of DSR
- Government should make stable policy regarding the procurement, fixing minimum support price for Basmati Paddy and storage infrastructure at village level.
- Government should make provision of subsidy on seed drill or low interest rate credit to purchase inputs and machinery, etc. to promote such type of resource conserving technology.
- Technical knowledge of field functionaries should be updated for greatest success of DSR for sustainable food production.

(पृष्ठ 27 का शेष)

- परम्परागत खेती की बजाय किसान बागवानी को अपनाएं। कचरा कम करने के लिए वैज्ञानिकों द्वारा विकसित बौनी किस्मों का इस्तेमाल करें।
- पोषण सुरक्षा के लिए पोषणयुक्त बागवानी फसल को बढ़ावा देकर किसान भाई अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं।
- बागवानी फसलों के प्रसंस्करण की सुविधाओं का अभाव होने के कारण किसान को अपनी फसल को सस्ते दामों पर बेचने को विवश होना पड़ता है इसलिए प्रसंस्करण सुविधा व संयंत्रों की वृद्धि ज़रूरी है।
- वातावरण संतुलन का महत्वपूर्ण घटक है- बागवानी। इस लिए ज़्यादा से ज़्यादा फल वाले पौधे लगा कर वातावरण की शुद्धि कर किसान अपनी आमदनी भी बढ़ा सकते हैं।
- मृदा संरक्षण में बागवानी एक अहम् भूमिका रखती है। इन क्षेत्रों में बागवानी फसलें उगाकर इन्हें मृदाक्षरण से बचाया जा सकता है।
- जैविक सब्जियों व जैविक फल उत्पादन से किसान भाई ज़्यादा आमदनी ले रहे हैं।

आगामी 2022 तक किसानों की आमदनी दुगना करने के आह्वान के लक्ष्य को प्राप्त करने में बागवानी कृषि एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। बागवानी फसल, बागवानी कचरा प्रबंधन जहाँ पर्यावरण सुरक्षा एवं खाद्य सुरक्षा को बढ़ावा देगा वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार के अवसर भी बढ़ाएगा।



(पृष्ठ 24 का शेष)

## 4. सुझाव :

- सभी क्रियाओं को बार-बार करवाना।
- द्यूशन लगाना।
- बच्चों के आत्मविश्वास को बढ़ावा देना।
- समूह में मिल-जुल कर रहने के लिए सिखाना।
- कोई भी काम अच्छा करने पर इनाम या शाबाशी के साथ प्रशंसा करना।
- आपस में बातचीत करने के लिए प्रोत्साहित करना।
- एक जैसी अवधारणाओं और योग्यताओं को बहुत सारी अवस्थाओं में सिखाना।
- नई अवधारणाओं को धीरे-धीरे सिखाना।
- किसी प्रश्न के जवाब के लिए ज़्यादा समय देना।
- सीखने और उचित ढंग से जवाब देने के लिए प्रोत्साहित करना।
- लिखने के कार्य की मात्रा कम करना।
- छोटी-छोटी उपलब्धियों पर ध्यान देना।
- कक्षा में मौखिक संकेतों के लिए नई वस्तुओं और विधियों का प्रयोग करना।
- छोटे व आसानी से बोलने वाले शब्दों का प्रयोग करना।
- सीखने की सामग्री का उचित ढंग से प्रयोग करना।



ISSN-0970-6518

# हरियाणा

# खेती

वर्ष 51

अंक 08



वार्षिक चंदा 150/-

अगस्त 2018

आजीवन सदस्यता 1500/-



**प्रकाशन अनुभाग**  
**विस्तार शिक्षा निदेशालय**

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

# हरियाणा श्वेती

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. ( 2 ) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित  
© कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 51

अगस्त 2018

अंक 08

## इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
कपास के पत्तों पर लगने वाले रोग व उनकी रोकथाम	मनमोहन सिंह, मनजीत सिंह एवं ओमेन्द्र सांगवान	2
मक्का के मुख्य रोग एवं उनकी रोकथाम	मनजीत सिंह, हवा सिंह सहारण एवं विनोद कुमार मलिक	3
मक्का में लगने वाले हानिकारक कीट : रोकथाम	रूमी रावल, कृष्णा रोलानियाँ एवं वरुण सैनी	4
बाग का सही चुनाव : लंबे समय तक बचाव	सौरभ, जीतराम शर्मा एवं विजय	5
नींबू घास : खेती एवं उपयोग	राजेश कुमार आर्य, वंदना एवं आर.पी. सहारण	6
भिण्डी फसल के हानिकारक कीटों का प्रबन्धन	दिलबाग सिंह	7
खेती में बढ़ता रासायनिक प्रदूषण	मीनू, योगिता बाली एवं गुलाब सिंह	7
एलोवेरा की खेती : किसानों को लाभ देती	पूजा, एस. एस. ढांडा एवं पूनम गोदारा	8
फसल अवशेष जलाना: भूमि के लिए एक अभिशाप	हरदीप सिंह श्योराण, वेद कुमार फोगाट एवं रिधम	9
बायोगैस उत्पादन : अक्षय ऊर्जा का बेहतर विकल्प	तन्वी एवं स्नेह गोयल	10
वर्मी कम्पोस्ट खाद और इसके लाभ	सुशांत भारद्वाज, यादविका एवं वाई. के. यादव	11
तिल की फसल - हानिकारक कीटों की रोकथाम : भरपूर पैदावार	रूमी रावल एवं तरुण वर्मा	18
मुर्गी पालन में समस्याएं (दोष) : रोकथाम	मनीष शर्मा, गौरी चंद्रात्रे एवं के. के. जाखड़	19
उपभोक्ता के अधिकार	कंचन शिला, बीनू सहगल एवं रीना	20
जलवायु परिवर्तन का खेती पर प्रभाव एवं बचाव	पूजा, एस.एस. ढांडा एवं दीपिका राठी	22
विभिन्न पेय पदार्थों का स्वास्थ्य पर प्रभाव	वीनू सांगवान एवं मीनू सिरौही	23
मौसम और हमारा स्वास्थ्य	दिवेश चौधरी, ममता एवं राज सिंह	24
कृषि विकास में कृषि संस्थानों का योगदान	सूवे सिंह एवं संदीप भाकर	26
किसानों की आय बढ़ाने में कृषि प्रसार तकनीकों की उपयोगिता	प्रदीप कुमार चहल, भरत सिंह एवं कृष्ण यादव	27
केंचुआ : मिट्टी के गुणों के अधिमिश्रण के रूप में	शेफाली एवं आर. के. गुप्ता	28
Biological Management of <i>Parthenium hysterophorus</i> (Congress Grass) by <i>Zygogramma bicolorata</i>	Bajrang Lal Sharma, B. R. Kamboj and Anil Kumar	29
Management of Foliar Diseases of Cotton	Rakesh Kumar	30
Dairy Waste Management and Composting	Tanvi, Surbhi and Ankit Kumar	31
<b>साई स्तम्भ : सितम्बर मास के कृषि कार्य</b>		<b>13</b>

तकनीकी सलाहकार :

डॉ. आर. एस. हुड्डा

निदेशक, विस्तार शिक्षा

संकलन :

डॉ. एम. एस. ग्रेवाल

परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)

विस्तार शिक्षा निदेशालय

सह-निदेशक (प्रकाशन)

डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी

संपादक :

डॉ. सुषमा आनंद

सह-निदेशक (हिन्दी)

सुनीता सांगवान

सम्पादक (अंग्रेजी)

प्रकाशन अनुभाग

आवरण एवं सज्जा:

राजेश कुमार एवं कुलदीप कुमार

**लेखकों से अनुरोध :** हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। कृपया अपने विभाग का नाम अवश्य लिखें। टाईपिंग के लिए कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं [haryanaketihau@gmail.com](mailto:haryanaketihau@gmail.com)



# कपास के पत्तों पर लगने वाले रोग व उनकी रोकथाम

मनमोहन सिंह, मनजीत सिंह एवं ओमेन्द्र सांगवान  
कपास अनुभाग, आनुवंशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कपास में लगने वाले रोग मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं। (1) पत्तों पर लगने वाले रोग (2) जड़ पर लगने वाले रोग।

पत्तों पर लगने वाले रोगों में पत्ता मरोड़ रोग मुख्य है। इसके पश्चात् कोणदार धब्बों का जीवाणु रोग भी महत्वपूर्ण है। जड़ में लगने वाले रोगों में जड़ गलन तथा झुलसा रोग मुख्य है। इसके अतिरिक्त टिण्डा गलन जोकि फफूंद, जीवाणु तथा कीड़ों द्वारा उत्पन्न होता है, अधिक बरसात में एक महत्वपूर्ण समस्या का रूप धारण कर लेता है। इसलिए यह अति आवश्यक है कि इन रोगों की सही पहचान कर उचित रोकथाम की जा सके। इस लेख में कपास के पत्तों पर लगने वाले मुख्य रोग व उनकी रोकथाम के उपाय दिए गए हैं।

**1. पत्तामरोड़ रोग:** यह कपास का सबसे मुख्य रोग है। सबसे पहले ऊपर की कोमल पत्तियों पर इसका असर दिखाई पड़ता है, पत्तियां ऊपर की तरफ मुड़ कप जैसी आकृति की हो जाती हैं और कहीं-कहीं पर पत्तियों की निचली तरफ नसों पर पत्ती की आकार की बड़वार भी दिखायी देती है। ऐसे पौधे छोटे रह जाते हैं, इन पर फूल, कली व टिण्डे नहीं लगते, इनकी बड़वार एकदम रूक जाती है और इसका उपज पर बहुत विपरीत असर पड़ता है। यह रोग एक जैमिनी विषाणु द्वारा होता है। सफेद मक्खी इस रोग को लाने में सहायक है। बीज, ज़मीन या छुआछूत द्वारा यह रोग नहीं फैलता है। यह रोग पौधे की किसी भी अवस्था में आ सकता है। इस रोग से 80-90 प्रतिशत तक फसल में नुकसान हो सकता है। यदि यह रोग फसल की प्रारम्भिक अवस्था में आ जाये तो ज़्यादा नुकसान होता है और फसल की पछेती अवस्था में आये तो पैदावर पर लगभग कोई फर्क नहीं पड़ता।

जब यह रोग ज़्यादा हो वहां पर देसी कपास बोई जाए क्योंकि देसी कपास में यह रोग नहीं लगता। सफेद मक्खी का पूर्ण रूप से नियन्त्रण रखें। कई प्रकार के खरपतवार भी इस रोग को फैलाने में सहायक हैं। इसलिए खेतों को, आसपास के क्षेत्रों को तथा नालियों आदि को बिल्कुल साफ रखना बहुत ज़रूरी है। भिण्डी पर भी यह रोग पाया जाता है। इसलिए जहां पर यह रोग लगता हो वहां पर भिण्डी की काशत ना करें। इस रोग की रोकथाम के लिए कोई फफूंदनाशक उपयोगी नहीं है इसके बचाव के लिए कुछ सावधानियां बरतनी ज़रूरी हैं।

- फसल की अगोती बिजाई।
- रोगरोधी किस्मों का प्रयोग।
- सफेद मक्खी को नियंत्रण में रखना।
- खेत के आसपास खरपतवार को नहीं पनपने देना।

**जीवाणु अंगमारी या कोणदार धब्बों का रोग :** यह रोग पौधे के सभी भागों पर अपने लक्षण दिखाता है। इसके मुख्य लक्षण हैं टहनियों पर धब्बे, पत्तों पर कोनेदार धब्बे व टिण्डों पर भी धब्बे पाए जाते हैं। इस रोग के

लक्षण पत्तों पर कोणदार जल सिक्त (पानीदार) धब्बों के रूप में नज़र आते हैं। ये गहरे-भूरे होकर किनारों से लाल या जामुनी रंग के हो जाते हैं व कभी-कभी आपस में मिले हुए होते हैं व तनों पर लम्बे या अण्डाकार काले रंग के धब्बे बनते हैं। प्रकोप की अवस्था में कोणदार धब्बे शिराओं के पास सिमट जाते हैं और इस प्रकार शिराएं काली पड़ जाती हैं जिससे कि पत्ता सिकुड़ जाता है और पीला पड़ कर गिर जाता है।

**2. माइरोथिसियम पत्ता छेदक धब्बा रोग:** यह रोग माइरोथिसियम रोडीडम नामक फफूंद से होता है। इस रोग के प्रमुख लक्षण रोगी पत्तों पर लाल बैंगनी झलक लिए हल्के-भूरे रंग की फफूंद की बिन्दियों वाले धब्बे दिखाई पड़ते हैं। आरम्भ में इन धब्बों का आकार पिन के सिर जैसा होता है। प्रकोप की अवस्था में धब्बे आपस में मिल जाते हैं। प्रायः रोग ग्रस्त भाग पत्तों से गिर जाते हैं। इस से पत्तों में छेद हो जाता है। ऐसे ही लक्षण फल (टिण्डे) के नीचे की छोटी पत्ती और कभी-कभी टिण्डों पर नज़र आते हैं।

**3. एन्थ्रैक्नोज :** यह बीमारी पौधे के हर भाग पर पौधे की किसी भी अवस्था में आती है। शिशु पौधे पर लाल-लाल धब्बे बनते हैं और सारे तने पर छा जाते हैं जिससे पौधे मर जाते हैं। जल सिक्त, अन्दर धंसे धब्बे बनते हैं जिसके किनारे लाल रंग के होते हैं और बाद में नारंगी रंग का फफूंद बीजाणु इन पर छा जाता है। रोगग्रस्त टिण्डों पर धब्बे अन्दर तक फैल जाते हैं और डोडियों पर गुलाबी पिण्ड दिखाई देते हैं।

**4. ग्रैमिल्ड्यू व दहिया रोग :** यह रोग देसी कपास में लगता है जब फसल लगभग पक जाती है और अधिकतर कपास पहले ही चुन ली जाती है। मिल्ड्यू के धब्बे पुराने पत्तों की निचली सतह पर छोटे, अनियमित व सफेद कोनेदार दिखाई पड़ते हैं। रोगग्रस्त पत्ते जल्दी ही गिर जाते हैं।

**5. पैराबिल्ट :** यह वर्तमान समय में कपास का मुख्य रोग है। यह समस्या आमतौर पर अगस्त से अक्टूबर महीनों के बीच आती है। इसका मुख्य कारण लम्बे समय तक सूखा रहने के पश्चात् सिंचाई देना व वर्षा का होना है। रेतीली ज़मीन में इसका अधिक प्रकोप होता है। इस समस्या के कारण पौधों के पत्ते अचानक मुरझा जाते हैं और पौधे शीघ्र सूखने लगते हैं लेकिन पौधे की जड़ें सामान्य रहती हैं और इसमें कोई रोगाणु शामिल नहीं होता। इस समस्या के लक्षण दिखाई देने के 48 घंटों के अन्दर कोबाल्ट क्लोराइड 2.0 ग्राम/200 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

**कपास के रोगों की सामूहिक रोकथाम:**

**बीज उपचार :** पौधों को ज़मीन से उत्पन्न बहुत से फफूंदों से तथा बीज में रहने वाले जीवाणु से बचाव के लिए फफूंदनाशक दवाइयों से उपचारित करें।

**छिड़काव कार्यक्रम :** बिजाई के 6 सप्ताह बाद अथवा जून के अन्तिम या जुलाई के पहले सप्ताह में स्ट्रेप्टो साइक्लिन (6-8 ग्राम प्रति एकड़) व कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (600-800 ग्राम प्रति एकड़) को 150-200 लीटर पानी में मिलाकर 15-20 दिन के अन्तर पर लगभग चार छिड़काव करें। यदि गन्धक 10 कि.ग्रा./एकड़ धूँड़ें या बाविस्टिन (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें तो देसी कपास के ग्रैमिल्ड्यू रोग पर नियन्त्रण पाया जा सकता है।



# मक्का के मुख्य रोग एवं उनकी रोकथाम

मनजीत सिंह, हवा सिंह सहारण एवं विनोद कुमार मलिक  
पौध रोग विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मक्का दुनिया में सबसे महत्वपूर्ण अनाज फसलों में से एक है। गेहूं और चावल के बाद भारत में मक्का तीसरा सबसे महत्वपूर्ण खाद्य अनाज है इसका मुख्य रूप से प्रत्यक्ष मानव उपभोग और पशु पोल्ट्री फीड के लिए उपयोग किया जाता है। मक्का को अनाज के बीच अपनी उपज क्षमता के कारण चमत्कारिक फसल या अनाज की रानी के रूप में जाना जाता है। भारत में मक्का लगभग 9.26 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र में 2.4 मिलियन टन उत्पादन के साथ उगाया जाता है और औसत उत्पादकता लगभग 2560 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर है। हरियाणा में खरीफ के दौरान क्रमशः 8 हजार हैक्टेयर क्षेत्र में 18 हजार टन उत्पादन और 2250 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की औसत उपज के साथ खेती की जाती है।

मक्का का विश्व कृषि में महत्वपूर्ण स्थान है। भारत में अनाजों के क्षेत्र में प्रति हैक्टेयर पैदावार में मक्का का तीसरा स्थान, कुल उत्पादन में चौथा तथा कुल क्षेत्र में पांचवां स्थान है। लेकिन मक्का में लगने वाले रोग इसकी उत्पादकता व गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। मक्का की फसल पर 65 रोगों में से 16 रोग फसल पर प्रतिकूल असर डालते हैं। इन रोगों के कारण फसल में 13.2 प्रतिशत की हानि होती है। मौसम अनुकूल होने के कारण खरीफ मक्का में रोग अधिक लगते हैं। यदि किसान भाई मक्का में लगने वाले रोगों की सही पहचान करके उनकी रोकथाम कर लें तो मक्का का उत्पादन व उत्पादकता को काफी हद तक बढ़ाया जा सकता है।

मक्का में लगने वाले प्रमुख रोगों के लक्षण व उनकी रोकथाम के उपाय निम्नलिखित हैं :

**बीज गलन और पौध अंगमारी :** यह रोग पिथियम, पैनिसिलियम व फ्यूजेरियम नामक फफूंद के कारण होता है। इस रोग से बीज या उगता हुआ पौधा गल या मर जाता है व जिससे जमाव कम होता है और पौधों का फुटाव कम होने से पौधों की संख्या कम भी हो जाती है।

**रोकथाम :** इस रोग के समाधान के लिए बिजाई के समय बीज का उपचार थाइरम (4 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) नामक दवाई से करें।

## तना गलन

**पिथियम - तना गलन :** यह रोग पिथियम एफेडिरमेटन नामक फफूंद के कारण होता है। यह रोग पौधे की नीचे की तीन या चार पोरियों में से किसी एक को प्रभावित करता है। इससे तने की बाहरी शाल और केन्द्रीय भाग गल जाते हैं। पौधा गिर जाता है, गिरा हुआ पौधा कुछ दिनों

तक जीवित रहता है क्योंकि अभी उसके वैसकुलर बण्डल, रोग ग्रस्त वाले भाग व रूई जैसे रेशे से बन जाते हैं।

**जीवाणु तना गलन :** यह रोग इर्विनिया क्राईसेथिमी नामक जीवाणु के कारण होता है। इस रोग में सबसे पहले ऊपर के पत्ते सूखने या मुरझाने लगते हैं। तने के नीचे की पोरियां नरम व बदरंग -सी हो जाती हैं। अपना हरा रंग खोने के साथ-साथ ऐसी दिखाई देती हैं जैसे तने का रोगग्रस्त भाग पानी में उबाला गया हो। रोगग्रस्त पौधे गिर जाते हैं तथा गलने के बाद बदबू आती है तथा अंत में मर जाते हैं।

**रोकथाम :** दोनों प्रकार के तना गलन की रोकथाम के लिए फसल उसी जगह लेनी चाहिए जहां पानी का निकास अच्छा हो। बिमारी वाले पौधों को नष्ट कर दें। जब फसल 5-7 सप्ताह की हो जाये तब 150 ग्राम कैप्टान तथा 33 ग्राम स्टेबल बलीचिंग पाऊडर का घोल 100 लीटर पानी में मिलाकर बनायें और इसे पौधों के पास डालकर मिट्टी गीली कर दें। उन्नत किस्में लगायें, पौधों को सेम से बचायें।

**पत्ता अंगमारी या मेडिस पत्ता अंगमारी :** यह रोग बाईपोलरिस मेडिस नामक फफूंद से होता है। इस रोग से पत्तों पर सलेटी व भूरे रंग के धब्बे बनते हैं तथा उसके चारों ओर गहरे पीले हरे रंग के बनते हैं और पत्तों को सुखा देते हैं। यदि यह रोग फसल की प्रारम्भिक अवस्था में लग जाये तथा इसकी ठीक समय पर रोकथाम न की जाए तो उपज की भारी हानि हो सकती है।

**रोकथाम :** इस रोग के दिखाई देते ही 600 ग्राम मैन्कोजेब नामक दवाई 200 लीटर पानी में प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें। इससे पश्चात 10-15 दिन के अंतर पर एक या दो और छिड़काव करें। मक्का की रोग प्रतिरोधी किस्में लगायें।



## आवश्यक सूचना

“हरियाणा खेती” मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

- सह-निदेशक ( प्रकाशन )

# मक्का में लगने वाले हानिकारक कीट : रोकथाम

रूमी रावल, कृष्णा रोलानियाँ एवं वरुण सैनी

कीट विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मक्का खरीफ ऋतु की प्रमुख फसल है, परन्तु जहां सिंचाई के पर्याप्त साधन हों वहां पर इसे रबी तथा खरीफ की अगेती फसल के रूप में लिया जा सकता है। यह फसल कार्बोहाइड्रेट्स का बहुत अच्छा स्रोत है। इसके अलावा इसमें विटामिन ए, बी<sub>1</sub>, बी<sub>2</sub>, नियासिन तथा अन्य पोषक तत्व होते हैं। मक्का बेबी कॉर्न, आटा, भुने भुट्टों, अर्धपके व भुने दानों, कॉर्नफ्लैक्स आदि अनेक तरीकों से खाया जाता है। मक्का के विभिन्न उपयोगों को देखते हुए इसकी उपज बढ़ाना जरूरी है। परन्तु इसके सफल उत्पादन में कई प्रकार की अड़चनें जैसे कीट व बीमारियां आदि आड़े आ जाती हैं। कीट फसल की पैदावार व गुणवत्ता को कम कर देते हैं। इसलिए यदि इन कीटों का समय पर नियंत्रण कर लिया जाए तो नुकसान को काफी कम किया जा सकता है। मक्का में लगने वाले कीटों का विवरण व प्रबंधन इस प्रकार से है :

**तना छेदक :** यह मक्का का सबसे अधिक हानिकारक कीट है। फसल को नुकसान सूंडियों द्वारा होता है। इसकी सूंडियां 20-25 मि.मी. लम्बी और गन्दे से सलेटी सफेद रंग की होती हैं। जिसका सिर काला होता है और चार लम्बी भूरे रंग की लाइनें होती हैं। इसकी सूंडियां तनों में सुराख करके पौधों को खा जाती हैं। जिससे छोटी फसल में पौधों की गोभ सूख जाती है। बड़े पौधों में ये बीच के पत्तों पर सुराख बना देती हैं। इस कीट के आक्रमण से पौधे कमजोर हो जाते हैं और पैदावार बहुत कम हो जाती है। इस कीट का प्रकोप जून से सितम्बर माह में ज्यादा होता है।

## रोकथाम

- मक्का की फसल लेने के बाद, बचे हुए अवशेषों, खरपतवार और दूसरे पौधों को नष्ट कर देना चाहिए।
- ग्रसित पौधों को निकालकर नष्ट कर देना चाहिए।
- इस कीट की रोकथाम के लिए फसल उगने के 10वें दिन से शुरू करके 10 दिन के अन्तराल पर 4 छिड़काव इस नीचे दिये गए ढंग से करने चाहिए।
  - i. पहला छिड़काव 200 ग्राम कार्बेरिल (सेविन) 50 घु. पा. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से फसल उगने के 10 दिन बाद करें।
  - ii. दूसरा छिड़काव 300 ग्राम कार्बेरिल 50 घु. पा. को 300 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से फसल उगने के 20 दिन बाद करें।
  - iii. तीसरा छिड़काव फसल उगने के 30 दिन बाद 400 ग्राम कार्बेरिल 50 घु. पा. को 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ करें।
  - iv. चौथा छिड़काव उगने के 40 दिन बाद तीसरे छिड़काव की तरह ही करें।

**चूरड़ा (श्रिप्स) :** ये भूरे रंग के कीट होते हैं जो पत्तों से रस चूसकर फसल को नुकसान पहुंचाते हैं। ये छोटे पौधों की बढ़वार को रोक देते हैं। ग्रसित पौधों के पत्तों पर पीले रंग के निशान पड़ जाते हैं। ये कीट फसल को अप्रैल से जुलाई तक नुकसान पहुंचाते हैं।

**हरा तेला :** ये हरे रंग के कीट होते हैं। इसके शिशु व प्रौढ़ पत्तियों की निचली सतह से रस चूसते रहते हैं। ये भी अप्रैल से जुलाई तक फसल को नुकसान पहुंचाते हैं।

## रोकथाम

- चूरड़ा और हरा तेला की रोकथाम के लिए 250 मि.ली. मैलाथियान 50 ई. सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।
- खेत में व खेत के आसपास उगे खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिए।

**सैनिक कीट :** फसल को नुकसान सूण्डियों द्वारा होता है। छोटी सूण्डियां गोभ के पत्तों को खा जाती हैं और बड़ी होकर दूसरे पत्तों को भी छलनी कर देती हैं। ये कीट फसल में रात को नुकसान करते हैं। प्रकोपित पौधों में प्रायः इस कीट का मल देखा जाता है। ये कीट फसल को सितम्बर - अक्टूबर में ज्यादा नुकसान पहुंचाते हैं।

**टिट्टा :** इसे फुदका या फडका भी बोलते हैं। क्योंकि ये फुदक-फुदक कर चलते हैं। ये कीट भूरे मटमैले से रंग के होते हैं। जब पौधे छोटी अवस्था में होते हैं तब इस कीट से फसल में ज्यादा नुकसान होता है।

## रोकथाम

- सैनिक कीट और फुदका की रोकथाम के लिए 10 कि.ग्रा. मिथाईल पैराथियान 2 प्रतिशत घूड़ा प्रति एकड़ के हिसाब से धूँ दें।

**बालों वाली सूंडिया (कातरा) :** फसल को नुकसान सूण्डियों द्वारा होता है। जब ये सूण्डियां छोटी अवस्था में होती हैं तो पत्तियों की निचली सतह पर इकट्ठी रहती हैं तथा पत्तों को छलनी कर देती हैं। जब ये बड़ी अवस्था में होती हैं ये सारे खेत में इधर-उधर घूमती रहती हैं और पत्तों को खाकर नुकसान पहुंचाती हैं।

## रोकथाम

- फसलों का निरीक्षण अच्छी तरह से करना चाहिए तथा कातरे के अण्ड समूहों को नष्ट कर दें।
- आक्रमण के शुरू-शुरू में छोटी सूण्डियां कुछ पत्तों पर अधिक संख्या में होती हैं। इसलिए ऐसे पत्तों को सूण्डियों के समेत तोड़कर ज़मीन में गहरा दबा दें या फिर मिट्टी के तेल के घोल में डालकर नष्ट कर दें।
- कातरा की बड़ी सूण्डियों को भी इकट्ठा कर ज़मीन में गहरा दबा दें या मिट्टी के तेल में डालकर नष्ट कर दें।
- खेत में व खेत के आसपास से खरपतवार को नष्ट कर देना चाहिए।
- खेतों में खरीफ फसलों को काटने के बाद गहरी जुताई करें जिससे ज़मीन में छुपे हुए प्यूपे बाहर आ जाते हैं और पक्षियों द्वारा खा लिए जाते हैं।
- बड़ी सूण्डियों की रोकथाम के लिए 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफ्रास (न्यूवाक्रान) 36 एस.एल. या 200 मि.ली. डाईक्लोवांस (न्यूवान) 76 ई.सी. या फिर 500 मि.ली. क्विनलफास (एकालक्स) 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।





# बाग का सही चुनाव : लंबे समय तक बचाव

सौरभ, जीतराम शर्मा एवं विजय

उद्यान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कृषि के क्षेत्र में विविधता लाने में बागवानी बहुत अहम है। फल-फूल एवं सब्जियों की खेती आमदनी का एक अच्छा साधन भी है। हरियाणा की जलवायु कई प्रकार के फलदार वृक्षों जैसे अमरूद, किन्नु, माल्टा, बेर, स्ट्राबेरी, आंवला, नींबू, आड़ू व आम के लिए उपयुक्त है। यदि फलों की खेती वैज्ञानिक आधार और सूझबूझ से की जाए तो काफी मुनाफा कमाया जा सकता है।

बाग लगाने से पहले उसकी योजना बनाना बहुत आवश्यक है क्योंकि फल-वृक्ष दीर्घकालीन होते हैं। इसके लिए ऐसी जगह का चुनाव करना चाहिए जहां पर यातायात के अच्छे साधन हों, मिट्टी उपजाऊ हो, सिंचाई एवं जल निकास की अच्छी सुविधा हो तथा अगर संभव हो तो ईंट के भट्टों से दूर व मुख्य सड़क के पास हो। बाग लगाते समय निम्नलिखित बातों को अपनाना बहुत आवश्यक व लाभदायक है :

## खेत का चुनाव

बाग लगाने के लिए गहरी जल निकास वाली, दोमट व उपजाऊ भूमि होनी चाहिए, जिसकी दो मीटर की गहराई तक किसी प्रकार की सख्त सतह न हो, पानी का स्तर तीन मीटर गहराई से कम न हो। जहां तक संभव हो सके दलदली, लवणीय या अम्लीय भूमि में फलों की खेती न की जाए। अतः बाग लगाने से पहले मिट्टी व पानी का परीक्षण करवा लें। 2 मीटर की गहराई तक मिट्टी का नमूना लें। एक एकड़ खेत में चार या पांच जगह से विभिन्न गहराइयों 0 से 15 सें.मी., 15 से 30 सें.मी., 30 से 60 सें.मी., 60 से 90 सें.मी., 90 से 120 सें.मी., 120 से 150 सें.मी. और 150 से 200 सें.मी. तक कुल सात नमूने लें। नमूना लेते समय ज़मीन में पाई जाने वाली कंकर की तह की गहराई व मोटाई अवश्य नाप लें और इसका नमूना नंबर व गहराई अवश्य लिखें। मिट्टी परीक्षण ज़िले में स्थित मृदा एवं जल परीक्षण प्रयोगशाला में या चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के मृदा विभाग में करवाया जा सकता है।

## फलदार पौधों की लवणीय सहनशीलता

क. अत्यधिक लवण रोधक - बेर, जामुन

ख. मध्य लवण रोधक - आंवला, अनार, अमरूद

ग. निम्न लवण रोधक - आम, आड़ू, आलूबुखारा, नींबू जाति के फल।

बाग लगाने का समय : हरियाणा राज्य की जलवायु के अनुसार बाग

लगाने के लिए जनवरी-फरवरी व अगस्त से अक्टूबर का समय अति उत्तम है। आंवला, बेर, आड़ू व अनार आदि लगाने के लिए 15 दिसंबर से 15 फरवरी तक का समय बहुत अच्छा रहता है। सदाबहार पेड़ जैसे आम, अमरूद, नींबू जाति के पेड़ अगस्त से अक्टूबर के बीच लगाएं।

**गड्डों का खोदना व फासला :** 1 x 1 x 1 मीटर के आकार का गड्डा पौधे लगाने से लगभग एक महीना पहले खोदें और गड्डे में ऊपर की आधा मीटर सतह की मिट्टी व गोबर की सूखी खाद को बराबर हिस्सों में व 2 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट को अच्छी तरह मिलाकर भरें और गड्डे की मिट्टी को अच्छी तरह बैठाने के लिए खुला पानी दें। पौधे लगाने के बाद पौधों को 30 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस प्रति गड्डे में पानी मिलाकर दें।

**पौधों में निम्नलिखित सारणी अनुसार फासला रखें -**

फलदार पौधे का नाम	दूरी (मीटरों में) (कतार से कतार व पौधे से पौधा)	प्रति एकड़ पौधे की संख्या
फालसा, करौंदा	1.5-2	1742-1054
आम कलमी (बौना)	5	156
आम कलमी (मध्यम तथा भारी)	8-9	72-56
आंवला, चीकू, बेल-पत्थर, लीची		
किन्नु, नींबू	5-6	156-110
संतरा, अमरूद, शहतूत, आड़ू, आलू बुखारा	6-7	110-90

## किस्म व पौधों का चुनाव

उसी किस्म का चुनाव करें जो आपके क्षेत्र में अधिक पैदावार दे। इसकी जानकारी अपने नज़दीक के बागवानी विशेषज्ञ से ज़रूर लें। अच्छे व रोग रहित पौधे किसी सरकारी या मान्यता प्राप्त नर्सरी से लें। नर्सरी से पौधे निकालते समय अच्छे ढंग से पूरी गाची लें व जड़ों का पूरा ध्यान रखें की टूटने न पाएं।

नए पौधे लगाने के बाद बांस व सोटी का सहारा दें। गर्मी व सर्दी से पौधों को बचाते रहें। जंगल जलेबी, अर्जुन, जामुन, देसी आम और शहतूत आदि वायुरोधक के रूप में लगाएं। जानवरों से सुरक्षा के लिए कंटली तार या पौधों की बाड़ लगाएं जिसके लिए करौंदा, बोगनविलिया और जट्टी-खट्टी का इस्तेमाल करें। नींबू जाति के बाग में जट्टी-खट्टी की बाड़ न लगाएं। बाग लगाते समय इन सभी बातों का ध्यान रखकर अपने बाग को दीर्घजीवी बनाएं और लंबे समय तक अच्छे गुण वाले फलों की अच्छी पैदावार लें।



# नींबू घास : खेती एवं उपयोग

राजेश कुमार आर्य, वंदना एवं आर.पी. सहारण

आनुवंशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

नींबू घास को भारत में हरी चाय व गंधतराना के नाम से जाना जाता है। इसकी दो प्रजातियां भारत में पाई जाती हैं। पहली प्रजाति सिम्बोपोगोन फ्लैक्सुओसस है जिसे पूर्वी भारतीय नींबू घास कहा जाता है, इसका तना आधार के पास से बैंगनी रंग का होता है। जिसमें तेल की गुणवत्ता अच्छी होती है। दूसरी प्रजाति सिम्बोपोगोन पैन्डुलस है जिसे पश्चिमी भारतीय नींबू घास कहा जाता है। इसका तना सफेद होता है। इसे जम्मू लेमनग्रास के नाम से भी जाना जाता है।

इसकी पत्तियों में से निकाले गये तेल का मुख्य घटक सिट्रल है जो कि 75-80 प्रतिशत तक होता है। जिससे अल्फा आयोनेन तथा बीटा आयोनेन तैयार किये जाते हैं। अल्फा आयोनेन से गंध द्रव्य तथा कई सगंध रसायन तैयार किये जाते हैं। जिसका प्रयोग उच्चकोटि के इत्रों के निर्माण एवं सौंदर्य प्रसाधनों/सामग्रियों तथा साबुनों के निर्माण में किया जाता है। जबकि बीटा आयोनेन 'विटामिन ए' बनाने में प्रयोग किया जाता है।

**भूमि एवं जलवायु :** इसकी खेती के लिए गर्म एवं आर्द्र, खुली धूप तथा 200-250 सें.मी. (न्यूनतम) वार्षिक वर्षा अनिवार्य है। आमतौर पर इसे हर प्रकार की भूमि में लगाया जा सकता है परन्तु उपजाऊ दोमट मिट्टी जहाँ जल भराव न हो, इसकी खेती के लिए अधिक उपयोगी है।

**किस्म :** आर आर एल- 16, सीकेपी 25, ओडी 19, ओडी 58, कृष्णा, कावेरी, प्रगति एवं प्रसून प्रमुख किस्में हैं।

**खेत की तैयारी :** खेत को अच्छी तरह समतल करके, हैरो/कल्टीवेटर आदि से मिट्टी को भुरभुरा बना लें ताकि स्लिप की रोपाई भी अच्छी तरह हो तथा पानी भी खेत में आसानी से एक समान लग सके।

**खाद :** नींबू घास की जैविक खेती के लिए 10 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद प्रति एकड़ डालें, तथा प्रत्येक कटाई के बाद 2 टन प्रति एकड़ देसी खाद डालकर सिंचाई करें।

**रोपाई का समय एवं विधि :** इसकी रोपाई के लिए वर्षा ऋतु अधिक उत्तम मानी जाती है। इसे लगाने के लिए पुराने स्वस्थ पौधों से ली गई स्लिप्स को 5-8 सें.मी. गहरे गड्ढे करके सीधी लगानी चाहिए तथा स्लिप का निचला हिस्सा मिट्टी से पूरी तरह दबाना चाहिए। रोपाई के तुरन्त बाद खेत में सिंचाई करें। खेत की उर्वरा शक्ति अनुसार स्लिप्स को 60×30 या 60×45 सें.मी. की दूरी पर लगाएं।

**सिंचाई प्रबंधन :** एक बार जड़ पकड़ लेने के बाद नींबू घास को ज़्यादा पानी की ज़रूरत नहीं होती लेकिन अधिक पैदावार लेने के लिए गर्मियों में 10 दिन तथा सर्दियों में 15 दिन बाद हल्का पानी लगायें ताकि नमी बनी रहे तथा 4-5 कटाई ली जा सकें। जहाँ पानी की उपलब्धता कम है वहाँ पर 2-3 कटाइयां ली जा सकती हैं। पहले सिंचाई करना बन्द कर दें।

**निराई-गुड़ाई :** शुरू में 2-3 गुड़ाइयाँ प्रत्येक सिंचाई के बाद करें तथा बाद में हर कटाई के बाद एक गुड़ाई अच्छी तरह से करें। आरम्भ में खरपतवार अधिक होते हैं तथा बाद में पौधों की बढ़वार अच्छी होने से घट जाते हैं।

**पौध संरक्षण :** दीमक से बचाव के लिए 2 लीटर क्लोरपाईरीफास को 20-25 किलो मिट्टी में मिलाकर खेत में छिड़क दें।

**कटाई :** उपजाऊ एवं सिंचित क्षेत्रों में पहली कटाई रोपाई के 90-100 दिन बाद ली जा सकती है। फसल को ज़मीन से 4-6 इंच ऊपर से काटें। इसके बाद 45-60 दिन के अन्तराल पर कटाई ली जा सकती है। उपजाऊ भूमि व सिंचाई की उपलब्धता के आधार पर 4-5 कटाई प्रति वर्ष ली जा सकती है। एक बार लगाने पर 5-6 वर्षों तक कटाई ली जा सकती है।

**तेल निकालना :** इसके पत्तों से तेल निकालने के लिए संयंत्र आवश्यक है। सभी सगंध पौधों का तेल एक ही प्रकार के संयंत्र से निकाल सकते हैं। तेल आसवन विधि द्वारा निकाला जाता है। इसमें लगभग 4-6 घण्टों का समय लगता है।

**तेल की मात्रा :** पौधों में तेल की मात्रा भूमि की उर्वरा शक्ति, जलवायु, प्रजाति, सिंचाई एवं कटाई के समय पर निर्भर करती है। प्रथम वर्ष में लगभग 60 लीटर तेल प्रति एकड़ तथा बाद में 100 लीटर प्रति एकड़ प्राप्त किया जा सकता है। तेल का भाव लगभग 350 रुपये प्रति लीटर है।



## आवश्यक सूचना

“हरियाणा खेती” मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

- सह-निदेशक ( प्रकाशन )

# भिण्डी फसल के हानिकारक कीड़ों का प्रबन्धन

दिलबाग सिंह

कृषि विज्ञान केन्द्र, अंबाला

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भिण्डी फसल में हरा तेला, सफेद मक्खी, अष्टपदी (लाल माईट) व चित्तीदार तना व फलछेदक सूण्डी आदि कीड़ों का प्रकोप होता है, परिणाम स्वरूप फसल की पैदावार प्रभावित होती है। इस लेख में मुख्य कीड़ों के लक्षण तथा प्रबन्ध के बारे में बताया जा रहा है ताकि किसान समय पर इन कीड़ों का प्रबन्ध करके भिण्डी फसल की अच्छी पैदावार ले सकें।

**हरा तेला :** इस कीड़े के हरे पीले रंग के शिशु व प्रौढ़ पत्तों की निचली तरफ से मई से सितम्बर तक रस चूसते हैं। प्रभावित पत्ते पीले पड़ जाते हैं और किनारों से ऊपर की ओर मुड़कर कप का आकार बना लेते हैं। ज्यादा प्रकोप की स्थिति में पत्ते जले-जले हो जाते हैं तथा सूखकर झड़ जाते हैं।

**प्रबन्धन :** इस कीट से बचाव के लिए बीज का उपचार इमीडाक्लोपरिड 70 डब्ल्यू एस. 5 ग्राम या क्रुजर 35 एस.एस. (थायोमिथेक्षम) 5.7 ग्राम बीज की दर से करें। बीज उपचार के लिए बीज को 6 से 12 घंटे तक पानी में भिगोयें। भीगे हुए बीज को आधे से एक घण्टे तक छाया में सुखायें और ऊपर लिखित दवाई डालकर अच्छी तरह मिला दें। बीज उपचारित न किया हो तो भिण्डी की खड़ी फसल में हरा तेला के उपचार के लिए एकटारा 25 डब्ल्यू.जी. (थायोमिथेक्षम) नामक दानेदार कीटनाशक 40 ग्राम को 150-200 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ में छिड़कें। आवश्यकतानुसार 20 दिन के अन्तर पर इस कीटनाशक को दोहराएं। भिण्डी में फल लगने पर, जो खाने के लिए उगाई गई हो, यह छिड़काव न करें तथा 300-500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. 200-300 मि.ली. पानी में घोलकर प्रति एकड़ 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

**सफेद मक्खी :** इस कीट के शिशु तथा प्रौढ़ पत्तों की निचली सतह से रस चूसते हैं तथा पीत शिरा मोजैक (पीलिया) रोग फैलाते हैं।

**प्रबन्धन :** जैसा कि हरा तेला कीड़े की रोकथाम में बताया गया है।

**अष्टपदी (लाल माईट) :** इसके शिशु एवम प्रौढ़ पत्तों की निचली सतह से रस चूसते हैं। ग्रसित पत्तों पर छोटे-2 सफेद धब्बे बन जाते हैं। यह माईट पत्तों पर जाला बना देती है। ज्यादा प्रकोप होने की स्थिति में लाल माईट फलों व पत्तों की नोक पर इकट्ठी हो जाती हैं।

**प्रबन्धन :** अष्टपदी प्रबन्ध के लिए प्रेम्पट 25 ई.सी. नामक दवा का 300 मि.लीटर प्रति एकड़ के दो छिड़काव 200 लीटर पानी में मिलाकर 10 दिन के अन्तर पर करें। आवश्यकतानुसार इसे फिर दोहराएं।

(शेष पृष्ठ 11 पर)

# खेती में बढ़ता रासायनिक प्रदूषण

मीनू, योगिता बाली<sup>1</sup> एवं गुलाब सिंह<sup>2</sup>

कीट विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

खेती में रसायनों का प्रयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। फसलों के कीट एवं बीमारियों को किसी एक तरीके से नियंत्रित नहीं किया जा सकता। इसलिए कीड़े तथा बीमारियों के आक्रमण के समय रसायनों का प्रयोग करना ज़रूरी हो जाता है। लेकिन किसान इन रसायनों का उपयोग बिना सोचे-समझे और ज्यादा मात्रा में करते हैं जिसके कारण बहुत से दुष्प्रभाव सामने आ रहे हैं। मिट्टी की उपजाऊ शक्ति कम हो गई है जिसके कारण फसलों की उत्पादकता पर असर पड़ रहा है और खाद्य समस्या उत्पन्न हो गई है। इसके अलावा हमारा वातावरण भी दूषित हो गया है। मनुष्य का स्वास्थ्य खराब होने लगा है। मित्र कीटों पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है। हानिकारक कीटों में इन रसायनों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न हो गई है। इन रसायनों के अवशेष मिट्टी और पौधों में रह जाते हैं जो मनुष्य के शरीर के अंदर विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न करते हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार हमारे 51 प्रतिशत खाद्य पदार्थ रसायनों से दूषित हो चुके हैं और इनमें से 20 प्रतिशत अधिकतम अवशेष सीमा से ऊपर पाये गए हैं।

इन दुष्प्रभावों को देखते हुये यदि हमें अपने वातावरण को बचाना है और अपनी उत्पादकता को बढ़ाना है तो हमें पारंपरिक खेती पर विशेष ध्यान देना होगा। केवल रसायनों पर निर्भर न रहकर हमें जैविक खेती को अपनाना होगा। फसल विविधिकरण, फसल चक्र, हरी खाद, दलहनी फसलों को अपनाकर हम इन रसायनों के दुष्प्रभाव को काफी हद तक कम कर सकते हैं और अपनी मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ा सकते हैं। मित्र कीटों, जैविक दवाइयों एवं फेरोमोन ट्रैप इत्यादि के इस्तेमाल से फसलों को हानि पहुंचाने वाले कीटों से बचा सकते हैं साथ ही जमीन की उर्वरा शक्ति, स्वास्थ्य तथा पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाया जा सकता है। जैसे अमरूद की फसल को फल मक्खी से बचाने के लिए फेरोमोन ट्रैप का इस्तेमाल किया जा सकता है। एक एकड़ बाग में 10 फेरोमोन ट्रैप लगाने चाहिए। साथ ही किसान भाइयों और बहनों से निवेदन है कि वर्षा ऋतु की अमरूद की फसल न लें। इसमें फल मक्खी का प्रकोप अधिक होता है। किसान भाइयों को शरदकालीन फसल को लेना चाहिए। इस दौरान नवम्बर से मार्च तक यह कीट प्रौढ़ अवस्था में शीत निष्क्रिय रहता है। रासायनिक खादों के उपयोग के कारण किसान भाइयों और बहनों को खेती का व्यवसाय बहुत महंगा और कम लाभकारी होता जा रहा है। पारंपरिक खेती को अपनाने से यह खर्चा काफी हद तक कम किया जा सकता है। रसायनों का उपयोग तभी करें जब ज़रूरी हो। इससे एक तो लागत कम होगी और दूसरा वातावरण कम दूषित होगा। एक दूसरे की देखा-देखी रसायनों का प्रयोग कभी न करें और सिफारिश मात्रा का ही उपयोग करें।



<sup>1</sup> जिला विस्तार विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहाबाद।

<sup>2</sup> सस्य विज्ञान विभाग, चौ.च.सिंह.कृ.वि., हिसार।



# एलोवेरा की खेती — किसानों को लाभ देती

पूजा, एस. एस. ढांडा एवं पूनम गोदारा

आनुवंशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

ग्वारपाठा, घृतकुमारी या एलोवेरा जिसका वानस्पतिक नाम एलोवेरा बारबन्डसिस हैं तथा लिलिएसी परिवार का सदस्य है। इसका उत्पत्ति स्थान उत्तरी अफ्रीका माना जाता है। एलोवेरा को विभिन्न भाषाओं में अलग-अलग नाम से पुकारा जाता है, हिन्दी में ग्वारपाठा, घृतकुमारी, घीकुंवार, संस्कृत में कुमारी, अंग्रेजी में एल्लोय कहा जाता है। एलोवेरा में कई औषधीय गुण पाये जाते हैं, जो विभिन्न प्रकार की बीमारियों के उपचार में आयुर्वेदिक एवं यूनानी पद्धति में प्रयोग किया जाता है जैसे पेट के कीड़ों, पेट दर्द, वात विकार, चर्म रोग, जलने पर, नेत्र रोग, चेहरे की चमक बढ़ाने वाली त्वचा क्रीम, शैम्पू एवं सौन्दर्य प्रसाधन तथा सामान्य शक्तिवर्धक टॉनिक के रूप में उपयोगी है। इसके औषधीय गुणों के कारण इसे बगीचों में तथा घर के आस पास लगाया जाता है। पहले इस पौधे का उत्पादन व्यावसायिक रूप से नहीं किया जाता था तथा यह खेतों की मेढ़ में नदी किनारे अपने आप ही उग जाता है। परन्तु अब इसकी बढ़ती मांग के कारण कृषक व्यावसायिक रूप से इसकी खेती को अपना रहे हैं तथा समुचित लाभ प्राप्त कर रहे हैं।

एलोवेरा के पौधे की सामान्य ऊंचाई 60-90 सें.मी. होती है। इसके पत्तों की लंबाई 30-45 सें.मी. तथा चौड़ाई 2.5 से 7.5 सें.मी. और मोटाई 1.25 सें.मी. के लगभग होती है। एलोवेरा में जड़ के ऊपर जो तना होता है उसके ऊपर से पत्ते निकलते हैं, शुरूआत में पत्ते सफेद रंग के होते हैं। एलोवेरा के पत्ते आगे से नुकीले एवं किनारों पर कंटीले होते हैं। जिसका उपयोग कई प्रकार के रोगों के उपचार के लिये किया जाता है। इसकी खेती से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए किसान भाई निम्न बातें ध्यान में रखें :

**जलवायु एवं मृदा :** यह उष्ण तथा समशीतोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। कम वर्षा तथा अधिक तापमान वाले क्षेत्रों में भी इसकी खेती की जा सकती है। इसकी खेती किसी भी प्रकार की भूमि में की जा सकती है। इसे चट्टानी, पथरीली, रेतीली भूमि में भी उगाया जा सकता है, किन्तु जलमग्न भूमि में नहीं उगाया जा सकता है। बलुई दोमट भूमि जिसका पी.एच. मान 6.5 से 8.0 के मध्य हो तथा उचित जल निकास की व्यवस्था हो उपयुक्त होती है।

**खेत की तैयारी :** ग्रीष्मकाल में अच्छी तरह से खेत को तैयार करके जल निकास की नालियां बना लेनी चाहियें तथा वर्षा ऋतु में उपयुक्त नमी की अवस्था में इसके पौधों को 50-50 सें.मी. की दूरी पर मेढ़ अथवा समतल खेत में लगाया जाता है। कम उर्वर भूमि में पौधों के बीच

की दूरी को 40 सें.मी. रख सकते हैं। जिससे प्रति हैक्टेयर पौधों की संख्या लगभग 40,000 से 50,000 की आवश्यकता होती है। इसकी रोपाई जून-जुलाई माह में की जाती है। परन्तु सिंचित दशा में इसकी रोपाई फरवरी में भी की जा सकती है।

**निराई-गुड़ाई :** प्रारंभिक अवस्था में इसकी बढ़वार की गति धीमी होती है। अतः प्रारंभिक तीन माह तक में 2-3 निराई-गुड़ाई की आवश्यकता होती है। क्योंकि इस काल में विभिन्न खरपतवार तेजी से वृद्धि कर एलोवेरा की वृद्धि एवं विकास पर विपरीत असर डालते हैं। आठ माह के बाद पौधे पर मिट्टी चढ़ाएं जिससे वे गिरें नहीं।

**खाद एवं उर्वरक :** सामान्यतया एलोवेरा की फसल को विशेष खाद अथवा उर्वरक की आवश्यकता नहीं होती है। परन्तु अच्छी बढ़वार एवं उपज के लिए 10-15 टन अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद को अंतिम जुताई के समय खेत में डालकर मिला देना चाहिए। इसके अलावा 50 किग्रा. नत्रजन, 25 किग्रा. फास्फोरस एवं 25 किग्रा. पोटाश तत्व देना चाहिये। जिसमें से नत्रजन की आधी मात्रा एवं फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी रोपाई के समय तथा शेष नत्रजन की मात्रा 2 माह पश्चात् दो भागों में देनी चाहिए अथवा नत्रजन की शेष मात्रा का दो बार छिड़काव भी कर सकते हैं।

**सिंचाई :** एलोवेरा असिंचित दशा में उगाया जा सकता है। परन्तु सिंचित अवस्था में उपज में काफी वृद्धि होती है। ग्रीष्मकाल में 20-25 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करना उचित रहता है। सिंचाई जल की बचत करके एवं अधिक उपयोग करने के लिये स्प्रिंकलर या ड्रिप विधि का उपयोग कर सकते हैं।

**अंतरवर्तीय फसल :** एलोवेरा की खेती अन्य फल वृक्ष, औषधीय वृक्ष या वन में रोपित पेड़ों के बीच में सफलतापूर्वक की जा सकती है।

**कटाई एवं उपज :** इस फसल की उत्पादन क्षमता बहुत अधिक है फसल की रोपाई के बाद एक वर्ष के बाद पत्तियां काटने लायक हो जाती हैं। इसके बाद दो माह के अन्तराल से परिपक्व पत्तियों को काटते रहना चाहिए। सिंचित क्षेत्र में प्रथम वर्ष में 35-40 टन प्रति हैक्टेयर उत्पादन होता है तथा द्वितीय वर्ष में उत्पादन 10-15 फीसदी तक बढ़ जाता है। उचित देखरेख एवं समुचित पोषक प्रबंधन के आधार पर इससे लगातार तीन वर्षों तक उपज ली जा सकती है। असिंचित अवस्था में लगभग 20 टन प्रति हैक्टेयर उत्पादन मिल जाता है।

**प्रवर्धन विधि एवं रोपाई :** इसका प्रवर्धन वानस्पतिक विधि से होता है। वयस्क पौधों के बगल से निकलने वाले चार पांच पत्तियों युक्त छोटे पौधे उपयुक्त होते हैं, प्रारंभ में ये पौधे सफेद रंग के होते हैं तथा बड़े होने पर हरे रंग के हो जाते हैं। इन स्टोलन/सर्कस को मातृ पौधे से अलग करके नर्सरी या सीधे खेत में रोपित करते हैं।



# फसल अवशेष जलाना: भूमि के लिए एक अभिशाप

हरदीप सिंह श्योराण, वेद कुमार फोगाट एवं रिधम

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत एक कृषि प्रधान देश है और इसके कुछ मुख्य राज्यों में से एक हरियाणा भी है जिसे एक प्रमुख कृषि आधारित राज्य का दर्जा है। इसमें मुख्य फसल चक्रों में से एक गेहूँ-धान फसल चक्र है। वैसे तो गेहूँ और धान मुख्य दाने वाली खेत की फसल है। कृषि प्रौद्योगिकियों में उन्नति व बौनी किस्में आने से हमारा अनाज उत्पादन तो बढ़ा है परन्तु साथ ही फसल अवशेषों की तादाद में भी बढ़ोत्तरी हुई है। इसके फलस्वरूप किसान भाई मशीनीकृत कटाई की तरफ आकर्षित हुए हैं या हम कह सकते हैं कि फसल कटाई के लिए वह पूरी तरह मशीनों पर आश्रित हो चुके हैं। लेकिन इसमें सबसे बड़ी समस्या यह है कि मशीनों से कटाई हमें लाभकारी तो है परन्तु इससे खेत में फसल अवशेष काफी ज्यादा मात्रा में रह जाते हैं जिसके चलते उन्हें फसल अवशेषों में आग लगानी पड़ती है ताकि वह जल्दी से जल्दी खेत को साफ कर सकें और अगली फसल की बिजाई-बुवाई कर सकें। लेकिन असल में यह अभ्यास बहुत ही नकारात्मक प्रभाव डालता है चाहे वह पर्यावरण प्रदूषण के रूप में हो या की उर्वरता में गिरावट हो। अतः फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन अत्यधिक ज़रूरी है। फसल अवशेषों को जलाने का प्रचलन क्यों है ?

## फसल अवशेषों को किसान क्यों जलाते हैं ?

1. फसल अवशेषों का प्रबन्धन एक जटिल समस्या है और फसल अवशेष इतनी अधिक मात्रा में उत्पन्न होते हैं कि किसान उन्हें जलाकर इस समस्या से निजात पाने को ही सरल उपाय मानते हैं।
2. विशेष परिस्थितियों में जैसे कि हरबी साईड खरपतवार जो खरपतवार नाशक प्रतिरोधी होती है फसल अवशेषों के साथ ऐसे प्रतिरोधी खरपतवार को जलाना एक उचित विकल्प है।
3. अवशेषों के प्रतिधारण के कई लाभ हैं लेकिन बीमारी, कीट और घास के दबाव का प्रबंधन करने के लिए एक प्रणालीगत दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जो कि किसान एक बोझ के रूप में देखता है और अवशेषों को जलाना ही एक उचित उपाय मानता है।
4. फसल अवशेष जलाना एक सस्ती सरल और तेज़ विधि है और इसलिए किसान इसकी तरफ आकर्षित होता है।
5. फसल अवशेषों के जलाने से किसान घास, कीट और रोग नियंत्रण कर सकते हैं और इसलिए इसका अधिक उपयोग करते हैं।

## फसल अवशेषों को जलाने से नुकसान:-

1. फसल अवशेषों को जलाने से पर्यावरण एवं मृदा प्रदूषण होता है। इनको जलाने से अनेक गैसों जैसे कि कार्बनडाईऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड, सल्फरडाईऑक्साइड वायुमण्डल में रिलीज़ होती हैं जिससे वातावरण का तापमान बढ़ता है और प्रदूषण फैलता है।

2. भूमि उर्वरता में कमी आना:-फसल अवशेषों के जलाने से मृदा में मौजूद पोषक तत्वों और जीवाणुओं में भारी कमी आती है और भूमि की उर्वरता में भारी कमी दर्ज की गई है।
3. पोषक तत्वों की हानि : फसल अवशेष पोषक तत्वों का एक अच्छा स्रोत होते हैं परन्तु इन्हें जलाने से हम इनके द्वारा पाए जाने वाले पोषक तत्वों से वंचित रह जाते हैं और इसके साथ-साथ कार्बनिक पदार्थों की भी हानि होती है।
4. हादसों का कारण : कई बार यह देखा गया है कि फसल अवशेषों को जलाना हादसों का कारण बन जाता है। इससे उत्पन्न होने वाला धुआं सड़क हादसे का कारण बनता है। दूसरी ओर इससे आग फैलकर आसपास की चीज़ों में लग जाती है जो कई बार बड़े हादसों में भी तबदील हो जाती हैं।
5. फसल अवशेषों के जलाने से हवा और पानी से होने वाले भूमि क्षरण में वृद्धि देखी गई है।
6. यह क्रिया समय के साथ भूमि में अम्लता को भी बढ़ा सकती है।

## फसल अवशेषों के खेत में लाभ

1. फसल अवशेष अगर खेत में हों तो पानी और हवा से होने वाला मिट्टी का कटाव रोका जा सकता है।
2. फसल अवशेष खेत में बेहतर पानी का संतुलन बनाए रखने में सहायक हैं और मिट्टी में पानी के भंडारण को भी बढ़ाते हैं।
3. यह हमें फसल पोषक तत्वों के संरक्षण में भी लाभकारी है।
4. फसल अवशेष अगर खेत में मौजूद रहें तो फसल में बीमारियों के आने के कम मौके होते हैं।
5. फसल अवशेषों को जलाने से उत्पन्न होने वाले धुएँ से भी हमें छुटकारा मिलता है जो कि स्वस्थ पर्यावरण और मृदा के दृष्टिकोण से बहुत ही हानिकारक होता है।
6. जब हम फसलों के अवशेषों का मिट्टी में मिलान कर देते हैं तो इससे कार्बनिक पदार्थों में तो वृद्धि होती ही है साथ ही मिट्टी के जैनिम गुणों में भी सुधार होता है।

## फसल अवशेषों का प्रबंधन कैसे करें

1. फसल अवशेषों को चारे के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है और इस तरह हम इसकी खपत बढ़ा सकते हैं।
2. आजकल ताप विद्युत संयंत्र की संख्या बढ़ती जा रही है और फसल अवशेषों को ऊर्जा उत्पन्न करने में इस्तेमाल किया जा सकता है।
3. फसल अवशेषों को पशुओं के बिस्तर बनाने के काम में लिया जा सकता है और बाद में इनको खेत में कार्बनिक पदार्थ के स्रोत के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।
4. फसल अवशेषों को खुंभ उत्पन्न और बायो गैस बनाने में प्रयोग किया जा सकता है।
5. फसल अवशेषों को गत्ता या पेपर फैक्ट्रियों में प्रयोग किया जा सकता है।
6. फसल अवशेषों को मृदा में मिलाया जा सकता है ताकि वह खाद के रूप में काम कर सकें।



# बायोगैस उत्पादन : अक्षय ऊर्जा का बेहतर विकल्प

तन्वी तथा स्नेह गोयल<sup>1</sup>

सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बायोगैस (गोबरगैस) अक्षय ऊर्जा के व्यवहार्य विकल्प में से एक है। बायोगैस प्राथमिक रूप से मीथेन और कार्बन डाईऑक्साइड है। इसमें हाईड्रोजन सल्फाइड और नमी की भी थोड़ी मात्रा होती है। इस गैस को ईंधन के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं। इसे रसोई घर में विभिन्न कार्यों जैसे कि खाना पकाने में, पानी गर्म करने में, चाय बनाने में प्रयोग कर सकते हैं। इस सबके अलावा बायोगैस की ऊर्जा से बिजली बनाने के लिए इसका उपयोग गैस इंजन में भी किया जा सकता है।

2014-15 में देश में करीब 20,700 लाख घन मीटर बायोगैस का उत्पादन हुआ है, जो देश में कुल एल.पी.जी. खपत के 5 प्रतिशत के बराबर है। सरकार नये बायोगैस संयंत्रों की स्थापना के लिए पर्याप्त सब्सिडी का भी विस्तार कर रही है। “राष्ट्रीय बायोगैस और खाद-प्रबंधन “एन.बी.एम.पी.” एक ऐसी ही केन्द्रीय योजना है जो ग्रामीण और अर्ध शहरी परिवारों के लिए परिवार के अनुसार बायोगैस संयंत्रों की स्थापना के लिए सहायता प्रदान करता है। यह योजना 5 वर्षों के लिए स्थापना और निःशुल्क रख रखाव वारंटी के लिए पूंजी सब्सिडी और टर्न-की जॉब फीस प्रदान करती है। इसके साथ ही प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों, कार्यशालाओं और सैमिनारों का भी प्रबंध करती है।



## बायोगैस तकनीक के निम्नलिखित लाभ हैं :

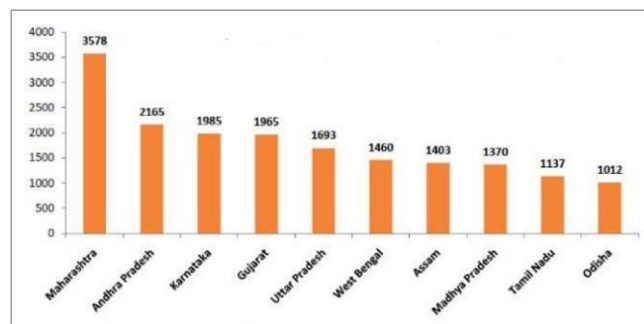
1. यह खाना पकाने और प्रकाश व्यवस्था के लिए स्वच्छ गैस ईंधन प्रदान करता है।
2. बायोगैस संयंत्रों से बना घोल रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर समृद्ध जैव खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है।
3. बायोगैस संयंत्रों के साथ शौचालयों को जोड़कर गांवों और अर्धशहरी क्षेत्रों की स्वच्छता में सुधार करता है।

<sup>1</sup>प्रोफेसर, सूक्ष्मजीव विज्ञान विभाग, चौ.च.सिंह.ह.कृ.वि., हिसार।

4. बायोगैस संयंत्र जलवायु-परिवर्तन के कारणों को कम करने में मदद करते हैं।

नई और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय देश के सभी राज्यों में “राष्ट्रीय बायोगैस और खाद प्रबंधन कार्यक्रम” को लागू कर चुका है। 31 मार्च 2014 तक देश में लगभग 47.5 लाख बायोगैस संयंत्र स्थापित किये जा चुके हैं जिनमें बायोगैस उत्पादन का अनुमान 20,757 लाख घन मीटर है। यह 6.6 करोड़ घरेलू एल.पी.जी.सिलेण्डर के बराबर है जो कि कुल एल.पी.जी. उपभोग के 5 प्रतिशत के बराबर है। 2014-15 में महाराष्ट्र में बायोगैस उत्पादन 3578 लाख घन मीटर हुआ था जो सभी राज्यों की तुलना में सबसे ज्यादा था।

## बायोगैस उत्पादन (लाख घनमीटर में) (2014-15)



बायोगैस संयंत्र, भोजन सामग्री रखने वाले घरों के लिए सबसे अच्छा विकल्प है। यह रसोई गैस के विकल्प के साथ-साथ अत्यधिक कार्बन समृद्ध जैव खाद बनाने के लिए कारगर है। यह वायु प्रदूषण की समस्याओं से घरों को बचाने और एल.पी.जी. सिलेण्डरों की लागत पर बचत का समाधान प्रदान करता है।

मंत्रालय नीचे दी गई दरों के अनुसार परिवार के प्रकार के बायोगैस संयंत्रों के लिए सब्सिडी प्रदान करता है।

क्र.सं.	केन्द्रीय वित्तीय सहायता (सी.एफ.ए.) और राज्य/क्षेत्र और श्रेणियों का विवरण	एन बी एम पी के तहत परिवार के प्रकार बायोगैस संयंत्र	
		(1-6 घनमीटर क्षमता प्रति टन)	
		केंद्रीय सब्सिडी दर (रूपये में)	
		1 घनमीटर	2-6 घनमीटर
1.	पूर्वोत्तर क्षेत्र के राज्य, सिक्किम (असम के मैदानों को छोड़कर) और पूर्वोत्तर क्षेत्र राज्यों की एस सी और एस टी श्रेणियों सहित	15,000	17,000
2.	असम के मैदानी क्षेत्र	10,000	11,000
3.	जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, तमिलनाडू की नीलगिरि पहाड़ी, दार्जिलिंग के सदरकुरसेऑंग और कालिमपोंग उप प्रभाग, सुंदरबन (डब्ल्यू बी) और अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह	7,000	11,000
4.	उपयुक्त 3 में दिए गए अनुसार सिक्किम और अन्य पहाड़ी राज्यों/क्षेत्रों सहित पूर्वोत्तर क्षेत्र राज्यों के अलावा अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए	7,000	11,000
5.	अन्य सभी	5,500	9,000



इसके लिए ही भारत सरकार ने 12वीं पंचवर्षीय योजना (2012-2017) के तहत देश भर में 6.5 लाख बायोगैस संयंत्र स्थापित करने का लक्ष्य रखा था, जिसमें 650 करोड़ रुपये के बजट वाले कार्यक्रम - “राष्ट्रीय बायोगैस और खाद प्रबंधन कार्यक्रम” का शुभारंभ किया था। यह कार्यक्रम राज्य नोडल विभागों/राज्य नोडल एजेंसियों और खादी और ग्रामोद्योग आयोग (के वी आई सी) द्वारा लागू किया गया है। इच्छुक संभावित लाभार्थी संबंधित कार्यक्रमों को लागू करने वाली राज्यों की एजेंसियों से संपर्क कर सकते हैं।

- हरियाणा नोडल विभाग का पता

Joint Director (Agriculture Engineering)  
Directorate of Agriculture, KrishiBhavan,  
Sector 21, Panchkula (Haryana)

भारत सरकार के सब प्रयत्नों के बाद भी दुर्भाग्य से लगभग 4.5 प्रतिशत बायोगैस संयंत्र निरीक्षण के दौरान गैर कार्यात्मक पाए गए। इनके निम्नलिखित कारण हो सकते हैं :-

1. निर्माण और रखरखाव दोष
2. कच्चे माल की कमी।
3. उपकरण से संबंधित समस्याएं जैसे कि बर्नर, पाइपलाइन और फिटिंग्स।



(पृष्ठ 07 का शेष)

**चित्तीदार तना व फलछेदक सूण्डी :** इस कीट की बेलनाकार सूण्डी के शरीर पर हल्के-पीले संतरी भूरे व काले धब्बे होते हैं। छोटी फसल में सूण्डियां कोंपलों में छेद करके अन्दर पनपती रहती हैं जिसके फलस्वरूप कोंपलें मुरझाकर नीचे लटक कर सूख जाती हैं। सूण्डियां कलियों, फूलों तथा फलों को भी नुकसान करती हैं। प्रभावित फल टेढ़े व काने हो जाते हैं। इस कीट का प्रकोप जून से अक्टूबर तक अधिक मिलता है।

**प्रबन्धन :** इसके प्रबन्ध के लिए फल शुरू होने पर 400-500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 400-500 ग्राम कार्बेनिल 50 घू.पा. या 75-50 मि. लीटर स्पाइनोसैड 45 एस.सी. को 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। इसे 15 दिन के अन्तराल पर तीन बार छिड़कें। बीज के लिए लगाई गई भिण्डी की फसल में इस कीट के उपचार के लिए 55-60 ग्राम प्रोक्लेम 5 जी. (एमामैक्टिन) नामक दानेदार दवा को 200 लीटर पानी में घोलकर 15 दिन के अन्तर पर 3 से 4 बार छिड़काव करें।

- छिड़काव करने से पहले फल को अवश्य तोड़ लें।
- आस पास उगे खरपतवार कंधी बूटी इत्यादि को उखाड़ दें।



## वर्मी कम्पोस्ट खाद और इसके लाभ

सुशांत भारद्वाज, यादविका एवं वाई. के. यादव

प्रसंस्करण एवं खाद्य प्रौद्योगिकी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आज की सघन खेती के युग में भूमि की उर्वरा शक्ति बनाये रखने के लिये प्राकृतिक खादों का प्रयोग बढ़ रहा है। इन प्राकृतिक खादों में गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद मुख्य हैं। पिछले कुछ सालों से कम्पोस्ट बनाने की एक नई विधि विकसित की गई है जिसमें केंचुआ का प्रयोग किया जाता है, जिसे वर्मी कम्पोस्ट कहते हैं। वर्मी कम्पोस्ट, केंचुआ की मदद से निर्मित जैविक खाद है, जिसे किसान भाई स्वयं बना सकते हैं।

### वर्मी कम्पोस्ट बनाने की विधि

सर्वप्रथम उपयुक्त स्थान जिसमें उपयुक्त नमी एवं तापमान निर्धारित किये जा सकें, का चयन कर इसके ऊपर एक छप्पर या अस्थायी शेड बनाया जाता है। शेड की लम्बाई-चौड़ाई वर्मी टैंक की संख्या पर निर्भर करती है। वर्मी टैंक की मानक साईज 1 मी. चौड़ा, 0.5 मी. गहरा तथा 10 मी. लम्बा होता है। वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए सामग्री के रूप में वानस्पतिक कचरा जैसे कि कृषि अवशेष, जलकुंभी, केले एवं बबूल की पत्तियां, अन्य हरी एवं सूखी पत्तियां, पेड़ों की हरी शाखायें, बिना फूली घास, सड़ी-गली सब्जियां एवं फल, घरेलू कचरा एवं पशुओं का गोबर आदि को उपयोग में लाया जाता है। वर्मी टैंक में अधपके नमीयुक्त वानस्पतिक कचरे की 6 इंच की तह लगा देते हैं। यदि कचरा अधपका नहीं है तो उसमें गोबर का घोल मिलाकर 15 दिनों तक सड़ाया जाता है, ताकि इसके सड़ने पर बनने वाली गर्मी को समाप्त किया जा सके। इस 6 इंच की पत पर लगभग 6 इंच तक पका हुआ गोबर डाला जाता है। इस गोबर की तह पर 500-1000 केंचुए प्रति वर्गमीटर के हिसाब से डाले जाते हैं। वर्मी कम्पोस्टिंग के लिए केंचुआ की सर्वाधिक उपयुक्त प्रजातियां आइसिनिया फोयटिडा, यूड्रिलस यूजिनी एवं परियोनिक्स एक्सावेट्स हैं।

शेड में सदा अंधेरा बना रहना चाहिए क्योंकि अंधेरे में केंचुए ज्यादा सक्रिय रहते हैं इसलिये शेड के चारों ओर घास-फूस या बोरे लगा देने चाहिए। बोरो के ऊपर नियमित रूप से आवश्यकता अनुसार पानी का छिड़काव किया जाता है, ताकि टैंक में नमी बनी रहे। टैंक के ढेर को लगभग 25-30 दिन के बाद हाथों या लोहे के पंजे की सहायता से धीरे-धीरे पलटाते हैं। जिससे वायु का संचार तथा ढेर का तापमान भी ठीक रहता है। यह क्रिया 2-3 बार दोहरायी जाती है। टैंक के अन्दर का तापमान 25-30 डिग्री सेंटीग्रेड एवं नमी 30-35 प्रतिशत रहनी चाहिए। पानी के उचित प्रयोग से तापमान एवं नमी को नियन्त्रित किया जा सकता है।

लगभग 60-75 दिनों में वर्मी कम्पोस्ट तैयार हो जाती है। वर्मी कम्पोस्ट को अलग कर केंचुओं को इकट्ठा कर पुनः वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए प्रयोग करें। इस खाद को छाया में सुखाकर नमी कम कर

लेते हैं तथा उसे बोरी में भरकर 8-12 प्रतिशत नमी में एक साल तक भण्डारण कर सकते हैं।

एक किलोग्राम वजन में लगभग 1000 वयस्क केंचुए होते हैं। एक दिन में 1 किलोग्राम वयस्क केंचुए लगभग 5 किलोग्राम कचरा को खाद में बदल देते हैं।

वर्मी कम्पोस्ट का गोबर की खाद एवं कम्पोस्ट से तुलनात्मक अध्ययन

क्र.सं.	विवरण	गोबर खाद	कम्पोस्ट खाद	वर्मी कम्पोस्ट
1	तैयार होने में लगने वाली अवधि	6 माह	4 माह	2 माह
2	पोषक तत्वों की मात्रा			
	नाइट्रोजन	0.3-0.5%	0.5-1.0%	1.2-1.6%
	फास्फोरस	0.4-0.6%	0.5-0.9%	1.5-1.8%
	पोटाश	0.4-0.5%	1.0%	1.2-2.0%
3	लाभदायक जीवों की संख्या	बहुत कम मात्रा में	कम मात्रा में	काफी अधिक मात्रा में
4	प्रति एकड़ आवश्यकता			
	सामान्य फसलें	4 टन	4 टन	15 टन
	औषधीय फसलें	8 टन	8 टन	3 टन

अतः उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि वर्मी कम्पोस्ट अन्य कार्बनिक खाद जैसे गोबर की खाद की तुलना में सर्वोत्तम होता है तथा मृदा संरचना को सुधारने में प्रबल घटक के रूप में कार्य करता है।

#### वर्मी कम्पोस्ट प्रयोग करने के लाभ

- वर्मी कम्पोस्ट मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की वृद्धि करता है तथा भूमि में जैविक क्रियाओं को निरन्तरता प्रदान करता है।
- वर्मी कम्पोस्ट का भूमि में प्रयोग करने से भूमि भुरभुरी एवं उपजाऊ बनती है।
- वर्मी कम्पोस्ट खेत में दीमक एवं अन्य नुकसान करने वाले जीवाणुओं को नष्ट कर देती है। इससे कीटनाशक की लागत में कमी आती है।
- गोबर की खाद की तुलना में वर्मी कम्पोस्ट के उपयोग से खरपतवार की समस्या पर नियंत्रण होता है और मज़दूरी की लागत में कमी आती है।
- वर्मी कम्पोस्ट इस्तेमाल के बाद 2.3 फसलों तक पोषक तत्वों की उपलब्धता बनी रहती है।
- भूमि में केंचुओं की सक्रियता से पौधों की जड़ों के लिए उचित वातावरण बनता है जिससे उनका अच्छा विकास होता है।
- इसमें पौधों के आवश्यक पोषक तत्व प्रचुर व संतुलित मात्रा में होते हैं।
- इसके उपयोग से भूमि भुरभुरी हो जाती है जिससे उसमें पोषक तत्व व जल संरक्षण की क्षमता बढ़ जाती है एवं हवा का आवागमन भी मिट्टी में ठीक रहता है।

- इसके प्रयोग से भूमि में लाभप्रद सूक्ष्म जीवाणुओं जैसे नाइट्रोजन और फास्फोरस, फिक्सिंग जीवाणु, प्रोटोजोआ, फफूंदी आदि की संख्या में वृद्धि होती है, जो पौधों को भूमि में उपलब्ध भोज्य पदार्थ को सरल रूप में उपलब्ध कराते हैं।
- केंचुआ खाद कचरा, गोबर तथा फसल अवशेषों से तैयार की जाती है। जिससे गंदगी में कमी होती है तथा पर्यावरण सुरक्षित रहता है।
- वर्मी कम्पोस्ट में दूसरी खादों की तुलना में आवश्यक पोषक तत्वों की मात्रा ज़्यादा पाई जाती है। जिसके कारण दूसरी खादों की तुलना में इसकी कम मात्रा ही काम आती है।
- वर्मी कम्पोस्ट में नाइट्रोजन की मात्रा 1 से 5 प्रतिशत, फास्फोरस 1 से 1.5 प्रतिशत तथा पोटाश 1.5 से 2.0 प्रतिशत तक पोषक तत्व पाये जाते हैं।
- केंचुए के विष्टा में पेरीट्रापिक झिल्ली होती है, जो भूमि में धूलकणों से चिपक कर भूमि से वाष्पीकरण रोकती है।
- वर्मी कम्पोस्ट पूर्ण रूप से पर्यावरण मित्र विधि है, जबकि रासायनिक उर्वरकों के निर्माण में ऊर्जा के उपयोग से लेकर इस्तेमाल तक हर स्तर पर प्रदूषण की समस्या पैदा होती है।

#### वर्मी कम्पोस्ट बनाते समय रखी जाने वाली सावधानियां

- वर्मी कम्पोस्ट के निर्माण के लिए गाय का गोबर सर्वोत्तम होता है, परन्तु कभी भी मदार (आक) के पत्ते तथा अन्य विषैले पत्ते इस मिश्रण में न डालें अन्यथा इसके ज़हरीले प्रभाव से केंचुए मर सकते हैं।
- वर्मी कम्पोस्ट का शेड छायादार जगह पर ही बनाया जाना चाहिए तथा बेड़ पर अंधेरा बनाए रखना चाहिए।
- सड़े-गले कार्बनिक पदार्थ व गोबर को अच्छी प्रकार मिलाना चाहिए ताकि कार्बन-नाइट्रोजन का अनुपात संतुलित रहे।
- कभी भी ताज़ा गोबर इस्तेमाल नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे निकलने वाली गर्मी (गैस) से केंचुए मर सकते हैं एवं दीमक का आक्रमण हो सकता है। इस प्रकार गोबर 10-15 दिन पुराना होना चाहिए।
- वर्मी कम्पोस्ट बेड का तापमान 25-30 डिग्री सेल्सियस तथा नमी 30-35 प्रतिशत तक बनाए रखनी चाहिए।
- कठोर टहनियों का प्रयोग नहीं करना चाहिए तथा खरपतवार अवशेषों को भी फूल आने के पूर्व ही काम में ले लेना चाहिए।
- खरपतवार तथा कूड़े-कचरे में प्लास्टिक, कांच तथा पत्थर आदि नहीं होने चाहिए।
- गड़ों को चींटियों, कीड़ों-मकोड़ों, मुर्गियों, कौओं तथा पक्षियों आदि से सुरक्षित रखें।



# सितम्बर मास के कृषि कार्य



## फसलों में

### बाजरा

पहले पखवाड़े में सिट्टे आने पर भारी ज़मीन में प्रति एकड़ 28 किलोग्राम यूरिया देकर सिंचाई करें और रेतीली ज़मीन में पानी देने के बाद बत्तर आने पर यूरिया डालें और गोड़ी करें। इसके लिए पहिए वाले कसौले का प्रयोग करें। पछेती बोई फसल में पत्तों पर भूरे दाग दिखाई दें तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट व 2.5 प्रतिशत यूरिया का घोल छिड़कें। एक एकड़ खेत के लिए एक किलोग्राम जिंक सल्फेट, 5 किलोग्राम यूरिया तथा 200 लीटर पानी के घोल का प्रयोग करें। कम से कम दो छिड़काव 10-12 दिन के अंतर पर हमेशा ओस उतरने के बाद करें। यदि वर्षा की संभावना हो तो उस दिन छिड़काव न करें। घोल बनाते समय 10-12 लीटर पानी में पहले जिंक सल्फेट को घोलें, फिर यूरिया को घोलें। इसके बाद पूरे घोल में लकड़ी घुमाकर अच्छी तरह मिला लें। अच्छी वर्षा न होने पर सिंचाई करें।

चिडियों से फसल को बचाने के उपाय करें। सिडनिड बग नाम का कीड़ा कभी-कभी बाजरे की जड़ों का रस चूस कर फसल को हानि करता है। ग्रसित पौधे पीले होकर अंत में सूख जाते हैं। करीब 3 मि.मी. आकार वाली काली व भूरी बग को मारने के लिए 5 किलोग्राम मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत धूड़ा प्रति एकड़ फसलों में बाजरे के पौधों के चारों ओर डालकर मिलाएं।

जहां अरगट या चेपा दिखाई दे वहां रोगग्रस्त बालियों को नष्ट कर दें तथा 400 मि.ली. क्युमान-एल (Cuman-L) का 200 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। यदि बाजरे के खेत में या मेढ़ों पर घूमर घास खड़ी हो तो उसे भी अवश्य काट दें ताकि इनके संक्रमित फूलों से बाजरे पर रोग और न बढ़ सके।

### लेखक :

- आर. एस. हुड्डा, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (पादप रोग विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह, सह-निदेशक, (पशु पालन - लुवास)
- सुरेन्द्र सिंह, सहायक-निदेशक (बागवानी)
- एम. एस. ग्रेवाल, परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)
- वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
- अशोक चन्द्र यादव, परामर्शदाता (सब्जी विज्ञान)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

### धान

सिंचाई 5-6 सें.मी. से अधिक गहरी कभी न करें। संभव हो तो पानी हर हफ्ते बदलते रहें। यदि पत्तों पर चाकलेट रंग के धब्बे दिखाई दें तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट व 2.5 प्रतिशत यूरिया के घोल के कुल 2-3 छिड़काव 10-12 दिन के अंतर पर करें।

खेतों में लगातार अधिक पानी खड़ा रहने से जीवाणुज अंगमारी (बैक्टीरियल लीफ ब्लाइट) की उत्पत्ति की संभावना बढ़ जाती है। ऐसी समस्या सड़क के साथ व नहर की नालियों के साथ, जहां पेड़ों की छाया हो, ज्यादा दिखाई देती है। इसलिए खेतों में पानी अधिक न खड़ा रहने दें। अगर किसी खेत में बीमारी दिखाई दे तो उस खेत का पानी रोग रहित खेत में न जाने दें। आभासी कंडुआ से प्रभावित बालियों के ऊपर कागज़ की थैली चढ़ाकर बालियों को आधार से काटकर नष्ट कर दें।

इस समय धान को मलंगा या गंधी बग (राईस बग) से बचाव हेतु 10 किलोग्राम मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत का धूड़ा प्रति एकड़ करें। हरियाणा में सफेद व भूरे तेले से बचाव हेतु 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस.एल. या 400 ग्राम कार्बेनिल 50 घु.पा. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें या 10 किलोग्राम कार्बेनिल 5 प्रतिशत या मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत का धूड़ा प्रति एकड़ धूड़ें। आभासी कंडुआ (फाल्स स्मट) बीमारी की रोकथाम के लिए 500 ग्राम ब्लाइटॉक्स या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड दवा प्रति एकड़ 200 लीटर पानी में मिलाकर 50 प्रतिशत बाली निकलने की अवस्था में छिड़काव करें।

### मक्की

जून में बीजी गई मक्की की इस माह के अंत में कटाई करें। संकर व विजय किस्मों के पौधे फसल पकने पर भी हरे रहते हैं।

मक्की को अंगमारी व अन्य पूर्ण रोगों से बचाव के लिए जाइनेब (डाईथेन जैड-78) या मैन्कोजेब (डाईथेन एम-45) की 600 ग्राम मात्रा को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। आवश्यकता पड़ने पर 10-15 दिन के अंतर पर पुनः छिड़कें।

इस महीने तना छेदक कीड़े की सूँड़ियों से बचने के लिए 400 ग्राम कार्बेनिल 50 घु.पा. को 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें।

### कपास

वर्षा न हो तो दूसरे पखवाड़े में पानी दें। देसी किस्मों में तीसरे पखवाड़े में चुनाई शुरू कर दें।

टिण्डा गलन की रोकथाम के लिए 800 ग्राम ब्लाइटॉक्स/ब्ल्यू



कॉपर/कॉपर ऑक्सीक्लोराइड तथा 6-8 ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लिन या 30-40 ग्राम प्लाण्टोमाइसिन का मिश्रित घोल बनाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़कें और आवश्यकतानुसार 15 दिन के बाद दोहराएं।

टिण्डों की सूण्डियों की रोकथाम हेतु आवश्यकता हो तो एक छिड़काव सिफारिश की गई कीटनाशक का अवश्य करें। मीलीबग के नियंत्रण के लिए परपोषी पौधों को नष्ट करें व सिफारिश की गई कीटनाशकों का छिड़काव करें।

### गन्ना

बिजाई के पाँच या छः सप्ताह बाद पत्तियों के मध्य शिरा के पास सफेद-पीली धारियों का प्रकट होना जस्ते की कमी का लक्षण है। इसके लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट और 2.5 प्रतिशत यूरिया के घोल का छिड़काव 10-14 दिन के अंतर पर करें।

वर्षा के पानी के निकास का प्रबंध अवश्य करें। यदि ईख की बंधाई न की गई हो तो इस माह में बंधाई का काम पूरा कर लें।

यदि कंडुआ रोग नज़र आए तो सावधानी से गन्ने की दुमों के ऊपर थैली चढ़ाकर नीचे से काट लें और फिर पूरे पौधे को उखाड़कर नष्ट कर दें। लाल सड़न रोग के प्रकोप से ऊपर से प्रायः तीसरी पत्ती पीली पड़ने लगती है। ऐसे गन्नों को खेत से उखाड़कर जला दें। गन्ने के गुरदासपुर छेदक कीड़े की रोकथाम के लिए हर सप्ताह गन्ने के ऊपर का सूखा भाग काट कर नष्ट करते जाएं। अष्टपदी (रैंड माईट) से बचने के लिए 500 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या 600 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। यदि जड़ बेधक का प्रकोप हो तो 8 कि.ग्रा. क्विनलफॉस 5-जी प्रति एकड़ (अगस्त के अंत में न डाला हो तो) अब तुरंत डाल दें।

### मूंगफली

जिन इलाकों में 50 से 70 सें.मी. वर्षा होती है वहां दो से तीन सिंचाई काफी हैं। पहली फूल आने पर तथा दूसरी सिंचाई ज़रूरत अनुसार फल बनने के दौरान करें।

यदि खरपतवार हों तो पहले हफ्ते में निराई करके निकाल दें। हो सके तो एक सिंचाई करें। पत्तियों पर भूरे-लाल रंग के धब्बे टिक्का नामक रोग की पहचान हैं, जिनकी रोकथाम के लिए लक्षण दिखते ही 400 ग्राम डाईथेन एम-45 या 200 ग्राम बाविस्टिन का 200 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ खेत पर आवश्यकतानुसार 2-3 छिड़काव 10-15 दिन के अंतर पर करें। बालों वाली सूण्डी का आक्रमण हो तो 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. या 500 मि.ली. क्विनलफॉस 25 ई.सी. या 200 मि.ली. डाईक्लोर्वास 76 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

### तोरिया या सरसों

तोरिया की इस माह के पहले पखवाड़े तक बिजाई अवश्य कर लें व माह के अंत तक सरसों की बिजाई शुरू करें। अगले माह राया की बिजाई

के लिए खेत की तैयारी शुरू कर दें। केवल उन्नत किस्में बोएं। तोरिया की किस्म संगम, टी एल-15 व टी एच-68, देसी सरसों की किस्म बी एस एच-1, राया-सरसों की आर एच-30, वरुणा व आर एच-781, आर एच-819, लक्ष्मी, आर एच-9304 (वसुन्धरा), आर एच-9801 (स्वर्ण ज्योति) और आर बी-9901 (गीता), आर बी 50, आर एच 0119, आर एच 406, आर एच 0149, आर एच 725, पीली सरसों की किस्म वाई एस एच 0401 तारामीरा की किस्म टी-27 ही बोएं। इन सभी तिलहनों की बिजाई सिंचित क्षेत्रों में सवा किलोग्राम व बारानी क्षेत्रों में 2 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ लेकर कतारों में 30 सेंटीमीटर की दूरी पर करें। ध्यान रखें कि बिजाई पोरा विधि से इस प्रकार करें कि बीज 4-5 सेंटीमीटर से अधिक गहरा न पड़े।

सरसों को तना गलन रोग से बचाने के लिए बिजाई से पहले बीज को 2 ग्राम बाविस्टिन नामक दवा से प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से उपचारित करें। बिजाई के समय सिंचित तोरिया तथा सरसों में 25 किलोग्राम यूरिया तथा 50 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट प्रति एकड़ के हिसाब से खेत में पोर दें व बाकी 25 किलोग्राम यूरिया पहली सिंचाई के समय डाल दें। बारानी इलाकों में तोरिया, सरसों व बंगा सरसों के लिए 35 किलोग्राम यूरिया तथा 50 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट प्रति एकड़ बिजाई के समय पोर दें। नहरी इलाकों में राया के लिए क्रमशः 35 किलोग्राम यूरिया व 75 किलोग्राम सुपरफास्फेट प्रति एकड़ बिजाई के समय खेत में पोर दें। यदि ज़मीन रेतीली हो और गंधक की कमी हो तो फास्फोरस का स्रोत सिंगल सुपर फास्फेट ही चुनें। यदि फास्फोरस डी.ए. पी. द्वारा डालें तो खेत को तैयार करते समय ही 100 किलोग्राम जिप्सम प्रति एकड़ बिखेर कर खेत में मिला दें क्योंकि यह गंधक का एक सस्ता एवं अच्छा स्रोत है। गंधक वाले रसायनों के प्रयोग से जहां तिलहनी फसलों की उपज में वृद्धि होती है वहां तेल प्रतिशतता में भी भारी सुधार होता है। ध्यान रखें कि सिंगल सुपर फास्फेट के साथ जिप्सम डालने की आवश्यकता नहीं है। यदि ज़मीन में जस्ते की कमी हो तो प्रति एकड़ बिजाई के समय 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट 20-25 किलोग्राम सूखी भुरभुरी मिट्टी में मिलाकर खेत को तैयार करते समय मिला दें। राया में एजोटोबैक्टर के टीके का प्रयोग लाभप्रद है।

### तिल

पत्ता लपेट व फल छेदक सूण्डी की रोकथाम के लिए 725 ग्राम कार्बेनिल 50 प्रतिशत घु.पा. को 240 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

### बरसीम

इस माह के आखिरी सप्ताह में बरसीम की बिजाई शुरू कर दें। बिजाई के लिए केवल बरसीम की सिफारिशशुदा किस्मों जैसे मैस्कावी हिसार बरसीम-1 व हिसार बरसीम-2 के शुद्ध बीजों को ही काम में लाएं। खेत को इस प्रकार तैयार करें कि मिट्टी भुरभुरी हो जाए, खरपतवार बिल्कुल न हों व खेत समतल हो। बिजाई से पहले खेत में पानी भरें। बीज,

छिट्टा विधि द्वारा खेत में एकसार डालें। ध्यान रखें कि बिजाई के समय हवा न चलती हो। यदि तेज़ हवा चल रही हो तो बीज को खेत में छिड़क कर ऊपरी मिट्टी में मिलाकर शीघ्र सिंचाई कर दें। ध्यान रहे कि बीज में कासनी व अन्य खरपतवार के बीज न हों। बरसीम की पहली अच्छी कटाई लेने के लिए बरसीम के बीज के साथ 500 ग्राम जापानी सरसों या चीनी सरसों या जई का 10 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ काफी है।

एक एकड़ की बिजाई के लिए लगभग 10 किलोग्राम बीज पर्याप्त होता है। बिजाई के समय 22 किलोग्राम यूरिया तथा 175 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट प्रति एकड़ के हिसाब से खेत में डालें। यदि उपर्युक्त दोनों उर्वरक उपलब्ध न हों तो प्रति एकड़ 60 किलोग्राम डी.ए.पी. बिजाई के समय डाल सकते हैं। अगर यह खेत में पहली बार बीजी जा रही हो तो राइजोबियम का टीका लगाना न भूलें। यदि बरसीम के साथ जई की मिश्रित फसल लेनी है तो 35 कि.ग्रा. अतिरिक्त यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से बिजाई के समय देनी चाहिए। तना गलन रोग से बचाव के लिए रोगरोधी किस्म हिसार बरसीम-1 या हिसार बरसीम-2 उगाएं।

### गेहूँ व चना

इन फसलों की बिजाई के लिए बीज का अभी से प्रबंध करें। किसी विश्वस्त बीज संस्था से संपर्क करें। बारानी क्षेत्रों में चने की बिजाई के लिए वर्षा के पानी को एकत्रित करने के लिए इस माह आवश्यकतानुसार खेत की जुताई करें ताकि खरपतवार निकल जाएं। हर बार सुहागा लगाएं ताकि नमी बनी रहे। चने की बुवाई के लिए ट्रैक्टर चालित रीजर-सीडर का प्रयोग करें। यह यंत्र बारानी तथा सिंचित दोनों क्षेत्रों में चने की बुवाई के लिए उपयुक्त है। बुवाई यंत्रों का ठीक से समायोजन करके रख लें ताकि बुवाई के समय कोई कठिनाई न आये।

### सोयाबीन, मूँग व उड़द

माह के अंत में सिंचाई करें। ध्यान रखें कि अधिक पानी से पौधे गल जाते हैं। विषाणु रोगों को फैलाने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए 400 मिलीलीटर मैलाथियान का 250 लीटर पानी में घोल बनाकर एक एकड़ पर छिड़काव करें।

किसी-किसी वर्ष इन फसलों पर बिहार की बालों वाली सूण्डी, जिसे कातरा भी कहते हैं, भारी क्षति पहुंचाती है। इसकी रोकथाम के लिए 500 मि.ली. एकालक्स 25 ई. सी. या 250 मि.ली. न्यूवाक्रान/मोनोसिल 36 एस.एल. या 200 मि.ली. न्यूवान 76 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

### अनाज का सुरक्षित भण्डार

भण्डारों में रखे अनाज की जांच करें। यदि कीड़ा लगा हो तो एल्यूमिनियम फास्फाइड (सैल्फास/क्विकफास/फास्फ्यूम) की टिकियां डालें। भण्डार हवाबंद हों तो 1000 घन फुट (28 घन मीटर) के भण्डार के लिए 7 टिकियां काफी हैं परंतु इसमें पूरी सावधानी बरतें।



## सब्जियों में

### टमाटर

अगस्त में रोपी गई पौध की देखभाल करें तथा नाइट्रोजन खाद की पहली मात्रा रोपाई के लगभग 4-5 सप्ताह बाद डालें। एक एकड़ खेत में लगभग 14 किलोग्राम नाइट्रोजन (30 किलोग्राम यूरिया) देकर सिंचाई करें। नाइट्रोजन खाद की दूसरी मात्रा फसल में फूल आने की अवस्था में देनी होती है। यदि अधिक वर्षा हो तो जल निकास का प्रबंध करें तथा सूखा होने पर सिंचाई करें। हानिकारक कीड़ों हड्डा बीटल, हरा तेला और सफेद मक्खी) का प्रकोप होने पर 400 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। विषाणु रोग को फैलाने वाली सफेद मक्खी की भी मैलाथियान से रोकथाम हो जाती है। फल छेदक सूण्डी का प्रकोप होने पर ग्रसित फलों को तोड़कर नष्ट कर दें तथा 500 ग्राम कार्बेरिल (सेविन/हैक्साविन/कार्बेविन) 50 घु.पा. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें।

### बैंगन

खड़ी फसल में नाइट्रोजन खाद की दूसरी मात्रा (28 कि.ग्रा. यूरिया खाद प्रति एकड़) देकर सिंचाई करें। हानिकारक कीटों से बचाव के लिए पिछले माह बताई गई कीटनाशक दवाओं का क्रम से प्रयोग करें।

### मिर्च

नाइट्रोजन खाद की दूसरी मात्रा (17 किलोग्राम यूरिया खाद प्रति एकड़) देकर सिंचाई करें। फसल को हानिकारक कीटों से बचाने के लिए पिछले माह बताई गई दवाइयों का प्रयोग करें। फल का गलना व टहनीमार रोग के नियंत्रण के लिए 400 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड या इण्डोफिल-45 को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से 10-15 दिन के अंतर पर छिड़कें। फल-फूल गिरने से बचाव के लिए प्लेनोफिक्स या वर्धन नामक दवा के घोल का छिड़काव करें। 40 मिलीलीटर दवा को 180 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ फसल पर पहला छिड़काव फूल आने पर करें तथा दूसरा छिड़काव उसके लगभग 3 सप्ताह बाद करें।

### भिण्डी

खड़ी फसल में नाइट्रोजन खाद की दूसरी मात्रा (28 किलोग्राम यूरिया खाद प्रति एकड़) देकर सिंचाई करें। हानिकारक कीड़ों (हरा तेला व चित्तीदार सूण्डी) से बचाव के लिए पिछले माह बताई गई दवा को क्रम से 15 दिन के अंतर पर बारी-बारी से छिड़कें। दवा के छिड़काव से पहले फलों को तोड़ लें तथा दवा प्रयोग के बाद एक सप्ताह तक फलों को खाने के काम में न लें।

### कहूँ जाति की सब्जियां

नाइट्रोजन खाद की दूसरी मात्रा (12 किलोग्राम यूरिया खाद प्रति

एकड़) देकर सिंचाई करें। हानिकारक कीटों व बीमारियों से रक्षा करें। इस माह फल की मक्खी का प्रकोप बहुत होता है। इसके लिए 250 मि.ली. फैनिट्रोथियान 50 ई.सी. या 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 500 ग्राम कार्बेनिल 50 घु.पा. को 1 किलोग्राम 250 ग्राम गुड़ और 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। मैलाथियान दवाई हरा तेल, सफेद मक्खी और अल के लिए भी ठीक है।

### शकरकंदी

शकरकंदी की फसल में नाइट्रोजन खाद की दूसरी मात्रा (17 किलोग्राम यूरिया खाद प्रति एकड़) देकर मिट्टी चढ़ा दें तथा सिंचाई करें। यदि आवश्यकता हो तो कीटनाशक दवाओं का प्रयोग करें।

### अरबी

अरबी की फसल में नाइट्रोजन खाद की दूसरी मात्रा (17 किलोग्राम यूरिया खाद प्रति एकड़) देकर मिट्टी चढ़ा दें तथा सिंचाई करें। अंगमारी या झुलसा रोग से बचाव के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड या जिनेब (600 ग्राम/एकड़) का घोल 200 लीटर पानी में बनाकर छिड़काव करें और आवश्यकता पड़ने पर 15 दिन के अंतर पर दोहराएं।

### फूलगोभी

अगेती किस्म (पूसा कातकी) के खेत की उचित देखभाल करें। सिंचाई करें तथा रोपाई के लगभग तीन सप्ताह बाद प्रति एकड़ 35 किलोग्राम किसान खाद (16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन) तथा फूल आने की अवस्था में भी 35 किलोग्राम यूरिया खाद (16 किलोग्राम नाइट्रोजन) से टॉप ड्रेसिंग करें। नाइट्रोजन खाद देने के बाद सिंचाई करें। मध्य मौसमी किस्मों (हिसार-1) की पौध नर्सरी में तैयार हो रही होगी, तब तक खेत की तैयारी करें। पौध इस माह के अंत तक या अक्टूबर के शुरू में लगाने योग्य हो जाएगी। अगेती किस्मों में पौध लगाने की दूरी 45-30 सें.मी. तथा मध्यम वर्ग में 60-60 सें.मी. रखें। पछेती किस्म (स्नोबाल-16) की बिजाई भी नर्सरी में इस माह के अंत में शुरू की जा सकती है। इस समय अगेती गोभी को सूण्डी आदि के प्रकोप से बचाने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ फसल पर हर 10 दिन बाद छिड़काव करें।

### बन्दगोभी व गांठगोभी

बन्दगोभी व गांठगोभी की बिजाई, पौध तैयार करने के लिए, नर्सरी में करें। बन्दगोभी की अगेती किस्में, प्राइड आफ इण्डिया या गोलडन लगाएं। एक एकड़ के लिए लगभग 200-250 ग्राम बीज की आवश्यकता होगी। गांठ-गोभी की किस्म, अर्ली हवाईट वियाना प्रयोग करें। 800 ग्राम बीज प्रति एकड़ खेत के लिए पौध तैयार होने में लगभग 5-6 सप्ताह का समय लगेगा। इस बीच खेत की तैयारी करें। बीज को बोने से पहले एमिसान या कैप्टान नामक दवा से उपचारित (2.5 ग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज की दर से) करें।

### पालक

बिजाई के लगभग 4 सप्ताह बाद नाइट्रोजन खाद की पहली मात्रा दें तथा उसके लगभग 4 सप्ताह बाद दूसरी मात्रा देकर सिंचाई करें। प्रत्येक

कटाई के बाद 16 किलोग्राम नाइट्रोजन खाद (35 कि.ग्रा. यूरिया) प्रति एकड़ की दर से दें तथा उसके बाद सिंचाई करें। पालक की नई बिजाई भी इस माह कर सकते हैं।

### मूली, शलगम व गाजर

बिजाई के लगभग एक माह बाद 12 किलोग्राम नाइट्रोजन (25 किलोग्राम यूरिया खाद) प्रति एकड़ देकर मिट्टी चढ़ा दें तथा सिंचाई करें। बोने से पहले बीज का कैप्टान या थाइरम से उपचार (3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) करें।

### खरीफ प्याज

रोपाई की गई फसल की देखभाल करें। खरपतवार निकालें, सिंचाई करें व जल का निकास करें।

### अन्य सब्जियां

आलू के लिए खेत की तैयारी करें तथा अच्छे बीज (कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी जवाहर, कुफरी सिंदूरी, कुफरी बादशाह या कुफरी सतलुज, कुफरी बहार व कुफरी पुठकर किस्में 10-12 किंवटल/एकड़ की दर से) का प्रबंध करें। सलाद की बिजाई नर्सरी में इस माह की जा सकती है। एक एकड़ के लिए 300-400 ग्राम बीज की आवश्यकता होगी। अगेती मेथी तथा धनिया (हरी सब्जी) की भी बिजाई इस माह की जा सकती है।



## फलों में

फलदार पौधे लगाने हेतु वर्षा का मौसम सबसे अच्छा रहता है। जिस दिन हल्की वर्षा हो, उस दिन आप अमरूद, आंवला, बेर, किन्नो, बेल पत्थर, आम, चीकू इत्यादि के पौधे लगा सकते हैं।

फल उत्पादकों को जिन बातों की तरफ ध्यान देना है वे हैं-पौधे लगाना, नये लगाये हुए पौधों की देखभाल करना, खाद डालना, निराई-गोड़ाई करना, रबी की फसल की बिजाई के लिए कतारों के बीच ज़मीन तैयार करना आदि। अगर पौधे कमज़ोर दिखाई देते हों तो उनमें दो बार (75 ग्राम प्रति पौधा) यूरिया खाद डालें और सिंचाई करें। नींबू वर्गीय पौधों में टहनियां तेज़ी से बढ़ती हैं और इनके पत्ते प्रायः बड़े होते हैं। इस तरह की टहनियां पेड़ के आकार को बिगाड़ देती हैं। इसलिए ये वाटर स्पराउट काट दें। सूक्ष्म तत्व के दो छिड़काव पौधों पर करें। पहले छिड़काव में जिंक सल्फेट एक कि.ग्रा., यूरिया 2 कि.ग्रा. को 200 लीटर पानी में मिलाकर मई-जून में करें। दूसरा छिड़काव अगस्त-सितम्बर में करें। नींबू जाति के फलों में तुड़ाई से पूर्व फलों के गिरने की समस्या होती है। इस समस्या को रोकने के लिए 2,4-डी-6 ग्राम, जिंक सल्फेट 3 कि.ग्रा., 1.5 कि.ग्रा. चूना और आरियोफन्जिन 12 ग्राम को 550 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।



जिन फलदार पौधों में छाल खाने वाली सूण्डी की समस्या है उनमें दवाई मिले घोल का कीड़े के सुराख के चारों तरफ लेप कर दें। 10 लीटर पानी में 10 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस.एल. या मिथाईल पैराथियान 50 ई.सी. मिलाकर लेप बनाएं।

### अंगूर

बालों वाली सूण्डियां पत्तों को बड़ी तेज़ी से खाती हैं। यदि आवश्यकता हो तो 500 लीटर पानी में 400 मि.ली. डाइक्लोर्वास 76 ई.सी. घोल कर एक एकड़ में छिड़काव करें। यदि वर्षा लगातार होती रहे तो बीमारियों को रोकने के लिए 0.2 प्रतिशत बेनलेट या बाविस्टिन (2 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी) का घोल बनाकर इस माह के दूसरे सप्ताह में छिड़काव करें। पौधों में सिंचाई न करें।

### नींबू जाति के बाग

नींबू जाति के पौधों को कीड़ों से बचाने के लिए 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस.एल. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ बाग में छिड़काव करें।

### अमरूद

यदि पिछले महीने खाद न डाली हो तो इस महीने खाद व उर्वरक पौधों की उम्र के हिसाब से डालें। उक्टा (विल्ट) रोग शुरू हो जाए तो हर पौधे के थांवेले में 15 ग्राम बाविस्टिन डालकर पानी लगा दें। पौधों पर 3 ग्राम जिंक सल्फेट 10 ग्राम यूरिया को 1 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।



## पशुओं में

### गाय-भैंस

वर्षा में जोहड़ों का पानी पीने से पशुओं में पेट के कीड़ों के अतिरिक्त कुछ छूत के रोग भी हो जाते हैं। अतः उन्हें ऐसा पानी मत पीने दें। पशु के गोबर की जांच भी समय-समय पर करवाते रहना चाहिए और अपने पशु चिकित्सक के परामर्श से छोटे और बड़े पशुओं को कृमिनाशक दवा पिलाएं।

यदि आपके पशु मिट्टी खाते हैं तो हो सकता है कि उनके पेट में कीड़े हैं या उनके भोजन में कुछ आवश्यक तत्वों की कमी है अतः उन्हें संतुलित आहार के साथ-साथ 50 ग्राम खनिज मिश्रण रोज़ाना दें व कृमिनाशक दवा पिलाएं।

इस माह पशुओं को प्रसूति रोग होने की अधिक संभावना के कारण गाय-भैंसों को आराम से पचने वाला चारा दें। हरे चारे के साथ-साथ दाना व खनिज मिश्रण दें। यदि पशुओं को बच्चा जनने में कठिनाई हो तो उससे स्वयं छेड़छाड़ न करें। अपने समीप के पशु चिकित्सक से परामर्श लें।

नवजात बच्चों को जन्म से आधे से 1 घण्टे के अंदर-अंदर तथा कम से कम 2-3 दिन तक खीस अवश्य पिलानी चाहिए। इससे उनका हाज़मा

ठीक रहता है तथा बीमारियों से बचाव में भी मदद मिलेगी। जेर गिरने का इन्तज़ार न करें। अधिक दूध वाले पशुओं के थन ब्याने के तीन-चार दिन तक पूरी तरह खाली न करें। ऐसा न करने पर पशु में दूध का बुखार हो जाता है। इसमें जानवर खड़ा नहीं हो सकता तथा चारा-पानी छोड़ देता है। ऐसा होने पर तुरन्त डाक्टर से सम्पर्क करें।

1. बरसात के मौसम में पशु-आवास में पानी न ठहरने दें, व साफ-सफाई पर विशेष ध्यान दें।
2. पशुशाला में पानी की निकासी के साथ-साथ ध्यान रखें कि पशु घर की छत से पानी न टपके।
3. चारा-भण्डारण की जगह पर भी नमी से बचाव के तरीके अपनाएं।
4. काला या फफूंद लगा चारा पशुओं को न दें।
5. इस मौसम में पशुओं की खुर की जाँच नियमित रूप से करें व किसी भी प्रकार का लंगड़ापन दिखने पर चिकित्सीय परामर्श लें व चूने का प्रयोग करें।
6. मक्खी, मच्छर आदि से पशुओं का बचाव करें। मच्छरदानी लगाएं व फार्म के आसपास ऐसे पौधे लगाएं जिनसे इनका प्रकोप कम हो, उदाहरणतया लेमन ग्रास, मरवा, गेंदे, सदाबहार आदि।
7. चारे व पानी की टंकी/हौद को रोज़ साफ करें व सप्ताह में एक बार चूना/लाल दवाई डालें।
8. पशु-आहार में एक दम से कोई बदलाव न करें, धीरे-धीरे करें।
9. सुनिश्चित करें की गलघोटू व मुँह-खुर का टीकाकरण हो गया हो।

### वर्ष भर किए जाने वाले नियमित कार्य :

- पशुओं की आयु व दुग्ध उत्पादन अनुसार नियमित रूप से खनिज मिश्रण दें।
- नवजात को 1-2 घंटे के अन्दर खीस पिलाएं।
- गोबर जाँच करवाकर, नियमित रूप से पेट में कीड़ों की दवा दें।
- पशुओं को उचित व्यायाम (घूमने-फिरने दें) जिससे शरीर दिखावे की समस्या व अन्य समस्याएं न आएँ।

### भेड़

भेड़ों में आजकल ब्यांत चल रहा है। इसलिए भेड़ों की चराई आपकी अपनी निगरानी में होनी चाहिए। उन्हें समय पर खुराक तथा साफ पानी पिलाने की व्यवस्था ठीक ढंग से होनी चाहिए। उनके ऊन में सफाई का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है।

चेचक और एण्टेरोटाक्सिमिया नामक बीमारियों से बचाव के टीके, जो मुफ्त लगाए जाते हैं, अपने नज़दीकी पशु चिकित्सालय से लगवाएं। भेड़ों में पेट के कीड़े मारने के लिए दवा नियम पूर्वक पशु चिकित्सक की सलाह से पिलानी चाहिए। अधिक व अच्छी ऊन पैदा करने और भेड़ों की नस्ल सुधारने के लिए उन्हें अच्छे नस्ल के मेड़ों से मिलवाएं।

## भेड़-बकरी

1. भेड़-बकरियों में टीकाकरण करवाएं (पी.पी.आर., फड़किया, गलघोंटू, मुँह-खुर आदि)।
2. बदलते मौसम में भेड़-बकरियों को न्यूमोनिया से बचाएं।
3. सड़क किनारे लगी घास न चराएं।
4. पेट के कीड़ों/लीवर फ्लूक की दवा दें।

## कुक्कुट/मुर्गीपालन

फरवरी और मार्च महीने में पाले गए चूजे इस माह में अण्डे देना आरम्भ कर देते हैं।

जो मुर्गियां 20 सप्ताह की हो गई हों तथा 10 प्रतिशत की दर से अण्डे देने लग गई हों, उन्हें रात को रोशनी दें। दिन व रात मिलाकर रोशनी 15-16 घण्टों से अधिक न हो।

मुर्गियों को संतुलित आहार दें। मुर्गीघरों की खिड़कियां खोल कर रखें और बिछावन गीला होने से बचाएं तथा इसे रोज़ाना एक बार अवश्य पलटें। आहार में एमीनो-अम्ल, रेशे, नमक एवं तेज़ाब, अधुलनशील राख की जांच करवाएं। आहार को ज़मीन से एक फुट ऊंचाई पर रखना चाहिए।

- मौसम के बदलाव से मुर्गियों को बचाएं।
- सुबह-शाम के तापमान का अंतर ज़्यादा न रहे।
- बिछावन गीला होने से बचाएं, जिससे फार्म में अमोनिया न बने और कोकसी का प्रकोप कम हो।
- मुर्गियों में रानीखेत, गम्बोरो आदि का टीकाकरण चिकित्सीय परामर्श से करें।



## घर-आंगन में

- अगर वर्षा का पानी घर के आस पास इकट्ठा हो गया है तो मच्छरों की वृद्धि को रोकने के लिए उसमें मिट्टी के तेल का छिड़काव करें।
- अनाज एवं दालों को समय-समय पर धूप लगवाते रहें क्योंकि नमी के कारण अनाज एवं दालों में सुरसुरी लग जाती है।
- घुण से बचाने के लिए आप पारा की गोली (जो आपको मेडिकल स्टोर से मिलेगी) का इस्तेमाल भी कर सकते हैं। आप इस गोली को कपड़े में बांधकर अनाज में डाल दें।



# तिल की फसल – हानिकारक कीटों की रोकथाम : भरपूर पैदावार

रूमी रावल एवं तरूण वर्मा

कीट विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत का नाम तमाम तिल उगाने वाले देशों में सबसे ऊपर है, भारत के कई राज्यों में बड़े पैमाने पर तिल की खेती की जाती है। तिल में सेहत सुधारने के सारे गुण मौजूद हैं। इसमें प्रोटीन, कैल्शियम, लोहा, विटामिन 'बी' काम्पलेक्स तथा अन्य पोषक तत्व होते हैं। तिल मुख्य रूप से लाल, सफेद और काले रंग का होता है, काले तिलों में औषधीय गुण सबसे अच्छे हैं। तिल के तेल को तेलों की रानी कहा जाता है, क्योंकि इसमें त्वचा निखारने तथा खूबसूरती बढ़ाने के गुण मौजूद होते हैं। लेकिन तिल में कई प्रकार के कीट लग जाते हैं, जो कि इसकी उत्पादन क्षमता व गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। इस फसल में लगने वाले हानिकारक कीटों और उनकी रोकथाम के उपाय अपनाकर तिल की भरपूर फसल ली जा सकती है।

**तिल की पत्ती लपेट तथा फली बेधक सूण्डी :** फसल की शुरूआती अवस्था में इस कीट की सूण्डियां कोमल पत्तों को लपेटकर खाती हैं जिससे पत्ते गिर जाते हैं। बाद में सूण्डियां फूलों के भीतरी भाग को खाती हैं। ये फलियों में छेद करके अन्दर ही अन्दर बीजों को खाकर हानि पहुँचाती हैं।

**रोकथाम :** इस कीट के नियंत्रण के लिए 600, 650 तथा 725 ग्राम कार्बेनिल 50 घु.पा. को क्रमशः 200, 220 तथा 240 लीटर पानी में मिलाकर बिजाई के 25, 40 व 55 दिन के अन्तराल पर प्रति एकड़ की दर से फसल पर छिड़काव करें।

**हरा तेल :** यह कीड़ा पत्तों से रस चूसता है जिससे पौधों की बढ़वार, गुणवत्ता तथा उपज कम हो जाती है। यह पौधों में फायलोडी रोग (फलियों के स्थान पर हरी पत्तियों के गुच्छे) फैलाता है जिससे फसल को काफी नुकसान होता है। यह कीड़ा फसल को जुलाई - अगस्त में सबसे अधिक हानि पहुँचाता है।

**नियंत्रण :** इस कीट के नियंत्रण के लिए 200 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

**बालों वाली सूंडियां (कातरा) :** फसल को नुकसान सूण्डियों द्वारा होता है। जब ये सूण्डियां छोटी अवस्था में होती हैं तो पत्तियों की निचली सतह पर इकट्ठी रहती हैं तथा पत्तों को छलनी कर देती हैं। जब ये बड़ी अवस्था में होती हैं ये सारे खेत में इधर-उधर घूमती रहती हैं और पत्तों को खाकर नुकसान पहुँचाती हैं।

(शेष पृष्ठ 20 पर)

# मुर्गी पालन में समस्याएं (दोष) : रोकथाम

मनीष शर्मा<sup>1</sup>, गौरी चंद्रात्रे एवं के. के. जाखड़  
विकृति विज्ञान विभाग

ला. ला. रा. पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

मुर्गी पालन में कुछ समस्याएं होती हैं, उनके लिए हमें उचित समय पर ध्यान देने की ज़रूरत है और इनसे पोल्ट्री किसानों को नुकसान हो सकते हैं। महत्वपूर्ण दोष इस प्रकार हैं :

क) कन्निबलिज़्म (Cannibalism)

ख) अंडा खाना (Egg eating)

ग) अंडे छुपाना (Egg hiding)

घ) पाईका (Pica)

**क) कन्निबलिज़्म (Cannibalism) :** इस बीमारी की वजह से पक्षियों का एक झुंड उसी घर में रहने वाले अन्य पक्षियों पर हमला करके उनके मांस को खा जाता है जिसके कारण गहरे घाव और मृत्यु दर बढ़ जाती है। अंडा देने वाली मुर्गियों में वेंट पिकिंग (Vent Picking) आमतौर पर होती है। एक बार शुरू होने के बाद यह तेज़ी से झुंड में फैलता है और इसका कोई सरल उपचार नहीं है। विशेष रूप से क्लोअकल (Clocalarifices) के आसपास घाव की उपस्थिति कन्निबलिज़्म का संकेत होता है।

**कन्निबलिज़्म के लिए जिम्मेदार कुछ कारण :**

1. मुर्गीघर में भीड़भाड़ का होना।
2. तनाव बढ़ने के कारण गुप्त अंगों में रक्तस्राव।
3. आहार में प्रोटीन की कमी का होना।
4. कम आहार का प्रावधान।
5. भोजन में मकई/मक्का की अतिरिक्त मात्रा का होना।
6. अर्जिनिन (Arginine) और मिथियोनाईन (Methionine) की आहार में कमी।
7. नमक और खनिजों की कमी होना।

**कन्निबलिज़्म की रोकथाम**

- डिबिकिंग उचित समय पर और सही तरीके से करनी चाहिए। एक तिहाई ऊपरी चोंच और टिप के निचले चोंच की सही उम्र में कटौती की जानी चाहिए।
- घायल पक्षियों को अलग रखना तथा उनका उचित उपचार किया जाना चाहिए।
- पक्षियों की भीड़भाड़ तुरंत सही करनी चाहिए।

- मुर्गियों का खाना उचित समय पर पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होना चाहिए।
- अंडे देने वाली जगह पर शांति होनी चाहिए।
- घोंसले वाली जगह के पास लाल बल्ब की व्यवस्था, समस्या को कम करने में मदद कर सकते हैं।
- आहार में मछली (Fish meal) या ताज़ा कच्चे मांस मिला सकते हैं।
- विटामिन, खनिज मिश्रण और नमक की राशन में थोड़ी सी वृद्धि की जानी चाहिए।
- आहार में मिथियोनाईन की वृद्धि से इस आदत को रोका जा सकता है।

**ख) अंडे खाना (Egg eating) :** कभी-कभी पक्षियों में अपने अंडे खाने की प्रवृत्ति विकसित हो जाती है। यह भी एक बहुत सामान्य समस्या है। यह टूटे अंडे की उपस्थिति के कारण प्रारंभ हो सकती है। एक बार पक्षियों में प्रवृत्ति विकसित हो जाए तो वह अपने स्वयं के अंडे तोड़ना शुरू कर देते हैं।

**अंडे खाने के कुछ कारण इस प्रकार हैं :**

- अंडे का टूटना अथवा पतली या नरम अंडे की खोल का होना।
- मुर्गीघर में बिछावन की कमी का होना।
- मुर्गीघर में लंबी अवधि के लिए अंडे की उपस्थिति भी पक्षी को अंडा खाना शुरू करने के लिए प्रोत्साहित कर सकती है।

**रोकथाम**

- अंडे देने वाली मुर्गियों को अलग रखना चाहिए।
- खाने में चूना, पत्थर और प्रोटीन आहार में वृद्धि की जानी चाहिए।
- अंडा खाने वाली मुर्गियों को अंडा देने के बाद अलग कर देना चाहिए।
- डिबिकिंग (Debeaking : चोंच को काटना) भी इस प्रवृत्ति को कम करता है।
- अंडे देने वाली जगह में अंधेरा करने से भी उनकी आदत को रोक सकते हैं।
- अंडे का संग्रह अंतराल कम किया जाना चाहिए।

**3. अंडे छुपाना (Egg hiding) :** घरेलू मुर्गियों को खुले में छोड़ने से यह प्रवृत्ति विकसित हो सकती है। वे झाड़ियों में अपने अंडे छुपा देती हैं।

**रोकथाम**

- पक्षियों की आवाजाही की स्वतंत्रता को सीमित रखना।
- मुर्गीघर के अंदर अंडे देने वाली जगह को बनाया जाए।

**Pika (पीका) :** पक्षी उन चीज़ों को खा लेते हैं जो खाने लायक नहीं होती हैं जैसे कि पंख, कूड़े की सामग्री, धागे आदि। यह आधुनिक पोल्ट्री फार्म में कम पाया जाता है।

<sup>1</sup>सहायक प्राध्यापक, पशु चिकित्सा, लुवास, हिसार।



## कारण

- पक्षियों के खाने में खनिज मिश्रण (फस्फोरस एवं कैल्शियम) और विटामिन्स की कमी का होना।
- पक्षियों के शरीर में आंतरिक पर्जीबियों का होना।

## रोकथाम

- मुर्गियों का खाना उचित समय पर पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होना चाहिए।
- मुर्गियों के खाने में खनिज मिश्रण और विटामिन्स उचित मात्रा में होने चाहिए।



(पृष्ठ 18 का शेष)

## रोकथाम

- फसलों का निरीक्षण अच्छी तरह से करना चाहिए तथा कातरे के अण्ड समूहों को नष्ट कर दें।
- आक्रमण के शुरू-शुरू में छोटी सूण्डियां कुछ पत्तों पर अधिक संख्या में होती हैं। इसलिए ऐसे पत्तों को सूण्डियों समेत तोड़कर ज़मीन में गहरा दबा दें या फिर मिट्टी के तेल के घोल में डालकर नष्ट कर दें।
- कातरा की बड़ी सूण्डियों को भी इकट्ठा कर ज़मीन में गहरा दबा दें या मिट्टी के तेल में डालकर नष्ट कर दें।
- खेत में व खेत के आसपास खरपतवार को नष्ट कर देना चाहिए।
- खेतों में खरीफ फसलों को काटने के बाद गहरी जुताई करें जिससे ज़मीन में छुपे हुए प्यूपे बाहर आ जाते हैं और पक्षियों द्वारा खा लिए जाते हैं।
- बड़ी सूण्डियों की रोकथाम के लिए 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफ़ास (न्यूवाक्रान) 36 एस.एल. या 200 मि.ली. डाईक्लोर्वास (न्यूवान) 76 ई.सी. या फिर 500 मि.ली. क्विनलफास (एकालक्स) 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।



एक कदम स्वच्छता की ओर

# उपभोक्ता के अधिकार

कंचन शिला, बीनू सहगल एवं रीना

पारिवारिक संसाधन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

## उपभोक्ता कौन है ?

किसी भी वस्तु या सुविधा को खरीदने वाला व्यक्ति उस वस्तु या सुविधा का उपभोक्ता कहलाता है। वस्तु या सेवा को खरीदने वाले व्यक्ति की रज़ामंदी से उस वस्तु या सेवा को उपयोग करने वाला व्यक्ति भी उपभोक्ता होता है। अतः हम में से प्रत्येक व्यक्ति हर दिन किसी न किसी रूप में एक उपभोक्ता की भूमिका निभाता है।

## एक उपभोक्ता के तौर पर हमें अपने अधिकारों को जानना क्यों आवश्यक है ?

हर व्यक्ति अपनी कठिन मेहनत से पैसे कमाता है जिनको खर्च करके वह अपनी ज़िंदगी की आवश्यकताएं पूरी करता है, लेकिन बाज़ार के गलत प्रचलनों के कारण वह ठगी का शिकार हो जाता है और उसे उसके पैसे का पूरा लाभ नहीं मिल पाता है। अतः यह ज़रूरी हो जाता है कि हम उपभोक्ता के तौर पर अपने अधिकारों को जानें ताकि बाज़ार में दुकानदारों के द्वारा होने वाली धोखाधड़ी से बच सकें और हमें अपने पैसे का उचित लाभ मिल सके।

## बाज़ार में किस तरह की धोखाधड़ी होती है ?

दुकानदारों की ज़्यादा धन कमाने की प्रवृत्ति के चलते बाज़ार में गलत तरीकों से अपने सामान और सेवाओं को बेचने से एक उपभोक्ता तौर पर हमें कई परेशानियों का सामना करना पड़ता है। ये परेशानियां खराब सेहत और आर्थिक तौर पर हानि के रूप में हो सकती हैं। दुकानदार कई तरीकों से धोखाधड़ी करते हैं जैसे कि-

- खाने-पीने की चीज़ों में ऐसे पदार्थ मिला देना जो उपयोगकर्ता की सेहत के लिए नुकसानदायक हों जैसे लालमिर्च पाऊडर में पिसी हुई ईंट का पाऊडर मिला देना।
- खाने-पीने की चीज़ों में से कुछ ऐसे पदार्थ निकाल देना जिससे उस पदार्थ की गुणवत्ता कम हो जाये जैसे दूध में से क्रीम निकाल कर बेचना।
- वस्तु या सेवा के बारे में झूठी या अधूरी जानकारी देना।
- वस्तुओं को मापने या तोलने के लिए गलत साधन का उपयोग करना जिससे वस्तु का माप या तोल कम हो जैसे पत्थर और धातु के टुकड़ों को बाँट के रूप में उपयोग में लाना।
- एमआरपी (अधिकतम खुदरा मूल्य) को गलत तरीके से निर्धारित करना या एमआरपी (अधिकतम खुदरा मूल्य) से ज़्यादा कीमत पर वस्तुओं को बेचना।
- वस्तु की एक्सपायरी डेट (समापन दिनांक) के बाद वस्तु को बेचना।
- किराये पर ली गई या उपयोग की गई सेवा में खामी होना।

- गारंटी और वारंटी को पूरा न करना ।
- वस्तु या सेवा का पक्का बिल न देना ।
- झूठे और लुभावने विज्ञापनों के जरिये लोगों को वस्तु और सेवा को खरीदने के लिए उकसाना इत्यादि । इस तरह की धोखाधड़ी के प्रति सचेत रहने के लिए हर व्यक्ति को अपने उपभोक्ता-अधिकारों के बारे में जानकारी होनी ज़रूरी है ।

**उपभोक्ता के अधिकार :** उपभोक्ता को उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के तहत निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं :-

1. **सुरक्षा का अधिकार :** उपभोक्ता को उसके शरीर और संपत्ति को नुकसान पहुंचाने वाली वस्तु या सेवा से सुरक्षित रहने का अधिकार है । विक्रेता बेची गई वस्तु या सेवा से उपभोक्ता की सुरक्षा के लिए पूरी तरह ज़िम्मेदार है ।
2. **सूचना पाने का अधिकार :** इसके तहत उपभोक्ता को वस्तुओं और सेवाओं के गुण, मात्रा, शुद्धता, मानक और कीमत के बारे में पूरी जानकारी पाने का अधिकार है ।
3. **पसंद या चुनने का अधिकार :** बाज़ार में एक ही वस्तु या सेवा के लिए बहुत सारी किस्म, गुण, रंग, ब्रांड और कीमत के विकल्प मौजूद हैं । उपभोक्ता इनमें से किसी भी वस्तु या सेवा को अपनी पसंद, ज़रूरत और बजट के हिसाब से चुन सकता है ।
4. **सुनवाई या अपील का अधिकार :** उपभोक्ता को अपने अधिकारों की रक्षा के लिए उपयुक्त मंच के सामने अपनी बात कहने का अधिकार है । इसमें उपभोक्ता के हितों से संबंधित विभिन्न मंचों में प्रतिनिधित्व पाने का अधिकार भी सम्मिलित है ।

**शिकायत के निवारण का अधिकार :** अगर उपभोक्ता के द्वारा खरीदी गई वस्तु या सेवा में किसी भी तरह की खामी पायी जाती है, तो यह अधिकार सुनिश्चित करता है कि उपभोक्ता को हुई हानि की भरपाई की जाये ।

**शिकायत कौन कर सकता है ?**

खुद उपभोक्ता या पंजीकृत उपभोक्ता संगठन धोखाधड़ी के खिलाफ शिकायत दर्ज कर सकते हैं ।

**शिकायत कहाँ करें ?**

वस्तु या सेवा के मूल्य और उपभोक्ता द्वारा नुकसान की मांगी गई भरपाई के आधार पर शिकायत को दर्ज कराया जा सकता है । अगर यह रकम :-

- 20 लाख रुपये से कम है तो जिला फोरम में शिकायत करें ।
- हिसार ज़िले की ज़िला फोरम का पता है-  
मिनी सेक्रेटेरिएट, हिसार -124001,  
फोन नंबर - 01662-233104
- 20 लाख रुपये से अधिक लेकिन एक करोड़ रुपये से कम है तो राज्य आयोग में शिकायत करें ।

- हरियाणा राज्य आयोग का पता है -  
हरियाणा राज्य उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग,  
बेयस नंबर 3-6, सेक्टर-4, पंचकूला, -134112 (हरियाणा),  
फोन नंबर 01722566322;  
(हरियाणा राज्य उपभोक्ता हेलपलाइन नंबर 18001802087)
- यदि एक करोड़ रुपये से अधिक है तो राष्ट्रीय आयोग में शिकायत करें ।
- इसके अलावा आप अपनी शिकायत रजिस्टर करने के लिए टोल फ्री नंबर 1800114000 या 14404 पर भी फोन कर सकते हैं ।

**शिकायत कैसे करें ?**

- शिकायत सादे कागज़ पर लिखी जा सकती है । शिकायत में शिकायतकर्ता और विपरीत पार्टी का नाम, पता, समय, जगह का नाम, सम्बंधित साक्ष्य के साथ शिकायत का विवरण और शिकायतकर्ता के हस्ताक्षर होने चाहिए ।

**नुकसान की भरपाई कैसे की जाती है :-**

- उपभोक्ता को बेची गई वस्तु से कमी को दूर करके ।
- वस्तु या इसके भाग को बदल कर ।
- मूल्य को वापस लौटा कर ।
- विभिन्न तरह की हानियों की क्षतिपूर्ति करके ।

**5. उपभोक्ता-शिक्षा का अधिकार**

उपभोक्ता को वो सब जानकारी और ज्ञान होना आवश्यक है जो उसे बाज़ार में होने वाली नाइंसाफी से जागरूक कर सके । शिक्षित उपभोक्ता अपने अधिकारों के लिए जागरूक और सचेत रहता है, साथ ही अपने परिवार और समाज को भी बाज़ार में दुकानदारों के धोखों से बचने के लिए सचेत करता है ।

**ध्यान दें-**

- मिठाई इत्यादि को तोलते समय डिब्बे का वज़न शामिल नहीं किया जाता है ।
- उचित मुहर वाली बाँट से ही वस्तु को तौला जाना चाहिए ।
- पैकिंग की वस्तुओं पर स्टिकर चिपकाकर मूल्य या दूसरी जानकारी नहीं लिखी होनी चाहिए बल्कि वस्तुओं की पैकिंग पर ही वस्तु का तोल, कीमत, पैकिंग का महीना व साल, उत्पादक का नाम व पता लिखा होना चाहिए ।
- वस्तु या सेवा का बिल ज़रूर लें और इसे संभाल कर रखें ।
- वस्तुओं पर मानक चिन्ह देख कर ही खरीददारी करें ।
- बिना पढ़े या समझे कहीं भी हस्ताक्षर न करें ।



# जलवायु परिवर्तन का खेती पर प्रभाव एवं बचाव

पूजा, एस.एस. ढांडा एवं दीपिका राठी

आनुवंशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आज पूरी दुनिया पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव पड़ रहे हैं। यह प्रभाव अलग-अलग रूप में कहीं ज्यादा तो कहीं कम महसूस किये जा रहे हैं। आज 48.9 प्रतिशत लोग रोजगार के लिये खेती पर निर्भर हैं। ऐसी स्थिति में कृषि एक महत्वपूर्ण घटक है जिसमें किसी भी प्रकार का परिवर्तन या गिरावट देश की 65 प्रतिशत जनसंख्या को प्रभावित कर सकता है। जलवायु परिवर्तन एक ऐसा कारक है जिससे प्रभावित होकर कृषि अपना स्वरूप बदल सकती है तथा इस पर निर्भर लोगों की खाद्य सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है।

**जलवायु परिवर्तन का फसलों पर प्रभाव :-** कृषि क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन के जो संभावित प्रभाव दिखते हैं, वह मुख्य रूप से दो प्रकार के दिखाई दे सकते हैं। एक तो क्षेत्र आधारित, दूसरे फसल आधारित अर्थात् विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न फसलों पर अथवा एक ही क्षेत्र की प्रत्येक फसल पर अलग-अलग प्रभाव पड़ सकता है। गेहूं और धान हमारे देश की प्रमुख खाद्य फसलें हैं। इनके उत्पादन पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव पड़ता है।

**गेहूं के उत्पादन पर प्रभाव :-** अध्ययनों में पाया गया है कि यदि तापमान 2 सेंटीग्रेड के करीब बढ़ता है तो अधिकांश स्थानों पर गेहूं की उत्पादकता में कमी आयेगी। जहां उत्पादकता ज्यादा है, उत्तरी भारत में वहां कम प्रभाव दिखेगा, जहां कम उत्पादकता है वहां ज्यादा प्रभाव दिखेगा। प्रत्येक 1 सें. ग्रे. तापमान बढ़ने पर गेहूं का उत्पादन 4.5 करोड़ टन कम होता जाएगा। अगर किसान इसके बुवाई का समय सही कर लें तो उत्पादन की गिरावट 1.2 करोड़ टन कम हो सकती है।

**धान के उत्पादन पर प्रभाव :-** हमारे देश में कुल फसल उत्पादन में 42.5 प्रतिशत हिस्सा धान खेती का है। तापमान वृद्धि के साथ-साथ धान के उत्पादन में गिरावट आने लगेगी। अनुमान है कि 2 सें.ग्रे. तापमान वृद्धि से धान का उत्पादन 0.75 टन प्रति हैक्टेयर कम हो जायेगा। देश का पूर्वी हिस्सा धान उत्पादन से ज्यादा प्रभावित होगा। अनाज की मात्रा में कमी आ जायेगी। धान वर्षा आधारित फसल है इसलिए जलवायु परिवर्तन के साथ बाढ़ सूखे की स्थितियां बढ़ने पर इस फसल का उत्पादन गेहूं की अपेक्षा ज्यादा प्रभावित होगा।

**जलवायु परिवर्तन का मिट्टी पर प्रभाव :-** कृषि के अन्य घटकों की तरह मिट्टी भी जलवायु परिवर्तन से प्रभावित हो रही है। रासायनिक खादों के प्रयोग से मिट्टी पहले ही जैविक कार्बनरहित हो रही थी। अब तापमान बढ़ने से मिट्टी की नमी और कार्यक्षमता प्रभावित होगी। मिट्टी में लवणता बढ़ेगी और जैव विविधता घटती जायेगी। भूमिगत जल के स्तर का गिरते जाना भी इसकी उर्वरता को प्रभावित करेगा। बाढ़ जैसी

आपदाओं के मिट्टी का क्षरण अधिक होगा, वहीं सूखे की वजह से इसमें बंजरता बढ़ती जायेगी।

**जलवायु परिवर्तन से बचाव :-** जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में कृषि दो तरीके से महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। एक तो ग्रीनहाउस कम करके, दूसरे वातावरण में से कार्बन डाईऑक्साइड को मिट्टी अवशोषित करके। जैविक कृषि, स्थाई कृषि, बिना जुताई के कृषि, कृषि वानिकी आदि ऐसी तकनीक हैं जो मिट्टी के क्षरण को रोकती हैं और कार्बन के नुकसान को लाभ में परिवर्तित कर देती हैं। जैविक खेती इन दोनों ही माध्यमों से जलवायु परिवर्तन में कमी लाने के लिए सक्षम है। कृषि क्षेत्र से होने वाली ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन कम करने का सबसे प्रभावी माध्यम है - जैविक खेती। अनेक अध्ययनों व क्षेत्र परीक्षणों से यह साबित हो चुका है कि जैविक कृषि अपनाकर इन नुकसानदायक गैसों के उत्सर्जन में कमी लाई जा सकती है।

**खेतों में जल संरक्षण :-** तापमान वृद्धि के साथ-साथ धरती पर मौजूद नमी समाप्त होती जाएगी। ऐसे में खेती में नमी का संरक्षण करना और वर्षा जल को एकत्र कर सिंचाई हेतु उपयोग में लाना आवश्यक होगा। ज़ीरो टिलेज जैसी तकनीकों का इस्तेमाल कर पानी के अभाव से निपटा जा सकता है। शून्य जुताई के कारण धान और गेहूं की खेती में पानी की मांग की कमी देखी गई है जबकि उपज में बढ़ोत्तरी हुई है और उत्पादन लागत 10 प्रतिशत तक कम हो गया है। इससे मिट्टी में जैविक पदार्थों की बढ़ोत्तरी हुई है और उत्पादन लागत 10 प्रतिशत तक कम हो गया है इससे मिट्टी में जैविक पदार्थों की बढ़ोत्तरी भी होती है। इसी प्रकार ऊँची उठी क्यारियों में रोपाई करना भी एक बेहतर तकनीक है जिसमें पानी के उपयोग की क्षमता बढ़ जाती है, जलभराव कम होता है, खरपतवार कम आते हैं, लागत कम लगती है व लाभ ज्यादा होता है।

**समग्रित खेती :-** आज खेती की सबसे बड़ी मांग यही है। जलवायु परिवर्तन के दृष्टिकोण से खेतों में विविधता तथा फसलों के साथ वृक्षों व जानवरों का संयोजन बहुत मायने रखता है। अब अनुभवों तथा अध्ययनों में भी यह पाया गया है कि जहां समग्रता थी, वहां नुकसान का प्रतिशत कम रहा जबकि जहां एकल फसलें अथवा केवल पशुओं पर निर्भरता थी, वहां नुकसान ज्यादा हुआ। खेती में समग्रता किसान को आत्मनिर्भर बनाती है। मिश्रित खेती के साथ जानवरों के गोबर से तैयार खाद व फसल अवशेषों से तैयार खाद पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन उत्पन्न करती है। पशु प्रबंधक, चारागाह व चारे की उपलब्धता, प्रजनन व उत्पादकता बढ़ाने हेतु दुधारू पशुओं में प्रजनन द्वारा कार्यक्षमता बढ़ाना, देसी नस्लों को बढ़ावा, चारागाह में दलहनी फसलें लगाना, गोबर का उचित प्रबन्धन करना (बायोगैस या खाद बनाकर)। सभी ग्रीनहाउस गैसों में 14 प्रतिशत उत्सर्जन मिथेन गैस कम होता है। कहा जाता है कि इसमें जानवरों की प्रमुख भूमिका है। बायोगैस व अनेक प्रकार की जैविक खादें खेती के लिए उपयोगी होती हैं।





# विभिन्न पेय पदार्थों का स्वास्थ्य पर प्रभाव

वीनू सांगवान एवं मीनू सिर्रोही

खाद्य एवं पोषण विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

जल ही जीवन है। हमारे शरीर में लगभग 70 प्रतिशत पानी पाया जाता है। यदि शरीर में पानी की कमी हो जाती है तो उसके कई गम्भीर परिणाम देखने को मिलते हैं और कभी-कभी तो पानी की अधिक कमी से मनुष्य की मृत्यु भी हो जाती है। जल के अलावा हमारे शरीर में विभिन्न प्रकार के इलेक्ट्रोलाइट्स जैसे सोडियम, पोटेशियम, क्लोराइड इत्यादि पाये जाते हैं जो शरीर में विभिन्न अंगों की कार्यविधि में भाग लेते हैं। पानी हमारे शरीर में विभिन्न अंगों की कार्य विधि व मेटाबॉलिज़्म में भाग लेता है और साथ ही हमारे शरीर का तापमान भी सामान्य बनाये रखता है। वैसे तो हमें हमेशा ही अपने आहार में जल व इलेक्ट्रोलाइट्स से भरपूर खाद्य पदार्थों को शामिल करना चाहिए परन्तु गर्मी के मौसम में हमें इनकी मात्रा थोड़ी और बढ़ा देनी चाहिए जिससे पसीने के रूप में शरीर से बाहर निकले पानी व इलेक्ट्रोलाइट्स की पूर्ति की जा सके। विभिन्न पेय पदार्थों के रूप में हम अपनी पानी की आवश्यकता को पूरा कर सकते हैं। आजकल बाज़ार में विभिन्न प्रकार के पेय पदार्थ उपलब्ध हैं जो स्वाद व ऊर्जा से तो भरपूर होते हैं परन्तु उनमें पोषक तत्वों का अभाव रहता है। वहीं दूसरी ओर आजकल की भागदौड़ वाली ज़िन्दगी में फलों और सब्जियों पर आधारित पेय पदार्थों के सेवन पर कम ही ध्यान दिया जाता है। बच्चे भी घर पर बने पेय पदार्थों को कम ही पसन्द करते हैं जिसके कई दुष्प्रभाव बच्चों, बड़ों व सभी वर्ग के लोगों में देखने को मिल रहे हैं।

बाज़ार में उपलब्ध पेय पदार्थ खासतौर पर कार्बोनेटिड सॉफ्ट ड्रिंक्स में विभिन्न प्रकार के रंग, फ्लेवर्स, प्रिज़रवेटिव्ज़, चीनी व फास्फोरिक एसिड इत्यादि का अधिक प्रयोग किया जाता है। ऐसे पेय पदार्थों का लगातार सेवन बच्चों में मोटापे को बढ़ा रहा है। मोटापा विभिन्न रोगों की जड़ है जैसे-हृदय रोग, शूगर, उच्च रक्तचाप इत्यादि। वहीं दूसरी ओर सॉफ्ट ड्रिंक्स में पाया जाने वाला फास्फोरिक अम्ल शरीर में पहुँच कर हड्डियों से कैल्शियम को बाहर निकाल देता है व हड्डियों को कमज़ोर करता है।

विभिन्न अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि बच्चों में दूध व दूध से निर्मित पेय पदार्थों का सेवन लगातार कम होता जा रहा है। दूध कैल्शियम का सर्वोत्तम स्रोत माना जाता है। अतः कार्बोनेटिड पेय पदार्थों के सेवन से एक ओर तो कैल्शियम का सेवन कम होता जा रहा है वहीं दूसरी ओर फास्फोरिक अम्ल से भरपूर सॉफ्ट ड्रिंक्स लगातार हमारे शरीर से कैल्शियम को निष्कासित कर रहे हैं। जिसके परिणामस्वरूप बच्चों की वृद्धि प्रभावित होती है और बड़ों में भी हड्डियाँ कमज़ोर होने लगती हैं जिससे जोड़ों व घुटनों के दर्द की समस्याएँ लगातार बढ़ने लगती हैं। महिलाओं में तो पचास वर्ष की आयु के बाद कैल्शियम का अवशोषण ही

कम होने लगता है। अतः ऐसी अवस्था में ऐसे पेय पदार्थ जो शरीर में कैल्शियम की कमी उत्पन्न करते हैं उन्हें शामिल न किया जाये। इसके अलावा इस प्रकार की ड्रिंक्स में चीनी की मात्रा अधिक होने के कारण ये स्वास्थ्य पर भी अनावश्यक प्रभाव डालते हैं। सॉफ्ट ड्रिंक्स के अलावा कैफ़िन से भरपूर चाय व कॉफी का ज़रूरत से अधिक प्रयोग भी शरीर में विभिन्न पोषक तत्वों के अवशोषण को प्रभावित करता है। विभिन्न अध्ययनों के आधार पर यह पता चला है कि यदि चाय व कॉफी के साथ खाना खाया जाता है तो चाय/कॉफी में पाया जाने वाला कैफ़िन विभिन्न पोषक तत्वों जैसे आयरन, कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटेशियम इत्यादि के अवशोषण को कम कर देता है। हालांकि चाय में एण्टीऑक्सीडेंट्स पाए जाते हैं परन्तु चाय/कॉफी में अधिक चीनी का प्रयोग भी शूगर, मोटापा, हृदय रोग इत्यादि को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

यदि हम स्वस्थ व लम्बा जीवन जीना चाहते हैं तो हमें अपने आहार में ऐसे पेय पदार्थों व खाद्य पदार्थों को शामिल करना होगा जो विभिन्न पोषक व गैर पोषक तत्वों से भरपूर हों जो न केवल हमारी हड्डियों व मांसपेशियों को मज़बूती प्रदान करें बल्कि विभिन्न रोगों से हमारी रक्षा भी करें। ऐसे भोज्य पदार्थों में फल, सब्जियाँ, दूध व इन पर आधारित विभिन्न पेय पदार्थ जैसे फलों व सब्जियों का जूस, सूप, विभिन्न प्रकार के शेक, लस्सी, छाछ, दही, नारियल पानी, पुदीना पानी/चटनी इत्यादि हैं। दूध, दही, लस्सी, छाछ से निर्मित पेय पदार्थ विभिन्न खनिज लवणों जैसे कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटेशियम, फास्फोरस इत्यादि, विटामिन्स जैसे विटामिन डी, ए व बी-कापलैक्स इत्यादि व प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा पाये जाते हैं जो मांसपेशियों व हड्डियों को मज़बूत बनाते हैं व शरीर की रोग निरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं।

वहीं फल व सब्जियों से निर्मित विभिन्न पेय पदार्थों में विभिन्न खनिज लवण जैसे मैग्नीशियम, पोटेशियम पाये जाते हैं जो हड्डियों से कैल्शियम को बाहर आने से रोकते हैं जिससे हड्डियाँ कमज़ोर नहीं होतीं। वहीं दूसरी ओर फलों व सब्जियों पर आधारित विभिन्न पेय पदार्थों में विभिन्न प्रकार के एण्टीऑक्सीडेंट्स व पिगमेंट्स जैसे लाइकोपिन, क्लोरोफिल, एन्थोसियानिन, फ्लेवोनॉइड्स, कैरोटिनॉइड्स व विटामिन सी इत्यादि पाये जाते हैं जो शरीर में फ्री रेडिकल्स कुछ कम करते हैं व विभिन्न बीमारियों जैसे कैंसर, हृदय रोग, मोतीबिन्द, बांझपन, शूगर, अलज़ाइमर इत्यादि के खतरे से बचाते हैं।

अतः जहाँ तक सम्भव हो कैफ़िन व कार्बोनेटिड पेय पदार्थों के अधिक उपयोग से बचें। फलों, सब्जियों व दूध से निर्मित घर पर बने पेय पदार्थों को ही अपने आहार में शामिल करें। घर पर बने पेय पदार्थ न केवल पौष्टिक होते हैं अपितु हमें वे अधिक स्वाद व सेहत भी कम खर्च में उपलब्ध कराते हैं। दिन में कम से कम 8-10 गिलास पानी का प्रयोग पीने में ज़रूर करें। यह ध्यान रखें कि पानी बहुत ठंडा न हो व जहाँ तक सम्भव हो घड़े का पानी पीयें।



# मौसम और हमारा स्वास्थ्य

दिवेश चौधरी, ममता एवं राज सिंह

कृषि मौसम विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मनुष्य का स्वास्थ्य, शारीरिक शक्ति और आराम पर मौसम एवं जलवायु का जितना प्रभाव पड़ता है, उतना वातावरण के अन्य तत्वों का नहीं। यहाँ तक कि शरीर की बनावट तथा रंग रूप भी जलवायु की विभिन्नता के अनुसार, अलग-अलग पाए जाते हैं। मौसम का परिवर्तन हमारी शारीरिक प्रक्रियाओं तथा मानसिक अवस्थाओं को भी प्रभावित करता है। विभिन्न मौसम दशाओं का असर हर मनुष्य पर समान नहीं होता। यह उसके विगत जलवायु के प्रभाव, उम्र, शारीरिक अवस्था, खान-पान तथा रहन-सहन पर निर्भर करता है।

कुछ बीमारियाँ भी मौसम परिवर्तन के कारण ही उत्पन्न होती हैं। मौसम और जलवायु हमारे स्वास्थ्य पर दो प्रकार से असर डलता है:

1. विभिन्न रोगाणुओं का प्रजनन और वृद्धि एक विशिष्ट मौसम दशा में

ही संभव हो पाता है, रोगों का कारण बनता है, तथा

2. मौसम और जलवायु शरीर की रोगों की प्रति रोधक शक्ति को कम या अधिक करने की क्षमता रखते हैं।

## तालिका 1: मौसम का बीमारियों पर लघु अवधि प्रभाव

बीमारियाँ	मौसम की परिस्थितियाँ
क्षय रोग (Tuberculosis)	उच्च आर्द्रता, कोहरा
अस्थमा (Bronchial)	अचानक शीतलन और कम दाब
लघु अथवा सूक्ष्म श्वासनलिकाओं सम्बन्धी श्वासनली का प्रदाह (Bronchitis)	कोहरा
त्वचा कर्क रोग (Cancer)	सीधी धूप
गठिया (Arthritis)	अचानक शीतलन
दिल का दौरा	अचानक और तीव्र शीतलन
सामान्य जुकाम	मौसम में अचानक परिवर्तन (तापमान नियमन प्रक्रिया व कोशिकाओं की झिल्ली पारगम्यता प्रभावित)
श्लैष्मिक बुखार (Influenza)	50% से कम सापेक्ष आर्द्रता इन्फ्लूएंजा विषाणु के संक्रमण के लिए अनुकूल
त्वचा रोग	उच्च तापमान और आर्द्रता

## तालिका 2: प्रदूषण और मौसम संबंधी तत्वों का मनुष्य के स्वास्थ्य पर प्रभाव

घटक	निश्चित प्रभाव	संभावित प्रभाव
सल्फर डाइऑक्साइड और संबंधित यौगिकों जैसे कि सल्फर युक्त अम्लीय वर्षा	<ul style="list-style-type: none"> <li>● अस्थमा और जीर्ण श्वसनीशोथ (chronic bronchitis) का बढ़ना</li> <li>● सांस लेने में तकलीफ ( फेफड़ों को नुकसान संवेदी अंगों में परेशानी ( आँख, नाक, गला)</li> <li>● वनस्पति क्षति</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● इमारतों और उन पर की गयी कला को नुकसान जैसे सल्फ्यूरिक एसिड संगमरमर की मूर्तियों को भंग कर देता है।</li> </ul>
सल्फर ऑक्साइड	<ul style="list-style-type: none"> <li>● अल्प अवधि के लिए मृत्यु दर में वृद्धि</li> <li>● अल्पावधि के लिए बीमारियों में वृद्धि</li> <li>● जीर्ण श्वसनीशोथ और कार्डियोवैस्कुलर बीमारियों में वृद्धि</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● फेफड़ों के कर्क रोग में वृद्धि</li> </ul>
धूल के कण	<ul style="list-style-type: none"> <li>● जीर्ण श्वसनीशोथ में वृद्धि</li> <li>● पारगम्यता में कमी</li> <li>● सतह पर गंदगी ( गाड़ियां व इमारतें)</li> <li>● सूरज की रोशनी की कमी</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● श्वसन रोग में वृद्धि</li> </ul>
ऑक्सीडेंट (जैसे ओजोन)	<ul style="list-style-type: none"> <li>● वातस्फीति, अस्थमा और जीर्ण श्वसनीशोथ में बढ़ोत्तरी</li> <li>● आँखों व श्वास नली में तकलीफ (खिलाड़ियों के प्रदर्शन खुराब)</li> <li>● मोटर वाहनों की दुर्घटनाओं की सम्भावना में वृद्धि</li> <li>● ऑक्सीजन स्थानांतरण में कमी</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● ऑक्सीजन खपत में परिवर्तन</li> <li>● बुढ़ापे में वृद्धि</li> </ul>
कार्बन मोनोऑक्साइड	<ul style="list-style-type: none"> <li>● रंगहीन वातावरण</li> <li>● शरीर में जम जाता है</li> <li>● दूषित चारा खाने वाले जानवरों के लिए घातक</li> <li>● वनस्पति क्षति; पशुओं के लिए नुकसानदायक</li> <li>● वनस्पति क्षति; फलों को जल्दी पकाने में सहायक</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● सामान्य और कोरोनरी मृत्यु दर में वृद्धि</li> <li>● केंद्रीय तंत्रिका तंत्र की कार्यविधि पर प्रभाव</li> <li>● कभी-कभी आर्टिरिओस्क्लेरिसिस का कारक बनता है</li> <li>● फेफड़ों के जीर्ण श्वसनीशोथ का कारक है</li> <li>● फेफड़ों के रोग में प्रतिरोधक क्षमता में कमी करता है</li> </ul>
नाइट्रोजन डाइऑक्साइड सीसा (Lead) तत्व	<ul style="list-style-type: none"> <li>● रंगहीन वातावरण</li> <li>● शरीर में जम जाता है</li> <li>● दूषित चारा खाने वाले जानवरों के लिए घातक</li> <li>● वनस्पति क्षति; पशुओं के लिए नुकसानदायक</li> <li>● वनस्पति क्षति; फलों को जल्दी पकाने में सहायक</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● सामान्य और कोरोनरी मृत्यु दर में वृद्धि</li> <li>● केंद्रीय तंत्रिका तंत्र की कार्यविधि पर प्रभाव</li> <li>● कभी-कभी आर्टिरिओस्क्लेरिसिस का कारक बनता है</li> <li>● फेफड़ों के जीर्ण श्वसनीशोथ का कारक है</li> <li>● फेफड़ों के रोग में प्रतिरोधक क्षमता में कमी करता है</li> </ul>
फ्लोराइड एथिलीन	<ul style="list-style-type: none"> <li>● रंगहीन वातावरण</li> <li>● शरीर में जम जाता है</li> <li>● दूषित चारा खाने वाले जानवरों के लिए घातक</li> <li>● वनस्पति क्षति; पशुओं के लिए नुकसानदायक</li> <li>● वनस्पति क्षति; फलों को जल्दी पकाने में सहायक</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● दांतों में फ्लोरोसिस रोग का कारण है</li> <li>● दांतों के फ्लोरोसिस का मुख्य कारण</li> </ul>

घटक	निश्चित प्रभाव	संभावित प्रभाव
क्लोरीनेटेड हाइड्रोकार्बन कीटनाशक (जैसे डी. डी. टी.)	<ul style="list-style-type: none"> <li>● शरीर में संग्रहित होता रहता है( मुख्य स्रोत आमतौर पर दूध और पशु वसा है</li> <li>● पारिस्थितिक तंत्र की क्षति का कारण</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● सीखने और प्रजनन क्षमता को कम करता है</li> </ul>
हाइड्रोथर्मल प्रदूषक	<ul style="list-style-type: none"> <li>● स्थानीय जलवायु प्रभावित</li> <li>● वातावरण की पारदर्शिता प्रभावित</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● आर्द्रताग्राही प्रदूषकों की कार्यविधि को प्रभावित करता है</li> </ul>
वायुजनित सूक्ष्मजीव ठंडा व नम मौसम	<ul style="list-style-type: none"> <li>● वायु द्वारा संक्रमण होने का कारण</li> <li>● श्वसन रोग और अधिक ठण्ड से होने वाली रोग व मृत्यु दर में वृद्धि का कारण</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● गठिया रोग का कारण</li> </ul>
ठंडा व शुष्क मौसम (शीतलहर)	<ul style="list-style-type: none"> <li>● श्वसन रोग और अधिक ठण्ड से होने वाली रोग व मृत्यु दर में वृद्धि का कारण</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● फेफड़ों का कार्य प्रभावित</li> </ul>
गर्म व शुष्क मौसम (लू)	<ul style="list-style-type: none"> <li>● गर्मी के कारण दौरा पड़ने से मृत्यु का कारण बनता है</li> <li>● गुर्दे और परिसंचरण तंत्र की कार्य क्षमता को प्रभावित करता है</li> <li>● गर्भाशय संबंधी बीमारी को बढ़ाता है</li> </ul>	
गर्म व नम मौसम	<ul style="list-style-type: none"> <li>● त्वचा संक्रमण में वृद्धि करता है</li> <li>● गर्मी से होने वाली थकावट मृत्यु का कारण बनती है</li> <li>● मनुष्य की कार्य क्षमता को कम करती है</li> <li>● गुर्दे और परिसंचरण तंत्र की कार्य क्षमता को प्रभावित करता है</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● संक्रामक रोग कारकों और वाहकों के प्रसार में वृद्धि करता है</li> </ul>
प्राकृतिक सूरज की रोशनी	<ul style="list-style-type: none"> <li>● अधिक अवधि तक तेज धूप में रहने से त्वचा के जलने की सम्भावना</li> <li>● त्वचा कैंसर का कारण</li> <li>● त्वचा को वृद्ध बनाता है</li> <li>● दवाइयों की रासायनिक संरचना को बदल देता है</li> </ul>	<ul style="list-style-type: none"> <li>● त्वचा में मेलैनिन के स्तर को बढ़ा कर मेलैनोमा नामक रोग पैदा करता है</li> </ul>

#### बचाव के उपाय :

1. एक स्वस्थ शरीर के लिए एक अच्छी नींद का होना बहुत ज़रूरी होता है। अगर नींद पूरी न हो तो इससे हमारे शरीर की रोगप्रतिरोधक क्षमता पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
2. हमारे शरीर के लिए विटामिन डी में एक बहुत ज़रूरी हार्मोन होता है, जो शरीर की इम्युनिटी क्षमता को मजबूत बनाने का कार्य करता है, आप चाहें तो सूरज की रोशनी के द्वारा विटामिन डी ले सकते हैं, इसके लिए नियमित रूप से प्रातःकाल के समय उठकर आधे घंटे धूप में बैठें, इसके अतिरिक्त आप चाहें तो विटामिन डी युक्त चीजें खाकर आप अपने शरीर में विटामिन डी की कमी पूरी कर सकते हैं।
3. आज के समय में तनाव की समस्या आम समस्या हो गयी है, तनाव होने से हमारे स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव होता है। इससे हमारे शरीर की रोगप्रतिरोधक क्षमता निर्बल होती है। इसके लिए नियमित रूप से अभ्यास करें।
4. जब भी कहीं भीड़-भाड़ वाली जगहों पर जायें तो अपनी नाक व मुंह को अच्छे से ढक लें। ऐसा करने से आप अपने आपको कई तरह की बीमारियों से बचा सकते हैं।
5. अगर आपको चाय पीना पसंद नहीं तो आप ग्रीन टी का भी सेवन कर सकते हैं। ग्रीन टी आपके स्वास्थ्य के लिए बहुत ही लाभदायक है।

6. बरसात के मौसम में ज्यादातर रोग पानी से होते हैं इसलिए सुनिश्चित करें कि आप केवल उस पानी को ही पीते हैं जो फिल्टर (filter) या उबला हुआ है।
7. कार्बोनेटेड, कैफीन युक्त और मादक पेय और पेय पदार्थों के साथ अपने तरल सेवन की या पानी की इच्छा की क्षतिपूर्ति न करें, क्योंकि इसमें मौजूद परिरक्षकों और शर्करा डायरेक्टिक्स के रूप में कार्य करते हैं।
8. सर्दी के दिनों में चर्बी तथा कार्बोहाइड्रेट से युक्त अधिक भोजन की आवश्यकता होती है, जो ठंडक में शरीर के तापमान को संतुलित रख सके। विटामिन, खनिज तथा ऊष्मा की कमी से न्यूट्रिशन की बीमारियां उत्पन्न हो जाती हैं।
9. गर्मियों में अधिक जल, लवण तथा कुछ विटामिन जैसे-बी बिमारियों से शरीर को सुरक्षित रख सकते हैं।
10. गर्मी के दिनों में शाम को हल्का स्नान शरीर की थकान व ताज़गी देता है।





# कृषि विकास में कृषि संस्थानों का योगदान

सूबे सिंह एवं संदीप भाकर

विस्तार शिक्षा निदेशालय

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आरम्भ से भारत की आर्थिक स्थिति का आधार कृषि रहा है क्योंकि पूर्वजों के समय से ही भारत में खेती होती आई है। यहां तक कि भारतीय खेती से अंग्रेजों ने आज़ादी के पहले अच्छी कमाई की थी इसलिए कृषि भारत की आर्थिक स्थिति में एक बहुत बड़ी भूमिका निभा रही है। पिछले काफी सालों में कृषि में बड़े बदलाव हुए हैं। पहले भूमि अधिक थी तो कृषि भी बड़े स्तर पर हो रही थी लेकिन जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ी तो खेती की भूमि भी प्रति किसान कम हो गई। इस स्थिति में कम भूमि में अधिक कृषि उत्पादन लेना एक समस्या बन गई है। कम भूमि में अधिक उत्पादन लेने के लिए ज़रूरत है - बेहतरीन तकनीक वाली मशीनरी, गुणवत्ता वाले उच्च किस्म के बीज, उच्च कोटि के खाद एवं उर्वरक। अधिक फसल उत्पादन लेने में कारगर इन उत्पादों के उत्पादन में एक बहुत ही अहम किरदार कृषि संस्थानों का है। जब भारत में कृषि क्रांति की शुरुआत हुई तो वो भी एक कृषि संस्थान के महान वैज्ञानिक द्वारा ही हुई थी। देश की कृषि को विकसित किया जा सके इसके लिए सन् 1905 में पूसा में भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान का गठन किया गया। देश के हर एक कोने में कृषि विकास को ले जाया जा सके इसके लिए कृषि संस्थानों, अनुसन्धान केंद्रों और कृषि विश्वविद्यालयों का गठन किया गया। इन संस्थानों में कृषि वैज्ञानिकों, कृषि के विद्यार्थियों और किसानों को एक-साथ जोड़ा गया।

देश-भर में इन संस्थानों से सम्बद्ध अलग-अलग राज्यों में 45 कृषि विश्वविद्यालय, 5 डीमड विश्वविद्यालय, 4 केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, 64 राज्यस्तरीय कृषि संस्थान, 6 राष्ट्रीय ब्यूरो, 16 राष्ट्रीय अनुसन्धान केंद्र और 13 डायरेक्टरेट ऑफ रिसर्च मौजूद हैं। यह संस्थान, विश्वविद्यालय और अनुसन्धान केंद्र देशभर में कृषि के हालात सुधारने के लिए कार्य कर रहे हैं। इन कृषि संस्थानों ने किसानों तक संकर (हाइब्रिड) बीज, कृषि मशीनरी और नवीनीकरण को पहुंचाने का कार्य बखूबी किया है। भारत की कृषि क्रांति के पीछे इन संस्थानों ने बहुत अहम भूमिका निभाई है लेकिन अभी भी कृषि संस्थान पूरी तरह से किसानों तक नहीं पहुंच पा रहे हैं। इसके लिए कृषि संस्थानों के प्रसार विभाग व केन्द्र तथा राज्य सरकारों के कृषि एवं किसान कल्याण विभागों को और अधिक मज़बूत करने की ज़रूरत है। ताकि इन कृषि संस्थानों, अनुसन्धान केंद्रों और कृषि विश्वविद्यालयों में चल रहे शोध कार्यों को किसान हितैषी योजनाएं चलाकर किसानों के खेतों तक पहुंचाया जा सके। यही नहीं इसमें सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण विभागों की सक्रिय भागीदारी भी ज़रूरी है ताकि ये सभी कृषि संस्थान और अधिक सक्रियता के साथ काम कर सकें।

कुछ मुख्य अनुसन्धान केंद्र जैसे राष्ट्रीय कपास अनुसन्धान केंद्र, राष्ट्रीय अंगूर अनुसन्धान केंद्र, गन्ना अनुसन्धान केंद्र, केन्द्रीय भैंस अनुसन्धान केंद्र, केन्द्रीय अश्व अनुसन्धान केंद्र, भारतीय सब्जी अनुसन्धान संस्थान आदि काफी सराहनीय कार्य कर रहे हैं। समय-समय पर कृषकों के लिए कृषि वार्ताओं, सम्मेलनों, प्रशिक्षण कार्याशालाओं का आयोजन कर ये सभी संस्थान कृषि को विकास की ओर ले जाने में अपना योगदान दे रहे हैं। हालांकि अभी नई तकनीकों के माध्यम से अधिक उत्पादन लेना व आय में इजाफा करने के लिए काफी प्रयास करने बाकी हैं, यदि किसान भाई परंपरागत खेती व पशुपालन के तरीकों में नवीन तकनीकों के माध्यम से बदलाव लाते हैं तो उनके विकास को कोई नहीं रोक सकता। यदि सभी एक ही स्तर पर काम करें तो भारतीय कृषि में एक और बड़ी क्रांति आ सकती है। कृषि और किसान दोनों के विकास में इन संस्थानों ने बहुत ही अहम भूमिका निभाई है। इन पर अभी थोड़ा और ध्यान देने की आवश्यकता है।

इसी संदर्भ में यदि हम हरियाणा की बात करें तो चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार ने भी अपने अस्तित्व में आने के बाद बहुत बड़ी उपलब्धि हासिल की है, हरित क्रांति लाने में इस विश्वविद्यालय के प्रत्येक ज़िले में कार्यरत 19 कृषि विज्ञान केंद्रों, 4 क्षेत्रीय अनुसन्धान केन्द्रों, कृषि महाविद्यालय कौल (कुरुक्षेत्र) व बावल का भी विशेष योगदान रहा है। हाल ही में (2016) राष्ट्रीय स्तर पर हुई रैंकिंग के मुताबिक चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय ने भारत में छठा स्थान हासिल किया है तथा वर्ष 2017 में भारत देश के कुल 680 कृषि विज्ञान केन्द्रों की सर्वेक्षण के आधार पर की गई ग्रेडिंग में हरियाणा के चार कृषि विज्ञान केंद्रों फतेहाबाद, महेंद्रगढ़, कैथल व कुरुक्षेत्र को “ए” श्रेणी में रखा गया है। इसका श्रेय विश्वविद्यालय के सभी शिक्षक, वैज्ञानिकगण, कृषि विज्ञान केन्द्रों में कार्यरत विस्तार विशेषज्ञों, गैर-शिक्षक कर्मचारियों व प्रान्त के किसानों को जाता है।

हमें विश्वास है कि आगे भी यह विश्वविद्यालय चहुंमुखी विकास के रास्ते पर चलते हुए किसानों की खुशहाली व उनके विकास में और अधिक विकास के लिए तत्पर रहेगा।



एक कदम स्वच्छता की ओर

# किसानों की आय बढ़ाने में कृषि प्रसार तकनीकों की उपयोगिता

प्रदीप कुमार चहल, भरत सिंह एवं कृष्ण यादव

विस्तार शिक्षा निदेशालय

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कृषि प्रसार की तकनीकों का उद्देश्य किसान को कृषि की वैज्ञानिक, नवीनतम व तकनीकी जानकारी का प्रचार व प्रसार करना है। जिन्हें अपनाकर किसान कम श्रम व कम लागत में अधिक कृषि उत्पाद पैदा कर सकते हैं। सबसे पहले किसान का खेती में खर्चा कम करना है, दूसरा वैज्ञानिक विधियाँ अपनाकर श्रम कम करना है व तीसरा उसके खेत की उत्पादकता को बढ़ाना है। इन्हीं तीन बिन्दुओं को ध्यान में रखकर विभिन्न माध्यमों द्वारा कृषि का प्रचार व प्रसार किया जा रहा है। अगर किसान सही समय पर कृषि की नवीनतम जानकारी हासिल कर लेता है और उसको अपना लेता है तो निश्चित रूप से उसकी कृषि आय में वृद्धि संभव है। प्रचार-प्रसार माध्यम आज एक सशक्त रूप ले चुका है। अब वो समय नहीं रहा कि किसान भाई कृषि संबंधी जानकारी के लिए किसी रेडियो या टेलीविजन पर कृषि कार्यक्रम का इंतजार करेंगे, अब तो किसान खेत में खड़ा होकर किसी भी समय कृषि संबंधी जानकारी ले सकता है और अपनी समस्या का निदान कर सकता है। इसके लिए कृषि विश्वविद्यालयों, कृषि से संबंधित सरकारी विभागों व कई प्राइवेट संस्थानों ने अपने टोल फ्री नंबर जारी किए हुए हैं। जहाँ पर कृषि विशेषज्ञ किसानों की समस्याओं का फोन काल के द्वारा समाधान मौके पर ही कर देते हैं।

आज के इस आधुनिक वैश्विक दौर में कृषि भी एक भौगोलिक व्यवसाय बन गया है जिसमें किसान न केवल अपने आसपास से बल्कि पूरी दुनिया से उत्पादन, भंडारण व बाज़ार की जानकारी हासिल करना चाहता है। इस परिदृश्य में किसान के साथ-साथ विस्तार विशेषज्ञ की भूमिका भी पूर्णतया बदल गई है। उसे समय, स्थान एवं जरूरत के अनुसार न केवल परम्परागत कृषि प्रसार की तकनीकों की जानकारी व उनका उपयोग आना चाहिए अपितु प्रचार-प्रसार के आधुनिकतम तकनीकों की जानकारी व उनका किसानों की आय में वृद्धि के लिए समुचित उपयोग भी सुनिश्चित करना होगा। वैश्वीकरण के इस दौर में कृषि में प्रचार-प्रसार की तकनीकों को हम दो समूहों में बांट सकते हैं :

1. **परंपरागत तकनीकें :-** जैसे कि व्यक्तिगत संपर्क, कृषि भ्रमण, कृषि मेले एवं प्रदर्शनी, रेडियो, टेलीविजन, कृषि साहित्य इत्यादि।
2. **आधुनिक साधन :-** जैसे कि इंटरनेट, एस.एम.एस. (शब्द व आवाज़ वाले), यू-ट्यूब, सामाजिक माध्यम (व्हाट्स अप, फेसबुक, ट्वीटर) इत्यादि।
1. **परंपरागत तकनीकें :-**
- अ) **व्यक्तिगत संपर्क व जन संपर्क :-** इसमें किसान स्वयं व समूह में

कृषि विशेषज्ञ से मिलकर अपनी कृषि से संबंधी जानकारी हासिल करके अपनी समस्या का निदान करता है।

ब) **कृषि भ्रमण :-** इस तकनीक के माध्यम से किसानों को आधुनिक वैज्ञानिक तरीकों से तैयार खेतों, खाद्य प्रसंस्करण संस्थानों, आधुनिक मंडियों आदि का भ्रमण करवाया जाता है ताकि वो आधुनिक कृषि तकनीकों का प्रभाव स्वयं देखकर इनको अपना सकते हैं। राज्य कृषि विभाग व उद्यान विभाग में इस तरह की बहुत सी योजनाएं हैं।

स) **कृषि मेले एवं प्रदर्शनी :-** भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली, कृषि विभाग, विभिन्न राज्यों के कृषि विश्वविद्यालय व कृषि विज्ञान केन्द्र, भारतीय उद्योग संघ जैसी संस्थाएं समय-समय पर कृषि मेले व प्रदर्शनियों का आयोजन करती हैं, जिसमें न केवल वैज्ञानिक तरीके से तैयार खेत अपितु आधुनिक कृषि यंत्र, खाद, बीज व कृषि साहित्य किसानों को एक स्थान पर उपलब्ध हो जाता है।

द) **कृषि साहित्य :-** विभिन्न अखबारों में छपने वाले कृषि संबंधी लेख, कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा प्रकाशित रबी व खरीफ फसलों की समग्र सिफारिशें, कृषि पत्रिकाएं जैसे कि चौ. च. सिं. ह. कृ. वि. द्वारा प्रकाशित हरियाणा खेती काफी लंबे समय से हरियाणा ही नहीं अपितु पड़ोसी राज्यों के किसानों को आधुनिक कृषि तकनीकों की जानकारी प्रदान कर रही है। बहुत से अखबार किसानों की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए कृषि विशेषांक प्रकाशित कर रहे हैं।

द) **रेडियो :-** आकाशवाणी आज़ादी के समय से दूरदराज के किसानों तक कृषि तकनीकों को पहुँचाने में एक शक्तिशाली प्रचार-प्रसार का माध्यम बनकर उभरा है। आकाशवाणी से प्रसारित कृषि संबंधी कार्यक्रम किसानों द्वारा बड़े ध्यान व चाव से सुने जाते हैं। जब से किसानों ने मोबाईल फोन का प्रयोग आरंभ किया है रेडियो ने अपनी महत्ता पुनः प्राप्त कर ली है। 1992 में सरकार द्वारा सामुदायिक रेडियो स्टेशन लगाने संबंधी विधेयक लाने के पश्चात् रेडियो ज़मीनी स्तर पर किसानों से जुड़ गया है। हकूवि, हिसार में पिछले आठ सालों से विशेष रूप से किसानों को समर्पित सामुदायिक रेडियो स्टेशन सफलतापूर्वक कार्य कर रहा है।

य) **टेलीविज़न :-** दूरदर्शन एवं निजी चैनल भी कृषि व कृषि से संबंधित विभिन्न चलचित्र, गोष्ठियां व वार्ताएं, लघु फिल्में, किसानों व कृषि वैज्ञानिकों के साक्षात्कार प्रसारित कर रहे हैं।

2. **आधुनिक तकनीकें :-** इंटरनेट के आगमन के साथ पूरी दुनिया की सूचनाएं सांझा करना बहुत ही आसान व सस्ता हो गया है जिससे कृषि क्षेत्र भी अछूता नहीं है। दुनिया के किसी भी हिस्से में की गई शोध या कृषि पद्धति केवल एक क्लिक पर दुनिया के किसी भी किसान व कृषि विशेषज्ञ को उपलब्ध है। इसके लिए सभी कृषि अनुसंधान संस्थानों ने अपनी वेबसाइट स्थापित की हुई है जहाँ से किसान निःशुल्क जानकारी हासिल कर सकते हैं। (शेष पृष्ठ 32 पर)

# केंचुआ : मिट्टी के गुणों के अधिमिश्रण के रूप में

शेफाली एवं आर. के. गुप्ता

प्राणी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मृदा मानव जाति की सबसे बड़ी विरासत सबसे मूल्यवान प्राकृतिक संसाधन है। केंचुआ ऐनेलिडा (Annelida) संघ (Phylum) का सदस्य है। ऐनेलिडा विखंड (Metameric) खंडयुक्त द्विपार्श्व सममिति वाले (bilaterally symmetrical) प्राणी हैं। इनका विकास लगभग 6 अरब साल पहले हुआ है। केंचुआ मिट्टी की परिस्थिति में सुधार ला के भौतिक-रासायनिक और जैविक संपत्ति को बदलकर थोक, घनत्व जैसे मिट्टी के लक्षणों को बढ़ाने में सहायक है।

**केंचुआ का वर्गीकरण :** आवास के आधार पर वर्गीकृत प्रमुख प्रकार के केंचुआ ये हैं :

1. **एपिगेइक केंचुआ :** ग्रीक में एपिगेइक शब्द “पृथ्वी पर” के लिए दिया है। ये केंचुआ भूमिगत स्थायी बोरो नहीं बनाते हैं और ऊपरी मिट्टी की सतह पर उपरोक्त समय व्यतीत करते हैं। उदाहरण के लिए: एसेनिया फेटीडा, लुंब्रिकस रूबेलस।

2. **एनीकिक केंचुआ :** “एनीकिक” शब्द का अर्थ है “धरती से ऊपर”। इस श्रेणी में केंचुआ ज़मीन में लंबवत सुरंग बनाते हैं, लेकिन उनका प्राथमिक खाद्य स्रोत मिट्टी के शीर्ष पर पदार्थ है और उन्हें भूगर्भिक माना जाता है। उदाहरण के लिए: लुंब्रिकस टेरेस्ट्रिस।

3. **एंडोगेइक केंचुआ :** ये केंचुआ उप मिट्टी की सतहों पर फीड करते हैं और मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ और मृत जड़ों पर बड़ी मात्रा में मिट्टी के साथ फीड करते हैं। इसलिए, उन्हें भूगर्भीय माना जाता है। उदाहरणों में एलोलोबोफोरा क्लोरोटिका, अप्पोरेक्तोदेअ कैलिगिनोसा शामिल हैं।

**मिट्टी की गुणवत्ता पर केंचुआ का प्रभाव**

1. **मिट्टी के भौतिक गुणों पर प्रभाव :** मिट्टी की संरचनाओं को प्रभावित करने वाले केंचुआ की दो प्रमुख गतिविधियां हैं: मुंह के माध्यम से मिट्टी खाना और कार्बनिक पदार्थ को तोड़ना और मिश्रण करना, फिर उप-सतह के रूप में आंत सामग्री को ‘वर्मीकास्टिंग्स’ के रूप में बाहर निकालना जो मिट्टी के पोरोसिटी, वायुमंडल और मिट्टी के कुल उत्पादन के लिए उपयोगी है। वर्मीकास्टिंग एन पी के, सूक्ष्म पोषक तत्वों और मूल्यवान मिट्टी के सूक्ष्म जीवों में समृद्ध होते हैं और पास के मिट्टी की तुलना में अधिक पानी-स्थिर योग होते हैं। केंचुआ की मिट्टी खाने की गतिविधि मिट्टी की नमी होल्डिंग क्षमता और मिट्टी से जल निकासी को भी प्रभावित करती है, जिनमें से दोनों मिट्टी की उर्वरता और पौधों की वृद्धि में लाभ करते हैं।

2. **मिट्टी के रासायनिक गुणों पर कीड़े गतिविधि का प्रभाव:** केंचुआ की आंत कार्बनिक पदार्थ को बेहतर कणों में तोड़ने के लिए जानी जाती है, ताकि कार्बनिक पदार्थ के अधिक सतह क्षेत्र को माइक्रोबियल अपघटन में उजागर किया जा सके, जिसके परिणामस्वरूप कार्बनिक पदार्थ का तेज़ी से खनिजकरण हो सकता है। वर्मीकास्टिंग के रासायनिक गुणों में गैर-निहित मिट्टी की तुलना में अधिक फॉस्फोरस, एक्सचेंज करने योग्य पोटेशियम, मैंगनीज़ और कैल्शियम होता है। वर्मीकास्टिंग कार्बनिक कार्बन और नाइट्रोजन (1-3 बार) में समृद्ध है जो स्पष्ट रूप से सूक्ष्मजीवों में मिट्टी कार्बन को ढाल प्रदान करने में केंचुआ की भागीदारी को इंगित करता है, जिसके परिणामस्वरूप मिट्टी का दीर्घकालिक स्थिरीकरण होता है।

3. **मिट्टी के सूक्ष्मजीवों पर केंचुआ का प्रभाव:** केंचुआ का सूक्ष्मजीवों के साथ एक जटिल अंतर संबंध है। वे अपने आंत में नाइट्रोजन फिक्सेशन बैक्टीरिया सहित लाखों उपयोगी सूक्ष्म जीवों के लिए माइक्रोसाइट हैं। बैक्टीरिया और केंचुआ के आंत के बीच सिंबियोटिक संबंध दस्तावेज किया गया है। आंतों के श्लेष्म में मौजूद नाइट्रोजन और फॉस्फोरस जैसे पोषक तत्व कृमि द्वारा उत्सर्जित होते हैं जो माइक्रोबायस पर प्रभाव डालते हैं। जिसके परिणामस्वरूप माइक्रोबियल गुणा और गतिशील मिट्टी उपचार होता है। अधिकतम मिट्टी में पाए जाने वाले सूक्ष्मजीव प्रजातियां केंचुआ की आंतों की तुलना में समान हैं। हालांकि, वर्मीकास्टिंग में माइक्रोबियल समुदाय मिट्टी की तुलना में काफी हद तक ज़्यादा होता है।

4. **पौधों के विकास पर केंचुआ का प्रभाव :** केंचुआ को किसान का मित्र कहा जाता है क्योंकि वे ऊपरी और निचली मिट्टी परतों को मिलाते हैं और ऐसा करने से वे पोषक तत्वों को निचली मिट्टी परत से रूट प्रवेश की परत तक लाते हैं, जहां से पौधे आसानी से पोषक तत्वों को अवशोषित कर सकते हैं। वे मिट्टी की प्रजनन क्षमता को कई तरीकों से सुधारते हैं जिससे कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है। पौधों के विकास पर केंचुआ के मूल्यवान प्रभाव को वर्मीकास्ट में मैक्रो और सूक्ष्म पोषक तत्वों की घटना के साथ-साथ महत्वपूर्ण मात्रा में उनके स्राव के साथ कई कारणों से ज़िम्मेदार ठहराया जा सकता है।

केंचुआ नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम जैसे पोषक तत्वों के स्तर को बढ़ाकर मिट्टी की प्रजनन क्षमता को बढ़ाने के लिए जाना जाता है जो वर्मीकम्पोस्ट उर्वरक के रूप में उपयोग करने के लिए उपयुक्त बनाता है। श्वसन के कारण सीओ के रूप में कार्बन की आंशिक रिलीज़ और सी/एन अनुपात को कम करना वर्मीकम्पोस्टिंग के दौरान देखा गया है। वर्मीकम्पोस्टिंग की प्रक्रिया द्वारा विभिन्न प्रकार के कृषि और घरेलू कचरे को जैविक खाद में बदला जा सकता है। इस प्रकार, वर्मीकम्पोस्टिंग की प्रक्रिया टिकाऊ विकास को प्रोत्साहित करती है और अपशिष्ट को कम करने में भी मदद करती है।





# Biological Management of *Parthenium hysterophorus* (Congress Grass) by *Zygogramma bicolorata*

Bajrang Lal Sharma, B. R. Kamboj<sup>1</sup> and Anil Kumar<sup>2</sup>

Department of Entomology  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

*Parthenium* (Congress Grass) is an obnoxious weed, it causes diseases in animals and human. It also reduces the crop yield. No doubt there is chemical as well as cultural method used to management. But it grows undulated and waste land, where chemical and cultural methods are costly and difficult to manage the *parthenium*. Hence, biological wat plays an important role in management of this weed.

*Zygogramma bicolorata* Pallister (Coleoptera: Chrysomelidae), i.e Mexican beetle, is imported from Mexico to india to manage. After in-depth oratory and field studies, it was found host specific, which can eat only *Parthenium*, hence, it's use was permitted by Government of India. Therefore, Mexican beetles can be multiplied and released anywhere in India for *Parthenium* suppression.

Beetles are off white or light reddish in color with dark brown longitudinal markings on the elytra, measuring about 6 mm in length. The female can lay up to 2500 eggs during its life span. Light yellow eggs are laid generally on ventral side of the leaves and hatch in 4-7 days. There are four instars. The grubs feed for 10-15 days on the leaves and on maturity enter into soil and pupate below upto 15 cm depth. Beetles emerge after 8-12 days. The beetle completes its life-cycle in 22-32 days. Insect completes 5-6 generations under field conditions.

**How Beetles Damage *Parthenium*** : Grubs and adults both feed on *Parthenium* leaves and twigs. Newly hatched grub feeds on soft growing leaves, which on maturity prefer mature leaves and cause defoliation which leads reduction in seed bank and restoration of other vegetation. Mexican beetle does not eat flower directly but it cuts the flower from the pedicle hence, contributes in destruction of flowers also. After continuous attack of beetle for 3-4 years, maximum seed bank is exhausted and other vegetation start to take the niche vacated by the *Parthenium*.

Generally *Z. bicolorata* is active during July to September due to high moisture. Population build-up is also dependant on rains and temperature. After rains in June-July, population build-up starts but long dry spell or scanty rains can reduce the

population drastically.

**Collection and Release of the Beetles** : The initial culture of bioagent *Z. bicolorata* can be obtained from the ICAR-Directorate of Weed Research (DWR) Jabalpur - 482004.

**Collection from Established Sites** : *Zygogramma* can easily collected from the Established sites of India during July to September (rainy season). It is easy to collect the beetle by placing polythene or containers below the resting site of the beetle, a gentle jerk on twig will be enough to dislodge the beetle directly into the polythene or container. Polythene bags or plastic containers, that are perphorated with a needle for providing aeration. Upper twigs of plants without leaves should be placed inside the polythene to avoid the shrinking and to provide resting places for the insect.

**Selection of Release Site** : Initial releases should be avoided in undisturbed areas, where manual and chemical control operations are not used. Also avoid cultivated land and low laying water logging area, because pupation takes place in soil, may disturb the population of *Zygogramma*.

Beetles should always release on small and succulent growth of *Parthenium*, avoiding flowering and large size *Parthenium* plants. If beetles are released at inappropriate site, breeding and population build-up will be slow. Introductory releases in new area may be done involving people's participation. This will help to make aware people about the bio agent.

**Method and Time of Field Release** : *Zygogramma* should be released during rainy season. During that time plenty of succulent *Parthenium* plants are available in nature. However, beetles can be released in dry season also in those sites where sufficient moisture allows the continuous germination of new *Parthenium*. Such sites may provide suitable microclimate for the beetles to multiply.

Adults collected from the multiplication cages or the established sites can be released by just scattering the adults on *Parthenium* plants. It will be ideal to release full-grown grubs too. Since they enter the soil directly, the chances of their moving away can be avoided. When adults emerge they will feed and oviposit in the same area.

**Number of Beetles to be Released** : One adult was found to bring about defoliation of a single *Parthenium* plant in 6-8 weeks. Therefore, if releases are to be carried out at this rate, about 0.4. to 0.7 million insects will be required per hectare. Releases of about 500-1000 beetles can bring about establishment and eventual control. Once plants are eaten up in the release spot, the insects migrate in to adjacent areas.

<sup>1</sup>Sr. Coordinator, KVK Damla, Yamunanagar

<sup>2</sup>DES (Agro forestry), KVK Damla, Yamunanagar

(Cont. page 32)

# Management of Foliar Diseases of Cotton

Rakesh Kumar

Cotton Section, Department of Genetics and Plant Breeding  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Cotton cultivation has witnessed some of the most pronounced changes in cultivars, agronomic protection practices. The cotton disease scenario has changed after introduction of tetraploid cotton and further more with the introduction of *Bt* cotton. The *Bt* gene can keep the insect problem and more so only the lepidopterous insects under check but this genetic manipulation cannot keep the disease problem at bay. The proper diagnosis of disease and timely control measures are necessary for reducing economic losses. The important foliar diseases and their control measures are as under :

## 1. Bacterial Blight

This is one of the most serious diseases of cotton in India. The bacterium, *Xanthomonas axonopodis* pv. *malvacearum* is known to affect all above ground parts of cotton plant throughout the growing season. Thus, this disease has acquired different names according to organ or stage it affects, i.e. seedling blight, angular leaf spot, leaf vein blight, black arm and bacterial boll rot.

## 2. Cotton Leaf Curl Virus Disease (CLCuVD)

This disease is more prevalent in northern India. Three types of symptoms have been recognized. The main symptoms are mosaic, thickening of small veins and development of enation and upward curling of the leaves. There is reduction in the number of bolls. Stunting of the plant is visible accompanying reduction in internodal length. Flowering ceases with poor bearing. The disease is caused by 'Gemini Virus' which is transmitted by whitefly. Prolonged rainy days help in secondary spread of the disease because of increased vector population and excessive vegetative crop growth.

## 3. Myrothecium Leaf Spot (*Myrothecium Roridum*)

This disease is more prevalent in northern part of India. The characteristic symptoms are appearance of circular or oval light brown to tan coloured spots with violet to reddish brown margin. The lesions may coalesce. The center becomes dry and drops off causing big shot holes in leaves. The lesions are formed on bracts and bolls also.

## 4. Anthracnose (*Colletotrichum capsici*)

Lesions appear on cotyledons, primary leaves and seedling stem. Small spots with irregular margins appear on cotyledons. The most destructive phase occurs on seedling stage resulting in poor plant population.

## 5. Alternaria Leaf Spot

The primary symptoms on leaves are small, pale to brown, round or circular spots with cracked center.

## 6. Helminthosporium Leaf Spot (*Helminthosporium spiciferum*)

This disease was originally noticed at Hisar on LL 54 and the incidence varied from 5-10 percent. The disease is characterized by extensive rotting of seed, pre-emergence damping off and defoliation of adult plants.

## 7. New Wilt/Sudden Wilt/Drying off of Plants

This problem is increasing day by day and in the coming years can be a potential threat to cotton cultivation. The disease generally appears at flowering and boll development phase/stage. Wilting plants show dropping of leaves starting from the crown downwards. Root does not show any vascular discoloration or disintegration. Direct and indirect evidences suggest that the disease is not caused by any fungus, bacterium, virus or mycoplasma. It is neither transmitted through grafting nor affected plant debris or soil. Soil factors such as pH, nutrition did not appear to play any role in causation of wilt; however, wilt incidence was more in sandy loam soil as compared to heavy soils. It has been observed that excess production of ethylene may be responsible for this wilting.

## 8. Boll Rot

Boll rot is an important problem in cotton cultivation in humid regions. Severity of the disease depends upon the atmospheric humidity. Since there are several micro-organisms involved in the boll rot complex, its control through any single method is very difficult. Therefore, boll rots can be managed by integrating the use of a mixture of compatible chemicals and cultural practices.

## INTEGRATED DISEASE MANAGEMENT

The objective of disease management is to prevent the devastation caused by a disease. This can be accomplished best through integration of various approaches. These involve the choice of suitable variety, the crop rotation to be followed, cultural practices, proper nutrient and water management. Foliar sprays with a mixture of streptomycin sulphate (6-8 g) plus copper oxychloride (600-800 g) per acre in 200-250 litres of water twice or thrice at 15-20 days interval, starting from the initial appearance of the symptoms, will check the spread and growth of fungal foliar diseases as well as bacterial blight. The first spray should be given 6-8 weeks after sowing or last week of June or before the onset of monsoon. For the control of CLCuVD rouging of CLCuVD affected plants upto vegetative phase, avoidance of okra cultivation in autumn season in hot spot areas of CLCuVD, mixed cropping, use of higher seed rate, creation of buffer zones and monitoring the field weekly. For the control parawilt /sudden wilt spray of cobalt chloride @ 2g/200 litres of water/acre immediately at the onset of disease.



# Dairy Waste Management and Composting

Tanvi, Surbhi<sup>1</sup> and Ankit Kumar<sup>2</sup>

ICAR – National Research Centre on Equines

Waste management is all about how to dispose of all the things you don't want on the farm. Composting is a sustainable waste management practice that converts a large volume of accumulated organic waste into a usable product. When organic wastes are broken down by micro-organisms in a heat-generating process, waste volume is reduced by almost 50%. Many harmful organisms including pathogens and weed seeds are destroyed and a useful, potentially marketable product is produced. Composting transforms waste product into a high quality fertilizer produced using only ingredients from farms. This helps farmers to become independent from external fertilizer inputs. In a dairy operation, the majority of organic wastes will likely be manure combined with spoiled hay and feed and animal bedding. Adding compost to soil increases organic matter content. This, in turn, increases the population and diversity of the beneficial microorganisms and earthworms in the soil and therefore improving many soil characteristics and allows for the slow release of nutrients for crop use in subsequent years.

## How to Compost

Materials for successful composting are many. In order to facilitate composting, a suitable environment must exist. The microorganisms, which degrade organic wastes, use carbon for energy and nitrogen for protein. Organic matter contains carbon and nitrogen in varying amounts and ratios. A Carbon: Nitrogen (C: N) ratio of 25-30:1 is considered ideal for finished compost. Too much carbon (woody materials) or very large particle size slows the process down. When too much N is

present, the compost may become too hot, killing the composting organisms. The C: N ratio will depend on the type of bedding used and the manure: bedding ratio. Table 1 shows C: N ratios of some materials.

When making compost, size of operation determines how the system will be managed. Very small scale composting can be done in a small plastic bucket. Large scale composting requires long rows of waste, turned by tractors using "windrowing" equipment. In between, the piles can be managed with a manure fork or a bucket loader attached to a tractor. Attaining composting temperatures is the key to successful composting. The composting microorganisms i.e. bacteria and fungi, operate best in a warm, damp, well aerated environment. This condition will not likely exist on the very outside of a pile of organic wastes. Thus it is important to:

- Have enough volume of composting material to create a warm interior
- Mix up or turn the pile frequently. Large volumes can be handled in windrows which can be turned using a tractor mounted bucket

Frequency of turning will be a function of materials being composted, water, aeration, weather conditions and microorganisms present. Water is necessary for the microorganisms to live and work, but too much water can create anaerobic conditions which are not conducive to the composting process. Water can be controlled by either watering the pile if too dry (<40% moisture = crumbly) or covering the pile loosely if too rainy. Heat is very important in the killing of weed seeds and other harmful organisms. Heat generation also indicates that the composting process is working. A final temperature of 150-160°F is ideal. Higher temperatures may kill the composting organisms. When the temperature reaches 160°F, turn the pile. When the compost texture is uniform and turning the pile, no longer results in a temperature rise, the compost is considered finished.

Many hazardous materials are not suitable for composting. A small amount of an unsuitable product can destroy a large amount of compost. When grass clippings are added to the compost for increasing N content (decreasing C: N), the lawn should be chemical free, otherwise plants receiving the compost may be seriously damaged. Plants with especially damaging diseases, such as late blight of tomato and potato, which is caused by the fungus *Phytophthora*, should not be composted, because if the disease is not killed in the composting process, the spread of the disease can be devastating. Materials, such as pressure treated lumber contain heavy metals (arsenic) and should not be composted. Other than this meat products, fat containing food products like meat, oil, etc. should be avoided during composting.

**Table 1 : Carbon to nitrogen ratios for selected materials (by weight)**

Materials with high N	C : N Ratio
Grass clippings	12-25:1
Cow manure	20:1
Horse manure	25:1
Poultry litter	13-18:1
Materials with high C	
Leaves	30-80:1
Corn stalks	60:1
Straw	40-100:1
Bark	100-130:1
Paper	150-200:1
Wood chips and sawdust	100-500:1

<sup>1</sup>Department of Veterinary Physiology and Biochemistry, LUVAS, Hisar

<sup>2</sup>Referral Veterinary Diagnostic & Extension Centre, LUVAS, Uchani, Karnal





(From page 29)

Taking this into consideration, a number of release spots can be selected in a particular place or city, which can act as a focal point. More releases mean quicker establishment of the beetle and therefore, better control. So, do as many releases as affordable during first couple of years of introduction and make additional releases in isolated areas in future. This method reduces the time for the beetles to build up the population and help the beetles to disperse fast.

Larvae will hatch in 2-3 days from the eggs and will start to feed on the leaves. After a week or on need, old leaves should be changed with fresh leaves. Small larvae should be transferred gently on the fresh leaves with the help of brush. After 12 to 18 days, larvae will be matured. At 4<sup>th</sup> stage larva will dig the soil and pupate. After 5-8 days, adult in the form of beetle will be emerged from the soil by making a circular hole.

It was observed that after inoculative release of *Zygogramma bicolorata* in an area, colony gets started but it takes about 3-4 years for good control of Parthenium. Even in the sites where beetle has already established, it takes time to make sufficient population build-up, which is capable to suppress the Parthenium. In nature, good control of Parthenium by the beetle is observed by the end of September. It has also been observed that population build-up of beetles in the released area vary place-to-place and year-to-year. Beetle population should transferred to less active site.

For example, if we find good population build-up of grubs at one site, terminal twigs of Parthenium of 30 cm length may be cut and scattered over other Parthenium stand where population of beetle has not build-up yet.



( पृष्ठ 27 का शेष )

जैसे कि [icar.org.in](http://icar.org.in), [hau.ernet.in/hau.ac.in](http://hau.ernet.in/hau.ac.in)

क) एस. एम. एस. :- यह बहुत ही प्रभावी तकनीक है। जैसे कि मोबाईल द्वारा एस. एम. एस. सुविधा का उपयोग करके कृषि से संबंधित सभी विभाग, किसानों के पास उनकी भाषा में कृषि संबंधी जानकारियां समय एवं स्थान के अनुसार निःशुल्क भेजते रहते हैं। उदाहरणतया चौ. च. सिं. ह. कृ. वि. के मौसम विज्ञान विभाग किसानों को न केवल मौसम संबंधी जानकारी अपितु कृषि की समग्र सिफारिशें एस. एम. एस. द्वारा भेजता रहता है। जो किसान लिख व पढ़ नहीं सकते उनके लिए आवाज़ संदेश तकनीक से कृषि संबंधी जानकारियां समय-समय पर कपास अनुभाग द्वारा भेजी जाती हैं।

ख) यू - ट्यूब :- यह एक महत्वपूर्ण सुविधा है जिसमें प्रगतिशील किसान अपनी सफलता की कहानी, कृषि से संबंधी विभिन्न विभाग अपनी आधुनिक तकनीकों की जानकारी व किसान अपने खेत की वास्तविक स्थिति से संबंधित वीडियो बनाकर डाल देते हैं व विश्वस्तर पर इस जानकारी को सांझा करके लाभ उठाते हैं।

ग) व्हाट्स एप :- व्हाट्स एप के द्वारा भी किसान पौधे या पशु की फोटो लेकर विषय विशेषज्ञ के पास भेजकर उसका उपचार करवा सकते हैं।

अगर किसान सही समय पर कृषि की नवीनतम तकनीकों की उचित जानकारी विभिन्न प्रचार-प्रसार माध्यमों द्वारा हासिल करता है और उनको अपनाता है तो निश्चित रूप से उसके खेत के उत्पादन व उत्पादकता में वृद्धि होगी और उसके उत्पादन की लागत में कमी आएगी और आय में वृद्धि होगी।



## आवश्यक सूचना

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार स्थित किसान सेवा केन्द्र में किसानों हेतु सप्ताह में तीन दिन सोमवार, बुधवार एवं शुक्रवार को 10 से 12 बजे तक निःशुल्क फोन सुविधा ( हैल्प लाइन ) फोन नं. 1800-180-3001 पर उपलब्ध है जिसमें वैज्ञानिकों से कृषि-संबंधी परामर्श किया जा सकता है। यदि किसी जगह से यह फोन सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो किसान भाई 01662-232768 पर सशुल्क फोन करके उपर्युक्त दिनों में इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल में भी सोमवार, बुधवार, शुक्रवार 10 से 12 बजे तक फोन नं. 1800-180-4002 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, ऊचानी ( करनाल ) में भी मंगलवार व बृहस्पतिवार 10 से 11 बजे तक फोन नं. 1800-180-3111 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

# हरियाणा

ISSN-0970-6518



# खेती

वर्ष 51

फसल अवशेष प्रबंधन विशेषांक

अंक 09



वार्षिक चंदा 150/-

सितम्बर 2018

आजीवन सदस्यता 1500/-

**प्रकाशन अनुभाग**  
**विस्तार शिक्षा निदेशालय**  
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार



# हरियाणा खेती

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. ( 2 ) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित  
© कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 51 सितम्बर 2018 अंक 09

## इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
फसल अवशेष का मशीनीकृत प्रबंधन ( पराली एक संपत्ति न कि कचरा )	स्वप्निल चौधरी, नरेश एवं विजया रानी	2
हैप्पी सीडर : पराली प्रबंधन की दिशा में एक बहुमूल्य मशीन	भरत पटेल, नरेश एवं मुकेश जैन	5
जलाएं नहीं-खाद बनाएं-फसल अवशेषों से	सूर्यपाल सिंह, हर्षिता सिंह एवं सुनील कुमार	8
कृषि अवशेष प्रबंधन-मुद्दे एवं विकल्प	रणवीर सिंह हुड्डा, सूबेसिंह एवं पूनम रानी	9
धान अवशेष जलाने के नुकसान व उचित प्रबंधन	विनोद कुमार एवं मुरारी लाल	11
फसल अवशेष जलाने के नुकसान	हेमंत सैनी, विजय एवं सूबे सिंह	12
पर्यावरण संरक्षण में: फसल अवशेष प्रबंधन का महत्व	मदन खीचड़ एवं रामनिवास	19
फसल अवशेष न जलायें-भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ाएं व पर्यावरण बचाएं	जय नारायण भाटिया, फतेह सिंह एवं प्रद्युमन भटनागर	21
परासी प्रबंधन के लिए कस्टम हायरिंग सेंटर की महत्ता	अनिल कुमार, विजया रानी एवं मुकेश जैन	21
फसल अवशेष प्रबंधन हेतु कृषि मशीनीकरण प्रचार योजना : एक परिचय	सूबे सिंह, संदीप भाकर एवं सुनील कुमार ढांडा	22
सीसीएसएचएयू द्वारा फसल अवशेष प्रबंधन की दिशा में प्रयास-तेज	संदीप आर्य, बी.आर. कंबोज एवं विजया रानी	23
धान अवशेष जलाने से-मिट्टी और मानव स्वास्थ्य पर-बुरा असर	अनिल कुमार मलिक, पूनम रानी एवं सुनील कुमार	24
धान की पराली का यथास्थान प्रबंधन : खेत के अवशेष-खेत में	पूजा रानी, सुनील कुमार ढांडा एवं विकास कुमार	25
फसल अवशेष प्रबंधन : कृषि यंत्रों का महत्व एवं विस्तार शिक्षा रणनीति	संदीप भाकर, सूबेसिंह एवं सुनील ढांडा	26
कृषि बायोमास का ऊर्जा संवर्धन में उपयोग	बिमलेन्द्र कुमारी	27
Crop Residues Burning: Its Impact and in-Situ Management	Meenakshi Sangwan, V. S. Hooda and Navish Kumar	28
Crop Residue Management in Paddy	N.K. Goyal, M.S. Grewal and B.R. Kamboj	29
Management of Paddy Straw through Composting	Suman Chaudhary, Sneha Goyal and Jagdish Parsad	31

## साई स्तम्भ : अक्टूबर मास के कृषि कार्य

13

तकनीकी सलाहकार	सह-निदेशक ( प्रकाशन )	संपादक
डॉ. आर. एस. हुड्डा	डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी	डॉ. सुषमा आनंद
निदेशक, विस्तार शिक्षा		सह-निदेशक ( हिन्दी )
संकलन		सुनीता सांगवान
डॉ. एम. एस. ग्रेवाल		सम्पादक ( अंग्रेजी )
परामर्शदाता ( मृदा विज्ञान )		प्रकाशन अनुभाग
विस्तार शिक्षा निदेशालय		आवरण एवं सज्जा
		राजेश कुमार

**लेखकों से अनुरोध :** हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। कृपया अपने विभाग का नाम अवश्य लिखें। टाईपिंग के लिए कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं [haryanakhethihau@gmail.com](mailto:haryanakhethihau@gmail.com)



# फसल अवशेष का मशीनीकृत प्रबंधन (पराली एक संपत्ति न कि कचरा)

✍ स्वप्निल चौधरी, नरेश एवं विजया रानी

फार्म मशीनरी एवं पावर इंजीनियरिंग विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फसल अवशेष जलाने से पर्यावरण प्रदूषण की गंभीर समस्या उत्पन्न होती है तथा मिट्टी में मौजूद पोषक तत्व और जीव-जंतु दोनों गंभीर रूप से प्रभावित होते हैं। एक टन धान के अवशेष को जलाने से लगभग 3 किलोग्राम बारीक कण, 60 किलोग्राम कार्बन मोनो ऑक्साइड, 1460 किलोग्राम कार्बन डाई ऑक्साइड, 199 किलोग्राम राख तथा 2 किलोग्राम सल्फर डाई ऑक्साइड निकलता है। इन सभी गैसों के कारण वातावरण की वायु दूषित होती है जिससे मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। एक टन धान के अवशेष में लगभग 5.5 किलोग्राम नाइट्रोजन, 2.3 किलोग्राम फॉस्फोरस, 2.5 किलोग्राम पोटैश, 1.2 किलोग्राम सल्फर तथा 400 किलोग्राम कार्बन होता है जो कि अवशेषों को जलाने से नष्ट हो जाता है। इन पोषक तत्वों के अलावा मिट्टी का तापमान, पी.एच., नमी, मिट्टी में मौजूद फॉस्फोरस तथा जैविक तत्व भी प्रभावित होते हैं।

पराली ही एक मात्र पदार्थ है, जो धान की खेती करने वाले किसानों को भरपूर मात्रा में उपलब्ध होता है। फसल की शुरूआती वृद्धि के समय लगभग 40 प्रतिशत नाइट्रोजन, 30 से 35 प्रतिशत फॉस्फोरस, 80 से 85 प्रतिशत पोटैशियम एवं 40 से 45 प्रतिशत सल्फर मिट्टी में उपस्थित धान के अवशेषों से ही उपलब्ध हो जाते हैं। यह उद्देश्य केवल फसल अवशेषों के यथास्थान प्रबंधन से ही संभव हो सकता है।

धान की कटाई तथा गेहूं की बुवाई के बीच समय बहुत कम होता है जो की लगभग 20-30 दिन ही है। इस समय सीमा के दौरान यदि कोई अवशेष प्रबंधन युक्ति कामयाब हो सकती है तो वह अवशेष को मिट्टी में मिलाना ही है जिससे यह अवशेष समय के साथ मिट्टी में ही अपघटित होकर उर्वरक का काम करेंगे। इस कार्य हेतु अनेक मशीनें बाजार में उपलब्ध हैं जैसे कम्बाइन हार्वेस्टर के साथ लगा हुआ सुपर स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम (Super SMS), हैप्पी सीडर, स्ट्रॉ चॉपर-श्रेडर, मल्चर, श्रब मास्टर, रिवर्सिबल मोल्डबोर्ड प्लाऊ, रोटावेटर, जीरो टिल ड्रिल आदि।

वर्तमान समय में मौजूद कम्बाइन हार्वेस्टर से धान की कटाई के बाद निकलने वाले धान के अवशेष की लम्बाई अधिक होने के कारण ये अवशेष अन्य मशीनों को चलने में बाधा उत्पन्न करते हैं। यदि हम इन अवशेषों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काट कर खेत में ही एक समान रूप से फैला दें तो दूसरी मशीनें आसानी से चलाई जा सकती हैं। इस दृष्टिकोण से उपरोक्त मशीनों को निम्न वर्गों में बांटा गया है :

- ❑ फसल अवशेष को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटने तथा फैलाने वाली मशीनें।

- ❑ फसल अवशेष को मिट्टी में मिलाने वाली मशीनें।
- ❑ फसल अवशेष युक्त खेत में बगैर जुताई किये अगली फसल की बुवाई हेतु मशीनें।

**फसल अवशेष को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटने तथा फैलाने वाली मशीनें**

**1. स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम (SMS) :** सामान्य कम्बाइन फसल के दाने निकालने के पश्चात् अवशेष को एक पंक्ति में सीधे खेत में छोड़ देती है जिसकी लम्बाई

10-12 इंच होती है जो गेहूं की बिजाई में सबसे ज़्यादा बाधा उत्पन्न करते हैं। इनके प्रबंधन के लिए



स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम एक प्रभावी मशीन है। यह कम्बाइन हार्वेस्टर के पीछे लगने वाला एक अटैचमेंट है, जिसमें एक रोटार के ऊपर ब्लेड लगे होते हैं जो धान की पराली को 4-5 इंच छोटे टुकड़ों में काटकर समान रूप से खेत में फैला देता है। इसकी कीमत लगभग 1.25 लाख रुपये है तथा स्वयं चालित कम्बाइन में जोड़कर चलने हेतु 10-12 हॉर्स पावर की आवश्यकता पड़ती है तथा लगभग 2 लीटर प्रति घंटा तेल की खपत बढ़ जाती है। इसे चलाने के उपरांत हैप्पी सीडर या जीरो टिल ड्रिल द्वारा गेहूं की बिजाई की जा सकती है।

**2. स्ट्रॉ चॉपर-श्रेडर :** कम्बाइन हार्वेस्टर से धान की कटाई के उपरांत स्ट्रॉ चॉपर श्रेडर का उपयोग धान के अवशेष को छोटे - छोटे टुकड़ों में

काटने व भूमि पर समान रूप से फैलाने के लिए किया जाता है। ट्रैक्टर की लिफ्ट से जुड़ने वाले (माउंटेड टाइप)



स्ट्रॉ चॉपर -

श्रेडर में रोटरी शाफ्ट के ऊपर दांतेदार ब्लेड लगे होते हैं जो धान के अवशेष की कटाई और उसे टुकड़ों में काटने का काम करते हैं। इस शाफ्ट को गति, गियर और बेल्ट पुली के माध्यम से ट्रैक्टर के पी.टी.ओ. से प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त अवतल हिस्से में लगी दांतेदार ब्लेडों की पंक्ति से अवशेष को काटने में सहायता मिलती है। ट्रैक्टर से खींचा जाने वाला (ट्रैल्ड टाइप) स्ट्रॉ चॉपर-श्रेडर में मुख्यतः इकट्ठा करने, काटने, सिलेंडर में भेजने तथा अवशेष के टुकड़े करने हेतु चार इकाइयां होती हैं। इस यंत्र की कीमत चौड़ाई के अनुसार 1.25-3.25 लाख रुपये होती है तथा इसे

चलने हेतु 45 हॉर्स पावर से अधिक का ट्रैक्टर ज़रूरी है। इस मशीन की क्षेत्र क्षमता लगभग 0.35-0.45 हैक्टेयर प्रति घंटा है तथा इसे चलाने में लगभग 4-5 लीटर प्रति घंटा तेल की खपत होती है।

**3. मल्टचर :** मल्टचर एक ऐसी मशीन है जिसका निर्माण विशेष रूप से फसल अवशेष प्रबंधन हेतु किया गया है। यह घास, झाड़ियों, गन्ने के अवशेष, गेहूँ के भूसे, धान की पराली, मक्का के डंठल आदि जैसे फसल अवशेषों के प्रबंधन के लिए उपयोगी है।



मल्टचर में एक शाफ्ट के ऊपर फ्लेल टाइप ब्लेड लगे होते हैं जो फसल अवशेष/घास को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर खेत में फैला देते हैं, जो जैव मल्टच के रूप में कार्य करते हैं और धीरे-धीरे विघटित होकर मिट्टी की कार्बनिक संरचना में सुधार करते हैं। इसके ब्लेड मिट्टी की सतह को स्पर्श नहीं करते तथा शाफ्ट की गति 1800 आर. पी. एम. होती है। इस मशीन को चलाने हेतु इसकी चौड़ाई के अनुरूप 40-65 हॉर्स पावर का ट्रैक्टर ज़रूरी है। इस मशीन के उपयोग से खरपतवार नियंत्रण, नमी संरक्षण, मिट्टी कटाव की रोकथाम, मिट्टी में पोषक तत्वों का संरक्षण तथा मिट्टी में केंचुओं को बढ़ावा मिलता है। इस यंत्र की कीमत 1.30-1.45 लाख रुपये होती है। इस मशीन की क्षेत्र क्षमता लगभग 0.40-0.55 हैक्टेयर प्रति घंटा है तथा इसे चलाने में लगभग 4-5 लीटर प्रति घंटा तेल की खपत होती है।

**4. श्रब मास्टर :** श्रब मास्टर एक ट्रैक्टर चलित मशीन है जो घास, फसल अवशेष आदि को नियंत्रित करने और काटने के लिए उपयुक्त है।

मुख्य रूप से इसका इस्तेमाल कृषि भूमि, बगीचे इत्यादि पर घास तथा फसल के टूट को काटने के लिए किया जाता



है। घास तथा फसल के टूट की कटाई की ऊंचाई कम या अधिक करने के लिये एक पहिया या ज़मीन पर घिसटने वाली प्लेट का प्रावधान होता है। इस मशीन में काटने हेतु एक रोटार पर दो ब्लेड लगी हुई होती हैं जिसे ट्रैक्टर के पी.टी.ओ द्वारा संचालित किया जाता है। इसे पी.टी.ओ. के 540 और 1000 आर.पी.एम. पर चलाया जाता है। कम्बाइन हार्वेस्टर चलाने के बाद बचे हुए अवशेष व लूज स्ट्रॉ को काटने, टुकड़े करने और मल्टच करने के

लिये इसका उपयोग किया जा सकता है। यह मृदा में नमी बचाने, मृदा में जैव तत्वों को बढ़ाने एवम् जैविक पदार्थों को मिलाने में सहायक है, जिसके परिणामस्वरूप आगामी फसल की पैदावार में सुधार आता है। इस यंत्र की कीमत 25-30 हजार रुपये होती है। इस मशीन की क्षेत्र क्षमता लगभग 0.80-1.00 हैक्टेयर प्रति घंटा है तथा इसे चलाने में लगभग 2.5-3 लीटर प्रति घंटा तेल की खपत होती है।

### फसल अवशेष को मिट्टी में मिलाने वाली मशीनें

**1. रिवर्सिबल मोल्डबोर्ड प्लाऊ :** रिवर्सिबल मोल्डबोर्ड प्लाऊ मुख्य रूप से फसल अवशेष को मिट्टी की मोटी व बड़ी परतों के नीचे दबाने में उपयोग किया

जा सकता है। यह यंत्र मिट्टी में गहराई में प्रवेश करता है और मिट्टी की बड़ी परतों को पलटता है, जिसके



परिणामस्वरूप फसल अवशेष तथा खरपतवार मिट्टी में पूरी तरह दब जाते हैं। इसके प्रभाव से मृदा जैविक पदार्थों में वृद्धि व अपघटन शीघ्र होता है, जो कि आगामी फसल की उत्पादकता, जड़ों के फैलाव व पौधों की वृद्धि में सुधार करता है। मोल्ड बोर्ड प्लाऊ लगभग पूर्ण अवशेष को ज़मीन में दबाकर, मिट्टी को ढीली व खुली अवस्था में छोड़ देता है जिससे ऑक्सीजन और कार्बन डाइ ऑक्साइड के विनिमय को बढ़ावा मिलता है। यह परिस्थिति सूक्ष्म जैविक संख्या को तीव्रता से बढ़ावा देती है। यद्यपि मोल्ड बोर्ड प्लाऊ से जुताई एक धीमी व अधिक ऊर्जा खपत की प्रक्रिया है लेकिन यह देखा गया है कि लगभग 77 प्रतिशत तक अवशेष को ज़मीन में मिलाकर सतह को अवशेष मुक्त बनाता है। इस यंत्र की कीमत 1.25-1.50 लाख रुपये होती है। इस मशीन की क्षेत्र क्षमता लगभग 0.3-0.4 हैक्टेयर प्रति घंटा है तथा इसे चलाने में लगभग 5.5-6.5 लीटर प्रति घंटा तेल की खपत होती है।

**2. रोटावेटर :** गेहूँ की बुवाई के पहले खेत में मौजूद धान के अवशेष को निपटारा करने हेतु अधिकतर किसान आज भी उसे आग लगा देते हैं। धान के बाद गेहूँ रबी

की प्रमुख फसल है। खेत में मौजूद धान के अवशेष गेहूँ के अंकुरण से लेकर आखिरी उत्पादन तक



बाधा पहुंचाते हैं। इस समस्या से निपटने हेतु रोटावेटर एक प्रमुख यंत्र है जो



धान के अवशेष को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर मिट्टी में मिला देता है जो कि कुछ समय में सड़-गल कर जैविक खाद का काम करते हैं। इस यंत्र की विशेषता यह है कि इससे एक बार जुताई करने के बाद ही भूमि बुवाई हेतु तैयार हो जाती है तथा खेत में मौजूद पिछली फसल के अवशेष पूरी तरह मिट्टी में मिल जाते हैं। यह बहुत ताकत के साथ मिट्टी काटता है जिससे मिट्टी भुरभुरी हो जाती है तथा खरपतवार भी पूरी तरह नष्ट हो जाते हैं। इस यंत्र से जुताई करने से 75 प्रतिशत समय की बचत होती है तथा लागत में भी 3-4 हजार रुपये प्रति हैक्टेयर की बचत होती है। इस यंत्र की कीमत 0.9-1 लाख रुपये होती है। इस मशीन की क्षेत्र क्षमता लगभग 0.35-0.45 हैक्टेयर प्रति घंटा है तथा इसे चलाने में लगभग 5.5-6.5 लीटर प्रति घंटा तेल की खपत होती है।

### फसल अवशेष युक्त खेत में बगैर जुताई किये अगली फसल की बुवाई हेतु मशीनें

1. **हैप्पी सीडर** : हैप्पी सीडर एक ऐसी मशीन है जिससे धान की कटाई के बाद खेत में बचे अवशेषों को मलच के रूप में उसी खेत में फैलाकर बगैर जुताई किये आगामी फसल की बुवाई की जा सकती है। इस मशीन में फ्लेल ब्लेड लगे हुए होते हैं जो खेत में मौजूद टूटों को



छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर खेत में समान रूप से फैला देते हैं जिससे मशीन को बुवाई करने के दौरान कोई रूकावट नहीं होती। इस मशीन से बुवाई करने से अवशेष की एक परत ऊपरी सतह पर बन जाती है जो मिट्टी में नमी को बनाये रखती है जिससे संभवतः एक सिंचाई की बचत होती है। धान की लम्बी अवधि वाली बासमती किस्म की फसल लेने के बाद भी गेहूँ की समय पर बुवाई की जा सकती है। मिट्टी गुणवत्ता बनी रहती है। इस यंत्र की कीमत 1.5-1.65 लाख रुपये होती है। इस मशीन की क्षेत्र क्षमता लगभग 0.4-0.45 हैक्टेयर प्रति घंटा है तथा इसे चलाने में लगभग 5.5-6.5 लीटर प्रति घंटा तेल की खपत होती है।

2. **जीरो टिल ड्रिल** : धान-गेहूँ फसल चक्र में उत्पादकता बढ़ाने हेतु जीरो टिलेज तकनीक लोकप्रिय हो रही है। जीरो टिलेज के द्वारा जुताई का कार्य मशीन को एक बार चलाने में ही हो जाता है। जीरो टिल ड्रिल एक ऐसी मशीन है जिसके द्वारा धान की कटाई के बाद बगैर जुताई किये ही अगली फसल की सीधे बुवाई की जा सकती है। यह मशीन हैप्पी सीडर की तरह ही होती है परन्तु इसमें फ्लेल ब्लेड नहीं होती जो कि फाले के सामने आने वाले फसल अवशेष को काटती है। इस मशीन में एक बीज बक्सा, बीज एवं खाद दर सुनिश्चित करने वाली इकाई, बीज वितरक पाइप, फाले, बीज एवं खाद दर नियंत्रक लीवर तथा पावर ट्रांसमिशन



इकाई होती है। इस मशीन से गेहूँ की अगेती बुवाई (अक्टूबर के आखिरी सप्ताह से 15 नवम्बर तक) संभव है जिससे खेत में खरपतवार कम उगते हैं, फसल को सही मात्रा में खाद-पानी मिलता है एवं पछेती बुवाई की तुलना में पैदावार भी अधिक मिलती है। इस यंत्र की कीमत 50-70 हजार रुपये होती है। इस मशीन की क्षेत्र क्षमता लगभग 0.7-1 हैक्टेयर प्रति घंटा है तथा इसे चलाने में लगभग 4.5-5.5 लीटर प्रति घंटा तेल की खपत होती है।

वर्तमान समय में फसल अवशेष जलाना एक अपराध बन गया है तथा इसे रोकने हेतु सरकार किसानों पर जुर्माना भी लगा रही है। इस स्थिति में किसानों के पास एक ही उपाय बचता है कि वे इन अवशेषों को मिट्टी में ही मिला दें जो विघटित होकर पोषक तत्व का काम करें। इस विस्तार लेख में दी गई मशीनों के उपयोग से किसान पराली को जलाने से छुटकारा पा सकते हैं व मिट्टी में उपलब्ध जैव तत्वों व मृदा की नमी को आगामी फसल के बेहतर उत्पादन हेतु संरक्षित कर सकते हैं। इस दिशा में उपरोक्त सभी मशीनें उपयोगी हैं। इन मशीनों को खरीदने पर सरकार एक किसान को 50 प्रतिशत तक तथा किसानों के समूह को 80 प्रतिशत अनुदान दे रही है। अतः समस्त किसान भाइयों को सरकार द्वारा पराली प्रबंधन की दिशा में चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं का लाभ उठाकर अपने पर्यावरण को बचाने हेतु पराली प्रबंधन की युक्ति को अपनाना चाहिए।

पराली का दमन, खुशहाली व अमन।

पराली नहीं जलायेंगे, पर्यावरण बचायेंगे।

पराली न जलाएं, इसे पोषक तत्व बनाएं।





# हैप्पी सीडर : पराली प्रबंधन की दिशा में एक बहुमूल्य मशीन

भरत पटेल, नरेश एवं मुकेश जैन

फार्म मशीनरी एवं पावर इंजीनियरिंग विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मिट्टी की ऊपरी सतह पर ऑर्गेनिक पदार्थ (फसल अवशेष) सिर्फ कृषि अवशेष के प्रबंधन हेतु ही उपयोगी नहीं हैं अपितु अवशेषों को जलाने से रोकने, मिट्टी की ऊपजाउपन बनाए रखने, मिट्टी में नमी की मात्रा बनाये रखने तथा जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में सहायक हैं। विश्व में फसल अवशेषों का वार्षिक अनुमानित उत्पादन 3440 मिलियन टन है, जिसका बड़ा भाग ठीक से प्रबंधित नहीं किया जाता है। अकेले भारत में लगभग 140 मिलियन टन से अधिक फसल अवशेषों को हर साल जलाकर निपटारा किया जाता है। कम्बाइन हार्वेस्टर द्वारा धान की कटाई के बाद गेहूं की बुवाई हेतु अधिकतर किसान धान के अवशेषों को आग लगा देते हैं। फसल अवशेषों को जलाने से वायु की गुणवत्ता में कमी, मनुष्यों में श्वास सम्बंधित बीमारी तथा मिट्टी में मौजूद मित्र कीटों की मृत्यु हो जाती है। इससे लगभग 80 प्रतिशत कार्बन, कार्बन डाई ऑक्साइड तथा कार्बन मोनो ऑक्साइड के रूप में बर्बाद हो जाता है। कार्बन के नुकसान के अलावा 80 प्रतिशत तक नाइट्रोजन, 25 प्रतिशत फास्फोरस और 21 प्रतिशत पोटाश का नुकसान फसल अवशेषों के जलने के दौरान होता है।

कम्बाइन हार्वेस्टर द्वारा कटी गई फसल के अवशेषों के प्रबंधन हेतु हैप्पी सीडर नाम की मशीन उपलब्ध है जिसके द्वारा अवशेष युक्त खेत में सीधे अगली फसल की बुवाई कर सकते हैं। भारत तथा अन्य देशों में कई किसानों ने इस मशीन का प्रयोग फसल अवशेष प्रबंधन हेतु शुरू कर दिया है। हालांकि, इस तकनीक का बड़े पैमाने पर उपयोग न होने के पीछे प्रमुख कारण किसानों को इसके परिचालन तथा रखरखाव का ज्ञान न होना है। इस मशीन के उपयोग के पूर्व खेत की स्थिति के अनुरूप कुछ एडजस्टमेंट ज़रूरी होते हैं। इन एडजस्टमेंट में फसल तथा खेत की स्थिति के अनुरूप बुवाई के दौरान बीज की गहराई, खाद तथा बीज दर आदि आते हैं।

हैप्पी सीडर एक ऐसी मशीन है जिसका उपयोग कर धान के अवशेषों को बगैर जलाये गेहूं की बुवाई की जा सकती है। यह तकनीक पर्यावरण के लिए अनुकूल है जिससे मिट्टी की गुणवत्ता तथा नमी बनी रहती है। गेहूं की बुवाई हेतु धान के अवशेषों को जलाने से मिट्टी की उपजाऊ शक्ति कम होती है तथा इससे निकलने वाला धुआं इंसान, जानवर एवं पर्यावरण के लिए हानिकारक होता है।

## हैप्पी सीडर उपयोग करने के लाभ :

- ❖ धान की कटाई के तुरंत बाद गेहूं की बुवाई कर सकते हैं जिससे धान तथा गेहूं की लम्बी अवधि की किस्में उगाई जा सकती हैं।

- ❖ इस मशीन से बुवाई करने से अवशेष की एक परत ऊपरी सतह पर बन जाती है जो मिट्टी में नमी को बनाये रखती है जिससे संभवतः एक सिंचाई की बचत होती है।
- ❖ धान की लम्बी अवधि वाली बासमती किस्म की फसल लेने के बाद भी गेहूं की समय पर बुवाई की जा सकती है।
- ❖ फसल अवशेष का मिट्टी की ऊपरी सतह पर होने से मिट्टी में नमी तथा तापमान का संरक्षण होता है।
- ❖ मिट्टी में खरपतवार कम उगते हैं तथा गुणवत्ता बनी रहती है।
- ❖ पर्यावरण के लिए अनुकूलित तकनीक है जिससे वायु प्रदूषण को कम किया जा सकता है।

## हैप्पी सीडर के प्रमुख पुर्जें :

**फ्रेम :** इस मशीन का फ्रेम मृदु इस्पात से बना है जिससे मशीन के सभी हिस्से जुड़े होते हैं। इस मशीन के फ्रेम का आकार 198 × 60 सें.मी. है। यह 6.5 × 6.5 × 0.5 सें.मी. के दो मृदु इस्पात एंगल आयरन का बना होता है जिससे मशीन को कठोरता मिलती है।

**फाले :** इस मशीन में मुख्यतः 9 फाले समान दूरी पर लगे होते हैं जो कि U-क्लैप के द्वारा फ्रेम से जुड़े होते हैं। इन U-क्लैप को खोल कर फाले के बीच की दूरी या फाले की संख्या बदल सकते हैं। दो फाले के बीच की दूरी 20-22 सें.मी. होती है। बाज़ार में ट्रैक्टर की शक्ति के अनुरूप 8-12 फाले की मशीन भी उपलब्ध है।

**फलेल :** फलेल ब्लेड फलेल रोटार पर फाले के ठीक आगे लगी होती है। फलेल मृदु इस्पात के पट्टे के बने होते हैं। जब फलेल शाफ्ट घूमती है तो फलेल फाले के सामने मौजूद फसल अवशेषों को काट कर बीज एवं खाद डालने के कार्य को सुगम बनाती है। प्रत्येक फाले के सामने फलेल के 2-जोड़े होते हैं जो रोटार के एक चक्कर घूमने पर फाले को दो बार साफ करते हैं।

**बीज एवं खाद बक्सा :** बीज एवं खाद बक्से का आकर समलम्बाकार होता है जो कि 2 मि.मी. मोटी मृदु इस्पात की चादर का बना होता है। आम तौर पर इस मशीन में खाद का बक्सा सामने तथा बीज का बक्सा पीछे होता है। ये बक्से लगभग 200 सें.मी. लम्बे तथा 24 सें.मी. गहरे होते हैं।

## बीज दर सुनिश्चित करने वाली इकाई :

- ❖ **फ्लूटेड रोलर :** फ्लूटेड रोलर एक शाफ्ट पर जुड़ा होता है। जैसे ही ये शाफ्ट घूमती है फ्लूटेड रोलर भी साथ में घूम जाता है तथा बीज को बीज वितरक पाइप में डाल देता है।
- ❖ **बीज दर नियंत्रक लीवर :** यह लीवर बीज बक्से के ऊपर लगा होता है जिससे फ्लूटेड रोलर के ऊपर बीज की दर को कम या ज़्यादा कर सकते हैं।
- ❖ **बीज वितरक पाइप :** इसका उपयोग बीज को फ्लूटेड रोलर से बूट तक ले जाने में किया जाता है।

❖ **बूट :** बूट से बीज फाले के पीछे ज़मीन में गिरता है।

**खाद दर सुनिश्चित करने वाली इकाई :** खाद दर को सुनिश्चित करने हेतु एक लीवर दिया होता है। खाद फ्लूटेड रोलर के द्वारा एक कप में जाता है जिसके बाद खाद वितरक पाइप के माध्यम से बूट में और अंत में मिट्टी में चला जाता है। इस इकाई के प्रमुख भाग निम्न हैं:

- ❖ खाद दर नियंत्रक लीवर
- ❖ फ्लूटेड लीवर
- ❖ खाद वितरक पाइप
- ❖ बूट

**पहिया :** यह फ्रेम के एक तरफ मशीन के आगे या पीछे लगा होता है। इसका मुख्य कार्य बीज एवं खाद दर सुनिश्चित करने वाली इकाई को घुमाना है। इसका व्यास 70-75 सें.मी. होता है। यह पहिया ज़मीन पर फिसले न इसलिए परिधि खूंटोदार होती है।

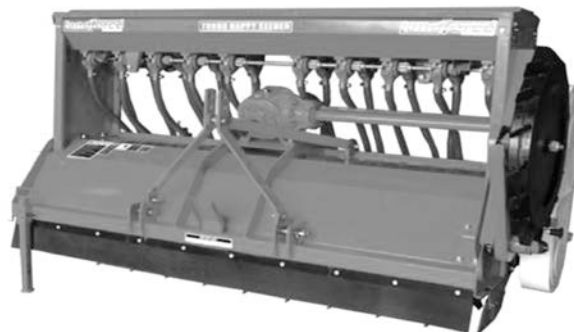
**गहराई नियंत्रक पहिया :** फ्रेम के पिछले भाग में दो गहराई नियंत्रक पहिये लगे होते हैं। इस पहिये का व्यास 30-35 सें.मी. होता है।

**पावर ट्रांसमिशन इकाई :** पीटीओ पवार ट्रांसमिशन इकाई का एक प्रमुख अंग है जो फ्लेल शाफ्ट को घुमाता है। फ्लेल शाफ्ट के घूमने से उसपर लगे हुए फ्लेल घूमते हैं तथा फसल अवशेष को काटते हैं।

**हैप्पी सीडर का परिचालन :**

#### 1. चलाने से पहले :

- ❖ धान की कटाई स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम लगे हुए कम्बाइन हार्वेस्टर से की जानी चाहिए।
- ❖ कटाई के दौरान कम्बाइन हार्वेस्टर की कटर बार की ऊंचाई इस तरह सुनिश्चित करनी चाहिए कि कुल अवशेष का 50 प्रतिशत ज़मीन पर खड़ा रहे और बचा हुआ 50 प्रतिशत बिखर जाये।
- ❖ हैप्पी सीडर को चलाने से पहले कंपनी द्वारा दी गई निर्देश पुस्तिका को अच्छी तरह पढ़ कर समझना चाहिए तथा उसकी संरचना एवं परिचालन की विधि से परिचित होना चाहिए।
- ❖ सुबह के समय खेत में मौजूद अवशेषों में नमी की मात्रा ज्यादा होती है अतः इस मशीन को चलाने से पहले यह सुनिश्चित कर लें कि अवशेष में नमी की मात्रा कम हो।
- ❖ दो कतार के बीच की सही दूरी, बीज दर तथा बुवाई के दौरान बीज की गहराई सुनिश्चित कर लें।
- ❖ बीज साफ होने चाहिए तथा उसमें मिट्टी या कंकड़ नहीं होने चाहिए। बीज के साथ खाद को नहीं मिलाना चाहिए, यह बीज दर सुनिश्चित करने वाली इकाई को खराब कर सकता है।
- ❖ बीज के बक्से में उसकी कुल क्षमता के तीन चौथाई हिस्से तक ही बीज भरना चाहिए।



#### 2. चलने के दौरान :

- ❖ यदि संभव हो तो डबल क्लच ट्रैक्टर से चलना चाहिए। 9 से 12 फाले वाले हैप्पी सीडर को चलाने हेतु 45 से 55 हॉर्स पावर का ट्रैक्टर पर्याप्त है।
- ❖ हैप्पी सीडर को ट्रैक्टर के पीटीओ से जोड़कर इंजन को 1800 से 2000 आर पी एम पर चलना चाहिए तथा खेत में मौजूद अवशेष की मात्रा के अनुरूप ट्रैक्टर को पहले या दूसरे लो गियर पर चलाना चाहिए।
- ❖ गहराई नियंत्रण लीवर की मदद से मशीन को बुवाई हेतु उचित गहराई पर सेट करना चाहिए।
- ❖ बुवाई के समय मशीन को सीधे चलाने हेतु टॉप लिंक को सेट करना चाहिए।
- ❖ मशीन निर्माता द्वारा दी गई पुस्तिका के अनुसार कार्य के दौरान निश्चित अंतराल में गियर बॉक्स में तेल का स्तर जांचना चाहिए।

#### 3. चलने के बाद :

- ❖ मशीन के सभी पुर्जों जैसे बीज बक्सा, खाद बक्सा, बीज दर सुनिश्चित करने वाली इकाई, बीज वितरक पाइप, फाले, अदि को कार्य समाप्ति के पश्चात् अच्छी तरह से साफ करना चाहिए एवं मशीन के सूखने के बाद सभी बेअरिंग, चैन एवं स्प्रोकेट को स्नेहक लगाना चाहिए।
- ❖ मशीन को ठंडे तथा सूखे स्थान पर रखना चाहिए।

### हैप्पी सीडर में आने वाली समस्याएं एवं उनका समाधान :

समस्या	कारण	समाधान
अवशेष का फाले के बीच में फंसना/बुवाई के दौरान अवशेष का मशीन के साथ घिसट कर जाना	रात्रि में ओस गिरने या मिट्टी की ऊपरी सतह पर नमी की मात्रा अधिक होने से अवशेष का अत्यधिक गीला होना ।	सुबह जब नमी की मात्रा कम हो जाये तब मशीन चलाएं ।
	ट्रैक्टर इंजन की गति 1800 से 2000 आर पी एम से कम होना ।	इंजन आरपीएम को बढ़ाएं ।
	परिचालन के दौरान फ्लेल ब्लेड का ज़मीन से टकराना ।	टॉप लिंक की लम्बाई को बढ़ाना चाहिए जिससे फ्लेल ज़मीन पर न टकराएं ।
	मिट्टी में नमी की मात्रा अधिक होना ।	भूमि में नमी की मात्रा को कम होने दें ।
	मशीन के चलने से पहले पीटीओ का जुड़ा न होना ।	ट्रैक्टर पीटीओ को जोड़ कर 1800 से 2000 आरपीएम पर चलाएं और उसके बाद मशीन को दूसरे लो गियर पर चलाएं ।
	फ्लेल ब्लेड का घिस जाना ।	धान के अवशेष वाले खेत में 100 एकड़ क्षेत्र में बुवाई के पश्चात फ्लेल को पलट/बदल दें ।
	बुवाई की गहराई अधिक होना ।	गहराई नियंत्रण लीवर की सहायता से बुवाई की गहराई को ठीक करें ।
	सिंगल क्लच ट्रैक्टर का उपयोग करना ।	डबल क्लच ट्रैक्टर का उपयोग करें ।
किसी एक फाले में अवशेष का फंसना	फ्लेल का एलाइनमेंट ठीक न होना ।	मशीन सप्लायर या मैकेनिक को बुलाकर उसे ठीक करवाएं ।
	फ्लेल ब्लेड का टूट जाना ।	फ्लेल ब्लेड को बदलें ।
	फाले तथा फ्लेल ब्लेड के बीच में अधिक दूरी होना ।	मशीन सप्लायर या मैकेनिक को बुलाकर उसे ठीक करवाएं ।
मशीन में अत्यधिक कम्पन होना	फ्लेल ब्लेड का टूट जाना या ठीक तरह से संतुलन न बनना ।	टूटी हुई फ्लेल ब्लेड को बदलें ।
मशीन द्वारा खड़े फसल अवशेष के टूठ को उखाड़ देना	फ्लेल का ज़मीन को टकराना/फ्लेल तथा ज़मीन के बीच उचित दूरी न होना ।	मशीन को थोड़ा ऊपर उठा कर चलाएं तथा ज़मीन और फ्लेल ब्लेड के बीच में लगभग 2.5 से 3 सें.मी. की दूरी बनाये रखें ।
	भूमि में नमी की मात्रा अधिक होना ।	भूमि में निश्चित नमी हो तब ही मशीन को चलाएं ।
बीज/खाद का ज़मीन तक न पहुंच पाना	बीज/खाद बक्से का खाली होना ।	बीज/खाद बक्से को भरें ।
	बीज वितरक पाइप का चोक हो जाना ।	बीज वितरक पाइप में फंसी मिट्टी को निकालें तथा यदि पाइप मुड़ गया हो तो उसे सीधा करें ।
	चेन/स्प्रॉकेट टूटा हुआ होना ।	टूटे हुए चेन/स्प्रॉकेट को बदलें ।





# जलाएं नहीं-खाद बनाएं – फसल अवशेषों से

सूर्यपाल सिंह, हर्षिता सिंह एवं सुनील कुमार

बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

देश के विभिन्न भागों में मौसम का रवैया बदल रहा है, जो केवल जलवायु के लिहाज से नहीं बल्कि स्वास्थ्य के लिहाज से भी चिंता का कारण है। जिसका ज़िम्मेदार अनियंत्रित मानवीय गतिविधियों को माना जा रहा है। सर्दियों की शुरुआत में हवा में नमी बढ़ जाने के कारण प्रदूषण फैलाने वाले कण, धूल, गैसों इत्यादि हवा की निचली सतह पर ही रह जाती हैं जिसके चलते वातावरण स्वास्थ्य के लिहाज से संवेदनशील बन जाता है। परिणामस्वरूप दमा के अलावा साँस सम्बंधित दूसरी बीमारियों में भी अप्रत्याशित बढ़ोत्तरी हो गयी है। बीते कुछ वर्षों में अक्टूबर के अंत में और नवंबर माह में इस समस्या में बेतहाशा वृद्धि हुई है, जिसकी वजह है अत्यधिक मात्रा में जलाये जाने वाले फसल अवशेष।

भारत में हर वर्ष अंदाज़न 500 मिलियन टन फसल अवशेष पैदा होते हैं। किसानों के लिए ये अवशेष प्राकृतिक संसाधन के साथ-साथ मूल्यवान भी हैं, इसका इस्तेमाल पशुचारा, खाद, ग्रामीण घरों की छत और घरेलू तथा औद्योगिक उपयोग में ईंधन के रूप में हो सकता है बावजूद इसके किसान इन अवशेषों के एक बड़े हिस्से को खेत को साफ करने के लिए उसमें ही जला देते हैं। यह समस्या सिंचित कृषि विशेषकर यंत्रीकृत धान-गेहूं प्रणाली में अधिक गंभीर है। इससे न केवल वायु प्रदूषित हो रही है बल्कि सोना उगलने वाली धरती भी बंजर होने की कगार पर पहुँच गयी है।

धान की पराली व गेहूँ की बाली के अतिरिक्त शेषभाग के साथ-साथ गन्ने की छाल खेतों में सबसे अधिक जलाई जाती है। यह समस्या उन क्षेत्रों में अधिक है जहाँ धान और गेहूँ की कटाई कंबाइन से की जाती है और कटाई के बाद खेत में टूट खड़े रह जाते हैं, जिसे किसान जलाना ज़्यादा सही समझते हैं। आमतौर पर धान, गेहूँ, गन्ना, कपास, मक्का, ज्वार आदि फसलों के अवशेषों को जलाया जाता है।

## क्यों जलाये जाते हैं फसल के अवशेष ?

सर्दियों से किसान इन अवशेषों को कचरा समझ खेत में ही जला देते हैं। किसानों की मानें तो उनके पास कोई और विकल्प नहीं है क्योंकि धान की कटाई के बाद किसानों को गेहूँ की बुवाई जल्दी करनी होती है। हाथ से कटाई के बाद इतने अवशेष नहीं बचते की उन्हें जलाना पड़े पर ऐसा करने में मज़दूरी अधिक लगती है। ऐसे में किसान कंबाइन से कटाई कर लेता है जिसमें टूट बचते हैं जिन्हें उसे जलाना पड़ता है। किसानों की इसे लेकर अवधारणा गलत हो गयी है जिसकी वजह केवल अज्ञानता है। ऐसे में किसानों को इससे हो रहे प्राकृतिक प्रदूषण और धरा की उर्वरा शक्ति को हो रहे हनन की सम्पूर्ण जानकारी देना अनिवार्य हो गया है।

**अवशेष जलाने से नुकसान :** 1 टन फसल अवशेष जलाने पर हमारी प्रकृति में 2 किलो सल्फर डाइऑक्साइड 3 किलो पार्टिकुलेटमैटर 60

किलो कार्बनमोनोऑक्साइड 1460 किलो कार्बन डाइऑक्साइड और 199 किलो राख घुल जाती है जब कि हर वर्ष केवल हरियाणा और पंजाब के किसान सर्दियों में अंदाज़न 35 मिलियन टन फसल अवशेष जला देते हैं। ऐसा नहीं कि इससे बस प्रदूषण होता है इससे भूमि का तापमान इस हद तक बढ़ जाता है कि वह मृदा में मौजूद फसल के मित्र कीटों को मार देता है और 2.5 किलो में खड़ी धान की पराली में 339 किलो नाइट्रोजन, 6 किलो फॉस्फोरस, 140 किलो पोटैशियम और 11 किलो सल्फर होता है, ऐसे में किसान पराली जलाकर न केवल प्रदूषण को बढ़ावा दे रहा है बल्कि भूमि की उर्वरता भी नष्ट कर रहा है।

**हरियाणा की स्थिति :** वर्ष 2016 और 2017 के दौरान फतेहाबाद, सिरसा, करनाल और कैथल जिलों की पहचान सबसे ज़्यादा फसल अवशेष जलाने वाले स्थानों के रूप में की गयी। पिछले वर्ष की तुलना में फसल अवशेष जलाने वाले स्थानों में लगभग 3.4 प्रतिशत की मामूली कमी देखी गयी है। जिला स्तर पर यमुनागर और फरीदाबाद जिलों में फसल अवशेष जलाने वाले क्षेत्र में भारी कमी आयी है। धान की पराली जलाने वाले क्षेत्र 2013 में 247.4 हज़ार हैक्टेयर से घटकर 2014 में 168.9 हज़ार हैक्टेयर और 2015 में 163.0 हज़ार हैक्टेयर हो गया। लेकिन 2016 में यह क्षेत्र 202.3 हज़ार हैक्टेयर और 2017 में 207.7 हज़ार हैक्टेयर हो गया।

**अवशेष जलाने पर जुर्माना :** अवशेषों के जलाने पर सुप्रीम कोर्ट और नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल ने पहले से ही रोक लगा रखी है और राज्य सरकार को भी ऐसे किसानों के खिलाफ सख्त कारवाई करने का आदेश दिया है जो फसल के अवशेष जलाते हैं। छोटे किसान जिनके पास 2 किले से कम ज़मीन है उन पर 2500 रुपये जुर्माना, मध्यमवर्गीय किसान जिन के पास 2 से 5 किले ज़मीन है उन पर 5000 हज़ार रुपये तक का जुर्माना और बड़े किसानों पर जिनके पास 5 किले से अधिक ज़मीन है उन पर 15000 रुपये तक जुर्माना लगाने का आदेश दिया है। ऐसा नहीं है कि नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल ने बस जुर्माना लगाने की बात की हो उन्होंने राज्य सरकार से 2 एकड़ से कम ज़मीन वाले किसानों को मुफ्त मशीनरी उपलब्ध कराने के लिए भी कही है। मेरा मानना है कि कानून के डर से ज़्यादा किसानों की सहभागिता इस कार्य में ज़्यादा महत्वपूर्ण हो सकती है। किसानों को फसल अवशेष से होने वाले नुकसान और भविष्य में पैदा होने वाली ज़मीनी स्तर की समस्याओं से अवगत कराना होगा। कृषि विस्तार विशेषज्ञ इस कार्य में अहम भूमिका निभा सकते हैं।

**निष्कर्ष :** जैसा हम जानते हैं पिछले वर्षों से फसल अवशेष जलाने की घटनाओं में लगातार बढ़ोत्तरी हुई है। जो न केवल हमारे राज्य की वायु और धरा को प्रदूषित कर हमारी राजधानी की हवा में भी ज़हर घोल रहा है। अधिक मशीनीकरण, पशुधन की कमी तथा अवशेषों का कोई वैकल्पिक उपयोग न होने के कारण हमारी फसलों के अवशेष जलाये जा रहे हैं। इससे न केवल ग्लोबल वार्मिंग हो रही है अपितु इसका दुष्प्रभाव हमारी हवा की गुणवत्ता, मिट्टी की सेहत और तो और हमारे स्वास्थ्य पर भी हो रहा है।



# कृषि अवशेष प्रबंधन - मुद्दे एवं विकल्प

रणबीर सिंह हुड्डा<sup>1</sup>, सूबेसिंह एवं पूनम रानी<sup>2</sup>

विस्तार शिक्षा निदेशालय

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा राज्य में उत्पादित धान के कुल क्षेत्रफल के लगभग 70% भाग में धान फसल अवशेष खुले मैदानों में जला दिये जाते हैं। किसानों द्वारा जल्दी बिजाई की तैयारी सुनिश्चित करने व फसल पैदावार के जोखिम से बचने के पहलुओं को प्राथमिकता दी जाती है। फसल अवशेषों के गलन-सड़न की प्रक्रिया के दौरान व्यापक C : N अनुपात नाइट्रोजन को स्थिर करता है। धान के भूसे को जलाने से न केवल कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्वों का नुकसान होता है, बल्कि वातावरण भी प्रदूषित होता है। इस समस्या के समाधान का एकमात्र तरीका धान के फसल अवशेषों को खाद के रूप में प्रयोग करना ही है।

## कृषि अवशेष जलाने के प्रमुख मुद्दे

- अवशेषों को जलाने से कार्बनडाइऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड, मीथेन इत्यादि गैसों पैदा होती हैं जो पर्यावरण प्रदूषण का मुख्य कारण बनती हैं और मानव और पारिस्थितिक तंत्र के स्वास्थ्य के लिए खतरा हैं।
- अवशेषों को जलाने से वायु प्रदूषण होता है जो श्वास की बीमारियों, ब्रोन्काइटिस, अस्थमा और एलर्जी आदि रोगों में योगदान देता है।
- अवशेषों को जलाने के परिणामस्वरूप जैविक पदार्थ (कार्बन) और पोषक तत्वों का नुकसान (विशेष रूप से नाइट्रोजन और सल्फर) होता है, जो मिट्टी में शामिल हो सकते हैं और मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार कर सकते हैं।
- अवशेषों को जलाने से मिट्टी की माइक्रोबियल गतिविधि भी कम हो जाती है जो पोषक तत्वों के साइकलिंग (आदान -प्रदान की गति) को धीमा कर देती है।
- अवशेषों को जलाने से मिट्टी की सतह कठोर हो जाती है जो भारी बारिश के पानी को अवशोषित नहीं करती। अवशेष/पत्तियां बारिश के पानी को मिट्टी में अवशोषित करती हैं और ऊपरी मिट्टी को दूर करने में सहायता करती हैं।
- फसल अवशेष मिट्टी में मिलाने से पोषक तत्व (C, N, P, K, S, Ca, Mg और अन्य सूक्ष्म तत्व) वापस मिट्टी में मिल जाते हैं। इस प्रकार मिट्टी में उर्वरक के पूरक और खेती की लागत को कम करने के लिए मदद करते हैं।

## राज्य में ज़िलावार धान व गेहूं फसल अवशेष जलाने की स्थिति

कृषि विभाग हरियाणा सरकार के आंकड़ों के मुताबिक राज्य में सबसे ज़्यादा धान अवशेष जलाने वाले ज़िले क्रमशः फतेहाबाद, सिरसा, करनाल व कैथल हैं तथा अन्य ज़िलों की स्थिति का संक्षिप्त विवरण तालिका-1 में

<sup>1</sup>निदेशक, विस्तार शिक्षा, चौ.च.सिंह.कृ.वि., हिसार।

<sup>2</sup>शोध छात्रा, मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग, चौ.च.सिंह.कृ.वि., हिसार।

दर्शाया गया है। इन ज़िलों में अवशेष जलाने वाले स्थानों की संख्या का संक्षिप्त विवरण तालिका-2 में दर्शाया गया है।

सुदूर संवेदन तकनीक द्वारा किये गए सर्वेक्षण के अनुसार राज्य के बारह ज़िलों में वर्ष 2017 में गेहूं अवशेष जलाने का कुल क्षेत्रफल 292.8

तालिका 1: हरियाणा राज्य में धान अवशेष जलाने वाले ज़िले (2013 )

क्रम	ज़िले का नाम	धान का क्षेत्रफल 2013-14 (000 है.)*	अवशेष जलाने का क्षेत्रफल 2013-14 (000 है. )	प्रतिशत धान क्षेत्र 2013-14
1.	अम्बाला	79	12.27	15.54
2.	फतेहाबाद	93	32.68	35.14
3.	जौंद	118	4.17	3.54
4.	कैथल	158	41.42	26.21
5.	करनाल	162	54.33	33.54
6.	कुरुक्षेत्र	118	39.82	33.75
7.	पानीपत	62	0.81	1.31
8.	सिरसा	68	19.61	28.84
9.	सोनीपत	100	1.23	1.23
10.	यमुनानगर	69	1.98	2.87
कुल 10 ज़िले		1027	208.34	20.29

\*कृषि विभाग हरियाणा

तालिका 2: राज्य में धान अवशेष जलाने वाले ज़िलावार स्थानों की संख्या (7 अक्टूबर से 30 नवम्बर 2016\* और 2017\* )

क्रम	ज़िले का नाम	2016	2017
संख्या			
1.	अम्बाला	395	462
2.	भिवानी	78	47
3.	फरीदाबाद	14	32
4.	फतेहाबाद	4178	3800
5.	गुरुग्राम	22	03
6.	हिसार	344	204
7.	झज्जर	40	21
8.	जौंद	846	905
9.	कैथल	1346	1332
10.	करनाल	1363	1372
11.	कुरुक्षेत्र	826	988
12.	महेंद्रगढ़	7	6
13.	रोहतक	97	96
14.	पंचकूला	12	18
15.	पानीपत	82	101
16.	पलवल	259	341
17.	रेवाड़ी	22	08
18.	सिरसा	2705	2347
19.	सोनीपत	181	85
20.	यमुनानगर	148	305
कुल 20 ज़िले		12965	12473

\*स्रोत : हरसैक, हिसार (वर्ष 2017 के दौरान कुछ तारीखों पर मौसम की स्थिति के कारण उपग्रह द्वारा अवशेष जलाने वाले स्थानों को नहीं उठाया गया था, जिनसे अनुमानित स्थानों की संख्या का आकलन कम हो सकता है)

(\*000 है.) आंका गया जो कि गेहूं फसल के क्षेत्रफल का 14.6% है। इन बारह जिलों में सबसे अधिक अवशेष जलाने वाले जिले क्रमशः फतेहाबाद (25.4%), करनाल (24.3%), जींद (19.1%) व कैथल (19.5%) हैं। इस स्थिति का संक्षिप्त विवरण तालिका 3 में दर्शाया गया है।

**कृषि अवशेष न जलाने के विकल्प :** फसल के अवशेषों में 25 किलोग्राम नाइट्रोजन/एकड़ डालने से अवशेष जल्दी गल-सड़ जाते हैं जिससे ज़मीन की उर्वरा शक्ति व जीवाणुओं की संख्या बढ़ती है।

तालिका 3: हरियाणा राज्य में गेहूं अवशेष जलाने वाले जिले (2017)

क्रम संख्या	जिले का नाम	गेहूं का क्षेत्रफल 2016-17 (000 है.)*	अवशेष जलाने का क्षेत्रफल 2017 (000 है.)	प्रतिशत गेहूं क्षेत्र (2017)
1	भिवानी	180	9.3	5.2
2	फतेहाबाद	189	48.0	25.4
3	हिसार	226	19.9	8.8
4	झज्जर	107	11.8	11.0
5	जींद	217	41.5	19.1
6	कैथल	173	33.7	19.5
7	करनाल	172	41.8	24.3
8	कुरुक्षेत्र	109	12.5	11.5
9	पानीपत	82	16.8	20.4
10	रोहतक	105	18.6	17.7
11	सिरसा	305	18.4	6.0
12	सोनीपत	145	20.5	14.2
	कुल 12 जिले	2010	292.8	14.6

\* कृषि विभाग हरियाणा

बायोगैस का उत्पादन करने के लिए ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में धान के भूसे को विघटित करके इसका उपयोग खाना पकाने और बिजली पैदा करने के लिए भी किया जा सकता है।

राज्य में अवशेषों का उपयोग बिजली उत्पादन करने के लिए बिजली संयंत्र इकाई किसानों से भूसा खरीद कर किसानों की आय बढ़ाने में सहयोग कर सकती है।

**धान अवशेष खाद (कम्पोस्टिंग) :** एक हजार लीटर पानी में 10 ग्राम एस्परजिलस अमामोरी इनोकुलेंट का घोल बनायें और इसमें एक किलोग्राम यूरिया डालें। इस घोल में धान अवशेष को लगभग तीन मिनट तक डुबो दें तथा अतिरिक्त घोल निकाल दें। इसके पश्चात् 1.25 मीटर चौड़ी, 1.25 मीटर ऊंची और 5 मीटर लंबी धान अवशेष का ढेर बनायें और उसे भिगो दें। इस ढेर को स्ट्रॉ या पॉलिथिन शीट से ढकें। साप्ताहिक अंतराल पर पानी छिड़काव से लगभग 70% नमी बनाए रखें। इस तरह यह खाद 3½ महीने में तैयार हो जाएगी। इस धान अवशेष खाद में 1.2-1.4% नाइट्रोजन, 0.6-0.7% फॉस्फोरस और 1.9-2.2% पोटाश की मात्रा उपलब्ध हो जाती है।

## धान अवशेष जलाने से (प्रति टन) भूमि में पोषक तत्वों की कमी

पोषक तत्व	मात्रा (किलोग्राम)
नाइट्रोजन	5.5 किलो
सल्फर	1.2 किलो
फॉस्फोरस	2.3 किलो
पोटाश	25.0 किलो
ऑर्गेनिक कार्बन	400 किलो

## फसल अवशेष प्रबंधन में चुनौतियां ?

फसल अवशेष की भारी मात्रा के कारण संग्रह और भंडारण की समस्या; दो फसलों की कटाई और बुवाई के बीच समय की कमी; आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रति किसानों की जागरूकता की कमी, प्रौद्योगिकी का प्रचार-प्रसार कम होना, तकनीकी जनशक्ति की क्षमता निर्माण में कमी; प्रभावी मशीनीकरण की लागत का ज़्यादा होना, उपयुक्त मशीनरी की उपलब्धता न होना; फसल अवशेष का खाद के रूप में उपयोग न करने व प्रौद्योगिकी के नवीनीकरण में कमी।

**फसल अवशेष प्रबंधन के विकल्प :** फसल अवशेष का चारा व अन्य उद्देश्यों के लिए प्रयोग; जैविक चारा/गैसीफिकेशन के लिए प्रयोग; मिट्टी और मल्लिचग/कम्पोस्टिंग के लिए प्रयोग; घरेलू/औद्योगिक इकाई के लिए ईंधन के रूप में संतुलित प्रयोग; जीरो-टिल सीड-कम-फैटिलिजरे ड्रिल या हैप्पी सीडर द्वारा सीधी बिजाई।

**फसल अवशेष प्रबंधन में तकनीकी हस्तक्षेप :** खेत में मल्लिच के रूप में फसल अवशेष का प्रयोग; कंपोस्ट/ वर्मी-कम्पोस्ट/एफ बाई एम के लिए फसल अवशेषों का उपयोग; खुम्ब उत्पादन में फसल अवशेष उपयोग; फसल अवशेषों के न्यूनतम उपयोग को सुनिश्चित करने के लिए बेहतर मशीनरी खरीद को प्रोत्साहित करना; कस्टम हायरिंग/कृषि सेवा केंद्रों द्वारा प्रचार-प्रसार एवं इन-सीटू प्रबंधन और अन्य फसल अवशेषों के लिए संयुक्त अनाज काटने वाला यंत्र (combine harvester) में सुधार।

**फसल अवशेष के विविध उपयोग :** पीपीपी मोड में सेलुलोलिक इथेनॉल का उत्पादन विद्युत उत्पादन में उपयोग पेपर/बोर्ड/पैनल और पैकिंग सामग्री के लिए फसल अवशेषों का उपयोग; ईंटों के लिए फसल अवशेषों का संग्रह और चारा की कमी वाले क्षेत्रों में इसका परिवहन।

**क्षमता निर्माण और जागरूकता :** जन और प्रिंट मीडिया के माध्यम से जागरूकता के लिए किसानों के प्रशिक्षण का आयोजन; बेरोज़गार युवाओं के स्वयं सहायता समूह के माध्यम से सब्सिडी प्रदान करके कस्टम हायरिंग केंद्रों की स्थापना व फसल अवशेष प्रबंधन प्रौद्योगिकियों का प्रदर्शन।

**मशीनीकरण का प्रयोग :** फसल अवशेष प्रबंधन में मशीनीकरण का विशेष महत्व है। निम्नलिखित मशीनों द्वारा फसल अवशेषों का प्रबंधन करके अतिरिक्त आय के साथ-साथ खेत की उपजाऊ शक्ति को भी बढ़ाया जा सकता है।

**स्ट्रॉ रीपर :** स्ट्रॉ रीपर एक साथ में तीन कार्य करता है-काटना, श्रैशिंग करना और पुआल साफ करना। इस यंत्र द्वारा कम लागत में गेहूं का भूसा तैयार किया जा सकता है जिससे समय पर दूसरी फसल की बिजाई की जा



सकती है तथा किसानों की आमदनी को बढ़ाया जा सकता है। स्ट्रॉ रीपर अपनाकर न केवल फसल अवशेषों का उचित प्रबंध किया जा सकता है, बल्कि पर्यावरण को नुकसान होने से भी बचाया जा सकता है फसल अवशेषों को जलाने की बजाय इनका मलच के रूप में प्रयोग करके मृदा के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों को सुधारा जा सकता है और इस भूसे को पशु चारे के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है। स्ट्रॉ रीपर की क्षमता 0.4 हैक्टेयर/घंटा है और स्ट्रॉ रिकवरी लगभग 55-60% है।

**धान स्ट्रॉ चॉपर :** धान स्ट्रॉ चॉपर एक उन्नत मशीन है जो पराली को काटकर इसके छोटे-छोटे टुकड़े बनाती है और पूरे खेत में एक समान बिखेर देती है। इस कुटरी हुई पराली को किसान खेत में हल्का पानी लगाकर रोटोवेटर से बड़ी आसानी से मिट्टी में मिला सकते हैं। खेत की मिट्टी की संरचना व नमी की ज़रूरत के हिसाब से इस प्रक्रिया में 2 से 3 हफ्ते लग जाते हैं। इस तरीके से अवशेष प्रबंधन हेतु खेत में धान की कटाई से 15 दिन पहले पानी बंद कर देना चाहिए ताकि चॉपर खुशक पराली को आसानी से काट सके और वही पानी इस पराली को ज़मीन में मिलाने के लिए प्रयोग में लाया जा सके। खेत बत्तर आने पर गेहूँ की बिजाई साधारण ड्रिल या ज़ीरो टिल ड्रिल से करें।

**ज़ीरो टिल सीड कम फर्टिलाइज़र ड्रिल :** इस यन्त्र द्वारा धान के फसल अवशेषों को बिना जलाये खेत में खड़े फानों में गेहूँ की सीधी बिजाई कर सकते हैं। इससे भूमि की उर्वराशक्ति एवं संरचना बनी रहती है। ज़ीरो टिल यन्त्र द्वारा गेहूँ की सीधी बिजाई करने से लगभग 1500 रुपये तक बचत की जा सकती है। इस यन्त्र के प्रयोग से मंडूसी खरपतवार का जमाव 30 से 40 प्रतिशत कम हो जाता है। इस कारण खरपतवारनाशक कम छिड़कने पड़ते हैं तथा पैदावार में वृद्धि होती है।

**हैप्पी सीडर :** हैप्पी सीडर एक उन्नत मशीन है जो पराली के फानों में ही गेहूँ की बिजाई करने में सक्षम है। इस मशीन को इस प्रकार डिज़ाइन किया गया है कि इसमें लगे फ्लेल किस्म के ब्लेड ड्रिल के बुवाई करने वाले फाले के सामने आने वाले फानों/फसल अवशेषों को काटते हैं और पीछे धकेल देते हैं। इस मशीन में हर दो फालों के बीच दबाव बनाने के लिए पहिए लगाए गए हैं जो दोनों फालों के बीच फेंकी गई पराली को दबाते हैं, जिससे पराली ज़मीन में दब जाती है और मलच का काम करती है। फालों वाली जगह खाली रह जाती है जिसमें गेहूँ की एक समान बिजाई होती है। मलच का काम करते हुए यह पराली गेहूँ में 50-70% खरपतवारों को नियंत्रित करती है तथा साथ ही साथ धान के खेत की नमी का उपयोग करते हुए गेहूँ की सीधी बुवाई करके पानी की बचत करती है। हैप्पी सीडर से बुवाई से पहले पराली को खेत में एक समान बिखेरना पड़ता है। इसके लिए कम्बाइन हार्वेस्टर के पीछे स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम (स.म.स.) लगाने की सलाह दी जाती है, जो कम्बाइन के पीछे गिरती पराली को काट कर फेंक देती है जिससे हैप्पी सीडर की कार्य क्षमता बढ़ जाती है। इस मशीन का प्रयोग करते हुए मुख्य रूप से पराली को आग लगाने से होने वाले नुकसान प्रदूषण की रोकथाम एवं मृदा स्वास्थ्य में आ रही गिरावट को रोका जा सकता है।



## धान अवशेष जलाने के नुकसान व उचित प्रबंधन

✍ विनोद कुमार एवं मुरारी लाल

कृषि विज्ञान केन्द्र, भिवानी

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

धान की फसल की कटाई जिन क्षेत्रों में कम्बाइन के द्वारा की जाती है उन क्षेत्रों में खेतों में फसल के अवशेष खेत में खड़े रह जाते हैं तथा वहां के कुछ किसान खेत में फसल के अवशेष को आग लगाकर जला देते हैं। फसल अवशेषों को जलाने से विभिन्न प्रकार की हानियाँ होती हैं :

1. धान के भूसे को जलाने से ज़मीन में उपस्थित जैविक कार्बन का भी नुकसान होता है व फसल उत्पादन में भी गिरावट आती है।
2. धान के भूसे को जलाने से ज़मीन में उपलब्ध नाइट्रोजन, फास्फोरस व सल्फर जैसे पोषक तत्वों की कमी आ जाती है जिसका असर आने वाली फसलों पर भी पड़ता है व पैदावार में कमी आती है।
3. भूसा जलाने से खेत में मित्र कीटों की संख्या पर सीधा असर होता है जिससे आने वाली फसल में बीमारी व कीट की समस्या बढ़ती है व उत्पादकता कम होती है।
4. धान के भूसे को जलाने से खेतों के आस-पास के वृक्षों को नुकसान पहुंचता है जिसका सीधा असर हमारे वातावरण पर पड़ता है।
5. फसल के अवशेषों को जलाने से पर्यावरण प्रदूषित होता है जिससे वातावरण में कार्बन डाईऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड, मीथेन एवं अन्य ज़हरीली गैसों की मात्रा बढ़ जाती है।
6. इन ज़हरीली गैसों के प्रभाव में आने से आसपास रह रहे लोगों में बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं।
7. फसल के अवशेषों को जलाने से तापमान में वृद्धि हो रही है जिसके दूरगामी दुष्प्रभाव होंगे।

### भूसे का प्रबंधन

1. भूसे को जलाने की बजाय बेलर द्वारा इकट्ठा कर के उसका उचित प्रयोग कर सकते हैं क्योंकि धान के भूसे में 0.53% नत्रजन, 0.10% फास्फोरस व 1.10% पोटाश होता है।
2. कृषि अवशेषों का सदुपयोग करके वर्मी तकनीक द्वारा कार्बनिक खाद तैयार करनी चाहिए ताकि कम से कम खर्च में अधिक से अधिक फायदा ले सकें।
3. खेत में फसल अवशेषों को जलाने की बजाय इसका खुम्ब उत्पादन में सदुपयोग कर सकते हैं।
4. किसान यूरिया का छिड़काव नमी युक्त ज़मीन में करके अति शीघ्र भूसे को गला सकते हैं व इसका समुचित प्रबंधन कर सकते हैं।  
अतः किसान भाइयों को फसल अवशेषों को जलाने की बजाय उसका उचित प्रबंधन करना चाहिए जिससे हम वातावरण को प्रदूषित होने से बचा सकें व फसल प्रबंधन से ज़मीन की ताकत को बनाए रख सकें।



# फसल अवशेष जलाने के नुकसान

हेमंत सैनी, विजय<sup>1</sup> एवं सूबे सिंह<sup>2</sup>

कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहाबाद

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आमतौर पर किसान अपने खेतों को साफ-सुथरा देखने के लिए उनमें आग लगा देते हैं, वह यह नहीं जानते कि इस आग जलाने के कितने भयंकर नुकसान हमारे सामने आ रहे हैं। मिट्टी की उर्वरा शक्ति घट रही है, जैविक कार्बन निम्न स्तर पर जा चुका है, पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है, धुएं से सड़क दुर्घटनाएं बढ़ रही हैं, लाभदायक जीवाणु आग की भेंट चढ़ रहे हैं, बूढ़ों व बीमार मनुष्यों को सांस लेने में दिक्कत आ रही है। आग लगाने से भूमि की ऊपरी सतह की भौतिक व रासायनिक संरचना बदल रही है जिससे वह बंजर बन रही है तथा पृथ्वी के तापमान में लगातार वृद्धि हो रही है जिसके गंभीर परिणाम सामने आ रहे हैं। औद्योगीकरण व प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के कारण रसातल में जा रहा हमारा पर्यावरण संतुलन अब आधुनिक कृषि तकनीकों की मार भी झेलने को मजबूर है। खेतों में छिड़के जाने वाले रासायनिक उर्वरक व कीटनाशक, हमारी मृदा, भूमिगत जल व वायु को पहले ही बहुत प्रदूषित कर रहे हैं। इसके साथ-साथ किसानों में तेज़ी से विकसित होती जा रही धान की पराली व गेहूं के फाने जलाने की प्रवृत्ति जागरूक युवाओं, पर्यावरण प्रेमियों व कृषि वैज्ञानिकों के लिए एक गहरी चिंता का विषय बनती जा रही है।

## गेहूं व धान के अवशेषों को जलाने से होने वाले नुकसान

अवशेष जलाने की अधिक समस्या विशेषकर उन क्षेत्रों में अधिक है जहां धान और गेहूं की फसल ली जाती है। कम्बाईन मशीन से फसल की कटाई करने के बाद फानों में आग लगा दी जाती है। इन अवशेषों से घना धूआं निकलता है जो आकाश में बादलनूमा बनकर आसपास के दूसरे राज्यों में भी प्रदूषण का स्तर बढ़ा देता है। अकेले हरियाणा प्रदेश में 90 लाख टन कृषि अवशेष जला दिए जाते हैं जिनमें 65 लाख टन पराली व 25 लाख टन फाने हैं।

गेहूं व धान की पराली के अलावा गन्ने की पत्तियां सबसे अधिक जलाई जाती हैं। अधिकृत रिपोर्ट के मुताबिक देश भर में वार्षिक 50 करोड़ टन से अधिक पराली निकलती है। इसमें 36 करोड़ टन का उपयोग पशुओं के चारे के रूप में होता है जबकि 9.20 करोड़ टन पराली खेतों में ही जला दी जाती है। पराली जलाने वालों में सबसे आगे उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा और पश्चिम बंगाल हैं। उत्तर प्रदेश, पंजाब और हरियाणा में कुल पराली का 1/3 खेतों में ही जला दिया जाता है।

## गेहूं व धान के अवशेषों को जलाने से होने वाले नुकसान :

1. आग लगाने से वातावरण में हानिकारक गैसों व अवशेषों की मात्रा बढ़ जाती है। जिससे मनुष्य, पशु-पक्षियों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

<sup>1</sup>शोध छात्र, बागवानी विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

<sup>2</sup>ज़िला विस्तार विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहाबाद।

## विभिन्न प्रदेशों में धान की पराली की उपलब्धता (करोड़ टन)

राज्य	पराली उत्पादन	ज़रूरत से ज़्यादा	दहन
उत्तर प्रदेश	5.99	1.35	2.19
पंजाब	5.07	2.48	1.96
हरियाणा	2.78	1.12	0.49
प. बंगाल	3.59	0.42	0.49
कुल राष्ट्रीय	50.17	14.08	9.20

2. अवशेषों को जलाने से पशुओं के लिए चारे की उपलब्धता कम हो जाती है। खेत में आग लगाने से 25 से 35 कि.ग्रा. प्रति एकड़ गेहूं व धान की भी हानि होती है।
3. अवशेषों को जलाने से लाभदायक कीड़े एवं सूक्ष्म जीवों की भी मौत हो जाती है जो कि मिट्टी की उपजाऊ शक्ति व रोग प्रतिरोधक क्षमता बनाए रखने के लिए अति आवश्यक है।
4. लाभदायक या मित्र कीटों के मरने के साथ-साथ शत्रु कीटों को फलने-फूलने व उनकी संख्या में वृद्धि होने में सहायता मिलती है।
5. खेत में खड़ी फसल के अवशेषों के साथ-साथ मिट्टी के उपजाऊ तत्व व खनिज पदार्थ जल कर भस्म हो जाते हैं तथा मिट्टी में उपजाऊ शक्ति का ह्रास होता है।
6. कृषि अवशेषों को जलाने से राजमार्गों पर व अन्य जगह धुएं की अधिकता होने से कुछ नहीं दिखाई देता जिससे अनेक दुर्घटनाओं का डर हमेशा बना रहता है।
7. आग लगाने से भूमि की ऊपरी सतह जलकर कठोर हो जाती है तथा इस पर राख भी जम जाती है जिससे इसमें वायु संचार व जलग्रहण की क्षमता घट जाती है।
8. इन सभी गुणवत्ता संबंधी नुकसान के साथ-साथ खेतों में लगाई गई यह आग शुष्क मौसम, तेज़ हवाओं व आसपास खड़ी तैयार फसलों के कारण कई बार विकराल रूप धारण कर लेती है जिससे कई बार अमूल्य संपत्ति, पशु, फसल व मनुष्यों को भी नुकसान उठाना पड़ता है।
9. अवशेष जलाने से हानिकारक गैसों का वायुमंडल में उत्सर्जन होता है। कचरा/अवशेष जलाने से उत्सर्जित होने वाले गैसों का विवरण तालिका 1 में दिया गया है। इनमें सबसे अधिक उत्सर्जन होने वाली गैस कार्बनडाईऑक्साइड है।
10. ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन से ग्लोबल वार्मिंग (भूमण्डलीकरण तापमान) में वृद्धि होती है। इन गैसों में सबसे अधिक उत्सर्जन कार्बन डाईऑक्साइड का होता है। यह अकेली गैस भूमण्डलीय तापमान बढ़ाने में 63% योगदान करती है।

इन गैसों का भूमण्डलीय स्तर वर्षों से लगातार बढ़ रहा है (तालिका 1) जिससे पिछले 100 वर्षों में धरती की सतह पर 0.74 सेल्सियस की बढ़ोत्तरी हुई है। संभावना है कि सन् 2100 तक इस तापमान में 1.8 से 4.0 सेल्सियस की वृद्धि हो जाएगी जो मानवता के लिए खतरनाक हो सकता है।

(शेष पृष्ठ 18 पर)

# अक्टूबर मास के कृषि कार्य



## फसलों में

### धान

धान की पकी फसल की कटाई आरम्भ करें। कटाई से लगभग एक सप्ताह पहले खेत से पानी बाहर निकाल दें। फिर इसे धूप में अच्छी तरह सुखा कर ही बोरी में भरें।

### बाजरा

यदि बाजरे के तुरंत बाद चना या रबी की कोई अन्य फसल बीजनी हो तो पौधों को नीचे से काट कर छोटे-छोटे भरोटे (बण्डल) बना लें और खेत के बाहर एकत्र कर लें। यदि रबी की कोई फसल न लेनी हो तो पकी फसल से बालें काट लें और पौधों को खेत में खड़ा रहने दें ताकि कुछ समय तक इन्हें हरे चारे के रूप में प्रयोग किया जा सके। अगर अरगट का प्रकोप हुआ हो तो प्रभावित फसल को हरे चारे या दाने के लिए प्रयोग न करें।

### मक्की

समय पर बोई गई फसल की कटाई करें। संकर व विजय मक्की के पौधे पकने पर कभी-कभी हरे नजर आते हैं किन्तु जब ऊपर वाला छिलका पीले व भूरे रंग का हो जाये तो समझे कि फसल पक गई है।

### कपास

अमेरिकन कपास की चुनाई 15-20 दिन के अन्तर पर व देसी कपास की चुनाई 8-10 दिन के अन्तर पर करें। प्रथम व अन्तिम चुनाई की कपास अलग एकत्र करें क्योंकि यह घटिया किस्म की होती है। चुनाई ओस खत्म होने के बाद प्रारम्भ करें। अमेरिकन कपास में इस माह के अन्त तक अन्तिम सिंचाई कर दें। टिण्डे व पत्ते खाने वाली सूण्डियों अथवा मिलीबग का प्रकोप हो तो गत माह बताई गई कीटनाशकों का प्रयोग करें व कीट नियंत्रण के अन्य उपाय भी अपनाएं।

लेखक :

- आर. एस. हुड्डा, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (पादप रोग विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह, सह-निदेशक, (पशु पालन - लुवास)
- सुरेन्द्र सिंह, सहायक-निदेशक (बागवानी)
- एम. एस. ग्रेवाल, परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)
- वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
- अशोक चन्द्र यादव, परामर्शदाता (सब्जी विज्ञान)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

### उड़द व मूंग

पकने पर फसल की फौरन कटाई करें।

### तोरिया, सरसों, राया व तारामीरा

तोरिया की फसल की खोदी करें। सरसों व राया की बिजाई इस महीने के तीसरे सप्ताह तक तथा तारामीरा की महीने भर तक कर सकते हैं। देसी सरसों की उन्नत किस्म बी एस एच नं. 1, वाई एस एच 0401, राया की किस्म आर एच 30, वरुणा, लक्ष्मी, आर एच 781, आर एच 819, आर एस 8113, आर एच 9801 व आर बी 9901 (आर बी 50) आर एच 0119, आर एच 0406, आर एच 0749, आर एच 725 व तारामीरा की फसल टी 27 ही बोयें। इन सभी फसलों के लिए 2 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ काफी रहता है। तना गलन रोग से बचाव के लिए कार्बेन्डाजिम नामक दवा (2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज से उपचार करें) सरसों व राया के बीज का उपचार एजोटोबैक्टर टीके के साथ लाभदायक है। इन फसलों को कतारों में 30 सें.मी. की दूरी पर बीजें। बिजाई 'पोरा' विधि से करें। बारानी क्षेत्र के लिए राया आर एच 30, वरुणा (टी 59), आर एच 0119, आर एच 0406, आर एच 781 व आर एच 819 ही बोयें तथा कतार से कतार का फासला 45 सें.मी. रखें। असिंचित तोरिया, सरसों व राया में 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (35 कि.ग्रा. यूरिया) तथा 8 कि.ग्रा. फास्फोरस (50 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ बिजाई से पहले डालें।

सिंचित तोरिया व सरसों में 24 कि.ग्रा. नाइट्रोजन व 8 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति एकड़ डालें तथा सिंचित राया में 32 कि.ग्रा. नाइट्रोजन व 12 कि.ग्रा. फास्फोरस व 8 कि.ग्रा. पोटाश प्रति एकड़ डालें। 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट भी प्रति एकड़ बिजाई से पहले डालें। नाइट्रोजन की आधी मात्रा बिजाई के समय पोरों तथा शेष नाइट्रोजन की आधी मात्रा पहली सिंचाई पर डालें। तिलहनी फसलों (तोरिया, सरसों व राया) में फास्फोरस की सिफारिश की गई मात्रा सिंगल सुपर फास्फेट द्वारा ही डालें क्योंकि इस खाद द्वारा सल्फर की ज़रूरत भी पूरी हो जाती है। अगर फास्फोरस डी. ए. पी. द्वारा दे रहे हैं तो 100 कि.ग्रा. जिप्सम प्रति एकड़ डालें। यदि धौलिया अथवा आरामक्खी का आक्रमण हो तो 200 मि.ली. मैलाथियान (सायथियान) 50 ई.सी. को 200 लीटर पानी में प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें। बालों वाली सूण्डी के लिए 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस. एल. या 200 मि.ली. डाईक्लोर्वास 76 ई.सी. 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

### अरहर

इस समय फसल में फली छेदक सूण्डी काफी हानि करती है। इसके लिए 300 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस. एल. या 600 मि.ली. क्विनलफास 25 ई.सी. को 300 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।



## लूसर्न (रिजका)

इसकी बिजाई इस माह के अन्तिम सप्ताह में करें। लूसर्न टी 9 अच्छी किस्म है। एक एकड़ खेत के लिए 4-5 कि.ग्रा. बीज काफी है। बिजाई कतारों में एक फुट के फासले पर करें। इसके बीज को भी लूसर्न का राइजोबियम का टीका लगाकर बोना चाहिये। लूसर्न बोते समय 22 कि.ग्रा. यूरिया तथा 250 कि.ग्रा. सुपर फास्फेट प्रति एकड़ डालें। इस खाद को ड्रिल द्वारा 10 सें.मी. गहराई तक डालना चाहिए।

## अलसी

इसकी बिजाई इस महीने के पहले पखवाड़े में करें। अलसी की के-2 किस्म बोने की सिफारिश की जाती है। बीज 20 कि.ग्रा. प्रति एकड़ पर्याप्त है। बिजाई कतारों में 23 सें.मी. के फासले पर करें। खाद में 22 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (48 कि.ग्रा. यूरिया) प्रति एकड़ की दर से बिजाई के समय दें।

## गेहूँ

बासमती धान आधारित फसल चक्र वाले क्षेत्रों में गेहूँ की सिंचित उपजाऊ भूमि पर समय पर बिजाई के लिए डब्ल्यू एच 1105, एच डी 2967, डी पी डब्ल्यू 621-50, डी बी डब्ल्यू 88, एच डी 3086, डब्ल्यू एच 283, पी बी डब्ल्यू 550, डब्ल्यू एच 542 (25 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक) पछेती के लिए डब्ल्यू एच 1124, डी बी डब्ल्यू 90, एच डी 3059, डब्ल्यू एच-1021, पी बी डब्ल्यू 373 एवं राज-3765 किस्म चुनें। जबकि बाजरा व कपास फसल चक्र आधारित क्षेत्रों में गेहूँ की समय की बिजाई 15 नवम्बर तक पूर्ण कर लें। बारानी क्षेत्रों में सी 306 डब्ल्यू एच 1080, डब्ल्यू एच 1025 की बिजाई अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक कर लेनी चाहिए। इसी प्रकार कठिया गेहूँ की किस्मों डब्ल्यू एच 896, डब्ल्यू एच 912, डब्ल्यू एच डी 943 की बिजाई का उत्तम समय अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह से नवम्बर का प्रथम सप्ताह है।

बीज व मृदाजनित रोगों से बचाव के लिए वीटावैक्स या बाविस्टिन 2 ग्राम या रैक्सिल-2 डी एस (एक ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से बीज का उपचार करें। बीज जनित करनाल बंट से बचाव के लिए बिजाई से पूर्व बीज का थाइरम (2 ग्राम) या रैक्सिल-2 डी एस (1 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से सूखा उपचार करें। गेहूँ में मिट्टी की जांच के आधार पर ही उर्वरक दें अन्यथा आम सिफारिशों के आधार पर खादों की मात्रा दें। बौनी किस्मों में सिंचित (धान व बाजरा के बाद) 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (65 कि.ग्रा. यूरिया), 24 कि.ग्रा. फास्फोरस (150 कि.ग्रा. एस एस पी) 24 कि.ग्रा. पोटाश (40 कि.ग्रा. एम ओ पी) व 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ बिजाई के समय ड्रिल करें। बाकी नाइट्रोजन पहली सिंचाई पर दें। सिंचित अन्य जिलों में 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (आधी बिजाई+आधी पहली सिंचाई पर), 24 कि.ग्रा. फास्फोरस, 12 कि.ग्रा. पोटाश व 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट ऊपर बताई गई विधि से दें।

गेहूँ की समय पर बिजाई हेतु 40 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ इस्तेमाल करें। पछेती बिजाई हेतु 25 प्रतिशत ज़्यादा बीज इस्तेमाल करें। मोटे दानों

वाली किस्मों का 50 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ डालें। गेहूँ की बिजाई बीज एवं उर्वरक ड्रिल से करनी चाहिए तथा बिजाई से पूर्व इसका केलिब्रेशन कर लेना चाहिए। लंबी बढने वाली सी 306 किस्म की बिजाई 6-7 सें.मी. गहरी करें जबकि अन्य किस्मों को 5-6 सें.मी. गहरा बोएं। समय की बिजाई के लिए दो खुड्डों का फासला 20 सें.मी. रखें।

## जौ

बारानी क्षेत्रों में जौ की बिजाई अक्टूबर माह के दूसरे पखवाड़े में शुरू कर दें। सिंचित क्षेत्रों में समय की बिजाई 15 से 30 नवम्बर के बीच कर लें। जौ की उन्नत किस्मों बी एच 75, बी एच 393, बी एच 902, बी एच 885 व बी एच 946 का प्रयोग करें। माल्ट जौ की किस्में विशेषतः बी एच 393 की बुवाई 15 से 30 नवम्बर के बीच पूरी कर लें। बी एच 885 किस्म की बिजाई 10 से 25 नवम्बर के बीच कर लें। दिसम्बर माह में बोई गई फसल पछेती मानी जाती है। पछेती बोई गई फसल में माल्ट की पैदावार व गुणवत्ता कम हो जाती है। बी एच 885 किस्म में खूड़ से खूड़ की दूरी 18 सें.मी. होनी चाहिए व खाद की मात्रा इस किस्म के लिए 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (35 कि.ग्रा. यूरिया) 16 कि.ग्रा. फास्फोरस (100 कि.ग्रा. एस एस पी) व 8 कि.ग्रा. पोटाश (13 कि.ग्रा. एम ओ पी) प्रति एकड़ डालें। दीमक से बचाव के लिए 600 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. या फारमोथियान 25 ई.सी. को 12.5 लीटर पानी में मिलाकर एक किंवटल बीज का बुवाई से एक दिन पहले उपचार करें। बिजाई से पहले बीज का उपचार वीटावैक्स या बाविस्टिन 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज से सूखा उपचार करें।

## जई

अधिक कटाइयों के लिए जई की उन्नत किस्म एच एफ ओ 114, ओ एस 6, ओ एस 7 व ओ एस 8 की बिजाई इस माह के मध्य से शुरू करें। 40 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ पर्याप्त है। बिजाई कतारों में 25 सें.मी. के फासले पर करें। सोलह किलोग्राम प्रति एकड़ नाइट्रोजन (35 कि.ग्रा. यूरिया) बिजाई पर पोरे तथा इतना ही पहले पानी पर दें।

## चना

देसी चना की बिजाई मध्य अक्टूबर तक तथा काबुली चने की बिजाई इस माह के आखिरी सप्ताह में करें। बारानी इलाकों में उन्नत किस्म हरियाणा चना नं. 1 बोयें। जहां सिंचाई का साधन हो या वर्षा अच्छी होती हो वहां हरियाणा चना नं.-1, काबुली चना की हरियाणा काबुली नं. 1 किस्मों बोयें। नम क्षेत्रों में सी 235 व हरियाणा चना नं. 3 किस्मों की बिजाई करें। हरियाणा चना नं. 5 की हरियाणा राज्य के सारे क्षेत्रों में बिजाई की जा सकती है। हरियाणा चना नं. 3 का 30-32 कि.ग्रा. व अन्य देसी किस्मों का 15-18 कि.ग्रा. तथा काबुली चने का लगभग 36 कि.ग्रा. व हरियाणा चना नं. 1 का 20 से 22 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ काफी है। बिजाई से पहले बीज का क्रमशः कीटनाशक व फफूंदनाशक टीके से उपचार करें। दीमक से बचाने के लिए 850 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस.एल. या 1500 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. को पानी में मिलाकर कुल 2 लीटर घोल बनायें। ऐसे 2 लीटर घोल से 1 किंवटल बीज को बीजने के एक दिन पूर्व

पक्के फर्श या पॉलिथीन की शीट पर फैलाकर उपचारित करें। इसके बाद फफूँदनाशक बाविस्टिन (2.5 ग्राम) या जैविक फफूँदनाशक ट्राईकोडरमा विरिडी (बायोडरमा) 4 ग्राम, वीटावैक्स 1 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से करें। बीजोपचार के लिए 4 ग्राम बायोडरमा और 1 ग्राम वीटावैक्स को 5 मिलीलीटर पानी में लेप बनाकर प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचार करें। बिजाई 'पोरा' विधि से 2 खूड़ों का फासला 30 सें.मी. रखकर इस प्रकार करें कि बीज 10 सें.मी. गहरा पड़े। इससे कम गहराई पर पड़ने पर उखेड़ा रोग लगने का भय रहता है। जहां खेत में आल की कमी हो तो 2 खूड़ों का फासला 45 सें.मी. रख कर बिजाई के समय 12 कि.ग्रा. यूरिया व 100 कि.ग्रा. सुपर फास्फेट प्रति एकड़ ड़िल करें। यदि डी. ए. पी. मिल जाये तो 34 कि.ग्रा. डी. ए. पी. ही प्रति एकड़ बिजाई के समय बीज के नीचे ड़िल करें। चने के बीज को राइजोबियम का टीका अवश्य लगायें और बहुत रेतीली ज़मीन में 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ के हिसाब से डालें।

अगेती बिजाई कभी न करें। दस अक्तूबर से पहले बिजाई करने से उखेड़ा ज़्यादा आता है। बिजाई से पूर्व प्रति किलोग्राम बीज में 2.5 ग्राम बाविस्टिन मिलाकर बोयें। झुलसा रोग से बचाव के लिए सी 235 या हरियाणा चना नं. 3 किस्म ही बोयें। जिस खेत में अंगमारी का आक्रमण रहा हो वहां चने की फसल न लें।

### बरसीम

यदि पिछले महीने बिजाई न कर सके हों तो इस महीने के पहले सप्ताह तक बिजाई पूरी कर लें। जिस ज़मीन में पहली बार बरसीम की बिजाई करनी हो उसमें बीज का टीकाकरण अति आवश्यक है। समय पर खेत में पानी लगाते रहें। 22 कि.ग्रा. यूरिया और 175 कि.ग्रा. सुपर फास्फेट प्रति एकड़ बिजाई से पहले छिट्टे द्वारा डालें। रेतीली तथा कमज़ोर ज़मीन में बिजाई से पहले 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ प्रयोग करें। बरसीम और जई की मिश्रित फसल में 16 कि.ग्रा. अतिरिक्त नाइट्रोजन प्रति एकड़ के हिसाब से बिजाई के समय देनी चाहिए।

### गन्ना

शरदकालीन गन्ने की बिजाई का समय सितम्बर के आखिर से अक्तूबर के पहले सप्ताह तक है। शरदकालीन किस्में सी ओ एच 56, सी ओ एच 92, सी ओ जे 64 (अगेती) व सी ओ एच 99, सी ओ एच 128, सी ओ एच 119, सी ओ 7717, सी ओ एस 8436 हैं। बिजाई के समय 45 कि.ग्रा. यूरिया तथा 125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट व 35 कि. ग्रा. पोटाश (एम ओ पी) प्रति एकड़ बीज के नीचे पोंरें।



## सब्जियों में

### टमाटर

खेत से अधपके टमाटरों को तोड़कर बाज़ार में भेजने का प्रबन्ध करें। समय पर सिंचाई करें तथा विषाणु एवं फफूँद रोग से रक्षा के लिए

400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. तथा 400 ग्राम इण्डोफिल एम-45 को मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर, दो सप्ताह के अन्तर पर, नियमित रूप से छिड़काव करें। इस घोल के लिए लगभग 250 लीटर पानी की आवश्यकता होगी। फल छेदक कीट के नियन्त्रण के लिए 60 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 500 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें।

### बैंगन

बैंगन के कच्चे फलों को समय पर तोड़कर बाज़ार में भेजें। समय पर फसल की सिंचाई करें। रस चूसने वाले कीड़ों के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। फल छेदक सूण्डी की रोकथाम के लिए 75 मि.ली. स्पाइनोसेड (ट्रेसर 45 एस.सी.) का 15 दिन के अन्तर पर बारी-बारी से प्रति एकड़ छिड़काव करें। तना छेदक कीड़े से ग्रस्त तनों व फलों को नियमित रूप से निकालते रहें तथा उन्हें नष्ट कर दें।

### मिर्च

हरी मिर्च को खेत से तोड़कर बाज़ार में बेचने के लिए भेजें। उचित समय पर फसल की सिंचाई करते रहें। नाइट्रोजन खाद की मात्रा खेत में दी जा चुकी होगी। रस चूसने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

अक्तूबर-नवम्बर माह में मिर्च की बसन्त ऋतु की फसल के लिए नर्सरी में बिजाई की जाती है। उन्नत किस्में एन पी 46-ए. या पूसा ज्वाला या पन्त सी-1 या हिसार शक्ति या हिसार विजय का बीज प्रयोग करें। एक एकड़ खेत के लिए लगभग 400 ग्राम बीज की आवश्यकता होगी। बिजाई से पहले बीज को 2.5 ग्राम एमीसान प्रति किलोग्राम या थाइरम नामक दवा से उपचारित कर लें।

### भिण्डी

भिण्डी के नर्म फलों को तोड़कर बाज़ार बेचने के लिए भेजें। आवश्यकता होने पर खेत में सिंचाई करें। नाइट्रोजन खाद दें। रस चूसने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. तथा छेदक कीड़ों की रोकथाम के लिए 400 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. या 75-80 मि.ली. स्पाइनोसेड 45 एस.सी. को प्रति एकड़ 250 लीटर पानी में मिलाकर 15 दिन के अंतर पर छिड़काव करें।

### कद्दू जाति की सब्जियां

कद्दू जाति की सब्जियों के फलों की तुड़ाई करें तथा उन्हें बाज़ार बेचने के लिए भेजें। फसल में नाइट्रोजन खाद दें। आवश्यकता होने पर फसल की सिंचाई करें। फल छेदक मक्खी की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 500 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. को 1 कि.ग्रा. 250 ग्राम गुड़ और 250 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ खेत की बेलों पर छिड़काव करें। बेलों को चिट्टा रोग (पाऊडरी मिल्ड्यू) से बचाने के लिए 8-10 कि.ग्रा. बारीक गंधक के धूँड़े का भुरकाव करें। धूँड़ा सुबह या

शाम के समय करें। डाऊनी मिल्ड्यू से बचाव हेतु बेलों पर इण्डोफिल एम-45 या ब्लाइटॉक्स 50 के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

### शकरकन्दी व अरबी

शकरकन्दी की फसल की देखभाल करें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। अरबी की खुदाई का प्रबन्ध करें तथा बाज़ार बेचने के लिए भेजें। तैयार होने के लिए अरबी की फसल 130-160 दिन और शकरकन्दी की फसल 130-180 दिन ले लेती है।

### फूलगोभी

फूलगोभी की अगेती किस्म पूसा कातकी की फसल की देखभाल करें। फसल के तैयार फूलों को काटकर बाज़ार भेजें। पछेती किस्म (स्नोबॉल-16) की बिजाई इस माह नर्सरी में की जा सकती है। बोने से पहले बीज को एमीसान या कैप्टान या थाइरम 2.5 ग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें। अंकुरण के 6-7 दिनों बाद 0.2 प्रतिशत कैप्टान के घोल से (आर्द्र गलन बीमारी लगने पर) नर्सरी की सिंचाई करें। हानिकारक कीटों, चेपा, कूबड़ वाले कीड़े, सूण्डी और डायमण्ड बैक मॉथ से रक्षा करने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ खेत में छिड़काव करें। बन्दगोभी, गाँठगोभी, मूली और शलगम में यदि कीटों का आक्रमण हो तो यही कीटनाशक प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें। डायमण्ड बैक मॉथ की सूण्डी के लिए 300 मि.ली. डायजिनान 20 ई.सी. (बसुडीन/ बैजानीन) या 60 मि.ली. डाइक्लोर्वास (न्यूवान/वैपोना) 76 ई.सी. या 400 ग्राम बी.टी. (बेसिलस थूरिजिएंसिस/बायोआस्प) का भी प्रति एकड़ छिड़काव कर सकते हैं।

### बन्दगोभी और गाँठगोभी

बन्दगोभी तथा गाँठगोभी की बिजाई नर्सरी में इस मास में भी करें। बोने से पहले बीज को एमीसान या कैप्टान नामक दवा से उपचारित करें। 2.5 ग्राम फफूंदनाशक दवा प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजों का उपचार करें।

### पालक

पालक फसल की देखभाल करें तथा तैयार पत्तों को काटकर गुच्छों में बांधकर बाज़ार में भेजें। पालक की नई बिजाई भी की जा सकती है।

### मूली, शलगम व गाजर

मूली, शलगम व गाजर की तैयार जड़ों को उखाड़कर तथा उन्हें धोकर बाज़ार के लिए भेजें। इस माह विलायती किस्मों के बीजों की बिजाई तैयार खेत में करें। गाजर की किस्म नैटीज, मूली की किस्म जापानी हवाई तथा सफेद आइसिकल तथा शलगम की पर्पल टॉप हवाईट ग्लोब प्रयोग में लाएं। मूली की फसल पर कीट नियंत्रण के लिए 250-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में प्रति एकड़ छिड़कें।

### मटर

मटर की अगेती फसल की देखभाल करते रहें। फल लगते ही सिंचाई करें। खरपतवार निकालते रहें। अक्तूबर माह में मटर की बोनावले

किस्म की बिजाई तैयार खेत में करें। एक एकड़ के लिए लगभग 20-30 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। कतारों की दूरी 30-40 सें.मी. रखें। खेत की तैयारी के समय 8 टन गोबर की खाद डालकर मिट्टी में मिला दें। बिजाई के समय 12 कि.ग्रा. यूरिया तथा 125 कि.ग्रा. सिंगल सुपरफास्फेट भूमि में बीज के नीचे पोरें। मटर के चुरड़ा (थ्रिप) कीट के नियंत्रण के लिए 60 मि.ली. सायपरमेथ्रिन 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें।

जड़गलन, सूखा रोग तथा अन्य बीज या मिट्टी जनित रोगों से बचाव के लिए 2 ग्राम बाविस्टिन या कैप्टान प्रति किलोग्राम बीज की दर से बिजाई से पहले बीजोपचार करें।

### लहसुन

लहसुन की बिजाई यदि पिछले माह नहीं की है तो अभी कर लें और एक माह बाद 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (35 कि.ग्रा. यूरिया खाद) से प्रति एकड़ की दर से टॉप ड्रेसिंग करें तथा सिंचाई करें।

### प्याज़ (रबी)

प्याज़ के बीजों की नर्सरी में इस माह बिजाई करें। एक एकड़ खेत के लिए पौध तैयार करने के लिए लगभग 4-5 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होगी। अधिक उपज के लिए उन्नत किस्म हिसार-2 तथा पूसा रैड का ही प्रयोग करें। पौधशाला में पौध को रोगमुक्त रखना आवश्यक है।

### आलू

आलू की उन्नत किस्म कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी बादशाह, कुफरी जवाहर, कुफरी सतलुज या कुफरी सिन्दूरी, कुफरी पुठकर व कुफरी बहार का प्रयोग करें। एक एकड़ खेत के लिए लगभग 12 किंवल बीज लगता है। उचित होगा कि किसान स्वयं के खेत में प्रयोग के लिए बीज 'सीड टैक्नीक' से तैयार करें। बिजाई के समय 16-20 टन सड़ी गोबर खाद 24 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (54 कि.ग्रा. यूरिया), 20 कि.ग्रा. फास्फोरस (120 कि.ग्रा. सिंगल सुपरफास्फेट) आवश्यकतानुसार और 20-40 कि.ग्रा. पोटाश (36-64 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रति एकड़ की दर से दें। आलू के बीजों को लगभग 10-15 सें.मी. की गहराई पर बीजें। बिजाई के समय बीजों का अंकुरित होना आवश्यक है। अच्छा होगा कि पूरे आलू ही बीजें। स्वस्थ रोगरहित प्रमाणित बीज ही प्रयोग करें। आलू बीजने से पहले बीज को 5-10 मिनट तक 0.25 प्रतिशत इण्डोफिल एम-45 के घोल में रखकर उपचारित करें। बिजाई के बाद आवश्यकता होने पर खेत में सिंचाई करें। सिंचाई करते समय ध्यान रखें कि पानी आधी डोलों से ऊपर न जाये।

आलू फसल की खरपतवारों से रक्षा करने के लिए बिजाई के लगभग 10-12 दिनों बाद जब 10 प्रतिशत बीज अंकुरित हो चुके हों तो नाइट्राफिन नामक खरपतवारनाशक दवा के 2.5-3 लीटर घोल का प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें या स्टोम्प 30 ई.सी. 1.5 लीटर प्रति एकड़ की दर से बिजाई के 2-3 दिन बाद छिड़काव करें।

हरा तेला और सफेद मक्खी की रोकथाम हेतु 300 मि.ली. डाईमैथोएट 30 ई.सी. या आक्सीडेमेटान मिथाईल 25 ई.सी. को 200-300 लीटर पानी में मिलाकर 10 दिन के अंतर पर प्रति एकड़ छिड़काव करें।



## प्याज़ (खरीफ)

फसल की खरपतवारों से रक्षा करें और नियमित सिंचाई करें। यदि पौधों के पास की मिट्टी वर्षा से बह गई हो तो पौधों पर मिट्टी चढ़ाएं। नाइट्रोजन खाद से दो बार टॉप ड्रेसिंग करने की आवश्यकता होती है—प्रथम बार पौधरोपण/बिजाई के लगभग एक माह बाद तथा दोबारा इसके एक माह बाद करें। हर बार 16 किलोग्राम नाइट्रोजन (35 कि.ग्रा. यूरिया) प्रति एकड़ की दर से प्रयोग करें तथा उसके पश्चात् सिंचाई करें। फसल की हानिकारक कीट, श्रिप से रक्षा के लिए 300 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ फसल पर आवश्यकतानुसार छिड़काव करें। पर्पल ब्लाच नामक बीमारी के लक्षण दिखते ही फसल पर 400-500 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड या इण्डोफिल एम-45 को 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ फसल में प्रयोग करें तथा आवश्यकता होने पर 10-15 दिनों बाद दोहराएं। कीटनाशक व फफूंदनाशक घोल में सेल्वेट-99 दस ग्राम या टाईट्रो 50 मि.ली. प्रति 100 लीटर घोल में मिलाना आवश्यक है।

## अन्य सब्जियां

ग्वार व लोबिया की फलियों को तोड़ कर बाज़ार में बेचने के लिए भेजें। यदि सलाद की पौध तैयार हो तो रोपाई करें। मेथी व धनिया की बिजाई भी इस माह में की जा सकती है। एक एकड़ फसल के लिए 8-10 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है।



## फलों में

वर्षा का पानी अगर भरा हुआ है तो उसे निकालना, वायुरोधक और फलदार पौधों की फालतू टहनियां काटना, नए लगाए पौधों की देखभाल करना, घास-फूस निकालना, पोषक तत्व देना, खाद का इंतज़ाम करना, निराई-गुड़ाई, रबी की बीच में बोई जाने वाली फसलों को लगाना और फल बेचने का प्रबंध करना आदि क्रियाएं बाग-बगीचे में करें।

नये पौधे इस महीने में भी लगाए जा सकते हैं। अगर अच्छे पौधे मिलते हों तो अब भी लगाए जा सकते हैं। लीची के पौधे इस माह में लगाने चाहिए। अगर जुलाई-सितम्बर माह में लगाए पौधे मर गए हैं तो खाली स्थान पर उसी किस्म के पौधे लगाएं। अगर मूलवृत्त पर कोई फुटाव निकलती हैं तो उन्हें हर 15 दिन के बाद काट दें। नए पौधे के फुटाव पर कीट एवं बीमारी का ध्यान रखें व सही समय पर उपचार करें। जट्टी-खट्टी या क्लीयोपेटरा पर संगतरा व माल्टा की आँख चढ़ाएं। जनवरी-फरवरी में ग्राफ्टिंग के लिए आंवला व अमरूद के देसी पौधे अभी से तैयार करें।

## नींबू जाति के पौधे

पत्तों व फलों पर अगर पोषक तत्वों की कमी दिखाई दे तो ज़िंक सल्फेट 5 कि.ग्रा. और चूना 2.5 कि.ग्रा. को 1000 लीटर पानी में मिलाकर

छिड़काव करें। इसी प्रकार नाइट्रोजन की कमी को पूरा करने के लिए 1-2 कि.ग्रा. यूरिया को 100 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। जस्ते की कमी से पत्ते की नसों के दोनों ओर की जगह सफेद सी हो जाती है तो इसके लिए 500 मि.ग्रा. प्लाण्टामाइसिन और 2 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का प्रति लीटर पानी की दर से अक्तूबर, दिसम्बर, फरवरी व जुलाई में छिड़काव करें। माल्टे के अच्छी तरह पके हुए फल तोड़ लें और बेचने का प्रबंध करें। कीड़ों की रोकथाम के लिए यदि सितम्बर में बताई गई कीटनाशक दवा का छिड़काव न किया गया हो तो इस माह के शुरू में छिड़काव करें।

नींबू वर्गीय फलों को कैंकर रोग से बचाने के लिए कॉपर आक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत का छिड़काव करें। पहला छिड़काव अक्तूबर में, दूसरा छिड़काव दिसम्बर में व तीसरा छिड़काव फरवरी में करें। अगर अमरूद व जामुन में छाल खाने वाले कीड़ों का प्रकोप हो तो 10 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस.एल. या मिथाइल पैराथियान 50 ई.सी. को 10 लीटर पानी में मिलाकर तने के छेद में भरकर चिकनी मिट्टी से बन्द करें।

## बेर

नाइट्रोजन वाली खाद की बाकी बची आधी मात्रा भी (500 ग्राम-600 ग्रा. यूरिया) प्रति पेड़ के हिसाब से इस महीने के आखिर या नवम्बर में डालकर सिंचाई करें।

पाऊडरी मिल्ड्यू रोग से बचाव के लिए 200 लीटर पानी में 400 ग्राम सल्फैक्स या 200 मि.ली. कैराथेन का घोल बनाकर भली-भांति छिड़काव करें। छाल खाने वाले कीड़ों हेतु नींबू जाति के पौधों में बताया गया उपचार करें।

## आम

निराई-गुड़ाई करें जिससे कि मिलीबग के लारवे सूर्य की रोशनी से खत्म हो जाएं।

## लीची

लीची के पौधे इस माह में लगाए जा सकते हैं लेकिन यह ध्यान रखें कि पुराने पौधों के नीचे से थोड़ी मिट्टी लेकर नए पौधों के गड्ढों में अवश्य डालें।



## पशुओं में

### गाय-भैंस

सर्दी का मौसम आने वाला है। अतः अपने पशुओं को सर्दी से बचाने के लिए सभी प्रकार के प्रबंध कर लें। पशुओं के दाने को सूखे स्थान पर रखें तथा नमी से बचाएं। पशुओं को हवादार आवास में रखें जहां उन्हें नमी वाले मौसम में सांस लेने में तकलीफ न हो व श्वसन संबंधी रोग न हो।

इस मौसम में भैंस गर्मी में आती है और जब वह बोलती है, उसकी योनि पारदर्शी या साफ शीशे जैसा तार देती है और वह बार-बार पेशाब करती है। भैंस में गर्मी के लक्षण यदि सायं के समय देखे गये हों तो उसे

अगली सुबह ही नये दूध कराना चाहिये और यदि लक्षण सुबह देखे गये हों तो सायं को कराना चाहिए। गर्मी में आने के 8-10 घण्टे के बाद मिलाई कराने से गर्भ ठहरने की सम्भावना बढ़ती है। नये दूध कराने के लिए अच्छा मुरा नस्ल का झोटा देखें या निकट के कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र पर ले जायें। यदि भैंस गर्मी में न आती हो तो पशु चिकित्सक से उसकी जांच करवायें। नियमित समय पर भैंस को गर्मी में लाने के लिए उसे सन्तुलित आहार खिलायें और अच्छी किस्म के 50 ग्राम खनिज मिश्रण प्रतिदिन दें व पेट के कीड़े मारने की दवा दें। गर्भाधारण की संभावना बढ़ाने हेतु पशुपालक कृत्रिम गर्भाधान से लेकर दस दिन तक कढ़ी पत्ता (250-300 ग्राम) प्रतिदिन दे सकते हैं।

### भेड़ और बकरियां

इस मौसम में पशुओं के पेट में कीड़े हो जाते हैं। भेड़ों के पेट के अन्दर के परजीवियों को मारने के लिए उनको नियमित रूप से कृमिनाशक दवा पशु चिकित्सक की सलाह से पिलायें। पशुओं को हवादार आवास में रखें, बन्द घर में न रखें, नहीं तो पशुओं की दम घुटने से मृत्यु हो सकती है। अच्छी और अधिक ऊन लेने के लिए आप अपनी देसी भेड़ों को उत्तम नस्ल के मेंडों से मिलवायें ताकि अच्छी नस्ल की भेड़ें उत्पन्न हो सकें। उत्तम नस्ल के मेंडों के लिए इस विश्वविद्यालय के पशु विज्ञान महाविद्यालय से सम्पर्क करें।

### कुक्कुट

हर महीने मुर्गियों को कृमिनाशक दवा पशु चिकित्सक की सलाह पर पिलायें। यदि यह दवा न पिलाई जाए तो उनके पेट में कीड़े हो जाते हैं जो उनके विकास को रोकते हैं और साथ ही अण्डों का उत्पादन घट जाता है और उनमें बीमारी लगने की सम्भावना बढ़ जाती है। छोटे चूजों की खुराक में बाईफ्रान या एम्प्रोलीयम आदि दवा का प्रयोग करें ताकि उन्हें खूनी दस्त की बीमारी न लगे। मुर्गियों को सन्तुलित आहार दें जिसमें प्रोटीन, एनर्जी और दूसरे तत्वों की पूरी मात्रा हो। यदि सन्तुलित आहार देने से अण्डों का उत्पादन कम हो जाये तो आहार की जाँच प्रयोगशाला से करवायें। बिछावन को दिन में दो बार पलटें ताकि वह सूखता रहे। मुर्गी दाने की अफलाटोक्सिन नामक विषैले पदार्थ के लिए जाँच करवायें। इस मौसम में ब्रायलर मुर्गियों में मुख्यतः कोक्सी व खराब फीड की शिकायत रहती है।

### गृह विज्ञान

- सफाई का खास ध्यान रखें। यदि वर्षा का पानी घर के आसपास इकट्ठा हो गया हो तो मच्छरों की वृद्धि रोकने के लिए उसमें मिट्टी का तेल छिड़कें।
- अनाज तथा दालों में समय-समय पर सुरसुरी देखते रहें, अगर आक्रमण हो तो बचाव के उपाय करें।
- रसोई की वस्तुएं अगर घर में अधिक मात्रा में हैं तो उन्हें कभी-कभी धूप लगवायें जिससे कीटाणु उत्पन्न नहीं होते।
- चमड़ी को फटने से बचाने के लिए गर्म पानी से धोकर सरसों का तेल या मलाई या वैसलीन का प्रयोग करें।

(पृष्ठ 12 का शेष)

### तालिका 1 : एक टन (10 क्विंटल) कचरा जलने से गैसों का उत्सर्जन

उत्सर्जित गैस	गैस की मात्रा (किलोग्राम)
कार्बनडाइऑक्साइड	15.1
नाइट्रस ऑक्साइड	3.83
मिथेन	2.70
सल्फर डाइऑक्साइड	0.40
कार्बन मोनो ऑक्साइड	92.0
धूल के कण	3.0

### तालिका 2 : पृथ्वी पर ग्रीन हाऊस गैसों के स्तर में बढ़ोत्तरी

गैस	औद्योगिक क्रांति (सन् 1750) से पूर्व	वर्तमान स्तर	सन् 1750 के बाद की वृद्धि
कार्बनडाइऑक्साइड (पी.पी.एम)	280	384	104
मिथेन (पी.पी.बी.)	700	1745	1045
नाइट्रस ऑक्साइड (पी.पी.बी.)	270	314	44
सी.एफ.सी-12 (पी.पी.टी.)	-	533	533

11. भूमण्डलीय तापमान के बढ़ने का दूसरा खतरा यह है कि इससे पहाड़ों के ऊपर की बर्फ पिघलेगी जिस कारण समुद्र के पानी का स्तर भी ऊपर आएगा। पिछले 110 वर्षों (1901-2010) में समुद्र तल का स्तर 0.19 मीटर बढ़ा है और संभावना है कि इस शताब्दी के अन्त तक यह जल स्तर 28-43 सें.मी. बढ़ जाएगा। ऐसा होने से भारत के तटीय क्षेत्र, बांग्लादेश, जापान आदि देशों का कुछ हिस्सा जलमग्न हो सकता है।
12. एक आंकलन में पाया गया है कि गेहूं में फूल व दाना बनने के समय यदि 1.0 डिग्री सैल्सियस तापमान में वृद्धि होती है तो देश में गेहूं की पैदावार 4.5 मिलियन टन तक कम हो सकती है।
13. विश्व स्तर पर आंकलन किया गया है कि जलवायु परिवर्तन से फसलों की पैदावार में 16% तक गिरावट आ सकती है। इस गिरावट का स्तर एशिया में 19%, अफ्रीका में 28%, अविकसित देशों में 26% एवं विकसित देशों में 6% तक हो सकता है।
14. पछले 134 वर्षों में जो 10 वर्ष सबसे गर्म रहे हैं उनमें से 9 वर्ष 21वीं शताब्दी के पहले 14 वर्षों में से हैं। यह जानकारी दर्शाती है कि हम कितनी खतरनाक दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। कृषि अवशेषों का जलाना वर्तमान की इस अवस्था को और भी जोखिम भरा बना सकता है। अतः फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन समय की आवश्यकता है।

# पर्यावरण संरक्षण में : फसल अवशेष प्रबन्धन का महत्व

✍ मदन खीचड़ एवं रामनिवास

कृषि मौसम विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

पर्यावरण प्रकृति का वह आवरण है जिसके अंदर हम घिरे हुए हैं। सृष्टि के निर्माण में प्रकृति की एक अहम् भूमिका मानी जाती है। प्रकृति का निर्माण विभिन्न आयामों पानी, पेड़-पौधे, जीवजन्तु, धरती, सूर्य आदि सब से मिलकर होता है। इन्हीं आयामों में आपसी सामंजस्य एवं संतुलन से ही पृथ्वी पर जीवन है। जब प्राकृतिक चक्र बिना किसी गड़बड़ी के चलता रहे तब स्वस्थ पर्यावरण या वातावरण कहा जाता है। स्वस्थ वातावरण प्रकृति के संतुलन को बनाए रखता है और साथ ही साथ पृथ्वी पर रहने वाले सभी जीवों को बढ़ने, पोषित और विकसित होने में सहयोग करता है। प्रकृति के संतुलन में किसी भी प्रकार की बाधा वातावरण को बुरी तरह प्रभावित करता है जिसका असर मानव जीवन एवं कृषि पर दिखाई देने लग जाता है। प्रकृति एवं मानव का घनिष्ठ सम्बन्ध है लेकिन मनुष्य अपने स्वार्थवश प्रकृति का अनुचित दोहन करने लग जाता है। आधुनिक समय में बढ़ते औद्योगीकरण और तीव्र उपभोग की जीवनशैली के चलते पर्यावरण का दिनोंदिन ह्रास होता जा रहा है जिसमें पर्यावरण प्रदूषण की मुख्य भूमिका मानी जाती है। यह पर्यावरण प्रदूषण आज विश्व की ज्वलंत समस्या जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारक है। इस पर्यावरण प्रदूषण में विशेष तौर पर औद्योगीकरण तथा वाहनों की बढ़ती संख्या का गहरा सम्बन्ध है जो ग्रीन हाउस गैसों जैसे कार्बनडाईऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरोकार्बन, नाइट्रोजनऑक्साइड, सल्फरडाईऑक्साइड आदि हानिकारक गैसों की मात्रा में लगातार बढ़ोत्तरी कर रहे हैं। परन्तु अब देश को अन्न खिलाने वाला किसान भी इस पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ाने में अपना योगदान दे रहा है जो पूरे भारत वर्ष के लिए चिंता का विषय बना हुआ है। पहले किसान भाई सिर्फ फसल उत्पादन में अंधाधुंध रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के प्रयोग करने से नाइट्रस आक्साइड एवं अन्य ज़हरीली गैसों का तथा धान के खेतों से वायुमंडल में मिथेन उत्सर्जन अधिक होता था परन्तु अब खेत को जल्दी खाली कर अगली फसल की बिजाई हेतु तैयार करने के लिए धान, गेहूं व गन्ने के फसल अवशेषों अर्थात् पराली को खेत में ही जला देते हैं जिससे कार्बनडाईऑक्साइड गैस का उत्सर्जन बहुत अधिक होने से वातावरण में एक धुंए के बादल रूपी धुंध बन जाती है जिससे सांस लेने में भी आम आदमी को मुश्किल होती है। पराली जलाने से भूमि की उर्वरा शक्ति क्षीण हो रही है क्योंकि धरती में उपस्थित पोषक तत्व की हानि के साथ-साथ छोटे-छोटे असंख्य जीवाणु तथा मित्र कीट नष्ट हो जाते हैं जो भूमि को उपजाऊ बनाने में सहायक होते हैं। फसल अवशेषों को जलाने से मृदा में उपस्थित मुख्य पोषक तत्व

नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश का भी नुकसान होता है। फसल अवशेषों को जलाने के कारण मृदा ताप में बढ़ोत्तरी होने से मृदा सतह सूख हो जाती है जिससे भूमि में जलधारण क्षमता में कमी आ जाती है तथा भूमि में हो रही वायु-संचरण पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। फसलों के कटाई व कढ़ाई के बाद अवशेष जलाने पर कई बार आसपास के अन्य खेतों में खड़ी फसलों में भी आग लगने की संभावना बनी रहती है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (2018) के अनुसार विश्वभर में 42 लाख मौतें प्रतिवर्ष सिर्फ वायुप्रदूषण से हो रही हैं। इन ग्रीनहाउस गैसों से ही विभिन्न बीमारियाँ जैसे अस्थमा, दमा, हृदयघात और कैंसर का प्रकोप दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। आज वातावरण प्रदूषण से इन उपरोक्त ग्रीनहाउस गैसों के बढ़ते प्रभाव के कारण वैश्विक तापमान बढ़ने की समस्या पूरे विश्व के सामने एक भयानक रूप से खड़ी है जिसे जलवायु परिवर्तन एवं ग्लोबल वार्मिंग कहा जाता है जिससे मौसम में लगातार बदलाव आ रहे हैं जैसे गर्मियों में अधिक गर्मी तथा सर्दियों में अधिक कड़ाके की सर्दी का पड़ना, कहीं ओले, कहीं बाढ़, कहीं सूखा, बेमौसमी बारिश, सुनामी, आंधी, तूफान आदि। समुद्र का तापमान भी ज़्यादा हो जाने के कारण वर्षा अनियमित हो रही है। मानसून में भी लगातार बदलाव देखने को मिल रहा है। जलवायु परिवर्तन के कारण ही भारत जैसे अत्यधिक जनसंख्या वाले देश पर ज़्यादा दूरगामी प्रभाव पड़ने की सम्भावना बनी हुई है। हिमालय के हिमखण्डों एवं ग्लेशियरों के पिघलने और उपलब्ध जल के ज़्यादा वाष्पोत्सर्जन के कारण भविष्य में उत्तर भारत में पानी की भारी कमी होने की संभावना है उसी प्रकार दक्षिणी प्रान्तों के अधिकतर क्षेत्रों में तो पहले से ही सिंचाई जल की उपलब्धता कम है और ग्लोबलवार्मिंग के कारण इसके और कम हो जाने की सम्भावना है। आई.पी.सी.सी की 5वीं रिपोर्ट (2014) के अनुसार 21वीं सदी के अंत तक वायुमंडल का तापमान 1.1 से 4.8 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ने की संभावना व्यक्त की गई है, जिसके फलस्वरूप भविष्य में वैश्विक जलवायु चक्र अनियमित हो जाएगा तथा मौसम की चरम घटनाओं में बढ़ोत्तरी होने की संभावना जताई गई और लगता है ऐसा होना शुरू भी हो गया है, चाहे ग्लेशियर के पिघलने की बात हो या बादलों के फटने की घटना हो या समुद्री जलस्तर के बढ़ने की घटनाएँ लगातार बढ़ती जा रही हैं।

वायु मंडल के प्रदूषण के साथ-साथ उद्योगों से निकलने वाले विभिन्न रसायनों के नदी जलाशयों के पानी में मिलने से यह भी प्रदूषित हो रहा है जिसका उपयोग कृषि सिंचाई एवं अन्य कार्यों में प्रयोग करने से कृषि भूमि की लवणीय व अम्लीय मात्रा में लगातार बढ़ोत्तरी से भूमि की उर्वराशक्ति क्षीण होती जा रही है। मौसम में आ रहे इस बदलाव का सबसे ज़्यादा असर कृषि पर पड़ता दिखाई दे रहा है जैसे कि फसलों की बिजाई व कटाई के समय में बदलाव, पारम्परिक फसलों की जगह नई फसलों का आना, फसलों पर नये-नये कीट एवं रोगों का प्रकोप, फसलों में पानी की मांग का बढ़ना आदि कुछ उदाहरण हैं। इस सदी के अंत तक यदि पारे का बढ़ना नहीं रुका तो कृषि उत्पादन में भारी गिरावट देखने को मिल सकती



है। हम पर्यावरण संरक्षण के प्रति सजग तो हो चुके हैं परन्तु इसके संरक्षण के कार्य, करने की बजाय सुनने में ज्यादा आ रहे हैं। फसलों की कटाई के बाद खेतों में बचे हुई पराली व अन्य फसलों के अवशेषों में आग लगाना आई.पी.सी. की धारा 188 सहपठित वायु बचाव एवं प्रदूषण नियंत्रण अधिनियम, 1981 के तहत दण्डनीय अपराध है तथा इसका उल्लंघन करने पर यदि व्यक्ति दोषी पाया जाता है तो वह दण्ड का भागी होता है परन्तु हम सब का कर्तव्य है कि पर्यावरण संरक्षण के लिए जनसहयोग से कार्य किया जाए ताकि शुद्ध वातावरण हम सब को मिल सके।

पर्यावरण संरक्षण के इस महान कार्य में किसान भाई फसल अवशेष प्रबन्धन कर अपना अमूल्य योगदान दे सकते हैं। फसलों के अवशेषों, कचरा एवं कूड़ाकर्कट को न जलाकर इन का प्रयोग बायोमास को भूसे के रूप में पशुओं के लिए प्रयोग कर सकते हैं या इन अवशेषों को गहरी जुताई वाली मशीनों से ज़मीन में दबा कर जीवाश्म खाद के रूप में प्रयोग किया जा सकता है जिससे जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ने से भूमि की उर्वरा शक्ति में बढ़ोत्तरी होगी तथा साथ ही इससे मिटटी के गुणों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है तथा साथ में रासायनिक खादों का भी कम प्रयोग होगा तथा उत्पादन में बढ़ोत्तरी होगी। खेत में फसल अवशेषों के होते हुए भी गेहूं व नरमा कपास की बिजाई के लिए जीरोटिलेज मशीन का प्रयोग कर सकते हैं इस विधि में भूमि की तैयारी के लिए जुताई करने की आवश्यकता नहीं होती जिससे समय के साथ धन की भी बचत होगी तथा साथ ही ट्रैक्टर के कम प्रयोग से ऊर्जा की भी बचत होगी। इसलिए किसान भाई न्यूनतम टिलेज विधि उपयोग करके पर्यावरण संरक्षण में सहयोग कर सकते हैं। राष्ट्रीय जैविक खेती केंद्र गाज़ियाबाद द्वारा तैयार वेस्ट डी कम्पोज़र सॉल्यूशन का फसल अवशेषों पर छिड़काव कर रोटावेटर की सहायता से फसल को मिट्टी में मिलाया जा सकता है जो धीरे-धीरे खेत में मिल जाता है। यह कम्पोस्ट खाद की तरह काम करता है जो मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्रियाओं में सकारात्मक बदलाव लाती है। फसल अवशेष मलच के रूप में प्रयोग करने में मृदा जल संरक्षण के साथ-साथ फसलों को खरपतवारों से बचाने में सहायक है तथा सर्दियों में पराली को फसलों को पाले से बचाने के लिए पलवार के रूप में प्रयोग कर सकते हैं। फसल अवशेषों को भूमि में मिलाने से धरती के रासायनिक गुण जैसे विद्युत चालकता एवं पीएच में भी सकारात्मक सुधार होता है।

सुप्रीम कोर्ट तथा नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल ने पराली जलाने की घटनाओं का संज्ञान लेते हुए भारत सरकार तथा राज्य सरकारों को इस पर रोकथाम के लिए कार्य योजना बनाने का निर्देश दिया। फसल अवशेष प्रबंधन को लेकर केन्द्र सरकार की 'प्रमोशन ऑफ एग्रीकल्चरल मैकेनाइजेशन फॉर इन-सीटू मैनेजमेंट ऑफ क्रोप रैज़िड्यू' योजना शुरू कर दी गई है। योजना के तहत 4 राज्यों पंजाब, हरियाणा, दिल्ली तथा उत्तर प्रदेश को शामिल किया गया है जहाँ धान बाहुल्य क्षेत्रों में किसानों को फसल अवशेष प्रबंधन की जानकारी देने के लिए जागरूकता शिविर लगाये जाएंगे। हरियाणा

सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण विभाग ने किसानों द्वारा पराली न जलाने पर केंद्र सरकार की उपरोक्त योजना को कार्यान्वित करने के लिए एक नीति बनाई है जिस के अंतर्गत खण्ड स्तर पर प्रत्येक खण्ड में 'एक-एक किसान जागरूक प्रशिक्षण शिविर' का आयोजन किया जाएगा तथा ज़िला स्तर पर कृषि यंत्र अनुदान मेले का आयोजन भी किया जाएगा। इसके अतिरिक्त गांवों में पेम्फलेट, पोस्टर, होर्डिंग, मोबाईल वैन व स्कूलों में छात्रों को फसल अवशेष प्रबंधन बारे जागरूक किया जाएगा। फसल अवशेषों को जलाने से रोकने के लिए धान उत्पादक गांवों में एक जनजागरण अभियान शुरू किया जा रहा है जिसमें आम किसान भाई को पराली जलाने से हो रहे पर्यावरण के नुकसान के प्रति जागरूक करने के लिए चौ. चरणसिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार तथा इसके कृषि विज्ञान केंद्रों में तथा गाँव सत्र पर वर्कशाप व ट्रेनिंग आदि का आयोजन किया जायेगा। इसी कड़ी में कृषि विभाग द्वारा ब्लॉक, ज़िले तथा राज्य सत्र पर जागरूकता सम्मेलन आयोजित किये जायेंगे। इसके साथ-साथ फसल अवशेष प्रबंधन के आडिओ-विडिओ को रेडियो, टीवी पर प्रसारण, सोशल मिडिया व्हाट्सअप, ट्विटर, फेसबुक तथा समाचार पत्रों में संदेशों तथा ईमेल एचएचएम मोबाईल एसएमएस सेवा द्वारा किसानों को जागरूक किया जा रहा है। फसल अवशेष प्रबंधन के लिए किसानों को स्ट्रा मैनेजमेंट के तहत अनुदान पर स्ट्रा रीपर, हैप्पी सीडर, पैडी राउंड बेलर, रोटावेटर जैसे कृषि यंत्र किसानों को अनुदान पर उपलब्ध करवाए जा रहे हैं तथा किराए पर देने के लिए गाँव सत्र व ब्लॉक सत्र पर एक हायरिंग सेंटर स्थापित किये जा रहे हैं जहाँ किसानों को गाँव में ही फसल अवशेष प्रबंधन मशीनें रियायती दर से किराये पर उपलब्ध हो सकें। इन कृषि यंत्रों से किसान भाई गेहूं व धान के भूसा को जलाने की बजाए अपने खेत में बचे हुए अवशेषों को भूमि में मिला सकता है जिससे भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ सके।

भारत सरकार ने राष्ट्रीय पुआल नीति बनाने पर भी कार्य करना शुरू कर दिया है जिसमें राज्यों की सहायता से निर्धारित कीमत पर किसानों से पराली खरीदकर बिजली उत्पादन, एथोनोल, इन्ट व सीमेंट उद्योग में इसे प्रयोग किया जाने का प्रावधान पर कार्य किया जा सके। कृषि इंजीनियरों द्वारा फसलों की कटाई के लिए ऐसी मशीनें व कम्बाइन बनाने पर कार्य शुरू हो गया है जिससे फसल अवशेष खेत में न रहें तथा ये मशीनें सीधा ही फसल अवशेषों को भूसे में तब्दील कर सकें जो पशुओं के चारे के रूप में प्रयोग किया जा सके।

किसान भाइयों आप हम सब मिलकर ऊपरलिखित उपायों को अपनाकर उचित फसल अवशेष प्रबंधन कर वातावरण में ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन की मात्रा कम कर ग्लोबल वार्मिंग की गति को धीमा करने में सहयोग करें ताकि आने वाली पीढ़ी को स्वच्छ वातावरण देने में हम सक्षम हो सकें।



## फसल अवशेष न जलायें-भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ाएं व पर्यावरण बचाएं

✍ जय नारायण भाटिया, फतेह सिंह एवं प्रद्युमन भटनागर  
कृषि विज्ञान केन्द्र, कुरुक्षेत्र  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

देश के कुल खाद्यान्न उत्पादन में धान व गेहूं का योगदान लगभग 75 प्रतिशत है। यह दोनों फसलें ऐसी हैं जो संभवतः अधिकतम प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करती हैं। इन फसलों में बहुत अधिक जल, रासायनिक खाद व दवाओं का प्रयोग होता है। इन्हीं फसलों के अधिकतर अवशेषों में आग लगाई जाती है तथा यह फसलें आमतौर पर अधिक उत्पादकता वाले क्षेत्रों में उगाई जाती हैं। वैज्ञानिक आंकलन बताते हैं कि इन क्षेत्रों में यदि इसी प्रकार भूमिगत पानी, जैविक कार्बन और पोषक तत्वों की कमी होती रही तो यह क्षेत्र बंजर भूमि में तबदील हो जाएंगे तथा देश की खाद्यान्न सुरक्षा खतरे में पड़ जाएगी। इसलिए किसानों को इससे होने वाले नुकसान व फायदों के बारे में ज़्यादा से ज़्यादा जागरूक करना होगा।

### फसल अवशेष जलाने से होने वाले नुकसान

1. वातावरण में हानिकारक गैसों की वजह से प्रदूषण बढ़ जाता है।
2. पशुओं के लिए चारे की उपलब्धता कम हो जाती है।
3. लाभदायक एवं अदृश्य सूक्ष्म जीवों की संख्या कम हो जाती है।
4. मिट्टी के उपजाऊ तत्व व खनिज पदार्थ जलकर भस्म हो जाते हैं तथा मित्र कीटों की कमी होने से ज़मीन की उपजाऊ शक्ति कम हो जाती है।
5. अवशेष जलाने से राजमार्गों व अन्य जगह धूएं की वजह से दुर्घटना होने का डर हमेशा बना रहता है।

### फसल अवशेष को ज़मीन में मिलाने से फायदे

1. फसल अवशेष मिट्टी में मिलाने से कार्बनिक पदार्थ व अन्य तत्व बढ़ते हैं जिससे सूक्ष्म जीवों की सक्रियता बढ़ जाती है।
2. मृदा के भौतिक गुणों जैसे संरचना, जल एवं पोषक तत्वों की धारण क्षमता में वृद्धि होती है।
3. मृदा का पी.एच. मान ठीक रहता है जिससे उर्वरकों की उपलब्धता व स्थिरीकरण अधिक समय तक रहता है।
4. मृदा क्षरण को कम करके पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाते हैं।
5. भूमि एवं वातावरण का प्रदूषण नहीं फैलता है।
6. फसल अवशेष जलाने से हानिकारक गैसों का उत्सर्जन होता है जिससे वायुमण्डल का तापमान बढ़ता है और फसलों की उत्पादकता पर प्रतिकूल असर पड़ता है। अवशेषों को वापिस ज़मीन में मिलाने से इस दुष्प्रभाव से बचा जा सकता है तथा फसलों की उत्पादकता स्तर को बढ़ाया जा सकता है। आग लगाने से भूमि की ऊपरी सतह कमजोर हो जाती है। जिसकी वजह से इसमें वायु संचार जलग्रहण की क्षमता घट जाती है।

(शेष पृष्ठ 28 पर)

## पराली प्रबन्धन के लिए कस्टम हायरिंग सेंटर की महत्ता

✍ अनिल कुमार, विजया रानी एवं मुकेश जैन  
फार्म मशीनरी एवं पावर इंजीनियरिंग विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा एक कृषि प्रधान प्रदेश है। गेहूं व धान यहां की प्रमुख फसलें हैं। हरियाणा में लगभग 13 लाख हैक्टेयर में धान बोया जाता है जिसमें से लगभग 9 लाख हैक्टेयर में बासमती व 4 लाख हैक्टेयर में मोटे धान की खेती होती है। धान की कटाई मुख्यतः कम्बाईन हार्वेस्टर द्वारा की जाती है। जोकि ज़मीन से लगभग 30-40 सें.मी. की ऊँचाई से काटती है। धान की कटाई कम्बाईन द्वारा होने के कारण पराली के प्रबंधन में बहुत कठिनाई आती है और गेहूं की बिजाई के लिए समय कम होने के कारण किसान अमूमन इसमें आग लगा देता है जिससे ज़मीन की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है व साथ के साथ वायु प्रदूषण भी बहुत होता है जिससे सांस लेने में भी बहुत तकलीफ होती है। कई बार तो आग ज़्यादा फैलने पर जान व माल की भी हानि होती है। यदि हम पराली का सही प्रबंधन कर लें तो हमारी ज़मीन की उर्वरा शक्ति भी बढ़ेगी क्योंकि पराली में लगभग 50 प्रतिशत नाइट्रोजन व फास्फोरस व 25 प्रतिशत पोटाश होता है। इससे हमारी लागत भी कम होगी व पैदावार भी ज़्यादा होगी।

धान की पराली के प्रबन्धन के मुख्यतः तीन तरीके हैं

1. हम पराली को खेत में ही छोड़ दें व हैप्पी सीडर या ज़ीरो ड्रिल से सीधी बिजाई कर दें। इसमें समय व खर्चा भी कम लगेगा व पैदावार भी ज़्यादा मिलेगी।
2. हम पराली को खेत में मिट्टी में दबा दें व उसके बाद सीधी बिजाई कर दें इसमें किसान का खर्चा व समय थोड़ा ज़्यादा लगेगा पर ज़मीन की उर्वरा शक्ति बढ़ेगी व पराली का भी समाधान हो जाएगा इसके लिए हम सूपर एस एम एस, रोटावेटर, मल्चर, पैडी चौपर, पैडी रीपर एवं रिवर्सिबल प्लो का प्रयोग कर सकते हैं।
3. हम पराली को खेत से बाहर निकाल दें व उसे पशुओं के चारे, गत्ता बनाने, बिजली बनाने आदि में प्रयोग कर सकते हैं इसके लिए हम स्ट्रॉ चौपर, हैरैक, व बेलर का प्रयोग कर सकते हैं।

हरियाणा में ज़्यादातर किसानों की औसत ज़मीन (धान-गेहूं, फसल चक्र में) लगभग एक हैक्टेयर से भी कम है व इन मशीनों की कीमत 40,000 रूपए से लेकर 8,00,000 रूपए तक है। ये मशीनें लगभग एक घंटे में एक एकड़ में पराली का प्रबन्धन करती हैं। इन मशीनों को चलाने के लिए किसान को कुल 30 से 40 दिन का समय मिलता है। इस समय में किसान के खेत पर मशीन की कीमत पूरी नहीं हो सकती इसलिए इन मशीनों को खरीदना किसान के लिए एक घाटे का सौदा है।

(शेष पृष्ठ 28 पर)

# फसल अवशेष प्रबंधन हेतु कृषि मशीनीकरण प्रचार योजना : एक परिचय

सूबे सिंह, संदीप भाकर एवं सुनील कुमार ढांडा

कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहाबाद

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

किसान फसल कटाई के बाद फसलों के अवशेषों को जला देते हैं, जिससे पर्यावरण प्रदूषित होता है और देश में चारे की भी कमी हो जाती है। हमारे देश में फसलों के अवशेषों का उचित प्रबंधन करने पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है या कहें कि इसका उपयोग मृदा में जीवांश पदार्थ अथवा नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाने के लिये न करके इनका अधिकतर भाग या तो दूसरे घरेलू उपयोग में किया जाता है या फिर जलाकर नष्ट कर दिया जाता है जैसे कि गेहूं, गन्ने की हरी पत्तियां, आलू, मूली की पत्तियां पशुओं को खिलाने में उपयोग की जाती हैं या फिर फेंक दी जाती हैं। कपास, सन, अरहर आदि के तने गन्ने की सूखी पत्तियां, धान का पुआल आदि सभी अधिकतर जलाने के काम में उपयोग कर लिये जाते हैं। पिछले कुछ वर्षों में एक समस्या मुख्य रूप से देखी जा रही है कि जहां हार्वेस्टर के द्वारा फसलों की कटाई की जाती है उन खेतों में फसल के तने के अधिकतर भाग खेत में खड़े रह जाते हैं तथा वहां के किसान खेत में फसल के अवशेषों को आग लगाकर जला देते हैं। अधिकतर रबी सीजन में गेहूं की कटाई के पश्चात विशेष रूप से देखने को मिलता है कि किसान अपनी फसल काटने के पश्चात फसल अवशेष को उपयोग न करके उसको जला कर नष्ट कर देते हैं। इस समस्या को देखते हुए प्रशासन द्वारा बहुत से जिलों में तो गेहूं की नरवाई जलाने पर रोक लगाई गई है तथा किसानों को शासन, कृषि विभाग एवं सम्बन्धित संस्थाओं द्वारा इस बारे में समझाने के प्रयास किये जा रहे हैं कि किसान अपने खेतों में अवशेषों में आग न लगा कर इसे खेत के जीवांश पदार्थ को बढ़ाने में उपयोग करें।

फसल अवशेष प्रबंधन को लेकर केन्द्र सरकार द्वारा फसल अवशेष के इन-सीटू प्रबंधन के लिए कृषि मशीनीकरण का प्रचार (Promotion of Agricultural Mechanization for in-situ Management of Crop Residue) योजना शुरू की है। इस योजना के तहत धान बाहुल्य क्षेत्रों में किसानों को फसल अवशेष प्रबंधन की जानकारी देने के लिए जागरूकता शिविर आयोजित किये जा रहे हैं। यही नहीं इन क्षेत्रों में कस्टम हायरिंग सेंटर भी स्थापित करवाए जाएंगे। इन सेंटरों में लगभग सभी कृषि उपकरण उपलब्ध होंगे तथा किसानों को सस्ती दरों पर किराए पर उपलब्ध करवाए जाएंगे।

इस योजना के तहत प्रदेश के 20 जिलों के 4855 गांवों में जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करवाए जाएंगे तथा कस्टम हायरिंग सेंटर स्थापित करवाए जाएंगे एवं जल्द ही संबंधित किसान सेंटरों के लिए कृषि उपकरणों की खरीद सम्बंधित जिला कृषि उपनिदेशकों द्वारा की जाएगी। कृषि विज्ञान केन्द्र फतेहाबाद द्वारा इसी कड़ी में कार्य करते हुए जिले में फसल अवशेष प्रबंधन के लिए जिले के दो गांवों हड़ोली व डांगरा में 100 प्रदर्शन प्लाट लगाए जाएंगे तथा 30 नवंबर तक विशेष जागरूकता अभियान चलाए जाएंगे। इसके इलावा इन दो गांवों में किसान वैज्ञानिक चर्चा का आयोजन भी किया जायेगा ताकि किसान भाई अपने खेत में फसल अवशेष न जलाएं।

**प्रदेश में ये गांव हैं धान उत्पादक :** प्रदेश में कुल 4855 गांव ऐसे हैं, जिनमें धान की अधिक रोपाई की जाती है। इनमें से करनाल जिले के 435, कैथल के 272, जींद के 306, कुरुक्षेत्र के 421, फतेहाबाद के 262, सोनीपत के 347, सिरसा के 259, अंबाला के 499, यमुनानगर के 654, पानीपत के 185, हिसार के 136, रोहतक के 147, झज्जर के 150, पलवल के 182, भिवानी 84, पंचकूला के 178, रेवाड़ी के 39, फरीदाबाद के 78, मेवात के 56 तथा गुरुग्राम के 59 गांवों में धान की अधिक रोपाई की जाती है। उन्होंने बताया कि इन गांवों के किसानों को फसल अवशेष प्रबंधन की जानकारी देने के लिए एक जुलाई से 30 नवंबर तक विशेष जागरूकता अभियान चलाया जा रहा है।

विदेशों में जहां अधिकतर मशीनों से खेती की जाती है अर्थात् पशुओं पर निर्भरता नहीं है वहां पर फसल के अवशेषों को बारीक टुकड़ों में काटकर मिट्टी में मिला दिया जाता है यद्यपि वर्तमान में हमारे देश में भी इस कार्य के लिये रोटोवेटर जैसी मशीन का प्रयोग प्रारम्भ हो गया है जिससे खेत को तैयार करते समय एक बार में ही फसल अवशेषों को बारीक टुकड़ों में काट कर मिट्टी में मिलाना काफी आसान हो गया है। जिन क्षेत्रों में नमी की कमी हो वहां पर फसल अवशेषों को कम्पोस्ट खाद तैयार कर खेत में डालना लाभप्रद होता है। आस्ट्रेलिया, रूस, जापान व इंग्लैंड आदि विकसित देशों में इन अवशेषों को कम्पोस्ट बनाकर खेत में डालते हैं या इन्हें खेत में अच्छी प्रकार मृदा में मिलाकर सड़ाव की क्रिया को सुचारू रूप से चलाने के लिये समय-समय पर जुताई करते रहते हैं।

फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन करने के लिये आवश्यक है कि फसल अवशेषों (गन्ने की पत्तियों, गेहूं के डंठलों आदि) को खेत में जलाने की अपेक्षा उनसे कम्पोस्ट तैयार कर खेत में प्रयोग करें। उन क्षेत्रों में जहां चारे की कमी नहीं होती वहां मक्का की कड़वी व धान की पुआल को खेत में ढेर बनाकर खुला छोड़ने के बजाय गड्डों में कम्पोस्ट बनाकर उपयोग करना चाहिए। आलू तथा मूंगफली जैसी फसलों को खुदाई कर बचे अवशेषों को भूमि में जोत कर मिला देना चाहिये। मूंग व उड़द की फसल में फलियां तोड़कर खेत में मिला देना चाहिये।

**खेतों के अन्दर सस्यावशेष प्रबंधन :** कटाई के बाद खेत में बचे फसल अवशेष घास-फूस, पत्तियां व टूट आदि को सड़ाने के लिये किसान भाई फसल को काटने के पश्चात 20-25 किग्रा नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़क कर कल्टीवेटर या रोटोवेटर से काटकर मिट्टी में मिला देना चाहिये। इस प्रकार अवशेष खेत में विघटित होना प्रारम्भ कर देंगे तथा लगभग एक माह में स्वयं सड़कर आगे बोई जाने वाली फसल को पोषक तत्व प्रदान कर देंगे, क्योंकि कटाई के पश्चात दी गई नाइट्रोजन अवशेषों में सड़न की क्रिया को तेज़ कर देती है। अगर फसल अवशेष खेत में ही पड़े रहे तो फसल बोने पर जब नई फसल के पौधे छोटे रहते हैं तो वे पीले पड़ जाते हैं क्योंकि उस समय अवशेषों के सड़ाव में जीवाणु भूमि की नाइट्रोजन का उपयोग कर लेते हैं तथा प्रारम्भ में फसल पीली पड़ जाती है अतः फसल अवशेषों का प्रबंधन करना अत्यन्त आवश्यक है तभी हम अपनी ज़मीन में जीवांश पदार्थ की मात्रा में वृद्धि कर ज़मीन को खेती योग्य सुरक्षित रख सकते हैं। अतः किसान भाई उपरोक्त कृषि विधियों का प्रयोग करके फसल अवशेषों का प्रबंधन करें और वातावरण को प्रदूषित होने से बचाएं व खेत की उर्वरा शक्ति को बढ़ाएं।





# सीसीएसएचएयू द्वारा फसल अवशेष प्रबंधन की दिशा में प्रयास-तेज

संदीप आर्य, बी.आर. कंबोज<sup>1</sup> एवं विजया रानी<sup>2</sup>

मीडिया सलाहकार

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा प्रदेश फसल अवशेष जलाने से हो रहे दुष्प्रभावों से मुक्त हो सकेगा। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा फसल अवशेष प्रबंधन व प्रदूषण रहित प्रदेश बनाने की दिशा में किए जा रहे प्रयासों में गति लाई जा रही है। इसके लिए प्रदेशभर में फसल अवशेष प्रबंधन के लिए एक कार्ययोजना तैयार की गई है। इस कार्य के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् (आईसीएआर) द्वारा 4 करोड़ रूपए की राशि हकूवि को प्रदान की गई है।

**वातावरण पर दुष्प्रभाव :** फसल अवशेषों को जलाने से जहां एक तरफ वातावरण दूषित हो रहा है, वहीं दूसरी तरफ ज़मीन की उपजाऊ शक्ति तथा ज़मीन में लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में कमी होती जा रही है। इसके अलावा ज़मीन में ऑर्गेनिक कार्बन की मात्रा भी घट रही है। फसल अवशेषों को जलाने से उत्पन्न हुई ज़हरीली गैस मानव स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव डालती है तथा वातावरण में प्रदूषण की मात्रा बढ़ने से अनेक बीमारियां भी फैलती हैं। पराली के जलाने से फैल रहे प्रदूषण का स्तर इस सीमा तक पहुंच गया है कि नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल को हस्तक्षेप करना पड़ा है।

प्रदेश में 20 ज़िले ऐसे हैं जिनमें गन्ना और धान की खेती की जाती है और यहां फसल अवशेष जलाने की सबसे विकट समस्या है। इन ज़िलों में हर साल करीब 28 लाख मीट्रिक टन फसल अवशेषों को जला दिया जाता है जबकि प्रति टन पराली जलाने से 5.5 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 1.2 कि.ग्रा. सल्फर, 2.3 कि.ग्रा. फास्फोरस, 25 कि.ग्रा. पोटाश और 400 कि.ग्रा. ऑर्गेनिक कार्बन की क्षति होती है। प्रदेश में 13 लाख हैक्टेयर भूमि पर धान की बिजाई की जाती है जिससे 60 लाख टन पराली का उत्पादन होता है।

**मशीनों द्वारा प्रबंधन :** प्रदेश में पराली को जलाने की समस्या है तथा इसके प्रबंधन हेतु किसानों को व्यावहारिक तकनीकी देने की ज़रूरत है ताकि किसान इसका उपयोग कर पराली जलाने की समस्या से निजात पा सकें। प्रदेश में स्थित विश्वविद्यालय के अंबाला, भिवानी, फतेहाबाद, हिसार, जींद, झज्जर, करनाल, कैथल, कुरुक्षेत्र, पानीपत, रोहतक, सोनीपत, सिरसा तथा यमुनानगर कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से किया जाएगा। इसके अंतर्गत प्रत्येक कृषि विज्ञान केन्द्र द्वारा दो-दो गांवों को गोद लिया जाएगा। सर्वप्रथम आईसीएआर द्वारा प्रदान की गई राशि में से फसल अवशेष प्रबंधन में उपयोग होने वाले संयंत्र खरीदे जाएंगे जिसमें प्रत्येक कृषि विज्ञान केन्द्र के लिए दो-दो हैपी सीडर, पैडी स्ट्रॉ चोपर/ शरेडर/ मल्चर, शर्ब मास्टर/कटर कम स्प्रेडर, एक-एक रिवर्सीबल एमबी प्लो तथा 3-3 ज़ीरो टिल ड्रिल की खरीद की जाएगी। इन संयंत्रों को कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से गोद लिए हुए गांवों में कस्टम हाइरिंग सेंटर पर स्थापित किया जाएगा। इन संयंत्रों की मदद से प्रत्येक ज़िले में वैज्ञानिकों

द्वारा किसानों को आगामी रबी मौसम की फसलों के लिए 100 प्रदर्शन करके दिखाए जाएंगे। इस दौरान फार्मर चेंज एजेंटों की पहचान की जाएगी जोकि फसल अवशेष प्रबंधन तकनालोजी एवं क्रियाओं का किसानों के बीच विस्तार करने में सहयोग करेंगे।

जो किसान कंबाइन से धान की कटाई करते हैं वे गेहूं की बिजाई बिना खेत तैयार किए हैपी सीडर की मदद से कर सकते हैं। किसान केवल उसी कंबाइन का प्रयोग करें जिसमें एसएमएस (स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम) लगा हुआ हो। जिस खेत में फसल गहरी हो वहां हैपी सीडर द्वारा बिजाई करना उपयुक्त रहता है जबकि जहां फसल घनी न हो वहां ज़ीरो टिलेज मशीन का बखूबी प्रयोग किया जा सकता है। किसान धान की पराली को यदि खेत की मिट्टी में मिलाना चाहते हैं तो वे धान की कटाई के उपरांत पैडी स्ट्रॉ/चोपर/शरेडर/मल्चर एवं शर्ब मास्टर/कटर कम स्प्रेडर का प्रयोग कर सकते हैं। इन मशीनों के प्रयोग से खेत में पड़ी हुई पराली को बारीक किया जा सकेगा। तदुपरांत रिवर्सीबल एमबी प्लो के उपयोग से बारीक की गई पराली को मिट्टी में आसानी से मिलाया जा सकेगा। धान की फसल के अवशेषों को मशीनों से बारीक करके पशु चारे में प्रयोग किया जाएगा। इन मशीनों से जहां एक तरफ अवशेष जलाने की समस्या से निजात मिलेगी वहीं दूसरी तरफ पराली को खेत की मिट्टी में मिलाने से भूमि की उर्वरा शक्ति में भी बढ़ोत्तरी होगी। जिससे फसल की पैदावार बढ़ेगी।

**प्रशिक्षण द्वारा प्रबंधन:** पराली के प्रबंधन के लिए प्रदेश सरकार ने किसानों को जागरूक करने का निर्णय लिया है। इसी कड़ी के तहत हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय को उपर्युक्त परियोजना की मंजूरी दी गई है। फसल अवशेष प्रबंधन के बारे में व्यावहारिक ज्ञान देने के लिए प्रत्येक ज़िले में 5 दिवसीय 2-2 पाठ्यक्रम आयोजित किए जाएंगे। प्रत्येक पाठ्यक्रम में 25 प्रशिक्षणार्थियों को शामिल किया जाएगा। फसल अवशेष प्रबंधन के बारे में अधिक से अधिक लोगों में जागरूकता लाने के लिए प्रत्येक विस्तार गतिविधि के दौरान किसानों, ग्रामीण महिलाओं एवं आमजन को भी शामिल किया जाएगा। इनके अतिरिक्त प्रत्येक ज़िले में एक-एक किसान मेला तथा जागरूकता अभियान भी चलाए जाएंगे। सूचना तकनीकी के प्रयोग से भी ज़िले के हर गांव तक ज्ञान का प्रचार-प्रसार किया जाएगा। फसल अवशेष प्रबंधन के बारे में स्कूल एवं कॉलेज के विद्यार्थियों को भी जागरूक किया जाएगा जिसके लिए प्रत्येक ज़िले के दो स्कूलों एवं एक कॉलेज में निबंध, पेंटिंग तथा वाद-विवाद प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाएगा। इसके अलावा प्रभात फेरी एवं नुक्कड़ नाटक के माध्यम से भी जागरूकता लाई जाएगी।

**ईंधन व खाद के रूप में प्रयोग :** धान की पराली (पैडी स्ट्रॉ) के प्रबंधन हेतु हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय में की गई पहल में प्रयोगशाला स्तर पर एथेनोल और बायोगैस (बायोप्यूल) तैयार किया जाएगा। धान के अवशेष के ब्रीकेट बनाकर भट्टी में इंटें पकाने के काम में लाया जाएगा तथा घर में ईंधन की ज़रूरत को पूरा करने के लिए पैलेट बनाए जाएंगे। वर्मी कंपोस्ट बनाने के लिए धान के अवशेष का प्रयोग किया जाएगा। पराली को उच्च तापमान पर गर्म करके पायरोलाइसिस विधि द्वारा बायोचार (एक प्रकार का कच्चा कोयला) बनाया जाएगा। इसके अतिरिक्त पराली को सूक्ष्म जीवाणुओं की मदद से गला-सड़ाकर ऑर्गेनिक खाद बनाई जाएगी। पराली को मशरूम उगाने में भी उपयोग में लाया जाएगा।

<sup>1</sup>कुलसचिव, चौ.च.सिंह.कृ.वि., हिसार।

<sup>2</sup>विभागाध्यक्ष, फार्म मशीनरी एवं पावर इंजीनियरिंग विभाग



# धान अवशेष जलाने से -मिट्टी और मानव स्वास्थ्य पर -बुरा असर

✍ अनिल कुमार मलिक, पूनम रानी एवं सुनील कुमार

पी.एच.डी. शोधकर्ता

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार



धान अवशेष जलाने को मुख्य रूप से अवशेष प्रबंधन की चुनौती के रूप में देखा गया है। हरियाणा और पंजाब राज्यों में इसके कुप्रबंधन ने दिल्ली और उत्तरी भारत के अन्य स्थानों में सालाना शीतकालीन धुआं और स्वास्थ्य समस्याओं का नेतृत्व किया है। पंजाब और हरियाणा आज देश में फसल अवशेषों की सबसे ज़्यादा मात्रा में जलती हैं - क्रमशः करीब 20 मिलियन टन और 10 मिलियन टन। इसके अलावा राजस्थान, उत्तर प्रदेश, पाकिस्तानी पंजाब तथा दक्षिणी नेपाल के किसानों में भी यह रुझान पाया जाता है। हालांकि, यह व्यापक अभ्यास, जो मिट्टी के स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव डालता है।

औद्योगिकीकृत कृषि के मुख्यधारा के परिणाम स्वरूप नियमित आवर्तन के क्षेत्र में केवल धान और गेहूँ की फसलों को बढ़ाने के अभ्यास का भारी विस्तार हुआ है। एक हाइब्रिड किस्म की शुरुआत ने खरीफ सीजन, अप्रैल बुवाई और अक्टूबर/नवंबर की फसल में धान की खेती की सुविधा प्रदान की। इसके अलावा, ट्यूबवेल सिंचाई ने अप्रतिबंधित पानी की आपूर्ति प्रदान की और श्रम की कमी और लागत बढ़ने से फसलों की कटाई के लिए कंबाइन्ड हार्वेस्टर को व्यापक रूप से अपनाना पड़ा।

हालांकि, मशीनीकृत कटाई के परिणाम स्वरूप खेत में बड़ी मात्रा में स्टबल और स्ट्रॉ रह जाते हैं। धान की कटाई के बाद में गेहूँ की फसल की समय पर बुवाई की आवश्यकता किसानों के लिए मैन्युअल रूप से स्टबल काटने और गेहूँ की बुवाई के लिए मैदान तैयार करने के लिए एक खिड़की (लगभग 15-20 दिन) बहुत कम होते हैं। श्रम की कमी भी प्रक्रिया को असंभव बनाती है। इस प्रकार किसान अपने खेत में फसल अवशेषों को आग के हवाले कर देते हैं क्योंकि वे इसे अन्य प्रस्तावित विकल्पों की तुलना में अवशेषों को साफ करने के लिए सबसे तेज़ और सबसे सबसे कम लागत वाला प्रभावी तरीका के रूप में देखते हैं।



**मिट्टी की सेहत और मानव स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव :** धान अवशेष जलाने से भूमि को क्षति पहुंचती है। इससे उसके आसपास के वातावरण का तापमान बहुत बढ़ जाता है तथा पानी सूख जाने के कारण फसल के लिए पानी की आवश्यकता भी बढ़ जाती है। खेतों में मौजूद भूमिगत 'कृषि मित्र कीट' तथा अन्य सूक्ष्म मित्र जीव आग की तपिश से मर जाते हैं और शत्रु कीटों का प्रकोप बढ़ जाने के कारण फसलों को तरह-तरह की बीमारियां घेर लेती हैं। इसके परिणामस्वरूप भूमि की उर्वरता कम हो जाती है तथा झाड़ू घट जाता है।

अमरीका की कैलीफोर्निया यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों ने भी एक अध्ययन के बाद कहा था कि "भारत में वायु प्रदूषण के चलते अन्न का उत्पादन बुरी तरह प्रभावित हो रहा है और यदि भारत वायु प्रदूषण का शिकार न हो तो इसका अन्न उत्पादन वर्तमान से 50 प्रतिशत अधिक हो सकता है।" एक टन धान अवशेष जलाने पर हवा में 3 किलो कार्बन कण, 60 किलो कार्बन मोनोऑक्साइड, 1500 किलो कार्बन डाईऑक्साइड, 200 किलो राख और 2 किलो सल्फर डाईऑक्साइड फैलते हैं। इससे वायुमंडल में कार्बन डाईऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड और मिथेन गैसों की मात्रा बहुत बढ़ जाती है। स्वास्थ्य के लिए यह धुआं अत्यंत हानिकारक है। इससे वातावरण बुरी तरह प्रदूषित होता है तथा लोगों की त्वचा व सांस संबंधी तकलीफें बढ़ जाती हैं।

विषैले धुएं के कारण वायुमंडल में चारों ओर गहरा धुंधलका छा जाता है और दृश्यता कम हो जाने के कारण बड़ी संख्या में वाहन दुर्घटनाओं के अलावा कई बार किसान और उनके परिजन अपनी ही लगाई पराली की आग की लपेट में आ कर मौत के मुंह में चले जाते या घायल हो जाते हैं। इस समय दिल्ली तथा देश के अनेक भागों में फैली धुंध उत्तर एवं उत्तर पश्चिम भारत में कृषि अपशिष्ट (एग्रीकल्चरल वेस्ट) को खेतों में जलाने का ही परिणाम है।

स्वीडिश मौसम विज्ञानी 'स्वांते बोदिन' ने पेरिस में जलवायु सम्मेलन के अवसर पर एक पत्रकार से साक्षात्कार में कहा कि "पिछले 10-15 वर्षों के दौरान कृषि अपशिष्ट) पदार्थों को जलाने के रुझान में अत्यधिक वृद्धि हुई है। हिमालय क्षेत्र के तापमान में वृद्धि के परिणामस्वरूप ग्लेशियरों के पिघलने से इसका किसी सीमा तक निश्चित रूप से संबंध है।"

श्री बोदिन के अनुसार अगली फसल के लिए खेत को खाली करने की किसानों की जल्दबाजी तो ठीक है परन्तु इसका यही सबसे तेज़ तरीका नहीं है। अतः इसके लिए यदि वे अन्य वैकल्पिक तरीके अपनाएं तो अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। मिसाल के तौर पर वे सीधी बिजार्ई (डायरेक्ट सीडिंग) का तरीका अपना सकते हैं। इसमें पिछली फसल की खड़ी पराली के बीच ही अगली फसल रोप दी जाती है और सूखी हुई खड़ी फसल धीरे-धीरे खाद में बदल जाती है। पराली को जला कर नुकसान उठाने की बजाय यह एक ऐसी दौलत है जिसे 'डीकम्पोज़' करके बेहतरीन खाद बनाई जा सकती है। पराली गल कर भूमि के जैविक और उर्वरक तत्वों में वृद्धि करती है।

(शेष पेज 25 पर)

# धान की पराली का यथास्थान प्रबंधन: खेत के अवशेष-खेत में

पूजा रानी, सुनील कुमार ढांडा एवं विकास कुमार

कृषि विज्ञान केन्द्र, सदलपुर (हिसार)

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मशीनों के इस युग में जहां एक तरफ विभिन्न प्रकार की मशीनों ने खेती को सहज और सरल बना दिया है वहीं दूसरी तरफ वातावरण से जुड़ी अनेक समस्याएं भी पैदा की हैं। कंबाइन हार्वेस्टर ऐसी ही एक मशीन का उदाहरण है जो फसलों की कटाई व गहाई दोनों कामों को एक साथ करके किसान का समय, श्रम व लागत तीनों को बचाती है। परंतु उन्हीं खेतों में अत्यधिक मात्रा में बचे हुए फसल अवशेष आज पूरे उत्तर भारत के सामने एक समस्या हैं। गेहूं के फसल अवशेषों से किसान पशुओं के लिए तुड़ी बनवा कर इस्तेमाल में लेता है लेकिन धान की पराली का प्रबंधन आज भी एक समस्या बनी हुई है।

इस पराली के प्रबंधन के कई तरीके प्रचलित हैं जिनमें कंपोस्ट तैयार करना, ईंधन के रूप में उपयोग, पशुचारे के रूप में उपयोग, अवशेष दहन, मृदा में समावेश व अवशेष मल्व प्रमुख हैं। अधिकांश किसान अपना समय व श्रम बचाने के चक्कर में अवशेष दहन के विकल्प को अपना रहे हैं और पर्यावरण को प्रदूषित कर रहे हैं। इन सभी विकल्पों में से किसानों को फसल अवशेषों का यथास्थान अर्थात् 'खेत के अवशेष- खेत में ही' प्रबंधन पर बल देना चाहिए क्योंकि मृदा से पोषक तत्व अवशेषण एवं रासायनिक उर्वरकों द्वारा पोषक तत्व आपूर्ति में काफी असंतुलन होने के कारण मृदा की उर्वरा शक्ति दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही है। धान-गेहूं फसल चक्र में 10 टन प्रति हैक्टेयर जैवभार उत्पादन के लिए लगभग 500 किलोग्राम पोषक तत्व मृदा से अवशेषित होते हैं। अतः फसल अवशेषों का मृदा में समावेश व मल्व के रूप में प्रबंधन अति आवश्यक है।

## पराली का यथास्थान मशीनों द्वारा प्रबंधन कैसे करें

कृषि वैज्ञानिकों के शोध परिणामों से यह ज्ञात हुआ है कि धान-गेहूं फसल चक्र में यदि धान की पराली को खेतों में ही रहने दिया जाए तो गेहूं की फसल में बढ़ोत्तरी होती है एवं मृदा का स्वास्थ्य भी बना रहता है व खेती की लागत भी कम होती है। पराली का यथास्थान अर्थात् खेत में ही प्रबंधन के लिए विभिन्न मशीनों जैसे हैप्पी सीडर, सुपर स.म.स, चॉपर, मल्वर, उल्टा हल इत्यादि उपयोग में लाई जा सकती हैं। खेत में ही पराली के प्रबंधन के निम्नलिखित तरीके किसान अपना सकता है।

1. **हैप्पी सीडर के साथ बिना जोते गेहूं की बुवाई करें :** हैप्पी सीडर एक उन्नत मशीन है जो पराली में ही गेहूं की बिजाई करने में सक्षम है। इस मशीन को इस प्रकार डिजाइन किया गया है कि इसमें लगे फलेल किस्म के ब्लेड ड्रिल के बुवाई करने वाले फाले के सामने आने वाले फसल अवशेषों को काटते हैं और पीछे धकेल देते हैं। फलस्वरूप मशीन के फाले बिना किसी रूकावट के गेहूं की बिजाई करते हैं। इस मशीन में हर दो फालों के बीच दबाव बनाने के लिए पहिये लगाए गए हैं जो दोनों फालों के बीच फेंकी गई पराली को

दबाते हैं जिससे पराली ज़मीन में दब जाती है और वह मल्व का काम करती है और फालों वाली जगह खाली रह जाती है व गेहूं की एक समान बिजाई होती है। मल्व का काम करते हुए यह पराली गेहूं में 50 से 70 प्रतिशत तक खरपतवारों को नियंत्रित करती है साथ ही साथ धान के खेत की नमी का उपयोग करते हुए गेहूं की सीधी बुवाई करके पानी की बचत करती है। हैप्पी सीडर से बुवाई से पहले पराली को खेत में एक समान बिखेरना पड़ता है इसके लिए कंबाइन हार्वेस्टर के पीछे स्ट्रॉ मनेजमेंट सिस्टम (स.म.स) लगाने की सलाह दी जाती है यह कंबाइन के पीछे गिरती पराली को काट कर फेंक देती है जिससे हैप्पी सीडर की कार्यक्षमता बढ़ जाती है।

2. **पराली को चॉपर-मल्वर से काट कर खेत में मिलाना :** चॉपर-मल्वर भी एक उन्नत मशीन है जो पराली को कुतर कर बारीक बनाती है और पूरे खेत में एक समान बिखेर देती है। इस कुतरी हुई पराली को किसान खेत में हलका पानी लगाकर रोटोवेटर से बड़ी आसानी से ज़मीन में मिला सकता है। खेत की मिट्टी की संरचना व नमी की ज़रूरत के हिसाब से इस प्रक्रिया में 2 से 3 हफ्ते लग जाते हैं। ध्यान रहे कि इस तरीके से प्रबंधन हेतु खेत में धान की कटाई से 15 दिन पहले पानी बंद कर देना चाहिए ताकि चॉपर खुशक पराली को अच्छे से कुतर सके और वही पानी इस पराली को ज़मीन में मिलाने के लिए उपयोग में लाया जा सके। बत्तर आने पर गेहूं की बिजाई साधारण ड्रिल या ज़ीरो टिल ड्रिल से करें।
3. **सब्जी या आलू लगाने की स्थिति में उल्टे हल का उपयोग :** सब्जी या आलू लगाने की स्थिति में कुतरी हुई पराली को उल्टे हल की मदद से नमी वाले खेत में मिलाना चाहिए। यह हल दो प्रकार के होते हैं : फिक्स व रिवर्सिबल। फिक्स किस्म का हल मिट्टी को एक तरफ पलटता है जबकि रिवर्सिबल किस्म के हल को अगले चक्कर में बदल दिया जाता है और खाली चलाते हुए मिट्टी को एक तरफ फेंकता है। यह हल तकरीबन 15-30 सेंटीमीटर गहरे तक मिट्टी निकाल कर पराली को ज़मीन में दबा देता है। इसके बाद रोटोवेटर या डिस्क हैरो के साथ जुताई करके खेतों को आलू व अन्य सब्जियों के लिए तैयार करें।



(पृष्ठ 24 का शेष)

**निष्कर्ष :** अतः आवश्यकता अब इस बात की है कि न सिर्फ किसानों को धान अवशेष जलाने की बजाय इसके लाभदायक इस्तेमाल के बारे में जागरूक किया जाए बल्कि इसे खेतों में ही जलाने पर प्रतिबंध लगाया जाए और इसका उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध कार्रवाई की जाए ताकि दूसरे किसानों तक संदेश पहुंचे और वे ऐसा करने से संकोच करें। ऐसा करके पर्यावरण प्रदूषण से बचाव के साथ-साथ फसल के झाड़ में कमी, धुंध के कारण होने वाली दुर्घटनाओं और आसपास के खेतों में खड़ी फसल को आग लगने के खतरे के अलावा ग्लेशियरों के पिघलने के खतरे को भी किसी सीमा तक रोका जा सकेगा।





# फसल अवशेष प्रबंधन : कृषि यंत्रों का महत्व एवं विस्तार शिक्षा रणनीति

✍ सदीप भाकर, सूबेसिंह एवं सुनील ढांडा

कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहाबाद

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फसल अवशेष बहुत ही महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है। यह न केवल मृदा कार्बनिक पदार्थ का महत्वपूर्ण स्रोत है अपितु मृदा के जैविक, भौतिक एवं रासायनिक गुणों में वृद्धि करते हैं। परन्तु हमारे देश में फसल अवशेषों के उचित प्रबंधन पर ध्यान नहीं दिया जाता है। किसान अपने खेत में फसल के अवशेषों विशेषकर धान में फसल अवशेषों को आग लगाकर जला देते हैं। फसल कटाई के मौसम में फसल अवशेषों को जलाने तथा इसके मानव स्वास्थ्य पर हो रहे दुष्प्रभाव की खबरें प्रायः अखबारों की सुर्खियां बनी रहती हैं। हरियाणा के ज्यादातर गांवों में गेहूं व धान की फसल कटाई उपरांत पूरे इलाके में धुंए की चादर फैल जाती है। इससे न केवल प्रदूषण के स्तर में इजाफा होता है बल्कि स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसके साथ-साथ अवशेष जलाने से मृदा के भौतिक गुणों पर प्रतिकूल प्रभाव के साथ-साथ पोषक तत्वों की कमी भी हो जाती है तथा पशुओं के चारे की कमी का भी सामना करना पड़ता है। यदि किसान भाई उपलब्ध फसल अवशेषों को जलाने की बजाय उनका उचित प्रबंध कर उनको वापिस मिट्टी में मिला देते हैं तो उससे न केवल मृदा स्वास्थ्य में सुधार होगा बल्कि ज़मीन की उर्वरा शक्ति व फसल उत्पादकता में भी वृद्धि होगी।

फसल अवशेषों के उचित तरीके से प्रबंधन में कृषि यंत्रों जैसे कि हैप्पीसीडर, ज़ीरो टिल सीड कम फर्टिलाइजर ड्रिल, मल्टचर, स्ट्रॉ चॉपर व रिवर्सिबल प्लो आदि यंत्रों का विशेष योगदान है। इन यंत्रों के प्रयोग से न केवल फसल अवशेषों को मिट्टी में आसानी से मिलाया जा सकता है बल्कि आगामी फसल की बिजाई भी आसानी से की जा सकती है। फसल अवशेष प्रबंधन में प्रयुक्त होने वाले कृषि यंत्रों का विवरण व उनका उपयोग इस प्रकार से है।

**रिवर्सिबल प्लो:** इस कृषि यंत्र का प्रयोग गहरी जुताई के माध्यम से फसल अवशेषों को मिट्टी में अच्छी तरह दबाने के लिए किया जाता है। इस यंत्र के प्रयोग से मृदा की जल ग्रहण क्षमता बढ़ती है तथा मिट्टी में मौजूद हानिकारक कीटाणुओं एवं खरपतवार बीजों को खत्म कर खरपतवार नियंत्रण करता है।

**मल्टचर :** इस यंत्र के द्वारा फसल अवशेषों विशेष कर धान के फानों/पराली को छोटे टुकड़ों में काटकर ज़मीन पर बिछाया जा सकता है तथा धान के खेत में आगामी फसल की बिजाई आसानी से की जा सकती है। मल्टचर के उपयोग से मिट्टी में नमी संरक्षित रहती है तथा भूमि में उपलब्ध पोषक तत्वों को संरक्षित रखता है।

**हैप्पीसीडर :** इस यंत्र के प्रयोग से कंबाइन से कटे धान के खेत में गेहूं की सीधी बिजाई अच्छी तरह से की जा सकती है। यह यंत्र धान कटे खेतों में फाने/पराली को काटकर मल्टचर रूपी सतह में परिवर्तित कर देता है। जिससे खेत में नमी ज़्यादा समय तक बनी रहती है तथा खरपतवार कम पैदा होते हैं। हैप्पी सीडर से गेहूं की सीधी बिजाई करने से लगभग 800 से 1000 रुपये तक बचत की जा सकती है।

**ज़ीरो टिल सीड कम फर्टिलाइजर ड्रिल :** इस यंत्र द्वारा धान के फसल अवशेषों को बिना जलाये खेत में खड़े फानों में गेहूं की सीधी बिजाई कर सकते हैं। इससे भूमि की उर्वराशक्ति एवं संरचना बनी रहती है। ज़ीरो टिल यंत्र द्वारा गेहूं की सीधी बिजाई करने से लगभग 1200 रुपये तक बचत की जा सकती है। इस यंत्र के प्रयोग से मंडूसी खरपतवार का जमाव 30 से 40 प्रतिशत कम हो जाता है। इस कारण खरपतवारनाशक कम छिड़कने पड़ते हैं तथा पैदावार वृद्धि होती है।

उपरोक्त यंत्रों के अलावा अन्य यंत्रों जैसे कि स्ट्रॉ चॉपर, रोटावेटर, स्ट्रॉबेलर आदि का प्रयोग फसल अवशेषों के प्रबंधन में किया जा सकता है।

**फसल अवशेष प्रबंधन हेतु विस्तार शिक्षा रणनीति :** कृषि एवं किसान कल्याण विभाग, हरियाणा फसल अवशेष प्रबंधन हेतु विशेष रूप से प्रयासरत है तथा केंद्र सरकार द्वारा भी 'फसल अवशेष के इन सीडू प्रबंधन के लिए कृषि मशीनीकरण प्रोत्साहन योजना' नामक विशेष कार्ययोजना कृषि विज्ञान केंद्रों एवं कृषि विभाग के माध्यम से क्रियान्वित की जा रही है। योजना के तहत किसानों को फसल अवशेष के प्रबंधन के बारे में किसान गोष्ठियों, जागरूकता कैंप एवं प्रशिक्षण शिविरों के माध्यम से जागरूक किया जा रहा है। इस योजना के तहत कृषि एवं किसान कल्याण विभाग, हरियाणा द्वारा फसल अवशेष प्रबंधन के यंत्र जिनमें रोटावेटर, स्ट्रॉ चॉपर, हैप्पीसीडर, ज़ीरो टिल सीड कम फर्टिलाइजर ड्रिल स्ट्रॉ बेलर, मल्टचर, रिवर्सिबल प्लो आदि किसानों को 50 प्रतिशत अनुदान पर दिए जाने का प्रावधान है। इसके अलावा फसल अवशेष प्रबंधन हेतु कस्टम हायरिंग सेंटर भी खोले जा रहे हैं। इन कस्टम हायरिंग केंद्रों को 80 प्रतिशत अनुदान पर फसल अवशेष प्रबंधन के यंत्र उपलब्ध करवाए जायेंगे। इस योजना के तहत हरियाणा के 12 कृषि विज्ञान केंद्र फसल अवशेष प्रबंधन पर चुनिंदा गांव में विशेष कार्ययोजना के माध्यम से किसानों को जागरूक करेंगे तथा इसके प्रबंधन हेतु तकनीकी किसानों को उपलब्ध करवाएंगे। अतः किसानों को कृषि एवं किसान कल्याण विभाग, हरियाणा द्वारा व कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा फसल अवशेष प्रबंधन हेतु चलाई जा रही योजनाओं का भरपूर लाभ उठाना चाहिए और फसलों के अवशेष जलाने से बचना चाहिए।

किसान भाई उपरोक्त वर्णित कृषि यंत्रों का प्रयोग करके अपने फसल अवशेषों को मिट्टी में दबायें। इससे जहाँ खेतों की उर्वरता बढ़ेगी वहीं फसल पर आने वाली लागत भी कम होगी और साथ ही साथ वातावरण को प्रदूषित होने से भी बचाया जा सकेगा।



# कृषि बायोमास का ऊर्जा संवर्धन में उपयोग

बिमलेन्द्र कुमारी

कृषि वानिकी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बायोमास एक ऐसा पदार्थ है जो कि विभिन्न पेड़-पौधों से प्रकाश संश्लेषण द्वारा तैयार होता है। वृक्षों की लकड़ी, सभी प्रकार के पौधों के न उपयोग होने वाले अवशेष, लकड़ी उद्योग के अवशेष, उद्योगों के जैविक अवशेष व दूसरे मानव व पशु अवशेष इत्यादि सभी को बायोमास कहा जाता है। इस बायोमास में उपलब्ध ऊर्जा को बायोमास ऊर्जा कहा जाता है। इस प्रकार की बायोमास ऊर्जा को रूपांतरण द्वारा स्वच्छ ऊर्जा में बदलकर विभिन्न प्रकार से उपयोग में लाया जा सकता है।

## बायोमास रूपांतरण विधियाँ :

1. **सामान्य दहन :** इस विधि द्वारा बायोमास जला कर गैस बनाई जाती है। इस प्रकार विद्युत ऊर्जा व ऊष्ण ऊर्जा पैदा की जाती है। इस प्रकार बायोमास ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदलकर 30 प्रतिशत के लगभग क्षमता (efficiency) प्राप्त होती है। यदि ऊष्ण ऊर्जा का भी उपयोग किया जाए तो क्षमता 85 प्रतिशत तक हो जाती है।

2. **जैव रासायनिक दहन :** बिना ऑक्सीजन के पाचन द्वारा स्वच्छ ऊर्जा का उत्पादन बायोगैस के रूप में होता है। इसे गैस ईंधन द्वारा ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है।

फसल व अन्य अवशेषों द्वारा तरल ईंधन भी प्राप्त किये जाते हैं जैसे सेल्यूलोसिक इथानॉल; जो पेट्रोलियम आधारित ईंधन का विकल्प है।

## बायोमास अवशेष के प्रकार :

1. **वनों व वृक्षों से प्राप्त अतिरिक्त लकड़ी :** पेड़ों से प्राप्त अतिरिक्त लकड़ी का उपयोग ऊर्जा बदलाव के लिए किया जा सकता है। इसके साथ-साथ लकड़ी संबंधित कारखानों से प्राप्त होने वाले लकड़ी के टुकड़ों व बुरादे का उपयोग भी हो सकता है उदाहरणतः प्लाई, फर्नीचर व अन्य औद्योगिक लकड़ी अपशिष्ट इत्यादि। प्रायः एक टन लकड़ी का फर्नीचर बनाने पर लगभग 45 प्रतिशत लकड़ी अपशिष्ट पैदा होता है व आरे पर चिराई के समय लगभग 50 प्रतिशत लकड़ी अपशिष्ट पैदा होता है।

इस प्रकार से लकड़ी संबंधित व्यवसायों से प्राप्त होने वाली व्यर्थ अपशिष्ट लकड़ी की मात्रा बहुत अधिक होती है, जिसे रूपांतरित की हुई ऊष्मा व तरल ईंधन के रूप में एवं बिजली उत्पादन में प्रयोग किया जा सकता है। यदि इन अवशेषों को जलाने के लिए या वातावरण में ही नष्ट होने के लिए छोड़ दिया जाता है तो यह वातावरण को दूषित व प्रदूषित ही करते हैं साथ ही साथ एक अमूल्य बायोमास संसाधन का दुरुपयोग भी होता है।

2. **अन्य स्रोतों से जैविक अवशेष :** इस श्रेणी में अन्य जैविक व्यर्थ आते हैं, जो विभिन्न पशु-प्राणियों के अवशेष इत्यादि हैं, जिनका प्रयोग भी ऊष्मा रूपांतरण द्वारा मानव की विभिन्न ऊर्जा संबंधित जरूरतों को पूरा करने में किया जा सकता है अन्यथा यह वातावरण को प्रदूषित ही करते हैं।

3. **कृषि फसल आधारित :** इसमें हर प्रकार के कृषि अपशिष्ट, जिसमें फसलों का बचा हुआ भूसा, फसलों के तने, पत्ते, छाल इत्यादि सभी प्रयोग में लाए जा सकते हैं। विश्व में प्रत्येक वर्ष अनुमान से अधिक मात्रा में फसल उत्पादित व्यर्थ सामग्री उत्पन्न होती है।

भारत जैसे प्रगतिशील देश में किसान इस अपार ऊर्जा स्रोत को अज्ञानता व संसाधनों के अभाव में व्यर्थ कर देते हैं। इतना ही नहीं, इस अमूल्य पदार्थ को खेतों पर ही जला दिया जाता है जिससे पर्यावरण को इतनी क्षति पहुंचती है कि उसका अनुमान लगाना भी कठिन है। धुएँ व कार्बनडाईऑक्साइड गैसों के कारण पर्यावरण दूषित होने से मानव व जीव-जन्तुओं के लिए विभिन्न प्रकार की श्वास व त्वचा सम्बन्धी समस्याएं पैदा होती हैं। पिछले कुछ समय से कृषि बायोमास जलाने की प्रथा बहुत बढ़ गई है, जिसके कारण फसल कटाई उपरांत देश के उत्तरी-पश्चिमी मैदानी भागों में धुएँ की परत इतनी गहरी हो जाती है कि साँस लेना भी कठिन हो जाता है, दृश्यता इतनी कम हो जाती है कि सड़क व यातायात के साधनों पर गंभीर असर होता है, साथ ही इससे विमानों का आवागमन भी प्रभावित होता है। इस प्रकार से प्रदूषित वातावरण में छाया हुआ धुआं ही अधिकतर दुर्घटनाओं का कारण भी बनता है।

यदि कृषि अवशेष अथवा बायोमास का उपयोग ऊर्जा संवर्धन में किया जाए तो वातावरण में बढ़ने वाली सेल्यूलोसिक गैस कम होती है व इससे ऊष्मा एवं बिजली उत्पादन भी किया जा सकता है जिसे मानव की विभिन्न ऊर्जा संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने में उपयोग किया जा सकता है जिससे स्वच्छ ऊर्जा के बढ़ाने के साथ हम जीवाश्म कोयला इत्यादि की खपत को भी नियंत्रित कर पाएंगे।

कृषि बायोमास ऋतु अनुसार प्राप्त होता है एवं इसका घनत्व कम होने के कारण ज्वलनशीलता अधिक होती है व समय भी कम लगता है। अतः इसका उपयोग तरल ईंधन बनाने में भी किया जा सकता है और इससे बिजली व ऊष्मा भी पैदा की जा सकती है।

जिन भागों में धान की फसल लगाई जाती है वहां पर धान के बायो अवशेष (पराली) अधिकाधिक मात्रा में उत्पन्न होते हैं व इसके अतिरिक्त धान से चावल निकालने के पश्चात छिलका भी अत्यधिक मात्रा में उत्पन्न होने वाला बायोमास है। इन सभी का उपयोग बायोमास बदलने के तहत ऊर्जा उत्पादन में किया जा सकता है।

कृषि बायोमास एक अक्षय प्रकार का बायो व्यर्थ अथवा बायोअवशेष है जिसका उत्पादन हर वर्ष लगातार भारी मात्रा में होना निश्चित है क्योंकि निरन्तर विभिन्न फसलों का रोपण व उपज लेना हमारी बढ़ती हुई आबादी का भरण-पोषण करने के लिए आवश्यक है।

ऊर्जा संवर्धन व परिवर्तन में कृषि बायोमास अथवा बायो अवशेषों के उपयोग में लाने संबंधित कुछ लघु इकाइयां विकसित करने की आवश्यकता है। किसानों को इस संबंध में जागरूक करना भी उतना ही आवश्यक है, जिससे किसान न केवल अपनी आय बढ़ाएंगे बल्कि पर्यावरण को स्वच्छ रखते हुए स्वच्छ ऊर्जा के उत्पादन में भी भागीदार बनेंगे।



(पृष्ठ 21 का शेष)

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए कस्टम हायरिंग सेंटर (CHC) एक बहुत अच्छा विकल्प है जिसमें किसान समूह, सोसायटीज़, अकेला प्रगतिशील किसान, सरकारी, अर्ध सरकारी व अन्य संस्थान अपना खुद का सेंटर खोल सकता है व दूसरे किसानों को किराये पर ये मशीनें उपलब्ध करा सकता है। इससे उन्हें रोज़गार भी मिल जाएगा व कमाई भी हो जाएगी। कस्टम हायरिंग सेंटर (CHC) खोलने के लिए भारत सरकार ने खेत में ही पराली का समाधान करने वाली मशीनों पर 80 प्रतिशत सबसीडी पास कर रखी है व साथ के साथ अन्य मशीनों पर भी 40 प्रतिशत सबसीडी पास की है ताकि ये सेंटर पूरे साल काम कर सकें। इस प्रकार हम कस्टम हायरिंग सेंटर (CHC) की मदद से मशीनों द्वारा पराली का उचित प्रबन्धन कर सकते हैं जिससे हमारी ज़मीन की उर्वरा शक्ति भी बढ़ेगी, हमारी लागत भी कम होगी, पैदावार भी ज़्यादा होगी, रोज़गार भी मिलेंगे व हमारा वातावरण भी ठीक रहेगा।



(पृष्ठ 21 का शेष)

7. धुएँ की वजह से आँखों में जलन व धुंधलापन व सांस के रोगियों को सांस लेने में दिक्कत का भी सामना करना पड़ता है।

#### यह भी जानिये

एक टन कचरा (फसल अवशेष) जलाने से 13.0 कि.ग्रा. धूल के कण, 92 कि.ग्रा. कार्बन मोनोऑक्साइड (1513 कि.ग्रा. कार्बन डाईऑक्साइड, 3.83 कि.ग्रा. नाइट्रस-ऑक्साइड, 0.40 कि.ग्रा. सल्फर डाईऑक्साइड तथा 2.70 किलोग्राम मिथेन गैस का उत्सर्जन होता है। फसल अवशेषों को तीन से चार साल लगातार मिलाने से 1600 किलोग्राम जैविक कार्बन, 20-30 कि.ग्रा. नत्रजन, 4-7 कि.ग्रा. फास्फोरस, 60-100 कि.ग्रा. पोटाश, 4-6 कि.ग्रा. सल्फर के अलावा कई तरह के सूक्ष्म तत्व व लाभदायक जीवाणुओं को बढ़ावा मिलता है जिनका मूल्य 1000-2000 रु. प्रति हैक्टेयर आंका गया है। इसके साथ-साथ अवशेष मिलाने से अगली फसल में एक सिंचाई की भी बचत होती है (बिजली रु. 450/है. मजदूर रु. 300/है.)। वैज्ञानिकों ने यह तक पाया है कि गेहूँ में फूल व दाना बनने के समय यदि 1.0 डिग्री सेंल्सियस तापमान में वृद्धि होती है तो देश में गेहूँ की पैदावार 4.5 मीट्रिक टन तक कम हो सकती है। इसलिए हमें पर्यावरण में बढ़ रहे तापमान के हर एक पहलू को गंभीरता से लेना होगा तथा समुचित प्रबन्ध करने होंगे।

“ऐ मेरे किसान भाईयो”

मत जलाओ फसल अवशेष

ज़मीन में रह गया है थोड़ा जीवांश शेष

अवशेष जलाने से ज़मीन की उपजाऊपन को पहुँचती है ठेस

यही है हम सब वैज्ञानिकों की अर्ज़ी विशेष

मत जलाओ फसल अवशेष।

मत जलाओ फसल अवशेष।”



## Crop Residues Burning: Its Impact and in-Situ Management

✍ Meenakshi Sangwan<sup>1</sup>, V. S. Hooda and Navish Kumar

Department of Agronomy

CCS Haryana Agricultural University, Hisar

The practice of burning of crop residues has been quite rampant in India. As the harvesting of crops is done, a significant leftover part of the crop plant still remains in the field. Thus, the management of crop residue remains a major activity in post-harvest preparation of field for next crop cycle and burning of the crop residue is a common method of the same.

**Why burning :** The major reason behind the practice of burning is the philosophy of treating the residue, as the name indicates, a waste. Different studies suggest that a huge volume of rice and wheat crop residue is being produced in the agricultural practices, which is the major contributor in the total stubble load in India. These studies also point out that around two-third to three-fourth of the residue is being burnt in the case of paddy, mainly because of less number of available economical alternate options to the farmers. After the harvesting of rice, there is very less time for land preparation before the sowing of wheat. Thus, farmers choose to burn the residue to ensure timely sowing of next crop. It has also been pointed out by the farmers that sowing of wheat in left over stubble results in less germination of crop. There is a possibility of reduced crop yield in case the rice residue is incorporated in the soil without giving sufficient time before sowing of the wheat crop, because of immobilization of inorganic nitrogen and its adverse effect due to nitrogen deficiency. As per estimates, 80% of the paddy harvest is harvested by using combined harvester and in most of the cases remaining stubbles are burnt in open fields. In other words it can be said that the burning is preferred by farmers over other alternates available to them.

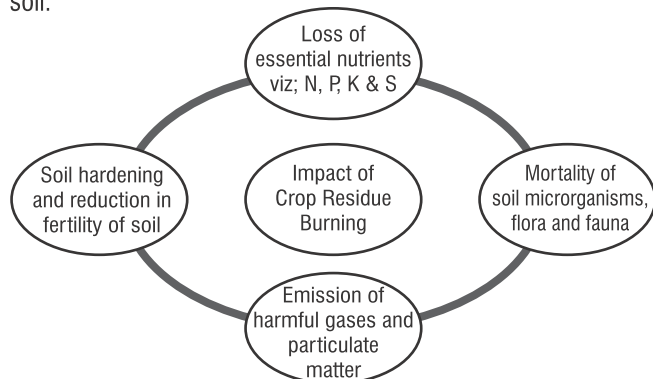
**Impacts of Burning :** Open field burning of crop stubble results in the emission of many harmful gases in the atmosphere, like CO, CO<sub>2</sub>, N<sub>2</sub>O, NO<sub>2</sub>, SO<sub>2</sub>, CH<sub>4</sub> along with particulate matter and hydrocarbons. These gases have adverse implications not only on the atmosphere but also on human and animal health. These air pollutants have toxicological properties and are potential carcinogens. Furthermore, the release of carbon dioxide in the atmosphere due to crop stubble burning results in green house effect. The smoke fumes contain particulates of partially combusted materials as soot, which become airborne and are transported downwind, especially during winters when inversion sets in.

The burning of crop stubble in open fields has adverse impact on the fertility of the soil, eroding the amount of nutrients present in the soil. Burning also kills soil microorganism, flora and fauna

<sup>1</sup>Krishi Vigyan Kendra, Rohtak-124 001



due to high temperature. Burning and removal of one tonne residue from field resulted in loss of 400 kg of organic carbon, (5.5 kg N, 2.3 kg P, 25 kg K and 1.2 kg S). Thus, even the occasional burning has serious implication on the carbon component of the soil.



Flow diagram of Impact of crop residue burning

**In-situ Management :** About 25 % of nitrogen (N) and phosphorus (P), 50 % of sulphur (S) and 75 % of potassium (K) uptake by cereal crops are retained in crop residues, making them valuable nutrient sources and not a waste. However, less than 1 % of the farmers incorporate crop stubble because of more tillage operations required in case of incorporation than burning of stubbles. Though the crop stubble has various alternate uses, but the best alternative available to burning of rice residue is in-situ incorporation. But the in-situ incorporation is less preferred by farmers as the stubble takes time to decompose in the soil that may adversely affect the wheat productivity because of less time available for wheat sowing after harvesting of paddy. Contrary to the practice, the incorporation of rice stubble in the soil has favourable impact on the soil's physical, chemical and biological properties such as pH, organic carbon, water holding capacity and bulk density of the soil. Furthermore, the losses suffered by the soil and the farm ecology due to burning are avoided when the incorporation is performed.

There are various options of machineries which are available to the farmers that can be used for the process of in-situ incorporation of stubble, for example :

- ▶ Sowing of wheat with Happy Seeder without tillage operations
- ▶ Cutting of residue in soil with the help of Chopper/Mulcher and incorporation of residue in soil with Rotavator and Reversible Mould Board Plough.

In few studies, it was found that wheat yield lowered in the first 1–3 years when the rice stubble was incorporated in the soil 30 days prior to sowing of wheat crop, mainly because of the immobilization of soil nitrogen in the presence of crop residues with wide C/N ratio. However, in the subsequent years rice stubble incorporation did not affect wheat crop yield, but had a positive impact on the soil health of the field.

(Cont. page 31)

## Crop Residue Management in Paddy

✍ N.K. Goyal, M.S. Grewal<sup>1</sup> and B.R. Kamboj

KVK, Yamunanagar

CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Paddy residue burning has been viewed mainly as a challenge of residue management. Its mismanagement in the states of Punjab and Haryana has led to annual winter smog and health problems in Delhi and other places in North India. However, this pervasive practice, which adversely affects soil health too, is also borne of the kind of agricultural development the Western Indo-Gangetic Plains have undergone.

The mainstreaming of industrialised agriculture has resulted in massive expansion of the practice of growing only paddy and wheat crops in the region, in rotation. The introduction of a hybrid variety facilitated paddy cultivation in the *kharif* season, April sowing and October/November harvest. Further, tubewell irrigation provided unrestricted water supply and growing labour shortages and costs led to the widespread adoption of combine harvesters that automated paddy harvest.

However, mechanised harvesting results in large volumes of stubble and straw left in the field. Furthermore, the need for timely sowing of the subsequent wheat crop leaves too short a window (around 15-20 days) for farmers to manually cut the stubble and prepare the field for wheat sowing. Labour shortages also make the process uneconomical. Farmers thus set their fields alight as they see it as the fastest and most cost-effective method to clear the residue as compared to other proposed alternatives. Punjab and Haryana today burn amongst the highest volumes of crop residue in the country—close to 20 and 10 million tonnes, respectively.

### Alternatives and Challenges

The main approach in reducing paddy residue burning has been to seek alternatives for residue utilization and management both on and off the field. Meanwhile, although not specifically targeted towards the residue burning problem, a move away from intensive paddy monocropping is being promoted through a crop diversification initiative. There is also some indication that some newly introduced paddy varieties that take lesser time to grow can extend the interval between paddy harvest and wheat sowing season.

### Paddy Residue Management

Unlike wheat residue, rice straw cannot be utilised as fodder in the region. Leaving the residue on the field isn't viable for farmers as it takes too long to degrade and can also transmit crop diseases that may have occurred during the preceding paddy season. Mulching the residue in soil is known to cause problems in early wheat cultivation. It is also difficult since the combine

<sup>1</sup>Faculty Consultant (Soil Sci.), Directorate of Extension Education

harvester does not spread the straw evenly over the field. The Straw Management System - now a mandatory fixture on harvesters - that is said to make mulching a more viable option is yet to be widely adopted by farmers as it entails fuel and other expenses. On the other hand, while sowing wheat in the midst of the stubble using a machine called Happy Seeder is possible, it has not been adopted widely due to technical issues in operations, unavailability of machines and price issues.

There are also off field end-use options for paddy residue including biomass to energy, mushroom production, cardboard/paper making, etc. However, challenges in existing technology, gaps in supply chains and an absence of markets has prevented paddy residue from acquiring economic value such that farmers are motivated to invest time and resources in residue collection and other stakeholders (including entrepreneurs) are incentivised to invest in these options. The volumes of paddy residue that can be utilised currently by these alternatives is a fraction of what is actually being generated. The high bulk density and moisture content of paddy residue also necessitates adequate storage facilities.

### **Crop Diversification**

A move away from paddy cultivation has been initiated by State and Central Governments in the Green Revolution belt as a way to tackle groundwater scarcity and stagnating yields. A centrally sponsored scheme introduced in 2013-14 aimed to diversify a minimum five per cent of the area under paddy to more locally suited crops (e.g. maize, millets and oilseeds) in selected districts. However, despite various provisions under this scheme (cluster demonstrations, awareness trainings, subsidies for farm machinery, etc.), most farmers have not found it remunerative to diversify from paddy cultivation to other *kharif* crops. The prevalent market support and yield advantages paddy enjoys in contrast to other options for *kharif* cultivation have impeded the successful translation of the policy objectives of crop diversification to results on the fields.

### **Development of shorter duration Paddy Varieties**

Shorter duration paddy varieties have been developed by research organizations to lower water consumption in paddy cultivation in the Western Indo-Gangetic Plains. Although the conventional varieties (those that take 160 days to mature) still continue to be cultivated for their ability to deliver higher yields, varieties that can mature between 135-145 days, are being increasingly adopted. In 2016, a new variety with a maturing time of 125 days, was introduced by the Punjab Agricultural University (PAU) with yield proficiency that is only slightly lower than previously developed varieties. For this reason, there is some speculation on whether. The adoption of such varieties could increase the window available between paddy harvest and wheat sowing, giving farmers time to clear the fields and reduce residue burning. However, its effectiveness will need further investigation and greater policy attention.

### **Options for a Way Forward**

Reducing paddy residue burning will necessitate an integrated approach that addresses biomass management and agriculture policy. On the residue management front, the options currently being explored include provision of subsidies and compensation for not burning, improved supply and leasing of agriculture implements (for harvest, mulching and wheat sowing); technology improvement and demonstration programmes and promotion of residue utilisation for energy generation. Although these are worthwhile options, there are several knowledge gaps that impede the development of an efficient residue management strategy. These would need to be addressed.

First, the range of practices for on-field and end-use options for paddy straw residue need to be investigated and documented.

Next, the cost benefit for farmers with regards to different residue management options needs to be investigated as does the techno-commercial feasibility of the various end use options for paddy residue utilisation. An understanding of the organization of supply chains (collection, storage, transport, pre-processing, conversion and use) and business models will be necessary. For this, dialogues with multi-stakeholders including farmers, aggregators, equipment manufacturers, suppliers, entrepreneurs, and others viz; agri-extension agencies, civil society organizations, R&D institutions would be needed. In parallel, an in-depth study of existing policy, institutional support and technological interventions will need to be undertaken. Together, this will shed light on the most appropriate options and opportunities for sustainable paddy residue management, the barriers in mainstreaming suitable mechanisms, existing trade-offs and synergies as well as the required incentives.

On the other hand, in relation to agriculture policy, a planned and systematic move away from paddy cultivation in the Green Revolution states - which can now be supported by other states, is indicated. Here the Crop Diversification Programme for the Western Indo-Gangetic belt needs a re-look to provide suitable incentives for farmers to pursue alternative crops. These are currently absent. Institutional gaps in research and development (developing viable package of practices, improving productivity), extension (capacity building of farmers and extension of personnel) as well as policy (appropriate market support and prices) and infrastructure (availability of farm equipment and storage) will need to be comprehensively addressed alongside policy inconsistencies to effectively deploy crop diversification in the region.

Additionally, the merits of the shorter duration paddy varieties to extend the time available for clearing fields before wheat sowing and thereby providing an incentive to reduce burning must be assessed – especially since farmers are still averse to diversification from paddy. However, there is no guarantee that they will gain enough from the potential extra time to motivate them to avoid residue burning since other technical, logistic and monetary challenges to residue management may still remain. Nonetheless, while adoption of shorter duration paddy varieties may not be a sufficient measure in itself, it might act as a positive

incentive alongside other appropriate institutional supports to avoid residue burning. However, it must be recognised that popularising adoption of shorter duration paddy varieties will mean a trade-off of crop diversification efforts for measures that seem more viable in the short term. Its widespread adoption also requires institutional support, sufficient seed production and availability of the 125 days variety, apart from awareness and sensitisation of farmers.

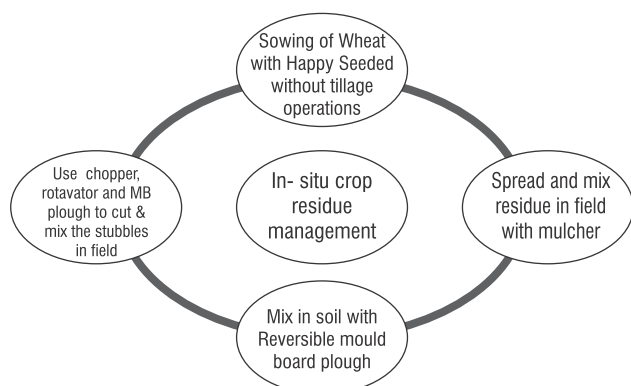
Nevertheless - whether it is crop diversification or cultivating shorter duration paddy varieties - it is vital that proposed interventions are assessed against the options of cropping systems that they present, rather than in isolation. Furthermore, the resource efficiency and suitability of the proposed interventions (and associated practices) with respect to the existing agro-climatic zones and socio-economic and cultural milieus of states would need to be considered before expansion efforts.

Although stubble burning is mainly viewed as an issue of residue management, the problem is more complex. It is a facet of the agrarian crisis that the region has been facing. A deeper solution lies in re-envisioning agriculture practices and development in the region and re-orienting agri-production towards more sustainable and locally appropriate systems.

An integrated assessment of the prevailing policy and institutional support and imperatives for crop residue management, bio-economy and clean energy, along with natural resource management and sustainable agriculture development would be essential. Farmers' concerns and constraints will have to be respected. Platforms for knowledge sharing between multiple stakeholders across the value chain would need to evolve and priorities and potential trade-offs would have to be made explicit. Such a comprehensive approach will be necessary to develop an effective strategy that facilitates sustainability in paddy residue management and agriculture development in the region.



(From page 29)



Flow diagram of In- Situ crop residue management



## Management of Paddy Straw through Composting

✍ Suman Chaudhary, Sneh Goyal and Jagdish Parsad

Department of Microbiology, COBS&H  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Paddy is a major crop grown for a large part of human population, especially in the Middle East and the West Indies, Latin America, East and South Asia. It is the grain with second highest worldwide production after maize. Paddy straw is a vegetative part of rice plant, which is a waste material after harvesting. India is the second largest producer of rice and more than 100 million tonnes of paddy straw is produced in India every year. In Haryana, about 6 million tonnes of paddy straw is produced annually and 63% of this is burnt which causes environmental and health problems. This agricultural waste may result in many problems to farmers as well as to the environment, if not handled properly. A major portion of this agricultural waste is subject to open field burning leading to many environmental problems due to emission of carbon monoxide, carbon dioxide, un-burnt carbon and other air pollutants.

Management of paddy straw through burning and direct incorporation in soil is harmful to the environment and plant growth. Management of paddy straw must be one in such a way that it minimizes the environmental pollution and problems associated with its land application. On the other hand, paddy straw consists of cellulose and hemicelluloses encrusted with lignin, making its C:N ratio high. This organic waste can be converted to valuable fertilizers through composting. Compost production and its agricultural use has become an attractive option of organic waste disposal.

The method of composting is an old one, but in recent years; progress has been made in understanding this biological process. Composting is a biological process mainly dependent on microbial break down of organic matter of waste materials into humus like product, removes pathogens and decreases the volume of waste upto 50 %. Composting recycles the important plant nutrients, such as N, P, K when applied to soil and subsequently improves soil fertility and health. Compost is nutrient rich stable organic matter having 40-50 % decreased volume than waste materials.

Composting process is affected by several factors, which are quality of waste, carbon to nitrogen ratio (C/N ratio), moisture content, pH, temperature, aeration and climatic conditions. Composting can be hastened by inoculation of beneficial microorganisms like bacteria, fungi and actinomycetes, playing an important role during different stages of degradation.

### Parameters for Quality Compost

#### C:N ratio

Carbon to nitrogen proportion (C:N ratio) is one of the most important factors of composting that helps to determine the extent



of composting and compost quality. It is recommended to maintain the initial C: N ratio around 40 in order to achieve good processed and stabilized compost. The reduction in C:N ratio of compost indicates conversion of waste organic materials into a readily usable product. C: N ratio of the ideal finished compost should be less than 20 and its application to soil improves the soil and plant health.

### Humic Substances

After the decomposition, organic waste is transformed into more stable and simple organic matter through a process known as humification. Humic substances are resistant to further biodegradation act as permanent source of energy for soil microorganisms.

Sometimes phytotoxic behaviour of compost is due to the insufficient biodegradation of organic matter and it should be analyzed before land application.

### Seed Germination

Application of unstable compost to the soil not only causes negative effects on seed germination, plant growth but also on soil fertility and health. The phytotoxicity of the mature compost and its evaluation is very important before land application. Percent germination above 80% is considered to be good and indicates stable and mature compost.

### Paddy straw can be managed through one of the following three methods :

1. It can be managed by direct incorporation to the soil, but it is associated with certain problems such as immobilization of plant nutrients particularly nitrogen and reduces germination of subsequent crop.
2. By burning; burning of paddy straw in three states i.e. Haryana, Punjab and U.P. is increasing, causing accidents and respiratory problems. The smoke that arises from the burning of paddy straw contains toxic substance, including particulate matter (PM)  $\geq 10 \mu\text{m}$ , CO<sub>2</sub>, CH<sub>4</sub>, CO and NO. Nationals Green Tribunal (NGT) is emphasizing three states i.e. Punjab, Haryana and U.P. not to burn, but earn by using paddy straw.
3. So, alternate option has to find out to solve this burning problem, which can be preparation of compost by using paddy straw alone or in combination with other agro industrial wastes. Composting can be prepared either by heap method or pit method (Figure A and B).

So, this high C:N ratio material (paddy straw) can be composted with urea solution or with low C:N ratio wastes such as distillery effluent, poultry manure, pressmud and water hyacinth, etc. in different ratios and it will result into a product having brown colour, with neutral pH and high humic substances within 70-80 days and have 12-14 kg nitrogen, 6-7 phosphorous and 19-22 kg potassium. It will not have any phytotoxic effect on the crop and its application @ 5t/ha with RDF on different agricultural crops will improve the plant growth and soil organic matter.

No doubt, the addition of chemical fertilizers improves crop



Figure (A) : Heap method



Figure (B) : Pit method

production, but its continuous use will decline the soil organic matter. When chemical fertilizers are applied along with FYM or compost, it improves soil organic matter and plant nutrients are released slowly due to mineralization and become available to crops. So, application of compost as a fertilizer to the soil, increases the plant growth and improves soil health. It also reduces use of inorganic fertilizer and crop production cost.



### आवश्यक सूचना

“हरियाणा खेती” मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें। - सह-निदेशक ( प्रकाशन )



# हरियाणा

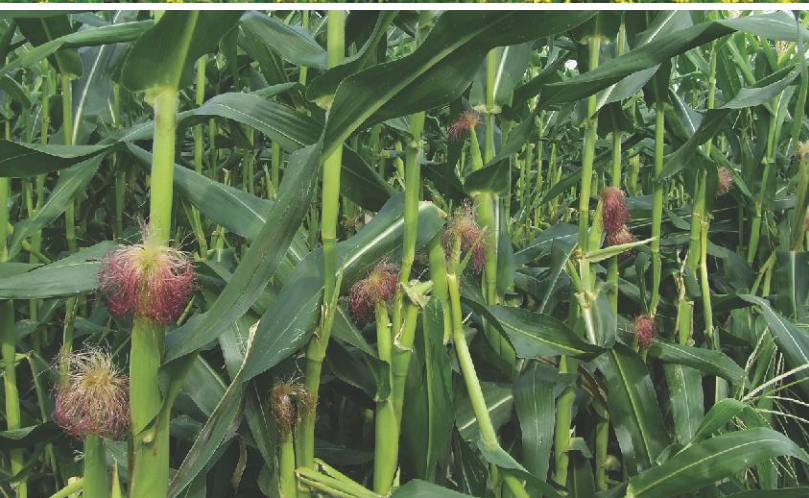


ISSN-0970-6518

# खेती

वर्ष 51

अंक 10



वार्षिक चंदा 150/-

अक्टूबर 2018

आजीवन सदस्यता 1500/-

**प्रकाशन अनुभाग**  
**विस्तार शिक्षा निदेशालय**  
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

# हरियाणा श्वेती

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. ( 2 ) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित  
© कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 51

अक्टूबर 2018

अंक 10

## इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
सरसों के मुख्य खरपतवार व उनका नियंत्रण	मीनाक्षी सांगवान, विरेंद्र सिंह हुड्डा एवं समुन्दर सिंह	2
सरसों में लगने वाले कीट व उनकी रोकथाम	रामकरण गौड़, विक्रम सिंह एवं अमरजीत	3
स्नान कराते समय बच्चे को सुरक्षित रखें : कैसे	पूनम रानी एवं बिमला ढाण्डा	4
स्वीट कॉर्न : वैज्ञानिक विधि से खेती	जे.के. नान्दल, धर्मेन्द्र सिंह एवं परमिन्दर सिंह	5
आधुनिक कृषि यन्त्रों द्वारा फसल अवशेष प्रबंधन	प्रीति यादव, डी.एस. जाखड़ एवं एन.के.यादव	6
फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन : अवसर एवं चुनौतियां	विजय, हेमंत सैनी एवं सौरभ	7
गन्ना में खरपतवार की रोकथाम : कैसे	सतबीर पूनियां, धर्मवीर यादव एवं समुन्दर सिंह	9
संरक्षण तकनीकों द्वारा फसल उत्पादन	मीनाक्षी सांगवान, विरेन्द्र सिंह हुड्डा एवं मीना सुहाग	10
खेत में फसल अवशेषों का विघटन : किस प्रकार लाभदायक	सोनिया रानी, मनोज कुमार शर्मा एवं प्रीति यादव	12
फसल अवशेषों को जलाने के नुकसान एवं प्रबन्धन के उपाय	पवन कुमार, अमित कुमार एवं बी. एस. घणघस	21
फसल अवशेष प्रबन्धन के लिए ज़रूरी: कृषि यान्त्रिकी को बढ़ाना	कुलदीप सिंह, जोगेन्द्र सिंह एवं अनिल राठी	23
फसल अवशेष : प्रबंधन एवं प्रभाव	रोहतास कुमार, आर. एस. मलिक एवं हरेन्द्र कुमार यादव	24
बच्चों के सामाजिक विकास की अवस्था, व्यवहार एवं सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक	पूनम रानी एवं बिमला ढाण्डा	25
मेला ग्राउंड की कहानी : उसी की जुबानी	सुषमा आनन्द	28
Improved Cultivation Practices in Spinach (Palak)	Makhan Majoka, Shiwani and V.P.S. Panghal	28
The Importance of Soil Organic Matter for Soil Health	N. K. Goyal , Partap Sangwan and R.S.Malik	30
World Food Day	Praduman Bhatnagar, J. N. Bhatia and Prem Lata	32

## स्टाई स्तम्भ : नवम्बर मास के कृषि कार्य

13

तकनीकी सलाहकार	सह-निदेशक ( प्रकाशन )	संपादक
डॉ. आर. एस. हुड्डा	डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी	डॉ. सुषमा आनंद
निदेशक, विस्तार शिक्षा		सह-निदेशक ( हिन्दी )
संकलन		सुनीता सांगवान
डॉ. एम. एस. ग्रेवाल		सम्पादक ( अंग्रेजी )
परामर्शदाता ( मृदा विज्ञान )		प्रकाशन अनुभाग
विस्तार शिक्षा निदेशालय		आवरण एवं सज्जा
		राजेश कुमार

**लेखकों से अनुरोध :** हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। कृपया अपने विभाग का नाम अवश्य लिखें। टाईपिंग के लिए [कृति देव फोन्ट](mailto:haryanakhethihau@gmail.com) का ही प्रयोग करें। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं [haryanakhethihau@gmail.com](mailto:haryanakhethihau@gmail.com)



# सरसों के मुख्य खरपतवार व उनका नियंत्रण

❖ मीनाक्षी सांगवान<sup>1</sup>, विरेंद्र सिंह हुड्डा एवं समुन्दर सिंह

सस्य विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा प्रदेश में उगाई जाने वाली तिलहनी फसलों में सरसों एक महत्वपूर्ण फसल है। यह सिंचित और बारानी, दोनों ही क्षेत्रों में उगाई जा सकती है। पूरे भारत में सरसों के उत्पादन एवं उत्पादकता के हिसाब से हरियाणा प्रदेश का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। हमारे देश में सरसों के अंतर्गत आने वाली कुल कृषि योग्य भूमि का केवल 8-9 प्रतिशत भाग हरियाणा में है लेकिन देश के कुल उत्पादन में हरियाणा प्रदेश का योगदान लगभग 12-13 प्रतिशत है। पिछले कुछ वर्षों से सरसों की उत्पादकता की दृष्टि से हरियाणा अग्रणी राज्य रहा है। भारतवर्ष की अत्यधिक दर से बढ़ती जनसंख्या के लिए अधिक मात्रा में खाद्यान्नों का उत्पादन अति आवश्यक है ताकि हर आदमी को समुचित भोजन प्राप्त हो सके। इस समय कुल खाद्य तेल उत्पादन का लगभग एक तिहाई तेल सरसों द्वारा प्राप्त होता है। फसलों में होने वाले नुकसान में खरपतवारों का योगदान बहुत ज़्यादा है। एक सर्वेक्षण के अनुसार सरसों की पैदावार में खरपतवारों के कारण 20-70 प्रतिशत तक कमी आंकी गई है। खरपतवारों के कारण न केवल फसलों का उत्पादन कम होता है बल्कि उत्पादित फसल व बीज की गुणवत्ता भी कम हो जाती है। खरपतवार न केवल फसल को मिलने वाले पोषक तत्वों (नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश) को फसलों से चुरा लेते हैं बल्कि हमारी भूमि से पानी को भी अवशोषित कर लेते हैं। खरपतवार कीड़े व बीमारियों को बढ़ावा देते हैं। इसके अलावा सत्यानाशी नामक खरपतवार का बीज सरसों के बीज के साथ मिलकर तेल की गुणवत्ता में कमी कर देता है तथा विगत वर्षों में देखा गया है कि इसके खाने में प्रयोग से “ड्राप्सी” नामक जानलेवा बीमारी का प्रकोप होता है। अतः फसलों की सही पैदावार एवम् बीजों की गुणवत्ता के लिए खरपतवारों की रोकथाम अनिवार्य है।

**सरसों के मुख्य खरपतवार :** घास जाति वाले, जंगली जई, कनकी आदि या चौड़ी पत्ती वाले, प्याज़ी, सेंजी, बाथू, खड़ बाथू, जंगली पालक, जंगली धनिया, मैणा, चटरी, मटरी, हिरण खुरी, कृष्ण नील, कंडाई, सरसों की दूधी आदि सरसों के मुख्य खरपतवार हैं।

**एकीकृत खरपतवार प्रबंधन :** खरपतवार प्रबंधन तकनीकों का संयोजन, खरपतवारों को नियंत्रित करने में प्रभावी साबित हुआ है। खरपतवार प्रबंधन के विभिन्न तरीके :-

**निवारण :** इस तरीके में वे सभी क्रियाएं शामिल हैं जिसके द्वारा खरपतवारों के प्रवेश को रोका जा सकता है। जैसे प्रमाणित बीजों का प्रयोग, गली-सड़ी गोबर की खाद का प्रयोग, सिंचाई की नालियों की सफाई, खेत की तैयारी और बुवाई के प्रयोग किए जाने वाले यंत्रों का प्रयोग से पूर्व अच्छी तरह से सफाई आदि।

**यांत्रिक तरीके :** निराई-गुड़ाई करके खरपतवारों को नष्ट करने का तरीका सदियों पुराना है व आज भी कारगर है। खुरपा, कस्सी, कसोले, व्हील हैण्ड हो व हाथ से खरपतवारों को आसानी से नष्ट किया जा सकता है। चौड़ी कतार वाली फसलों में कल्टिवेटर चलाकर भी खरपतवारों को नष्ट किया जा सकता है। निराई-गुड़ाई से न केवल खरपतवारों का नियंत्रण होता है बल्कि पौधों की जड़ों को हवा भी मिलती है व खेत में नमी का संरक्षण भी होता है जो अधिक पैदावार में सहायक है। सरसों में दो गोड़ाइयां बिजाई के तीन व पांच सप्ताह बाद अवश्य करें। लेकिन निराई-गुड़ाई हर जगह सम्भव नहीं है। समय पर मजदूर न मिलना, मजदूरी की अधिक लागत, खेत की अवस्था व बारिश के मौसम में निराई-गुड़ाई सम्भव नहीं है। अक्सर खरपतवार फसल से पहले उग जाते हैं व फसल के अन्दर एक से अधिक बार उगने व अलग-अलग खरपतवारों के कारण निराई-गुड़ाई कई बार करनी पड़ती है जो हर जगह सम्भव नहीं है व उत्पादक लागत को बढ़ा देती है, ऐसी अवस्था में खरपतवारनाशकों का प्रयोग कर खरपतवारों पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

**रासायनिक प्रबंधन :** प्रयोगों में पाया गया है कि खरपतवारनाशक पेंडीमेथालीन (स्टॉम्प 30 ई. सी.) की 1.25 से 1.5 लीटर मात्रा/एकड़ का फसल बिजाई के तुरन्त बाद इस्तेमाल करने से बहुत सारे खरपतवारों का नियन्त्रण हो जाता है। खरपतवारनाशक पेंडीमेथालीन का छिड़काव करते समय खेत में उपयुक्त नमी का होना बहुत ज़रूरी है। प्रयोगों में ये भी पाया गया है कि सरसों में घास जाति वाले खरपतवारों को आइसोप्रोटुरोन या प्यूमा पावर या टोपिक खरपतवारनाशक का बिजाई के 30-35 दिन बाद छिड़काव करके नियंत्रित किया जा सकता है।

ज़्यादातर तिलहनी फसलें वर्षा पर निर्भर करती हैं तथा अधिकतर वर्षा की दबी हुई नमी में खासकर रबी मौसम में बीजी जाती हैं। अतः ऐसी स्थिति में खेत की ऊपरी सतह सूखी रहती है इसलिए ज़मीन पर डाली जाने वाली खरपतवारनाशक रसायन की सिफरिश नहीं की जाती क्योंकि सूखी ज़मीन में इन दवाओं का असर खरपतवार नियंत्रण पर असरदार नहीं पाया गया है। ऐसी अवस्था में खरपतवारनाशक पेंडीमेथालीन की ऊपर दी गई मात्रा को बिजाई से 7-10 दिन पहले डाल करके मिट्टी में मिलाने (पी.पी. आई) से भी बहुत सारे खरपतवारों का नियन्त्रण हो जाता है। जहां तक सम्भव हो सके, निराई-गुड़ाई का तरीका ही अपनाएं। इस विधि/तरीके को अपनाने से बीज की गुणवत्ता बढ़ती है, साथ-साथ फसल की पैदावार भी अच्छी होती है।

**सरसों में मरगोजा (ओरोबैंकी) खरपतवार: समस्या, उपचार एवं सावधानियां :** मरगोजा (ओरोबैंकी) एक ऐसा नुकसानदायक जड़ परजीवी खरपतवार है जो सरसों की खेती के लिये एक भयंकर समस्या बन चुका है। साधारणतया मरगोजा खरपतवार की समस्या उन क्षेत्रों में केन्द्रित है जहां पर सरसों की खेती हल्की रेतीली बालू मिट्टी वाली ज़मीन, जिसमें पानी को पकड़े रखने की क्षमता अपेक्षाकृत कम एवं सिंचाई व्यवस्था मुख्यतः वर्षा आधारित एवं फव्वारा सिस्टम पर निर्भर है। दक्षिणी हरियाणा विशेषकर लोहारू, भिवानी, तोशाम, सतनाली, ढिगावा, बाढ़डा,

<sup>1</sup>कृषि विज्ञान केन्द्र, रोहतक, चौ.च.सिंह.कृ.वि., हिसार।

दादरी, नारनौल, रेवाड़ी एवं उसके आसपास के क्षेत्रों में इसका अत्यधिक प्रकोप देखा गया है। स्थानीय भाषाओं में मरगोजा, रूखड़ी, सरसों का मामा, खुंबी, गुल्ली आदि नामों से भी जाना जाता है।

मरगोजा खरपतवार एक वार्षिक पौधा है जिसका प्रसार बीज द्वारा ही होता है। इसके बीज बहुत ही सूक्ष्म, अण्डाकार, गहरे भूरे-काले रंग के होते हैं जिन्हें नंगी आंखों से देख पाना मुश्किल है। इसकी बीज उत्पादन एवं अंकुरण क्षमता बहुत ही जबरदस्त है। इसका अन्दाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि इसका एक पौधा लगभग 1-2 लाख बीज बनाने की क्षमता रखता है तथा भूमि में सामान्यतः 10-15 साल पड़े रहने के बावजूद इसका बीज पुनः उग सकता है।

आमतौर पर यह देखा गया है कि मरगोजा खरपतवार जनवरी महीने के आखिर तक ज़मीन के अन्दर रहकर ही सरसों की फसल को नुकसान पहुंचाता रहता है और फरवरी माह में उचित तापमान मिलने पर 7-10 दिन बाद फूल आ जाते हैं और फूल आने के 7-8 दिन बाद बीज बनने शुरू हो जाते हैं। सरसों की फसल पकने से पहले ही इसके बीज पक कर खेत में झड़ जाते हैं। कभी-कभी अगेती बोई गई फसल में बिजाई के 45-60 दिन बाद भी इसका पौधा दिखाई पड़ता है। दूसरे गैर-परजीवी खरपतवारों की अपेक्षा, सरसों में मरगोजा खरपतवार का नियन्त्रण करने में काफी मुसीबतों का सामना करना पड़ता है। अपने पूरे जीवनचक्र में काफी समय तक भूमिगत रहने, सरसों के पौधे की जड़ों से जुड़कर पानी, पोषक तत्वों एवं प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया की आपूर्ति करना, अद्भुत बीज प्रसार, अंकुरण एवं उत्पादन क्षमता के कारण परम्परागत खरपतवार नियन्त्रण के तरीके लगभग नाकामी साबित हुए हैं। इसके अतिरिक्त जब तक इस परजीवी खरपतवार का पौधा ज़मीन के ऊपर दिखाई देता है, सरसों की फसल को लगभग सारा नुकसान पहुंचा चुका होता है। इसलिए हमें ऐसी खरपतवारनाशक विधि की आवश्यकता है जो कि सरसों की फसल व पौधों को बिना नुकसान पहुंचाए इससे जुड़े परजीवी खरपतवार को नियन्त्रित कर सके।

पिछले 14 साल से हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार के वैज्ञानिक सरसों में मरगोजा से होने वाली हानियों व इसकी रोकथाम के उपायों पर शोधकार्य कर रहे हैं। तजुर्बों के आधार पर यह पाया गया है कि जिस दवाई से मरगोजा का नियन्त्रण किया जा सकता है अगर उस दवाई का सही समय पर और सही मात्रा में उपयोग न किया जाये तो इससे सरसों की फसल को भी नुकसान होने की संभावना बनी रहती है। शोधकार्य से यह निष्कर्ष निकला कि ग्लाइफोसेट खरपतवारनाशक की 25 मि.ली. मात्रा प्रति एकड़ बिजाई के 30 दिन बाद व 50 मि.ली. मात्रा प्रति एकड़ बिजाई के 55-60 दिन बाद 125-150 लीटर पानी में छिड़काव करने से मरगोजा का 60-90 प्रतिशत तक नियन्त्रण होता है। ध्यान रखें कि छिड़काव के समय या बाद में खेत में नमी का होना ज़रूरी है इसके लिए छिड़काव से 2-3 दिन पहले या बाद में सिंचाई अवश्य करें। सुबह के समय जब पत्तों पर ओस व नमी बनी होती है तब भी छिड़काव न करें एवं दूसरा छिड़काव करते समय ध्यान रखें की स्प्रे फूलों पर न गिरे।



## सरसों में लगने वाले कीट व उनकी रोकथाम

✍ रामकरण गौड़, विक्रम सिंह एवं अमरजीत

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत एक कृषि प्रधान देश है। भारत की लगभग 55 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर आधारित है। सरसों रबी में उगाई जाने वाली फसलों में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। सरसों वर्गीय फसलों के अंतर्गत तोरिया, राया, तारामीरा, भूरी व पीली सरसों आती है। भारत में सरसों वर्गीय फसलों के अन्तर्गत लगभग 67 लाख हैक्टेयर क्षेत्रफल तथा उत्पादन लगभग 64 लाख टन वर्ष 2017-18 में आंका गया। विभिन्न राज्यों में विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं। हरियाणा में सरसों का मुख्य क्षेत्रफल रेवाड़ी, महेन्द्रगढ़, हिसार, सिरसा, भिवानी व मेवात जिलों के अन्तर्गत आता है। भारत की बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए खाद्यान्न की पूर्ति करना एक बड़ी बात है। किसान भाई सरसों उगाकर अच्छा लाभ कमा रहे हैं। अगेती सरसों में चित्तकबरा कीड़ा (धोलिया) अधिक हानि पहुंचाता है तथा पछेती सरसों में चेपा का अधिक प्रकोप रहता है। अतः इन फसलों की तापक्रम व मौसम की अनुकूल परिस्थिति को ध्यान में रखकर बिजाई करनी पड़ती है। सरसों के कीटों को किसान भाई अच्छी तरह पहचान कर उनका आसानी से नियन्त्रण कर सकते हैं।

**चित्तकबरा कीट या धोलिया :** यह सरसों का मुख्य कीट है। इस कीट के शिशु व प्रौढ़ पौधों से रस चूसकर नुकसान पहुंचाते हैं। इसके शिशु व प्रौढ़ अण्डाकार होते हैं जिनके उदर पर काले भूरे धब्बे होते हैं। यह पौधों के विभिन्न भागों में रस चूसकर नुकसान पहुंचाते हैं। जिसके कारण पत्तियों पर सफेद धब्बे बन जाते हैं। इस कारण इस कीट को धोलिया भी कहते हैं। इस कीट का आक्रमण अधिक होने पर पौधे सूख जाते हैं। कीट का प्रकोप फसल की प्रारंभिक अवस्था व कटाई के समय अधिक होता है। यह कीट मार्च से अक्टूबर तक सक्रिय रहता है। अधिक सर्दी में वयस्क अवस्था में निष्क्रिय रहता है।

**रोकथाम :** इस कीट का आक्रमण फसल उगने के समय होने पर 200 मि.ली. तथा फसल कटाई के समय होने पर 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200 व 400 लीटर पानी प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

**सरसों की आरा मक्खी :** यह हाइमेनोप्टेरा वर्ग का एक मात्र, हानिकारक कीट है जो फसल को नुकसान पहुंचाता है। इस कीट की गहरे रंग की सूण्डी पत्तियों में छेद करके तथा नई प्ररोह को काटकर हानि पहुंचाती है। इसकी सूण्डी दिन के समय छिपी रहती है। छेड़ने पर ऐसा प्रतीत होता है जैसे मरी पड़ी है। इसके उदर के ऊपरी भाग पर पांच काले रंग की पट्टियां होती हैं।

**सरसों का माहू/चेपा/अल :** इस कीट के शिशु प्रौढ़ समूह में रहकर पौधों के विभिन्न भागों में रस चूसकर हानि पहुंचाते हैं जिससे फलियां व तना चिपचपा हो जाता है। फलियों में दाने नहीं बन पाते हैं और दाने बनते भी हैं तो कमजोर बनते हैं। यह कीट हल्के हरे रंग का होता है। जो कभी पंख

रहित व कभी पंख सहित होता है जो फरवरी-मार्च माह में उड़ते दिखते हैं। इस कीट की संख्या दिसम्बर से मार्च माह तक प्रचुर मात्रा में होती है। कीट बिना निषेचन ही सीधे शिशु पैदा करते हैं।

#### रोकथाम

1. फसल की बिजाई ज़्यादा देर से न करें।
2. आक्रमण शुरू होने पर कीटग्रस्त टहनियों को तोड़कर नष्ट कर दें।
3. कीट का आर्थिक स्तर (ETL), 10 प्रतिशत पुष्पित पौधों पर 9-19 कीट या औसतन 13 कीट प्रति पौधा होने पर निम्न कीटनाशकों का छिड़काव करें।

250 से 400 मि.ली. ( मिथाइल डेमेटान मेटासिस्टॉक्स) 25 ई.सी. या डाइमेथोएट (रोगोर) 30 ई.सी. को 250 से 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। आवश्यकता पड़ने पर दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद करें।

**सुरंग बनाने वाली सूण्डी :** इस कीट की सूंडियां पत्तियों में सुरंग बनाकर हरे पदार्थ को खाती हैं। पत्ता सूर्य की तरफ करने पर कीट साफ दिखाई देता है। पौधे कमजोर हो जाते हैं तथा उत्पादन पर भी असर पड़ता है।

**रोकथाम :** माहू/अल की रोकथाम हेतु बताए गए कीटनाशक से इसका नियंत्रण भी प्रभावी ढंग से हो जाता है।

**बालों वाली सूंडियां :** इन सूंडियों का आक्रमण अक्टूबर से नवम्बर में अधिक होता है। आरंभ में यह सूंडियां सामूहिक रूप में रहकर फसल की पत्तियों को खा जाती हैं। बड़े होने पर अकेले रहकर सारे खेत में फैल जाती हैं।

**रोकथाम :** ऐसी पत्तियां जिन पर सूंडियां समूह में हों उन्हें तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

**गुजिया विविल :** इस कीट का प्रकोप रिवाड़ी जिले में कहीं-कहीं देखने को मिला है। यह सरसों के उगते हुए पौधों को खत्म कर देता है जिससे पौधों की संख्या खेत में कम रह जाती है।

**रोकथाम :** इस कीट के नुकसान की भरपाई के लिए किसान भाई ज़्यादा बीज का उपयोग कर सकते हैं। इस कीट की रोकथाम के लिए अभी किसी दवाई की सिफारिश नहीं की गई है।

**नोट :** छिड़काव कार्यक्रम सदैव 3 बजे के बाद करें ताकि मधुमक्खियों को कोई नुकसान न हो, जो उपज बढ़ाने में सहायक होती हैं।



## स्नान कराते समय बच्चे को सुरक्षित रखें : कैसे

✍️ पूनम रानी एवं बिमला ढाण्डा

मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

स्नान का समय आपके बच्चे के लिए असली मजेदार समय हो सकता है लेकिन इसके लिए आपको यह सुनिश्चित करने की ज़रूरत है कि यह सुरक्षित भी है। विशेष रूप से बाथटब में स्नान के लिए 6 साल तक के बच्चों को अकेला नहीं छोड़ना चाहिए।

अपने बच्चे को स्नान के समय सुरक्षित रखने के लिए कुछ सुझाव हैं :

1. **माता-पिता के द्वारा सावधानी/पर्यवेक्षण :** जब आप व्यस्त हों तो अपने बच्चे को पानी में छोड़ देना सही नहीं है। छोटे बच्चे पानी में फिसल सकते हैं और कुछ इंच पानी में डूब सकते हैं। इसलिए पानी में छोड़ने से पहले सावधानी बरतनी चाहिए।
2. **पानी का तापमान :** बाथरूम में गर्म पानी के कारण हर साल कई बच्चे जल जाते हैं। इस समस्या को दूर करने के लिए हीटर का प्रयोग कर सकते हैं जिसमें तापमान नियंत्रक स्विच हो। पानी का तापमान साधारण सेट करें। बच्चे को टब में बैठाने से पहले यह देख लें कि पानी ज़्यादा गर्म न हो।
3. **पानी का स्तर :** टब में पानी का स्तर बच्चे की कमर से अधिक नहीं होना चाहिए जब वह बैठा हो। अपने बच्चे को टब में बैठना सिखाएं और स्नान करते समय खड़ा न हो यह भी सिखाएं। अपने बच्चे को साबुन से भरे पानी में बहुत देर तक बैठने की अनुमति न दें क्योंकि ज़्यादा देर साबुन में बैठने से बच्चे की त्वचा रूखी हो जाती है।
4. **चोटों से बचाएं :** यदि आपके बच्चे बाल्टी या मग के साथ स्नान करते हैं तो वे जब नहा रहे हैं तब वे गिर भी सकते हैं। बाथरूम के फर्श पर चलने से पहले अपने बच्चे को सूखना सिखाएं। टब के पास एक नॉनस्लिप चटाई रखें। अपने बच्चे की पहुंच से बिजली के उपकरणों (ड्रायर, हीटिंग रॉड) को दूर रखें।
5. **खिलौनों से सुरक्षा :** कुछ बच्चों को बाथरूम में खिलौनों के साथ खेलना पसंद है। जब बच्चे नहा रहे हों तो खिलौनों को बच्चों से दूर रखें। गीले खिलौने बच्चों को न दें क्योंकि इससे बीमारियां उत्पन्न हो जाती हैं। टूटे खिलौने बच्चों को न दें। बच्चों को बाथरूम में धीरे-धीरे खेलने के लिए निर्देशित करें।



“हरियाणा खेती” मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

- सह-निदेशक ( प्रकाशन )



# स्वीट कॉर्न : वैज्ञानिक विधि से खेती

जे.के. नान्दल, धर्मेन्द्र सिंह एवं परमिन्दर सिंह

कृषि विज्ञान केन्द्र, सोनीपत

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

स्वीट कॉर्न मक्का की एक किस्म है जिस में सुक्रोज की मात्रा काफी अधिक पाई जाती है और खाने में काफी स्वादिष्ट तथा मीठी होती है इसलिए इस को स्वीट कॉर्न कहते हैं। अधिक ठण्ड एवं गर्मी इस की उपज को प्रभावित करते हैं। मैदानी क्षेत्रों में स्वीट कॉर्न को खरीफ और रबी दोनों मौसम में उगाया जा सकता है। समय को ध्यान में रखकर खेती करने से किसान मालामाल हो सकते हैं।

**उन्नत जातियाँ:** जातियों का चुनाव ऋतु अथवा समय आधारित करना आवश्यक है। स्वीट कॉर्न में सुक्रोज काटने के तुरन्त बाद घटने लगता है तथा स्टार्च में बदलने लगता है। काटने के बाद यदि स्वीट कॉर्न को कम तपमान पर रखा जाये तो इसका सुक्रोज काफी दिनों तक स्थिर बना रहता है।

माधुरी, प्रिया, अल्मोडा, मधुमक्का, शुगर-75 और बिना औरेंज इस की प्रमुख जातियाँ हैं। ये सभी जातियाँ 70 से 90 दिन में तैयार हो जाती हैं।

**पृथक्करण :** स्वीट कॉर्न एक पर-परागण वाली फसल है। इसलिए इस को स्वीट कॉर्न की दूसरी किस्म से कम से कम 400 मीटर की दूरी पर लगाना चाहिए, दूसरी जातियों के साथ लगाने से इस के दानों का रंग, मिठास और आकार में बदलाव आ जाता है जिस से स्वीट कॉर्न की गुणवत्ता प्रभावित होती है। अलग-अलग पकने वाली प्रजातियों की बिजाई की जाये जिस की पुष्पावस्था में कम से कम 10 दिन का अन्तर होना चाहिए।

**भूमि :** स्वीट कॉर्न को सभी प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है लेकिन अच्छी उपज हेतु, दोमट, बलुई दोमट, जिस का उचित जलनिकास हो तथा उचित कार्बनिक मात्रा हो। बिजाई से पहले भूमि को अच्छी तरह जुताई करके तैयार कर लेना चाहिए।

**बीज की मात्रा :** एक एकड़ के लिए 8 से 8.5 किलोग्राम बीज की आवश्यकता पड़ती है। लगभग 20 से 50 हजार पौधे एक एकड़ में होने चाहियें। बीज की 60 सें.मी. बनी डोलियों पर 15 से 20 सें.मी. की दूरी पर बिजाई करें, बीज को 3 से 5 सें.मी. गहरा बोना चाहिए। बीमारियों से बचाव के लिए उपचारित बीज की बिजाई करें। एक किलोग्राम बीज का उपचार 4 ग्राम थाइमर दवा से करें।

**बिजाई का समय :** स्वीट कॉर्न की बिजाई का उचित समय जून-जुलाई तथा अक्टूबर-नवम्बर है, लेकिन आमतौर पर सोनीपत क्षेत्र में सितम्बर में बिजाई करने से किसान को मण्डी में ज्यादा कीमत मिलती है।

**खाद एवं उर्वरक :** स्वीट कॉर्न की अच्छी पैदावार लेने के लिए यह

आवश्यक है कि खेत की मिट्टी की जांच करवा लेनी चाहिए। औसत उपज में संकर किस्मों के लिए 6 टन गोबर की खाद तथा 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 25 कि.ग्राम फास्फोरस, 25 कि.ग्राम पोटाश तथा 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ देनी चाहिए। गोबर की खाद को 10-20 दिन पहले खेत तैयार करते समय डालें। पूरी फास्फोरस तथा पोटाश व एक तिहाई नाइट्रोजन बिजाई के समय दें। एक तिहाई नाइट्रोजन पौधे घुटने तक उग आने पर खड़ी फसल में तथा एक तिहाई झन्डे आने के कुछ पहले दें।

**निराई, गुड़ाई तथा खरपतवार नियंत्रण :** स्वीट कॉर्न की पहली गुड़ाई बिजाई के 15 दिन बाद तथा दूसरी गुड़ाई बिजाई के 25-30 दिन बाद करें। इस के अतिरिक्त रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए 400 से 600 ग्राम एट्रजिन (50 प्रतिशत घुलनशील पाऊडर) प्रति एकड़ 200 से 250 लीटर पानी में मिला कर बिजाई के तुरन्त बाद छिड़कने से की जा सकती है। रेतीली ज़मीन में खरपतवार नाशकों का कम प्रयोग तथा चिकनी या भारी मिट्टी में अधिक मात्रा का प्रयोग करना चाहिये। बिजाई के 15 दिन बाद तक भी उतनी ही मात्रा का प्रयोग कर सकते हैं।

**जल प्रबंधन :** स्वीट कॉर्न की अधिक पैदावार लेने के लिये जल का उचित प्रबंधन आवश्यक है। आमतौर पर 5-6 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। स्वीट कॉर्न में फूल आने तथा दाना बनने की अवस्था में उचित नमी का होना आवश्यक है, नहीं तो दानों का विकास अच्छा नहीं होगा तथा सुक्रोज की मात्रा भी घट जाती है। फसल के झंडे आने के समय भी खेत में उचित नमी का होना आवश्यक है, उस समय सिंचाई ज़रूर करनी चाहिये।

**फसल की कटाई :** फसल की उचित समय पर कटाई करने पर ही उचित मूल्य मिलता है। स्वीट कॉर्न में सिल्क निकलने के 18-20 दिन बाद जब कॉर्न में दाने पूरे भर जाते हैं और दाने कड़े न हों उस समय इस को काट लिया जाता है। भुट्टों को पौधे से तोड़ कर छिलके सहित जल्द से जल्द मण्डी में भेज देना चाहिये। अगर कुछ समय रोकना पड़े तो सुबह के समय कटाई करके कम तापमान पर रखा जा सकता है।

**आर्थिक लाभ :** सोनीपत क्षेत्र में किसान स्वीट कॉर्न से 1 रुपये के खर्च पर 10-12 रुपये लाभ कमा लेते हैं। स्वीट कॉर्न का भुट्टा 5 से 10 रुपये तक बिक जाता है। एक एकड़ में खर्चा 20,000 रुपये तक हो जाता है जब कि शुद्ध लाभ 50,000 रुपये से लेकर 1.25 लाख रुपये प्रति एकड़ तक मिल जाता है जो बिजाई के समय तथा बाज़ार के भाव से प्रभावित होता है।

स्वीट कॉर्न को तोड़ने के बाद इस से प्राप्त हरे चारे को पशुओं के लिए उपयोग में लाया जाता है तथा इसे मण्डी में चारे के रूप में बेचा भी जा सकता है। इस का हरा चारा अधिक सुपाच्य तथा पौष्टिक होता है। इस प्रकार किसान हरे चारे के लिए उपयोग में लाई जाने वाली भूमि को अन्य उपयोग में ला सकते हैं।



# आधुनिक कृषि यंत्रों द्वारा फसल अवशेष प्रबंधन

प्रतीति यादव, डी.एस. जाखड़ एवं एन.के.यादव  
कृषि विज्ञान केन्द्र एवं कपास अनुसंधान केन्द्र सिरसा  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में पहले खेती केवल जीवन यापन के लिए की जाती थी, लेकिन धीरे-धीरे खेती ने व्यावसायिक रूप धारण कर लिया है। किसान अधिक उपज प्राप्त करने के लिए अंधाधुंध रासायनिक उर्वरक एवं कीटनाशकों का प्रयोग कर रहा है, जो न केवल पर्यावरण अपितु मृदा स्वास्थ्य को भी प्रभावित करते हैं। पिछले कुछ वर्षों से इनके उपयोग के साथ-साथ फसल अवशेष का जलाना भी एक मुख्य चुनौती के रूप में सामने आया है। यह समस्या पंजाब व हरियाणा के उन क्षेत्रों में देखी गई है जहां फसल की कटाई कम्बाइन के द्वारा की जाती है। कटाई के बाद खेत में स्ट्रॉल और स्ट्रा (फसल अवशेष) काफी मात्रा में रह जाते हैं। धान की कटाई के उपरांत, गेहूं की बुवाई समय पर करने के लिए किसानों को खेत तैयार करने के लिए एक पखवाड़े से भी कम समय मिलता है। इसी कारण किसान अपने खेत को जल्दी तैयार करने के लिए फसल अवशेष का जलाना सबसे प्रभावी तरीके के तौर पर देखते हैं जिसके दुष्परिणाम निम्नलिखित हैं:

- कार्बनिक पदार्थ मृदा संघटन का महत्वपूर्ण घटक है। फसल अवशेष जलाने से ये अमूल्य पदार्थ नष्ट होता जा रहा है, जिसके कारण मृदा स्वास्थ्य एवं उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है।
  - फसल अवशेषों को जलाने से मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों जैसे नत्रजन, पोटाश, फास्फोरस व सल्फर का नाश होता है, परिणामस्वरूप मृदा की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है।
  - फसल अवशेषों के जलाने से मृदा ताप में वृद्धि होती है, जिसके फलस्वरूप मृदा सतह सख्त हो जाती है तथा मृदा की जलधारण क्षमता में कमी आती है।
  - फसल अवशेषों के जलाने से मृदा में उपस्थित या उस पर आश्रित सूक्ष्म जीवों की संख्या पर बुरा प्रभाव पड़ता है तथा मृदा की 15 सेंटीमीटर तक की परत में सभी प्रकार के मौजूदा लाभदायक सूक्ष्म जीवाणुओं का नाश हो जाता है।
  - फसल अवशेष दहन पर भारी मात्रा में मीथेन, कार्बन डाईऑक्साइड, सल्फर डाईऑक्साइड इत्यादि विषैली गैसों का उत्सर्जन होता है जो कि पर्यावरण को दूषित करती हैं। जिसके फलस्वरूप वैश्विक तापमान में वृद्धि, मौसम का परिवर्तित होना तथा मनुष्यों में श्वास संबंधित रोगों का बढ़ना भी है।
- अब प्रश्न यह उठता है कि यदि धान या गेहूं की कम्बाइन द्वारा कटाई

करने के बाद जो पुआल या कटे हुए अवशेष बचते हैं, उनका क्या किया जाए? क्योंकि सच तो यह है कि किसान भी उनको नहीं जलाना चाहते। ऐसे फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन करना समय की ज़रूरत है। फसल अवशेषों के उचित प्रबंधन के लिए आधुनिक कृषि यंत्रों का विकास किया गया है जिनकी विशेषताएं निम्न प्रकार से हैं:

**मल्टचर :** यह कृषि यंत्र धान के फसल अवशेष ( पराली ) को काट कर उसके टुकड़े करता है, जिसे रोटावेटर, डिस्क हैरो व रिवर्सिबल प्लो द्वारा ज़मीन में अच्छी तरह मिलाया जा सकता है, जो मिट्टी में मिलकर जैविक खाद बन जाते हैं। जिससे फाने ( फसल अवशेष ) जलाने नहीं पड़ते। धान की कटाई के उपरांत मल्टचर गेहूं की बिजाई को सरल करता है और मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों व जीवाणुओं को संरक्षित रखता है।

**रिवर्सिबल प्लो :** यह यंत्र गहरी जुताई करके फसल अवशेषों को मिट्टी में अच्छी तरह दबा देता है जिससे धान की पराली या गेहूं के भूसे को जलाने से बचाया जा सकता है। मृदा की जल धारण एवं जल ग्रहण क्षमता को बढ़ाता है। साथ ही साथ रिवर्सिबल प्लो खरपतवार के बीजों को नष्ट करके खरपतवार को नियंत्रित करता है तथा हानिकारक कीटों को नष्ट करता है।

**हैप्पी सीडर :** कम्बाइन से कटे धान के खेतों में हैप्पी सीडर से गेहूं की सीधी बिजाई की जा सकती है। यह यंत्र पराली को काट कर मल्टच को जैविक खाद के रूप में भूमि में मिलाने में मदद करता है। पराली का बचा हुआ भाग खेत में होने से नमी ज़्यादा समय तक बनी रहती है एवं खरपतवार कम पैदा होते हैं। मुख्य रूप से पराली को आग लगाने से होने वाले नुकसान, प्रदूषण की रोकथाम एवं मृदा स्वास्थ्य में आ रही गिरावट को इस मशीन द्वारा रोका जा सकता है।

**जीरो टिल सीड-कम-फर्टीलाइज़र ड्रिल :** इस यंत्र/मशीन के प्रयोग द्वारा गेहूं की बिजाई से पहले धान की पराली को जलाना नहीं पड़ता। फानों का आकार चाहे कितना ही बड़ा क्यों न हो, इस मशीन से गेहूं की बिजाई आसानी से हो जाती है। इसका प्रयोग करने से गेहूं का जमाव बढ़िया होता है तथा पौधे ज़्यादा स्वस्थ व गहरे रंग के होते हैं तथा मन्दूसी का 30-40 प्रतिशत जमाव कम होता है।

**स्ट्रा रीपर :** इस पर्यावरण हितैषी यंत्र द्वारा कम लागत में गेहूं का भूसा तैयार किया जाता है जिससे समय पर दूसरी फसल की बिजाई की जा सकती है तथा किसानों की आमदनी में बढ़ोतरी होती है।

इन यंत्रों को अपनाकर न केवल फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन किया जा सकता है, बल्कि पर्यावरण को नुकसान होने से बचाया जा सकता है। फसल अवशेषों के दहन के बजाए इनका मल्टच के रूप में प्रयोग करने से मृदा का भौतिक, रासायनिक व जैविक स्वास्थ्य अच्छा रहेगा। भविष्य में फसल अवशेषों को जलाने की बजाए उनका उचित प्रबंधन समय की मांग है।



# फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन : अवसर एवं चुनौतियाँ

✍ विजय, हेमंत सैनी एवं सौरभ

बागवानी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फसल एवं कृषि अवशेष हमारी धरा के लिए अमूल्य धरोहर हैं। इनका सही उपयोग करने से ही मानव और पृथ्वी पर विद्यमान जीवन लम्बे समय तक चल सकता है। मानवीय जीवन मृदा के स्वास्थ्य के साथ अखण्ड रूप से जुड़ा हुआ है। यदि भूमि के स्वास्थ्य में कमी आती है तो इससे पैदा होने वाली सारी वनस्पति, अनाज, जल, चारा इत्यादि सब पदार्थों की गुणवत्ता दूषित हो जाती है जिससे मानव, पृथ्वी एवं जल जीवन सभी प्रभावित होते हैं।

वैज्ञानिक जानकारी के अनुसार देश में उगाई गई फसलें लगभग 32 मिलियन टन पोषक तत्व भूमि से लेती हैं जबकि 22 मिलियन टन पोषक तत्व खुराक के रूप में दिए जाते हैं अर्थात् हर वर्ष लगभग एक तिहाई पोषक तत्व फसलों द्वारा भूमि के खजाने से ले लिए जाते हैं। धान और गेहूं जैसी फसलें तो और भी अधिक प्राकृतिक संसाधनों का शोषण करती हैं। इन फसलों के अवशेष जलाने से स्थिति और अधिक गंभीर होती जा रही है। आंकड़े बताते हैं कि अधिक उत्पादकता वाले क्षेत्रों में भूमि में विद्यमान पोषक तत्वों की लगातार कमी होती जा रही है। एक अध्ययन के अनुसार देश के कुल खाद्यान्न उत्पादन में सन् 1950 में रासायनिक खादों का योगदान 1.0 प्रतिशत था जो 1980 में बढ़कर 32.0 प्रतिशत और 2000 में 53.0 प्रतिशत हो गया।

धान और गेहूं की फसलें भूमिगत पानी का भी अत्यधिक दोहन करती हैं उदाहरण के तौर पर हरियाणा के जिला कुरुक्षेत्र के आंकड़ों के अनुसार सन् 1974 से 2001 तक भूमिगत जलस्तर में लगभग एक फुट प्रति वर्ष की दर से गिरावट आई जो 2001 के बाद चार फुट प्रति वर्ष आंकी गई। इस दौरान पानी का दोहन इस हद तक हुआ कि उत्तरी भारत के धान-गेहूं के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रों के भूमिगत जलस्तर की स्थिति अत्यंत चिंतनीय हो गई और एक के बाद एक ज़ोन 'डार्क ज़ोन' घोषित होते चले गए अर्थात् इन क्षेत्रों में भूमिगत जल निकालना एक अपराध माना गया। प्राकृतिक संसाधनों के दोहन की स्थिति अति भयावह है। इन क्षेत्रों में वातावरण प्रदूषण की स्थिति भी चिंता का विषय है। बढ़ते हुए रासायनिक उर्वरकों व रसायनों का प्रयोग वर्तमान परिस्थितियों को और अधिक गंभीर बना रहा है। इस सारी स्थिति से निपटने के लिए सबसे कारगर उपाय है कि ऐसे तरीके अपनाए जाएं जिससे भूमि का स्वास्थ्य दुरुस्त हो, जो मौसम की विविधताओं व बदलते वायुमंडल के प्रभावों से फसल को बचा सके। चाहे अधिक वर्षा हो या कम, चाहे औसत से अधिक तापमान हो या कम और कीड़े व बीमारियों से लड़ने में सक्षम हों, हमें ऐसे वातावरण का निर्माण

करना होगा जो इन सब विषम परिस्थितियों से लड़ सके। इसके लिए सबसे पहली आवश्यकता है भूमि की भौतिक व रासायनिक दशा का स्वस्थ होना। इस वातावरण के निर्माण के लिए यदि एक सबसे महत्वपूर्ण कारक को देखा जाए तो वह है कृषि व फसल अवशेषों का समुचित प्रयोग। यह इसलिए भी ज़रूरी है कि बढ़ती जनसंख्या और घटती जोत के कारण देश के खाद्यान्न सुरक्षा पर कोई खतरा न आए।

## फसल अवशेषों की उपलब्धता व उनमें पोषक तत्वों की मात्रा

एक आंकलन के अनुसार देश में प्राप्त अवशेषों की मात्रा तालिका 1 व 2 में दी गई है।

### तालिका 1: देश में उपलब्ध अवशेषों की मात्रा

अवशेष	मात्रा (मिलियन टन)
फसलों में प्राप्त अवशेष	679
बागवानी व सब्जियों से प्राप्त	268
सड़क किनारे वानिकी से प्राप्त	204
कुल अवशेष	1151

फसल लेने के बाद देश में प्राप्त अवशेष प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। इन अवशेषों में पोषक तत्व भी काफी मात्रा में विद्यमान रहते हैं (तालिका 2ए)। यदि इन अवशेषों का समुचित प्रयोग किया जाए और वापिस ज़मीन में मिला दिया जाए तो भूमि की उर्वरा शक्ति में काफी हद तक इजाफा किया जा सकता है।

### तालिका 2: फसलों से उपलब्ध अवशेषों की मात्रा (मिट्टिक टन/प्रति वर्ष)

फसल	मात्रा
1. धान	192.82
2. गेहूं	120.70
3. मक्का	26.75
4. सनई	31.51
5. कपास	90.86
6. मूंगफली	11.44
7. गन्ना	107.50
8. राया सरसों	17.28
9. बाजरा / रागी	21.57
10. अन्य	59.00

### फसल अवशेषों का ज़मीन में मिलाने से लाभ :

1. फसल अवशेष मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ को बढ़ाते हैं, जिससे मिट्टी में सूक्ष्म जीवों की सक्रियता बढ़ जाती है। नाइट्रोजन और सल्फर तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है।
2. पौधों के अन्य आवश्यक पोषक तत्व जैसे फास्फोरस, कैल्शियम, पोटेशियम, मैगनीशियम आदि को बढ़ाते हैं।



**तालिका 2ए : विभिन्न अवशेषों में विद्यमान पोषक तत्वों की मात्रा (प्रतिशत)**

फसल अवशेष	नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
गेहूं का भूसा	0.53	0.10	1.10
धान का पुआल	0.36	0.10	1.70
जौ का भूसा	0.57	0.26	1.20
गन्ने की पत्तियां	0.35	0.10	0.60
गन्ने की खोई	2.25	1.12	—
राई (सरसों का तना)	0.57	0.2	1.40
आलू	0.52	0.09	1.85
मूंगफली का छिलका	0.70	0.48	1.40
मक्का की कड़बी	0.47	0.50	1.65
बाजरे की कड़बी	0.65	0.7	1.50
मटर की सूखी पत्तियां	0.35	0.12	1.36

3. मृदा के भौतिक गुणों जैसे संरचना, जल एवं पोषक तत्वों की धारण क्षमता में वृद्धि होती है।
4. मृदा का पी.एच. मान ठीक रहता है जिससे उर्वरकों की उपलब्धि व स्थिरीकरण अधिक समय तक रहता है।
5. मृदाक्षरण को कम करके पौधों के लिए आवश्यक तत्वों की उपलब्धि को बढ़ाते हैं।
6. भूमि एवं वातावरण का प्रदूषण नहीं फैलता है।
7. फसल अवशेष जलाने से वायुमंडल में हानिकारक गैसों का उत्सर्जन होता है जिससे वायुमण्डल का तापमान बढ़ता है और फसलों की उत्पादकता पर असर पड़ता है। अवशेषों को वापिस ज़मीन में मिलाने से इस दुष्प्रभाव से बचा जा सकता है।
8. फसलों का उत्पादन बढ़ता है।

फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन करने के लिए वैज्ञानिक, सरकार, किसान आदि हर स्तर पर प्रयास करने की आवश्यकता है। इसके लिए सबसे पहली व मुख्य ज़रूरत है ऐसी मशीनों का निर्माण जो बिजाई से लेकर कटाई तक इन अवशेषों में निर्विघ्न पूर्ण क्षमता के साथ कार्य कर सकें। सरकारी स्तर पर ऐसी मशीनों को बढ़ावा व कीमत में छूट मिल सके और किसान व दूसरी कृषि संस्थाएं इस कार्य में भागीदार बन सकें। कोशिश यह होनी चाहिए कि कोई दूसरा विकल्प ढूंढने की बजाए इन अवशेषों को वापिस ज़मीन में मिलाया जा सके ताकि भूमि का स्वास्थ्य बना रहे। निम्नलिखित बातों पर यदि ध्यान दिया जाए तो फसल अवशेषों का प्रबंधन अच्छे तरीके से किया जा सकता है।

गेहूं के अवशेषों का प्रबंधन आसानी से किया जा सकता है। कंबाईन

से कटाई करने और स्ट्रा रीपर से भूसा बनाने के बाद खेत में हैरो से बचे हुए अवशेषों को आसानी से मिलाया जा सकता है।

1. धान के अवशेष कुछ समस्या अवश्य करते हैं लेकिन यदि कटाई करने के लिए ऐसी मशीन आए जो अवशेषों को समान रूप से खेत में बिखेर दे और उसके बाद हैप्पी सीडर से गेहूं की फसल की बिजाई की जाए तो इससे गेहूं की पैदावार तो अधिक होती ही है इसके साथ भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है, पानी की बचत होती है, खरपतवार नाशक दवा के प्रयोग की ज़रूरत नहीं रहती और विषम मौसम के हालात में पकाई के समय फसल गिरती नहीं है।
2. धान के अवशेषों को चोंपर/कटर से काटकर खेत में फैलाया जा सकता है, उसके बाद गेहूं की फसल की बिजाई की जा सकती है।
3. फसल कटाई के पश्चात् फसल अवशेष, घासफूस, पत्तियां व डंठल आदि को सड़ाने के लिए 20-25 किलो नत्रजन प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़ककर हैरो या कल्टीवेटर से जुताई कर दें। कुछ ही दिनों में सभी अवशेष गल-सड़ कर आने वाली फसल को पोषक तत्व प्रदान करेंगे।
4. फसल अवशेषों से कम्पोस्ट खाद तैयार करें। गोबर के साथ फसल अवशेष मिलाकर वर्मीकम्पोस्ट बनाई जा सकती है।
5. पशुओं के मलमूत्र में कई महत्वपूर्ण पोषक तत्व होते हैं। फसल अवशेष मलमूत्र को सोखने के लिए बिछौने के रूप में प्रयोग किए जा सकते हैं। इन अवशेषों को कम्पोस्ट बनाने में प्रयोग करें जिसमें कम्पोस्ट की गुणवत्ता में बढ़ोत्तरी होगी।
6. इन अवशेषों से बहुमूल्य मशरूम कम्पोस्ट तैयार करके खुम्ब उत्पादन किया जा सकता है।
7. चारे की अधिकता वाले क्षेत्रों में मक्की की कड़बी व धान की पुआल को खुला छोड़ने की बजाए गड्डों में कम्पोस्ट बनाकर उपयोग करना फायदेमंद है।
8. आलू, मूंगफली जैसी फसलों की खुदाई के बाद बचे अवशेषों को तथा मूंग, उड़द की फसल में फलियां तोड़कर खेत में मिलाना लाभदायक पाया गया है।
9. फसल अवशेषों को दूसरी फसलों में मल्व के लिए प्रयोग किया जा सकता है जिससे फसल का अच्छा जमाव होता है, पानी की बचत होती है और बेहतर खरपतवार नियंत्रण होता है।
10. फसल अवशेषों को बेलर द्वारा इकट्ठा करके गांठ बनाई जा सकती है जिन्हें सीमित जगह में संचित करके लम्बे समय तक रखा जा सकता है या दूरस्थ स्थानों पर चारे के रूप में भेजा जा सकता है।
11. बेलर द्वारा बनाई गई गांठों को बिजली या ऊर्जा संयंत्रों में भी प्रयोग किया जा सकता है।



# गन्ना में खरपतवार की रोकथाम : कैसे

सतबीर पूनियां, धर्मवीर यादव एवं समुन्दर सिंह

सस्य विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा प्रान्त में उगाई जाने वाली नकदी फसलों में गन्ने का प्रमुख स्थान है। यह एक बहुवर्षीय फसल है जो शरद (अक्टूबर) व बसन्त (फरवरी-मार्च) में बोई जाती है। गन्ना फसल में खूड़ों का ज़्यादा फासला, सहज जमाव, ज़्यादा खाद व पानी तथा लम्बी फसल अवधि अक्सर ज़्यादा खरपतवारों को निमंत्रण देते हैं। खरपतवार भूमि से लगभग 20 से 25 किलो नाइट्रोजन तथा 30 प्रतिशत तक जल ले लेते हैं। ये गन्ने के साथ प्रकाश, स्थान एवं वायु के लिए भी मुकाबला करते हैं। फलस्वरूप गन्ने की पैदावार व गुणवत्ता में कमी आ जाती है।

मुख्य खरपतवार: गन्ना फसल में आमतौर पर निम्नलिखित खरपतवार पाये जाते हैं।

1. घास जाति वाले : मकड़ा, मंधाना, सांवक, चिड़ियों का दाना एवं तकड़ी घास।



2. चौड़ी पत्ती वाले : सांठी, दूधी, नूणिया, पलपोटन, भाखड़ी, चौलाई, तांदला, कनकुआ, कागारोटी, जलभंगडा, कचभोड़न (मकोय) गाजर घास एवं बेल।

3. बहुवर्षीय : दूब, बरु, कांस, डीला (मोथा) व हिरण खुरी।

गन्ने की बिजाई के बाद पहले डीला, सांठी, नूणिया, पलपोटन, मकोय व चौलाई आदि घास आते हैं। इसके बाद बरसात का मौसम शुरू होते ही घास जाति वाले खरपतवार जैसे कि सांवक, मकड़ा व तकड़ी घास इत्यादि उगने शुरू हो जाते हैं।

**खरपतवार नियन्त्रण का सही समय :** खरपतवार नियन्त्रण का सही समय फसल की बिजाई के समय पर निर्भर करता है। बसंतकालीन फसल



में खरपतवार नियन्त्रण का सही समय बिजाई के 120 दिन बाद तक व पछेती फसल में 60 दिन तक आंका गया है। जबकि यह मोढ़ी फसल में 90 दिन (फुटाव का समय) तक उचित पाया गया है। यदि इस दौरान गन्ने की फसल को खरपतवारों से न बचाया जाए तो बाद की अवधि में किए गए सभी प्रयास व्यर्थ रहते हैं तथा गन्ने की पैदावार में आई कमी की भरपाई हो जाती है। खरपतवार नियन्त्रण न करने का नुकसान सबसे ज़्यादा पछेती फसल में पाया जाता है।

**खरपतवार नियन्त्रण विधियां :** निराई-गुड़ाई: खुरपा व कसौला चलाकर गुड़ाई करना सबसे उत्तम है। परन्तु समय का अभाव तथा मजदूरों का ना मिलना इस क्रिया में आड़े आता है। इसके अतिरिक्त मौसम व खेती की दशा भी इस क्रिया में बाधा डालती है और इस विधि से जो खरपतवार गन्ने के अन्दर हैं उसका नियन्त्रण नहीं हो पाता है। इसलिए किसी एक ऐसी विधि की ज़रूरत है जो पूरे फसल चक्र के दौरान खरपतवारों का नियन्त्रण कर सके। मोढ़ी फसल में 12-15 सें.मी. मोटी गन्ने की सूखी पत्तियों की तह बिछाकर काफी हद तक खरपतवारों को नियन्त्रण में रखा जा सकता है।

शुरू की अवस्था में 2-3 बार कल्टीवेटर चलाकर तथा बाद में हल्की गुड़ाई करके भी खरपतवार कम लागत में नियंत्रित किये जा सकते हैं। परन्तु आम तौर पर देखा गया है कि जब गन्ने की गुड़ाई का समय होता है तो गेहूं की कटाई, धान की पनीरी की बिजाई इत्यादि काम में किसान व्यस्त हो जाते हैं व गुड़ाई के लिए मजदूर मिलना कठिन हो जाता है। ऐसी अवस्था में खरपतवारनाशक के प्रयोग से इस समस्या से काफी हद तक छुटकारा मिल सकता है।

**अन्तः (मिलवां) फसलें उगाकर :** गन्ने में अन्तः फसलें उगाना भी खरपतवारों की संख्या को काफी हद तक नियंत्रित करता है। शरदकालीन फसल में प्याज़, लहुसन, आलू, गेहूं, सरसों इत्यादि अन्तः फसल उगाकर खरपतवारों को नियंत्रित कर सकते हैं।

**फसल-चक्र अपनाकर :** जिन खेतों में बार-बार गन्ना उगाया जाता है, वहां खरपतवारों की समस्या ज़्यादा होती है। एक सही फसल चक्र अपनाकर जिसमें विभिन्न प्रकार की फसलों को समायोजित करके खरपतवारों की समस्या काफी हद तक कम की जा सकती है। विभिन्न परीक्षणों के आधार पर निम्नलिखित फसल चक्र उपयोगी पाये गए हैं।

1. गन्ना (नौलफ) - मोढ़ी-सूरजमुखी/मक्की/प्याज़-धान
2. धान-आलू-गन्ना (नौलफ) - मोढ़ी-सूरजमुखी/गेहूं-धान

सूरजमुखी, सोयाबीन, लोबिया, बरसीम व ज्वार आदि फसलों को भी समायोजित करके खरपतवार कम लागत में नियंत्रित किये जा सकते हैं।

**फसल का उचित प्रबन्धन:** फसल का उचित प्रबन्धन एवं देखभाल भी खरपतवार नियंत्रण का आवश्यक अंग है। जल्दी व बराबर जमाव और फसल की जल्दी बढ़वार खरपतवारों को बढ़ने से रोकता है और जो खरपतवार गन्ना फसल के नीचे उगते हैं, वो प्रायः कमजोर रहते हैं।

इसलिए खरपतवारों की समस्या वहां ज्यादा होती है। जल्दी व बराबर जमाव के लिए ताज़ा व स्वस्थ बीज को फफूंदीनाशक दवा द्वारा उपचारित करके सही नमी में बिजाई करनी चाहिए। अच्छे जमाव के बाद पानी व उचित खाद डालकर जल्दी बढ़वार ली जा सकती है।

**रासायनिक विधि द्वारा खरपतवार नियंत्रण :** आमतौर पर गन्ने में विभिन्न प्रकार व लम्बे फसल चक्र की वजह से कोई भी एक खरपतवारनाशक एक बार में संतोषजनक नियंत्रण नहीं कर सकता। इसलिए खरपतवार नियंत्रण के लिए गन्ना उगने के बाद के खरपतवारनाशक व गन्ना उगने से पहले के खरपतवारनाशक व गोड़ाई दोनों क्रियाओं को समायोजित करना अति आवश्यक है उदाहरणतः एट्राजिन का उपयोग संकरी व चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का नियंत्रण कर सकता है। परन्तु इसमें डीले (मोथा) का नियंत्रण नहीं हो पाता इसलिए डीले के नियंत्रण के लिए फसल उगने के बाद के खरपतवारनाशक डालने पड़ेंगे। गन्ना फसल में यहां बतलाए जा रहे खरपतवारनाशकों की विभिन्न परिस्थितियों में सिफारिश की जाती है।

1. एट्राजिन (एट्राटाफ) 1.6 किलो ग्राम या मैट्रिब्यूजीन (सैन्कोर) 600-800 ग्राम को प्रति एकड़ 250-300 लीटर पानी में घोलकर बिजाई के तुरन्त बाद छिड़काव करना चाहिए। ध्यान रहे कि भूमि की ऊपरी सतह में उचित मात्रा में नमी होना अति आवश्यक है। कम नमी की अवस्था में इन खरपतवारनाशकों का प्रभाव कम हो जाता है। यदि बिजाई के समय एट्राजिन नहीं डाल पाते तब पहली सिंचाई के बाद गोड़ाई करें तथा दूसरी सिंचाई के 4-5 दिन बाद एट्राजिन का खड़ी फसल में छिड़काव कर सकते हैं। इससे गन्ना फसल पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यह तरीका सबसे सस्ता व प्रभावशाली पाया गया है। जून के महीने में 2,4-डी सोडियम साल्ट एक किलो प्रति एकड़ के हिसाब से 250 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।
2. यदि गन्ना फसल में दूब व मोथा की समस्या हो तब 2,4-डी इस्टर या अमाईन दवा का 400 ग्राम प्रति एकड़ 200-250 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 15 दिन पश्चात् दोबारा छिड़काव करें। ध्यान रहे कि 2,4-डी इस्टर मोथा घास को केवल ज़मीन के ऊपर से नष्ट करता है।
3. पिछले कुछ वर्षों से गन्ने के पौधे पर लिपटने वाली बेल की समस्या बढ़ती जा रही है। अगर खेत में बेल व अन्य चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार ज़्यादा हों तो आलमिक्स 8 ग्राम या 2, 4-डी इस्टर/अमाईन की 400 मि.ली. की मात्रा 150 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।
4. मोथा घास की रोकथाम सेम्परा 75 प्रतिशत डब्ल्यू पी की 36 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से 150 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। यह छिड़काव मोथा की 3-6 पत्ती की अवस्था में ही करें।

(शेष पृष्ठ 11 पर)

## संरक्षण तकनीकों द्वारा फसल उत्पादन

❧ मीनाक्षी सांगवान<sup>1</sup>, विरेन्द्र सिंह हुड्डा एवं मीना सुहाग

सस्य विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में कृषि निश्चित रूप से आजीविका का एक सबसे बड़ा साधन है व अधिकतर उद्योग-धंधे कच्चे माल के लिए इस पर निर्भर करते हैं। पिछले कुछ दशकों से भारतीय कृषि में तीव्र रूपांतरण हो रहा है। वैश्वीकरण व उदारीकरण की नीति ने आधुनिक कृषि के लिए नए रास्ते खोल दिए हैं। पानी, भूमि व उर्वरकों के प्रयोग में असुन्तलन, सघन जुताई व फसल अवशेषों को जलाना प्राकृतिक संसाधनों को विनाश की ओर ले जा रहा है। मृदा का स्वास्थ्य दिनों दिन खराब हो रहा है। अच्छी गुणवत्ता वाला सिंचाई जल व पीने वाला पानी भी घटता जा रहा है। कारक उत्पादकता में कमी, मृदा में कार्बनिक पदार्थों की कमी, मृदा में बहु आयामी पोषक तत्वों की कमी, निवेश उपयोग क्षमता में कमी, असन्तुलित उर्वरकों का प्रयोग, मौसम की अनिश्चितता हेतु उपयुक्त प्रजातियों का अभाव, संरक्षित कृषि का अभाव, अन्तः फसलीकरण के लिये उपयुक्त प्रजातियों का अभाव, धान-गेहूं एकल फसल चक्र का बाहुल्य, शुष्क क्षेत्रों के लिए उत्पादन तकनीकी के व्यापक प्रचार-प्रसार में कमी एवं एकीकृत खरपतवार तकनीकी का न अपनाया जाना इत्यादि कृषि के चिन्तनीय विषय हैं। कृषि विकास दर को व बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए खाद्यान्न की मांग को पूरा करने के लिए कृषि के लिए उपयोग में लाए जा रहे संसाधन जैसे जल व मृदा का उचित उपयोग और संरक्षण अति आवश्यक हो गया है। इन संसाधनों के उचित प्रबन्धन द्वारा ही अधिक उत्पादन को सुनिश्चित किया जा सकता है। इन संसाधनों को सुरक्षित रूप से इस्तेमाल किया जाना चाहिए ताकि भविष्य में भी इनको उपयोग में लाया जा सके। खाद्य व कृषि संगठन के अनुसार कृषि संरक्षण, फसल उत्पादन के लिए, संसाधनों की बचत करने की अवधारणा है जिसके द्वारा अधिक व निरंतर उत्पादन के समवर्ती पर्यावरण संरक्षण द्वारा अधिक लाभ प्राप्त किया जा सके।

### कृषि संरक्षण के प्रमुख सिद्धांत :

1. न्यूनतम कर्षण क्रियाएं
  2. मृदा बचाव
  3. फसल चक्रण
- इन सिद्धान्तों की पूर्ति के लिए आधुनिक युग में कृषि की कई आधुनिक प्रणालियों पर बल दिया जा रहा है। जिनमें से शून्य जुताई प्रणाली (Zero Tillage) का बहुत महत्व है। साधारणतया किसान गेहूं की बिजाई से पहले धान के खेत को साफ करने व तैयार करने के लिए पुरानी फसल के अवशेषों को जला देते हैं, जिससे वायु प्रदूषण होता है व साथ ही उन्हें 6-8 बार खेत की जुताई करनी पड़ती है जिससे समय, मेहनत व ईंधन का अपव्यय होता है।

“खाद्य व कृषि संगठन के अनुसार जुताई कृषि सबसे अधिक ऊर्जा क्षय वाली प्रक्रिया है”। इससे गेहूं की उत्पादन कीमत व बुवाई का समय दोनों बढ़ जाते हैं, साथ ही मृदा जल क्षय के कारण गेहूं का उत्पादन भी कम होता है। इन सब समस्याओं का एकल समाधान शून्य जुताई प्रणाली है।



जिससे 30-40 प्रतिशत तक समय व मेहनत की बचत की जा सकती है। इस प्रणाली के अन्तर्गत खेत को तैयार किए बिना एक उल्टे टी आकार के यन्त्र (शून्य कर्षण यन्त्र) से धरती में 2-3 सें.मी. चौड़ी व 4-7 सें.मी. गहरी दरार की जाती है, जिसमें बीज डाला जाता है। कुछ किसानों को पक्षियों द्वारा बीज खाए जाने का डर रहता है। परन्तु प्रयोगात्मक गणना के अनुसार इतनी गहराई पर यह सम्भव नहीं है। वैज्ञानिकों द्वारा दिए गए प्रमाणों के अनुसार इन खुली दरारों में गेहूं व अन्य फसलों के बीजों का अंकुरण व उद्भव भी बहुत अच्छी तरह से होता है। चावल-गेहूं की कृषि लगातार 5-6 साल तक इसी प्रकार की जा सकती है। इस प्रणाली द्वारा किसानों को लगभग 3000-3500 रुपये/ हैक्टेयर की बचत होने का भी आंकलन किया गया है।

बिना जुताई किए गए खेत में, जुताई किए गए खेत की अपेक्षा जल भी आसानी से बह जाता है। जिससे फसल की हल्की सिंचाई भी हो जाती है और जल भराव की समस्या भी दूर हो जाती है साथ ही खनिज लवणों की भी कमी नहीं आती। शून्य जुताई प्रणाली से 8 घंटे में 4-5 हैक्टेयर खेत बोया जा सकता है। आजकल बिना जुताई प्रत्यक्ष बुवाई करने के लिए कई प्रकार की मशीनें उपलब्ध करवाई जा रही हैं। इसे कृषि का मशीनीकरण कहते हैं। मशीनीकरण, शहरीकरण का एक प्रमुख हिस्सा है जो बड़े पैमाने पर उत्पादन को प्रोत्साहित करता है और साथ ही कृषि गुणवत्ता में सुधार लाता है। प्राचीन समय में इसकी शुरुआत हल द्वारा की गई थी परन्तु आधुनिक समय में कई सुस्वरूपित आधुनिक यंत्रों का अविष्कार हो चुका है जिनमें (टर्बो हैप्पी सीडर, पॉवर रोटरी डिस्क और भूसा प्रबंधन प्रणाली) शामिल हैं। टर्बो हैप्पी सीडर एक हल्की व संशोधित मशीन है। इसके द्वारा धान जैसी फसलों के अवशेषों को बिना हटाए, खेत में समान रूप से बिखेर दिया जाता है और उन्हें मृदा आवरण के रूप में इस्तेमाल कर फसल की बुवाई की जाती है जो मृदा में से जल का ह्रास होने से रोकती है व साथ ही खनिज लवणों की आपूर्ति करती है। इसकी दक्षता 80-90 प्रतिशत तक है। इसके द्वारा 8 टन/हैक्टेयर धान के अवशेष को फैलाया जा सकता है। गेहूं-कपास कृषि प्रणाली में खड़ी कपास में गेहूं की बुवाई करने के लिए एक अन्य मशीन रीले व्हीट प्लान्टर का आजकल उपयोग किया जा रहा है। गेहूं-कपास की फसल के मध्य स्थान बनाए रखने में इसकी दक्षता बहुत अधिक है। इनके अलावा मृदा रिक्तिकरण व फसल चक्रण से भी मृदा में खनिज लवणों की आपूर्ति कर फसल उत्पादन को बढ़ाने व कृषि संरक्षण के सिद्धान्तों को पूरा करने की कोशिश की जाती है। मृदा रिक्तिकरण में भूमि को कुछ समय तक खाली छोड़कर अन्य कार्यों जैसे पशुपालन आदि में उपयोग किया जाता है। जिससे मृदा गुणवत्ता में सुधार होता है। फसल चक्रण द्वारा सूक्ष्मजीवों को न केवल खाद्य में विविधता देकर पथ भ्रष्ट किया जाता है बल्कि अलग-अलग फसलों को अलग-अलग गहराई से खनिज लवण लेकर अपना पोषण कर उत्पादन बढ़ाने में मदद मिलती है।

#### कृषि संरक्षण के लाभ :-

##### आर्थिक लाभ

- ❖ उत्पादन क्षमता में सुधार
- ❖ समय व मेहनत की बचत

- ❖ लागत में कमी
- ❖ उच्च दक्षता
- ❖ कम निवेश

##### कृषि लाभ

- ❖ मृदा की उत्पादकता में सुधार
- ❖ मृदा संरचना में सुधार
- ❖ कार्बनिक पदार्थों में वृद्धि
- ❖ मृदा-जल की सुरक्षा

##### पर्यावरण व सामाजिक लाभ

- ❖ जल की गुणवत्ता में सुधार
- ❖ वायु की गुणवत्ता में सुधार
- ❖ मृदा संरक्षण
- ❖ मृदा कटाव का रोकना
- ❖ जैव विविधता में वृद्धि

इन लाभों को प्राप्त करने के लिए प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन प्रौद्योगिकियों (जैसे-लेज़र लैण्ड लेवलिंग, जीरो टिल, सीडिंग इनपुट डिवाइस व अनुबंध खेती का बहुत महत्व है। इनसे फसल उत्पादन तो बढ़ता ही है साथ में बेरोज़गारों को रोज़गार भी प्राप्त होता है। कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा इन प्रौद्योगिकियों को अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन कर, कृषक प्रशिक्षण द्वारा व लोकप्रिय लेखों को स्थानीय भाषाओं में प्रकाशित कर देश भर में लोकप्रिय बनाया जा रहा है।

इस प्रकार संसाधन संरक्षण की इन आधुनिक तकनीकों को अपनाकर एक कृषक खाद्यान्न उत्पादन की प्रक्रिया को सरल, सुरक्षित, सस्ता व टिकाऊ बना सकता है।



(पृष्ठ 10 का शेष)

**सावधानियां :** खरपतवारनाशक के सही असर के लिए निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना अति आवश्यक है।

1. फसल में उगे हुए खरपतवारों के आधार पर ही दवाई का चुनाव करें।
2. दवाई की पूरी मात्रा सिफारिश किए गए समय पर ही प्रयोग करें।
3. दवाई का घोल पहले थोड़े पानी में तैयार करके उसे पम्प की ढोली में डालने से पहले अच्छी तरह हिला लें।
4. खरपतवारनाशक छिड़कते समय मिट्टी में उचित नमी होना अति आवश्यक है।
5. खरपतवारनाशक के छिड़काव हेतु फ्लैट फैन नोज़ल का ही इस्तेमाल करें। कट नोज़ल का प्रयोग न करें।
6. जिस दिन मौसम साफ हो व हवा की गति तेज़ न हो, उसी दिन छिड़काव करें।
7. दवाई के छिड़काव के समय नोज़ल की ऊंचाई ज़मीन से 1-2 फुट तक रखें। ज़्यादा ऊंचाई रखने से दवाई हवा के साथ उड़ जाती है।
8. गन्ने के साथ अन्तर्वर्ती फसल लेने पर निराई-गुड़ाई द्वारा ही खरपतवारों पर नियंत्रण करें।



# खेत में फसल अवशेषों का विघटन : किस प्रकार लाभदायक

✍ सोनिया रानी, मनोज कुमार शर्मा एवं प्रीति यादव<sup>1</sup>

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत एक कृषि अर्थव्यवस्था है। यहां खेती के लिए भूमि का एक विशाल बहुमत उपयोग किया जाता है और विभिन्न कृषि-पारिस्थितिक क्षेत्रों में फसलों की एक विस्तृत शृंखला में खेती की जाती है। इस खेती से, भारत में लगभग 500 मिलियन टन फसल अवशेष हर साल उत्पन्न होते हैं। अवशेषों का एक बड़ा हिस्सा मुख्य रूप से आगामी फसल की बुवाई के लिए खेत को साफ करने के लिए खेत में जला दिया जाता है। हाल ही के वर्षों में मानव श्रम की कमी, परंपरागत तरीकों से फसल अवशेषों को हटाने और फसलों की कटाई के लिए संयोजन के उपयोग के कारण फसल अवशेषों के खेत जलने की समस्या तेजी से प्रकट हुई है। इन फसल अवशेषों का खेत में प्रबंधन करने से न केवल पर्यावरण अपितु हमारी मृदा स्वास्थ्य में सकारात्मक परिणाम देखने को मिलते हैं। यही कारण है कि हमें अवशेषों का खेत में विघटन/अपघटन करना चाहिए।

छोटी मात्रा में मौजूद होने के बावजूद कार्बनिक पदार्थ मिट्टी के भौतिक और रासायनिक गुणों को प्रभावित करते हैं। इसके अलावा, ऑर्गेनिक पदार्थ अधिकांश सूक्ष्मजीवों के लिए ऊर्जा और शरीर के निर्माण के लिए आवश्यक घटकों की आपूर्ति करता है। मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ का मूल स्रोत फसल के अवशेष हैं। प्राकृतिक परिस्थितियों में पेड़, घास और अन्य पौधों के शीर्ष और जड़ों से बड़ी मात्रा में कार्बनिक अवशेषों की आपूर्ति होती है। कटाई वाली फसलों के साथ-साथ पौधे के दसवें से एक तिहाई हिस्से आमतौर पर मिट्टी की सतह पर गिरते हैं और मिट्टी में रहते हैं, इनके अलावा पौधों की जड़ें जो मिट्टी में रह जाती हैं, वह कार्बन का अच्छा स्रोत हैं। चूंकि इन कार्बनिक सामग्रियों को मिट्टी के जीव विघटित और पचा जाते हैं, वे मिट्टी की वास्तविक व भौतिक अव्यवस्था को बनाए रखते हैं। तदनुसार, उच्च फसल के अवशेष मिट्टी के जीवों को खाना प्रदान करते हैं, जो बदले में स्थिर पदार्थ/घटक को बनाते हैं जो मिट्टी के कार्बनिक स्तर को बनाए रखने में मदद करते हैं।

फसल अवशेषों में नमी की मात्रा अधिक होती है, जो 60 से 90 प्रतिशत तक होती है। वजन के आधार पर, शुष्क पदार्थों में ज्यादातर कार्बन और ऑक्सीजन होता है, जिसमें 10 प्रतिशत से कम हाइड्रोजन और अकार्बनिक तत्व (राख) होते हैं। ये तीन तत्व मिट्टी के कार्बनिक स्रोत के बड़े पैमाने पर हावी हैं। हालांकि अन्य तत्व केवल छोटी मात्रा में मौजूद हैं, फिर भी वे पौधे के पोषण में और सूक्ष्मजीवों के शरीर की आवश्यकताओं को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम, सल्फर और मैग्नीशियम जैसे आवश्यक तत्व विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं।

सभी कार्बनिक स्रोत (शर्करा, प्रोटीन्स, सेलुलोज, वसा, लिग्निन्स इत्यादि) आमतौर पर मिट्टी में पौधों के तुरंत तोड़े जाने पर एक साथ विघटित होने लगते हैं। चीनी और सरल प्रोटीन्स अधिक आसानी से विघटित होते हैं और लिग्निन अपघटन के लिए सबसे प्रतिरोधी होते हैं। विघटन के लिए, जैविक और रासायनिक प्रक्रियाएं होती हैं जो पर्यावरण और मिट्टी की स्थितियों जैसे हवा और मिट्टी के तापमान, मिट्टी की नमी, पीएच, ऑक्सीजन स्तर और मिट्टी के माइक्रोबियल समुदाय से प्रभावित होती हैं। यह विघटन चक्र एक जटिल प्रक्रिया है जो अवशेष के प्रकार के आधार पर अलग-अलग समय लेता है।

फसल अवशेष अपघटन में नाइट्रोजन मिनरलाइजेशन और ईमोबलाइजेशन की प्रक्रिया शामिल हैं, ये दोनों प्रक्रिया मिट्टी के सूक्ष्मजीव को शामिल करती हैं। अपघटन के दौरान, मिट्टी के सूक्ष्मजीव फसल अवशेष के कार्बन (सी) पर आस्रित रहते हैं और इस प्रक्रिया के लिए नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है तथा फसल अवशेषों के कारण खेत में कार्बन और नाइट्रोजन अनुपात बढ़ता है। ईमोबलाइजेशन तब होता है जब नाइट्रोजन मिट्टी के सूक्ष्मजीवों द्वारा खाया जाता है और पौधों के लिए उपलब्ध नहीं होता। नाइट्रोजन मिनरलाइजेशन प्रक्रिया मिट्टी के सूक्ष्मजीवों के कारण तब होती है, जब वह खनिज कार्बनिक से अकार्बनिक स्रोतों का विमोचन करते हैं।

मृदा सूक्ष्मजीव फसल अवशेष में मौजूदा कार्बन पर आस्रित हैं और विघटन प्रक्रिया के लिए नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की तुलना में कार्बन की उच्च सघनता के परिणामस्वरूप मिट्टी के सूक्ष्म जीवों को कार्बनिक पदार्थ को तोड़ने और मिट्टी में मौजूद अधिक नाइट्रोजन का उपयोग करने के लिए लंबा समय लगता है। इसे सी:एन अनुपात कहते हैं। यह अनुपात प्राप्त नत्रजन की मात्रा फसल को मिलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। किसी भी अवशेष या भूमि की सी:एन अनुपात 10:1 के आसपास आदर्श मानी जाती है। परंतु यदि यह अनुपात ज्यादा हो तो मृदा के अंदर परिवर्तन होता है। यदि हम गेहूं का भूसा मिट्टी में दबाएं जिसकी सी:एन अनुपात 80:1 होती है जिसके कारण सूक्ष्मजीव क्रियाशील हो जाते हैं तथा तेजी से बढते हैं, उसी प्रकार से धान का सी:एन अनुपात 65:1 होता है। ये ज्यादा मात्रा में कार्बन डाईऑक्साइड पैदा करते हैं, परंतु ये नाइट्रेट नत्रजन को भोजन के रूप में प्रयोग करते हैं जोकि फसल को लेनी होती है। इससे मृदा में नत्रजन की कमी आ जाती है और कमी के लक्षण पत्तियों पर प्रकट होने लगते हैं। साथ ही नत्रजन की कमी के विघटन की क्रिया भी धीमी हो जाती है। इसलिए बुवाई के समय यूरिया डालने से न केवल विघटन प्रक्रिया में तेजी आती है अपितु फसल में नत्रजन की कमी भी नहीं आती।

मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ में सी:एन अनुपात दो प्रमुख कारणों से महत्वपूर्ण है:

- ❖ मिट्टी में उपलब्ध नाइट्रोजन के लिए सूक्ष्मजीवों के बीच प्रतिस्पर्धा रखना तब देखा जाता है जब उच्च सी:एन अनुपात वाले अवशेष मिट्टी में मिलाए जाते हैं।

(शेष पृष्ठ 20 पर)

<sup>1</sup>कृषि विज्ञान केन्द्र, सिरसा, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

# नवम्बर मास के कृषि कार्य



## फसलों में

### धान

पकी फसल की कटाई के लगभग एक सप्ताह पहले खेत से पानी निकाल दें जिससे फसल को काटने में आसानी रहेगी। कटाई के 2-3 दिन बाद कटे पौधों को तख्ते या ड्रम पर पटक कर दाने अलग कर लें। दानों को सुखाकर बोरो में भर लें।

### कपास

कपास की चुनाई करें लेकिन सुबह ओस में तथा अधखिले टिण्डों में से चुनाई न करें। आखिरी चुनाई के बाद खेत में भेड़-बकरियों व अन्य पशुओं को चरने हेतु छोड़ दें ताकि पत्तों व सूण्डीग्रसित टिण्डों को खाने से सूण्डियां भी साथ में नष्ट हो जाएं।

### मूंगफली

फसल की खुदाई करें। खुदाई से एक सप्ताह पहले सिंचाई कर देने से फलियां निकालने में आसानी रहती है व साढ़ी में यदि गेहूं की बिजाई करनी हो तो पलेवा करके खुदाई कर लें अन्यथा मूंगफली के दाने उग जाते हैं।

### गेहूं

बारानी हालातों में सी-306 की बिजाई अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से नवम्बर के पहले सप्ताह तक करें। कम उपजाऊ, कम सिंचित दशा व बारानी क्षेत्रों के लिए डब्ल्यू एच 1080 एवं डब्ल्यू एच 1025 का प्रयोग भी कर सकते हैं। मध्यम उपजाऊ व कम सिंचित दशा के लिए डब्ल्यू एच 1142 एवं डब्ल्यू एच 147 का प्रयोग करें। सिंचित उपजाऊ भूमि में समय पर बिजाई के लिए (25 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक) डब्ल्यू एच 1105, एच डी 2967, डी बी डब्ल्यू 88, डी पी डब्ल्यू 621-50, एच डी 3086, डब्ल्यू एच 283, पी बी डब्ल्यू 550, डब्ल्यू एच 542 की सिफारिश की

लेखक :

- अश्विनी कुमार, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- आर. के. गोदारा, सह-निदेशक (बागवानी)
- आर. के. ग्रोवर, सह-निदेशक (फार्म प्रबन्धन)
- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (पादप रोग विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह, सह-निदेशक, (पशु पालन - लुवास)
- एम. एस. ग्रेवाल, परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)
- अशोक चन्द्र यादव, परामर्शदाता (सब्जी विज्ञान)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

जाती है। पछेती बिजाई (26 नवम्बर से 25 दिसम्बर तक) के लिए डब्ल्यू एच 1021, डब्ल्यू एच 1124, डी बी डब्ल्यू 90, एच डी 3059 एवं राज 3765 किस्मों का प्रयोग करें। कठिया गेहूं के लिए डब्ल्यू एच 896, डब्ल्यू एच 912, डब्ल्यू एच डी 943 किस्मों का प्रयोग करें। पीला रतुआ प्रभावित हरियाणा के उत्तर-पूर्वी क्षेत्रों में किसान पी बी डब्ल्यू 343, पी बी डब्ल्यू 373, डब्ल्यू एच 711, एच डी 2851, डी बी डब्ल्यू 17, सुपर, बरबट आदि किस्में न उगाएं क्योंकि ये किस्में पीला रतुआ के अत्यंत रोगग्राही हैं। सी-306 (सिंचित इलाके) की बिजाई इस माह के दूसरे सप्ताह तक पूरी कर लें। पछेती बिजाई के लिए 50 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ काफी है। बिजाई कतारों में, खाद-बीज ड्रिल या पोरा विधि से 20 सें.मी. की दूरी पर करें। ध्यान रहे कि देसी किस्मों की बिजाई लगभग 6-7 सें.मी. तथा बौनी किस्मों की बिजाई 5-6 सें.मी. से अधिक गहरी न करें।

खरपतवारों की रोकथाम हेतु फसल की शुरू की बढवार में लगभग 30 दिन के अन्दर ही एक बार निराई-गुड़ाई करें। यदि खरपतवारों की रोकथाम शाकनाशकों द्वारा करनी हो तो चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की रोकथाम के लिए 2,4-डी का प्रयोग करें। इसके लिए 250 ग्राम 2,4-डी (सोडियम साल्ट 80%) को या 300 मि.ली. 2,4-डी (एस्टर 34.6%) या एलग्रीप 8 ग्राम 250 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ में छिड़काव करें। गेहूं में मालवा, जंगली पालक, हिरणखुरी व अन्य चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु कारफेन्ट्रोजोन ईथाईल (एफीनिटी) 40% डी. एफ. की 20 ग्राम प्रति एकड़ या सभी प्रकार के चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु ऐली एक्सप्रेस 50% डी.एफ. (मैटसल्फ्यूरॉन 10%+कारफेन्ट्रोजोन 40% मिश्रण) की 20 ग्राम मात्रा प्रति एकड़+0.2% सहायक पदार्थ के हिसाब से 200-250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। यह छिड़काव बौनी किस्मों में बिजाई के लगभग 30-35 दिन बाद व देसी किस्मों में बिजाई के 40-45 दिन बाद (जब पौधों में 3-6 पत्तियां बन जाएं) करना चाहिए। ध्यान रखें 2,4-डी का प्रयोग गेहूं की डब्ल्यू एच-283 किस्म में तथा मिलवां गेहूं के साथ चना, सरसों आदि की फसल में न करें।

### मंडूसी या कनकी व जंगली जई का नियंत्रण

आईसोप्रोटूरान 50% घु.पा. (टोलकान, टारस, ग्रेमिनान, नोसीलोन, रक्षक, हैक्सामार, इपको, आईसोप्रोटूरान, एग्रीलान, मिलरोन) गेहूं की बिजाई के 30-35 दिन बाद 800 ग्राम दवा का प्रति एकड़ के हिसाब से 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

या

आईसोप्रोटूरान 75% घु.पा. (एरिलोन, डैलरान, हिप्रोटूरान, नोसीलान, एगरोन, रक्षक) गेहूं की बिजाई के 30-35 दिन बाद 500 ग्राम दवा का प्रति एकड़ के हिसाब से 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव



करें। ऐसे क्षेत्रों में जहां पर कनकी में आईसोप्रोटूरान प्रतिरोधकता नहीं आई है, वहां आईसोप्रोटूरान 75% (डी.ई. नोसिल) का प्रयोग लाभदायक है। प्रतिरोधकता वाले क्षेत्र में आईसोप्रोटूरान का प्रयोग बंद कर दिया गया है।

या

आईसोप्रोटूरान-सहायक पदार्थ-सेल्वेट (टेन्क मिक्स) : आईसोप्रोटूरान वर्गीय खरपतवारनाशक की 3/4 सिफारिश की गई मात्रा को 250 लीटर पानी में नान-आयोनिक सहायक पदार्थ (सेल्वेट) के 0.1% के छिड़काव घोल में मिलाकर बिजाई के 30-35 दिन बाद छिड़कें। बाजार में अन्य उपलब्ध सहायक पदार्थ टी पॉल व सैल्विट हैं।

गेहूं की बिजाई यदि दिसम्बर के प्रथम सप्ताह या बाद में हो तो आईसोप्रोटूरान 200 ग्राम प्रति एकड़ पहली सिंचाई के तुरंत पहले करने से जंगली जई, कनकी व बथुआ का नियंत्रण हो जाता है।

धान-गेहूं फसल-चक्र वाले क्षेत्रों में जहां 10-15 वर्षों से आईसोप्रोटूरान का प्रयोग किया गया है वहां कनकी में इस खरपतवारनाशक के विरुद्ध प्रतिरोधकता आ गई है। अतः प्रतिरोधकता से प्रभावित इलाकों में आईसोप्रोटूरान की बजाय निम्नलिखित में से किसी एक खरपतवारनाशक का प्रयोग करना ज्यादा उचित रहेगा :

- क्लोडीनाफोप (टोपिक या मुल्ला या प्वाइंट या रक्षक प्लस या जय विजय या टोपल) 15% घु.पा. 160 ग्राम प्रति एकड़ बिजाई के 30-35 दिन बाद;

या

- सल्फोसल्फ्यूरान (लीडर, सफल-75 या एस एफ-10) 75% घु.पा. 13 ग्राम प्रति एकड़ + 500 मि.ली. पृष्ठ सक्रिय क्रमक/ चिपचिपा या सहायक पदार्थ बिजाई के 30 से 35 दिन बाद

या

- फीनोक्साप्रोप (पूमा सुपर) 10% ई.सी. 480 मि.ली. या फीनोक्साप्रोप (पूमा पावर) 400 ग्राम+200 ग्राम सहायक पदार्थ प्रति एकड़ बिजाई के 30 से 35 दिन बाद।

या

- पीनोक्साडेन (एक्सियल) 5 प्रतिशत ई.सी. 400 मि.ली. मात्रा प्रति एकड़ बिजाई के 30-35 दिन बाद।

कनकी प्रतिरोधकता वाले क्षेत्रों में मिले जुले (चौड़ी व संकरी पत्ती वाले) खरपतवारों के नियंत्रण हेतु पीनोक्साडेन (एक्सियल) या क्लोडीनाफोप (टोपिक या मुल्ला या प्वाइंट या जयविजय) फीनोक्साप्रोप (पूमा सुपर या पूमा पावर) की ऊपर सिफारिश की गई मात्रा की बिजाई के 30-35 दिन बाद छिड़काव करें तथा इसके एक सप्ताह बाद 2,4-डी या मैटसल्फ्यूरान (एल्ग्रीप) या कारफेन्ट्राजोन (ऐफीनीटी) या ऐलीएक्सप्रेस की सिफारिश की हुई मात्रा का छिड़काव करें। उपरोक्त रासायनों को मिलाकर छिड़काव न करें।

गेहूं में मिले जुले खरपतवारों (चौड़ी व संकरी पत्तियों वाले) विशेषकर आईसोप्रोटूरान-प्रतिरोधी क्षेत्रों में टोटल (सल्फोसल्फ्यूरान + मैटसल्फ्यूरान, रेडीमिक्स सहायक पदार्थ सहित) की 16 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ या एटलांटिस (मिजोसल्फ्यूरान + आयडोसल्फ्यूरान सहायक

पदार्थ सहित तैयार मिश्रण) की 160 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ या वेस्टा (क्लोडीनाफोप + मैटसल्फ्यूरान, रेडीमिक्स) की 160 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से प्रयोग करें। ध्यान रहे कि जिन खेतों में गेहूं के बाद ज्वार या मक्की की फसल लेनी हो उन खेतों में लीडर, टोटल व एटलांटिस का छिड़काव न करें।

उपर्युक्त में से किसी एक शाकनाशक दवा का 200-250 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

गेहूं में मिले-जुले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु एकोर्ड प्लस 22 प्रतिशत ई.सी. (फिनोक्साप्रोप 8 प्रतिशत+ मैटीब्यूजीन 14 प्रतिशत रेडीमिक्स) का 500 मि.ली. प्रति एकड़ के हिसाब से 200 लीटर पानी में घोलकर बिजाई के 30-35 दिन उपरांत (जब खरपतवार 2-4 पत्तियों के हों) छिड़काव करें। लेकिन गेहूं की किस्मों पी बी डब्ल्यू 550, डब्ल्यू एच 542 व डब्ल्यू एच 283 में इसका प्रयोग न करें।

गेहूं में यदि कनकी के प्रति शाक प्रतिरोधकता उत्पन्न हो गई है तो इसके नियंत्रण के प्रबन्धन के लिए बिजाई के तुरंत बाद व उगने से पहले पैण्डिमेथालीन 30 ई.सी. को 2 लीटर प्रति एकड़ के हिसाब से 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़कें। इसी के क्रमबद्ध में उगी हुई खरपतवारनाशक पिनोक्साडेन (एक्सियल) 5% ई.सी. 400 मि.ली. या क्लोडीनाफोप 15% डब्ल्यू. पी. 160 ग्राम या सल्फोसल्फ्यूरान 75% डब्ल्यू. जी. 13 ग्राम या टोटल 16 ग्राम या एटलांटिस 160 ग्राम का प्रति एकड़ की दर से बिजाई के 30-35 दिन बाद 200 लीटर पानी में छिड़काव करें।

गेहूं की बौनी किस्मों में यूरिया खाद 60 कि.ग्रा. व डी.ए.पी. 50 कि.ग्रा. या सिंगल सुपर फास्फेट 150 कि.ग्रा. तथा जिंक सल्फेट 10 कि.ग्रा. प्रति एकड़ के हिसाब से बोते समय ज़मीन में ड्रिल करें। हरियाणा के अम्बाला ज़िले में 40 कि.ग्रा. तथा अन्य क्षेत्रों में 20 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति एकड़ की दर से बोते समय ड्रिल करने की सिफारिश की जाती है। बोने के 21-25 दिन बाद हल्का पानी लगाने से पहले खड़ी फसल में 60 किलोग्राम यूरिया बखेर दें। रेतीली ज़मीन में गेहूं बोने के बाद ही दी जाने वाली नत्रजन खाद की मात्रा को दो बराबर हिस्सों में पहला तथा दूसरा पानी लगाने के बाद खेत में छिड़क दें तथा बत्तर आने पर खेत की गोड़ी करें। गेहूं की देसी किस्मों में खाद का प्रयोग बौनी किस्मों में दी जाने वाली खाद की मात्रा का आधा ऊपर बताए गए समय तथा तरीके के अनुसार प्रयोग करें।

गेहूं में लोहे की कमी में नीचे की पत्तियां हरी तथा नई निकलने वाली पत्तियां पीली धारीदार या पूर्णतया पीली हो जाती हैं। यह ट्यूबवैल के पानी में बाईकार्बोनेट की अधिकता के कारण प्रकट होती हैं। इसके उपचार के लिए गेहूं की फसल पर 0.5% फैरस सल्फेट घोल के 8-10 दिन के अंतर पर लगातार 2-3 छिड़काव करें। बाईकार्बोनेट को उदासीन करने के लिए पानी की जांच करवाकर आवश्यकता अनुसार जिप्सम डालें। फैरस सल्फेट को हरा कसीस के नाम से भी जाना जाता है। यह हरे रंग का होना चाहिए, लाल रंग का नहीं क्योंकि इस रंग के छिड़कने से लाभ नहीं होगा।

दीमक से फसल को बचाने के लिए बुवाई से एक दिन पहले 150 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. पानी में मिलाकर कुल 5 लीटर घोल

बनाएं व पक्के फर्श पर 100 किलोग्राम गेहूं को फैलाकर इस घोल से उपचारित करें।

ममनी या टुण्डू से बचाव के लिए बीजने से पहले ओसाई करके ममनीयुक्त दाने, जो रंग में काले-भूरे, आकार में छोटे, गेहूं के सामान्य दाने से करीब एक-चौथाई और हल्के होते हैं, निकाल दें। गेहूं के भारी स्वस्थ बीज पानी में नीचे बैठ जाते हैं और ममनीयुक्त दाने पानी के ऊपर तैरने लगते हैं जिन्हें निकाल कर नष्ट कर दें और नीचे बैठे बीज को छाया में सुखाकर बोयें। बालों व पत्तों के कंडुआ से बचाव हेतु वीटावैक्स या बाविस्टिन या (2 ग्राम/किलोग्राम बीज) या रैक्सिल-2 डी.एस. (1 ग्राम/किलोग्राम बीज) से बीज का उपचार करें। जिन खेतों में पिछले वर्ष पत्तियों का कंडुआ (फ्लैग स्मट) देखा गया हो, उनमें यथासंभव गेहूं न लगाएं या रोगरोधी किस्म डब्ल्यू एच 283 की काशत करें। करनाल बंट नामक बीमारी को रोकने के लिए थाइरम (2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) से बीजोपचार करें। थाइरम उपर्युक्त फफूंदनाशकों के साथ मिश्रणीय है।

गुडगांव व महेन्द्रगढ़ जिलों में मोल्या नामक बीमारी के कारण खेत में कहीं-कहीं पौधे बौने, पीले व सूखे से दिखाई देते हैं। इनसे बचाव के लिए ऐसे खेतों में गेहूं न लेकर जौ की रोगरोधी किस्म सी-164, सरसों, चना या बाजरा लें जिससे कि खेत में सूत्रकृमियों की संख्या घटती रहे। जिन खेतों में यह समस्या गंभीर हो रही है उस खेत में बिजाई से पूर्व 13 किलोग्राम फ्यूराडान 3-जी प्रति एकड़ मिला दें। ऐसे खेतों में गेहूं की बिजाई 15 नवम्बर से पहले करना भी ठीक है।

### जौ

बारानी क्षेत्रों में जौ की समय पर बिजाई अक्तूबर माह के दूसरे पखवाड़े से शुरू कर दें व सिंचित क्षेत्रों में 15-30 नवम्बर के बीच कर लें। जौ के लिए बी एच-75, बी एच-885, बी एच-393, बी एच 946 व बी एच-902 बीजें। समय पर बिजाई के लिए बारानी में 30, सिंचित क्षेत्रों में 35 किलोग्राम व पछेती बिजाई के लिए 45 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ डालें। बिजाई कतारों में लगभग 22 सें.मी. की दूरी पर करें। पछेती बिजाई और बारानी क्षेत्रों में 18-20 सें.मी. कतारों का फासला अच्छा पाया गया।

जौ की अच्छी फसल लेने के लिए 24 कि.ग्रा. शुद्ध नाइट्रोजन (जो कि 52 कि.ग्रा. यूरिया खाद से ली जा सकती है) तथा 12 किलोग्राम शुद्ध फास्फोरस (75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) का अवश्य प्रयोग करें। आधी नाइट्रोजन की खाद व पूरी फास्फोरस बिजाई के समय पोरें। बाकी नाइट्रोजन की खाद को पहले पानी के साथ दें। ज़मीन में पोटाश की कमी हो तो 6 कि.ग्रा. शुद्ध पोटाश (10 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) भी अवश्य डालें। रेतीली ज़मीन में प्रति एकड़ 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट का भी प्रयोग करें। बारानी जौ की फसल में 12 कि.ग्रा. शुद्ध नाइट्रोजन तथा 6 कि.ग्रा. शुद्ध फास्फोरस बिजाई के समय ड़िल करें। ये मात्रा 25 कि.ग्रा. यूरिया व 14 कि.ग्रा. डी. ए. पी. से दी जा सकती है।

दीमक से बचाव के लिए 600 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. को पानी में मिलाकर कुल 12.5 लीटर घोल बनाकर बुवाई से पहले दिन 100 किलोग्राम बीज का उपचार करें। ऐसे बीज को रात भर पक्के फर्श पर पड़ा रहने दें। नमी से गेहूं व जौ का बीज फूल जाता है अतः सीड ड़िल के सुराख 10% ज़्यादा खोलें।

बोने से पहले बीज का कार्बेन्डाजिम या विटावैक्स (2.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से उपचार करें। उपचार बंद कंडुआ, जालीदार व धारीदार धब्बों वाले रोगों से बचाव करता है।

नोट : यूरिया खाद लगातार डालते-डालते फास्फोरस, पोटाश तथा ज़िंक की बहुत कमी हो गई है। अतः अब अकेले यूरिया खाद से गेहूं या तिलहन की अच्छी फसल नहीं ली जा सकती। इसलिए नहरी तथा बारानी ज़मीन में नत्रजन तथा फास्फोरस 2 : 1 के अनुपात में डालें और 10 किलोग्राम ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ अवश्य प्रयोग करें। संतुलित खाद के बिना पूरी उपज लेना असंभव है।

### लूसर्न

लूसर्न टाईप-9 बिजाई के लिए उत्तम किस्म है। इसकी बिजाई इस माह के प्रथम सप्ताह तक कर लें। 4-5 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ के हिसाब से कतारों में 30 सें.मी. की दूरी पर 5 सें.मी. गहराई में बीजें।

लूसर्न बोते समय 22 किलोग्राम यूरिया खाद तथा 250 कि.ग्रा. सुपर फास्फेट प्रति एकड़ के हिसाब से डालें। इस खाद को ड़िल द्वारा 10 सें.मी. गहराई तक डालना चाहिए। पिछले वर्ष वाली रिजका (लूसर्न) में नवम्बर में 312 कि.ग्रा. सुपर फास्फेट प्रति एकड़ डालें।

### बरसीम

समय पर बीजी गई फसल की पहली कटाई इस माह के अंतिम सप्ताह में करें तथा 15-20 दिन के अंतर पर सिंचाई करें।

### जई

जई की किस्म ओ एस-6, ओ एस-7 एवं एच जे 8 की बिजाई इस माह के मध्य तक पूरी कर लें। छोटे दाने वाली किस्मों (एच जे-114) का 30 किलोग्राम बीज व मोटे दानों का 40 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ काफी है। 16 किलोग्राम नाइट्रोजन (35 कि.ग्रा. यूरिया) बिजाई के समय तथा 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (35 कि.ग्रा. यूरिया) पहली सिंचाई के समय डालें। चारे व बीज की अधिक पैदावार के लिये बीज को बिजाई से पहले एजोटोबैक्टर (तीन पैकेट प्रति एकड़ बीज) से उपचारित करें।

### चना

चने की बिजाई यदि पूरी न की हो तो शीघ्र ही पूरी कर लें। चने की किस्म (हरियाणा चना नं. 1) पछेती बिजाई के लिए 35 कि.ग्रा. डी.ए.पी. या 100 कि.ग्रा. सुपर फास्फेट व 12 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से ड़िल करके बीज के नीचे डालें। सिंचित इलाकों में 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट का प्रयोग भी करें।

चने की फसल को दीमक से बचाने के लिए 100 कि.ग्रा. बीज को 850 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस.एल. या 1500 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. से बुवाई से एक दिन पहले उपचारित करें परंतु उपचार से पहले पानी में मिलाकर कुल दो लीटर घोल बनाएं व फिर 100 किलोग्राम बीज में मिलाएं।

रोगग्रस्त बीज द्वारा उत्पन्न अंगमारी से बचाव के लिए बाविस्टिन (2.5 ग्राम/किलोग्राम बीज) से बीजोपचार हितकर पाया गया है जो कि राइजोबियम का टीका लगाने से पूर्व किया जा सकता है।

## सरसों व राया

उन्नत किस्में जैसे आर एच-30, टी-59, आर एच-8113, आर बी-50, आर एच-8812, आर एच-781, आर एच-819, आर एच 9304, आर एच 0119, आर एच-9801, आर एच-0406, आर एच-0749, आर बी-9901 की सिफारिश की गई है। तना गलन रोग से बचाव के लिए कार्बेन्डाजिम (2 ग्राम/किलोग्राम बीज) नामक दवा से उपचारित बीज की ही बिजाई करें।

सरसों, राया व तारामीरा की बिजाई शीघ्र ही पूरी कर लें। तोरिया, सरसों व राया की बारानी फसलों के लिए 16 कि.ग्रा. शुद्ध नाइट्रोजन तथा 8 कि.ग्रा. शुद्ध फास्फोरस प्रति एकड़ बिजाई के समय बीज के नीचे ड़िल करें। यदि सरसों या तोरिया की फसल सिंचित ली जा रही है तो इसके लिए 24 कि.ग्रा. शुद्ध नाइट्रोजन और 8 कि.ग्रा. शुद्ध फास्फोरस/एकड़ प्रयोग करें। इसी तरह सिंचित राया के लिए 32 कि.ग्रा. शुद्ध नाइट्रोजन और 12 कि.ग्रा. शुद्ध फास्फोरस/एकड़ बिजाई के समय पोरा करें। रेतीली ज़मीन में 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ का भी प्रयोग करें। भारी ज़मीन में सारी खादें बिजाई के समय ड़िल करें परंतु रेतीली ज़मीन में आधी नाइट्रोजन बोते समय और शेष आधी मात्रा पहला पानी लगाते समय डालें। सरसों एवं राया की बुवाई ट्रैक्टर चालित रीजर-सीडर से करें। फास्फोरस की मात्रा सिंगल सुपर फास्फेट द्वारा डालना उपयोगी है क्योंकि इससे सल्फर की पूर्ति हो जाती है।

तारामीरा की अच्छी फसल लेने के लिए, जो कि कमजोर ज़मीन में ली जाती है, 12 कि.ग्रा. शुद्ध नाइट्रोजन/एकड़ बिजाई के समय डालें।

राया में मरगोज़ा (ओरोबैन्की) परजीवी खरपतवार के नियंत्रण के लिए राऊंडअप/ग्लाइसेल (ग्लाइफोसेट 41% एस. एल.) की 25 मि.ली. मात्रा प्रति एकड़ बिजाई के 25-30 दिन बाद व 50 मि.ली. मात्रा प्रति एकड़ बिजाई के 50 दिन बाद 150 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। छिड़काव हमेशा फ्लैट फैन नोज़ल व नैप सैक स्प्रेयर से करें। अगर इस खरपतवारनाशक का सही समय पर व सही मात्रा में उपयोग न किया जाए तो इससे सरसों की फसल को भी हानि पहुंच सकती है। इसलिए फसल पर दोबारा या ज़्यादा मात्रा में छिड़काव न करें। ध्यान रखें कि छिड़काव के समय या बाद में खेत में नमी का होना ज़रूरी है इसके लिए छिड़काव से 2-3 दिन पहले या बाद में सिंचाई करें। सुबह के समय पत्तों पर ओस/नमी बनी होती है तब भी छिड़काव न करें।

इन फसलों में यदि चितकबरा कीट (पेंटिड बग) जिसको धोलिया भी कहते हैं और आरा मक्खी की सूण्डी का प्रकोप हो तो 200 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। बालों वाली सूण्डी (कातरा) का प्रकोप तोरिया, सरसों, बरसीम आदि फसलों पर हो जाता है। इसकी रोकथाम के लिए 500 मि.ली. एकालक्स 25 ई.सी. या 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस. एल. या 200 मि.ली. नुवान 76 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

## गन्ना

यदि दुमदार कंडुआ नज़र आए तो गन्ने के अंगुओं के ऊपर

सावधानी से बोरी चढ़ाकर नीचे से काट लें, फिर पूरे पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें। लाल सड़न रोग से प्रभावित पौधों को भी उखाड़कर नष्ट कर दें। गन्ने में पायरिल्ला या सफेद मक्खी का आक्रमण हो तो 600-800 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 400-600 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें।

## पानी की उपयोगिता बढ़ाएं

पानी की उपयोगिता बढ़ाने के लिए यदि किसान अपनी बहुत रेतीली ज़मीन में एक भारी सा रोलर पानी लगाने के 48 घण्टे के बाद 6-7 दफा फेर दें और इसके बाद कम गहरी जुताई करके इसमें गेहूँ आदि बीजें तो बाद में ऐसे खेतों में पानी कम लगाना पड़ेगा। रोलर का वज़न तकरीबन 800 कि.ग्रा. होना चाहिए और यह ट्रैक्टर से खींचा जा सकता है।

आवश्यक : ट्यूबवैल के पानी और मिट्टी को, मिट्टी पानी परीक्षण प्रयोगशाला से अवश्य टेस्ट करवाकर प्रयोग करें। पानी का नमूना लेने के लिए ट्यूबवैल को 1 से 2 घंटा चलाने के बाद एक साफ-सुथरी शीशे या प्लास्टिक की बोतल में पानी भर लें। उस बोतल पर अपना नाम व पता, खेत का नाम, ट्यूबवैल की गहराई तथा जिस किस्म की ज़मीन में पानी लगाना है, उसका विवरण लिख दें। इसी तरह जिस खेत में पानी लगाना है उस खेत की मिट्टी का नमूना 15 सें.मी. गहराई तक का 4-5 जगह से लेकर, मिश्रण का 1/2 किलोग्राम नमूना लें।



## सब्जियों में

### टमाटर

पके फलों को तोड़कर बाज़ार भेजें। अधपके फलों को ही तोड़ लें और कमरे में रखें। पके हुए फलों को चिड़ियां खेत में नुकसान पहुँचाती हैं। विषाणु रोग को फैलने से बचाने के लिए तथा हानिकारक कीटों से रक्षा के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ खेत पर छिड़काव करें। विषाणु ग्रस्त पौधों को खेत से जड़ सहित उखाड़ कर नष्ट कर दें। फफूंद रोग होने पर 800 ग्राम डाईथेन एम-45 को घोलकर प्रति एकड़ खेत में छिड़काव करें। यह दवा मैलाथियान के साथ भी घोलकर छिड़की जा सकती है। दवा प्रयोग के बाद एक सप्ताह तक इन्हें न खायें और आवश्यकतानुसार 15 दिन की अवधि पर छिड़काव दोहराते रहें। फल छेदक कीट लगने पर 500 ग्राम कार्बेरिल 50 घु.पा. या 75 मि.ली. फैनवेलरेट 20 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें। समय-समय पर काने फलों को तोड़ कर मिट्टी में दबा दें।

इस माह बसन्त ऋतु की फसल की पौध तैयार करने के लिए नर्सरी में बीजों की बिजाई करें। उन्नत किस्में जैसे हिसार अरुण, हिसार लालिमा, हिसार ललित या अन्य उचित किस्मों का प्रयोग करें। एक एकड़ के लिए 200 ग्राम बीज की आवश्यकता होगी। बीज को एमीसान 2.5 ग्राम या 2 ग्राम कैप्टान या थाइरम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें।



## बैंगन

बैंगन के कच्चे फलों को समय पर तोड़कर बाज़ार में भेजें। किसी चाकू या अन्य धारदार यंत्र से फलों को तोड़ें। गोभ व फल छेदक के लिए 75 मि.ली. स्पाइनोसेड (ट्रेसर 45 एस. सी.) को प्रति एकड़ 80 लीटर पानी में मिलाकर 15 दिनों के अंतर पर तीन छिड़काव करें। फल एक सप्ताह के बाद तोड़ें। काने फल और मुरझाई हुई कोंपलें तोड़कर भूमि में दबा दें। बसंत की फसल के लिए इस माह भी नर्सरी की बिजाई की जा सकती है। उन्नत किस्में जैसे बी आर 112, हिसार श्यामल, हिसार प्रगति व एच एल बी-25 बीजें। एक एकड़ खेत के लिए पौध तैयार करने के लिए 200 ग्राम बीज की आवश्यकता होगी। बीज को नर्सरी में बोने से पहले थाइरम या कैप्टान (2.5 ग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज) से उपचारित कर लें। फल गलने से रोकने के लिए 400 ग्राम डाईथेन एम-45 को 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें।

## मिर्च

जुलाई-अगस्त में रोपी गई मिर्च की फसल यदि मसाले के लिए लेनी हो तो इस माह फीके लाल रंग के फलों को तोड़कर छत पर या अन्य स्थान पर सुखाएं। यदि फसल हरी मिर्चों के लिए है तो हरे फलों को तोड़कर बाज़ार भेजें तथा आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें। बसन्त ऋतु की मिर्च की फसल के लिए नर्सरी की बिजाई करें (यदि पहले न की हो तो) उन्नत किस्में जैसे एन पी 46-ए व पन्त सी-1, पूसा ज्वाला, हिसार शक्ति, हिसार विजय का प्रयोग करें। एक एकड़ खेत के लिए लगभग 400 ग्राम बीज की आवश्यकता पड़ती है।

बिजाई से पहले बीजों को एमिसान 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज या कैप्टान 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज नामक दवा से उपचारित कर लें। एक ग्राम दवा को प्रति 400-500 ग्राम बीज की दर से उपचारित करें। शुरू से ही विषाणु से प्रभावित पौधे उखाड़ कर नष्ट कर दें। उखाड़ते समय ध्यान रहे कि ऐसे पौधों का संपर्क स्वस्थ पौधों से न होने पाये। छिड़काव करने के बाद एक सप्ताह तक फलों को खाने के लिए प्रयोग न करें। फसल को चुरड़ा व अष्टपदी (माईट) कीड़ों से बचाने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर 15-20 दिन के अंतर पर छिड़कें।

## भिण्डी

भिण्डी की फलियों को नर्म अवस्था में तोड़कर बाज़ार भेजें। वर्षा ऋतु में बीजी गई फसल इस माह तक समाप्त हो जाएगी। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें।

## कद्दू जाति की सब्जियां

कद्दू जाति की सब्जियां जैसे कद्दू, लौकी, तोरी, करेला, टिण्डा आदि के फलों को बाज़ार भेजें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। खरीफ के मौसम में लगाई गई फसल इस माह में समाप्त हो जाएगी। इस वर्ग की सब्जियां अधिक ठण्डा मौसम सहन नहीं कर पातीं। बसन्तकालीन (अगेती) फसल के लिए इस माह के अंत में पॉलिथीन की थैलियों में खाद-मिट्टी भर कर बिजाई कर सकते हैं। दिसम्बर से जनवरी माह तक उन्हें पाले से बचाकर रखें तथा फरवरी के शुरू में पौध वाली थैलियों के

ऊपर के खोल को हटा कर बिना जड़ों को नुकसान पहुंचाए पौध खेत में लगा दें। ऐसा करने से बसन्तकालीन फसल जल्दी ली जा सकती है।

## शकरकन्दी व अरबी

तैयार फसल की खुदाई करें तथा उन्हें भली प्रकार तैयार करके बाज़ार बेचने के लिए भेजें।

## मटर

मटर की अगेती किस्म आर्कल से इस माह फलियां मिलेंगी। उचित अवस्था में फलियों को तोड़ें और बेचने के लिए बाज़ार भेजें। फसल की आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा एक या दो बार फसल की निराई की आवश्यकता होती है।

बोनविले किस्म, जिसकी बिजाई आपने अक्तूबर माह में की है उसकी देखभाल करें। पहली सिंचाई बिजाई के लगभग तीन सप्ताह बाद, यूरिया खाद (13-15 किलोग्राम प्रति एकड़ की दर से) देकर करें। इस माह के प्रथम पखवाड़े में मटर की पछेती बिजाई की जा सकती है। बिजाई का तरीका व खेत की तैयारी वैसे ही करें जैसे पहले की फसल के लिए बताया गया था।

हानिकारक कीड़ों से फसल की रक्षा करें। मटर का खुरची (थ्रिप्स) से बचाव के लिए 60 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 150 मि.ली. सायपरमेथ्रिन 10 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ खेत में छिड़काव करें। यदि आवश्यकता हो तो 2 सप्ताह बाद छिड़काव दोबारा करें। पत्ती में सुरंग बनाने वाले कीड़ों से रक्षा पाने के लिए 400 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या 500 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ खेत में छिड़काव करें। ध्यान रहे कि ये दवाएं मनुष्यों के लिए हानिकारक हैं। अतः दवा प्रयोग के बाद लगभग 3 सप्ताह तक फलियों को खाने के लिए प्रयोग न करें। चूर्णी रोग लगने पर 500 ग्राम घुलनशील गंधक (सल्फेक्स) या 200 ग्राम बाविस्टीन या कैराथेन 40 ई.सी. 80 मि.ली. 200 लीटर पानी में घोल कर प्रति एकड़ छिड़काव करें। बोने से पहले बीजों का कैप्टान या बाविस्टिन (2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से उपचार करें।

## फूलगोभी

अगेती फसल के तैयार फूलों को काट कर बाज़ार में भेजें। इस माह पूसा कातकी किस्म की फसल समाप्त हो जाएगी। अतः खेत को तैयार करके फूलगोभी की दूसरी फसल लगाएं। अर्द्ध पछेती किस्म हिसार-1 के खेत की देखभाल करें। सिंचाई करना आवश्यक है व खरपतवार निकालें तथा नाइट्रोजन वाली खाद खड़ी फसल में दो बार दें-प्रथम बार पौधरोपण के लगभग 3-4 सप्ताह बाद तथा दोबारा पौधों में गांठ (फूल) बनते समय। फूलगोभी की पछेती किस्म स्नोबाल-16 की पौध नर्सरी में तैयार करें। खेत की तैयारी के बारे में पहले बताया जा चुका है। स्नोबाल-16 किस्म के बीज की इस माह के प्रथम पखवाड़े में भी नर्सरी में बिजाई की जा सकती है, जैसा कि पहले बताया जा चुका है। फूलगोभी की पछेती किस्म स्नोबाल-16 की पौध तैयार करने के लिए बीज को बोने से पहले एमिसान या कैप्टान (2.5 ग्राम/किलोग्राम बीज) से उपचारित करें। अंकुरण के तीसरे व दसवें दिन बाद 0.2 प्रतिशत कैप्टान के घोल से नर्सरी को सिंचित करें।

हानिकारक कीड़ों (चेपा, कूबड़ वाला कीड़ा, सूण्डी और डायमण्ड बैक मॉथ) से रक्षा पाने के लिए 400 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ खेत में छिड़कें। दवा का प्रयोग आवश्यकता होने पर दस दिनों के बाद दुबारा करें। दवा के प्रयोग के बाद फसल को एक सप्ताह तक खाने के काम में न लें। इन कीड़ों की रोकथाम बंदगोभी, मूली आदि में भी इसी प्रकार करें। डायमण्ड बैक मॉथ के लिए 300 मि.ली. डायजिनान 20 ई.सी. या 60 मि.ली. न्युवान 76 ई.सी. या 400 ग्राम बेसिलस थूरिंगिएंसिस (बी टी) बायोआस्प प्रति एकड़ खेत में छिड़कें।

### बन्दगोभी और गांठगोभी

इन दोनों फसलों में से (अगेती फसल जो रोपी जा चुकी है) खरपतवार निकालें तथा खड़ी फसल में दो बार नाइट्रोजन वाली खाद (11 किलोग्राम यूरिया खाद प्रति एकड़ की दर से प्रति बार) दें तथा सिंचाई करें। प्रथम मात्रा पौध की रोपाई के 3-4 सप्ताह बाद तथा दूसरी मात्रा पौधों में गांठ बनने के समय दें। पछेती किस्मों की पौध तैयार होने पर उन्हें तैयार खेत में रोपें। खेत तैयार करने की विधि पिछले माह बताई गई है। इस माह भी पछेती किस्मों की प्रथम पखवाड़े में नर्सरी में बिजाई कर सकते हैं। बोने से पहले बीज को एमिसान या कैप्टान 2.5 ग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज से उपचारित करें। पहले रोपी गई फसल से तैयार गांठों को काटकर बाज़ार में भेजें।

### पालक

पालक की तैयार फसल के पत्तों को काटकर व बंडलों में बांधकर बाज़ार भेजें। नियमित सिंचाई करें तथा खड़ी फसल में दो बार नाइट्रोजन खाद दें (22 किलोग्राम यूरिया खाद प्रति एकड़ खेत में प्रति बार दें)। यूरिया खाद देने के बाद सिंचाई करना आवश्यक है। पालक की नई बिजाई भी इस माह की जा सकती है। खेत की तैयारी व उन्नत किस्मों के बारे में पहले बताया जा चुका है।

### लहसुन

लहसुन की फसल की सिंचाई करें, खरपतवार निकालें तथा बिजाई के लगभग एक माह बाद 16 किलोग्राम नाइट्रोजन अर्थात् 35 किलोग्राम यूरिया खाद प्रति एकड़ खेत की दर से खड़ी फसल में दें। टॉप ड्रैसिंग करें तथा सिंचाई करें।

### मूली, शलगम व गाजर

देसी किस्मों की मूली की जड़ों को उखाड़कर, धोकर तथा गाजर व शलगम के पत्तों को काटकर, बाज़ार बेचने के लिए भेजें। जड़ों को नर्म अवस्था में उखाड़ना आवश्यक है क्योंकि सख्त होने के बाद ये खाने लायक नहीं रहती तथा बाज़ार में इनका उचित मूल्य भी नहीं मिलता। हानिकारक कीटों से बचाने के लिए 250-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ खेत पर छिड़काव करें। आवश्यकता पड़ने पर दस दिनों के बाद यही छिड़काव फिर दोहराएं। दवा का प्रयोग करने के बाद एक सप्ताह तक फसल को खाने के काम में न लें। फसल की खुली जड़ों पर मिट्टी चढ़ाये तथा आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। पिछले माह बीजी गई विलायती किस्मों की फसल की देख-रेख करें। इस माह भी इन फसलों की

विलायती किस्में बीजी जा सकती हैं। खेत की तैयारी के बारे में पहले बताया जा चुका है। बोने से पहले बीज को कैप्टान या थाइरम (2.5 ग्राम/किलोग्राम बीज) से उपचारित करना आवश्यक है।

### प्याज़ (रबी)

प्याज़ की पनीरी की देखभाल करें, सिंचाई करें व खरपतवार निकालें। यदि बिजाई न की हो तो इस माह के शुरू तक कर लें।

### खरीफ प्याज़

प्याज़ की फसल की देखभाल करें तथा सिंचाई करें। इस माह के अंत में खुदाई शुरू की जा सकती है। यदि गन्तों की बढ़वार पूरी हो गई हो तो खुदाई से लगभग 12-14 दिन पहले सिंचाई बन्द कर दें। गन्तों को बाज़ार बेचने के लिए भेजें।

### आलू

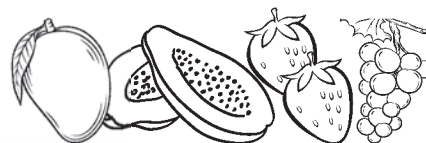
बिजाई के लगभग 25-30 दिनों के बाद मिट्टी चढ़ाएं तथा इसी समय 24 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (55 कि.ग्रा. यूरिया खाद) प्रति एकड़ की दर से दें। हानिकारक कीड़ों मुख्यतया चेपा (अल) से रक्षा के लिए 300 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. को 300 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर दस दिनों के अंतर पर आवश्यकतानुसार छिड़काव करें। ध्यान रखें कि आलुओं की खुदाई से कम से कम तीन सप्ताह पूर्व दवाओं का प्रयोग बंद कर दें। इन कीटनाशक दवाओं के प्रयोग से विषाणु रोग का भी नियंत्रण हो जाएगा क्योंकि ये कीट भी इस बीमारी को फैलाते हैं। विषाणु रोग से ग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। अगेता झुलसा रोग लगने पर फसल पर 600-800 ग्राम ब्लाईटॉक्स या जाइनेब या मैन्कोजेब के 250 लीटर पानी के घोल से प्रति एकड़ 15 दिनों के अंतर पर छिड़काव करते रहें।

### सौंफ, धनिया व मेथी

सौंफ की बिजाई 15 अक्टूबर से 25 अक्टूबर तक करें। धनिया व मेथी की सीधी बिजाई के लिए नवम्बर का माह उपयुक्त है। सौंफ को रोपाई विधि से भी लगाया जा सकता है। सौंफ की पी एफ 35, जी एफ 1, एच एफ 33, धनिया की नारनौल सलैक्शन, पंत हरीतिमा, हिसार आनन्द तथा मेथी की पूसा अर्ली बंचिंग, हिसार सोनाली व कसूरी उन्नत किस्में हैं, इनकी बिजाई नवम्बर माह में करें।

### अन्य सब्जियां

ग्वार व लोबिया की फलियों को तोड़कर बाज़ार में बेचने के लिए भेजें। ये फसलें इस माह तक समाप्त हो जाएंगी। सलाद की फसल की संभाल करें तथा पौध की रोपाई न की हो तो करें। धनिया तथा मेथी की फसल की देखभाल करें तथा पत्तियां खाने लायक होने पर काट कर बाज़ार भेजें। सिंचाई करें तथा खाद दें।



## फलों में

इस महीने तापक्रम कम होने लगेगा। इसलिए नये बागों में लगाये पौधों को ठण्ड व पाले से बचाना आवश्यक है। नये लगाये गए और छोटे

पौधों के ऊपर बाजरा या सरकण्डे की झोंपड़ी बनाएं और पूर्व-दक्षिण दिशा में इसको खुला रखें ताकि पौधे को सूर्य की रोशनी मिल सके। पतझड़ वाले पौधों की पत्तियां ठण्ड से झड़ जाती हैं (जैसे अंगूर, आड़ू, अनार, आलूबुखारा आदि) इन पौधों को पाले से बचाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। पाले से बचाने के लिए बागों में उचित नमी को बनाए रखना भी आवश्यक है। इसलिए नियमित अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। अधिक पाले वाली रात को शाम के समय बागों की सिंचाई अवश्य करनी चाहिये व घास-फूस से धुआं करना चाहिये।

### नींबू जाति के फल

मोटल लीफ (जस्ते की कमी) से पत्तों की नसों के दोनों ओर की जगह सफेद-सी हो जाती है। 500 मि.ग्रा. प्लांटामाईसिन और 2 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराईड का प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव दिसम्बर में करें।

### आम

मिलीबग के अंडों को खत्म करने के लिए ज़मीन की निराई-गुड़ाई करें ताकि सूर्य की रोशनी से ये खत्म हो जाएं या जानवरों द्वारा खा लिए जायें। 15-20 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें।

### बेर

एक सिंचाई इस माह के अंत में फल लग जाने के बाद लाभप्रद रहेगी। इसके साथ-साथ आधी बची हुई यूरिया खाद की मात्रा 625 ग्राम प्रति पेड़ डालें। खाद पौधे के मुख्य तने से 3-4 फुट दूर डालनी चाहिए। 15-20 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें। खाद मिट्टी की जांच के आधार पर डालनी चाहिए।

इस माह में 1.5% यूरिया व 0.5% जिंक सल्फेट का छिड़काव करने से न केवल वानस्पतिक वृद्धि होती है बल्कि फल, फूल भी कम गिरते हैं और आंतरिक गुणों में सुधार होता है।

बेर की फसल को मक्खी के प्रकोप से बचाने हेतु इस माह के शुरू में 500 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या 600 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ बाग के पेड़ों पर छिड़कें। मध्य दिसम्बर में इन्हीं दवाइयों के छिड़काव को दोहराएं।

सफेद चूर्णी रोग या पाऊडरी मिल्ड्यू रोग, जिसके आक्रमण से फलों पर सफेद चूर्ण या पाऊडर-सा छा जाता है, से बचाव के लिए घुलनशील गंधक (सल्फेक्स) 500 ग्राम प्रति 250 लीटर पानी में या केराथेन के घोल (200 मि.ली. दवाई 200 लीटर पानी में) छिड़कें। पहला छिड़काव फूल निकलने से पहले तथा दूसरा उस समय करें जब फल मटर के दाने के बराबर हों।

### अंगूर

जो पत्तियां पुरानी बेलों से गिरने लगे उन्हें एकत्र करके जला दें। पौधों से सूखा छिलका उतारें।

नोट : अगले मास पौधों को खाद डाली जाएगी, इसलिए अभी से गोबर की सड़ी खाद या कम्पोस्ट खाद, सिंगल सुपर फास्फेट का प्रबंध कर लें। दिसम्बर से फरवरी पतझड़ वाले नये बाग लगाने का समय है। इसलिए खेत की तैयारी करके रखें।

### फार्म प्रबन्ध

1. रबी फसलों की बिजाई का समय शुरू हो रहा है अतः किसान अपनी फार्म योजना बनाते समय उपलब्ध संसाधनों जैसे पानी, मजदूरों की उपलब्धता व पूंजी को ध्यान में रखते हुए ही फसलों व किस्मों का चुनाव करें।
2. पिछले वर्ष जिन फसलों/किस्मों से अधिक मुनाफा मिला हो उन्हें अवश्य लगाएं।
3. रासायनिक खादों का प्रयोग अधिक न करके संतुलित मात्रा में ही करें ताकि फसल उत्पादन में लागत कम हो सके।
4. खरीफ फसल उत्पादों को एकदम इकट्ठा मण्डी में न ले जाकर समय-समय पर थोड़ी-थोड़ी मात्रा में मण्डीकरण करें।



## पशुओं में

### गाय-भैंस

- ठंड की शुरुआत में पशुओं को ज़्यादा देखभाल की ज़रूरत होती है।
- शाम को पशुओं को अंदर या छत के नीचे बांधें।
- सुबह के समय एक दम से पल्ली/बोरी/पर्दा न हटाएं, थोड़ी-थोड़ी करके हटाएं।
- पशु आवास में पशुओं का बिछौना/मैट इत्यादि सूखा रखें। यदि मैट इस्तेमाल करते हैं तो उसे प्रतिदिन साफ करके धूप ज़रूर लगाएं।
- विशेषकर ठंडी हवाओं से पशुओं को बचाएं।
- सभी पशुओं में सुनिश्चित करें कि उन्हें मुंह-खुर का टीका लग गया हो।
- पशु चिकित्सक से परामर्श कर क्षेत्रीय ज़रूरतों के अनुसार मुंह-खुर/गलघोंटू/लंगड़ा बुखार का संयुक्त टीकाकरण करें।
- थनैला रोग से बचाव हेतु साफ-सफाई पर ध्यान दें, थनों को दूध निकालने के बाद भी धोएं, पशु का दूध-दोहने के बाद उसे कम से कम आधा घंटा बैठने न दें व कटड़ा/कटड़ी या बछड़ा/बछड़ी को दूध निकालने से पहले लगाएं।
- बारिश व नमी का मौसम गया है, अतः अपने चारा भण्डारण को एक बार देखें कि कहीं दीवार के आसपास या फर्श पर पानी/नमी जाने से फफूंद न लग गई हो। काले पड़े या फफूंद लगे चारे को हटाएं व पशु को न दें।
- भेड़-बकरियों में ऊन उतारने के 21 दिन बाद परजीवीनाशक घोल में नहलाएं/डुबोएं।
- भेड़-बकरियों में पी. पी. आर. रोग का टीका लगावाएं।
- हरे चारे के लिए बरसीम व रिजका की बिजाई माह के मध्य तक पूरी कर लें।
- छोटे व नवजात पशुओं में गीलापन न्यूमोनिया का मुख्य कारक हो



सकता है, अतः छोटे व नवजात पशुओं को बिल्कुल भी गीला न रहने दें व ठण्डी हवा से भी बचाव करें।

- जिन पशुओं को 3 महीने या अधिक समय गर्भधारण किए हो गए हों उन पशुओं का पशु चिकित्सक से परीक्षण अवश्य करवाएं।
- पशुओं को ठण्ड से बचाने के साथ-साथ ताज़ा हवा भी ज़रूरी है, अतः ध्यान रहे कि पशु बाड़े में गंदी हवा न ठहरे व तापमान नियंत्रित रखते हुए वातानुकूलन का भी ध्यान रखें।
- सर्दी के मौसम में पशुओं के दाना-मिश्रण में अनाज की मात्रा बढ़ाएं व प्रतिदिन 50-60 ग्राम खनिज मिश्रण ज़रूर दें।
- जो पशु ब्याने के 2-3 महीने बाद नए दूध नहीं हुए हैं, या गर्मी के लक्षण नहीं दिखा रहे हैं उन्हें पशु चिकित्सक से चेक ज़रूर करवाएं व ऐसे पशुओं को प्रतिदिन अंकुरित अनाज (गेहूं/बाजरा/मक्का इत्यादि) ज़रूर दें।
- मौसम में बदलाव के कारण पशुओं में बदहज़मी की समस्या हो सकती है, अतः हाज़मे के लिए काला नमक, हींग, हरड़, मोटी सौंफ, मीठा सोडा इत्यादि दे सकते हैं।
- सर्दियों में पशुओं की पानी की खपत कम हो जाती है, अतः ध्यान रहे कि पशुओं को ताज़ा और पीने योग्य पानी ज़रूर दें।



## आवश्यक सूचना

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार स्थित किसान सेवा केन्द्र में किसानों हेतु सप्ताह में तीन दिन सोमवार, बुधवार एवं शुक्रवार को 10 से 12 बजे तक निःशुल्क फोन सुविधा (हैल्प लाइन) फोन नं. 1800-180-3001 पर उपलब्ध है जिसमें वैज्ञानिकों से कृषि-संबंधी परामर्श किया जा सकता है। यदि किसी जगह से यह फोन सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो किसान भाई 01662-232768 पर सशुल्क फोन करके उपर्युक्त दिनों में इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल में भी सोमवार, बुधवार, शुक्रवार 10 से 12 बजे तक फोन नं. 1800-180-4002 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, ऊचानी (करनाल) में भी मंगलवार व बृहस्पतिवार 10 से 11 बजे तक फोन नं. 1800-180-3111 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

(पृष्ठ 12 का शेष)

- ❖ सी/एन अनुपात मिट्टी में स्थिर कार्बन के रखरखाव के लिए ज़रूरी है, अतः मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ मिट्टी में उपलब्ध नाइट्रोजन स्तर को बाधित करते हैं।

सी/एन अनुपात का महत्व व्यावहारिक उदाहरण से समझा जा सकता है। मान लें कि सशक्त नाइट्रिफिकेशन की स्थिति के दौरान खेत की मिट्टी की जांच की जाती है। नाइट्रेट मध्यम मात्रा में मौजूद है, और सी/एन अनुपात अपेक्षाकृत कम है। अब मान लीजिए कि एक उच्च सी/एन अनुपात (50:1) के साथ कार्बनिक अवशेषों की बड़ी मात्रा मिट्टी में अपघटन का समर्थन करने वाली स्थितियों के तहत शामिल की जाती है, तथा एक बदलाव की संभावना होती है। सूक्ष्मजीव-बैक्टीरिया, कवक और एक्टिनोमाइसिट्स सक्रिय हो जाते हैं और बड़ी मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड का उत्पादन करते हुए तेज़ी से अपनी संख्या में वृद्धि करते हैं। इन परिस्थितियों में, नाइट्रेट नाइट्रोजन अनिवार्य रूप से मिट्टी से गायब हो जाता है क्योंकि सूक्ष्म जीव अपने शरीर को बनाए रखने के लिए इसकी लगातार मांग करते हैं। उस समय पर, उच्च पौधों के लिए कम या कोई खनिज नाइट्रोजन उपलब्ध नहीं होती।

यह स्थिति तब तक बनी रहती है जब तक क्षय जीवों की गतिविधियों में धीरे-धीरे कमी न आ जाए, क्योंकि उनमें आसानी से ऑक्सीडाइजेबल कार्बन की कमी देखने को मिलती है। उनकी संख्या घट जाती है, कार्बन डाइऑक्साइड गठन बंद हो जाता है, सूक्ष्मजीवों द्वारा नाइट्रोजन की मांग कम तीव्र हो जाती है, फिर इन सब क्रियाओं के बाद नाइट्रेट्स की रिहाई आगे बढ़ सकती है। उपरोक्त प्रक्रिया के बाद नाइट्रेट की मात्रा दिखाई देने लगती है, और इसके अलावा मूल परिस्थितियां प्रबल होती हैं, फिर कुछ समय के बाद, मिट्टी में नाइट्रोजन और आर्द्रता समृद्ध हो जाती है।

### विघटन प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारक

- जलवायु की स्थिति, विशेष रूप से तापमान और वर्षा, मिट्टी में पाए जाने वाले नाइट्रोजन और कार्बनिक पदार्थ की मात्रा पर प्रभावशाली प्रभाव डालती है। गर्म से ठंडे क्षेत्रों की तरफ जाने से मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ और नाइट्रोजन में वृद्धि होती है, इसी तरह की प्रवृत्ति सी/एन अनुपात में भी देखी जाती है।
- मृदा नमी मिट्टी में कार्बनिक और नाइट्रोजन के संचय पर सकारात्मक प्रभाव डालती है। आम तौर पर, तुलनात्मक स्थितियों के तहत, नाइट्रोजन और कार्बनिक पदार्थ प्रभावी नमी के रूप में बढ़ते हैं।
- इसके अलावा, जुताई कार्य कार्बनिक अवशेषों को तोड़ते हैं और उन्हें मिट्टी के जीवों के साथ सीधे संपर्क में लाते हैं, जिससे अपघटन की दर में वृद्धि होती है। आधुनिक संरक्षण टिलेज प्रथाएं मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों के स्तर को बनाए रखने में मदद करती हैं। परंपरागत खेती की तुलना में, ये प्रथा मिट्टी की सतह पर या उसके आस-पास अवशेषों का उच्च अनुपात छोड़ देती हैं। यह तकनीक मृदा अपरदन को रोकती है और तेज़ी से होने वाले विघटन पर नज़र बनाए रखती है।



# फसल अवशेषों को जलाने के नुकसान एवं प्रबंधन के उपाय

✍ पवन कुमार<sup>1</sup>, अमित कुमार<sup>2</sup> एवं बी. एस. घणघस<sup>3</sup>

विस्तार शिक्षा विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में अधिकतर किसान एक फसल के बाद दूसरी फसल की बुवाई करने के लिए पहली फसल के अवशेषों को खेत में ही जला देते हैं। महंगी मजदूरी एवं उसकी समय पर अनुपलब्धता के कारण भी फसल की कटाई कम्बाईन मशीन से करवाने के बाद भी खेत में काफी मात्रा में फसल अवशेष शेष बच जाते हैं। फसल अवशेष एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है न कि अपशिष्ट पदार्थ! फसल अवशेष फसल का वह हिस्सा है जो खेत में फसल खुदाई, कटाई और कढ़ाई के बाद या फिर चारागाह में चरने के बाद शेष बच जाता है। अवशेषों को इस तरह से जलाने से न केवल भूमि की उर्वरा शक्ति कम होती है बल्कि पर्यावरण को भी नुकसान पहुंचता है। ऊर्जा के क्षेत्र में कोयला, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस के बाद फसल अवशेष महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं। पिछले 5-6 दशकों से कृषि भूमि पर हो रहे रसायन के प्रयोग से भूमि की भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणवत्ता एवं उर्वरकता शक्ति पर बुरा प्रभाव पड़ा है। लगातार किए जा रहे रासायनिक खादों और दवाओं के इस्तेमाल से मिट्टी, भू-जल एवं अनाज दूषित हो गए हैं। मिट्टी के स्वास्थ्य और संरचना के लिए ज़रूरी जैविक कार्बन का विघटन हुआ है।

सभी फसल अवशेषों में पौधों के लिए ज़रूरी पोषक तत्व पाए जाते हैं। उदाहरण के लिए गेहूं के प्रति टन फसल अवशेष में 4-5 कि.ग्रा. नत्रजन, 0.7-0.9 कि.ग्रा. फास्फोरस, 9-11 कि.ग्रा. पोटेशियम, 1.3 कि.ग्रा. सल्फर, 1.8 कि.ग्रा. कैल्शियम, 0.8 कि.ग्रा. मैग्निशियम एवं दूसरे पोषक तत्व पाये जाते हैं। इसी तरह धान के प्रति टन फसल अवशेष में 5-8 कि.ग्रा. नत्रजन, 0.7-1.2 कि.ग्रा. फास्फोरस, 12-17 कि.ग्रा. पोटेशियम, 0.5-1.0 कि.ग्रा. सल्फर, 3-4 कि.ग्रा. कैल्शियम, 1-3 कि.ग्रा. मैग्निशियम एवं दूसरे पोषक तत्व पाये जाते हैं। कृषि भूमि की बिगड़ी दशा एवं हो रहे जलवायु परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए किसानों को फसल अवशेषों का खेत में ही प्रबंधन कर कृषि भूमि का सुधार करना चाहिए। कृषि भूमि को दोबारा जैविक बनाने के लिए ज़रूरी गोबर खाद व दूसरे जैविक स्रोतों की कमी के मध्यनजर फसल अवशेष एक बेहतरीन विकल्प है। फसल अवशेषों के लिए उपयोग में लाई जाने वाली मशीनें महंगी ज़रूर हैं लेकिन किसान सामूहिक समूह बना इस खर्च को आपस में बांट इन मशीनों से लाभ प्राप्त कर सकते हैं। लंबे समय में इन उपायों से मिट्टी की सेहत में आश्चर्यजनक सुधार देखने को मिलते हैं। फसल अवशेषों में कार्बन-नत्रजन अनुपात ज़्यादा होता है जिस कारण आगामी

फसल को शुरूआत में नत्रजन की अनुपलब्धता हो जाती है। लेकिन खेत में नमी के साथ अलग से यूरिया के रूप में नत्रजन देकर इस अनुपात को कम किया जा सकता है जिससे अवशेषों के गलने की प्रक्रिया तीव्र हो जाती है और फसल की नत्रजन की उपलब्धता सुचारू हो जाती है।

सबसे ज़्यादा फसल अवशेष पैदा करने वाले राज्य क्रमशः उत्तर प्रदेश (610 लाख टन/वर्ष), पंजाब (510 लाख टन/वर्ष), महाराष्ट्र (464 लाख टन/वर्ष) और आंध्रप्रदेश (438 लाख टन/वर्ष) हैं। हरियाणा में लगभग 280 लाख टन फसल अवशेष प्रतिवर्ष उत्पन्न होते हैं जिसमें से अतिरिक्त 112 लाख टन (40%) फसल अवशेषों को खेत में ही जला दिया जाता है। एक आंकड़े के मुताबिक भारत में हर साल लगभग 5,000-5,500 लाख टन फसल अवशेष उत्पन्न होता है। जिसमें से अनाज वाली फसलों से सबसे ज़्यादा 3,520 लाख टन (70%), रेशे वाली फसलों से 660 लाख टन (13%), तेल वाली फसलों से 290 लाख टन (6%), दाल वाली फसलों से 130 लाख टन (2.6%) तथा गन्ने की फसल से 120 लाख टन (2.4%) फसल अवशेष उत्पन्न होते हैं। इसमें से लगभग 910-1,410 लाख टन फसल अवशेषों को उचित प्रबंधन न मिलने के कारण खेत में ही जला दिया जाता है। अनाज वाली फसलों में सबसे ज़्यादा फसल अवशेष धान (48%) एवं गेहूं (32%) की फसल से पैदा होते हैं। विभिन्न किस्मों, काटने की विधि तथा पर्यावरण के आधार पर एक एकड़ गेहूं की फसल से 1.25 से 2.25 टन तक तथा धान की फसल से 2.5 से 4.75 टन तक फसल अवशेष उत्पन्न होते हैं। इसलिए इन अतिरिक्त फसल अवशेषों को जलाने की बजाए उचित प्रबंधन कर इनसे फायदा उठाया जाना चाहिए।

## फसल अवशेषों को जलाने के नुकसान

- फसल अवशेषों को जलाने से वातावरण प्रदूषित होता है। एक टन फसल अवशेष के जलने से 3 कि.ग्रा. कणिका तत्व, 60 कि.ग्रा. कार्बन-मोनोऑक्साइड, 1,460 कि.ग्रा. कार्बन-डाईऑक्साइड, 199 कि.ग्रा. राख एवं 2 कि.ग्रा. सल्फर डाईऑक्साइड जैसी हानिकारक गैसों का उत्सर्जन होता है।
- गैसों के वातावरण में इकट्ठा होने से ग्लोबल वार्मिंग होती है जिससे जलवायु परिवर्तन होता है। आग लगने से आस-पास के पेड़-पौधों एवं जैव-विविधता को भी क्षति पहुंचती है।
- जलने से उत्पन्न हुए धुएं के कारण प्रभावित क्षेत्र में सांस एवं हृदय संबंधित बीमारी बढ़ती हैं। धुएं से दृश्यता कम हो जाती है जो कई बार दुर्घटनाओं का कारण बनता है।
- फसल अवशेषों को जलाने से मृदा में उपस्थित मुख्य पोषक तत्व लगभग सारी नत्रजन, 25% फास्फोरस, 20% पोटेशियम एवं 5-60% सल्फर का नाश हो जाता है। वही फसल अवशेषों में मौजूद पौधों के लिए ज़रूरी पोषक तत्व जलने के बाद सीधे तौर पर नष्ट हो जाते हैं।
- फसल अवशेषों को जलाने के कारण मृदा ताप में वृद्धि होती है। जिस

<sup>1</sup>शोधार्थी, विस्तार शिक्षा विभाग, चौ.च.सिंह.कृ.वि., हिसार।

कारण उसकी ऊपरी सतह सघन एवं कठोर हो जाती है और आगे चलकर उसके बंजर होने का खतरा बढ़ जाता है। साथ ही मृदा जलधारण क्षमता में कमी आ जाती है तथा मृदा में वायु-संचरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

- आग के कारण खेत की नौ इंच तक की गहराई में पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवों (जीवाणु, कवक, केंचुआ, शैवाल आदि) का नाश हो जाता है जिससे कृषि उत्पादकता में बाधा उत्पन्न हो जाती है।
- कृषि के लिए महत्वपूर्ण विभिन्न प्राकृतिक चक्र जैसे कार्बन चक्र, नत्रजन चक्र, फास्फोरस चक्र आदि भूमि में मौजूद सूक्ष्म जीवों पर निर्भर होते हैं। सूक्ष्म जीवों के मारे जाने के कारण इन प्राकृतिक चक्रों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- अवशेषों के जलने से उत्पन्न राख खरपतवारनाशक दवाओं को सोख लेती है जिससे इनकी दक्षता कम हो जाती है और खरपतवारों का उचित नियंत्रण न होने की वजह से फसल की पैदावार घट जाती है।

#### फसल अवशेषों की उपयोगिता

- फसल अवशेषों को गड्डे में एकत्रित कर चूने के पानी से गलाकर उत्तम खाद या केंचुआ खाद तैयार की जा सकती है।
- फसल अवशेषों की खाद से खुम्ब उत्पादन भी किया जा सकता है।
- स्ट्रा-बेलर से फसल अवशेषों की गांठें बना इन्हें बायोमास-पॉवर-जनरेशन प्लांट में बेच आमदनी प्राप्त की जा सकती है।
- फसल अवशेषों को पशु चारे, पशुओं के शयन एवं छप्पर बनाने में प्रयोग किया जा सकता है।
- धान की पराली का पैकेजिंग सामग्री में भी उपयोग किया जा सकता है।
- फसल अवशेषों का उपयोग ईंधन एवं बायोचार बनाने में भी प्रयोग किया जा सकता है।
- फसल अवशेषों का प्रयोग पेपर इंडस्ट्रीज द्वारा कागज बनाने में किया जाता है।
- बायोगैस प्लांट लगा फसल अवशेषों से बायोमिथेन गैस बनाई जा सकती तथा स्लरी का खाद के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।
- कृषि भूमि को जैविक बनाने की दिशा में फसल अवशेष बहुत उपयोगी हैं।

#### फसल अवशेषों का खेत में ही प्रबंधन के लाभ

- फसल अवशेषों में पाए जाने वाले पोषक तत्वों से भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है जिससे रासायनिक खादों पर निर्भरता घटती है।
- फसल अवशेषों से भूमि में जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ती है जिससे उसकी भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणवत्ता एवं संरचना सुधरती है।
- फसल अवशेषों को भूमि में मिलाने से सूक्ष्म जीवों को खाना एवं आवास मिलता है और उनकी संख्या में वृद्धि होती है जिससे

प्राकृतिक चक्र जैसे कार्बन चक्र, नत्रजन चक्र आदि सुचारू रूप से चलते हैं।

- भूमि कटाव एवं जल कटाव प्रतिरोधक क्षमता तथा भूमि की बाहरी वातावरण को झेलने की ताकत बढ़ती है।
- पौधों के लिए पोषक तत्व एवं नमी की उपलब्धता बढ़ती है जिससे रासायनिक खादों एवं सिंचाई के पानी की बचत होती है।
- अवशेषों के समावेश से मिट्टी भुरभुरी हो जाती है जिससे हवा का आवागमन अच्छे से होता है। चिकनी कठोर भूमि में पपड़ी जमने की समस्या नहीं रहती।
- फसल अवशेष अम्लीय भूमि की पी.एच. को बढ़ाने में सहायक हैं।
- फसल अवशेषों को कृषि भूमि पर मलच के रूप में उपयोग करके सहनशील पौधों को ठंड एवं लू से बचाया जा सकता है।
- मलच से ज़मीन में मौजूद पानी का वाष्पीकरण कम हो जाता है जिससे नमी ज़्यादा समय तक बनी रहती है, खरपतवार नहीं पनपते और भूमि का तापमान भी अनुकूल बना रहता है।
- गेहूं की बिजाई से 3 सप्ताह पहले अगर धान की पराली को उचित नमी के साथ ज़मीन में समावेश कर दिया जाए तो गेहूं की फसल में नत्रजन की उपलब्धता पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता।

#### फसल अवशेषों के प्रबंधन के लिए उपयोग में लायी जाने वाली मशीनें

- हैप्पी-सीडर की मदद से खेत में पड़े अवशेषों के बावजूद बिना किसी परेशानी के अगली फसल की बिजाई की जा सकती है।
- कन्वेयर-सीडर गेहूं की बिजाई के साथ-साथ असमान रूप से बिखरे पिछली फसल धान के अवशेषों को मलच के रूप में पूरे खेत में समान रूप से पसार देता है।
- पैडी-स्ट्रा-रिपर/चॉपर की मदद से खेत में बचे फानों को भूसे में बदल इकट्ठा/बिछाया जा सकता है। पैडी-स्ट्रा-रिपर 1 घंटे में 1 एकड़ से 56-60% भूसा एवं अतिरिक्त 20-40 कि.ग्रा. दानों को एकत्रित करता है।
- मलचर-मशीन से खेत में खड़े फानों को छोटे टुकड़ों में काट मलच के रूप में खेत में बिछाया जा सकता है।
- स्ट्रा-बेलर फसल अवशेषों की गांठें बना देता है, जिनका आसानी से भंडारण कर पशु चारे या बायोफ्यूल आदि के लिए प्रयोग किया जा सकता है।
- हे-रैक खेत में बचे अवशेषों को एक जगह इकट्ठा करने में सहायक है। जिससे स्ट्रा-बेलर की मदद से गांठें बनाने में आसानी होती है।
- आसानी से उपलब्ध रोटोवेटर की मदद से फानों को खेत में ही मिलाया जा सकता है।





# फसल अवशेष प्रबन्धन के लिए ज़रूरी : कृषि यान्त्रिकी को बढ़ाना

✍ कुलदीप सिंह, जोगेन्द्र सिंह एवं अनिल राठी

कृषि विज्ञान केन्द्र, सोनीपत

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आज का युग विज्ञान का युग है। दिन-प्रतिदिन नये-नये वैज्ञानिक अनुसंधान एवं आविष्कार हो रहे हैं। वैज्ञानिकों द्वारा कृषि क्षेत्र को उन्नत करने के लिए लगातार कार्य किए जा रहे हैं। नये-नये कृषि यन्त्रों एवं मशीनों का आविष्कार कर कृषि को सुविधाजनक एवं फायदे का व्यवसाय बनाया जा रहा है। कृषि को लाभदायक बनाने में प्रयासरत वैज्ञानिकों को कई कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ रहा है, जैसे कि हमारे देश के किसानों के पास बड़ी जोतों का अभाव है, परिणामस्वरूप आधुनिक कृषि यन्त्रों एवं मशीनों की सहायता से कृषि कार्य करना मुश्किल ही नहीं वरन् आर्थिक दृष्टि से हानिप्रद भी है क्योंकि कृषि में प्रयोग होने वाली ज़्यादातर मशीनों का मूल्य अधिक है। हमारे देश में स्थानीय स्तर पर कुशल मैकेनिकों की बहुत कमी है तथा किसान को इन महंगे कृषि यन्त्रों को ठीक करवाने के लिए दूर जाना पड़ता है तथा कुशल कारीगर रेट भी अपनी मर्जी से लेते हैं। अतः कृषि यन्त्रों एवं मशीनों के प्रयोग का पूर्ण लाभ किसानों तक पहुंचाने के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

## यान्त्रिक अनुसन्धान केन्द्रों की स्थापना

सरकार को प्रत्येक राज्य में ऐसे केन्द्र स्थापित करने चाहिए जहां आधुनिक कृषि यन्त्रों का निर्माण किया जाये तथा पुराने प्रचलित यन्त्रों में सुधार किये जाएं। प्रत्येक राज्य में ऐसे केन्द्र खोलने से उस राज्य की कृषि पद्धति एवं किसानों की मांग के अनुसार कृषि यन्त्रों एवं मशीनों का निर्माण सम्भव हो सकेगा। क्योंकि हर राज्य की कृषि पद्धति, भौगोलिक परिस्थिति एवं किसानों की आर्थिक हालत अलग-अलग होती है।

## ऋण की आसान उपलब्धता सुनिश्चित करना

भारतीय कृषक के आर्थिक हालात इतने अच्छे नहीं हैं कि वह खेती में प्रयोग होने वाले महंगे यन्त्रों को अपने स्तर पर खरीद सके, इसके लिए उसे बैंक से ऋण की ज़रूरत पड़ती है। हमारे किसान इतने पढ़े-लिखे भी नहीं हैं कि जो बैंक की कठिन एवं लम्बी प्रक्रियाओं को समझ सकें। अतः सरल एवं साधारण तरीके से कम ब्याज दर पर व कम कागजी दस्तावेजों से किसान को ऋण उपलब्ध करवाया जाए।

## अनुदान की व्यवस्था

कृषि यन्त्रों की खरीद पर कृषकों को विशेष छूट दिये जाने की व्यवस्था होनी चाहिए क्योंकि खेती अभी भी फायदे का व्यवसाय नहीं है एवं बिना सरकारी मदद के किसान की हालत नहीं सुधर सकती। आधुनिक कृषि यन्त्रों पर तो केन्द्र एवं राज्य सरकारें अनेक योजनाओं के अन्तर्गत किसानों को अनुदान पर कृषि यन्त्र उपलब्ध करवा रही हैं। इसके

अलावा अन्य प्रचलित कृषि यन्त्रों पर भी अनुदान का प्रावधान होना चाहिए। तभी किसान की हालत को सुधारा जा सकता है।

## प्रदर्शनियों का आयोजन

आधुनिक कृषि यन्त्रों के सम्बन्ध में कृषकों को जानकारी उपलब्ध करवाने के लिए प्रदर्शनियों का आयोजन किया जाना चाहिए जहां इन यन्त्रों के विषय में पूर्ण जानकारी पाए हुए कुशल एवं प्रशिक्षित अधिकारियों को नियुक्त किया जाना चाहिए ताकि वे यन्त्रों के सम्बन्ध में कृषकों को पूर्ण जानकारी दे सकें और उनकी कार्य विधि को भली-भांति समझा सकें। ऐसा करने से कृषि यन्त्रों के प्रयोग को काफी प्रोत्साहन मिलेगा।

## सहकारी समितियों का गठन

महंगे यन्त्र खरीदना एक किसान के लिए बड़ा कठिन कार्य है तथा यह लाभ का सौदा भी नहीं है। अतः एक आर्थिक स्तर, एक सोच, एक जैसा सामाजिक स्तर तथा एक जैसी कृषि पद्धति अपनाने वाले किसान मिलकर कृषि सहकारी समिति बनाएं ताकि वे आधुनिक कृषि यन्त्रों को आसानी से खरीद कर अपने कृषि कार्य को थोड़े खर्च में पूर्ण कर सकें। इसके अलावा छोटे किसानों के खेतों में किराए पर कृषि यन्त्र चलाकर अधिक धन कमा सकते हैं। इन कृषि सहकारी समितियों को केन्द्र सरकार अधिक अनुदान पर कृषि यन्त्र उपलब्ध करवा रही है। यह एक ऐसा मॉडल है जो भारतीय कृषि की दशा को बदलने में अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

## कृषि यन्त्रों की गुणवत्ता की जाँच

कृषि यन्त्रों की गुणवत्ता जांचने के लिए बहुत थोड़े संस्थान काम कर रहे हैं। अतः ऐसे संस्थान खोले जाएं जो किसानों को बेचने से पहले उन कृषि यन्त्रों की पूर्ण एवं सघन जांच कर सकें ताकि किसान को उच्च गुणवत्ता के कृषि यन्त्र उपलब्ध हो सकें जो बिना किसी कठिनाई एवं टूट-फूट के लगातार कार्य करते रहें अन्यथा दुकानदारों द्वारा कुछ ऐसे कृषि यन्त्र किसानों को उपलब्ध करवा दिये जाते हैं जिनकी शुरू में तो कीमत कम होती है लेकिन निम्न गुणवत्ता के कारण उन पर होने वाला मरम्मत खर्च इतना ज़्यादा होता है कि अन्त में किसान को कुछ समय बाद वह कृषि यन्त्र बेचना ही पड़ता है जिससे बड़ी आर्थिक हानि होती है।

उपरोक्त बताई गई बातों को अमल में लाकर हम भारतीय कृषि को लाभ का व्यवसाय बना सकते हैं तथा कमज़ोर आर्थिक हालात से गुज़र रहे किसानों का भी भला हो सकता है।



एक कदम स्वच्छता की ओर

# फसल अवशेष : प्रबंधन एवं प्रभाव

✍ रोहतास कुमार, आर. एस. मलिक एवं हरेन्द्र कुमार यादव

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फसल अवशेष पौधे का वह भाग होता है जो फसल की कटाई और गहाई के बाद खेत में छोड़ दिया जाता है। भूसा, तना, डंठल, पत्ते व छिलके आदि फसल अवशेष कहलाते हैं। सरसों, गेहूं, धान, ग्वार, मूंग, बाजरा, गन्ना व अन्य दूसरी फसलों से काफी मात्रा में फसल अवशेष मिलते हैं। सबसे ज्यादा फसल अवशेष अनाज वाली फसलों में तथा सबसे कम अवशेष दलहनी फसलों से मिलते हैं। खरीफ सीजन में लगभग 500 लाख टन फसल अवशेष का उत्पादन होता है। फसल के अवशेष का केवल 22% हिस्सा ही इस्तेमाल होता है बाकि को जला दिया जाता है। फसलों की कटाई के मौसम में फसल अवशेषों को जलने तथा इसके मानव स्वास्थ्य पर हो रहे हैं दुष्प्रभाव की खबरें प्रायः अखबारों की सुर्खियां बनी रहती हैं। वास्तव में यह एक गंभीर समस्या है। जिसके लिये बहुत हद तक खेती की परम्परागत शैली को ही जिम्मेदार माना गया है। आपको इस बात की बानगी देखनी है तो पंजाब के गांवों की ओर रुख करना होगा। जहां पर फसल की कटाई के बाद बचे अवशेषों को जलाने से हवा में लगातार ज़हर घुल रहा है।

## फसलों के अवशेष जलाने से होने वाले नुकसान

फसलों के अवशेषों को जलाने से उनके जड़, तना, पत्तियों में संचित लाभदायक पोषक तत्व नष्ट हो जाते हैं।

- फसल अवशेषों को जलाने से मृदा तापमान में बढ़ोत्तरी होती है जिसके कारण मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशा पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
- पादप अवशेषों में लाभदायक मित्र कीट जलकर मर जाते हैं जिसके कारण वातावरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
- पशुओं के चारे की गुणवत्ता व व्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

जहां पर कम्बाईन का प्रयोग फसलों की कटाई में किया जाता है वहां पर फसलों के अवशेष डण्ठल के रूप में खड़े रह जाते हैं एवं उनके जलाने पर नज़दीक के किसानों की फसलों में तथा आबादी में आग लगने की संभावना बनी रहती है जिसके कारण वहीं आस-पास के खेत व खलिहान तथा मकान में भी अग्निकाण्ड के कारण अत्यधिक नुकसान उठाना पड़ता है। अतः प्रदेश के कृषकों से अनुरोध है कि किसी भी फसल के अवशेष को जलायें नहीं बल्कि मृदा में कार्बनिक पदार्थों की वृद्धि हेतु पादप अवशेषों को मृदा में मिलाएं।

फसलों की कटाई यदि कम्बाईन मशीन से की जानी है तो किसान रीपर युक्त कम्बाईन मशीन का ही प्रयोग करें। फसल अवशेषों से प्राप्त कार्बनिक पदार्थ भूमि में जाकर मृदा पर्यावरण में सुधार कर सूक्ष्मजीवी अभिक्रियाओं को उत्प्रेरित करते हैं। जिससे कृषि टिकाऊ रहने के साथ-साथ उत्पादन में वृद्धि प्राप्त की जा सकती है।

## फसल अवशेष के प्रबंधन

मृदा को स्वस्थ रखने के लिए फसल अवशेषों का पुनः चक्रण, भूमि में सीधा मिलाकर सड़ा-गला देने से पोषक तत्वों की उपलब्धता तो बढ़ती ही है साथ ही इसका मिट्टी के गुणों पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है। फसल अवशेषों को उचित तरीके से प्रबंधन करने पर फसलों को मुख्य और सूक्ष्म पोषक तत्व प्राप्त होते हैं। फसल कटाई के उपरांत खेतों में पड़े फसल अवशेषों या भूसा आदि को गहरी जुताई कर ज़मीन में दबा देने और उसमें पानी भर देने से फसल अवशेष कम्पोस्ट में बदल जाते हैं। फसल की कटाई के बाद खेत में बचे अवशेष घास, फूस, पत्तियां व टूट आदि को सड़ाने के लिये किसान फसल को काटने के पश्चात 20-25 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़क कर कल्टीवेटर या रोटोवेटर से काटकर मिट्टी में मिला देना चाहिए। इस प्रकार अवशेष खेत में विघटित होना प्रारम्भ कर देंगे तथा लगभग एक माह में स्वयं सड़कर आगे बोई जाने वाली फसल को पोषक तत्व प्रदान कर देंगे क्योंकि कटाई के पश्चात् दी गई नाइट्रोजन अवशेषों में सड़न की प्रक्रिया को तेज़ कर देती है। अगर फसल अवशेष खेत में ही पड़े रहे तो फसल बोने पर जब नई फसल के पौधे छोटे रहते हैं तो वे पीले पड़ जाते हैं क्योंकि उस समय अवशेषों के सड़ाव में जीवाणु भूमि की नाइट्रोजन का उपयोग कर लेते हैं तथा प्रारम्भ में फसल पीली पड़ जाती है अतः फसल अवशेषों का प्रबंध करना अत्यंत आवश्यक है तभी हम अपनी ज़मीन में जीवांश पदार्थ की मात्रा में वृद्धि कर ज़मीन को खेती योग्य रख सकते हैं। फसल अवशेषों से बोर्ड बनाने के साथ-साथ इसका उपयोग रफ कागज़ और पैकेजिंग मैटीरियल तैयार करने तथा पशुओं के चारे के रूप में भी किया जा सकता है। इसका उपयोग एथेनॉल तथा ऊर्जा उत्पादन में कच्चे माल के रूप में भी हो सकता है।

## फसल अवशेषों को जलाने के कारण मृदा पर पड़ने वाले मुख्य प्रभाव

1. मृदा के भौतिक गुणों पर प्रभाव-फसल अवशेषों को जलाने के कारण मृदा ताप में वृद्धि होती है। जिसके फलस्वरूप मृदा सतह सख्त हो जाती है एवं मृदा की सघनता में वृद्धि होती है, साथ ही मृदा जलधारण क्षमता में कमी आती है तथा मृदा में वायु-संचरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
2. मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों की कमी – फसल अवशेषों को जलाने के कारण मृदा में उपस्थित मुख्य पोषक तत्वों नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटैश आदि की उपलब्धता में कमी आ जाती है।
3. मृदा में उपलब्ध कार्बनिक पदार्थ में कमी – फसल अवशेष जलाने से मृदा में उपस्थित कार्बनिक पदार्थ की कमी भी आती है।

## फसल अवशेषों को जलाने के अन्य प्रभावों में मुख्यतः

1. वायु प्रदूषण: खेतों में फसल अवशेषों को जलाने के कारण अत्यधिक मात्रा में वायु प्रदूषण होता है। साथ ही ग्रीन हाउस गैसें जैसे- कार्बन डाईऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड आदि का उत्सर्जन ग्लोबल वार्मिंग के लिए भी उत्तरदायी होता है।

2. **जानवरों के लिए चारे की कमी** : फसल अवशेषों को पशुओं के लिए सूखे चारे के रूप में प्रयोग किया जाता है अतः फसल अवशेषों को जलाने से पशुओं को चारे की कमी का सामना करना पड़ता है।

#### फसल अवशेष प्रबंधन से होने वाले लाभ

फसल पारिस्थितिकी में पोषक तत्वों का पुनः चक्र एक आवश्यक घटक है। यदि किसान उपलब्ध फसल अवशेषों को जलाने की बजाए उनको वापस भूमि में मिला देते हैं तो निम्न लाभ प्राप्त होते हैं।

1. **कार्बनिक पदार्थ की उपलब्धता में वृद्धि** : कार्बनिक पदार्थ ही एकमात्र ऐसा स्रोत है जिसके द्वारा मृदा में उपस्थित विभिन्न पोषक तत्व फसलों को उपलब्ध हो पाते हैं तथा कम्बाइन द्वारा कटाई किए गए प्रक्षेत्र उत्पादित अनाज की तुलना में लगभग 1.29 गुणा अन्य फसल अवशेष होते हैं। ये खेत में सड़कर मृदा कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि करते हैं।
2. **पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि** : फसल अवशेषों में लगभग सभी आवश्यक पोषक तत्वों के साथ 0.45 प्रतिशत नाइट्रोजन की मात्रा पाई जाती है, जो कि फसलोत्पादन के लिए एक प्रमुख पोषक तत्व है।
3. **मृदा के भौतिक गुणों में सुधार** : मृदा में फसल अवशेषों को मिलाने से मृदा की परत में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ने से मृदा सतह की कठोरता कम होती है तथा जलधारण क्षमता एवं मृदा में वायु-संचरण में वृद्धि होती है।
4. **मृदा की उर्वरा शक्ति में सुधार** : फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने से मृदा के रासायनिक गुण जैसे उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा, मृदा की विद्युत चालकता एवं मृदा पीएच में सुधार होता है।
5. **फसल उत्पादकता में वृद्धि** : फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने पर आने वाली फसलों की उत्पादकता में भी काफी मात्रा में वृद्धि होती है। अतः मृदा स्वास्थ्य पर्यावरण एवं फसल उत्पादकता को देखते हुए फसल अवशेषों को जलाने की बजाए भूमि में मिला देने से काफी लाभ होता है।

**निष्कर्ष** : फसल अवशेष को जलाने से नुकसान है क्योंकि भूमि की उपजाऊ शक्ति का कम हो जाना तथा लाभप्रद जीवाणु आग से जल जाते हैं। इसलिये इनको जलाना नहीं चाहिए।



## बच्चों के सामाजिक विकास की अवस्था, व्यवहार एवं सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक

पूनम रानी एवं बिमला ढाण्डा

मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मानव जन्मकाल के समय न तो सामाजिक प्राणी होता है और न ही असामाजिक। समाज के सम्पर्क में आने के पश्चात् उसमें सामाजिक असामाजिक होने के तत्वों का समायोजन होता है। वह समाज के लोगों के सम्पर्क में आने के पश्चात् ही क्रोध, प्रेम, भय, आवेग, संवेग, शर्म, अपराध, रुचि, क्षमता आदि चीजों को समझ पाता है। वह समाज के प्रति किस प्रकार का व्यवहार करेगा आगे चलकर उसके विकास में किस प्रकार समाज उसका सहयोग देगा यह बातें धीरे-धीरे विकसित होती हैं।

#### सामाजिक विकास क्या है

मानव की मूल प्रवृत्ति है कि वह समूह में रहना चाहता है। वह छोटे-छोटे समूहों के रूप में अपने वातावरण का तानाबाना बुनता है और उसमें एक-दूसरे से व्यवहार की प्रक्रिया को अपनाता है। व्यवहार की सामाजिक क्रियाएं कुछ सहज एवं कुछ जटिल होती हैं तथापि प्राणी अपने व्यवहारों को स्वतः निर्देशित करना सीख जाता है।

सामाजिक विकास का तात्पर्य बालक के जन्म से प्रारम्भ होने वाली उस प्रक्रिया से है, जिसमें वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए सामाजिक वातावरण के प्रति प्रतिक्रिया करता है एवं सामाजिक गुणों को सीखता है। सामाजिक विकास का अर्थ वास्तव में सामाजिक सम्बन्धों में परिपक्वता प्राप्त करने से होता है, नए-नए व्यक्तियों का सम्पर्क, नवीन कानून नियम, शर्तें, लोकाचार, रूढ़ियाँ, प्रथाएँ, परम्पराएँ आदि से सम्बन्धित व्यवहार भी नया ही होता है, जो कि दूसरों के सम्पर्क एवं सहयोग के बिना असम्भव है। जब शिशु जन्म लेता है, तब न तो वह सामाजिक होता है, न असामाजिक वरन् वह समाज के प्रति उदासीन होता है। जैसे-जैसे आयु बढ़ती है, वैसे-वैसे वह सामाजिक गुणों से सुशोभित होता जाता है और कुछ वर्षों के पश्चात् वह सामाजिक प्राणी कहलाने लगता है।

शिशु सामाजिक गुणों को सामाजिक विकास की अवस्थाओं के अनुसार स्वीकार करता है। शुरू में उसमें सामाजिक विकास तीव्र होता है, फिर इस विकास में कमी होने लगती है, फिर मंद गति से विकास होता है, फिर सामाजिक विकास में प्रतिमन दिखाई देता है, अन्त में यह विकास मंद गति से चलता है। स्वस्थ खूबसूरत व मानसिक गुणों से परिपूर्ण शिशु के लिए यह आवश्यक होता है कि उसमें पर्याप्त मात्रा में सामाजिक मूल्य व गुण मौजूद होने चाहिए।

#### बच्चों की विभिन्न अवस्थाओं में सामाजिक विकास

**शैशवावस्था में सामाजिक विकास** : बालक जब जन्म लेता है, तब से उस काल तक वह दूसरे बच्चों में कोई रुचि नहीं लेता है, जब तक उसकी



समस्त ज़रूरतों की पुष्टि सामान्य तौर से होती रहती है। लगभग दो माह की आयु होने तक शिशु वातावरण की केवल अधिक तीव्र उत्तेजनाओं के प्रति ही प्रतिक्रिया करता है। तीन माह की आयु तक शिशु का श्रवण सिस्टम इतना विकसित हो जाता है, कि वह विभिन्न ध्वनियों में अन्तर जानने लगता है, तथा उसकी आंखों का नियन्त्रण इतना हो जाता है कि वह व्यक्तियों तथा वस्तुओं की गतियों का निरीक्षण करने लगता है। शुरुआत में शिशु मात्र वयस्क व्यक्तियों के प्रति ही प्रतिक्रिया करता है क्योंकि उस काल में वह केवल उन्हीं लोगों के सम्पर्क में आता है।

3 माह की आयु तक वह मानवीय आवाज़ तथा मुस्कराहट के प्रति अनुक्रिया करने लगता है। इस अवस्था में लोगों की उपस्थिति में शांत रहता है, लेकिन जब वह अकेला होता है तब रोने लगता है। उस समय वह रोकर वयस्कों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करता है।

शिशु को इन्हीं प्रतिक्रियाओं के द्वारा उसकी सामाजिक विकास की उत्पत्ति होती है। इससे पहले, न तो वह सामाजिक होता है और न ही असामाजिक प्राणी क्योंकि वह न तो दूसरों को पहचानता है और न ही कोई प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। जब वह तीन माह का होता है तब नज़दीकी लोगों को जो उसके करीब होते हैं उनको पहचानने लगता है खासतौर से अपनी माँ को, क्योंकि वह ही सबसे नज़दीकी होती है। जब शिशु चार माह का होता है, उसे गोद में उठाने पर वह पूर्वानुमति समायोजन करने लगता है। वह बहुत से चेहरों में कुछ चेहरों को पहचानने लगता है। जो व्यक्ति उसे खिलाता है और उसे हँसाता है तब उसे देखकर वह मुस्कराने लगता है। 4-5 माह का शिशु दूसरे शिशु को पहचानने लगता है।

बच्चे को जब पुकारा जाता है तब वह हँसकर अनुक्रिया को प्रकट करता है। इस अवस्था में बालक की सामाजिक उत्तेजनाओं के प्रति अनुक्रिया हँसकर-रोकर प्रकट होती है। 5-6 माह की अवस्था में उसमें अपेक्षाकृत अधिक सामाजिक विकास हो जाता है। इस अवधि में क्रोध तथा मित्रता सम्बन्धी व्यवहार समझने लगता है। अपने परिवार के लोगों को अच्छी प्रकार पहचानने लगता है। वह अपरिचितों को देखकर डर जाता है। वह बिस्तर पर हाथ-पैर चलाकर दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करता है, विशेष ढंग से आवाज़ें निकालने लगता है।

6-8 माह का शिशु दूसरे शिशु से खेलने लगता है। वह दूसरे बच्चों को छूता है, मुस्कराता है तथा तरह-तरह की आवाज़ें निकालने लगता है। जब शिशु 8-9 माह का हो जाता है, तब वह चाबी सम्बन्धी ध्वनियों का अनुकरण करने लगता है। इसके साथ-साथ वह अपने से बड़े बच्चों व वयस्क व्यक्तियों की व्यवहार सम्बन्धी अभिव्यक्तियों का अनुकरण भी करने लगता है। शिशु जब लगभग 1 वर्ष का हो जाता है, तब वह दूसरे बच्चों के बालों व कपड़ों को पकड़ता व नोचता है तथा दूसरे बच्चों को देखकर उनकी अभिव्यक्तियों का अनुकरण करने लगता है। 1 वर्ष का होने पर शिशु अपरिचितों को देखकर डर कर पीछे चल पड़ता है तथा रोने लगता है। वह उनकी भाषा का भी अनुकरण करने लगता है।

लगभग डेढ़ वर्ष का बालक अपने साथ के बच्चों के साथ अपने विचारों का थोड़ा-बहुत आदान-प्रदान करने की कोशिश करता है। जब बालक दो वर्ष का होता है तब उसका सामाजिक सम्बन्धों का तीव्र गति से

विकास होने लगता है और इस आयु तक बच्चे सहयोगात्मक खेल भी प्रारम्भ कर देते हैं। इससे पहले यदि बच्चों का खिलौना किसी अन्य को दिया जाता है तब उनमें खिलौने के प्रति छीना-झपटी शुरू हो जाती है।

### 0-1 वर्ष की आयु के बालक के कुछ विशिष्ट सामाजिक व्यवहार :

**अनुकरण :** अनुकरण की क्रिया में शिशु पहले मुखकृतियों, फिर हावभाव का, फिर भाषा व अन्त में सम्पूर्ण व्यवहार प्रतिमान का अनुसरण करना सीख लेता है। अनुकरण ही वह प्रक्रिया है, जिसकी मदद से शिशु आगे चलकर सामाजिक प्राणी कहलाता है।

**आश्रिता :** जब शिशु अकेला होता है तब वह रोता है। जब माँ उसे गोद में उठा लेती है, तब वह उससे चिपट जाता है। उसका यह व्यवहार उसकी निर्भरता की ओर संकेत करता है। बालक की जितनी देखरेख की जाती है, उसमें आश्रितता का गुण उतना ही बढ़ता जाता है।

**ईर्ष्या :** शिशु में ईर्ष्या का भाव 9-12 माह की आयु में उत्पन्न होता है। यह क्रिया शिशु में उस समय देखने को मिलती है, जब वह खिलौने के लिए एक दूसरे से छीना-छपटी करता है।

**सहयोग :** जब शिशु दो वर्ष का होता है, तब दूसरे शिशु के प्रति उसमें सहयोग की भावना पैदा होती है, किन्तु दूसरे शिशुओं की अपेक्षा वयस्कों के प्रति उनमें अधिक सहयोग की इच्छा होती है।

**शर्म :** शिशु के 1 वर्ष का होने पर शर्म के लक्षण उत्पन्न होने लगते हैं यह लक्षण तब देखने को मिलता है जब कोई अजनबी उसके सामने आता है।

**अवरोधी व्यवहार :** लगभग 1 वर्ष की आयु से शिशु में अवरोधी व्यवहार आरम्भ हो जाता है। रो कर या अपने शरीर को कड़ा करके वह इस प्रकार का व्यवहार प्रदर्शित करता है।

**2 से 5 वर्ष की आयु के बालक का सामाजिक विकास :** सामाजिकता का विकास बालक में अचानक नहीं होता। यह प्रक्रिया निरन्तर चलने वाली होती है। बालक को प्राप्त होने वाले सामाजिक अनुभवों के आधार पर सामाजिकता का विकास होता है।

सामाजिक विकास का अर्थ है-बालक में इस प्रकार की योग्यताओं से विकास होता है, जिनके द्वारा बालक समाज की अपेक्षाओं तथा आकांक्षाओं के अनुसार व्यवहार विकसित करता है, सामाजिक विकास में तीन प्रक्रियाएँ होती हैं, जो कि आपस में घनिष्ठता का सम्बन्ध रखती हैं। एक भी प्रक्रिया के विकास में बड़ी बाधा से सम्पूर्ण सामाजिक विकास की प्रक्रिया बाधित होती है।

### यह प्रक्रियाएँ निम्नलिखित हैं :

क) ऐसे व्यवहार को सीखना जिसे समाज द्वारा स्वीकृति मिली हो।

ख) समाज द्वारा मान्य सामाजिक भूमिकाओं को अपनाना समाज के सदस्यों से एक विशिष्ट प्रकार के सामाजिक व्यवहार की आशा की जाती है। प्रत्येक में दोनों लिंगों के लिए भिन्न-भिन्न भूमिकाएँ निर्धारित की जाती हैं व प्रत्येक सदस्य से आशा की जाती है, कि वह अपने लिए निर्धारित उपर्युक्त भूमिका का चुनाव करके उसे अपनाये। इसी प्रकार से विभिन्न व्यक्तियों से विभिन्न भूमिका की आशा की जाती है। जैसे- माता की भूमिका, पिता की भूमिका, बालक की

भूमिका, शिक्षक की भूमिका आदि।

ग) सामाजिक अभिवृत्तियों का विकास करना जिसके आधार पर वे समाज के विभिन्न सदस्यों के प्रति अपेक्षित मैत्रीपूर्ण अभिवृत्तियों का विकास कर सकें।

यद्यपि समाज के समस्त सदस्य इन सभी प्रक्रियाओं को पूरी तरह विकसित नहीं कर पाते हैं, फिर भी व्यक्ति कितनी अधिक मात्रा में इन प्रक्रियाओं का विकास कर पाता है, उसी के आग्रह पर उसके सामाजिक विकास के स्तर तथा गुणवत्ता का मूल्यांकन किया जाता है।

**बाल्यावस्था में सामाजिक विकास :** 6-7 वर्ष से 11-12 वर्ष की अवस्था बाल्यावस्था कहलाती है। इस अवस्था में सामाजिक विकास के अन्तर्गत उन्हीं गुणों तथा विशेषताओं का विकास होता है, जिनकी शुरुआत बाल्यावस्था में हुई थी। इस आयु में बच्चे का शारीरिक मानसिक गत्यात्मक तथा भाषा आदि का विकास होने के कारण बच्चा खेल की तरफ अधिक आकर्षित होने लगता है।

इस अवस्था में दूसरी बातों तथा क्रियाकलापों को भी अन्य बच्चों से सीखता है। इससे उनका सामाजिकता क्षेत्र बढ़ जाता है। उनका मन घर की अपेक्षा बाहर ज़्यादा लगने लगता है। इस आयु में लड़कियों को घर के बाहर भेजना ज़्यादा उचित नहीं समझा जाता। बच्चों की यह आयु समूह आयु कही जाती है।

इस काल में उनका विकास तेज़ी से होता है तथा किसी-न-किसी साथी समूह का सदस्य बन जाता है। जिस तरह से परिवार का प्रभाव बालक के सामाजिक विकास पर महत्वपूर्ण ढंग से पड़ता है, ठीक उसी तरह से साथी समूह का भी प्रभाव पड़ता है। यह साथी समूह बच्चों की सामाजिक अभिवृत्तियों के विकास को भी महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करती है।

**सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक :** बालक का प्रत्येक आयु स्तर पर एक निश्चित मात्रा में सामाजिक विकास होता है।

यह विभिन्न कारकों पर निर्भर होता है, जिनमें से प्रमुख कारक अग्रलिखित प्रकार से हैं :

**क) शारीरिक बनावट :** सामाजिक विकास को सबसे ज़्यादा शारीरिक बनावट प्रभावित करती है। जिन बालकों की शारीरिक बनावट आकर्षक होती है, उन्हें समाज में अच्छा स्थान मिलता है। आकर्षक बालकों से सभी मेल-जोल पसन्द करते हैं। इस प्रकार से इनका सामाजिक विकास दूसरे बच्चों की तुलना में शीघ्र व सामान्य ढंग से होता है, तो इनको सामाजिक परिस्थितियों में सीखने के अवसर भी अधिक प्राप्त होते हैं।

**ख) स्वास्थ्य :** जो बच्चे स्वस्थ होते हैं, उनका सामाजिक विकास अस्वस्थ बच्चों की तुलना में ज़्यादा होता है। स्वस्थ बच्चों को सामाजिक विकास के ढेर सारे अवसर प्राप्त होते हैं, जबकि अस्वस्थ बच्चों को कम अवसर प्राप्त होते हैं। धीरे-धीरे वह अन्तर्मुखी हो जाते हैं। इनमें सामाजिकता तथा सहयोग के गुणों का विकास नहीं हो पाता।

**परिवार :** परिवार के आकार एवं वहाँ के वातावरण से बालकों का सामाजिक विकास महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित होता है। छोटे परिवारों में

बालकों को अधिक स्नेह व संरक्षण मिलता है जबकि बड़े परिवारों के बच्चे अन्य बच्चों का अनुकरण करते हैं। उन बच्चों को अधिक स्नेह व संरक्षण भी नहीं मिल पाता है। परिवार के सदस्यों का सामाजिक व्यवहार जिस प्रकार का होता है, वैसा ही सामाजिक व्यवहार उस बालक का होता है। इसके अलावा सहयोग, उत्तरदायित्व, पक्षपात, अपमान, सम्मान आदि के बारे में बालक परिवार से ही सीखते हैं।

**घ) सामाजिक-आर्थिक स्तर :** परिवार के सामाजिक-आर्थिक स्तर का भी बालकों पर प्रभाव पड़ता है। जिस परिवार का सामाजिक आर्थिक स्तर उच्च होता है, वहाँ बालकों में आत्मविश्वास अधिक होता है, जबकि निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले परिवारों के बच्चों में आत्मविश्वास कम होता है, जिसके कारण वे उत्तरदायित्वों को सँभालने में कठिनाई का अनुभव करते हैं। इस प्रकार स्पष्ट होता है, कि परिवार का सामाजिक आर्थिक स्तर भी बालकों के सामाजिक समायोजन को प्रभावित करता है।

**ड) विद्यालय :** किसी भी बालक के सामाजिक विकास में उसके शिक्षक व अन्य बालक अपना योगदान देते हैं। जब बालक अपनी आयु के बच्चों के साथ रहता है, तब वह उनसे बहुत कुछ सीख लेता है। साथ ही बड़े बालकों के सामाजिक अनुभवों तथा सामाजिक व्यवहारों से उसकी सामाजिक सूझ भी बढ़ती है। वह सामाजिक मूल्यों से परिचित होता है। उसमें सहयोग मित्रता उत्तरदायित्व तथा आत्मनिर्भरता के गुणों का समावेश होता है।

**च) पड़ोस :** पड़ोस से भी बालक का सामाजिक विकास होता है। पड़ोस का सामाजिक वातावरण एवं व्यवहार तथा सामाजिक कार्यक्रम भी सामाजिक विकास को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करते हैं।

**छ) व्यक्तित्व :** बालक का व्यक्तित्व भी सामाजिक विकास का महत्वपूर्ण कारक है। सकारात्मक संवेगों से युक्त प्रतिभा का बालक सामाजिक परिस्थितियों के साथ सहज ही समायोजन स्थापित कर लेता है। इसके विपरीत, हीनता से युक्त व्यक्तित्व वाले बच्चों में समायोजन क्षमता का अभाव पाया जाता है।

**ज) संवेगात्मक विकास :** जिन बच्चों में प्रसन्नता, शान्त स्वभाव तथा बहिर्मुखी होने का गुण होता है उन बच्चों के मित्रों की संख्या भी अधिक होती है। इस प्रकार से बालक का सामाजिक विकास भी अच्छी प्रकार से हो जाता है। इसके विपरीत चिड़चिड़े व क्रोधी स्वभाव के बच्चों के साथी कम होते हैं जिसके कारण उनका सामाजिक विकास भी अपेक्षाकृत कम होता है।

**झ) मनोरंजन :** जिस परिवार में मनोरंजन के साधन अधिक होते हैं, उस परिवार के बच्चों में समाज विरोधी तत्वों के उत्पन्न होने की सम्भावना कम होती है क्योंकि एक ओर तो वह मित्रों तथा मनोरंजन में व्यस्त रहता है, दूसरी ओर उसका स्वभाव भी हँसमुख हो जाता है। इस प्रकार वह सामाजिक परिस्थितियों के साथ समायोजन करने में सफल रहता है।

**ञ) सम्बर्द्धन अभिप्रेरक :** जिन बालकों का अधिकतर समय परिवार तथा अन्य बालकों के साथ व्यतीत होता है, उनमें सम्बर्द्धन अभिप्रेरणा अधिक मात्रा में पायी जाती है, जिससे उनमें सामाजिक विकास भी तीव्र गति से होता है।



# मेला ग्राउंड की कहानी : उसी की जुबानी

✍ सुषमा आनन्द

सह-निदेशक (हिन्दी), प्रकाशन अनुभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आज मैं बहुत खुश हूँ, प्रसन्न हूँ, आह्लादित हो रहा हूँ। कितने लोग मुझे देखने आ रहे हैं आज! मेरा निरीक्षण हो रहा है, मुआयना हो रहा है। मेरी जांच-पड़ताल हो रही है। सोचा जा रहा है कि किस स्थान पर क्या किया जाए। किस प्रकार के स्टॉल लगाए जाएं। बिजली का प्रबंध कैसे किया जाए। वर्ष में दो बार, केवल दो बार मुझे सजाया-संवारा जाता है-एक बार मार्च में व एक बार सितम्बर में। मैं इन दो महीनों का बेसब्री से इन्तज़ार करता रहता हूँ और अब वो महीना आ ही गया।

सबसे पहले पानी के टैंक आकर मुझे भिगो-भिगोर जाते हैं जिससे मेरी मिट्टी उड़कर लोगों को नुकसान न पहुँचाये और मैं भी ठंडा हो जाऊँ। फिर विश्वविद्यालय के बड़े-बड़े अधिकारीगण आते हैं और निश्चित करके जाते हैं कि कहाँ-कहाँ पर किस प्रकार से स्टॉल लगाए जाएं। फिर टैन्ट हाऊस वालों को कॉन्ट्रैक्ट (ठेका) दिया जाता है मुझ पर स्टॉल लगाने का। फिर मजदूर लोग आते हैं और मुझे जगह-जगह से खोद दिया जाता है। फिर खूँटे गाड़े जाते हैं, रस्सियाँ बांधी जाती हैं और लकड़ी के बड़े-बड़े फट्टे लगाकर स्टॉल तैयार किए जाते हैं। किसी को फावड़ों से खोदा जाय तो उसे कितना दर्द होता है। मुझे भी होता है-परन्तु मीठा-मीठा। इस दर्द में एक खुशी छुपी रहती है कि मुझे सजाया-संवारा जाएगा और कितने ही प्रदेशों के लोग मुझे देखने आएंगे। लोगों के आने से मेरा दर्द हल्का हो जाता है। वरना मैं तो पूरा वर्ष यूँ ही पड़ा रहता हूँ इस इन्तज़ार में कि कोई आए और मुझसे बतियाए, मेरा अकेलापन दूर करे।

विश्वविद्यालय के बड़े-बड़े अधिकारी बीच-बीच में आकर देखते हैं मेरा निरीक्षण करते हैं कि मुझे किस प्रकार सजाया जा रहा है। विश्वविद्यालय के सभी विभागों के स्टॉल मुझ पर लगाए जाते हैं। सभी स्टॉल बहुत सुन्दर तरीके से सजाए जाते हैं। दूसरे शहरों एवं राज्यों से भी बड़े-बड़े व्यवसायी आते हैं और स्टॉल लगाते हैं। उनका सामान भी बहुत ही अच्छी किस्म का होता है। किसानों के काम के तो इतने स्टॉल होते हैं कि मैं वर्णन ही नहीं कर सकता। विभिन्न प्रकार के कृषि यन्त्र, औज़ार, मशीनें, ट्रैक्टर, पम्प, उर्वरक, बीज, कीटनाशक आदि कई प्रकार के स्टॉल लगाए जाते हैं और विश्वविद्यालय के प्रकाशन एवं बीज तो बहुत ही प्रसिद्ध हैं। तथा और भी कई लोग बाहर से आकर विभिन्न प्रकार के अचार, मुरब्बे, चटनी के स्टॉल, कुछ आयुर्वेदिक दवाइयाँ, कुछ तेल वाले, कुछ पत्रिकाओं एवं समाचार-पत्र आदि कई स्टॉल.....वर्णन करना कठिन है।

खाने-पीने के स्टॉल भी लगाए जाते हैं जिससे कि मेला देखने आने वाले व्यक्ति भूखे न रहें। कुछ अन्य फल एवं चाट वाले और खाद्य पदार्थों वाले गेट के बाहर अपनी रेहड़ियाँ लगाते हैं जिससे कि उनकी थोड़ी आमदनी हो सके। दूर-दूर से आए नर्सरी वाले अपने फूलों, सब्जियों एवं फलों के बीज एवं पौध बेचते हैं। कई लोग बच्चों के खिलौने, गुब्बारे आदि बेच रहे होते हैं तो कई सब्जियाँ काटने के तरह-तरह के कटर बेच रहे होते हैं कहीं चूरण तो कहीं दूध एवं जूस की बहार होती है। (शेष पृष्ठ 31 पर)

## Improved Cultivation Practices in Spinach (Palak)

✍ Makhan Majoka, Shiwani<sup>1</sup> and V.P.S. Panghal

Department of Vegetable Science  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

**Botanical Name :** *Beta vulgaris*

**Family :** Chenopodiaceae

**Introduction :** Indian spinach (palak) is a popular leafy vegetable grown in almost all



parts of India. The plants has fleshy stem, leaves and is of a trailing habit. It is an annual plant growing as tall as 30 cm (1 ft.) in its vegetative stage. The leaves are alternate, simple, and ovate to triangular and very variable in size.

**Distribution :** It is the most important leafy vegetable grown in India. The important spinach growing states includes Uttar Pradesh, West Bengal, Punjab, Haryana, Delhi, Madhya Pradesh, Maharashtra and Gujarat.

**Food Value :** Per 100 g spinach leaves constitutes about 86.6% water, 6.6% carbohydrates, 3.4% protein, and contains negligible fat. In a 100 g serving providing only 23 calories, spinach has a high nutritional value, especially when fresh, frozen, steamed, or quickly boiled. It is a rich source of vitamin A, vitamin C, vitamin K, magnesium, manganese and iron. Spinach is a good source of vitamins B riboflavin and vitamin B6, vitamin E, calcium, potassium and dietary fiber.

**Uses :** Spinach is primarily used as potherb. 'Palak paneer' is a favourite Indian dish. It is also reported to be mildly laxative. The leaves mixed with gram flour batter (besan) are fried to make pakoras, a North Indian delicacy.

### Improved Varieties

**Jobner Green** (University of Udaipur, Jobner) : It has been developed by selection from a spontaneous mutation identified from a local material, Selection No. 5. The leaves are uniform, thick, full with juice, green, tender, cordate shaped, about 25 cm long and 15 cm broad. First harvesting is possible 30-40 days after sowing. It is rich in vitamin C and Beta carotene content. Average yield is 120 quintals/acre.

**All Green** (IARI, New Delhi) :

It has been developed by selection from the local material. The leaves are uniform green and tender. A total of 5-6



<sup>1</sup>Ph.D. Scholar, Department of Vegetable Science, CCSHAU, Hisar



cuttings at 15-20 days interval are possible. Average yield is 50 quintals/acre.

**HS 23** : It has been developed by mass selection from the local material. Its leaves are succulent, dark green, thick, broad and tender. Plants are very vigorous, quick growing and regenerate quickly after each cutting. First cutting is possible 30 days after sowing. It gives total 6-8 cuttings at two weeks interval.



**Punjab Green** (PAU, Ludhiana) : It has been developed by selection from local material. Plants are semi-erect, leaves are succulent, shining dark, thick and broad and free from sourness. There is mild purple pigment on the stem. First cutting is possible 30 days after sowing. It is slow bolter and has low oxalic acid. Average yield is 120 quintals/ acre.

**Pusa Harit** (IARI, Katrain) : The variety was developed from an inter-specific cross involving sugar beet and local palak. Leaves are upright, green, thick and crinkled. It is a heavy yielder and has very late bolting habit. First cutting is possible 40-45-days after sowing and yields 60-70 quintals/acre.

**Pusa Jyoti** (IARI, New Delhi) : It has been developed by polyploidy breeding using colchicine for doubling chromosome number of the cultivar All Green. It leaves are large sized, thick, tender, dark green, succulent and crisp. Plants are very vigorous, quick growing and regenerate quickly after each cutting. It gives 6-8 cuttings and yields about 200 quintals/acre.

**Climatic Requirement** : Although spinach is a winter season crop, but can be grown throughout the year under mild temperature conditions. For initial early rapid growth of leaves, a temperature of 15.5 - 21.1°C is found to be ideal. Maximum yields are obtained under short days and mild temperature, while long days and higher temperatures will result in bolting of the plants. It can tolerate frost better than other vegetables.

**Sources of Seed** : We should always get the seed from some authenticated source. Seed can be bought by Government agencies such as National Seed Corporation, Haryana State Farm, HSDC and Agricultural Universities, etc.

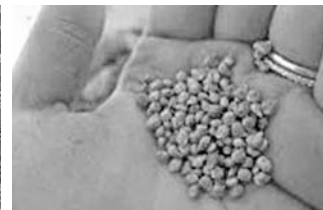
**Soil** : Spinach can be cultivated on all types of soil but sandy-loam soil with good drainage supplied, adequate amount of organic manures and mineral fertilizers is considered good. A pH range of 6.0-7.0 is considered optimum for proper growth. Higher acidity is injurious to spinach. Spinach is somewhat tolerant of soil salinity and very tolerant of alkaline soils.

**Land Preparation** : Apply 20 ton well decomposed FYM or compost per acre at the time of field preparation. Land should

be made well pulverized and uniform by 3-4 times ploughing followed by planking.

**Sowing Time** : Spinach is sown throughout the year but best time for sowing is from August to December.

**Sowing Method** : Sowing is done either by broadcast method or by line sowing. Line sowing is more desirable as it facilitates weeding, hoeing and harvesting.



Manual sowing of spinach

Seeds of spinach

**Seed Rate** : Generally the 8-10 kg seed per acre land is sufficient.

**Spacing** : For leaf production, used spacing between line to line is 20 cm and plant to plant is 5 cm. Gap filling and thinning operations should be done as per requirement.

**Manuring and Fertilization** : Rich soil is essential for a good crop and nitrogenous and phosphoric fertilizer application has been found beneficial. It is essential to apply 20 ton FYM, 32 kg N, and 16 kg of phosphorous per acre to raise healthy crop. Phosphorous applied as basal dose whereas nitrogen in two to three split doses.

**Irrigation** : Sufficient moisture is needed to produce rapid and succulent growth. Inadequate moisture may lead to thin, wiry stems and small leaves. The crop in general requires 5-6 irrigations in 8-10 days interval depends on the soil type.

**Weed Management and Intercultural Operation** : To keep weeds free crop, along with to provide aeration to soil 2-3 hoeing are required in early stage.



**Harvesting** : Harvesting of spinach is done manually by sickle 30-35 days after sowing and continues 15-20 days interval. The harvested spinach is tied in bunches to increase their shelf life and consumer attraction.

**Yield** : Depending upon the varieties and growing condition, average yield in spinach is 32-40 quintals/acre. It also depends on regions to regions and caring of spinach crop.



# The Importance of Soil Organic Matter for Soil Health

✍ N. K. Goyal, Partap Sangwan and R.S.Malik  
KVK, Yamunanagar (Haryana)  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Soil health refers to the condition of the soil and its potential to sustain biological functioning, maintain environmental quality, and promote plant and animal health.

Organic matter in soil is the key to soil health. The soil is composed of approximately 90-98% minerals and only 2-10% organic matter. The amount of organic matter in a soil is often used as an indicator of the potential sustainability of a system. The optimal level of soil organic matter for any given soil is one which supports the functional capacity of the soil to hold and supply plant available water, store plant nutrients, provide energy for soil fauna, improve crop/biomass yields, and moderate net greenhouse gas emissions. Farming practices that reduce soil organic matter such as burning, tillage, overgrazing and continuous cropping run the risk of contributing to a decline in soil condition which may not become evident for many years.

## Indicators of Soil Organic Matter

- ❖ Soil colour - for a particular soil type, an increase in Soil Organic Matter(SOM) can be related to a darkening of soil colour.
- ❖ Soil smell - earthy (particularly strong after fresh rain)
- ❖ Softness of soil - soils high in organic matter are often more soft/light
- ❖ high proportion of ground cover (stubble, etc.)
- ❖ Presence of roots, earthworms, etc.

## Factors affecting Soil Organic Matter:

- 1. Climate :** Climatic conditions (temperature and rainfall) control microbial activity and thus SOM decomposition—therefore the frequency and timing of rainfall events in relation to temperature and organic matter placement is important. Moist, hot and well-aerated conditions favour microbial activity and the rapid decay of organic additions.
- 2. Organic Matter Input and Composition :** If the rate of organic matter addition greater than the rate of loss, SOM will increase. Conversely, if the amount of organic matter retained is lower than the rate of loss, SOM will decrease. The amount of carbon input through plant root biomass (below ground biomass) is possibly of greater importance for increasing SOM than above ground biomass, as it is largely protected from loss. The retention of SOM is both soil and climate dependent.
- 3. Microbial Activity :** Soil organisms such as earthworms and ants break large pieces of organic debris into smaller pieces and are capable of incorporating surface residues deeper into the soil, but the greatest concentration of organic

matter remains in the top ten centimetres of soil and is associated with surface residues and prolific root growth . The microbial population rapidly decomposes these organic residues and they themselves contribute to the organic matter. Soil conditions that decrease microbial activity also decrease the mineralisation (breakdown) of organic matter. For example, changes in soil pH can alter biological activity, function and survival of the microbial community - micro-organisms prefer a relatively neutral soil pH (pH 6.5-7.5 ). As soils become more acidic, microbial activity and organic matter decomposition slow down.

**4. Residue Load :** Maintaining ground cover through crop and pasture residues above 50% decreases the risk of erosion and subsequent soil loss, as well as providing a significant nutrient store. High levels of ground cover can decrease evaporation. Farming practices that break up soil aggregates such as cultivation expose new soil organic matter to decomposition and can accelerate the rate of breakdown, decreasing the amount of carbon stored in soil. Similarly, burning can rapidly affect the balance of soil carbon. The retention of stubble, pasture leys and zero tillage are all examples of practices that increase the potential for carbon sequestration.

## Management Practices to Increase Soil Organic Matter :

Management practices to maintain or increase SOM in agricultural depends on practices increasing biomass production and minimising SOM decomposition or loss. A combination of the following points should be considered when developing soil management plans that aim to improve soil organic matter. Organic matter is the fuel which drives the soil biota and should be retained to maximise nutrient cycling and improve soil aggregation. The following is a list of practices for maintaining SOM and developing a healthy soil organisms.

- 1. Increasing Soil Water :** Increasing soil moisture capture and effective use of rainfall and/or irrigation stimulates plant growth, and consequently provides a greater input of organic matter to the soil.
- 2. Produce high biomass crops and Retain Stubble :** Higher inputs of organic matter (due to more rain or production) or increased crop frequency will increase SOM. However, unless maintained the soil will revert to a steady state equilibrium . Leaving stubble standing and in larger size pieces will slow the decomposition rate, promote water conservation and reduce soil erosion (over 90% of organic matter is stored in the top 10 cm of most cropped soils and this can take years to replace).

The burning of maize, paddy, wheat and other residues in the field is a common practice. These are usually burnt to help control insects/pest incidence and to make fieldwork easier in the following crop season. Burning destroys the little layer and so diminishes the amount of organic matter returned to the soil.



Besides burning, a lot of pollution problem persists for a long time. Burning of crop residues is a common practice in Haryana and Punjab. Stubble burning decreases the amount of organic matter returned to soil. Burning removes much of the soil carbon (and nutrients) suitable for micro-organisms, limiting microbial activity and decreasing the population size of soil biota. Rotate crop and pastures to provide a more diverse food source to support a larger, more diverse range of organisms. Legumes crops and green manures crops like dhaincha, clover, berseem, moong, urd, methi fix N from the atmosphere and provide a disease break - their residues have a lower C:N ratio and are more-easily decomposed by soil biota than cereal straw.

**3. Reduce or Eliminate Tillage :** Increased soil disturbance breaks down soil aggregates and exposes residues and other SOM to microbial decomposition and oxidation, accelerating the rate of SOM decline. Reducing tillage will promote soil aggregation and afford greater physical protection of SOM (excessive tillage is likely to result in a continuing decline in SOM), while as zero tillage will maximise the potential to build up SOM. Cultivation disrupts soil aggregates and exposes previously protected SOM to decomposition, producing an initial flush in microbial activity but then a longer decline associated with the loss of their SOM food source. Use of new generation technology like Zero tillage and Happy Seeder sowing of wheat in standing stubbles of paddy will help improve SOM in the long run.

**4. Application of Organic Manures and Amendments :** Crop residues, animal manure, composts and biogas slurry, press mud added to the soil can contribute both organic matter and nutrients. Where tillage is required to incorporate the manure, decomposition of soil organic matter is accelerated and may disrupt macropores, so zero till options should be considered and/or quantities increased to have a significant beneficial effect.

**5. Appropriate Use of Pesticides and Fertilisers :** The appropriate use of herbicides may be less harmful to the soil environment and organisms, than traditional weed control techniques of cultivation and stubble burning. Soil microbial populations adapt to organic chemical inputs; therefore pesticides are unlikely to have a long-term negative impact where chemical application rates are low, or where re-application of the same herbicide within a short period is avoided. Reduce the use of copper based fungicides (these can have a long-term effect in suppressing soil biota). Foliar applications are less damaging than those applied directly to soil. Fertilisers increase crop growth and residue inputs, indirectly supporting higher microbial populations. High rates of mineral N fertilisers suppress nodulation and N fixation by legumes. Fertiliser inputs should be used to complement N cycling from organic matter and enhance the activities of micro-organisms. The efficiency of fertiliser use will be high

where the organic matter content of the soil is also high. When soil organic matter levels are restored, fertiliser can help maintain the nutrients in the soil by increasing crop yields and, consequently, the amount of residues returned to the soil.

Farming practices that reduce soil organic matter such as burning, tillage, overgrazing and continuous cropping run the risk of contributing to a decline in soil condition which may not become evident for many years. Organic matter helps determine the porosity of soil, aiding in water entry and storage and helps keep soil particles separated by improving soil aggregation and structure. Soils high in organic matter tend to have fewer problems with soil crusting and hardsetting. Healthy soils have a greater capacity to grow more organic material and are able to retain their healthy status (positive feedback) - these soils are more resilient in the face of environmental extremes. A healthy soil is one that is productive and easy to manage under the intended land use. It has physical, chemical and biological properties that promote the health of plants, animals and humans while also maintaining environmental quality.



( पृष्ठ 28 का शेष )

कुछ दिन मुझ पर खूब गहमा-गहमी होती है धमा-चौकड़ी मची रहती है। विभिन्न प्रदेशों के गांवों के किसान/महिला किसान इस मेले में आते हैं। विश्वविद्यालय के फार्म का दर्शन उन्हें करवाया जाता है। बहुत सी बसें इस कार्य में लगाई जाती हैं। मिट्टी और पानी के नमूनों की जांच यहां पर होती है। फसल प्रतियोगिता, डम्मी प्रदर्शन तथा आए हुए किसानों के मनोरंजन के लिए हरियाणवी नाटक, सांग, रागिनियों का आयोजन भी किया जाता है। फसल प्रतियोगिता द्वारा अच्छी फसल उगाने वाले किसानों को पुरस्कृत भी किया जाता है। वैज्ञानिकों द्वारा किए गए नए-नए शोधों को किसान भ्रमण द्वारा विश्वविद्यालय के फार्म पर दिखाया जाता है। किसान मेले से बहुत से बीज, उर्वरक, जीवाणु खाद, प्रकाशन आदि खरीद कर जाते हैं। अपने सिरों पर बीज का थैला, हाथ में अन्य सामान लिए खुशी-खुशी घर जाते हैं। विश्वविद्यालय के सभी अधिकारीगण, कर्मचारी आदि सभी इस मेले को सफल बनाने के लिए एकजुट होकर कार्य में कई दिन तक लगे रहते हैं।

अब शाम का समय हो रहा है। सभी स्टॉल वाले अपना-अपना बचा हुआ सामान ट्रकों, कैन्टरों, जीपों में लाद रहे हैं क्योंकि आज मेले का दूसरा एवं अन्तिम दिन है सभी व्यापारी अपने-अपने शहरों-घरों में चले जाएंगे और मुझे बहुत बेचैनी हो रही है, कुछ-कुछ हो रहा है-फिर से अकेला रह जाने के भय से। कल सारे स्टॉल भी उखड़ जाएंगे और मैं फिर अकेला का अकेला रह जाऊंगा.....छः महीने के लिए। बस बीच में कभी-कभी कोई व्यक्ति गाड़ी-स्कूटर सीखने वाला आ जाता है तो मेरा एकाकीपन कुछ समय के लिए दूर हो जाता है और फिर एक इन्तज़ार.....लम्बा इन्तज़ार।





## World Food Day

 **Praduman Bhatnagar, J. N. Bhatia and Prem Lata**

KVK Kurukshetra

CCS Haryana Agricultural University, Hisar

World Food Day is celebrated every year on 16th October in more than 150 countries of the world for raising awareness about the issues of poverty and hunger. On this very day, Food & Agriculture organization came up in 1944 under the auspices of UNO. During a meeting of FAO, an international alliance and agreement was approved in 1973 in order to eliminate hunger from the world.

In order to strengthen the issue, World Food Day was established by FAO's member countries at the organisations, 20th general conference in Nov. 1979 and 16th October was taken as a base to organize this day as World Food Day so as to honour the founding of FAO. Consequently, first WFD was celebrated in 1981. The basic objectives of the celebrations are:

- ❖ to bring enlightenment and awareness among the general masses on the intensity of global food problem which has been continuing since long and aggravating.
- ❖ To develop cooperation and agreement to fight against hunger and poverty at national and international level.
- ❖ To draw attention of the people on the successful accomplishments on agriculture in general and food grain production in particular.

The above said objectives and events revolve around "Food for All" However, the cover of food security has failed to reach about 815 million people (2016) of the world (from 777 million in 2015) who suffer from chronic under nourishment. i.e. 1 in 9 people, of which 60% are women. A country is said to achieve a state of food security in which all the people living in have enough food of good quality in order to have a healthy life. After steadily declining over a decade, global hunger (prevalence of chronic malnutrition) appears to be on the rise. In India only, 300 million people are food insecure i.e. non availability and accessibility to food. Food insecurity often situations at the risk of turning into famine. Hunger alone, is reported to kills more people than malaria, TB and Aids combined. About 45% of child deaths are related to malnutrition and hunger for which poverty plays a pivotal role. Stunting still affects 155 million children under the age of five.

Availability and accessibility to the food by the poor is of major concern. A few challenges hampers with and slows down the achievements of goal.

Every year 70 lakh ha organic land has been ruining. Soil health is decreasing and land is turning unfertile due to heavy rains and floods. 2500 crore tons of fertile soil is erased every year. In arid and semi arid regions, 350 crore ha land got turned into desert during past many years. Each year, 1/3rd of food produced is lost/wasted worldwide. Global cost of food wastage comes to be 2.6 trillion USD/year.

Further, extreme weather conditions linked to climate change, economic slow down and rapidly increasing change to over weight (1.3 billion people) and obesity levels (600 million people) are reversing the programmes made in the fight against malnutrition and hunger. Internal and external conflicts, violence and population displacement further worsen the situation of malnutrition.

80% of World's poor live in rural areas where people depend on agriculture, fish and forest for their food. To feed the ever growing population which is expected to rise to 10 billion by 2050, food grain production need to increase by 50% globally. Small farmers need to adopt new sustainable organic technologies to increase production and income.

Government must create opportunity for greater private sector investments in agriculture while boosting social protection programme for the vulnerable. Hence malnutrition and hunger calls for the transformation of rural economy. Food security requires a holistic approach to malnutrition, productivity, income of small and marginal farmers, resilience of food production system and sustainable use of natural resources and bio-diversity. Food banks may be established where food is donated voluntarily and hunger stricken may meet their food requirement. Voluntarily donations exclusively for the purpose of meeting the food requirement will ease the situation. This must be in line with the education and skill development programmes along with credit facilities so as to help them to come out from poverty circle.

The celebration of the event promote worldwide awareness and action for those who suffer from hunger and for the need to ensure food security and nutritious diets for all. World Food Day, provides us a chance for our commitment to sustainable development goal – "Zero Hunger World by 2030 is possible".



# हरियाणा

ISSN-0970-6518

# खेती



वर्ष 51

अंक 11



वार्षिक चंदा 150/-

नवम्बर 2018

आजीवन सदस्यता 1500/-

**प्रकाशन अनुभाग**  
**विस्तार शिक्षा निदेशालय**

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार



# हरियाणा खेती

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. ( 2 ) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित  
© कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 51 नवम्बर 2018 अंक 11

## इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
जौ की उन्नत खेती : कम लागत अधिक लाभ	जग नारायण यादव, राजेंद्र कुमार एवं आर.बी. गुप्ता	2
चने की सिफारिश की गई उन्नत किस्में	ज्योति	3
सरसों में तना गलन रोग हेतु समेकित रोग प्रबंधन	नरेंद्र सिंह यादव, बलबीर सिंह एवं मनोज कुमार	4
पॉलीहाउस में सब्जियों की नर्सरी तैयार करना	राजेश कुमार, विकास कुमार शर्मा एवं अनिल कुमार गोदारा	5
गाजर की जड़ों व बीजोत्पादन से दोहरा लाभ कमाएं	तन्वी मेहता एवं डी. एस. दुहन	6
आलू की खेती में ध्यान रखने योग्य बातें	रेनू यादव, वी.पी.एस. पंघाल एवं हंसराज	7
सब्जी उत्पादन में वृद्धि नियामकों की भूमिका	तन्वी मेहता एवं डी. एस. दुहन	9
फल एवं सब्जी छंटाई (ग्रेडिंग) संयंत्र	रवीना कारगवाल, एम. के. गर्ग एवं यादविका	10
बीज प्रमाणीकरण प्रक्रिया	सुनील कुमार, अनिल कुमार मलिक एवं सतबीर सिंह	11
पौधों में नाइट्रोजन का महत्व एवं प्रबंधन	दीपिका राठी, देवराज एवं पूजा	12
सफल डेयरी फार्मिंग के मूल-मंत्र	अमित और गुलाब सिंह	19
जैव प्रौद्योगिकी फसलों से किसानों को मिलने वाले सामाजिक और आर्थिक लाभ	सोनली सांगवान, शिखा यशवीर एवं प्रतिभा	20
गाजर/कांग्रेस घास-आओ मिलकर करें विनाश	सतबीर पुनियां, धर्मबीर यादव एवं समुन्द्र सिंह	21
हैप्पी सीडर द्वारा फसल अवशेष प्रबन्धन	कुलदीप सिंह, जोगेन्द्र सिंह एवं अनिल कुमार	21
बच्चों के विकास में आंगनवाड़ी केन्द्रों का योगदान	पूनम रानी एवं बिमला ढांडा	23
बच्चों के विकास में परिवार की भूमिका	पूनम रानी एवं बिमला ढांडा	23
शरदकालीन मक्का की वैज्ञानिक खेती	नरेन्द्र सिंह, मेहरचन्द कम्बोज एवं महासिंह जागलान	24
टपका सिंचाई पद्धति में बहाव अवरोधन को क्लोरीन प्रक्रिया द्वारा दूर करने की विधि	प्रमोद शर्मा एवं संजय कुमार	25
कृषि व्यवसाय में हिसाब-किताब का महत्व	अशोक ढिल्लों, रमेश कुमार एवं नीरज पंवार	27
भावान्तर भरपाई योजना	भरत सिंह घणघस, संदीप भाकर एवं प्रदीप कुमार चहल	28
कृषि विकास में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकियों का महत्व	सूबे सिंह, प्रदीप कुमार चहल एवं राजेश कुमार	29
T & V System: An Effective Tool for Transfer of Technology	Surender Singh, Bhupender Singh and Sube Singh	29
Post Harvest Managements of Seed Spices	Preeti Yadav, Manoj Kumar and S. K. Tehlan	31
Prospective of Mobile Advisories in Agricultural Extension Services	Anil Kumar Malik, Krishan Yadav and Rajesh Kumar	32

## साई सतम्भ : दिसम्बर मास के कृषि कार्य

13

तकनीकी सलाहकार	सह-निदेशक (प्रकाशन)	संपादक
डॉ. आर. एस. हुड्डा	डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी	डॉ. सुषमा आनंद
निदेशक, विस्तार शिक्षा		सह-निदेशक (हिन्दी)
संकलन		सुनीता सांगवान
डॉ. एम. एस. ग्रेवाल		सम्पादक (अंग्रेजी)
परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)		प्रकाशन अनुभाग
विस्तार शिक्षा निदेशालय		आवरण एवं सज्जा
		राजेश कुमार

**लेखकों से अनुरोध :** हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। कृपया अपने विभाग का नाम अवश्य लिखें। टाईपिंग के लिए [कृति देव फोन्ट](mailto:haryanakhethihau@gmail.com) का ही प्रयोग करें। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं [haryanakhethihau@gmail.com](mailto:haryanakhethihau@gmail.com)



# जौ की उन्नत खेती : कम लागत अधिक लाभ

जग नारायण यादव<sup>1</sup>, राजेंद्र कुमार<sup>2</sup> एवं आर.बी. गुप्ता<sup>3</sup>

कृषि विज्ञान केंद्र, फरीदाबाद

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

जौ रबी में उगाया जाने वाला एक खाद्यान्न एवं औद्योगिक फसल है। हरियाणा में जौ मुख्यतः भिवानी, सिरसा, हिसार, रोहतक, रेवाड़ी एवं झज्जर जिलों में उगाया जाता है। सिंचित दशा में जौ की खेती गेहूँ की अपेक्षा ज्यादा लाभदायक है। जौ में गेहूँ से अधिक सूखा सहने की क्षमता होती है। जौ की खेती सबसे प्राचीन है और यह विश्व के सभी देशों में उगायी जाती है। जौ का सर्वाधिक उपयोग माल्ट बनाने के लिए किया जाता है। माल्ट का प्रयोग बियर बनाने, बच्चों तथा कमजोर लोगों के लिए टॉनिक बनाने में किया जाता है। भारत में शीर्ष पाँच जौ उत्पादक राज्य क्रमशः राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हरियाणा एवं पंजाब हैं। हमारे देश में अधिकतर जौ का प्रयोग मानव, जानवरों व मुर्गी के चारे एवं दाने के लिए किया जाता है। असिंचित दशा में जौ की खेती गेहूँ की अपेक्षा अधिक लाभदायक है।

## जौ का पोषक मूल्य एवं औषधीय गुण :

जौ स्वास्थ्य के लिए एक अच्छा खाद्य पदार्थ माना जाता है। इसके पोषक मूल्य क्रमशः प्रोटीन 9-12 प्रतिशत, रेशा 3.9 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 69.4 प्रतिशत, वसा 1.3 प्रतिशत, थाइमिन 0.4 एमजी./100 ग्राम और नियासिन 4.7 एमजी./100 ग्राम तक होती है। इसमें कैल्शियम की मात्रा कम पायी जाती है। जौ में विटामिन बी की मात्रा जैसे थायमीन, नायसिन, पेन्टाथेनिक एसिड और पाइरिडॉक्सिन की मात्रा बहुत अच्छी होती है। जबकि राइबोफ्लेविन साधारण मात्रा में पाया जाता है। जौ का प्रयोग औषधि के रूप में किया जाता है। जौ एवं मूंग का सतू पीने से आंतों की गरमी शांत होती है। दूध एवं घी के साथ जौ का दलिया लगातार खाने से मधुमेह में लाभ होता है। यह शुगर के रोगियों के लिए रामबाण इलाज है। जौ का दलिया दूध के साथ खाने से मूत्राशय संबंधी विकार दूर होता है। जौ पथरी में लाभदायक होता है तथा पथरी वाले रोगियों को जौ से बने खाद्य पदार्थों का भरपूर उपयोग करना चाहिए। जौ का प्रयोग औषधि के रूप में किया जाता है।

**भूमि एवं जलवायु :** जौ की फसल को बारानी, सिंचित और क्षारीय दशाओं में रबी के मौसम में उगाया जाता है। सभी प्रकार की भूमि में इसकी खेती की जा सकती है। अच्छे जल निकास वाली दोमट भूमि में जौ की फसल अच्छी होती है। उसरीली भूमि में भी इसकी खेती की जा सकती है। इसके लिए तापमान बिजाई के समय 25-30 डिग्री सेंटीग्रेड सही माना जाता है। जौ में गेहूँ से अधिक सूखा सहन करने की शक्ति होती है। जौ की बढ़वार पर पाले का विपरीत प्रभाव पड़ता है। जौ की खेती के लिए ठंडी जलवायु उपयुक्त रहती है।

**उन्नत किस्में :** जौ की उन्नत किस्में क्रमशः बी एच 885, बी एच 902, एवं बी एच 393 हैं।

<sup>1</sup>प्रशिक्षण सहायक

<sup>2,3</sup>प्रधान विस्तार विशेषज्ञ

बी एच 885 एवं बी एच 902 यह बौनी किस्में हैं इसमें अधिक फुटाव होता है। इसकी बिजाई समय से सिंचित दशा में करें। यह माल्ट उद्योग के लिए उत्तम किस्म है। यह पीला रतुआ व पत्तों के झुलसा रोगरोधी हैं। इसकी औसत पैदावार 20 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**बी एच 393 :** यह किस्म सिंचित दशा में समय से बिजाई के लिए उत्तम है। यह किस्म मोल्या तथा पीला व भूरा रतुआ अवरोधी है एवं चेपा के लिए सहनशील है। इसकी औसत पैदावार 19 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**बीज की मात्रा, उपचार एवं बिजाई :** असिंचित एवं पछेती बिजाई के लिए जौ के बीज की मात्रा 40-45 किलो ग्राम प्रति एकड़ होती है जबकि सिंचित के लिए 35 किलो ग्राम प्रति एकड़ की आवश्यकता पड़ती है। दीमक के उपचार के लिए जौ के एक किलो ग्राम बीज को 6 मिली लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. से उपचारित करें। असिंचित क्षेत्रों में जौ की बिजाई अक्टूबर के दूसरे पखवाड़े में शुरू करनी चाहिए तथा सिंचित दशा में जौ की बिजाई 15-30 नवम्बर के बीच करने से अच्छी पैदावार मिलती है। खेत की तैयारी करने के लिए 3-4 जुताई की आवश्यकता पड़ती है। खेत को अच्छी तरह तैयार करके कतारों में बिजाई करने से पैदावार अच्छी होती है। असिंचित एवं पछेती बिजाई में कतार से कतार की दूरी 18-20 सेंटीमीटर तथा समय की बिजाई में कतारों की दूरी 22 सेंटी मीटर रखें जिससे अच्छी पैदावार प्राप्त हो सके।

**खाद एवं उर्वरक की मात्रा :** खाद की सही मात्रा ज्ञात करने के लिए मिट्टी परीक्षण कराना आवश्यक है। साधारणतः सिंचित अवस्था में जौ की फसल के लिए 42 किलो ग्राम यूरिया, 26 किलो ग्राम डी. ए. पी. एवं 10 किलो ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश की आवश्यकता होती है तथा असिंचित दशा में 21 किलो ग्राम यूरिया, 13 किलो ग्राम डी. ए. पी.। इसमें फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा और यूरिया की आधी मात्रा बिजाई के समय खेत में डालें। शेष यूरिया पहली सिंचाई पर डालें।

**जौ में सिंचाई :** जौ की फसल में दो बार सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। जौ में पहली सिंचाई बिजाई के 40-45 दिन बाद और दूसरी सिंचाई बिजाई के 80-85 दिन बाद करनी चाहिए। पानी की कमी की अवस्था में एक सिंचाई करें बिजाई के 40-45 दिन बाद। माल्ट के लिए उगाई जाने वाली जौ में एक अतिरिक्त सिंचाई करनी चाहिए।

**खरपतवार नियंत्रण :** जौ में चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए 2,4-डी (सोडियम साल्ट 80 प्रतिशत) 400 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर फसल पर बिजाई के 40-45 दिन बाद छिड़काव करने से लाभ होता है।

जौ में संकरी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए एक्सियल 5 ई.सी. (पिनोक्साडेन) 400 मिली लीटर मात्रा प्रति एकड़ को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर फसल पर बिजाई के 40-45 दिन बाद छिड़काव करें।

जौ में मिश्रित खरपतवारों के नियंत्रण के लिए (संकरी एवं चौड़ी) एक्सियल 5 ई.सी. (पिनोक्साडेन) 400 मिली लीटर के साथ एलग्रीप 20 घु. पा. /घु. दाने (मैटसल्फ्यूरान-मिथाइल) 8 ग्राम और 200 मिली लीटर सर्फैक्टेंट प्रति एकड़ को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर फसल पर बिजाई के 40-45 दिन बाद छिड़काव करें। (शेष पेज 3 पर)

# चने की सिफारिश की गई उन्नत किस्में

ज्योति

अनुवांशिकी व पौध प्रजनन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत के विभिन्न राज्यों में अनेक दलहनी फसलें उगायी जाती हैं जिनमें चने का क्षेत्रफल तथा पैदावार के हिसाब से लगभग 40 प्रतिशत तथा 80 प्रतिशत योगदान है। चने का विशेष महत्व हरियाणा के पश्चिमी क्षेत्रों में है। चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा सिफारिश की गई चने की किस्में इस प्रकार हैं :

1. **सी 235 (C235)** : इस किस्म को हरियाणा राज्य के तराई तथा सिंचाई वाले क्षेत्रों में सिफारिश किया जाता है। यह दर्मियानी ऊंचाई वाली किस्म है। इस किस्म में उखेड़ा रोग लगता है परन्तु यह अंगमारी के लिए सहनशील है। इस किस्म की औसत पैदावार 8 क्विंटल/एकड़ है। इसके दाने भूरे पीले रंग के होते हैं।

2. **हरियाणा चना नं. 1 (HC1)**: यह किस्म हरियाणा में बारानी, सिंचित व पछेती तीनों समय की बिजाई के लिए उपयुक्त है। इसका पौधा बौना होता है व तना और पत्तियाँ हल्की हरी होती हैं। इसकी आरम्भिक शाखाएँ लम्बी होती हैं। यह किस्म बहुत ही जल्दी पक जाती है। यह उखेड़ा सहनशील है तथा इसमें फली छेदक का आक्रमण भी अपेक्षाकृत कम होता है। इसकी औसत पैदावार 8-10 क्विंटल/एकड़ है। इसके दाने आकर्षक व पीले रंग के होते हैं।

3. **हरियाणा चना नं. 3 (HC3)** : इस किस्म को केवल सिंचित क्षेत्रों में लगाया जा सकता है और इसकी बिजाई की सिफारिश नवम्बर के पहले सप्ताह में की गई है। इस किस्म के पौधों की खास बात ये है कि वे ऊँचे, मामूली फैलाव लिए हुए होते हैं तथा लगभग सीधे बढ़ने वाले होते हैं। इस किस्म की पत्तियाँ चौड़ी व गहरे हरे रंग की होती हैं। यह मुख्यतः उखेड़ा, जड़ गलन, अंगमारी व चने की अन्य प्रमुख बीमारियों के प्रति अवरोधी है। इसकी औसत पैदावार 8-10 क्विंटल/एकड़ है। इसके दाने भूरे पीले रंग के होते हैं तथा मोटे व आकर्षक होते हैं।

4. **हरियाणा चना नं. 5 (HC5)** : हरियाणा राज्य के बारानी क्षेत्रों में इसकी सिफारिश नहीं की गई है। अन्य क्षेत्रों के लिए यह किस्म उपयुक्त है। इस किस्म के पौधे कम फैलावदार तथा सीधे लम्बे होते हैं। इसकी पत्तियों का रंग गहरा हरा होता है तथा पत्तियाँ चौड़ी होती हैं। यह किस्म जड़ गलन तथा उखेड़ा के लिए रोगरोधी है। इसकी औसत पैदावार 8.5-10 क्विंटल/एकड़ है। इसका दाना भूरा पीला, आकर्षक तथा मध्यम मोटा होता है।

5. **हरियाणा काबली नं. 1 (HK1)**: इस किस्म को भी हरियाणा राज्य के बारानी क्षेत्रों में नहीं लगाया जा सकता। अन्य क्षेत्रों के लिए यह किस्म उपयुक्त है। इस किस्म के पौधों में शाखाएँ व फलियाँ ज्यादा होती हैं तथा इसका पौधा फैलावदार होता है। यह किस्म उखेड़ा रोग के प्रति अन्य

किस्मों से ज्यादा रोधी है। इसकी औसत पैदावार 8-10 क्विंटल/एकड़ है। इसका दाना पकने में अच्छा, गुलाबी सफेद रंग का तथा मध्यम आकार का होता है।

6. **हरियाणा काबली नं. 2 (HK2)** : इस किस्म को भी हरियाणा राज्य के बारानी क्षेत्रों को छोड़कर सभी क्षेत्रों में लगाया जा सकता है। इसके पौधे कम सीधे तथा पत्तों का रंग हल्का हरा होता है। यह किस्म चने की मुख्य बीमारियों के प्रति रोग रोधी है। इसकी औसत पैदावार 7-8 क्विंटल/एकड़ है। इस किस्म का दाना मोटे आकार का व सफेद होता है।



(पेज 2 का शेष)

**कटाई** : फसल की कटाई समय से करें अन्यथा दाने खेत में गिरने की सम्भावना बढ़ जायेगी।

**उपज** : जौ की औसत उपज 19-20 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

जौ की खेती का आर्थिक ब्योरा ( औसत प्रति एकड़ )

1. भूमि की तैयारी पर खर्च	: 2600.00
2. बीज, बीज उपचार एवं बिजाई पर खर्च	: 1380.00
3. खाद एवं उर्वरक पर खर्च	: 1425.00
4. खरपतवार के नियंत्रण पर खर्च	: 680.00
5. सिंचाई पर खर्च	: 1650.00
6. जौ की कटाई पर खर्च	: 2450.00
7. जौ की निकासी पर खर्च	: 1600.00
( भूमि की तैयारी से जौ की निकासी एवं मजदूर पर खर्च )	: 11785.00
8. खर्च किये गये धन पर ब्याज	: 530.00
कुल लागत ( अस्थिर लागत )	: 12315.00
कुल आय ( प्रति एकड़ )	: 32250.00
कुल व्यय ( प्रति एकड़ )	: 12315.00
अस्थिर लागत पर वास्तविक लाभ ( प्रति एकड़ )	: 19935.00

**कीट एवं रोग नियंत्रण :**

दीमक की रोकथाम के लिए प्रति किलो बीज को 6 मिली लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई. सी. से उपचारित करके बिजाई करें। जौ में लगने वाली बीमारियों जैसे पीला, काला भूरा रतुआ से बचने के लिए रोगरोधी किस्मों का प्रयोग करें।



एक कदम स्वच्छता की ओर

# सरसों में तना गलन रोग हेतु समेकित रोग प्रबंधन

नरेंद्र सिंह यादव, बलबीर सिंह<sup>1</sup> एवं मनोज कुमार

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सरसों भारत की रबी में बोई जाने वाली प्रमुख तिलहन फसल है जो मुख्य रूप से राजस्थान, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, मध्य प्रदेश एवं पंजाब राज्यों में बोई जाती है। लगातार 20-25 वर्षों से इस फसल को बोने के कारण इसकी प्रति एकड़ उत्पादकता में उत्तरोत्तर बढोत्तरी नहीं हो पा रही है जिसका एक मुख्य कारण इसमें लगने वाली बीमारियां हैं जिसके कारण फसल में बहुत ज्यादा नुकसान होता है। सरसों में लगने वाली बीमारियों में से तना गलन एक मुख्य बीमारी है, इसके प्रकोप से बचने एवं इससे होने वाली हानि को आर्थिक परिसीमा से नीचे रखने हेतु समेकित रोग प्रबंधन का उपयोग करें। इसके अन्तर्गत फसल की अवस्थानुसार निम्न उपाय करें।

**लक्षण :** सरसों के तनों पर लंबे व भूरे जलसिक्त धब्बे बनते हैं जिन पर बाद में सफेद फफूंद की तह बन जाती है। यह सफेद फफूंद पत्तियों, टहनियों तथा फलियों पर भी नज़र आ सकते हैं। ज्यादा प्रकोप यदि फूल निकलने या फलियां बनने के समय पर हो तो तने टूट जाते हैं और पौधे मुरझा कर सुख जाते हैं। रोगग्रस्त पौधों के तनों के ऊपर एवं भीतर तथा जड़ों पर काले रंग के पिंड (स्केलरोशिया) बनते हैं तथा फसल की कटाई के बाद में फफूंद के पिण्ड भूमि में गिर जाते हैं अथवा बचे हुए टूटों (अवशेषों) में पर्याप्त मात्रा में रहते हैं जो खेत की तैयारी के समय भूमि में मिल जाते हैं।

## बिजाई पूर्व प्रबंधन :

1. **ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई :** ग्रीष्मकालीन ऋतु में मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करें जिससे भूमि में उपस्थित रोग फैलाने वाले पिंड (स्केलरोशिया) धूप के कारण नष्ट हो जायें व नई फसल प्राथमिक संक्रमण से बच सके।
2. **पानी की निकासी :** बोये जाने वाले खेत को समतल कर पानी की निकासी का उचित प्रबंध करें।
3. **फसल अवशेषों को नष्ट करना :** पूर्व की फसल के अवशेषों एवं रोग ग्रस्त पौधों को एकत्र कर नष्ट कर दें एवं खेत को साफ सुथरा रखें।
4. **समुचित फसल चक्र :** रोग की निरंतरता को समाप्त करने हेतु 3-5 साल का फसल चक्र अपनाएं। इस हेतु उन फसलों की बुवाई करें जो रोगग्राही न हों जैसे गेहूँ, मक्का आदि।
5. **संतुलित उर्वरक :** संतुलित मात्रा में सिंफ़ारिश की गयी खादों की मात्रा का प्रयोग करें। अत्यधिक नत्रजन का उपयोग नहीं करें।

## बिजाई के समय प्रबंधन :

1. **उपयुक्त समय पर बिजाई :** सरसों की बिजाई अक्टूबर के अंतिम पखवाड़े में करें।

2. **स्वस्थ बीजों का प्रयोग :** बुवाई हेतु स्वस्थ, स्वच्छ, रोग रहित प्रमाणीकृत बीजों का प्रयोग करें।
3. **बीजोपचार :** बिजाई से पहले 2 ग्राम बाविस्टीन प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से उपचारित करें।
4. **कतार से कतार की कम दूरी से बचें :** बीज की अधिक मात्रा का प्रयोग न करें एवं कतार से कतार की उचित दूरी बनाए रखें।

## बीजांकुर एवं वानस्पतिक अवस्था पर प्रबंधन :

1. **विरलीकरण :** आवश्यकता से अधिक पौधों की छंटनी अवश्य करें। जिससे पौधे से पौधे की उचित दूरी बनी रहे एवं उनके मध्य वायु का संचार हो सके।
2. **सिंचाई प्रबंधन :** सामान्य अवस्था में दो से अधिक सिंचाई नहीं करें। फसल की अवस्था, मिट्टी का प्रकार एवं वर्षा की मात्रा को ध्यान में रखते हुए सिंचाई के पानी का प्रबंधन करें।

## फूल व फली बनने की अवस्था पर प्रबंधन :

1. **रोगग्रस्त पौधों को नष्ट करना :** खेत में रोग ग्रस्त पौधे जो सामान्य पौधों से पहले पक जाते हैं को स्कलरोशिया बनने से पूर्व ही जड़ सहित खींचकर बाहर निकाल दें एवं बाद में इन रोग ग्रस्त अवशेषों को नष्ट कर दें।
2. **छिड़काव कार्यक्रम :** जिन खेतों में सरसों लगातार बोई जाती है उन खेतों में तना गलन रोग का प्रकोप हर साल होता है। वहां बिजाई के 45-50 दिन तथा 65-70 दिन बाद बाविस्टीन का 0.1% की दर से दो छिड़काव करें।



## आवश्यक सूचना

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार स्थित किसान सेवा केन्द्र में किसानों हेतु सप्ताह में तीन दिन सोमवार, बुधवार एवं शुक्रवार को 10 से 12 बजे तक निःशुल्क फोन सुविधा (हैल्प लाइन) फोन नं. 1800-180-3001 पर उपलब्ध है जिसमें वैज्ञानिकों से कृषि-संबंधी परामर्श किया जा सकता है। यदि किसी जगह से यह फोन सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो किसान भाई 01662-232768 पर सशुल्क फोन करके उपर्युक्त दिनों में इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल में भी सोमवार, बुधवार, शुक्रवार 10 से 12 बजे तक फोन नं. 1800-180-4002 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, ऊचानी (करनाल) में भी मंगलवार व बृहस्पतिवार 10 से 11 बजे तक फोन नं. 1800-180-3111 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

<sup>1</sup>कृषि विज्ञान केंद्र, बावल।



# पॉलीहाऊस में सब्जियों की नर्सरी तैयार करना

राजेश कुमार, विकास कुमार शर्मा एवं अनिल कुमार गोदारा  
उद्यान विज्ञान विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सफल सब्जी उत्पादन के लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्य होता है अच्छी एवं स्वस्थ पौध तैयार करना। अगर प्रारंभिक अवस्था में पौध में रोग एवं कीटों का संक्रमण हो जाता है तो गुणवत्ता युक्त एवं अधिक उत्पादन सम्भव नहीं हो पाता है। प्रतिकूल वातावरण जैसे-वर्षा, तेज़ धूप, अधिक व कम तापमान, आर्द्रता इत्यादि से नर्सरी में पौध के उगने की क्रिया पर प्रभाव पड़ता है। अतः सब्जियों की पौध तैयार करते समय सावधानी बरतनी चाहिए तथा नर्सरी पॉलीहाऊस में तैयार की जानी चाहिए ताकि पौध को प्रतिकूल मौसम से बचाया जा सके।

**नर्सरी तैयार करने हेतु माध्यम :** क्यारियों में पौध तैयार करने से कवक जनित मृदोढ़ रोगों के फैलने का खतरा रहता है क्योंकि शुरूआती अवस्था में पौध इन रोग कारकों के प्रति अति संवेदनशील होती है। अतः जहां तक सम्भव हो पौध को कृत्रिम माध्यम में ही तैयार करना चाहिए। पॉलीहाऊस में पौध की जड़ों की अच्छी वृद्धि एवं विकास के लिए मृदा रहित मिश्रण प्रयोग किया जाता है जो कि कोकोपीट, परलाइट एवं वर्मीकुलाइट के 3×1×1 के अनुपात में अधिकांशतः प्रयोग किया जाता है किन्तु ध्यान रहे कि यह अनुपात आयतन आधारित हो न कि भार आधारित।

**नर्सरी में प्रयुक्त की जाने वाली ट्रे :** संरक्षित वातावरण में आधुनिक तरीके से रोगरहित व उच्च गुणवत्ता वाली नर्सरी तैयार की जा सकती है। ट्रे नर्सरी में तैयार किये गये पौधे ज़मीन में तैयार की गई नर्सरी के पौधों के मुकाबले फसलों के उत्पादन एवं उनकी गुणवत्ता में बेहतर होते हैं। इसके साथ ही इन पौधों के उपयोग से तैयार होने वाली सब्जियों की फसल में रोग व कीटों का प्रकोप कम हो जाता है।

इस तकनीक द्वारा सब्जियों की पौध तैयार करने के लिए पोली-प्रोपेलीन से बनी हुई खानेदार ट्रे का प्रयोग करते हैं। सब्जियों की नर्सरी उगाने के लिए अधिकतर 98 केविटी युक्त ट्रे उपयोग में लाई जाती है। टमाटर, बैंगन व समस्त बेल वाली सब्जियों के लिए 18 से 20 घन सें.मी. आकार के खानों वाली ट्रे का प्रयोग होता है। जबकि शिमला मिर्च, मिर्च, गोभी वर्ग की फसलों, सलाद, सेलेरी, पारसले आदि सब्जियों के लिए 8 से 10 घन सें.मी. आकार के खानों वाली ट्रे उपयुक्त रहती है। क्योंकि ऐसे खानों में पौधे की जड़ों का समुचित विकास होता है।

**बीज की बुवाई :** सर्वप्रथम मीडिया अथवा मिश्रण को ट्रे की केवटियों में भरा जाता है। ध्यान रहे कि मिश्रण में पर्याप्त मात्रा में नमी होनी चाहिए। इस मिश्रण में इतना पानी मिलाना चाहिए जिससे यह मिश्रण हाथ में लेकर बांधा जा सके। मिश्रण से भरी ट्रे में पेन्सिल जितनी मोटी लकड़ी या अंगुली की मदद से 1.5 सें.मी. गहरा गड्ढा कर प्रति सैल/केविटी में एक बीज बोना चाहिए। बीज केविटी के बीचों बीच डालकर बीज को मिश्रण की मोटी परत से ढक दें। बिजाई के तुरन्त पश्चात् हजारों अथवा छोटे स्प्रिंकलरों की सहायता से समान मात्रा में पानी देना चाहिए। अंकुरण के

लिए तापमान व नमी का पर्याप्त बना रहना आवश्यक होता है। पॉलीहाऊस में नर्सरी तैयार करने के लिए उपयुक्त तापमान, सर्दियों में 20 डिग्री से 30 डिग्री से 30 डिग्री से ज़्यादा नहीं होना चाहिए। इसलिए बिजाई के बाद प्रो-ट्रे के ऊपर थर्मोकोल या पॉलीथीन ढकी जाती है। मौसम के अनुसार 2 या 3 दिन बाद ढकी हुई परत को हटा लेते हैं।

ट्रे में पौधशाला लगाने से पहले सिंचाई जल की गुणवत्ता जांच लें। जल का पी.एच. मान 6.5-7.0 के बीच हो और बाईकार्बोनेट्स का स्तर 60-100 पी.पी.एम. के बीच हो। बीज के अंकुरण के पश्चात् फर्टिगेशन प्रारम्भ कर देना चाहिए। प्रो ट्रे को ज़मीन के ऊपर नहीं रखना चाहिए अन्यथा पौधे की जड़ें मृदा के अन्दर चली जाती हैं एवं पौधे निकालते हुए जड़ें टूटने का खतरा रहता है। अतः प्रो ट्रे को लकड़ी अथवा लोहे का स्टैंड बनाकर रखा जाता है।

**पोषक तत्व :** पॉली हाऊस नर्सरी तैयार करते समय पोषक तत्व देना बहुत ही आवश्यक है। सर्दियों में एन.पी.के. को 1×1×1 के अनुपात में मिलाकर 140 पी.पी.एम. की दर से तथा गर्मियों में 70 पी.पी.एम. की दर से देना चाहिए। इस प्रकार बने घोल का छिड़काव प्रत्येक सप्ताह या दस दिन के अंतराल पर किया जाना चाहिए। ऐसा करने से पौधों में पोषक तत्व की मात्रा की पूर्ति होती रहती है तथा नर्सरी में पौधे स्वस्थ रहते हैं।

**प्लास्टिक ट्रे से पौधे निकालने का ढंग :** सब्जियों की पौध 27-32 दिन में मुख्य खेत में स्थानांतरण योग्य हो जाती है। स्थानांतरण से 2-3 दिन पहले सिंचाई करना बंद कर दें ताकि पौधों में कठोरता आ जाये। पौधे को प्लास्टिक ट्रे से बाहर निकालते समय नमी का होना बहुत आवश्यक है क्योंकि सूखी अवस्था में पौध को ट्रे से निकालने में असुविधा होती है। अतः पौध निकालने से लगभग 5-6 घंटे पहले प्रो ट्रे में सिंचाई देनी चाहिए। पौधों को सावधानी से प्लग के बाहर इस तरह निकालें कि हाथ के अंगूठे व अंगुली के हल्के दबाव से खींचते हुए मृदा रहित मिश्रण का ढेला जड़ सहित बाहर आ जाये। पौध को ट्रे से सावधानी पूर्वक निकालने के पश्चात् शाम के समय खेत में लगा देनी चाहिए।

**बिजाई की समय सारणी :**

फसल का नाम	बिजाई का समय	रोपाई का समय
टमाटर व शिमला मिर्च	सितम्बर-अक्टूबर	सितम्बर के आखिरी सप्ताह से नवम्बर तक
चप्पन कदू व खीरा	अक्टूबर-नवम्बर	नवम्बर-दिसम्बर
खरबूजा, तरबूज, करेला व अन्य बेल वाली सब्जियां	दिसम्बर-जनवरी	जनवरी-फरवरी

**पौधों की देखभाल :** पौध रोपाई के पश्चात् टपका सिंचाई डिपर की सहायता से बूंद-बूंद पानी का प्रबन्ध करना आवश्यक है। जिन स्थानों पर पौधों की कमी हो या पौध न लग पायी हो, नयी पौध की रोपाई उस खाली स्थान पर अवश्य करें। पौध रोपाई के पश्चात् प्रतिदिन फसल को संभालना अति आवश्यक है।



# गाजर की जड़ों व बीजोत्पादन से दोहरा लाभ कमाएं

✍ तन्वी मेहता एवं डी. एस. दुहन

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सब्जियां हमारे भोजन का एक अभिन्न अंग हैं इनसे हमें भिन्न-भिन्न प्रकार के पोषक तत्व जैसे कि कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन, खनिज, लवण व विटामिन की पर्याप्त मात्रा में प्राप्ति होती है। सब्जियों से हमारा भोजन स्वादिष्ट, पौष्टिक एवं संतुलित बनता है। इन्हीं सब्जी फसलों में से गाजर एक प्रमुख सब्जी फसल है। जो कि बहुत ही औषधीय गुणों का भंडार है। इसमें कैल्शियम व विटामिन प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इसको कच्चा सलाद के रूप में या पकाकर (गाजर का हलवा व गजरेला इत्यादि), अकेला व दूसरी सब्जियों के साथ जैसे कि आलू व मटर आदि के साथ मिलाकर सब्जी के रूप में भी खाया जाता है। आगे चलकर हम गाजर की खेती से जड़ों व बीजोत्पादन की सफल पैदावार लेने के लिए कुछ मुख्य कृषि क्रियाओं का वर्णन करेंगे। जिसको अपनाकर किसान इस सब्जी फसल से अधिक पैदावार लेकर ज्यादा मुनाफा कमा सकते हैं।

**जलवायु :** गाजर सामान्त्याः ठण्डे मौसम की फसल है। गाजर की जड़ों के रंग तथा आकार पर तापमान का बहुत असर पड़ता है। इसकी जड़ों की अच्छी बढ़वार के लिए 17-25 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान उपयुक्त रहता है।

**भूमि का चुनाव एवं तैयारी :** गाजर की अच्छी पैदावार लेने के लिए गहरी, भुरभरी व हल्की दोमट भूमि उचित रहती है। मिट्टी का पी. एच. 6.5 के आसपास होना चाहिए। इसके लिए ज़मीन समतल होनी चाहिए जिस पर पानी की निकासी ठीक से हो। गाजर की अच्छी फसल लेने के लिए ज़मीन को इस तरह से तैयार करें कि मिट्टी मुलायम हो और इसमें कोई भी कंकड़, पत्थर व सख्त मिट्टी का ढेला न हो। खेत की तैयारी के लिए 2-3 गहरी जुताई करें तथा प्रत्येक जुताई के बाद पाटा (सुहागा) लगाएं। ताकि खेत में उचित नमी बनी रहे व गोबर की खाद भी 20 टन प्रति एकड़ के हिसाब से खेत में भली प्रकार मिला दें।

**किस्मों का चुनाव:**

**क) देसी किस्में:**

**पूसा केसर :** यह एक अगेती व देसी किस्म है। इस किस्म के पत्तों का समूह छोटा होता है। केसरिया रंग की जड़ों के बीच का भाग भी काफी लाली वाला होता है। इसकी औसत पैदावार 100 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**पूसा मेघाली :** इस किस्म की कोर व ऊपर की सतह दोनों तरफ से नारंगी रंग की मूसली, लघु शीर्ष उत्तम आकृति में पायी जाती है इसकी औसत पैदावार 100 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**पूसा रुधिरा :** इस किस्म की जड़ों का आकार लम्बा व स्वरंगी कोर सहित

लाल मूसली होती है यह मध्य सितम्बर से मध्य अक्तूबर तक बुवाई योग्य किस्म है। जिसकी मूसली मध्य दिसम्बर में तैयार हो जाती है। इसकी औसत पैदावार 120 क्विंटल है।

**हिसार गैरिक :** यह एक देसी किस्म है, इसकी जड़ें आकार में लम्बी स्वरंगी कोर सहित संतरी रंग की हैं। इसकी औसत पैदावार 100 क्विंटल प्रति एकड़ है।

**यूरोपियन किस्में :**

**नैटिस :** इसकी जड़ें बेलनाकार, मध्यम लम्बी, पूंछनुमा सिरे वाली तथा गहरे संतरी रंग की होती हैं।

**पूसा यमदागिनी :** यह एक यूरोपियन किस्म है। इसकी जड़ें 15-16 सेंटीमीटर लम्बी होती हैं। जिनका रंग केसरिया व कोर भी स्वरंगी ही होती है। इस किस्म में कैरोटीन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है।

**बीज की मात्रा :** एक एकड़ के लिए 4-5 किलोग्राम बीज पर्याप्त होता है।

**बिजाई की विधि :** अच्छी पैदावार व जड़ों की गुणवत्ता के लिए गाजर की बिजाई हल्की डोलियों (मेढ़ों) पर करनी चाहिए। डोलियां सीधी व एक जैसी ऊँची हों। तथा उनकी दोनों तरफ से थपाई भी कर देनी चाहिए। डोलियों के बीच का फासला 30-45 सेंटीमीटर और पौधों का परस्पर फासला करीब 6-8 सेंटीमीटर होना चाहिए। डोलियां की छोटी पर 2-3 सेंटीमीटर गहरी नाली बनाकर बीज बोना चाहिए।

**खाद एवं उर्वरक :** औसत दर्जे की जमीन के लिए लगभग 20 टन गोबर की खाद प्रति एकड़ जुताई करते समय डालें। इसके अलावा 12 किलोग्राम शुद्ध नाइट्रोजन, 12 किलोग्राम फास्फोरस व 12 किलोग्राम पोटाश की मात्रा बिजाई के समय प्रति एकड़ खेत में अति आवश्यक है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा 12 किलोग्राम लगभग 3-4 सप्ताह बाद खड़ी फसल में लगाकर मिट्टी चढ़ा दें।

**बिजाई :** गाजर में 5-6 बार सिंचाई करने की आवश्यकता होती है। यदि खेत में नमी की मात्रा बिजाई करते समय कम हो तो पहली सिंचाई बिजाई के तुरंत बाद करनी चाहिए। सिंचाई करते समय इस बात का ध्यान रहे कि पानी डोलियों के 3/4 भाग से ऊपर नहीं जाना चाहिए। बाद की सिंचाइयां मौसम और भूमि की नमी के अनुसार 15-20 दिन के अंतर पर करनी चाहिए।

**अंतः कृषि क्रियाएं व खरपतवार नियंत्रण :** खरपतवार नियंत्रण के लिए निराई-गुड़ाई 2 या 3 बार करें। बिजाई के लगभग 4 सप्ताह बाद गुड़ाई करके मिट्टी चढ़ा दें। फसल की खुदाई जड़ों की खुदाई करने की अवस्था, फसल व किस्म पर निर्भर करती है। साधारणतया देसी किस्में देर से तैयार होती हैं तथा यूरोपियन किस्में जल्दी तैयार हो जाती हैं। जड़ों की खुदाई मुलायम अवस्था में करनी चाहिए। प्रायः देसी किस्मों की खुदाई 100-130 दिनों में तथा यूरोपियन किस्मों की खुदाई 60-70 दिनों में करनी चाहिए। खुदाई के समय मिट्टी ज्यादा सख्त न हो नहीं तो इससे जड़ों के कटने की संभावना ज्यादा रहती है।

**बीजोत्पादन :** चयनित जड़ों को रोपाई के लिए तैयार करते समय एक तिहाई जड़ के साथ 4-5 सेंटीमीटर पत्तों को भी साथ रखें। खेत को तैयार करते समय उसमें 15-20 टन गोबर की खाद, 40 किलोग्राम नाइट्रोजन, 50 किलोग्राम फास्फोरस व 60 किलोग्राम पोटाश मिलाएं। जड़ों की रोपाई 60 व 70 सेंटीमीटर गहराई पर करें और उसके बाद एक हल्की सिंचाई करें। यह सुनिश्चित करें कि आधार बीज के लिए पृथक्करण की दूरी 100 मीटर तथा प्रमाणित बीज के लिए 800 मीटर कम से कम हो।

**गाजर बीज फसल की कटाई, गहाई व कढ़ाई :** गाजर की फसल में बीजों का पकाव सामान्यतया एक साथ नहीं होता है। इस फसल में शुरू में मुख्य शीर्ष पुष्पछत्र पकते हैं और उसके बाद में दूसरे व तीसरे दर्जे के पुष्पछत्रों का पकाव होता है। फसल की कटाई तब शुरू कर देनी चाहिए। जब मुख्य पुष्पछत्र पक जाएं और बाद वाले पुष्पछत्र सुनहरे रंग के हो जाएं। ऐसी अवस्था में फसल की कटाई शुरू कर देनी चाहिए। इस फसल में तीन से चार बार अलग-अलग से पुष्पछत्रों की कटाई करनी पड़ती है। जो भी पुष्पछत्र पक जाएं तब उनको दराती से काटकर पक्के फर्श पर तिरपाल पर सुखाना चाहिए और जब बीज पूर्णतया सूख जाएं तब उसके छत्रों को अलग-अलग करना चाहिए। बाद में हल्के बीजों को इसमें से निकाल दिया जाता है और अच्छे व बढ़िया बीजों को किसी ड्रम में भरकर इसका भण्डारण करना चाहिए।

**बीज उपज :** औसतन 400-500 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बीज उपज हो जाती है।

**पौध संरक्षण :** गाजर की फसल में मुख्य रूप से आल्टरनेरिया ब्लाइट नामक बीमारी आती है जिसमें पत्तियों पर अनेक पीले-भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। इन धब्बों में कभी-कभी धारियाँ भी साफ दिखाई देती हैं। इस बीमारी की रोकथाम हेतु खेत में सफाई रखें व हिरनखुरी व सांठी नामक खरपतवारों को खेत में न रहने दें। फसल पर 10-12 दिन के अंतराल पर 400 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड या इंडोफिल एम-45 दवा को 200 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें। इस फसल पर कीड़ों का प्रभाव बहुत कम होता है।



## लेखकों के अनुरोध

हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। कृपया अपने विभाग का नाम अवश्य लिखें। टाईपिंग के लिए कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं :

**haryanakhethau@gmail.com**

## आलू की खेती में ध्यान रखने योग्य बातें

रेनू यादव, वी.पी.एस. पंधाल एवं हंसराज

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आलू को सब्जियों का राजा कहा जाता है। भारत में शायद ही कोई ऐसा रसोई घर होगा जहाँ पर आलू न दिखे। इसकी मसालेदार तरकारी, पकौड़ी, चाट, पापड, चिप्स जैसे स्वादिष्ट पकवान बनते हैं। प्रोटीन, स्टार्च, विटामिन सी आदि के अलावा आलू में अमीनो अम्ल जैसे ट्रिप्टोफेन, ल्यूसीन, आइसोल्यूसीन आदि काफी मात्रा में पाये जाते हैं जो शरीर के विकास के लिए आवश्यक हैं। आलू भारत की सबसे महत्वपूर्ण फसल है।

**मौसम :** आलू एक शरदकालीन फसल है इसलिए इसकी खेती सर्दी के मौसम में ही करनी चाहिए। मौसम के साथ उचित तापमान भी फसल की बढ़त व पैदावार के लिए, बहुत आवश्यक है। आलू की वृद्धि एवं विकास के लिए इष्टतम तापक्रम 15-25 डिग्री सेल्सियस के मध्य होना चाहिए। इसके अंकुरण के लिए लगभग 25 डिग्री सेल्सियस, संवर्धन के लिए 20 डिग्री सेल्सियस और कन्द विकास के लिए 17 से 19 डिग्री सेल्सियस तापक्रम की आवश्यकता होती है। उच्चतर तापक्रम (30 डिग्री सेल्सियस) होने पर आलू विकास की प्रक्रिया प्रभावित होती है। अक्टूबर से मार्च तक लम्बी रात्रि तथा चमकीले छोटे दिन आलू बनने और बढ़ने के लिए अच्छे होते हैं। बदली भरे दिन, वर्षा तथा उच्च आर्द्रता का मौसम आलू की फसल में फफूँद व बैक्टीरिया जनित रोगों को फैलाने के लिए अनुकूल दशाएँ हैं।

**मिट्टी व खेत तैयार :** आलू की खेती के लिए हल्की दोमट से भारी दोमट मिट्टी सबसे बेहतर होती है। मिट्टी में पानी का निकास अच्छा होना आवश्यक है। लवणीय व क्षारीय मिट्टी आलू की फसल के लिए उचित नहीं है। जिस मिट्टी में पानी का निकास अच्छा न हो, उस मिट्टी में आलू की फसल नहीं लेनी चाहिए क्योंकि इससे आलू खराब या गलने की संभावना बढ़ जाती है तथा अच्छी पैदावार नहीं मिलती। आलू की बिजाई से पहले खेत को अच्छी तरह से तैयार करें। 4 से 5 जुताई द्वारा खेत अच्छे से तैयार हो जाता है। जुताई करने के बाद सुहागा जरूर लगाएं। अगर खेत में ढ़ेले बन जाएं तो उनको रोटवेटर चलाकर बिजाई से पहले तोड़ देना चाहिए।

**मुख्य किस्में :** आलू की अच्छी पैदावार लेने के लिए निम्नलिखित किस्मों का उपयोग करें जैसे - कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी जवाहर, कुफरी सिन्दूरी, कुफरी बादशाह, कुफरी सतलुज, कुफरी पुष्कर, कुफरी पुखराज, कुफरी गौरव।

**बीज स्रोत :** जिन कन्दों को बिजाई के लिए उपयोग करना है वो स्वस्थ, विशेषकर विषाणु रोगों से मुक्त तथा शुद्ध होने चाहिए। आलू का स्वस्थ बीज राष्ट्रीय बीज निगम, हरियाणा बीज विकास निगम, कृषि विश्वविद्यालय, आदि से ही खरीदें। आलू की अच्छी फसल के लिए बीज



को 3-4 साल बाद बदलें क्योंकि लगातार उसी बीज का प्रयोग करने से विषाणु रोग बढ़ जाते हैं तथा उपज कम होती है।

**आलू के बीज की मात्रा व बिजाई:** आलू के बीज की मात्रा कन्दों के आकार पर निर्भर करती है। 30-70 ग्राम के कन्दों को 55-60 सें.मी. दूरी पर कतारों में तथा कंद से कंद 20 सें.मी. की दूरी पर बिजाई करें तथा 20-25 सें.मी. मोटी डोलियां बनाएं। इस प्रकार 12 क्विंटल प्रति एकड़ के हिसाब से कन्दों की आवश्यकता पड़ेगी। अगर कन्द 100 ग्राम के हों तो उनको 35-40 सें.मी. की दूरी पर लगाएं। ऐसा करने से बीज की मात्रा भी नहीं बढ़ती तथा उपज में भी कमी नहीं आती। बड़े कन्दों को काटकर भी लगाया जा सकता है लेकिन कटे कन्दों में 2-3 आंखें अवश्य होनी चाहिए तथा कटे कन्द का वज़न 25 ग्राम से कम न हो। कटे कन्दों की बिजाई 25 अक्टूबर के बाद ही करें। कटे कन्दों को किसी छायादार स्थान पर 14-16 घण्टों तक सुखाएं व इसके बाद बिजाई में प्रयोग करें। यदि काटते समय रोगग्रस्त आलू आये तो उसे तुरन्त फेंक दें। चाकू को अल्कोहल या स्पिरिट में डुबोकर काम में लें।

**बीज अंकुरण :** बीज को बिजाई से 8-10 दिन पहले शीत भण्डार से बाहर निकालें तथा टोकरियों या ट्रे में डालकर किसी ठंडे, हवादार व खुले स्थान पर अंकुरित होने के लिए रखें। उस स्थान पर प्रकाश होना बहुत ज़रूरी है पर वहां धूप नहीं आनी चाहिए। अगर टोकरियाँ या ट्रे उपलब्ध न हों तो आलुओं को फर्श पर बिछा दें परंतु उनकी सतह 10 सें.मी. से अधिक नहीं होनी चाहिए। जिन कन्दों के अंकुरण कमजोर हों या उन पर बाल हों, उन्हें बिजाई के लिए उपयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि वे विषाणु रोग से ग्रसित होते हैं।

**बिजाई का समय :** अलग-2 किस्मों की बिजाई का उचित समय अलग होता है। कुफरी जवाहर व कुफरी चन्द्रमुखी का उचित समय अक्टूबर का पहला सप्ताह है तथा कुफरी बादशाह व कुफरी सतलुज की बिजाई 10 से 20 अक्टूबर के बीच करनी चाहिए। अक्टूबर के पहले सप्ताह में कन्दों के गलने की संभावना बढ़ जाती है क्योंकि इस समय मिट्टी का तापमान अधिक होता है। कन्दों को गलने से बचाने के लिए मलच (डोलियों को धान के छिलके या मक्की अथवा बाजरे की कड़वी से ढकना) का प्रयोग लाभदायक होता है। मलच ज़मीन में तापमान कम करने के साथ-2 नमी को भी बनाए रखता है। डोलियों को बाजरा या मक्की की कड़वी से ढका गया हो तो 50 प्रतिशत कन्दों के उगने के बाद इस कड़वी को हटा देना चाहिए। अगेती आलू की फसल के लिए बिजाई पलेवा करने के बाद ही करें।

**खाद व उर्वरक :** आलू की फसल के लिए 20 टन गली-सड़ी गोबर की खाद प्रति एकड़ की दर से बिजाई से 2-3 सप्ताह पहले खेत तैयार करते समय डालें। आम खेत के लिए 50-60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 20 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति एकड़ की दर से डालें। अगर मिट्टी चिकनी, दोमट या रेतीली-दोमट है तो नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश तीनों की पूरी मात्रा बिजाई करते समय ही डालें। लेकिन अगर

मिट्टी हल्की रेतीली हो तो नाइट्रोजन का 3/4 भाग तथा फास्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा बिजाई के समय डालें तथा नाइट्रोजन की शेष मात्रा बिजाई से 25-30 दिन बाद मिट्टी चढ़ाते समय डालें।

अगर आलू कस्सी से लगाने हों तो कतार के दोनों ओर 4-5 सें.मी. दूरी पर खाद डालें तथा फिर इन कतारों पर आलू रखकर मिट्टी चढ़ाएं। कभी भी आलू को खाद के सीधे सम्पर्क में न लायें।

**सिंचाई :** खेत में पलेवा करने के बाद बिजाई करना सबसे उचित होता है। अगर पलेवा नहीं किया हो तो पहला पानी बिजाई के तुरंत बाद लगायें। अक्टूबर व नवंबर के महीने में सिंचाई 5-7 दिन के अंतराल पर तथा दिसंबर व जनवरी में 10-15 दिन के अंतराल पर दें। बिजाई से 20-40 दिन तक खेत में उचित नमी रहना सर्वाधिक आवश्यक होता है। ध्यान रहे कि पहले दो पानी नालियों में डौल की आधी ऊँचाई तक ही लगाएं तथा डौल के 3/4 भाग से ऊपर पानी कभी भी न लगाएं।

सूक्ष्म स्पिंकलर (छिड़काव) पद्धति से आलू में सिंचाई करने से पैदावार व गुणवत्ता को बढ़ाया जा सकता है। इस विधि द्वारा सूक्ष्म स्पिंकलर को 2 घंटे प्रतिदिन अक्टूबर से नवम्बर में 3 दिन के अंतराल पर दिसम्बर से जनवरी में 4 दिन के अंतराल पर, फरवरी से खुदाई तक 5 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। आलू के खेत में एक सूक्ष्म स्पिंकलर प्रति 6.48 वर्ग मीटर क्षेत्र में स्थापित करें जो 70 लीटर पानी प्रति घंटे के हिसाब से छिड़काव करे। फव्वारा पौधों की ऊँचाई से ऊपर स्थापित किया जाना चाहिए। सिंचाई खुदाई से 15 दिन पहले बंद कर देनी चाहिए।

**खरपतवार नियंत्रण व मिट्टी लगाना :** अगर बिजाई के समय हल्की मिट्टी लगी हो तो बिजाई के 25-30 दिन बाद मिट्टी चढ़ाएँ। ऐसा करने से हरे आलुओं की संख्या कम हो जाती है। लेकिन अगर खेत में खरपतवार हों तो बिजाई के 25-30 दिन बाद पहली निराई करें तथा बाद में मिट्टी चढ़ाएं।

खरपतवारों के नियंत्रण के लिए ऐलाक्लोर 1-12 कि.ग्रा. (लासो 50 प्रतिशत 20-40 लीटर), पैण्डीमेथालिन 0.48-0.60 कि.ग्रा. (स्टोम्प 30 प्रतिशत, 1.6-2.0 लीटर) आदि को 250 लीटर पानी में मिलाकर बिजाई के 10 दिन के अन्दर प्रति एकड़ छिड़कें। खरपतवार दवा प्रयोग करते समय भूमि में पर्याप्त नमी का होना आवश्यक है।

**खुदाई :** यदि आलू की अगेती फसल के लिए बिजाई की गई है तो आलू खुदाई करते समय कच्चे होते हैं तथा उनके डंठल भी हरे होते हैं, इसलिए इनकी खुदाई करते समय विशेष ध्यान रखें। खुदाई के समय खेत में अधिक नमी नहीं होनी चाहिए। इन आलुओं का भण्डारण नहीं किया जा सकता इसलिए अच्छे आलुओं को तुरंत बाज़ार में बेचना चाहिए। अगर खुदाई आलू के पूरे पकने के बाद करनी हो तो खेत में खुदाई से 20 दिन पहले सिंचाई बन्द कर दें। आलू की खुदाई ट्रैक्टर या बैलों से चलने वाले डिगर से भी कर सकते हैं। इसके प्रयोग करने से समय कम लगता है और आलू भी कम कटते हैं।

(शेष पृष्ठ 10 पर)

# सब्जी उत्पादन में वृद्धि नियामकों की भूमिका

तन्वी मेहता एवं डी. एस. दुहन

सब्जी विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सब्जियों की पैदावार बढ़ाने के लिए अच्छा बीज, संतुलित खाद तथा उचित समय पर कीड़े व बीमारियों की रोकथाम इत्यादि के अतिरिक्त अगर वृद्धि नियामकों का भी प्रयोग किया जाए तो और भी अच्छी पैदावार प्राप्त

हो सकती है। सब्जियों की फसलों में वृद्धि नियामकों का प्रयोग करने से अधिक बीज अंकुरण, पौधों की बढ़वार, फूल व फल उत्पादन में वृद्धि आदि परिवर्तन देखे गए हैं। इनके प्रयोग से फसल का पकाव जल्दी होता है व वातावरण के विपरीत प्रभाव से भी इन फसलों का बचाव होता है। वृद्धि नियामकों को उचित समय पर इस्तेमाल करने से कुछ सब्जियों (जैसे कि खीरा, तरबूज आदि) में बीजरहित फल भी पाए जा सकते हैं तथा फल को अधिक से अधिक समय तक प्रयोग करने योग्य अवस्था में रख सकते हैं।

**विभिन्न वृद्धि नियामकों का सब्जियों के उत्पादन में उपयोग:**

फसल	वृद्धि नियामकों का प्रयोग	मात्रा प्रति एकड़
चप्पन कद्दू, तर ककड़ी	इथ्रेल (250 पी. पी.एम.)	10 मि. ली. इथ्रेल 50% को 20 लीटर पानी में
घीया, तोरी व टिंडा	इथ्रेल (250 पी. पी.एम.)	4 मि.ली इथ्रेल 50% को 20 लीटर पानी में
टमाटर	पैराक्लोरोफेनोक्सी एसिटिक एसिड (पी.सी. पी.ए.) 50 (पी.पी.एम.)	10 ग्राम (पी.सी. पी.ए.) को 200 लीटर पानी में
मिर्च	प्लानोफिक्स (10 पी.पी.एम.)	4.5 मि.ली. प्लानोफिक्स को 200 लीटर पानी में
करेला	साइकोसिल (250 पी.पी.एम.)	10 मि.ली साइकोसिल 50% को 20 लीटर पानी में
तरबूज	जिब्रेलिक एसिड (25 पी.पी.एम.)	0.5 ग्राम जिब्रेलिक एसिड को 20 लीटर पानी में

## वृद्धि नियामकों के प्रयोग की विधि :

**टमाटर:** टमाटर की फसल में कम व अधिक तापमान पर पौधों में फूल गिरने व फल लगने तथा पकने में समस्या होती है। इसलिए टमाटर के फलों को कम व अधिक तापमान पर सुचारू रूप से लगने व पकाने के लिए पैराक्लोरोफेनोक्सी एसिटिक एसिड नामक रसायन के 50 पी.पी.एम. (10 ग्राम पी.सी.पी.ए.) को थोड़े से अल्कोहल में घोलें फिर 200 लीटर पानी में मिलाएं। अब इस घोल को टमाटर की फसल में प्रति एकड़ फूल आने की अवस्था में छिड़काव करें। ऐसा भी पाया गया है कि साइकोसिल नामक रसायन के 500 पी.पी.एम. घोल का टमाटर की पौध रोपाई से पहले एक छिड़काव करने से पौधों में ठण्ड सहन करने की क्षमता आ जाती है।

**मिर्च:** मिर्च में प्रायः फूल गिरने की समस्या पाई जाती है। पौधों की प्रारम्भिक अवस्था में ही फूल व फल गिरने लगते हैं। फूलों को गिरने से बचाने के लिए प्लानोफिक्स नामक दवा का 1 मि.ली. 4.5 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। इसका पहला छिड़काव फूल आने पर करें व दूसरा छिड़काव इसके तीन सप्ताह बाद करें। किसान भाई फसल में पानी लगाते समय अवश्य ध्यान रखें कि कम व अधिक पानी लगाने से फल व फूल का गिरना बढ़ सकता है। इसलिए पानी का नियंत्रित रूप से प्रयोग करें।

**तरबूज व करेला :** तरबूज की फसल के लिए जिब्रेलिक एसिड नामक रसायन के 25 पी.पी.एम. (आधा ग्राम जिब्रेलिक एसिड) का थोड़े से अल्कोहल में घोल बनाएं फिर 20 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। घोल का तरबूज की 2 व 4 सप्ती पत्तियों की अवस्था में छिड़काव करने से अधिक फल लगते हैं तथा फल की मिठास में भी बढ़ोत्तरी होती है। करेला की पूसा-दो-मौसमी किस्म में साइकोसिल नामक रसायन के 250 पी.पी.एम. (10 मि.ली. साइकोसिल 50% को 20 लीटर पानी में घोलकर) को 2 व 4

सप्ती पत्तियों की अवस्था में प्रति एकड़ छिड़काव करने से पैदावार बढ़ती है।

**घीया, तोरी व टिंडा :** घीया, तोरी व टिंडा में इथ्रेल नामक रसायन के 100 पी. पी.एम. (4 मि.ली इथ्रेल 50%, 20 लीटर पानी) का घोल बनाकर प्रति एकड़ फसल में छिड़काव करें। यह छिड़काव 2 व 4 सप्ती पत्तियां आने पर करें। इससे फलों की संख्या बढ़ती है व उत्पादन में भी काफी सहायता मिलती है।

## वृद्धि नियामकों का फसल पर प्रभाव :

**वृद्धि नियामकों का अंकुरण पर प्रभाव :** खरीफ मौसम में कद्दूवर्गीय सब्जियों (जैसे करेला, खीरा आदि) के बीज अंकुरण में काफी समस्या होती है। जिससे किसानों को बहुत अधिक नुकसान का सामना करना पड़ता है। खीरा, ककड़ी व फूट (देसी ककड़ी) इत्यादि के बीजों को जिब्रेलिक एसिड नामक रसायन के 5 पी.पी.एम. घोल में 8 घंटे तक भिगोकर रखें। इसके बाद बुवाई करें जिससे ये बीज 4-5 दिन पहले अंकुरित हो जाते हैं। ऐसे पौधों की लताओं में भी बहुत अधिक वृद्धि होती है।

**वृद्धि नियामकों का मादा फूलों की संख्या पर प्रभाव :** कद्दूवर्गीय सब्जियों में नर व मादा फूल एक ही लता पर अथवा विभिन्न लताओं पर अलग-अलग स्थानों पर लगते हैं। यदि नर फूलों की संख्या ज़्यादा होती है तो फलों की संख्या में कमी हो जाती है और पैदावार में भी कमी हो जाती है। अतः वैज्ञानिक शोधों द्वारा समय-समय पर वृद्धि नियामक का प्रयोग मादा फूलों की संख्या बढ़ाने के लिए किया जाता है। जिससे कि फलों की संख्या में वृद्धि एवं उत्पादन में बढ़ोत्तरी संभव हो सके। खीरा में मैलिक हाइड्रोजन (एम.एच.) (200 पी.पी.एम.) एवं एन.ए.ए. (100 पी.पी.एम.) सांद्रता के घोल से छिड़काव करने से मादा फूलों की संख्या में 20-25% तक वृद्धि पाई गई है।

(शेष पृष्ठ 12 पर)

# फल एवं सब्जी छंटाई (ग्रेडिंग) संयंत्र

रबीना कारगवाल, एम. के. गर्ग एवं यादविका  
प्रसंस्करण एवं खाद्य अभियांत्रिकी विभाग  
कृषि अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आर्थिक सर्वेक्षण के आधार पर देखा जाये तो भारत में बागवानी फसलों का परिदृश्य बहुत उत्साहजनक हो गया है। कृषि में बागवानी उत्पादन का प्रतिशत हिस्सा 33 प्रतिशत से अधिक है। कृषि और संबद्ध गतिविधियों के दायरे में, बागवानी के लिए योजना परिव्यय का हिस्सा, जो नौवीं योजना के दौरान 3.9 प्रतिशत था, बारहवीं योजना के दौरान 4.6 प्रतिशत हो गया है।

खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों में ग्रेडिंग एक प्रमुख भूमिका निभाता है। फल और सब्जियों की ग्रेडिंग सबसे महत्वपूर्ण संचालनों में से एक है क्योंकि यह उत्पाद के मूल्य को बढ़ाता है और निर्माता को बेहतर आर्थिक रिटर्न देता है। ग्रेडिंग खरीद और बिक्री लेनदेन में संबंधित सभी पार्टियों को प्रत्यक्ष लाभ देता है।

आमतौर पर फल भारत में मैनुअल रूप से वर्गीकृत होते हैं। फल और सब्जियों का मैनुअल वर्गीकरण (ग्रेडिंग) काफी कठिन प्रक्रिया है। मैनुअल ग्रेडिंग महंगी, समय लेने वाली और अक्षम है। मैनुअल ग्रेडिंग करने में काफी समय लगता है और इसलिए श्रम शुल्क अधिक होता है। इसके अलावा, फल के अन्य आकारों के मिश्रण की संभावना होती है। मैनुअल ग्रेडिंग श्रम गहन, समय लेने वाली और मानकीकृत नहीं है। गुणवत्ता की धारणा व्यक्ति से अलग होती है, इसलिए वर्गीकृत सामग्री की एकरूपता संदिग्ध हो जाती है।

भारत में, अनियमित बिजली की आपूर्ति और निम्न स्तर की तकनीक ऐसे कारक हैं जो कृषि उत्पादों के संचालन में उभरती प्रौद्योगिकियों को अपनाने में बाधा डाल सकती हैं। इस समस्या को दूर करने के लिए हस्त चालित छोटे ग्रेडर भी हैं जिसे कि किसान खेत के स्तर पर और सामान्य कीमतों पर आसानी से खरीद सकता है। मैकेनिकल ग्रेडर फल और सब्जियों को अधिकतर आकार के आधार पर ग्रेड करते हैं इसलिए, किसान श्रम की कमी को कम करने, उत्पाद के मूल्य को बढ़ाने और कृषि उत्पादों की बेहतर गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए बाज़ार में फल एवं सब्जी ग्रेडर उपलब्ध हैं।

**विशेषताएं:** फल और सब्जियों की ग्रेडिंग एक महत्वपूर्ण आपरेशन है जो उत्पादन की गुणवत्ता, हैंडलिंग और भंडारण को प्रभावित करता है। ग्रेडिंग सिस्टम हमें कई प्रकार की जानकारी देता है जैसे आकार, रंग, दोष, और आंतरिक गुणवत्ता। इन रंगों और आकारों में सटीक वर्गीकरण और/या संतरे, नींबू और टेंगेरिन जैसे फल की छंटाई के लिए सबसे महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं। एक घूर्णन स्क्रीन ग्रेडर नींबू, बेर, आंवला आदि जैसे फलों के लिए उपयुक्त है। फलों की छंटाई आमतौर पर बाहरी आकार के मानदंडों के आधार पर की जाती है जिसमें फल के आकार व रंग शामिल

होते हैं। ग्रेडिंग के अन्य तरीकों के अनुसार आकार के आधार पर ग्रेडिंग आसान और कम महंगी होती है और आलू, प्याज़, टमाटर, सेब आदि के ग्रेडिंग के लिए उपयोग की जाती है। फल और सब्जियों की ग्रेडिंग इसकी घनत्व और विशिष्ट गुरुत्वाकर्षण के आधार पर होता है। अत्यधिक जल्दी खराब होने वाले फल और सब्जियों के लिए इलेक्ट्रॉनिक रंग ग्रेडिंग किया जाता है। यह



विधि महंगी है लेकिन ग्रेडिंग की उच्च सटीकता है। इलेक्ट्रॉनिक रंग ग्रेडर सेब, टमाटर, पपीता, अनानास की ग्रेडिंग के लिए उपयोग किया जाता है।

**विभिन्न प्रकार के छंटाई संयंत्र:** अनियन ग्रेडर, पोर्टेबल वालनट फ्रूट ग्रेडर, पोटेटो ग्रेडिंग संयंत्र, फ्रूट और वेजिटेबल ग्रेडर, इलेक्ट्रॉनिक रंग ग्रेडर।

**छंटाई (ग्रेडर) संयंत्र के फायदे:** ग्रेडर उत्पाद के मूल्य को बढ़ाता है और निर्माता को बेहतर आर्थिक रिटर्न देता है। फल और सब्जियों की छंटाई (ग्रेडिंग) कृषि उत्पादों को बेहतर गुणवत्ता प्रदान करने में सहायता करता है। मैकेनिकल ग्रेडर फल और सब्जियों को अधिकतर आकार के आधार पर ग्रेड करते हैं जिससे कि फलों के विभिन्न आकार के मिश्रण की संभावना खत्म हो जाती है। हस्त चालित छोटे ग्रेडर को किसान खेत स्तर के लिए और सामान्य कीमतों पर आसानी से खरीद सकता है।



( पृष्ठ 8 का शेष )

**भण्डारण:** आलू की खुदाई करने के बाद कटे व भद्दी शक्ल वाले कन्दों को अलग अवश्य करें तथा शेष बचे आलुओं को किसी कमरे में ढेर लगाकर 10-15 दिन के लिए रखें।

ढेर को ऊपर से ढकना अति आवश्यक है, नहीं तो आलू हरे हो जायेंगे। आलुओं के संसाधन के लिए उन्हें अनुकूलतम तापमान 20 डिग्री सेंटीग्रेड दें। आर्द्रता की मात्रा भी अधिक होना आवश्यक है। आर्द्रता बढ़ाने के लिए ढेर के ऊपर थोड़ा-2 पानी छिड़का जा सकता है। अगर कमरे का तापमान अधिक है तो कूलर का प्रयोग करें। कूलर आर्द्रता को बनाए रखता है। खाने के लिए इस्तेमाल करने हेतु आलुओं को 2-3 महीने तक ठंडे हवादार स्थान पर घरों में ही रखा जा सकता है। भण्डारण करने से पहले श्रेणी चयन करें तथा बोरीयों में भरकर शीतगृह में भेजें। कटे आलुओं को निकालकर बाज़ार में बेचें। शीतगृह में 0-4 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान व 75 से 80 प्रतिशत आपेक्षित आर्द्रता होनी ज़रूरी है।





# बीज प्रमाणीकरण प्रक्रिया

सुनील कुमार, अनिल कुमार मलिक एवं सतबीर सिंह  
बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बीजोत्पादन की विभिन्न अवस्थाओं पर बीज गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले सभी कारकों पर प्रभावी ढंग से नियन्त्रण करने की प्रक्रिया को ही बीज प्रमाणीकरण कहते हैं। बीज प्रमाणीकरण का मुख्य उद्देश्य आनुवंशिक रूप से शुद्ध व अन्य प्रकार से अच्छे बीज किसानों को सुलभ करवाना है।

**बीज के पंजीकरण की प्रक्रिया :** बीज उत्पादक, प्रजनक एवं आधार बीज किसी भी बीज उत्पादक संस्था से खरीदकर सीधे बीज प्रमाणीकरण संस्था में पंजीकरण के लिए आवेदन कर सकता है।

- इस आवेदन पत्र के साथ फसल व किस्म की जानकारी, बोये गये बीज की श्रेणी, टैग का क्रमांक, उत्पादन संस्था का चलान/बिल क्रमांक की पूरी जानकारी देनी चाहिए।
- फसल बिजाई के 20 दिन के अन्दर निर्धारित निरीक्षण व पंजीयन शुल्क का डिमाण्ड ड्राफ्ट, निदेशक, हरियाणा राज्य बीज प्रमाणीकरण संस्था के नाम बनवाकर संस्था के संभागीय कार्यालय में जमा करना चाहिए।
- क्षेत्र एवं इकाई: बीज प्रमाणीकरण के लिए प्रस्तावित क्षेत्र की अधिकतम सीमा निश्चित नहीं है।

**बीज प्रमाणीकरण के अंग :** बीज प्रमाणीकरण के पांच मुख्य अंग माने जाते हैं।

**क) बीज प्रमाणीकरण के लिए आवेदन :** बीज उत्पादक को अपना बीज प्रमाणित करवाने के लिए बीज प्रमाणीकरण संस्था को एक आवेदन देना होता है। इस आवेदन पत्र में बीज उत्पादक को अपना नाम व पता, प्रमाणीकरण के लिए आवेदित बीज की किस्म, क्षेत्रफल, बीज का प्रकार-आधारबीज/प्रमाणित बीज, बीज का स्रोत, टैग संख्या, पृथक्करण दूरी एवं बोने की सही या प्रस्तावित तिथि बतानी होती है। बीज प्रमाणीकरण संस्था द्वारा इस आवेदन पत्र की जाँच की जाती है कि:

- किस्म/फसल अधिसूचित है या नहीं? बीज अधिनियम के तहत केवल अधिसूचित किस्मों के बीजों का ही प्रमाणीकरण किया जा सकता है।
- बीज का स्रोत उपयुक्त प्रकार का है या नहीं?
- बीज फसल की खेत संबंधी अपेक्षाएं प्रमाणीकरण मानकों के अनुरूप हैं अथवा नहीं।

यह सब जाँच कर ही प्रमाणीकरण संस्था उक्त आवेदन को स्वीकार या अस्वीकार करती है।

**ख) बीज फसल का निरीक्षण :** जब बीज उत्पादक का पत्र स्वीकृत हो जाता है तो फिर प्रमाणीकरण संस्था द्वारा बीज फसल के खेत का निम्नलिखित अवसरों पर निरीक्षण किया जाता है:

- बीज बोने के समय
- फूल आने से पहले

- फूल आने पर
- फसल पकने पर व
- कटाई के समय

अगर बीज फसल बीज उत्पादन के निर्धारित मानकों पर खरा उतरती है, तो बीज फसल को पास किया जाता है अन्यथा फेल। फसल के अच्छी तरह पकने पर कटाई करके खेत में ही अच्छी तरह सुखा कर गहाई करनी चाहिए। कटाई व गहाई के समय बीज में दूसरी किस्म, खरपतवार व मिट्टी इत्यादि की मिलावट न होने पाए।

**ग) संसाधन के दौरान बीज का निरीक्षण :** संसाधन का अर्थ है साफ करना, सुखाना, उपचारित करना, वर्गीकरण करना एवं अन्य कार्य जो कि बीज की गुणवत्ता को बढ़ाते हैं। ऐसे खेत के बीज, जो कि प्रमाणित मानकों को खेत में फसल की अवस्था में निश्चित करते हों, कटाई व गहाई के बाद जितनी जल्दी हो सके, उनको प्रोसेसिंग प्लांट में प्रोसेसिंग के लिए लाना चाहिए एवं निर्दिष्ट छेदवाली छलनी के द्वारा निर्दिष्ट फसल के अनुसार सफाई एवं वर्गीकरण (ग्रेडिंग) करना चाहिए, जिससे कि खराब बीज, घासफूस मिट्टी, पत्थर के टुकड़े, बीज के टुकड़े एवं अन्य आवांछनीय वस्तुएं निकल जायें।

**घ) बीज परीक्षण :** संसाधन के दौरान बीज निरीक्षण के बाद लिए गए नमूने का परीक्षण प्रयोगशाला में किया जाता है। बीज परीक्षण प्रयोगशाला में बीज की आनुवंशिकी व भौतिक शुद्धता की जांच की जाती है। अंकुरण, परीक्षण एवं नमी की जांच की जाती है। बीज का अनुमोदन प्रयोगशाला परीक्षण रिपोर्ट के पश्चात् ही किया जा सकता है।

**बीज उपचार:** यदि किसी किस्म का बीज बीजजनित रोग के रोगाणुओं के लिए सुग्राही है तो बीज प्रमाणीकरण संस्थाओं के लिए यह आवश्यक है कि प्रमाणीकरण से पहले बीज उपचारित होना चाहिए। यदि बुवाई से पहले बीज को उपचारित करना आवश्यक हो तो सिफारिश की गई मात्रा के अनुसार दवा को माप करके प्लास्टिक थैली में बीज की थैलियों के अन्दर रखना चाहिए। बीज की थैली में भी स्पष्ट रूप से उपचार से सम्बन्धित जानकारी होनी चाहिए। यदि बीज को उपचारित किया गया हो तो निम्नलिखित जानकारी देनी चाहिए:

- उपचारित बीज
- दवा का नाम
- यदि उपयोग में लाई गई दवा मनुष्यों या जानवरों के लिए नुकसानदायक है तो स्पष्ट रूप से लिख देना चाहिए कि खाने या तेल के उपयोगी नहीं है।
- मरकरीयुक्त या जहरीले पदार्थ के लिए स्पष्ट रूप से लाल बड़े अक्षरों में 'ज़हर' लेबल पर लिखा होना चाहिए।

**ड) प्रमाणीकरण :** बीज उत्पादकों द्वारा बीज प्रमाणीकरण के लिए दिए गए आवेदन पत्र की जांच से लेकर सभी तरह के निरीक्षणों व परीक्षणों में बीज के पास होने पर ही बीज को प्रमाणित किया जाता है तथा बीज प्रमाणीकरण संस्था द्वारा अपना प्रमाणपत्र (टैग) लगाया जाता है जो उक्त संस्था द्वारा प्रमाणित किए जाने का प्रतीक होता है। बीज प्रमाण पत्र (टैग) पर परीक्षण का विवरण लिखा होता है व इसकी वैधता नौ महीने की होती है।



# पौधों में नाइट्रोजन का महत्व एवं प्रबंधन

दीपिका राठी, देवराज एवं पूजा<sup>1</sup>

मृदा विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

नाइट्रोजन जीवित चीजों के लिए अति आवश्यक तत्व है। पादप पोषक में मृदा नाइट्रोजन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है। वास्तव में मृदा की नाइट्रोजन को मृदा उर्वरता का पर्याय माना गया है तथा मृदा उत्पादकता अन्य कारकों के साथ-साथ नाइट्रोजन से भी निर्धारित होती है। हमारी मृदा में नाइट्रोजन की कमी है। पृथ्वी के वायुमण्डल में 78.09 प्रतिशत तक नाइट्रोजन पायी जाती है जिसका पौधों द्वारा प्रत्यक्ष उपयोग नहीं हो पाता है। सामान्यतः पौधे नाइट्रोजन को नाइट्रेट व अमोनियम रूप में ही मृदा से ले पाते हैं।

नाइट्रोजन को पौधों में रीढ़ की हड्डी कहा जा सकता है। इसकी ज़रूरत भी ज़्यादा मात्रा में होती है क्योंकि यह महत्वपूर्ण कार्यों को निभाता है जैसे-

1. पौधों की संरचना में महत्वपूर्ण है क्योंकि यह अमीनो एसिड के लिए आवश्यक तत्व है जिससे प्रोटीन का निर्माण होता है।
2. यह पौधों की कोशिकाओं, ऊतकों व क्लोरोफिल के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
3. क्लोरोफिल प्रकाश संश्लेषण द्वारा कार्बोहाइड्रेट गठन के लिए आवश्यक है व यह पौधों को हरा रंग देता है।
4. यह साइट्रोक्रोम, एल्कालोइड, कई विटामिन व न्यूक्लिक एसिड के लिए महत्वपूर्ण तत्व है और इसी कारण पौधों की जैविक क्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
5. यह प्रजनन व अनुवांशिकता में भी मौलिक भूमिका निभाता है।
6. यह पौधों की बढ़वार के लिए अति आवश्यक है जिससे अधिक पैदावार मिलती है।

**पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन ना मिलने पर पौधों में इसकी कमी आ जाती है जिसे निम्नलिखित लक्षणों से पहचाना जा सकता है-**

1. इसकी कमी से क्लोरोफिल की मात्रा कम हो जाती है तथा फल व फूल कम लगते हैं।
2. इसकी कमी होने से नीचे की पत्तियों का रंग पीला हो जाता है तथा बाद में सारा पौधा ही पीला हो जाता है।
3. इसकी कमी से पौधों में प्रोटीन की कमी आ जाती है।

**इसकी कमी को पूरा करने के लिए निम्नलिखित उर्वरकों को मिट्टी की जांच के आधार पर डालना चाहिए**

1. यूरिया
2. अमोनियम सल्फेट

<sup>1</sup>अनुवंशिकी और पौध प्रजनन विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

नाइट्रोजन के सभी उर्वरकों में यूरिया मुख्य रूप से प्रयोग किया जाता है क्योंकि इसमें अधिक नाइट्रोजन (46 प्रतिशत) पाई जाती है तथा यह सस्ता व आसानी से उपलब्ध हो जाता है।

इन उर्वरकों की उपयोग दक्षता कम है क्योंकि नाइट्रोजन गैस बनकर वायुमंडल में चला जाता है। इसकी क्षमता को निम्नलिखित तरीकों से बढ़ाया जा सकता है

1. उर्वरकों की कुल मात्रा को थोड़ा-थोड़ा करके 2 या 3 बार में डालना चाहिए।
2. दोमट व भारी ज़मीन में सिंचाई के पहले या साथ में उर्वरकों को डालना चाहिए तथा रेतीली व हल्की ज़मीन में सिंचाई के बाद डालना चाहिए।
3. गर्मियों में उर्वरकों को शाम के समय तथा सर्दियों में ओस उतरने के बाद दोपहर को डालना चाहिए।
4. बरसात व बूँदा-बांदी के समय नाइट्रोजन के उर्वरकों को नहीं डालना चाहिए।
5. क्षारीय ज़मीन में उर्वरकों को ज़मीन के नीचे (4-5 सें.मी.) डालना चाहिए।
6. नीम लेपित व अन्य पदार्थों जैसे गंधक, लाख, क्ले आदि से लेपित यूरिया व धीरे-धीरे घुलनशील उर्वरकों का ही प्रयोग करना चाहिए।
7. नाइट्रोजन उर्वरकों का सही समय, सही तरीके से व सही मात्रा में सही स्रोत का ही प्रयोग करना चाहिए।
8. देसी खादों का ज़्यादा से ज़्यादा प्रयोग करना चाहिए।
9. उर्वरकों का मिट्टी जांच के आधार पर ही प्रयोग करना चाहिए।



(पृष्ठ 9 का शेष)

**वृद्धि नियामकों का फल बनने पर प्रभाव :** खरीफ ऋतु में जब तापमान ज़्यादा होता है एवं लू चलती है तो उस समय प्रायः मादा फूलों पर फल नहीं लगते जिसके कारण किसानों को भारी नुकसान का सामना करना पड़ता है। खीरा, ककड़ी एवं तरबूज में 2,4-डी नामक रसायन के 2-5 पी.पी. एम. का छिड़काव करने से इन सब्जियों में फलों की संख्या में वृद्धि होती है एवं उनके आकार में भी बढ़ोत्तरी होती है।



# दिसम्बर मास के कृषि कार्य



## फसलों में

### गेहूँ

यदि गेहूँ की बिजाई अब तक न कर सके हों तो इस महीने के पहले पखवाड़े तक अवश्य कर लें। इस समय की बिजाई के लिए डब्ल्यू एच 1124, राज 3765, डब्ल्यू एच 1021 व डी बी डब्ल्यू 90, एच डी 3059 ही बोंएं। प्रति एकड़ 60 किलोग्राम बीज डालें व सूखे की स्थिति में लगभग 12 घंटे भिगोने के बाद बीज बोंएं। जहां तक संभव हो खूडों का फासला घटाकर 18 सें.मी. (7 इंच) कर दें। बिजाई से पहले यथोचित बीजोपचार अवश्य कर लें। धान की कटाई के बाद गेहूँ की बुवाई ज़ीरो-टिल सीड कम फर्टिलाइजर ड्रिल मशीन से या हैप्पी सीडर से करें।

रबी फसलों में, विशेषकर गेहूँ में खरपतवारों की समस्या निरंतर बढ़ती जा रही है। अतः किसानों से अनुरोध है कि खरपतवारों को पहली तथा दूसरी सिंचाई के बाद एक या दो बार निराई-गुड़ाई करके खेत से निकाल दें। खरपतवारों की रोकथाम हेतु फसल की शुरू की बढ़वार में लगभग 30 दिन के अन्दर ही एक बार निराई-गुड़ाई करें। यदि खरपतवारों की रोकथाम शाकनाशकों द्वारा करनी हो तो चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की रोकथाम के लिए 2,4-डी का प्रयोग करें। इसके लिए 250 ग्राम 2,4-डी (सोडियम साल्ट 80 प्रतिशत) को या 300 मि.ली. 2,4-डी (एस्टर 34.6 प्रतिशत) या एलग्रीप 8 ग्राम 250 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ में छिड़काव करें। गेहूँ में मालवा, जंगली पालक, हिरणखुरी व अन्य चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु कारफेन्ट्रजोन ईथाईल (एफीनिटी) 40% डी. एफ. की 20 ग्राम प्रति एकड़ या सभी प्रकार के चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु ऐली एक्सप्रेस 50% डी.एफ. (मैटसल्फ्यूरॉन 10%+कारफेन्ट्रजोन 40%

लेखक :

- अश्विनी कुमार, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- आर. के. गोदारा, सह-निदेशक (बागवानी)
- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (पादप रोग विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह, सह-निदेशक, (पशु पालन - लुवास)
- वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
- एम. एस. ग्रेवाल, परामर्शदाता (मृदा विज्ञान)
- अशोक चन्द्र यादव, परामर्शदाता (सब्जी विज्ञान)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मिश्रण) की 20 ग्राम मात्रा प्रति एकड़+0.2% सहायक पदार्थ के हिसाब से 200-250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। यह छिड़काव बौनी किस्मों में बिजाई के लगभग 30-35 दिन बाद व देसी किस्मों में बिजाई के 40-45 दिन बाद (जब पौधों में 3-6 पत्तियां बन जाएं) करना चाहिए। ध्यान रखें 2,4-डी का प्रयोग गेहूँ की डब्ल्यू एच-283 किस्म में तथा मिलवां गेहूँ के साथ चना, सरसों आदि की फसल में न करें।

जंगली मटर, रस्सा/कंडाई और हिरणखुरी के नियंत्रण के लिए 500 ग्राम प्रति एकड़ 2,4-डी सोडियम साल्ट (80%) या 300 मि.ली. प्रति एकड़ 2,4-डी एस्टर (34.6%) का प्रयोग करें। उपर्युक्त रसायनों को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

### मंडूसी या कनकी व जंगली जई का नियंत्रण

आईसोप्रोटूरान 50% घु.पा. (टोलकान, टारस, ग्रेमिनान, नोसीलोन, रक्षक, हैक्सामार, इपको, आईसोप्रोटूरान, एग्रीलान, मिलरोन) गेहूँ की बिजाई के 30-35 दिन बाद 800 ग्राम दवा का प्रति एकड़ के हिसाब से 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

या

आईसोप्रोटूरान 75% घु.पा. (एरिलोन, डैलरान, हिप्रोटूरान, नोसीलान, एगरोन, रक्षक) गेहूँ की बिजाई के 30-35 दिन बाद 500 ग्राम दवा का प्रति एकड़ के हिसाब से 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। ऐसे क्षेत्रों में जहां पर कनकी में आईसोप्रोटूरान प्रतिरोधकता नहीं आई है, वहां आईसोप्रोटूरान 75% (डी.ई. नोसिल) का प्रयोग लाभदायक है। प्रतिरोधकता वाले क्षेत्र में आईसोप्रोटूरान का प्रयोग बंद कर दिया गया है।

या

आईसोप्रोटूरान-सहायक पदार्थ-सेलवेट (टेन्क मिक्स) : आईसोप्रोटूरान वर्गीय खरपतवारनाशक की 3/4 सिफारिश की गई मात्रा को 250 लीटर पानी में नान-आयोनिक सहायक पदार्थ (सेलवेट) के 0.1% के छिड़काव घोल में मिलाकर बिजाई के 30-35 दिन बाद छिड़कें। बाज़ार में अन्य उपलब्ध सहायक पदार्थ टी पॉल व सैलविट हैं।

गेहूँ की बिजाई यदि दिसम्बर के प्रथम सप्ताह या बाद में हो तो आईसोप्रोटूरान 200 ग्राम प्रति एकड़ पहली सिंचाई के तुरंत पहले करने से जंगली जई, कनकी व बथुआ का नियंत्रण हो जाता है।

धान-गेहूँ फसल-चक्र वाले क्षेत्रों में जहां 10-15 वर्षों से आईसोप्रोटूरान का प्रयोग किया गया है वहां कनकी में इस खरपतवारनाशक के विरुद्ध प्रतिरोधकता आ गई है। अतः प्रतिरोधकता से प्रभावित इलाकों में आईसोप्रोटूरान की बजाय निम्नलिखित में से किसी एक खरपतवारनाशक का प्रयोग करना ज्यादा उचित रहेगा :

- क्लोडीनाफोप (टोपिक या मुल्ला या प्वाइंट या रक्षक प्लस या जय विजय या टोपल) 15% घु.पा. 160 ग्राम प्रति एकड़ बिजाई के



30-35 दिन बाद; या

- सल्फोसल्फ्यूरान (लीडर, सफल-75 या एस एफ-10) 75% घु.पा. 13 ग्राम प्रति एकड़ + 500 मि.ली. पृष्ठ सक्रिय क्रमक/चिपचिपा या सहायक पदार्थ बिजाई के 30 से 35 दिन बाद

या

- फीनोक्साप्रोप (पूमा सुपर) 10% ई.सी. 480 मि.ली. या फीनोक्साप्रोप (पूमा पावर) 400 ग्राम+200 ग्राम सहायक पदार्थ प्रति एकड़ बिजाई के 30 से 35 दिन बाद।

या

- पीनोक्साडैन (एक्सियल) 5 प्रतिशत ई.सी. 400 मि.ली. मात्रा प्रति एकड़ बिजाई के 30-35 दिन बाद।

कनकी प्रतिरोधकता वाले क्षेत्रों में मिले जुले (चौड़ी व संकरी पत्ती वाले) खरपतवारों के नियंत्रण हेतु पीनोक्साडेन (एक्सियल) या क्लोडीनाफोप (टोपिक या मुल्ला या प्वाइंट या जयविजय) फिनोक्सोप्रोप (पूमा सुपर या पूमा पावर) की ऊपर सिफारिश की गई मात्रा की बिजाई के 30-35 दिन बाद छिड़काव करें तथा इसके एक सप्ताह बाद 2,4-डी या मैटसल्फ्यूरान (एल्ग्रीप) या कारफेन्ट्राजोन (एफेनीटी) या ऐलीएक्सप्रेस की सिफारिश की हुई मात्रा का छिड़काव करें। उपरोक्त रासायनों को मिलाकर छिड़काव न करें।

गेहूं में मिले जुले खरपतवारों (चौड़ी व संकरी पत्तियों वाले) विशेषकर आइसोप्रोटूरान-प्रतिरोधी क्षेत्रों में टोटल (सल्फोसल्फ्यूरान+ मैटसल्फ्यूरान, रेडीमिक्स सहायक पदार्थ सहित) की 16 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ या एटलांटिस (मिजोसल्फ्यूरान + आयडोसल्फ्यूरान सहायक पदार्थ सहित तैयार मिश्रण) की 160 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ या वेस्टा (क्लोडीनाफोप + मैटसल्फ्यूरान, रेडीमिक्स) की 160 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से प्रयोग करें। ध्यान रहे कि जिन खेतों में गेहूं के बाद ज्वार या मक्की की फसल लेनी हो उन खेतों में लीडर, टोटल व एटलांटिस का छिड़काव न करें।

उपर्युक्त में से किसी एक शाकनाशक दवा का 200-250 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

नवम्बर माह में बीजी गई बौनी किस्मों में बिजाई से 20-25 दिन बाद तथा देसी किस्मों में 30-35 दिन बाद पहली सिंचाई अवश्य करें।

गेहूं की पछेती किस्मों, जैसे राज 3765, डब्ल्यू एच 1124, डब्ल्यू एच 1021, डी बी डब्ल्यू 90 तथा एच डी 3059 की बिजाई के समय 65 किलोग्राम यूरिया, 150 किलोग्राम सुपरफास्फेट या 50 किलोग्राम डी ए पी तथा 20 किलोग्राम म्यूरेट आफ पोटाश प्रति एकड़ के हिसाब से डालें। इसके साथ-साथ 10 किलोग्राम/एकड़ जिंक सल्फेट इतनी ही सूखी मिट्टी में मिलाकर, बिजाई के समय खेत में छिट्टा दें। पोटाश की सिफारिश अम्बाला व यमुनानगर जिलों के लिए 40 कि.ग्रा. प्रति एकड़ है। देसी किस्म, जो नवम्बर के शुरू में बोई गई थी, की पत्तियों पर यदि जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई दें तो महीने के मध्य में एक किलोग्राम जिंक सल्फेट, 5 किलोग्राम यूरिया मिलाकर 200 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ में छिड़काव कर दें। इसी प्रकार 15 दिन बाद जिंक व यूरिया से

दूसरा छिड़काव करें। नाइट्रोजन खाद की बाकी आधी मात्रा पहली सिंचाई के समय डाल देनी चाहिए। देसी गेहूं के लिए 25 कि.ग्रा. यूरिया तथा बौनी किस्मों के लिए 65 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ डालें। यदि जमीन अधिक रेतीली है तो इसमें नाइट्रोजन की मात्रा का आधा भाग पहली सिंचाई पर डालें और आधा भाग गेहूं में दूसरे पानी पर डालें। खाद डालने के बाद गोड़ी अवश्य कर दें।

**बीज एवं मृदाजनित रोगों से बचाव :** ममनी व टुण्डू से बचाव के लिए गेहूं के बीज से ममनीयुक्त दाने, जो रंग में काले भूरे, आकार में छोटे, गेहूं के दानों से लगभग एक चौथाई और हल्के होते हैं, निकाल दें। बीज को पानी में डालकर इन्हें निकाला जा सकता है। गेहूं के भारी स्वस्थ बीज पानी में नीचे बैठ जाते हैं और ममनीयुक्त दाने पानी के ऊपर तैरने लगते हैं, जिन्हें निकाल कर नष्ट कर दें और नीचे बैठे बीज को छाया में सुखा लें (बोने से पहले खुली कांगियारी से बचाव के लिए वीटावैक्स या बाविस्टिन 2 ग्राम या रैक्सिल-2 डी एस (एक ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से बीज का उपचार करें। बीज जनित करनाल बण्ट से बचाव हेतु बिजाई से पूर्व बीज का थाइरम 2 ग्राम या रैक्सिल-2 डी एस (1 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से सूखा उपचार करें।

गुडगांव, महेन्द्रगढ़, भिवानी, रोहतक व फरीदाबाद जिलों के कुछ भागों में मोल्या नामक बीमारी के कारण खेत में कहीं-कहीं पौधे बौने, पीले व सूखे से दिखाई देते हैं। इस रोग से बचाव के लिए ऐसे खेतों में गेहूं की फसल न लेकर सरसों, तोरिया, चना, गाजर, धनिया व मेशी बोएं और जौ की अवरोधी किस्मों बी एच-75, बी एच 393 बीजें। अत्यधिक रोगग्रस्त खेत में फ्युराडान-3 जी दानेदार दवा 13 किलोग्राम प्रति एकड़ की दर से खाद के साथ मिलाकर पोर दें व बिजाई करें।

### दीमक से बचाव

फसल को दीमक से बचाने के लिए बिजाई के एक दिन पहले 100 किलोग्राम बीज को 150 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. या 500 मि.ली. इथियान 50 ई.सी. से उपचारित करें। दवाई में पानी मिलाकर कुल 5 लीटर घोल बनाएं, फर्श पर रखे बीज पर छिड़कें तथा अच्छी तरह मिलाएं ताकि दवाई हर बीज को लग जाए। इस तरह दवाई लगे बीज को रात भर सूखने दें तथा अगले दिन बोएं।

### जौ

दिसम्बर मास में बोई फसल पछेती मानी जाती है जिसमें माल्ट की पैदावार व गुणवत्ता कम हो जाती है। एक एकड़ के लिए 45 किलोग्राम बीज लेकर बीज को कतारों में 18-20 सें.मी. की दूरी पर पोरा या केरा विधि से बोएं। समय पर बीजी गई फसल में बिजाई के 40-45 दिन बाद पहला पानी लगाएं। बिजाई के समय 26 किलोग्राम यूरिया, 75 किलोग्राम सुपर फास्फेट तथा 10 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश डालें। सुपर फास्फेट को पोरा करें, बिखेरें नहीं।

जौ में पहला पानी लगाते समय नाइट्रोजन की आधी मात्रा (26 किलोग्राम यूरिया) डालें। यदि जौ की पत्तियों पर जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई दें तो अधिक पैदावार लेने के लिए गेहूं में बताए गए

(जस्ते-यूरिया के) घोल का छिड़काव करें।

बिजाई से पहले बीज का उपचार वीटावैक्स या बाविस्टिन 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज से सूखा उपचार करें।

जौ में भी दीमक से बचाव के लिए 600 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. से एक दिन पहले 100 किलोग्राम बीज को उपचारित करना चाहिए। दवा में पानी मिलाकर कुल 12.5 लीटर घोल बनाना होगा।

जौ में पहली सिंचाई के बाद एक या दो बार फसल की नलाई करें। यदि ऐसा न कर सकें तो 200-250 लीटर पानी में 400 ग्राम 2, 4-डी (सोडियम साल्ट) प्रति एकड़ को घोलकर फसल की बिजाई के 40 दिन बाद छिड़काव करने से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार नष्ट हो जाते हैं या चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियन्त्रण के लिए एलग्रीप 20 प्रतिशत घु. पा./घु. दाने 8 ग्राम + 200 मिली. चिपचिपा पदार्थ या 2, 4-डी अमाईन 58 एस.एल. 500 मिली. या एफीनिटी 40 डी.एफ. (कारफेन्ट्रोजोन-इथाईल) 20ग्राम प्रति एकड़ को 200 लीटर पानी में घोलकर बिजाई के 40-45 दिन बाद छिड़काव करें। घास जाति के खरपतवारों (कनकी, जंगली जई व लोमड़ घास) के नियन्त्रण हेतु एक्सियल 5 ई.सी. (पिनोक्साडेन) 400 मि.ली. प्रति एकड़ को 200 लीटर में घोलकर बिजाई के 40-45 दिन बाद छिड़कें। मिश्रित खरपतवारों (संकरी व चौड़ी पत्ती वाले) के नियन्त्रण के लिए एक्सियल 5 ई.सी. 400 मि.ली. के साथ अलग्रीप 20 प्रतिशत घु. पा./घु. दाने 8 ग्राम + 200 मि.ली. चिपचिपा पदार्थ या 2, 4-डी अमाईन 58 एस.एल. 500 मि.ली. या एफीनिटी 40 डी.एफ. 20 ग्राम प्रति एकड़ को 200 लीटर पानी में मिलाकर बिजाई के 40-45 दिन बाद छिड़काव करें।

### चना

चने में आवश्यकतानुसार फूल आने से पहले एक पानी देना चाहिए। चने की पत्तियों पर यदि भूरे रंग के धब्बे दिखाई दें तो समझना चाहिए कि चने के खेत में ज़िंक की कमी है। इसलिए इस भूमि में अगली बिजाई से पहले 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट अवश्य डालना चाहिए। हरियाणा चना नं. 1 को सिंचित क्षेत्रों में दिसम्बर के मध्य तक भी बोया जा सकता है। कभी-कभी फली छेदक सूण्डी इन दिनों में फूलों व पत्तियों आदि पर आक्रमण कर देती है। अतः इसके नियंत्रण के लिए 200 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस.एल. या 400 ग्राम कार्बेनिल 50 घु.पा. या 400 मि.ली. क्विनलफॉस 25 ई.सी. को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

**नोट :** किसानों से अनुरोध है कि अपने ट्यूबवैल तथा पंपिंग सैट के पानी की जांच, मिट्टी-पानी का परीक्षण प्रयोगशाला से जो कि हर ज़िले में है, करवाएं। हो सकता है आपका पानी जौ के लिए ठीक हो और चने की फसल को बिल्कुल खराब कर दे।

### तोरिया, सरसों व राया

महीने के दूसरे पखवाड़े में तोरिया की पकी हुई फसल की कटाई करें तथा समय पर बीजी गई सरसों व राया की फसलों को महीने के अंत में पानी दें। यदि सरसों व राया के निचले पत्तों के किनारों का रंग गुलाबी पड़ जाए तो यह ज़िंक की कमी का कारण है। इसके लिए एक किलोग्राम ज़िंक सल्फेट, 5 किलोग्राम यूरिया को 200 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़

फसल पर स्प्रे करें। पत्तियों पर सफेद फफोले वाली बीमारी से रक्षा के लिए 600 ग्राम डाईथेन एम-45 को 250-300 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ छिड़कें। बिजाई से पहले 96 कि.ग्रा. किसान खाद व 50 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट तोरिया और सरसों में प्रति एकड़ डालें। राया के लिए अमोनियम सल्फेट 160 कि.ग्रा. या 128 कि.ग्रा. किसान खाद और 75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट प्रति एकड़ बिजाई से पहले डालें।

सरसों, राया तथा तोरिया पर चेपा (अल या माहू) भी पत्ती, टहनियों, फूलों व फलियों से रस चूस कर काफी हानि पहुंचाता है। यदि इसका आक्रमण औसत 10% फूलों वाली शाखाओं पर हो जाए तब 250 से 400 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या रोगोर 30 ई.सी. को 250 से 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ 15 से 20 दिन के अंतर पर छिड़कें। दवाई की मात्रा फसल की बढ़वार पर निर्भर करती है। साग के लिए उगाई गई सरसों पर केवल 250 से 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. का छिड़काव हर 10 दिन के अंतर पर करें और फसल को छिड़काव के बाद 7 दिन तक प्रयोग में न लाएं। लाभदायक कीड़ों, जैसे शहद की मक्खियों आदि को बचाने के लिए छिड़काव दोपहर बाद करें।

सफेद रतुआ व अन्य बीमारी के लिए मैन्कोज़ेब 600 ग्राम दवा 250-300 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। ये छिड़काव सफेद रतुआ बीमारी के लक्षण दिखते ही करें तथा दूसरा छिड़काव 15 दिन के अंतर पर दोहराएं। ध्यान रहे इस बीमारी की रोकथाम के लिए दवाई का छिड़काव पत्तों की निचली सतह पर भी अवश्य करें।

जिन क्षेत्रों में सरसों में तना गलन (उखेड़ा) रोग का प्रकोप हर साल होता है वहां बिजाई के 45-50 दिन तथा 65-70 दिन के बाद कार्बेन्डाजिम का छिड़काव 0.1 प्रतिशत (200 ग्राम दवाई/200 लीटर पानी) की दर से करें।

### गन्ना

गन्ने की मध्य-समय में पकने वाली किस्मों की कटाई करके गुड़ बनाएं। देर से पकने वाली किस्मों को पाले से बचाने के लिए फसल में समय-समय पर पानी लगाते रहें। लाल सड़न रोग से प्रभावित खेतों से गन्ने की कटाई कर लें। ऐसे खेतों में मोढ़ी की फसल न लें।

सोनीपत, फरीदाबाद व रोहतक जिलों में स्केल कीड़े की समस्या बढ़ती जा रही है। कीड़ाग्रस्त फसल की शीघ्र कटाई करें और बची हुई पत्तियों व टूटों को जला दें। ऐसी फसल की मोढ़ी न रखें।

### बरसीम व लूसर्न

बरसीम की फसल को हरे चारे के लिए कटाई करने के बाद पानी लगाएं। लूसर्न की फसल को पहला पानी दें। सर्दियों में 20-25 दिन के अंतर पर फसल को पानी देते रहें। अधिक सर्दी पड़ने पर 13 कि.ग्रा. यूरिया डालने से बढ़वार ठीक मिल जाएगी।

### मसर

मसर की उन्नत किस्में हैं हरियाणा मसर 1, सपना व गरिमा। मसर की पछेती बिजाई इस माह के प्रथम सप्ताह तक कर सकते हैं। इसके लिए 18 से 20 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ डालें। मसर की पछेती बिजाई की

सूरत में भी 15 किलोग्राम यूरिया तथा 100 कि.ग्रा. सुपरफास्फेट प्रति एकड़ अवश्य ड्रिल करें। यदि सुपरफास्फेट उपलब्ध न हो तो यूरिया तथा सुपर फास्फेट की जगह अकेला 35 किलोग्राम डी.ए.पी. ही बीज के नीचे ड्रिल करें। मसर में राइजोबियम का टीका लगाना न भूलें। रेतीली ज़मीन में 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ के हिसाब से बिजाई के समय डालें।

### कपास

अगले वर्ष कपास में गुलाबी सूण्डी के आक्रमण को कम करने के लिए आखिरी चुनाई के बाद खेत में भेड़, बकरी तथा दूसरे पशुओं को चरने के लिए अवश्य छोड़ दें ताकि ये पौधों के साथ कीट-ग्रसित टिण्डों को खा जाएं। उसके बाद छंटियों को ज़मीन में गहराई से काटें ताकि दोबारा फुटाव न हो सके और बाद में अगले वर्ष सूण्डियों व मीलीबग को अपनी पहली पीढ़ी को चलाने के लिए खुराक बहुत कम मिले। छंटियों को सूखने के बाद झाड़ कर ही गांव में ले जायें तथा नीचे गिरे कचरे को जला कर नष्ट कर दें ताकि गुलाबी सूण्डी, मीलीबग व अन्य कीड़े नष्ट हो जाएं।



## सब्जियों में

### टमाटर

खेत को दूसरी फसल के लिए तैयार करें। नर्सरी में की गई बिजाई की देखभाल करें। इस माह भी नर्सरी में बिजाई की जा सकती है। पिछले माह बताई गई किस्मों को प्रयोग में लें तथा बिजाई से पहले 2-5 ग्राम एमिसान या कैप्टान या थाइरम दवा से प्रति किलोग्राम बीज का उपचार करें। कम तापमान होने के कारण अंकुरण तथा पौध की बढ़वार धीमी होगी। जल्दी अंकुरण तथा पौध को पाले से बचाने के लिए नर्सरी को रात में पॉलीथीन की शीट से ढक कर रखें।

### बैंगन

नर्सरी में पौध की देखभाल करें। इस माह भी (यदि बिजाई पहले नहीं की है) बिजाई की जा सकती है। किस्म व बीज की मात्रा व बीजोपचार के सम्बन्ध में पिछले माह बताया जा चुका है। पौधे को पाले से बचाने का प्रबंध करें।

### मिर्च

नर्सरी में की गई बिजाई की देखभाल करें। नर्सरी में बिजाई इस माह के प्रथम पखवाड़े में भी की जा सकती है। ठण्ड होने से बीजों को उगने में अधिक समय लगेगा तथा पौध की बढ़वार धीमी होगी। नर्सरी में पौध को पाले से बचाएं।

### फूलगोभी

खेत में लगी फसल की देखभाल करें। जैसा कि पिछले माह बताया जा चुका है, खड़ी फसल में दो बार यूरिया खाद देकर सिंचाई करें- पहली बार रोपाई के लगभग तीन-चार सप्ताह बाद तथा फिर पौधों में गांठ बनते समय सिंचाई करें। पछेती किस्म की पौध तैयार हो तो खेत में रोपाई करें।

हानिकारक कीड़ों (चेपा, कूबड़ वाला कीड़ा और डायमण्ड

बैकमॉथ) से रक्षा के लिए 400 मि.ली. मैलाथियॉन 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर दस दिन बाद दोबारा छिड़काव करें। दवा छिड़काव के बाद एक सप्ताह तक फसल को खाने के काम में न लें। डायमण्ड बैकमॉथ सूण्डी के लिए ऊपर लिखी कीटनाशक या 400 ग्राम बैसिलस थ्युरिनाजिएंसिस (बायोआस्प घु. पा.) या 300 मि.ली. डायजिनान 20 ई.सी. (वासुडीन/बैजानीन) या 60 मि.ली. नुवान 76 ई.सी. का प्रति एकड़ छिड़काव करें।

### बन्दगोभी व गांठगोभी

खेत में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। फसल को यूरिया खाद दो बार दें-पहली बार रोपाई के 3-4 सप्ताह बाद तथा फिर पौधों में गांठ बनते समय (हर बार लगभग 35 कि.ग्रा. यूरिया खाद प्रति एकड़)। पछेती किस्मों की पौध की तैयार खेत में रोपाई करें। कीड़ों की रोकथाम फूलगोभी में बताए ढंग से करना आवश्यक है।

### पालक

फसल में नियमित सिंचाई करें तथा खड़ी फसल में दो बार नाइट्रोजन खाद (हर बार 22 कि.ग्रा. यूरिया खाद प्रति एकड़) दें-पहली बार बिजाई के 4 सप्ताह बाद व फिर इसके 4 सप्ताह बाद। किसान खाद देने के बाद सिंचाई करें।

### मूली, शलगम व गाजर

जड़ वाली फसलों की समय पर बिजाई करें। खुली हुई जड़ों पर मिट्टी चढ़ाएं। विलायती किस्मों की बिजाई छोटे पैमाने पर इस माह भी की जा सकती है। सिंगरों के लिए उगाई फसल पर यदि सूण्डी या अल का आक्रमण हो तो 250-400 मि.ली. मैलाथियॉन 50 ई.सी. को 250-400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। दवा प्रयोग के बाद एक सप्ताह तक सब्जियां खाने के काम में न लें।

### मटर

बिजाई के लगभग 4-6 सप्ताह बाद यूरिया खाद (13 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की दर से) देकर सिंचाई करें। पछेती फसल में निराई करें, खरपतवार निकालें।

मटर की फसल की हानिकारक कीड़ों से रक्षा करें। मटर की थ्रिप्स (चूरड़ा) से बचाव के लिए प्रति एकड़ 60 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। यदि आवश्यकता हो तो दो सप्ताह बाद दोबारा छिड़काव करें। पत्तों में सुरंग बनाने वाले कीड़ों से रक्षा के लिए 400 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या 500 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या 500 मि.ली. एन्थियो 25 ई.सी. 200-250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। दवा प्रयोग के बाद तीन सप्ताह तक फसल खाने के काम में न लाएं।

सफेद चूर्णी रोग (पत्तियों, फलियों पर आटे जैसा सफेद चूर्ण दिखाई देता है) का प्रकोप होने पर प्रति एकड़ 500 ग्राम घुलनशील गंधक या 200 ग्राम बाविस्टिन या 80 मि.ली. कैराथेन 40 ई.सी. को 200 लीटर



पानी में धोलकर खेत पर छिड़काव करें तथा आवश्यकतानुसार 15 दिन के अंतर पर दोहराएं।

### लहसुन

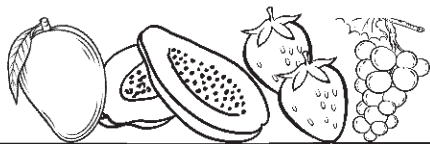
फसल की आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। नाइट्रोजन खाद (35 किलोग्राम यूरिया खाद प्रति एकड़) की अभी तक टॉप ड्रेसिंग कर चुके होंगे।

### (रबी) प्याज

प्याज की पनीरी इस माह तैयार हो जाएगी। अतः समय से खेत को तैयार करें। एक एकड़ खेत में लगभग 20 टन गोबर की सड़ी खाद बिखेर कर जुताई करें। रोपाई से पहले प्रति एकड़ 25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (55 कि.ग्रा. यूरिया खाद), 20 कि.ग्रा. फास्फोरस (120 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 10 कि.ग्रा. पोटाश (16 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) खेत में दें। खेत को उचित नाप की क्यारियों में बांट लें। रोपाई का सबसे अच्छा समय इस माह के आखिरी सप्ताह से जनवरी का प्रथम सप्ताह है। रोपाई के तुरंत बाद सिंचाई अवश्य करें।

### आलू

मिट्टी चढ़ते समय नाइट्रोजन खाद दे चुके होंगे। खेत की नियमित सिंचाई करें तथा हानिकारक कीटों व बीमारियों से रक्षा करें। हानिकारक कीटों, मुख्यतः चेपा (अल), से रक्षा के लिए प्रति एकड़ फसल पर 300 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या 300 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. को 200-300 लीटर पानी में घोलकर 10-15 दिन के अंतर पर आवश्यकतानुसार छिड़काव करें। ध्यान रखें कि आलुओं की खुदाई से कम से कम तीन सप्ताह पूर्व दवाओं का प्रयोग बंद कर दें। इन कीटनाशक दवाओं के प्रयोग से विषाणु रोग पर भी नियंत्रण हो जाएगा क्योंकि ये कीट ही इस बीमारी को फैलाते हैं। विषाणु रोगग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट करें, यदि कच्ची फसल निकालनी हो तो 70-75 दिनों पर निकालें तथा बाजार बेचने के लिए भेजें।



## फलों में

इस महीने में ठंड पड़नी शुरू हो जाएगी। इसलिए सदाबहार पौधों को पाले से बचाना आवश्यक है। जहां तक संभव हो सके बागों की सिंचाई भी करते रहें, ताकि पाले का कम से कम असर हो। इस महीने करीब-करीब सारी फसलों में कम्पोस्ट या गोबर की सड़ी खाद भी डालें और आने वाले बसंत मौसम में सदाबहार के पौधे लगाने के लिए खड्डों की खुदाई व भराई का काम शुरू कर दें ताकि पौधे फरवरी के शुरू में ही लगाए जा सकें। आड़ू व अलूचा के पौधे दिसम्बर तथा बेर व आंवला के पौधे मध्य फरवरी के अंत तक लगाए जा सकते हैं। बेर, आंवला व अमरूद वैज ग्राफ्टिंग से तैयार करने के लिए पौधों की काट-छांट कर लें।

### संगतरा, माल्टा, नींबू आदि

किन्नो के पके फलों को इस माह तोड़ लें ताकि अगली फसल अच्छी हो। बाग से घास-फूस नष्ट करने के लिए खरपतवारनाशक दवाई का प्रयोग करें। पौधे के नीचे 4-6 इंच से गहरी गुड़ाई न करें। इस माह के अंत तक पौधों को निम्नलिखित मात्रा में गोबर की खाद दें और सिंचाई भी करें। सिंगल सुपर फास्फेट और म्यूरेट ऑफ पोटाश मिट्टी जांच के आधार पर डालनी चाहिए।

पौधों की आयु	गोबर खाद (प्रति पौधा)	सिंगल सुपर फास्फेट (कि.ग्रा.)	म्यूरेट ऑफ पोटाश (ग्राम)
1 से 3 साल	10 से 40 कि.ग्रा.	0.250-0.750	100
4 से 6 साल	40 से 70 कि.ग्रा.	1.0-1.500	150
और उससे अधिक	100 कि.ग्रा.	2.0	175

बाग की सिंचाई 20 दिन में एक बार करें। पुराने बागों में पेड़ों की सूखी हुई लकड़ी व शाखाओं को काटें।

सूखी व कैंकर रोगी टहनियों को काटकर 1.5 किलोग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड को 500 लीटर पानी में बने घोल से तीन छिड़काव करें। तने पर बोर्डो पेस्ट का लेप करें।

### आम

गोबर की खाद व फास्फोरस इसी महीने में डालें 10 साल के पौधे में तने से 1 मीटर की दूरी छोड़कर पूरी छतरी में गोबर खाद 100 कि.ग्रा. व 1 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट डालें।

मिलीबग के बच्चे ज़मीन में से निकलकर तनों से होकर पौधों पर चढ़ते हैं। इनको चढ़ने से रोकने के लिए ज़मीन से 0.5 से 1 मीटर की ऊंचाई तक 25-30 सें.मी. चौड़ी चिकनी अल्काथीन (250-400 गेज की पॉलिथीन) की पट्टी लगाएं। इस पट्टी को लगाने से पहले तने की सूखी छाल 5-8 सें.मी. चौड़ी पट्टी के बराबर को कुल्हाड़ी से उतार कर बराबर कर लें। फिर 5 सें.मी. चौड़ी गर्म लुक (तारकोल) की तह पर अल्काथीन नीचे व ऊपर चिपकाएं। अल्काथीन मुलायम होने के कारण कीड़े ऊपर नहीं चढ़ सकेंगे। पौधों का अन्य भाग ज़मीन से नहीं छूना चाहिए। यह काम मध्य-दिसम्बर तक कर लें।

सूखी व रोगी टहनियों को काट दें। 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के घोल (300 ग्राम कॉपर आक्सीक्लोराइड 100 लीटर पानी में) से छिड़काव करें।

### बेर

दर्मियानी व पछेती किस्मों में सफेद चूर्णी या पाऊंडरी मिल्ड्यू से बचाव के लिए घुलनशील गंधक (सल्फर 400 ग्राम 200 लीटर पानी में) या केराथेन (200 मि.ली. 200 लीटर पानी में) का घोल बनाकर छिड़काव करें। मध्य-दिसम्बर में फल मक्खी के लिए 600 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या 500 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

## आडू व अलूचा

आडू (शर्बती, प्लोरिडासन, प्रभात, सर रेड) व अलूचा (काला अमृतसरी, सतलुज परपल) के पौधे इस महीने के अंत में लगाए जा सकते हैं। आडू में हर वर्ष टहनियों को एक-तिहाई काट दें। इस माह के अंत में कटाई-छंटाई आरंभ कर सकते हैं। गोबर की सड़ी खाद फास्फोरस व पोटाश इस माह के अंत तक डालें और अच्छी तरह गुड़ाई करके बाग की सिंचाई करें।

## आंवला

15 दिसम्बर तक सभी फलों की तोड़ाई पूरी कर लें अन्यथा फ्रूट नक्वोशीश बीमारी का प्रकोप बढ़ जाता है। इस समय आंवला में विटामिन-सी भरपूर मात्रा में उपलब्ध होता है।

## अमरूद

बाग की सिंचाई करें व फसल की देखभाल करें। अगर पत्ते हल्के पीले रंग के हों तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट व 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का छिड़काव करें। फल को पेड़ पर पकने न दें।

## अन्य फलों में

अंगूर की कटाई-छंटाई का कार्यक्रम जनवरी माह में करना होगा, इसलिए कैची, ब्लाईटॉक्स या बेनलेट और जिंक सल्फेट आदि का प्रबंध अभी से करें।



# पशुओं में

## गाय-भैंस

सर्दी से पशुओं के बचाव के लिए अपने पशुघर का प्रबंध ठीक ढंग से करें। इसमें हवा के आवागमन और वर्षा से बचाव का भी उपाय होना चाहिए। पशुओं का बिछावन सूखा होना चाहिए और इसे समय-समय पर बदलते रहना चाहिए। पशुओं को ठण्डी हवा से बचाना चाहिए।

इस मौसम में भैंसें नए दूध होती हैं। ब्याने के डेढ़-दो मास बाद भैंस में गर्मी के लक्षण (मदकाल) दिखाई देने चाहिए। भैंस को गर्मी में आने के 10-12 घण्टों के बाद एक अच्छे झोटे से मिलवाना चाहिए या निकट के कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र से नए दूध करवाना चाहिए। यदि भैंस गर्मी में न आती हो तो उसे पशु चिकित्सक को दिखाएं। नियमित रूप से भैंस को गर्मी में आने के लिए यह आवश्यक है कि उसको संतुलित आहार व 30-50 ग्राम खनिज मिश्रण प्रतिदिन खिलाएं। भैंसों अधिकतर रात को या सुबह के समय गर्मी के लक्षण दिखाती हैं। जब ये गर्मी में आती हैं तो बार-बार पेशाब करती हैं और बोलती हैं, चारा कम खाती हैं और इनकी दूध की मात्रा भी घट जाती है। इसके अतिरिक्त ये कुछ बेचैनी के लक्षण भी दिखाती हैं। कई भैंसों में गर्मी की पहचान बहुत कठिनाई से होती है क्योंकि इनकी गर्मी गुंगी रहती है। यदि नसबंदी कराया हुआ झोटा भैंसों के समूह में छोड़ दिया जाए तो गर्मी में आई भैंसों की आसानी से पहचान की जा सकती है और इससे आप ठीक समय पर अपनी भैंस का प्रजनन करा सकते हैं।

पशुओं को गलघोंटू एवं मुंह व खुरपका बीमारी से बचाव का टीका अवश्य लगावाएं। बीमार पशु को तुरंत अलग कर पशु चिकित्सक से उपचार करवाना चाहिए।

अपने पशुओं को कृमिनाशक दवाइयां पशु चिकित्सक की सलाह से पिलाएं। यदि दुधारू पशुओं को कृमिहीन न किया जाए तो उनमें दूध देने की क्षमता और छोटी आयु के पशुओं में विकास घट जाता है। बाह्य परजीवियों की रोकथाम के लिए भी उचित प्रबंधन करना चाहिए तथा पशु-आवास को भी नियमित अंतराल पर कीटाणुनाशक घोल से साफ करना चाहिए।

यदि बरसीम के साथ सूखा चारा न दिया जाए और बरसीम गीली हो तो पशुओं के पेट में गैस के कारण अफारा आ सकता है। इससे बचने के लिए पशुओं के वजन के हिसाब से 2 प्रतिशत सूखे चारे आहार में अवश्य प्राप्त होने चाहिए। यदि अफारा आ जाए तो पशु को 50-60 मि.ली. तारपीन का तेल, 10 ग्राम हींग, आधा किलोग्राम सरसों या अलसी के तेल में मिलाकर देने से अफारा ठीक हो जाता है।

गाय-भैंस का दूध थन को अंगुलियों और अंगूठे के बीच दबाकर न निकालें। पूरे हाथ से अंगूठा बाहर रखकर पूर्ण हस्त विधि द्वारा ही दूध निकालें। दूध निकालने से पहले तथा बाद में लाल दवा के कीटाणुनाशक घोल से थनों को अच्छी तरह साफ करना चाहिए।

यदि गाय-भैंस का गोबर पतला हो जाए तो तुरंत अपने पशु चिकित्सक से सलाह लें।

## भेड़-बकरी

भेड़-बकरी को स्वस्थ रखने के लिए उन्हें कृमिनाशक दवाई पिलानी आवश्यक है। यह दवाई आप अपने पशु चिकित्सक की सलाह से पिलाएं। यह चिकित्सालय से मुफ्त में मिलती है।

सर्दियों के मौसम में भेड़-बकरियों को सर्दी से बचाना भी ज़रूरी है। खास कर मेमनों को ठंडी हवाओं से बचाना चाहिए। मेमनों का फर्श सूखा रखना चाहिए।

## कुक्कुटों में

### मुर्गियां

मुर्गियों से अधिक अण्डे प्राप्त करने के लिए मुर्गीघर में रोशनी का ठीक प्रबंध होना चाहिए। दिन और रात की कुल रोशनी मिलाकर 16 घण्टे होनी चाहिए।

मुर्गियों का बिछावन यदि गीला हो जाए तो उसे सूखे बिछावन से बदल दें। मुर्गियों के बिछावन को दिन में तीन-चार बार पलटना चाहिए।

जो मुर्गियां अभी अण्डे नहीं देने लगी हैं और कुछ दिनों के बाद अंडे देने लगेंगी, उनकी चोंच कटवा लें क्योंकि अण्डे देने के दौरान ये मुर्गियां आपस में लड़ती हैं और एक दूसरे को ज़ख्मी कर देती हैं जिससे इनकी अण्डे देने की क्षमता घट जाती है।

मांस के लिए रखे ब्रायलरों को 6-8 सप्ताह की आयु में बेच देना चाहिए।

यदि मुर्गियों का आहार संतुलित नहीं है तो आप मुर्गी आहार, पशु पोषाहार विभाग, पशु चिकित्सा महाविद्यालय, लुवास, हिसार की प्रयोगशाला में जांच कराएं तथा आप उनकी सलाह से परिवर्तित दाना बनाएं। यदि ठंडी हवा चलती हो तो खिड़कियों में झूल लगा दें और मुर्गीघर में बुरादे की बुखारी का प्रयोग करें।

मुर्गीदाने में रेशा 6-7 प्रतिशत और नमक की मात्रा 0.6 प्रतिशत से ज्यादा न हो। दाने को सूखी जगह पर रखें। बीमार मुर्गियों को अलग घर में ले जाएं।



## घर-आंगन में

- भोजन में ताजी सब्जियों का प्रयोग करें।
- मौसमी सब्जियों का अचार, चटनी व मुरब्बे के रूप में प्रयोग करें।
- कच्चे सलाद का ज्यादा से ज्यादा सेवन करें।
- सर्दी में हरी पत्तेदार सब्जियों का अधिक से अधिक इस्तेमाल करें।
- घर के कामकाज के लिए व नहाने के लिए गुनगुने पानी का इस्तेमाल करें।
- गर्म ऊनी वस्त्रों को समय-समय पर धूप दिखाती रहें।
- त्वचा की खुश्की दूर करने के लिए तेल या ग्लिसरीन का प्रयोग करें।
- मूंगफली, तिल, चने व गुड़ के पौष्टिक लड्डू बनाएं व बच्चों और बड़ों को खाने के लिए दें। यह लड्डू स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी होते हैं। महिलाएं इनका सेवन स्वयं भी अवश्य करें। इससे कार्य करने की शक्ति मिलेगी व घर तथा खेत के कार्य करने में परेशानी नहीं होगी।



## भण्डारित अनाज की कीड़ों से रक्षा

अगर अनाज अच्छी तरह से सुखा कर, कीट-रहित व सूखे भण्डार में ढककर भण्डारित किया है तो उसके कीड़ों अथवा नमी से खराब होने की संभावना बहुत कम है। फिर भी भण्डारित अनाज का समय-समय पर निरीक्षण करना चाहिए। यह क्रिया वर्षा ऋतु में बहुत महत्वपूर्ण होती है। यदि अनाज में कीड़ा लगा हो तो इसमें जहरीली गैस छोड़ने वाली दवाई एल्यूमिनियम फास्फाईड (सैल्फास, क्विनलफॉस, फास्फ्यूम) की 7 गोलिएयां (3 ग्राम) प्रति 1000 घनफुट या 28 घनमीटर स्थान के हिसाब से डालें और 7 दिन तक भण्डार बंद रखें। इन दवाइयों का प्रयोग पूरी सावधानी से किसी विशेषज्ञ की देखरेख में करें।

## सफल डेयरी फार्मिंग के मूल-मंत्र

अमित और गुलाब सिंह

पशु उत्पादन एवं प्रबंधन विभाग

ला.ला.रा.पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

1. पशुओं की अच्छी नस्ल का चुनाव करना सफल डेयरी फार्मिंग का महत्वपूर्ण सूत्र है। भैंसों में मुराह, गायों में होलिस्टिन, साहीवल आदि उत्तम नस्लें हैं जो डेयरी फार्मिंग में अधिक उत्पादन देती हैं।
2. पशुओं का उत्पादन उनकी खुराक पर निर्भर करता है। इसलिए यदि उनके आहार में पोषक तत्वों की कमी होगी तो उनका उत्पादन भी कम हो जाएगा। इस कमी को पूरा करने के लिए पशु को प्रतिदिन 50 से 60 ग्राम खनिज व पोषक तत्वों का मिश्रण जरूर दें।
3. डेयरी फार्मिंग को सफल व्यवसाय बनाने के लिए पशुओं के रहने के स्थान का बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसलिए पशुओं के आवास स्थान को बनाने से पहले पशु-विशेषज्ञ की सलाह जरूर लें। पशुओं की गर्मी व सर्दी से रक्षा करें। गर्मी के मौसम में पीने के पानी का उचित प्रबंध होना चाहिए।
4. पशुओं की नस्ल सुधारने तथा उत्पादन को बढ़ाने के लिए अच्छी नस्ल के सांड या झोटे से कृत्रिम गर्भाधान सही समय पर करवाना आवश्यक है। कृत्रिम गर्भाधान विशेषज्ञ की देख-रेख में ही करवाना सही रहता है।
5. पशुओं को संक्रामक रोग जैसे गलघोट, मुंह-खुर आदि से बचाने के लिए समय पर टीकाकरण करवाना बहुत जरूरी होता है। पशुओं का टीकाकरण सही समय पर सरकारी पशु-चिकित्सालय में ही करवाएं।
6. पशुओं को पेट के कीड़ों से बचाने के लिए नियमित रूप से दवाई देनी बहुत जरूरी है। कीड़ों के कारण पशुओं का उत्पादन कम हो जाता है और उनकी प्रजनन क्षमता पर भी बुरा असर पड़ता है।
7. डेयरी फार्मिंग में नवजात पशुओं की अच्छी देख-रेख बहुत आवश्यक है। क्योंकि इनमें रोगों से लड़ने की क्षमता कम होती है और मृत्युदर ज्यादा होता है इसलिए उनके खान-पान और साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखें। प्रतिरक्षा बढ़ाने के लिए उनको जन्म के एक घंटे बाद व 2-3 दिन बाद तक खीस अवश्य खिलाएँ और उनके पैदा होते ही नाल को साफ ब्लेड या कैंची से काट कर रोग-रोधक दवा लगा दें।
8. सफल डेयरी फार्मिंग के लिए फार्म का लेखा-जोखा रखना बहुत जरूरी है। पशुपालक को सभी पशुओं का पूर्ण लेखा-जोखा जैसे उसके जन्म का स्रोत या माता-पिता, नंबर, पहचान, खान-पान का, टीकाकरण का, ब्याने का तथा फार्म की सभी गतिविधियों का ब्योरा रखना चाहिए।

जिला विस्तार विशेषज्ञ (कृषि अर्थशास्त्र), कृषि विज्ञान केन्द्र, भिवानी।





# जैव प्रौद्योगिकी फसलों से किसानों को मिलने वाले सामाजिक और आर्थिक लाभ

सोनाली सांगवान, शिखा यशवीर एवं प्रतिभा आणविक जीव विज्ञान, जैव प्रौद्योगिकी और जैव सूचना विज्ञान विभाग चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

वैश्विक खाद्य असुरक्षा एक बड़ी समस्या है तथा खाद्य संकट से लगभग 10.8 करोड़ लोग प्रभावित हैं। विशेष रूप से विकासशील देशों के नागरिक इस समस्या से अधिक प्रभावित हैं। फसलों की पैदावार बढ़ाकर ही इस समस्या से निजात पाई जा सकती है। उपज बढ़ाने के लिए अजैविक तनाव जैसे सूखा, बाढ़, लवणता, ठंड, गर्मी, भारी धातुओं तथा बीमारियों के लिए प्रतिरोधक क्षमता का होना आवश्यक है। कृषि वैज्ञानिकों के द्वारा कई दृष्टिकोणों से इन समस्याओं को सुलझाने के प्रयत्न किए गए हैं। जैव प्रौद्योगिकी से फसलों का विकास इनमें से एक है। इन फसलों को बायोटेक अथवा जैव प्रौद्योगिकीकृत फसल के नाम से जाना जाता है। ये फसलें वर्तमान परिस्थितियों की मांग को पूर्ण करने के लिए उपयुक्त हैं। इनमें कई विशेषताएं होती हैं जिनमें उच्च गुणवत्ता, रोग प्रतिरोधक क्षमता, बेहतर कृषि संबंधी लक्षण इत्यादि प्रमुख हैं। ये फसलें उच्च पैदावार तथा सुरक्षित उत्पादन के रूप में एक सफल समाधान प्रदान करती हैं। ये सभी फसलें कृषक की आय को बढ़ाने में सक्षम हैं और दुनिया के वे सभी क्षेत्र जो भूख, गरीबी और कुपोषण जैसी चुनौतियों से सर्वाधिक प्रभावित थे उनमें इन समस्याओं को कम करने में भी योगदान दे रही हैं। कृषि जैव प्रौद्योगिकी अनुप्रयोगों के अधिग्रहण के लिए अंतराष्ट्रीय सेवा (आई.एस. ए.ए.ए.) और पी. जी. इकोनोमिक्स लिमिटेड ने भी अपने अध्ययन में प्रकाश डाला है कि कृषि में जैव प्रौद्योगिकी को अपनाने से सामाजिक, पर्यावरणीय और आर्थिक लाभ मिल सकते हैं।

## बायोटेक फसलों के उदाहरण

1. सेब और आलू जिनमें खराब होने या क्षतिग्रस्त होने की संभावना कम है।
2. एंथोसाइनिन समृद्ध अधिक मीठे अनानास
3. संशोधित तेल सामग्री युक्त सोयाबीन
4. कीट प्रतिरोधी गन्ना, कपास व बैंगन

## बायोटेक फसलों द्वारा प्रदान किए जाने वाले लाभ

1. उपभोक्ताओं और खाद्य उत्पादकों को विविध अवसर प्रदान करना।
2. लाभकारी पोषण गुणवत्ता
3. सतत प्रथाओं के उपयोग से वातावरण को गर्म करने वाली ग्रीनहाऊस गैस जैसे मीथेन, कार्बन डाई ऑक्साइड के उत्सर्जन में कमी
4. पौधों में कीट और खरपतवारनाशक प्रतिरोधी क्षमताएं बढ़ाना

अंततः ये सब छोटे किसान और उनके परिवारों के लिए बेहतर जीवनशैली प्रदान करने में सहायक हैं। आई. एस. ए. ए. की वैश्विक जैव प्रौद्योगिकी की रिपोर्ट के अनुसार 2017 में 3 प्रतिशत (47 लाख

हैक्टेयर) बायोटेक फसल क्षेत्र की वृद्धि हुई है। भारत, पाकिस्तान, ब्राजील, बोलीविया, सूडान, मैक्सिको, कोलंबिया, वियतनाम, होंडुरास और बांग्लादेश जैसे विकासशील देशों ने न केवल अपने बायोटेक फसल क्षेत्र में वृद्धि करी है बल्कि किसानों को भी खाद्य उत्पादन में जैव प्रौद्योगिकी अपनाने के लिए निरंतर जागरूक कर रहे हैं। वास्तव में उपरोक्त देश अब वैश्विक जैव प्रौद्योगिकी फसल क्षेत्र का 53 प्रतिशत हिस्सा उगाते हैं। इस वृद्धि के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं :

1. कच्चे माल की कीमतों में उछाल से उच्च लाभप्रदता।
2. राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चिन्हित मांग का बढ़ना।
3. वर्तमान बीज प्रौद्योगिकियों की उपलब्धता।
4. सार्वजनिक क्षेत्र संस्थानों द्वारा चावल, गेहूं, चना, अरहर, आलू व केला आदि फसलों पर आयोजित अनुसंधान।

**बायोटेक फसलों की वैश्विक स्थिति :** 67 देशों ने बायोटेक फसलों का उपयोग किया है जिनमें से 24 देशों ने इन फसलों का उत्पादन किया है। सोयाबीन, मक्का, कपास और सफेद सरसों सर्वाधिक लगाई जाने वाली फसलें हैं। इनके अलावा, गन्ना, चुकंदर, स्ववैश, पपीता, बैंगन और आलू आदि बायोटेक फसलों को भी विभिन्न देशों में लगाया जा रहा है। 2016 के सर्वेक्षण के अनुसार बायोटेक फसलों के उत्पादन क्षेत्र की वृद्धि में संयुक्त राज्य अमेरिका (7.29 करोड़ हैक्टेयर) का पहला स्थान है और ब्राजील और अर्जेंटीना क्रमशः दूसरे व तीसरे स्थान पर हैं। इन्नेट<sup>®</sup> आलू और आर्कटिक<sup>®</sup> सेब जो काटने पर भूरे नहीं पड़ते तथा ज्यादा समय के लिए ताजे रहते हैं। ये दोनों बायोटेक फसलें अमेरिका ने अपना ली हैं।

भारत 1.08 करोड़ हैक्टेयर के साथ इस शृंखला में चौथे स्थान पर है। कीट प्रतिरोधक क्षमता वाली 'बीटी-कपास' भारत की एकमात्र बायोटेक फसल है। इसे 2002 में जेनेटिक इंजीनियरिंग स्वीकृति कमेटी (जी.ई.ए. सी.) द्वारा 'बी.टी. कपास हाईब्रिड' के रूप में जारी किया गया था। इस फसल में कीट प्रतिरोध ने कीटनाशकों के उपयोग में कमी लाने में मदद की है जिससे कपास उत्पादन की लागत में 30 प्रतिशत तक कमी आई है और 50 प्रतिशत तक उपज बढ़ी है। हमारे पड़ोसी देश जैसे कि बांग्लादेश ने भी 2013 में 'बीटी बैंगन' को मंजूरी दी जो कीट प्रतिरोधक फसल है।

**भविष्य की संभावनाएं :** पी.जी. इकोनोमिक्स लिमिटेड की रिपोर्ट के अनुसार पिछले दो दशकों (1996-2016) में बायोटेक फसलों के माध्यम से विश्वभर के 1.70 करोड़ किसानों को 186.1 अरब डॉलर का लाभ मिला है। जिनमें महिला छोटे धारक किसान भी शामिल हैं। अध्ययनों के मुताबिक जलवायु परिवर्तन 2050 तक प्रमुख फसलों की प्रोटीन, जस्ता और लौह मात्रा को कम कर सकता है। केवल बायोटेक फसलें ही इस भविष्य की समस्या का समाधान कर सकती हैं क्योंकि इन्हें समाज व उसकी समस्त आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए बनाया जाता है।



## गाजर/कांग्रेस घास — आओ मिलकर करें विनाश

सतबीर पूनियां, धर्मबीर यादव एवं समुन्द्र सिंह

सस्य विज्ञान विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

गाजर घास यानी *पारथेनियम हिस्ट्रोफोरस* को देश के विभिन्न भागों में अलग-अलग नामों जैसे कांग्रेस घास, सफेद टोपी, चटक चांदनी, गंधी बूटी आदि नामों से जाना जाता है। हमारे देश में यह खरपतवार सर्वप्रथम 1956 में दिखाई देने के बाद अब तक लगभग 10 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में देशभर में महामारी की तरह फैल चुकी है। यह मुख्यतः खाली स्थानों, अनुपयोगी भूमि, औद्योगिक क्षेत्रों, बगीचों, नहर के किनारे, सार्वजनिक स्थल जैसे पार्क, स्कूल, रहवासी क्षेत्र, सड़क, खेल के मैदान तथा रेलवे लाईन के किनारों आदि पर बहुतायत से पाया जाता है। इसके अलावा इसका प्रकोप खाद्यान्न फसलों, सब्जियों व उद्यानों में भी देखा गया है। वनों में भी इसकी समस्या बढ़ती जा रही है।

### कांग्रेस घास कहाँ से आई व कैसे फैली?

कांग्रेस घास का उद्गम स्थल मैक्सिको देश है व ऐसा माना जाता है कि हमारे देश में इसका प्रवेश लगभग तीन दशक पहले अमेरिका या कनाडा से आयात किए गए गेहूँ के साथ हुआ। यह गेहूँ खासकर दक्षिणी भारत में भेजा गया था परन्तु माल ढुलाई में प्रयुक्त ट्रकों व रेलवे द्वारा वहाँ से देश के अन्य भागों में फैल गया है।

### कैसा होता है गाजर/कांग्रेस घास

यह एक वर्षीय शाकीय पौधा है जिसकी लम्बाई 0.5 से 1 मीटर तक होती है। इसका तना रोएंदा व अत्यधिक शाखायुक्त होता है। पत्तियाँ असमान्य रूप से गाजर की पत्ती की तरह होती हैं। इसके फूलों का रंग सफेद होता है व प्रति पौधा लगभग 1000 से 5000 अत्यंत सूक्ष्म बीज पैदा करता है। बीजों में सुषुप्तावस्था नहीं होती है जिसके कारण बीज पककर ज़मीन में गिरने के बाद नमी पाकर पुनः अंकुरित हो जाते हैं। गाजर/कांग्रेस घास का पौधा लगभग 2-3 महीने में अपना जीवन चक्र पूरा कर लेता है क्योंकि यह प्रकाश व तापक्रम उदासीन पौधा है। अतः दिसम्बर व जनवरी महीनों को छोड़कर पूरे वर्ष उगता व फलता-फूलता रहता है।

### गाजर/कांग्रेस घास से होने वाले नुकसान

कांग्रेस घास से मनुष्य को त्वचा सम्बन्धी रोग (डरमेटाइटिस), एक्जिमा, एलर्जी, बुखार, दमा आदि जैसी बीमारियाँ हो जाती हैं। पशुओं के लिए भी यह खरपतवार अत्यधिक विषाक्त होता है। कांग्रेस घास के तेज़ी से फैलने के कारण अन्य उपयोगी वनस्पतियों, स्थानीय जैव विविधता एवं पर्यावरण पर प्रभाव पड़ता है।

### रोकथाम के उपाय

गाजर/कांग्रेस घास में फूल आने से पहले जड़ से उखाड़कर गड्ढा विधि से कम्पोस्ट बना लेनी चाहिए। (शेष पेज 22 पर)

## हैप्पी सीडर द्वारा फसल अवशेष प्रबन्धन

कुलदीप सिंह, जोगेन्द्र सिंह एवं अनिल कुमार<sup>1</sup>

कृषि विज्ञान केन्द्र, सोनीपत

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फसल अवशेष प्रबन्धन में आधुनिक कृषि यन्त्र बहुत बड़ी भूमिका निभा रहे हैं। फसल अवशेष जलाने से अनेक प्रकार की परेशानियाँ पैदा हो रही हैं, जैसे मृदा स्वास्थ्य की हानि, ज़हरीली गैसों के उत्सर्जन से प्रदूषित वातावरण, कृषि के लिए लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में कमी, मृदा तापमान में बढ़ोत्तरी तथा पशुओं के चारे का नष्ट होना आदि। उपरोक्त समस्याओं का हल हैप्पी सीडर द्वारा गेहूँ बिजाई करके किया जा सकता है। हैप्पी सीडर कम्बाइन से काटे गए धान के खेतों में फसल अवशेषों को ज़मीन पर पड़े रहते हुए आसानी से गेहूँ की बिजाई करने में समर्थ है। हैप्पी सीडर में दो प्रणाली काम करती हैं। आगे का भाग फसल अवशेष काटता है तथा पीछे का भाग गेहूँ की बिजाई करता है। हैप्पी सीडर द्वारा गेहूँ बिजाई के अनेक फायदे हैं, जैसे कम समय में बिजाई, मजदूरी लागत में कमी, कम डीज़ल खपत, पानी व ऊर्जा की बचत, मृदा स्वास्थ्य में सुधार के साथ-साथ फसल अवशेष न जलाने से वातावरण को भी प्रदूषित होने से बचाया जा सकता है। फसल अवशेष ज़मीन पर पड़े रहने से वाष्पन कम होता है, मृदा की नमी व तापमान संतुलित रहता है, फसल के पकने के समय तापमान में बढ़ोत्तरी का प्रभाव कम होता है। परिणामस्वरूप फसल की पैदावार व गुणवत्ता में बढ़ोत्तरी होती है। हैप्पी सीडर के प्रयोग द्वारा फसल अवशेष जलाने की ज़रूरत नहीं पड़ती बल्कि अवशेष गल-सड़कर मृदा में मिल जाते हैं तथा खाद का कार्य करते हैं। हैप्पी सीडर द्वारा निर्धारित दूरी एवं गहराई पर बीज व खाद बड़ी आसानी से बोया जा सकता है।

**फसल अवशेष जलाने के हानिकारक प्रभाव :** फसल अवशेष जलाने से हमारी मृदा एवं मानव दोनों पर बुरा प्रभाव पड़ता है। फसल अवशेष जलाने से मृदा में विद्यमान पोषक तत्व नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटैश व सल्फर आदि नष्ट हो जाते हैं। इसके अलावा मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। फसल के अवशेष जलाकर किसान अपने खेत को जल्दी खाली करना चाहता है। नतीजतन खेत तो खाली हो जाता है लेकिन वातावरण ज़हरीली गैसों से भर जाता है। फसल अवशेष जलाने से वायुमण्डल में कार्बन मोनोक्साइड, कार्बन डाइऑक्साइड तथा सल्फर डाइऑक्साइड जैसी हानिकारक गैसों घुल जाती हैं जिनका मानव स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है तथा मनुष्य अनेक बीमारियों का शिकार हो रहा है, जैसे- अस्थमा, आंखों का रोग, एलर्जी, त्वचा रोग, फेफड़े का रोग व हृदय रोग आदि।

<sup>1</sup>सहायक वैज्ञानिक (फार्म मशीनरी एवं पावर इंजीनियरिंग विभाग)

**हैप्पी सीडर चलाने सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण सुझाव :** हैप्पी सीडर के प्रयोग के समय मृदा में नमी की मात्रा कम होनी चाहिए यानि मिट्टी ज्यादा गीली नहीं होनी चाहिए। अगर नमी ज्यादा होगी तो बीज की बुवाई एकसार नहीं होगी। हैप्पी सीडर खेत में चलाने से पहले फसल अवशेष हाथ या मशीन द्वारा एक समान खेत में बिखेर देने चाहिए। सुबह के समय बचे हुए फसल अवशेषों में नमी ज्यादा होती है तथा यह सम्भावना रहती है कि फसल अवशेष मशीन की अवशेष काटने वाली प्रणाली में लिपट सकते हैं तथा बार-बार मशीन रुक सकती है। अतः यह सुझाव दिया जाता है कि प्रातःकाल ओस के सूखने के बाद ही मशीन को चलाएं। बीज बोने की गहराई मशीन में लगे गहराई निर्धारित करने वाले पहियों से करें न कि ट्रैक्टर की हाइड्रोलिक प्रणाली द्वारा। हाइड्रोलिक प्रणाली द्वारा गहराई निर्धारित करने से अवशेष काटने वाले भाग ज़मीन से टकरा कर टूट सकते हैं तथा मशीन खड़े फसल अवशेष उखाड़ना शुरू कर देती है। फलेल व ज़मीन के बीच 25 से 30 सें.मी. की दूरी रखें। अगर किसी कारणवश फलेल टूट गई हैं तो उन्हें तुरन्त बदल दें अन्यथा मशीन में अधिक कम्पन होने से दूसरे पुर्जें भी टूट सकते हैं।

हैप्पी सीडर द्वारा बिजाई करते समय मशीन का सही क्रियान्वयन ज़रूरी है ताकि किसानों को किसी समस्या का सामना न करना पड़े। अतः इन बातों पर अवश्य ध्यान दें।

#### बिजाई से पहले :

1. मशीन के सभी हिस्से पुर्जें, नियन्त्रण व चलाने के तरीके के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लें।
2. कम्बाइन से फसल की कटाई इतनी ऊंचाई से करवायें ताकि 50% फसल अवशेष खड़े रहें तथा 50% अवशेष खेत में खुले पड़े रहें।
3. खुले पड़े फसल अवशेषों को पूरे खेत में एकसार फैला दें ताकि मशीन के प्रचालन में कोई रूकावट न आये।
4. फसल अवशेष सूखने के बाद ही हैप्पी सीडर से बिजाई शुरू करें अन्यथा गीले अवशेष मशीन में लिपट कर अवरोध पैदा करेंगे।
5. मृदा में अगर नमी ज्यादा होगी तो खड़े फसल अवशेष उखड़ कर मशीन में फंसकर बाधा उत्पन्न करेंगे तथा कम नमी बीज के अंकुरण को प्रभावित करेगी। अतः मृदा में नमी सही होनी चाहिए ताकि फसल का जमाव अच्छा हो।
6. पंक्ति से पंक्ति दूरी, बीज की मात्रा तथा बीज बोने की गहराई का सही चुनाव करें।
7. मशीन का समायोजन सही होना चाहिए ताकि निर्धारित बीज ही बोया जा सके। खाद को बीज के साथ न मिलाएं, इससे बीज मापन प्रणाली खराब हो सकती है।

#### बिजाई के समय :

1. 9 से 11 टाइन की हैप्पी सीडर चलाने के लिए 45 से 55 हॉर्स पावर का ट्रैक्टर प्रयोग करें तथा ट्रैक्टर डबल क्लच का होना चाहिए।

2. मशीन के प्रचालन के समय यदि फसल अवशेष मशीन में फंस जाते हैं तो डबल क्लच लीवर की सहायता से ट्रैक्टर की गति कम करें।
3. बिजाई के समय ट्रैक्टर का प्रचालन पहले के 'लो' या दूसरे के 'लो' गियर में करें।
4. गहराई नियन्त्रित करने वाले पहियों से सही गहराई निर्धारित करें।
5. मोड़ पर बिना गियर निकाले मशीन को ऊपर उठा लें।
6. टॉप लिंक की सहायता से मशीन की सीध समतल करें।
7. समय-समय पर मशीन के गियर बॉक्स में तेल का लेवल चेक करते रहें।

#### मशीन का रख-रखाव :

मशीन के प्रयोग से पहले सुनिश्चित करें कि सभी नट-बोल्ट कसे हुए हैं। अगर खूड बनाने वाले भाग (फरो ओपनर घिस गए हैं तो उन्हें बदल दें। अवशेष काटने वाले भाग (फलेल अगर टूट गए हैं तो नये लगा दें। बीज व खाद के बॉक्स साफ होने चाहिए ताकि बीज व खाद सही मात्रा में गिरता रहे। चैन को सही नियन्त्रित रखें तथा ग्रीस लगा दें। बैल्ट का तनाव सही होना चाहिए। हर दिन कार्य समाप्त होने के बाद मशीन को साफ करें व प्रत्येक घूमने वाले भाग में तेल या ग्रीस लगाएं।



#### (पेज 21 का शेष)

आकृषित क्षेत्रों में प्रतिस्पर्धात्मक पौधों जैसे पनवाड़ (कैसिया तोरा), चकौड़ा (कैसिया सिरेसिया), जंगली बाथु व जंगली सूरजमुखी के पौधों द्वारा इसकी वृद्धि एवं विकास को रोका जा सकता है।

पार्कों में घास की बार-बार कटाई करने से इसके बीज बनने व फैलने से रोका जा सकता है।

#### जैव नियंत्रण के लिए उपयुक्त मैक्सिकन बीटल के जातक व प्रौढ़

कृषित क्षेत्रों में गहरी जुताई से इसके बीजों को नष्ट किया जा सकता है क्योंकि इसके बीज 2 इंच से ज्यादा गहराई से उगने में सक्षम हैं। इसके अलावा शीघ्र बढ़ने वाली फसलें जैसे ढैंचा, ज्वार, लोबिया व बाजरा आदि की बिजाई करनी चाहिए।

आकृषित क्षेत्रों में शाकनाशक रसायनों जैसे ग्लायफोसेट 1-1.5 प्रतिशत (150-225 मि.ली. प्रति ढोली) या मेट्रीब्यूजिन 0.30 प्रतिशत (45 ग्राम प्रति ढोली) के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

जाईगोग्रामा बाइकोलाराटा नामक भूंडी को वर्षा ऋतु में कांग्रेस घास पर छोड़ देना चाहिए।

आवश्यक चेतना व सामूहिक प्रयास से हम इस नासूर से छुटकारा पा सकते हैं। अतः आओ मिलकर कांग्रेस घास मिटाने का संकल्प लें।





## बच्चों के विकास में आंगनवाड़ी केन्द्रों का योगदान

✍ पूनम रानी एवं बिमला ढांडा

पारिवारिक विकास एवं मानव संसाधन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बालक के सर्वांगीण विकास की प्रक्रिया में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान है। शिक्षा जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया है। मनुष्य आजीवन किसी न किसी रूप में शिक्षा प्राप्त करता रहता है। शिक्षा द्वारा बच्चे का बौद्धिक, शारीरिक, संवेगात्मक, व्यक्तिगत और सामाजिक विकास होता है।

बालक की शिक्षा पर उसके घर, परिवार एवं विद्यालय का प्रभाव पड़ता है। शिक्षा बच्चे के व्यक्तित्व में भी निखार लाती है। बच्चे की नींव मजबूत करने के लिए हरियाणा सरकार द्वारा समेकित बाल विकास योजना के तहत पूर्व स्कूल शिक्षा का तंत्र तैयार किया गया है। ये सभी अवस्थाएं महत्वपूर्ण हैं क्योंकि बच्चे के सम्पूर्ण विकास पर ये अवस्थाएं केन्द्रित होती हैं।

**बाल विकास :** इसके अन्तर्गत बच्चों के चहुंमुखी विकास के लिए सभी प्रकार की सुविधाएं देना है। इसके बारे में दूसरा विचार यह है कि विभिन्न अवस्थाओं में बच्चे का विकास किस तरह से होता है अथवा बच्चे किस प्रकार बढ़ते और सीखते हैं। बाल विकास की चार अवस्थाएं हैं :- (1) शारीरिक (2) संवेगात्मक (3) सामाजिक (4) ज्ञानात्मक। ये अवस्थाएं एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं। एक अवस्था में बच्चे का विकास दूसरी अवस्था के विकास में भी सहायक है। ये सभी अवस्थाएं महत्वपूर्ण हैं क्योंकि बच्चों के सम्पूर्ण विकास पर ये अवस्थाएं केन्द्रित होती हैं।

**आंगनवाड़ी :** आंगनवाड़ी का अर्थ है- स्वतंत्र स्कूल शिक्षा। आंगनवाड़ी का चुनाव आंगनवाड़ी वर्कर द्वारा किया जाना चाहिए, क्योंकि आंगनवाड़ी वर्कर उसी गांव की होती है। आंगनवाड़ी जिसमें बच्चों और माताओं को उनके अपने गांवों में या बार्ड में समेकित बाल सेवायें उपलब्ध कराई जाती हैं। आंगनवाड़ी में एक आंगनवाड़ी वर्कर नियुक्त की जाती है जिसकी सहायता एक हैल्पर करती है। आंगनवाड़ी में सभी सेवायें निःशुल्क प्रदान की जाती हैं।

**आंगनवाड़ी के उद्देश्य :-**

आंगनवाड़ी का उद्देश्य बच्चे का सम्पूर्ण विकास करना है। जहां पर ज्ञान स्वाभाविक तौर पर देखते हुए प्राप्त होता है।

**समेकित बाल विकास योजना के निम्नलिखित उद्देश्य हैं :-**

1. 6 वर्ष की आयु के बच्चों के पोषण और स्वास्थ्य की स्थिति को सुधारना।
2. मृत्यु रोग, कुपोषण की प्रवृत्ति को कम करना।
3. बच्चों का उचित मनोवैज्ञानिक, शारीरिक व सामाजिक विकास करना।
4. बच्चों को शिक्षा के लिए प्रोत्साहित करना।

(शेष पेज 26 पर)

## बच्चों के विकास में परिवार की भूमिका

✍ पूनम रानी एवं बिमला ढांडा

पारिवारिक विकास एवं मानव संसाधन विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

परिवार हमारे समाज की पहली इकाई है। लेकिन आधुनिकता और भौतिकता की दौड़ में आज परिवार छोटे और छोटे होते चले जा रहे हैं। किसी भी समाज की पहली इकाई परिवार है। दुनिया के हर समाज में परिवार को महत्व दिया गया है। परिवार कहीं छोटे तो कहीं बड़े हैं। कहीं पर परिवार में माँ-पिता और एक बच्चा ही है। कहीं पर पिता, माँ, बच्चों और दादा दादी को मिलाकर परिवार बना है। सम्मिलित परिवार में सब तरह के रिश्ते और उम्र के लोग होते हैं।

भारत में खासकर गांवों में परिवार बड़े हैं। लेकिन शहरों में परिवार छोटे हैं। शहरों में माँ-बाप के साथ छोटे से मकान में रहना पड़ता है। कुछ परिवारों में बच्चा अपने चाचा-चाची, माँ-पिता के साथ रहता है। परन्तु इन सभी परिवारों में मां बच्चे के बीच सबसे अधिक नज़दीकी रिश्ता है। बच्चे के विकास में भी मां की ही सबसे ज़्यादा भूमिका रहती है। बच्चा पैदा होने के बाद से मां के आंचल में रहते हुए भी सीखना शुरू कर देता है। मां की लोरियां उसे सिर्फ सुलाती ही नहीं उसके अन्दर प्रारम्भ से ही सुनने, ध्यान देने और समझने की क्षमता भी विकसित करती हैं। दूसरी ओर माँ-पिता या दादा-दादी, नाना-नानी द्वारा सुनायी गयी कहानियां उसका नैतिक, चारित्रिक विकास करने के साथ ही उसके अंदर मानवीय मूल्यों की नींव भी डालती हैं। इसीलिए मां को पहली शिक्षक भी कहा जाता है।

बच्चे के विकास पर उसके परिवार तथा वातावरण का बहुत ज़्यादा असर पड़ता है। कुछ खास बातें ऐसी हैं जो हर परिवार में पाई जाती हैं। चाहे वह छोटा हो या बड़ा परिवार और इन बातों का असर बच्चे के पूरे व्यक्तित्व, उसके विकास पर सीधे पड़ता है। इन बातों का परिवार के आर्थिक स्तर, गरीबी, अमीरी से कोई मतलब नहीं है।

**बड़े या संयुक्त परिवार के फायदे -**

1. बड़े परिवार में बच्चे को भरपूर प्यार और स्नेह मिलता है। यही स्नेह, प्यार बच्चे के अन्दर सुरक्षा की भावना को बढ़ाता है। उसके अन्दर संसार को देखने जानने की उत्सुकता बढ़ती है।
2. बच्चे का परिवार में एक अलग स्थान बन जाता है। उसे केवल एक समूह का हिस्सा नहीं माना जाता। हर व्यक्ति उसका खास ध्यान रखता है। इस तरह बच्चा परिवार के हर व्यक्ति का आत्मीय बन जाता है।
3. परिवार के साथ रह कर ही बच्चा चीजों को देखना, परखना सीखता है। उसे नयी बातें सीखने के अवसर मिलते हैं। वह धीरे-धीरे अपने कामों को समझने लगता है। इतना ही नहीं वह अपनी उम्र के मुताबिक ज़िम्मेदारी भी उठाना सीखता है।
4. बड़े परिवार में हर उम्र के लोग होते हैं। बच्चा हर समय देखता और सीखता रहता है। इसलिए हर उम्र के लोगों के साथ रहना उसके लिए फायदेमंद होता है। परिवार में तरह-तरह के लोगों से मिलने-खेलने तथा सीखने के अवसर मिलते हैं।
5. बच्चा हर समय और हर जगह सीखता रहता है। इसलिए उसे सिखाने या समझाने का कोई खास समय या स्थान नहीं बनाना चाहिए। (शेष पेज 27 पर)

# शरदकालीन मक्का की वैज्ञानिक खेती

नरेन्द्र सिंह, मेहरचन्द कम्बोज एवं महासिंह जागलान  
क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, करनाल  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा प्रदेश में मक्का की औसत पैदावार लगभग 11 क्विंटल प्रति एकड़ है जबकि अनुसंधान प्रयोगों एवं अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों में मक्का की पैदावार 28 से 32 क्वि./एकड़ भी ली गई है। शरदकालीन मक्का की काश्त हरियाणा प्रदेश में सफलतापूर्वक की जा सकती है। इस मौसम में फसल की अधिक अवधि होने के कारण पैदावार भी खरीफ की अपेक्षा 20-30 प्रतिशत ज्यादा होती है और शरदकालीन मक्का में कीटों व बीमारियों से नुकसान भी कम होता है। शरदकालीन मक्का की अधिक पैदावार लेने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है :

**उन्नत किस्म :** चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विकसित व सिफारिश की गई सभी किस्में एकल संकर किस्में हैं, जो तालिका 1 में दी गई हैं।

**खेत का चयन :** मक्का का अच्छा उत्पादन लेने के लिए इसे रेतीली दोमट व अर्द्ध दोमट तथा अच्छे जल निकास वाले खेतों में लगाना चाहिए।

**खेत की तैयारी :** खेत की 4-5 जुताइयां करके दो बार सुहागा लगाएं तथा खरपतवारों व ढेलों से रहित अच्छी बीज शय्या तैयार हो सके, जिससे बीज का अंकुरण शीघ्र व ज्यादा हो।

**बिजाई का समय :** समतल भूमि पर कतारों में बिजाई के लिए 25 अक्टूबर से 10 नवम्बर तक का सही समय पाया गया है, जबकि मेढों पर बिजाई के लिए 20 नवम्बर तक बिजाई की जा सकती है।

**बिजाई का तरीका :** समतल ज़मीन पर 10 नवम्बर तक कतारों में बिजाई करना अच्छी पैदावार देता है। मेढों पर बिजाई करने से अंकुरण ज्यादा होता है तथा फसल का सर्दी से बचाव होता है। बीज मेढों पर दक्षिण दिशा में 4-6 सें.मी. तथा समतल बिजाई में 3-4 सें.मी. गहरा बोंएं। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 75 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 20 सें.मी. रखें तथा पौधों की संख्या 26000 से 27000 पौधे प्रति एकड़ रखे जा सकें।

**बीज उपचार :** बीज जनित तथा मृदा जनित रोगों व कीट व्याधियों से बचाने के लिए बीज को बिजाई से पहले फफूंदनाशक तथा कीटनाशक से उपचारित करना चाहिए। दीमक व प्ररोह मक्खी के लिए इमिडाक्लोपरिड 7 ग्राम/किलो ग्राम बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। रोगों से बचाने के लिए थाइरम 4 ग्राम या कैप्टान 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें।

**बीज की मात्रा :** औसतन 7-10 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ डालने से वांछित पौधों की संख्या प्राप्त की जा सकती है।

**खाद व उर्वरक :** शरदकालीन मक्का से ज्यादा पैदावार लेने के लिए गोबर की खाद व रासायनिक उर्वरकों की अधिक मात्रा की ज़रूरत होती है।

किस्म का नाम	पकने का समय (दिन)	पैदावार (क्विंटल/एकड़)	गुण
एच एच एम-1	155-160	24-26	पौधे तगड़े और मध्यम ऊंचाई वाले भुट्टे लम्बे, दाने पीले व पिचके हुए।
एच एच एम-2	170-180	26-27	भुट्टा लम्बा, दाने लम्बे, सफेद व चमकदार, मक्का की मुख्य बीमारियों जैसे मैडिस पत्ती झुलसा रोग व रतुआ रोग के प्रति रोगरोधी
एच एम -4	160-165	27-29	पत्तियां हरे रंग की, भुट्टे लम्बे व मोटे, दाने उभरे हुए व नारंगी, बेबीकॉर्न के लिए सर्वोत्तम किस्म। बेबीकॉर्न पैदावार 6-8 क्विंटल/एकड़।
एच एम-5	175-185	28-30	पौधा मोटा व मज़बूत, पत्तियां चौड़ी एवं गहरे रंग की, भुट्टे लम्बे व बहुत मोटे, दाना सफेद व पिचका हुआ, रोग व पालारोधी किस्म।
एच एम -10	175-185	28-30	पौधे मज़बूत एवं पत्तियां गहरे हरे रंग की, दाने हल्के पीले व हल्के पिचके हुए।
एच एम -11	170-180	29-30	पौधे पतले, मज़बूत व मध्यम ऊंचाई वाले पौधे पतले होने के कारण प्रति एकड़ पौधों में वृद्धि की जा सकती है। भुट्टे लम्बे व मध्यम मोटाई वाले, दाने पीले व हल्के पिचके हुए, रोग रोधी किस्म।
एच क्यू पी एम-1	170-180	26-28	उच्च गुणवत्ता वाली संकर किस्म, पौधे लम्बे व मज़बूत, भुट्टे लम्बे व मध्यम मोटाई वाले, दाने पीले रंग के एवं हल्के पिचके हुए।
एच क्यू पी एम-5	175-185	27-29	उच्च गुणवत्ता वाली संकर किस्म, पौधे मज़बूत व पत्तियां हरे रंग की, भुट्टे लम्बे व मध्यम मोटाई के, दाने नारंगी रंग के।

अच्छी गली व सड़ी गोबर की खाद 6 टन प्रति एकड़ के हिसाब से प्रयोग करें। सामान्य दशाओं में एन पी के 72 : 24 : 24 किलोग्राम प्रति एकड़ के हिसाब से संतुलित मात्रा में डालें। गोबर की खाद व सारी फास्फोरस, पोटाश, जिंक सल्फेट व 1/3 नत्रजन खेत की तैयारी के समय तथा 1/3 भाग नत्रजन फसल के घुटनों की ऊंचाई के समय तथा 1/3 भाग नत्रजन फसल में झण्डे आने के समय दें।

**खरपतवार नियंत्रण :** खरपतवार फसलों से पौष्टिक तत्वों, पानी, प्रकाश

व जगह के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। खरपतवार नियंत्रण के लिए एट्राजिन 400-600 ग्राम प्रति एकड़ 200-250 लीटर पानी में घोलकर बिजाई के 1-2 दिन बाद या खरपतवार अंकुरण से पहले छिड़काव करना चाहिए। यदि इस अवस्था पर छिड़काव न किया गया हो तो इसका प्रयोग 20-30 दिन के बाद खड़ी फसल में भी किया जा सकता है।

**सिंचाई :** सिंचाइयों की संख्या मौसम, फसल काल, वर्षा व मिट्टी की नमी बनाए रखने की क्षमता पर निर्भर करती है। पहली सिंचाई हल्की करें ताकि मेढ़ों के ऊपर 2/3 ऊंचाई से ज्यादा न चढ़े। 30-35 दिन की फसल, फूल आने, दाना भरने व गुम्फावस्था सिंचाई के लिए बहुत संवेदनशील होती हैं। शीतकाल के दौरान फसल को पाले से बचाने के लिए भूमि को गीला रखना चाहिए।

**शरदकालीन मक्का की फसल के हानिकारक कीट :** शरदकालीन मक्का में कोई विशेष कीट का आक्रमण नहीं होता केवल गुलाबी तना छेदक व सैनिक कीड़ों का कभी-कभार आक्रमण हो सकता है। गुलाबी तना छेदक कीट की सूण्डियां सफेद गुलाबी रंग की होती हैं व पौधे के सभी भागों को नुकसान पहुँचाती हैं। इसके प्रकोप से पत्तों पर लम्बे सुराख बन जाते हैं जिसके बाद सूण्डियां तने में घुस कर पौधे की गोभ पर आक्रमण करती हैं, छोटी फसल में गोभ सूख जाती है व पौधा मर जाता है।

**शरदकालीन मक्का की हानिकारक बीमारियां :** रबी फसल में मुख्यतः सामान्य जंग की समस्या आती है। यह रोग पक्सिनिया सोरघ नामक फफूंद द्वारा लगता है। इसमें पत्तों पर जंग जैसे छोटे-छोटे धब्बे बन जाते हैं।

#### प्रबन्धन

1. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा सिफारिश की गई मक्का की रोग रोधी किस्में लगाएं।
2. 400 से 600 ग्राम मैकोजेब (डाईथेन एम 45) को 200-250 लीटर पानी में घोलकर 2-3 छिड़काव करने से फसल का बचाव रहता है।

**पक्षियों से देखभाल :** फसल पकने के अन्तिम 25 दिनों के दौरान इसका पक्षियों से बचाव करें। पक्षियों को गुलेल, पटाखों, ढोल, आदि से डराकर भगाया जा सकता है।

**कटाई व गहाई :** जब भुट्टे का ऊपर का छिलका भूरा पड़ जाये तो समझ लें कि फसल पककर तैयार हो गई है, हालांकि तने व पत्ते अभी हरे ही दिखाई देते हैं। मक्का की कटाई के लिए भुट्टों को खड़ी फसल से तोड़ लें और सुखा कर यंत्रचालित या हस्तचालित मशीन से गहाई करें।

**अन्तः फसलीकरण :** शीतकालीन मक्का में मक्का की पैदावार में बिना किसी नुकसान के अन्तः फसलें उगाना बहुत ही लाभदायक पाया गया है और साथ ही अन्तः फसलें मक्का को पाले से बचाने में काफी लाभदायक पाई गई हैं। आलू, मटर, मेथी, धनिया, पत्ता गोभी, फूल गोभी, गांठ गोभी, हरा प्याज, ब्रोकली, मूली, शलजम व ग्लैडयोलस इत्यादि अन्तः फसलें सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं। पूर्व-पश्चिम दिशा में निकाली गई मेढ़ों पर दक्षिण दिशा में मक्का तथा उत्तरी दिशा में अन्तः फसलें लगायें।

## टपका सिंचाई पद्धति में बहाव अवरोधन को क्लोरीन प्रक्रिया द्वारा दूर करने की विधि

✍ प्रमोद शर्मा एवं संजय कुमार

मृदा एवं जल अभियांत्रिकी विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

ड्रिप सिंचाई प्रणाली एक अत्याधुनिक एवं वैज्ञानिक सिंचाई पद्धति है। इस पद्धति के लाभ व उपयोगिता को देखते हुए सरकार द्वारा इस प्रणाली को काफी प्रोत्साहन दिया जा रहा है। इस विधि में पानी स्रोत से पम्प द्वारा फिल्टरों से होता हुआ बड़े से छोटे व्यास के विभिन्न पाइपों (पी. वी. सी. या एच. डी. पी. ई.) से प्रवाहित होते हुए शाखा (लेट्रल) पाइप पर लगे ड्रिपर (उत्सर्जक) द्वारा पौधों के जड़ क्षेत्र के पास दिया जाता है। ड्रिप सिंचाई प्रणाली का सम्पूर्ण लाभ लेने के लिए यह अतिआवश्यक है कि इस पद्धति को चलाने में आनेवाली समस्याओं व ज़रूरी रख-रखाव के बारे में समुचित जानकारी हो। अच्छे रख-रखाव के अभाव में ड्रिप प्रणाली में ड्रिपर के अवरोधन की समस्या उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है। नहर और तालाब के पानी में प्रायः कीटाणु एवं काई होती है। टपका सिंचाई प्रणाली में इस पानी का लगातार उपयोग करने से लेटरल और ड्रिपर में मिट्टी, लवण व काई जमा हो जाती है जिससे ये अवरुद्ध हो जाते हैं। क्लोरीन प्रक्रिया द्वारा अवरुद्ध शाखा (लेट्रल लाइन) और ड्रिपर को खोल सकते हैं। इसके लिये वेन्चुरी असेंबली, फर्टिलाइज़र टैंक या फर्टिगेशन पम्प को उपयोग में लाया जाता है। क्लोरीन प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार की क्लोरीनों में से किसी एक प्रकार की क्लोरीन का प्रयोग कर सकते हैं।

1. कैल्शियम हायपोक्लोराइट (घनरूप क्लोरीन, ब्लीचिंग पाऊडर)
2. सोडियम हायपोक्लोराइट (द्रवरूप क्लोरीन)
3. क्लोरीन गैस (वायुरूप क्लोरीन)

ब्लीचिंग पाऊडर सभी जगह आसानी से उपलब्ध होता है, इसलिये प्रायः इसको उपयोग में लाया जाता है। ब्लीचिंग पाऊडर खरीदते समय यह सुनिश्चित करें कि उसमें कोई मिलावट न हो। ब्लीचिंग पाऊडर में क्लोरीन की मात्रा ज्ञात कर लें। साधारणतः यह 50% तक होती है। यह क्लोरीन कीटाणुओं एवं काई का नाश करता है। क्लोरीन की कितनी मात्रा का उपयोग करना है यह जानने के लिये क्लोरीन पेपर का प्रयोग करना चाहिए। नियमित क्लोरीन प्रक्रिया करते समय क्लोरीन का घोल 10 से 20 पीपीएम तक होना चाहिए। पानी अगर अम्लधर्मी (पी.एच. मान 7 से कम) हो तो क्लोरीन प्रक्रिया तेज़ होती है।

#### ब्लीचिंग पाऊडर से क्लोरीन प्रक्रिया करने की विधि

1. सबसे पहले टपका संयंत्र के जिस प्रभाग में क्लोरीन प्रक्रिया करनी है, उस भाग में पंप चालू करने के बाद अंतिम ड्रिपर से पानी आने में कितना समय लगता है, यह नोट कीजिये।
2. टपका संयंत्र में क्लोरीन जिस साधन में डालना है, उसका चूषण दर (सक्शन रेट) निश्चित करना पड़ता और उसे निम्नलिखित सूत्र के अनुसार ज्ञात किया जा सकता है।





$$\text{चूषण दर (लीटर/घंटा)} = \frac{360 \times \text{संयंत्र प्रवाह दर (लीटर/सेकंड)} \times \text{प्रक्रिया के लिये कलोरीन की आवश्यक मात्रा (10 से 20 पीपीएम)}}{\text{ब्लीचिंग पाऊंडर मिश्रण (ग्रा./ली.)} \times \text{ब्लीचिंग पाऊंडर में मुक्त कलोरीन का प्रमाण (लगभग 50 प्रतिशत)}}$$

उदाहरण: एक किसान को संयंत्र के एक भाग में 20 पीपीएम की दर से क्लोरीन प्रक्रिया करनी है। संयंत्र का प्रवाह दर 50 घन मीटर/घंटा है। ब्लीचिंग पाऊंडर 100 ग्राम/लीटर की दर से देना है। तो वेन्चुरी का ज्ञात करो ?

$$\begin{aligned}\text{उत्तर: संयंत्र का प्रवाह दर} &= 50 \text{ घन मीटर/घंटा} \\ &= (50 \times 1000)/3600 \\ &= 13.88 \text{ लीटर/सेकंड}\end{aligned}$$

$$\begin{aligned}\text{चूषण दर (लीटर/घंटा)} &= (360 \times 13.88 \times 20)/(100 \times 50) \\ &= 19.98 \text{ लीटर/घंटा}\end{aligned}$$

चूषण दर लगभग 20 लीटर/घंटा होना चाहिए।

3. चूषण दर ज्ञात कर लेने के बाद क्लोरीन प्रक्रिया के लिये आवश्यक ब्लीचिंग पाऊंडर की मात्रा निम्नलिखित सूत्रों के अनुसार ज्ञात किया जा सकता है।

$$\begin{aligned}\text{ब्लीचिंग पाऊंडर का मिश्रण (लीटर)} &= \frac{\text{चूषण दर (लीटर/घंटा)} \times \text{क्लोरीन प्रक्रिया में लगने वाला समय (मिनट)}}{60} \\ \text{ब्लीचिंग पाऊंडर (ग्राम)} &= \frac{\text{ब्लीचिंग पाऊंडर का मिश्रण (लीटर)} \times \text{ब्लीचिंग पाऊंडर (ग्राम/लीटर)}}{60}\end{aligned}$$

उदाहरण: क्रमांक 2 में दिए उदाहरण के अनुसार विभाग के अंतिम ड्रिपर में पानी आने में 10 मिनट का समय लगता है तो क्लोरीन प्रक्रिया के लिये कितना ब्लीचिंग पाऊंडर लगेगा ?

$$\begin{aligned}\text{उत्तर: ब्लीचिंग पाऊंडर का मिश्रण, लीटर} &= 20 \text{ (लीटर/घंटा)} \times 10 \text{ मिनट}/60 \\ &= 3.33 \text{ लीटर}\end{aligned}$$

$$\begin{aligned}\text{ब्लीचिंग पाऊंडर (ग्राम)} &= 3.33 \text{ लीटर} \times 100 \text{ ग्राम/लीटर} \\ &= 333 \text{ ग्राम ब्लीचिंग पाऊंडर की ज़रूरत है।}\end{aligned}$$

- निर्देश क्रमांक 3 के अनुसार ब्लीचिंग पाऊंडर की आवश्यक मात्रा का द्रव्य तैयार करें। किसी छड़ी की सहायता से ब्लीचिंग पाऊंडर को अच्छी तरह घोल लें।
- द्रव को सामान्य रूप से 15 मिनट तक स्थिर होने दें।
- इसके पश्चात द्रव को साफ तथा पतले कपड़े से छान लें। जिससे नीचे जमे हुए पदार्थ को अलग किया जा सके।
- छाने हुए क्लोरीन युक्त पानी को वेन्चुरी अथवा फर्टिलाइज़र टैंक से टपका संयंत्र में छोड़ें।
- सबसे नज़दीकी ड्रिपर से क्लोरीन युक्त पानी बाहर निकलने पर क्लोरीन पेपर से क्लोरीन युक्त पानी का पीपीएम जांच लें। क्लोरीन का प्रमाण 20 पीपीएम से अधिक होने पर वेन्चुरी असेंबली के वाल्व को खोलकर क्लोरीन की मात्रा को कम करें।
- अंतिम ड्रिपर के पास क्लोरीन की मात्रा को भी नाप लें। क्लोरीन युक्त पानी

के अंतिम ड्रिपर से निकलने के बाद सबमेन वाल्व अथवा पंप बंद करें।

- सिंचाई संयंत्र के लैटरल व पाइप लाइन में क्लोरीन युक्त पानी आने से जमने वाली काई, जीवजंतु आदि को खत्म होने में साधारणतः 18-24 घंटे लगते हैं।
- 18-24 घंटे बाद लैटरल के अंतिम छोर को खोलकर फ्लश वाल्व खोलें और पंप चालू करें जिससे यंत्र में जमा हुआ कचरा, काईयुक्त पानी बाहर फेंका जा सके।

**क्लोरीन प्रक्रिया करते समय नीचे दिये गये निर्देशों का ध्यान अवश्य रखें :**

- क्लोरीन के ज़्यादा मात्रा में घुले होने के कारण वह पानी पीना हानिकारक है, इसलिए यह पानी बच्चों और पालतू पशु की पहुंच से दूर होना चाहिए।
- क्लोरीन प्रक्रिया करने से पहले सैंड फिल्टर को बैकवॉश कर लें जिससे सैंड फिल्टर में अटका हुआ कचरा संयंत्र में नहीं जाएगा।
- क्लोरीन प्रक्रिया के समय क्लोरीन पानी से भरी टंकी या बाल्टी पर झुके नहीं। क्लोरीन गैस को सांस द्वारा शरीर में न जाने दें।
- क्लोरीन प्रक्रिया खत्म होने पर फिल्टर की जाली व उर्वरक टैंक आदि साफ पानी से धो लें।



(पेज 23 का शेष)

- अपने बच्चों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं की देखभाल के लिए माताओं की क्षमताओं में वृद्धि करना।
- बाल विकास को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न विभागों के कार्यों व नीति में तालमेल स्थापित करना।

**आंगनवाड़ी योजना की विशेषताएं :-**

**राष्ट्रीय बाल नीति :** 1974 के प्रस्तावों के अनुसरण में राज्य के बच्चों एवं महिलाओं विशेष रूप से गर्भवती एवं दूध पिलाती माताओं को बेहतर जीवन के लिए मूलभूत बाल विकास सेवा कार्यक्रम की नीति अपनाई गई। समेकित विकास योजना की विशेषताएं निम्न हैं :-

- |                                 |                    |
|---------------------------------|--------------------|
| 1. पूरक पोषाहार                 | 2. स्वास्थ्य जांच  |
| 3. संदर्भित सेवाएं              | 4. टीकाकरण         |
| 5. पोषाहार एवं स्वास्थ्य शिक्षा | 6. महिला सशक्तिकरण |
| 7. अनौपचारिक पूर्व स्कूल शिक्षा |                    |

इस प्रकार से आंगनवाड़ी बच्चों के विकास के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुई क्योंकि इसके द्वारा बच्चों की स्वास्थ्य एवं स्वच्छता जांच, शारीरिक व्यायाम, आहार आदि का प्रबन्ध किया जाता है। आंगनवाड़ी द्वारा बच्चों के लिए शारीरिक विकास की क्रियाएं भाषा विकास संबंधी क्रियाएं, भावनात्मक तथा रचनात्मक विकास, सामाजिक विकास एवं बौद्धिक विकास करवाया जाता है। इस प्रकार से बच्चों के विकास में आंगनवाड़ी केन्द्रों का अहम योगदान है।



# कृषि व्यवसाय में हिसाब-किताब का महत्व

अशोक ढिल्लों, रमेश कुमार एवं नीरज पंवार<sup>1</sup>

कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

खेती आजकल किसानों के लिए केवल आजीविका का एक साधन मात्र न होकर व्यवसाय का रूप धारण कर चुकी है। किसानों को अपने फार्म का प्रबन्ध सुचारू रूप से करने के लिए बहुत से निर्णय लेने पड़ते हैं। क्योंकि किसी भी व्यवसाय को लाभप्रद बनाने के लिए उसके सब पहलुओं पर उचित निर्णय लेना महत्वपूर्ण है। इस समय कृषि व्यवसाय को केवल मानव व पशु-श्रम तथा अपनी ही निजी साधनों द्वारा लाभप्रद नहीं बनाया जा सकता क्योंकि आज कृषि व्यवसाय की सफलता किसान के अपने साधनों पर इतना निर्भर न होकर खरीदे गए साधनों जैसे उन्नत किस्म के बीज, रासायनिक खाद, कीटनाशक व खरपतवार नाशक दवाइयाँ, उन्नत किस्म के कृषि यन्त्र, बिजली व तेल, उचित भंडारण आदि पर ज़्यादा निर्भर करती हैं अन्य किसी व्यवसाय की तरह खेती में बगैर किसी हिसाब-किताब या लेखा-जोखा के काम नहीं चल सकता क्योंकि खेती के कार्यों का निर्णय व इसकी अनिश्चिता अन्य व्यवसायों से ज़्यादा है। इसके अतिरिक्त कृषि के खरीदे गये साधनों के ऊपर निर्भरता के लिए भी हिसाब-किताब ज़रूरी हो जाता है। अतः इस व्यवसाय को अन्य किसी भी व्यवसाय की तरह लाभप्रद बनाना है तो खर्च और आमदनी का हिसाब किताब रखना ज़रूरी हो जाता है ताकि किसी भी समय लागत और आमदनी का ब्यौरा मालूम हो सके।

अगर किसान आय और व्यय का सही-सही आंकलन करें तो लागत और आमदनी का ब्यौरा मालूम हो सकता है, इससे कृषि व्यवसाय का आर्थिक विश्लेषण करके अपने व्यवसाय के कमज़ोर पहलुओं को सुचारू करने में मदद मिल सकती है जिससे भविष्य में अधिक लाभ लिया जा सकता है।

**फार्म का हिसाब-किताब रखने के लाभ मुख्यतः इस प्रकार हैं :-**

1. किसी भी समय अपने फार्म की आर्थिक अवस्था मालूम की जाती है।
2. विभिन्न व्यवसायों जैसे फसल उत्पादन, पशुपालन, मुर्गी या सूअर पालन, आदि में तुलनात्मक लाभ और लागत हो सकती है और अधिकतम लाभप्रद व अन्य व्यवसायों का मिश्रण अपनाया जा सकता है।
3. विभिन्न व्यवसायों के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर कम लाभप्रद व्यवसाय बन्द किये जा सकते हैं।
4. पिछली फार्म/फसल योजनाओं के विश्लेषण के आधार पर ऐसी भावी फसल/फार्म योजनाएं बनाई जा सकती हैं जो फार्म की आमदनी बढ़ा सकती हैं।
5. फार्म के हिसाब-किताब से फसलों की विभिन्न किस्मों, विभिन्न जातियों के पशु आदि से आय और व्यय का पता लग सकता है जिसके आधार पर विभिन्न फसलों की किस्में, विभिन्न जाति के पशुओं में से जो अधिक लाभप्रद हों (और फसल चक्र में ठीक बैठती हों) का चयन हो सकता है।

<sup>1</sup>सहायक वैज्ञानिक, कृषि अर्थशास्त्र विभाग, चौ.च.सिंह.ह.कृ.वि., हिसार।

6. हिसाब-किताब से फार्म पर उपलब्ध साधनों को किन-किन व्यवसायों में कितनी मात्रा व किस समय पर प्रयोग करना है ताकि उचित लाभ उठाया जा सके।
7. हिसाब-किताब रखने से यह आसानी से पता लग सकता है कि कौन सा साधन (उर्वरक, बीज, दवाएं, कृषि यन्त्र, मजदूरों आदि) कब और किस मात्रा में प्रयोग करना है। इसके लिए ठीक समय व मात्रा से पूंजी का प्रबंध भी किया जा सकता है। इस प्रकार किसी भी साधन या पूंजी के बेकार प्रयोग को रोका जा सकता है।
8. बैंक या दूसरी संस्थाओं से ऋण सुविधाएं प्राप्त करने के लिए आधार मिल सकता है।
9. अपने व्यवसाय की पूरी जानकारी रहती है।
10. अपने आस-पास के दूसरे किसानों से अपनी खेती की क्षमता की तुलना की जा सकती है और एक दूसरे के व्यवसायों की अच्छाइयों व कमियों का पता लगाकर उनमें सुधार किया जा सकता है।
11. पिछले वर्षों के हिसाब-किताब से विभिन्न फसलों (अनाज, सब्जियां चारा, फलदार वृक्ष) से होने वाले आय-व्यय से ये फैसला किया जा सकता है कि कौन-सी फसलें लम्बे समय तक आमदनी देने वाली हैं।
12. विस्तार कार्यकर्ताओं से फार्म प्रबन्ध में सुधार के सुझाव लिए जा सकते हैं। इस प्रकार के आंकड़े, कृषि अनुसंधान कार्यों की योजनाएं बनाने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

इस प्रकार हिसाब-किताब रखना कृषि व्यवसाय को सुचारू रूप से चलाने में काफी सहायक हो सकता है।



(पेज 23 का शेष)

6. बच्चा परिवार में कई लोगों से घिरा रहता है जो उसमें रूचि लेते हैं और जीवन की गाड़ी चलाने में उसके मार्गदर्शक बनते हैं। बच्चा उनके ही व्यवहार से अलग-अलग उम्र के लायक बातें सीखता है। साथ ही अनुशासित होना भी सीखता है।
7. बच्चा अपने परिवार में बोलचाल की भाषा सुनता है और नकल करके उसे बोलने की कोशिश करता है। इस प्रकार तरह-तरह के प्रयोगों द्वारा परिवार में ही बोली का अभ्यास भी होता रहता है।
8. बच्चा नकल करके देखकर, सुनकर सीखता है। अतः परिवार के साथ रहने पर उसे बहुत कुछ अपने आप ही आ जाता है।
9. परिवार में रहने से बच्चे की कल्पना एवं रचना शक्ति बढ़ती है। वह अक्सर दूसरे बच्चों के साथ मां-पिता की नकल करता है। दादा-दादी बनकर खेलता है। इस तरह वह परिवार, समाज की तरह-तरह की भूमिकाएं निभाना सीखता है। उसे परिवार या समाज के प्रति ज़िम्मेदारियों का अहसास दिलाने की यह पहली सीढ़ी भी कही जा सकती है।

परिवार बच्चों को सीखने या आगे बढ़ने के जो अवसर देता है, वह उसे किसी भी जगह नहीं मिल सकते। किसी स्कूल में एक अध्यापक के साथ बच्चों का पूरा समूह होता है। वह हर बच्चे पर पूरा-पूरा ध्यान नहीं दे सकता। इसलिए बच्चे को विकसित होने के लिए परिवार जैसा अच्छा माहौल कहीं नहीं मिल सकता।



# भावान्तर भरपाई योजना

भारत सिंह घणघस, संदीप भाकर एवं प्रदीप कुमार चहल

विस्तार शिक्षा विभाग

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कृषि व किसानों को अनिश्चतताओं एवम जोखिमों से उबारने के लिए भारत सरकार द्वारा वर्ष 2016 में संचालित प्रधान मंत्री फसल बीमा योजना तथा हरियाणा सरकार द्वारा 2017-18 में लागू की गई भावान्तर भरपाई योजना बहुत ही अनुकरणीय हैं। सब्जी उत्पादक किसानों के लिए उपयुक्त एवं लाभकारी जानकारी के लिए भावान्तर भरपाई योजना का विवरण निम्नलिखित है:

बाज़ार में फल व सब्जियों के कम भाव के दौरान बागवानी उत्पादकों के जोखिमों को कम करने हेतु हरियाणा सरकार द्वारा भावान्तर भरपाई योजना लागू की गयी है जिसके उद्देश्य निम्न प्रकार हैं

1. फलों - सब्जियों और अन्य भंगुर होने योग्य फसल उत्पादकों को बाज़ार में कम कीमतों के दौरान प्रोत्साहित कर जोखिम को कम करना
2. फसलों के लिए 48000/- रुपये से 56000/- रुपये प्रति एकड़ की आय सुनिश्चित करना
3. अपने उत्पाद के विपणन में उत्पादकों की सुविधा के लिए कॉर्पस फंड बनाने हेतु
4. उत्पादकों की कृषि विविधीकरण संबल में मदद करना

## कार्यनीति:

- योजना के तहत लाभ प्राप्त करने के लिए किसानों को ई-पोर्टल पर पंजीकरण करना होगा। सर्व सेवा केंद्र/ई-दिशा केंद्र/मार्किटिंग बोर्ड/बागवानी विभाग/कृषि विभाग और इन्टरनेट कियोस्क पर पंजीकरण सुविधा उपलब्ध होगी
- पंजीकरण के बाद, बागवानी विभाग के विस्तार अधिकारियों की सहायता से राजस्व अधिकारी फसल के तहत क्षेत्र को प्रमाणित करने के लिए प्रत्यक्ष सत्यापन करेंगे
- हरियाणा राज्य कृषि विपणन बोर्ड द्वारा किसानों के खाते में प्रोत्साहन राशि-वितरण करना

## कार्यप्रणाली:

- इस योजना के तहत, किसानों को थोक बाज़ारों में अपने उत्पादन की कम कीमतों के दौरान प्रोत्साहन दिया जाएगा।
- बागवानी फसलों के लिए पहले चरण में इस योजना के तहत आलू, प्याज़, फूलगोभी और टमाटर पर विचार किया गया है।
- प्रोत्साहन के लिए जे-फार्म पर बिक्री अनिवार्य होगी।
- जे-फार्म पर बिक्री तथा निर्धारित उत्पादन प्रति एकड़ (जो भी कम होगा) को भाव के अंतर से गुणा करने पर प्रोत्साहन देय होगा।
- बिक्री की अवधि के दौरान यदि फसल उत्पादन का थोक मूल्य संरक्षित मूल्य से कम मिलता है, तो किसान भाव के अंतर की भरपाई के लिए पात्र होगा।
- प्रोत्साहन राशि किसान के आधार लिंकड बैंक खाते में बिक्री के 15 दिन के अन्दर जारी कर दी जाएगी।

- संरक्षित मूल्य व बेंचमार्क उपज उत्पादक प्रोत्साहन के लिए निर्धारित पात्रता हैं।
- बेंचमार्क अवधि “जिसमें उत्पाद बाज़ार में निर्धारित बुवाई अवधि और बेंचमार्क फसल अवधि और बिक्री अवधि शामिल है, जिसके दौरान उत्पादक प्रोत्साहन के लिए योग्य होंगे, राज्य स्तरीय समिति द्वारा निर्धारित किया गया है।
- इसके अलावा, पंजीकरण के लिए फसल आधारित समय सीमा तय की गई है।
- केवल पंजीकृत निर्माता ही इस योजना के तहत पात्र होंगे।
- उत्पादक भूमि मालिक, लीज़ धारक/पट्टेदार या किराये पर काश्तकार हो सकता है।
- क्षेत्र प्रमाणीकरण/पंजीकरण की तारीख को बंद करने के बाद राजस्व अधिकारियों द्वारा बागवानी विस्तार/फील्ड अधिकारी या तृतीय पक्ष मनोनीत द्वारा विधिवत सहायता से 15-30 दिनों (फसल के आधार पर) पूरा होने के सत्यापन पर आधारित होगा।

पंजीकरण अवधि, सुरक्षात्मक कीमतें, बेंचमार्क उपज इत्यादि के बारे में संक्षिप्त जानकारी निम्नानुसार है:

## क) सुरक्षात्मक कीमतें और बेंचमार्क उपज

क्रम संख्या	फसल	संरक्षित मूल्य (रुपये प्रति क्विंटल)	निर्धारित उत्पादन (क्विंटल/एकड़)
1	आलू	400	120
2	प्याज़	500	100
3	टमाटर	400	140
4	फूलगोभी	500	100

## ख. बेंचमार्क बुवाई अवधि, कटाई और बिक्री अवधि

क्रम संख्या	फसल	बेंचमार्क बुवाई	अवधि बेंचमार्क फसल कटाई और थोक बाज़ार में बिक्री की अवधि
1.	आलू	10 अक्टूबर-10 नवम्बर	फरवरी - मार्च
2.	प्याज़	20 दिसम्बर-31 जनवरी	अप्रैल - मई
3.	टमाटर	15 दिसम्बर-31 जनवरी	अप्रैल -15 जून
4.	फूलगोभी	15 नवम्बर-15 दिसम्बर	फरवरी - मार्च

## ग. पंजीकरण, सत्यापन, अपील और बिक्री समय सीमा

फसल	पंजीकरण अवधि	सत्यापन अवधि	क्षेत्र सत्यापन के विरुद्ध अपील अवधि		बिक्री अवधि
	आरंभ तिथि	समापन तिथि	तक	तक	दौरान
आलू	10 अक्टूबर	30 नवम्बर	31 दिसम्बर	15 जनवरी	फरवरी - मार्च
प्याज़	20 दिसम्बर	15 फरवरी	15 मार्च	25 मार्च	अप्रैल- मई
टमाटर	15 दिसम्बर	15 फरवरी	15 मार्च	25 मार्च	अप्रैल -15 जून
फूलगोभी	15 नवम्बर	31 दिसम्बर	15 जनवरी	25 जनवरी	फरवरी - मार्च





# कृषि विकास में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकियों का महत्व

सूबे सिंह, प्रदीप कुमार चहल एवं राजेश कुमार  
विस्तार शिक्षा विभाग  
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

विकासशील देशों में अधिकांश किसान ग्रामीण इलाकों में रहते हैं, वे कृषि गतिविधियों को पूरा करने के लिए आवश्यक प्रौद्योगिकी और महत्वपूर्ण कृषि सहायता सेवाओं से अपरिचित हैं। मोबाइल प्रौद्योगिकी और चलते-फिरते बेतार यंत्रों की शुरुआत ने विकसित और विकासशील दोनों देशों में कृषि के क्षेत्र में उपयोग किए जाने वाली नित नई सेवाओं को प्रयोग करने के लिए प्रेरित किया है। एक ओर जहां विकासशील देशों में कृषि और खाद्य आपूर्ति शृंखलाओं के लिए विस्तार और सलाहकार सेवाएं छोटे-छोटे किसानों के लिए आधारभूत हैं, वहीं विकसित देशों में, जहां श्रम बल बहुत कम है, मशीनीकरण अधिक उन्नत है। इसके साथ ही विकासशील देशों में मानव शक्ति का एक बड़ा हिस्सा कृषि में कार्यरत है एवं कृषि मोबाइल प्रौद्योगिकी में बाजार की जानकारी जैसे व्यापारिक सुविधाएं, मौसम संबंधी जानकारी, साथी किसानों से सीखना और वित्तीय सेवाओं जैसे भुगतान, ऋण और बीमा आदि को माध्यम बनाकर कृषि से जोड़कर लाभान्वित होते हैं।

कृषि में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग सूचना प्रौद्योगिकी प्रणाली, क्लाउड कंप्यूटिंग, ऑनलाइन शिक्षा और मोबाइल फोन के प्रसार की मदद से सबसे गरीब समुदायों के किसानों को कृषि संबंधी जानकारी फैलाना आसान हो गया है। किसान कृषि में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के सबसे अधिक लाभकारी पहलुओं में से एक मोबाइल सन्देश के पंजीकरण द्वारा वर्तमान समय में फसल की कीमतों, फसल की खेती और मौसम पर स्थानीय जानकारी भी प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही उसके वास्तविक मूल्य-निर्धारण एवं रुपए के विभिन्न संसंधानों के उपयोग आदि के बारे में भी जान सकते हैं। विस्तार सेवाओं में आम तौर पर लागू प्रौद्योगिकियां :

**सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) :** इसके उपयोग से किसान समय पर और उपयुक्त जानकारी प्राप्त कर उचित दामों पर वैश्विक बाजार में अपना उत्पाद बेच सकते हैं जिससे कृषि आय में सुधार करने में मदद मिल सकती है।

**रेडियो और टेलीविज़न :** वर्तमान समय में किसानों की संचार तकनीकों तक सीमित पहुंच है, जबकि 70 प्रतिशत ग्रामीण घरों में रेडियो की पहुंच है। कृषि विस्तार में रेडियो और टेलीविज़न ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है जो आज भी सतत जारी है। इन मुख्य सेवाओं के संपर्क से किसानों को कई लाभ भी मिल रहे हैं। कृषि से जुड़े विभिन्न रेडियो चैनल के प्रसारणों ने भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

**मोबाइल :** दुनिया के मोबाइल फोन उपभोक्ताओं में से लगभग 70 प्रतिशत विकासशील देशों में हैं। यह संचार का कम लागत में सुलभ माध्यम है। ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक तंत्र को मजबूत करने के साथ यह कृषि से सम्बंधित जानकारी लेने का माध्यम भी बन रहा है। मोबाइल फोन अब सिर्फ बातचीत एवं संदेश देने तक सिमित नहीं रह गया है, अपितु इससे सदृश संदेश (शेष पृष्ठ 30 पर)

## T & V System : An Effective Tool for Transfer of Technology

Surender Singh, Bhupender Singh and Sube Singh<sup>1</sup>  
Saina Nehwal Institute of Agricultural  
Technology Training and Education  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Agriculture is the supplier of food to the whole world as well as raw material for thousand industries. Agriculture don't only focus on growth consideration but it is also providing jobs for increasing labor force, improving the quality of life and checking the phenomenon of urbanization. Keeping these facts in mind and potentiality of available farm technology, the gaps in yield between farmers' fields and experimental research farms, the Haryana state accepted the new system of extension methodology (T&V System) for linkage between research, extension and transfer of technology to the farmers. The system was introduced in 1974 with the World Bank assistance. The working objectives of the system are as follows :

1. To effectively utilize the services of extension workers of agricultural production by putting them under a single unified command with intensive time-bound programme and management system.
2. To improve the skills of extension workers and imbibe in them the confidence for carrying out messages effectively through regular monthly workshop and fortnightly trainings.
3. To ensure the regular and continuous flow of messages of technology from Research Stations to Farmers' Field by reducing the communication gap through close liaison between researchers and farmers through extension workers.
4. To effectively motivate the farmers for adopting appropriate and improved technology at a proper time.

To achieve the above objectives of the system and on the basis of the points found during fortnightly trainings, monthly workshops and experiences gained at different occasions the following trainings needs are required for the field functionaries.

Agriculture Development Officers (A.D.Os) and Block Agriculture Officers (B.A.Os)

1. A.D.Os need training for selecting the contact farmers who are popular in the village preferably by sociometry method.
2. It has been experienced that most of the A.D.Os are not familiar with the methods to contact and convince the farmers. Therefore, developing rapport with the farmers is another aspect of the training.

<sup>1</sup>DES (Extension Education), Krishi Vigyan Kendra, Fatehabad

3. As "Seeing is believing" and "Learning by doing" is the basic principle of Extension Education, the knowledge of conducting method demonstrations and field trials is essential for every extension worker. It is suggested that proper training in laying out field trials, holding farmers' meetings and conducting method demonstrations is desirable.
4. There is a need of a small training kit to each basic worker for facilitating his work. This kit should at least contain samples of variety of different crops, specimen of diseased plant, insect pests and weeds. This kit will help A.D.Os to convey the message correctly and effectively.
5. The duty assigned to the B.O.A is the supervision and guidance of base level workers in proper transfer of the technology to the contact farmers. They should be technically more skilled and better trained in extension methods as well as in supervision work.

#### **Subject Matter Specialist and Sub Divisional Agricultural Officer**

Most of these officers working under this system for the last 4-5 years have attained desired knowledge and skill regarding various operation of crop production but there are other spheres of their job where there is still need to pay more attention.

1. The SMS has to play the role of the trainer while imparting fortnightly training to the A.D.Os and B.O.As and his training of preparation of lesson plan, handouts and use of visual aids like chart, graph, slide and specimen will help him in doing this duty successfully.
2. SMS and SDAOs are the key personnel and work as the bridge between the scientists and ADOs. They also require to support the BAOs and ADOs by providing necessary farm literature, etc. Their training in communication, preparing farm literature, writing reports etc. will help them in conveying message properly and improve their image in the eyes of superiors, colleagues and clientele.
3. A mini crop museum is also needed at each sub division where samples of varieties-seeds, various fertilizers, insecticides, fungicides, weedicides and specimens of crop varieties, diseased plants, insect-pests, plant protection equipments and commonly recommended implements, etc. are properly displayed. There should be some panels to display photographs showing the activities of that sub-division and literature prepared by SMS. A training about establishing and maintaining such museum will help SMSs in conveying their messages and showing their good achievements to the visitors and ultimately motivate them to work more. This facility can also be used in the fortnightly training of ADOs.
4. Training of maintaining a small library with some popular farm magazine, journals and newspapers will further be helpful in increasing the efficiency of SMSs and SDAOs.

#### **Deputy Director Agriculture and other Senior Officers**

The training is an integral part of all level functionaries under the T and V system. The DDA and other supervisory staff have to play key role in making these training more effective and purposeful. They are responsible for the proper feedback to the university scientists for making monthly need oriented training workshop, providing facilities to SDAOs for making the fortnightly training useful and therefore training in "Training Methodology" is essential for them. Providing high quality inputs and their timely supply matching with the advisory system is another changing task before these officers and training in entrepreneurship is very much desirable in order to increase their managerial efficiency. As there are little avenues for further promotion, training in "Achievement Motivation" will definitely encourage them to take initiative in solving the day to day problems.

It may be concluded that if the training needs are fulfilled at each level, the extension functionaries will definitely develop the confidence and self reliance in discharging their duties in much better way. This will ultimately improve their image in the eyes of the farmers for whom the whole system is designed.



(पृष्ठ 29 का शेष)

भी प्राप्त होते हैं। मोबाइल फोन कुछ अनूठे अवसर प्रदान करता है जिनमें ग्रामीण समुदाय को सीधे वैश्विक संचार माध्यम प्रदान करना, ग्रामीण रेडियो जैसे स्थापित ग्रामीण मीडिया के प्रभाव को बढ़ाना व स्थानीय सामग्री उपलब्ध करा रही ग्रामीण सेवाओं को और अधिक कुशल बनाना शामिल है।

**समन्वय :** परस्पर संवादात्मक सदृश परामर्श सम्बंधित वैज्ञानिक सूचना लेने के लिए वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग सेवा का उपयोग किया जाता है। किसान कृषि से सम्बंधित परेशानियों को विस्तार से समझकर इसका समाधान प्राप्त कर सकते हैं। परस्पर संवादात्मक वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग सेवा की सुविधा गांव के कृषि विज्ञान केंद्र पर उपलब्ध है।

**मोबाइल इंटरनेट :** स्मार्ट फोन सेवा के माध्यम से जानकारी प्राप्त व दी जाती है जैसे कृषि व्यवसाय, मूल्य जानकारी, ई-समाचार, आदि।

**मोबाइल एप्स :** किसानों के लिए उपयोगी कई तरह की मोबाइल एप्स गूगल प्ले स्टोर पर उपलब्ध हैं इनके द्वारा स्मार्टफोन पर महत्वपूर्ण व्यावसायिक और कृषि फसलों के उत्पादन प्रौद्योगिकी की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। ये उत्पादन पहलुओं, कटाई उपरांत प्रौद्योगिकी, प्रसंस्करण संभावनाओं और बाजार की जानकारी भी प्रदान करते हैं। किसान खेती से जुड़ी सभी तरह की जानकारीयां, मौसम के हाल और उसके अनुसार बदलाव की सूचनाएं, मंडी भाव, किसानों के लिए सरकार की घोषणाएं, कीटनाशकों की उपयोग संबंधी सलाह, फसल पोषण प्रबंधन इत्यादि जानकारीयां एप के माध्यम से प्राप्त कर सकते हैं।

वैज्ञानिक समय-समय पर उन्नत बीजों व कृषि यंत्रों का निर्माण करते हैं, संचार माध्यम वैज्ञानिक खोजों को किसानों तक पहुंचाने के लिए एक एक सशक्त माध्यम का कार्य करते हैं। कृषि जगत में किए गए शोधों के उचित परिणाम लेने के लिए सूचना और संचार माध्यमों का बहुत बड़ा योगदान है।



# Post-Harvest Managements of Seed Spices

✍️ **Preeti Yadav, Manoj Kumar and S.K. Tehlan**  
Department of Vegetable Science  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

The seed spices constitute an important group of agricultural commodities and take part to enhance or maintain our national economy. Historically, India has always been recognized as a land of spices. In our country, the crops covered as major seed spices are cumin, coriander, fennel, fenugreek, dill and ajwain which contribute more than 95 per cent towards area and production. Gujarat state dominantly produces cumin and fennel seed spices while coriander and fenugreek are important in Rajasthan. India exports raw as well as value-added items to nearly seventy countries in the world and meets around 45% of the global demand. For exporting the seed spices, quality is the most important criterion. Various post-harvest operations like harvesting, processing, packing, cleaning and grading, etc. plays an important role to maintain the quality of spices to the specifications of international trade. So, to meet the challenge and enhance the export quantity of spices precautions have to be taken from the harvesting, primary processing which includes, threshing, drying, cleaning, grading and packaging.

India exports raw as well as value-added items to nearly 70 countries in the world and meet around 45% of the global demand and earns 361.5 crores of foreign exchange. For exporting the seed spices, quality is the most important criterion. The quality of seed spices is assessed by mean of its intrinsic quality such as moisture, volatile oil, oleoresins content, major chemical constituents as well as extrinsic quality e.g. size, appearance and colour. The produce must be safe, free from any health hazards substances and contaminants. The contaminants can be classified into three categories.

Physical contaminants	Immature or shriveled seed, berries, insect infested product, presence of live or dead insect excreta of animals
Chemical contaminants	Added colour material, preservatives, antioxidants, fumigants, aflatoxin, Pesticides/insecticide residue
Microbial contaminants	Presence of salmonella, <i>E.coli</i> , yeast and mould

**Stage of Harvest :** Harvesting is one of the major important factors that determines the quality of the produce. The major deterioration and post harvest losses took place at this stage. The objective of proper harvesting is to enhance the process able character of produce and to achieve the quality and safe raw material for processing. The stage of harvest varies from crop to crop. In coriander crop, it matures in 90 to 135 days. The stage of maturity of the fruit at harvest is when central umbels are about to attain yellow colour. Cumin is harvested about 100-110 days,

fennel takes 170-175 days to mature and harvesting is done before the fruits are fully ripe, umbel attains a slightly greenish yellow colour. In fenugreek, the harvest time is judged when the colour of leaves and pods turn yellow. Harvesting should usually done in the morning hours to avoid shedding losses.

**Threshing of Seed Spices :** Threshing of seed spices is performed traditionally, by treading the crop under the tyre of tractors or by beating with stick and then further, the threshed stocks is cleaned by winnowing in a natural air stream or in the artificial air streaming the processed products. The newly modified threshers were tested in the adopted villages for threshing of cumin and fennel crop by CRSS, Jagudan (Gujrat). It has been found that economical saving can be obtained by adopting threshers as compared to traditional method.

**Drying :** Sun drying is usually adequate to dry the produce but there is a chance of contamination of the material by dust and dirt and volatile components will be lost. Mechanized drying could enhance the quality of the produce. Shade drying is the best to maintain green color of fennel.

**Cleaning/grading :** Various machines are used for special functions, such as; spiral separator is used to separate round seeds and flat seeds; magnet drum/pulley is used to separate iron particles. Magnet seed separators/electrostatic seed separator is being used to separate identical weed seed from product. Electronic colour sorters are used to separate seed to enhance colour value to the final product. Gravity separator/destoner is usefull to separate undesirable material on the basis of gravity.

**Packaging and Storage :** To standardize proper packaging material should be used, for bulk package jute bag, jute bag with LDPE lining, HDPE bag, HDPE bag with LDPE lining, paper bag each with 50 kg capacity, LDPE, HDPE, PP, PET + LDPE laminate, metalized PET + LDPE laminate. From the above packaging treatment, paper bag is found best followed by jute bag with LDPE lining in case of bulk packages (50 kg bags) while in the case of consumer packages (500 gm), metalised PET + LDPE laminate is found best followed by PET + LDPE laminate. The whole dried seeds are usually packed into jute or poly bags and stored in cool dry places at 25-28°C room temperature. Biodeterioration due to storage fungi and storage pests will occur if the moisture of the product is more the 10 per cent.

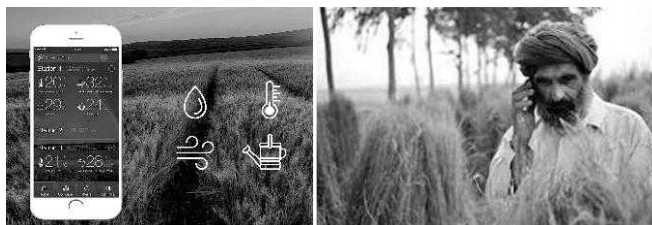
These above discussed post-harvest operations like harvesting, processing, packaging and storage, etc. play a major role in maintaining quality of spices to the specifications of international trade. In addition, these managements reduce the labour, help to maintain the quality and food safety standards. By keeping in view to hygiene, packing and storage facilities will not only help in keeping quality of spice flavours but also play a major role in reducing contamination of our spices and spice products. Therefore, post-harvest operations and management of seed spices have great scope considering the present trade scenario.





## Prospective of Mobile Advisories in Agricultural Extension Services

 **Anil Kumar Malik<sup>1</sup>, Krishan Yadav and Rajesh Kumar**  
Ph.D. Scholar, Department of Extension Education  
CCS Haryana Agricultural University, Hisar



India has been witnessing rapid growth in mobile subscriber's base, from 584.32 million in 2010 to 914.53 in 2016, whereas during the same period, the wireline subscription decreased from 36.96 to 20.50 million (Anonymous, 2016). With over 988.69 million wireless subscribers by August 2015, the portion of rural subscribers is 52.31 per cent and is gradually increasing (TRAI, 2017). The rising wireless tele-subscription throws up a hitherto less explored opportunity for the planners and development agencies, predominantly the extension system to reach the unreached in a more unconventional way.

The mobile-based solutions, currently in operation in different parts of the world, are agriculture advisory services, linking farmers to traders, markets, monitoring extension worker activities, surveys, linking small holder farmers to exporters/buyers and online training. Realizing the immense prospective of mobile services for agriculture in India, several initiatives were launched. Famous among the private sector initiatives include Nokia Life Tools, Reuters Market Light, IFFCO Kisan Sanchar, AgriFone 1-2-3, Bubbly, mKrishi, SME Toolkit and e-Choupal.

The Kisan SMS portal launched by Ministry of Agriculture, Government of India in July 2013 is a shared effort in many ways. In the back-end, it is using the facility of Department of Information and Technology of Government of India to make

available information service to farmers at free of cost. In the front-end, it uses the strong network of National Agricultural Research System (NARS) comprising Agricultural Research Institutes, Agricultural Universities and Krishi Vigyan Kendras (KVKs) for designing relevant advisories.



Approximately every Government Department, Office and Organization from the Ministry Headquarters down to the level of Block having anything to do with agriculture and allied sectors in every corner of the country has been authorized to use this portal to provide information to the farmers on vast range of issues. About seven million farmers have already opted to entertain advisories & services on their mobile phones. The farmers register to this service by calling Kisan Call Centre on the toll-free number 1800-180-1551 or through the web portal. A farmer can give upto eight choices for his preferred crops/activities. The language choice of the farmer is also being taken at the time of registration. If the mobile of the farmer does not support the regional language, option is given to receive the SMS in regional language written in Roman script. Provision is there for sending voice messages to the farmers who are not familiar with text messages. Since its beginning in July 2013, nearly 720 million messages or more than 2100 million SMSs have been sent to farmers throughout the length and breadth of the country. These figures are rising ever since.

The sending messages is a one-way communication and has all the disadvantages of impersonal communication viz., limited feedback from receiver, understanding of message not known and timing of message not controlled. It is vital to know what is happening to these messages, at the user level and after that. Keeping this in view, a telephonic survey was conducted. Telephone survey is a method of public opinion polling where telephone numbers are used to contact potential respondents, either from the general population or from a recognized sample (used in the present study). Telephone surveys are the favoured choice to maximize response rates, as well as to maintain control over the quality of the data. The main attraction of telephone interviewing is that it allows data to be collected from geographically scattered samples more cheaply and quickly than by field interviewing. Interviewing from a central telephone unit lends itself to careful supervision and control. It is possible to avoid cluster sampling, which is used in field survey designs to control interviewer travel costs.

Telephone surveys are popular in developed countries; however, until now this method has not been popular in developing countries because of low telephone coverage. In recent years, with improving telephone coverage, it is a assured method of data collection. It can be used in studies that deals with an urban population with good telephone coverage. Telephone interviews aid in covering a broad geographical area within less time and with minimal logistics, like transport.

